दूसरा खण्ड

गोलोकवासी भारत-भूषण भारतेन्दु बा० हरिश्चन्द्र जी
की समग्र प्राप्त कविताओं का संग्रह

संकलनकर्ता तथा संपादक
ब्रजरत्नदास बी० ए०, एल-एल० बी०

प्रकाशक
नागरी-प्रचारिणी सभा
काशी

प्रेमोपहार

श्री

को

सादर और सप्रेम समर्पित

निवेदन

आज २५ जनवरी सन् १९३५ को गोलोकवासी भारत-भूषण भारतेन्दु बा० हरिश्चन्द्र को स्वर्गवासी हुए पूरे पचास वर्ष हो गये। इस अवसर पर भारतेन्दु ग्रन्थावली का यह दूसरा खड हिन्दी-प्रेमियो के सामने उपस्थित किया जाता है। इस ग्रन्थावली के पहले खड मे भारतेन्दु जी की विस्तृत जीवनी और उनकी कृतियो की आलोचना आदि रहेगी। तीसरे खड में उनके लिखे हुए समस्त नाटक होगे और चौथे खड मे उनके ऐतिहासिक तथा अन्य प्रकार के ग्रन्थ और फुटकर गद्य लेख आदि होंगे। इस दूसरे खंड मे उनके रचे हुए समस्त काव्य-ग्रन्थो तथा स्फुट कविताओ आदि का सग्रह है।

काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा ने सात आठ मास पूर्व ही निश्चित किया था कि भारतेन्दु-अर्द्ध-शताब्दी के अवसर पर भारतेन्दु ग्रन्थावली प्रकाशित की जाय। परन्तु इस बीच मे अनेक प्रकार की कठिनाइयॉ और अडचने उपस्थित होती गई जिनसे इस काम मे बहुत बाधा हुई। पर फिर भी परमात्मा को धन्यवाद है कि सब विघ्न-बाधाओ को दूर करके अन्त मे भारतेन्दु-ग्रन्थावली का यह खड प्रकाशित हो ही गया। आशा है कि अब तीसरे खड के प्रकाशन मे भी शीघ्र ही हाथ लग जायगा। विचार तो यही है कि एक वर्ष के अन्दर पूरी ग्रन्थावली प्रकाशित कर दी जाय। पर यह बात हिन्दी-प्रेमियो की कृपा और सहायता पर ही निर्भर है।

इस दूसरे खंड की सामग्री एकत्र करने में भी मुझे कम कठिनाइयाँ नहीं हुईं। भारतेन्दु जी के अधिकांश काव्य ग्रन्थ अप्राप्य नहीं तो दुष्प्राप्य अवश्य हैं और उन सबको एकत्र करने में मुझे बहुत अधिक प्रयत्न करना पड़ा। कुछ ग्रन्थ तो स्वयं मेरे पास थे। कुछ ग्रन्थ मुझे भारतेन्दु जी के वंशधरों (श्रीयुक्त डा० मोतीचन्द जी, बा० लक्ष्मीचन्द जी तथा बा० कुमुदचन्द्र जी) की कृपा से प्राप्त हुए हैं। स्थानीय हरिश्चन्द्र हाई स्कूल से भी कुछ ग्रन्थ आदि मिले हैं। और इन सबके लिए मैं भारतेन्दु जी के वंशधरों तथा हरिश्चन्द्र हाई स्कूल के हेड मास्टर तथा व्यवस्थापकों आदि का बहुत अनुगृहीत हूँ। फिर भी हरिश्चन्द्र चन्द्रिका, बाला-बोधिनी और सुधा आदि की पूरी फाइलें प्राप्त नहीं हुईं, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि यह संग्रह पूर्ण है। सम्भव है कि अभी बहुत सी सामग्री इधर-उधर लोगों के पास बिखरी पड़ी हो। जिन सज्जनों के पास भारतेन्दु जी की ऐसी कविताएँ हों जो इस संग्रह में प्रकाशित न हुई हों, वे सज्जन वे कविताएँ लिखकर मेरे पास अथवा नागरी-प्रचारिणी सभा में भेजने की कृपा करें। ऐसी कविताएँ अगले किसी खंड में प्रकाशित कर दी जायँगी। जन-साधारण की जानकारी के लिए इस संग्रह के अन्त में मैंने एक अनुक्रमणिका लगा दी है। प्रकाशित अथवा अप्रकाशित कविताओं का पता लगाने में इस अनुक्रमणिका से सहायता ली जा सकती है।

आरम्भ से ही प्रायः मित्रों का यह आग्रह रहा है कि भारतेन्दु जी की सब कविताएँ तथा दूसरी कृतियाँ यथा-साध्य उसी रूप में हों जिस रूप में उन्होंने स्वयं लिखी थीं। स्वयं सभा की भी और मेरी भी यही इच्छा थी। पर मैं यह नहीं कह सकता कि इस प्रयत्न में मुझे कहाँ तक सफलता हुई है। इसके कई कारण हैं। पहली बात तो यह है कि भारतेन्दु जी के हाथ की लिखी कोई प्रति मिली ही नहीं जिससे उनकी शैली आदि निर्धारित की जा सकती।

दूसरे भिन्न भिन्न ग्रन्थ अनेक स्थानो में और अनेक प्रकाशको द्वारा प्रकाशित हुए है और सबकी लेख-शैली एक दूसरे से प्रायः बहुत भिन्न है। तीसरे जिस जमाने मे ये सब कविताएँ लिखी गई थीं और छपी थी, उस जमाने मे शब्दो के रूप आदि प्रायः अनिश्चित से थे। जब जिसे जैसा ठीक जान पड़ता था, तब वह वैसा ही लिखता या छापता था। चौथे आज से चालिस-पचास वर्ष पहले पुस्तके छापते समय लोग शुद्धता आदि पर भी उतना अधिक ध्यान नही देते थे। इन्ही सब कारणो से शैली आदि का निर्धारण करने मे बहुत कठिनता हुई। फिर भी छान-बीन करके कुछ नियम स्थिर करने पडे और उन्ही के अनुसार यह ग्रन्थ छापा गया है। अनेक स्थलों पर यथा-वत् भी रखना पडा है। कुछ स्थल ऐसे भी मिले है जो स्पष्ट नही हुए है, और उन्हे भी यथा-तथ्य रखनेके सिवा और कोई उपाय नही था। हॉ एक बात अवश्य अपनी ओर से की गई है। वह यह कि अर्थ आदि स्पष्ट करने के अभिप्राय से कुछ आवश्यक और महत्व के स्थानो पर विराम-चिह्न आदि लगा दिये गये है। पर यह काम भी बहुत ही सोच-समझकर और बहुत कृपणता के साथ किया गया है। ग्रन्थो का रचना-काल निश्चित करने मे भी बहुत कठिनता हुई है, और कुछ ग्रन्थो का रचना-काल ज्ञात भी नही हो सका है। तो भी ग्रन्थो और कविताओ आदि को काल-क्रम से रखने का प्रयत्न किया गया है।

अन्तिम निवेदन यह है कि यह ग्रन्थ बहुत ही जल्दी मे छपा है। इसका अधिकाश केवल एक मास मे छापा गया है। इतनी शीघ्रता से और इतनी अच्छी छपाई करने के लिए स्थानीय श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस के व्यवस्थापक धन्यवाद के पात्र है। सभा के प्रधान मत्री मित्रवर बा० रामचद्र वर्मा का भी मै विशेष रूप से आभारी हूँ, क्योकि इस ग्रन्थ के सुचारु रूप से प्रकाशित होने का पूरा और शीघ्र प्रकाशित होने का बहुत कुछ श्रेय आपको ही है। पर इस जल्दी

के कारण मेरी कठिनता अवश्य बढ़ गई थी, और सम्भव है कि इसमे कुछ त्रुटियाँ भी रह गई हो। पर मुझे आशा है कि उदार हिन्दी-प्रेमी उन त्रुटियो का विचार न करते हुए मुझे क्षमा करेगे, और मेरी जो भूलें या त्रुटियाँ उन्हे दिखाई पड़ेगी, उनसे वे मुझे सूचित करेगे। अगले सस्करण में उन सब त्रुटियो को सुधारने का प्रयत्न किया जायगा।

निवेदक

माघ कृष्ण ६ सं० १९९१ — ब्रजरत्नदास।

प्रतिष्ठापक-वर्ग

जिन सज्जनों तथा संस्थाओं ने भारतेन्दु ग्रंथावली के प्रकाशन मे २५) या इससे अधिक की सहायता की है, उनकी नामावली इस प्रकार है—

श्रीभारतेन्दु-परिवार, काशी ..	२०१)
श्रीयुत किशोरीरमण प्रसाद, काशी ..	२०१)
श्रीयुत राय गोविन्दचन्द्र, काशी .	२००)
श्रीयुत बसंतलाल मुरारका, कलकत्ता ...	१०१)
श्रीमान् राजा साहब, सीतामऊ ..	१००)
श्रीयुत बाबू ब्रजरत्नदास बी० ए०, काशी .	१००)
हरिश्चन्द्र हाई स्कूल के अध्यापक तथा छात्र .	१००)
अग्रवाल समाज, काशी .	५१)
एक हितैषी सज्जन .	५१)
गुप्त दान (बा० रामचंद्र वर्मा के द्वारा) .	५१)
श्री लक्ष्मीदास जी बी० ए०, काशी	५१)
श्रीयुत अद्वैतप्रसाद जी शाह, काशी	५१)
श्री भागीरथजी कानोड़िया, कलकत्ता .	५०)
श्रीयुत कुंजलाल जी वर्मन	२५)
श्रीयुत राजा बहादुर सूर्य्यबख्श सिंह, कसमंडा	२५)
श्रीयुत ठाकुर शिरोमणिसिंह, हाटा ...	२५)
श्री गोपीकृष्ण जी कारुंडिया, पटना ...	२५)

एक हितैषी सज्जन (पं० रामनारायण मिश्र के द्वारा)		२५)
राज-माता, मझौली	...	२५)
श्रीयुत पं० हनुमानप्रसाद वैद्य, काशी	...	२५)
श्रीयुत लालचन्द्र जी सेठी, उज्जैन	...	२५)
राय बहादुर बाबू श्यामसुन्दर दास, काशी	...	२५)
श्रीयुत बाबू गौरीशंकर प्रसाद ऐडवोकेट, काशी		२५)
पं० रामनारायण मिश्र बी० ए०, काशी	...	२५)
बाबू बलराम दास एम० ए० वकील, काशी	...	२५)
बाबू ठाकुरदास जी ऐडवोकेट, काशी	...	२५)
श्रीमान् श्री प्रकाश जी बारिष्टर, काशी	...	२५)
बाबू श्रीनाथ शाह, काशी	...	२५)
श्री मुरारीलाल जी केडिया, काशी	...	२५)
श्री व्रजभूषणदास जी, काशी		२५)
ठाकुर रामपाल सिंह जी, सिहरामऊ	...	२५)
बा० श्रीनिवास जी, काशी	...	२५)
फुटकर ...	...	३८)
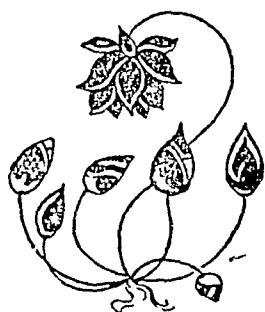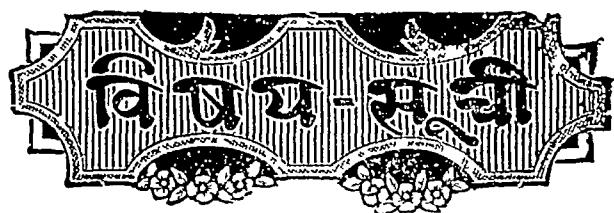
काव्य-ग्रन्थ

सं०	नाम	पृष्ठ
१.	भक्त-सर्वस्व	१–३८
२.	प्रेम-मालिका	३९–७४
३.	कार्तिक-स्नान	७५–८६
४.	वैशाख माहात्म्य	८७–९७
५.	प्रेम-सरोवर	९९–१०६
६.	प्रेमाश्रु-वर्षण	१०७–१२८
७.	जैन-कुतूहल	१२९–१४१
८.	प्रेम-माधुरी	१४३–१७५
९.	प्रेम-तरंग	१७७-२२०
१०.	उत्तरार्ध भक्तमाल	२२१–२७०
११.	प्रेम-प्रलाप	२७१–३०२
१२.	गीत गोविंदानंद	३०३–३२८
१३.	सतसई-श्रृंगार	३२९–३५६
१४	होली	३५७-३८७
१५.	मधु मुकुल	३८९–४३२
१६.	राग-सग्रह	४३३ ४८४
१७.	वर्षा-विनोद	४८५–५३४
१८.	विनय-प्रेम-पचासा	५३५-५५४
१९.	फूलो का गुच्छा	५५५–५७२
२०.	प्रेम-फुलवारी	५७३–६००
२१.	कृष्ण-चरित	६०१–६२०

छोटे प्रबंध काव्य तथा मुक्तक कविताएँ

सं०	नाम	पृष्ठ
२२.	श्री अलवरत वर्णन . . .	६२३–६२४
२३.	श्री राजकुमार सुस्वागत पत्र . .	६२५-६२९
२४.	सुमनोऽञ्जलिः . .	६३०–६३२
२५.	श्रीमान् प्रिंस आव वेल्स के पीड़ित होने पर कविता	६३३
२६.	श्री जीवन जी महाराज . . .	६३४
२७.	चतुरंग . . .	६३५-६३६
२८.	देवी छद्म-लीला . . .	६३७–६४१
२९.	प्रातः स्मरण मंगल-पाठ . .	६४२-६४८
३०.	दैन्य-प्रलाप . . .	६४९–६५२
३१.	उरहना . .	६५३–६५५
३२.	तन्मय-लीला . .	६५६–६५८
३३.	दान लीला . . .	६५९–६६१
३४	रानी छद्म लीला . .	६६२–६६५
३५.	संस्कृत लावनी . .	६६६–६६८
३६.	बसंत होली . . .	६६९–६७०
३७.	स्फुट समस्याएँ . . .	३७१–६७४
३८.	मुँह-दिखावनी . . .	६७५–६७६
३९	उर्दू का स्यापा . . .	६७७–६७८
४०.	प्रबोधिनी . . .	६७९–६८५
४१	प्रात समीरन . . .	६८६–६८९
४२.	बकरी-विलाप . . .	६९०–६९२
४३.	स्वरूप-चिंतन . . .	६९३–६९६
४४.	श्री राजकुमार-शुभागमन वर्णन . .	६९७–७००
४५	भारत-भिक्षा . . .	७०१–७११
४६.	श्रीपंचमी . . .	७१२–७१३
४७.	श्रीसर्वोत्तम स्तोत्र . . .	७१४-७१८
४८.	निवेदन-पंचक . . .	७१९–७२०
४९.	मानसोपायन . . .	७२१–७२६

सं०	नाम	पृष्ठ
५०.	प्रातःस्मरण स्तोत्र	७२७–७३०
५१.	हिंदी की उन्नति पर व्याख्यान	७३१–७३८
५२.	अपवर्गदाष्टक	७३९–७४१
५३.	मनोमुकुल-माला	७४२–७४७
५४.	वेणु-गीति	७४८–७५३
५५.	श्रीनाथ स्तुति	७५४–७५५
५६.	मूक प्रश्न	७५६–७५७
५७.	अपवर्ग पंचक	७५८–७५९
५८.	पुरुषोत्तम-पंचक	७६०
५९.	भारत-वीरत्व	७६१–७६५
६०.	श्री सीता वल्लभ स्तोत्र	७६६–७६९
६१.	श्री राम-लीला	७७०-७८०
६२.	भीष्मस्तवराज	७८१–७८३
६३	मान-लीला फूल बुझौअल	७८४–७८८
६४.	बन्दर-सभा	७८९–७९२
६५.	विजय-वल्लरी	७९३–७९६
६६.	विजयिनी-विजय वैजयन्ती	७९७–८०९
६७.	नये जमाने की मुकरी	८१०–८१२
६८	जातीय संगीत	८१३–८१४
६९.	रिपनाष्टक	८१५–८१७
७०.	स्फुट कविताएँ	८१८–८८६
७१.	अनुक्रमणिका	१–१०२

दूसरा खण्ड

भक्त-सर्वस्व

अर्थात्

श्रीचरण-चिन्ह-वर्णन

भक्त-सर्वस्व

मेडिकल हाल के छापेखाने मे
१८७० ई० मे छपा

प्रस्तावना

इस छोटे से ग्रंथ मे श्रीयुगल स्वरूप के श्रीचरण के अगाध चिह्नों के मति अनुसार कुछ भाव लिखे है। यद्यपि इसकी कविता काव्य के सब गुणो से (सत्य ही) हीन है, तथापि इसका मुझे शोच नही है, क्योंकि यह ग्रंथ मैंने अपनी कविता प्रगट करने और कवियों को प्रसन्न करने को नही लिखा है, केवल (अपनी) वाणी पवित्र करने और प्रेम-रंग मे रँगे हुए वैष्णवो के आनन्द के हेतु लिखा है।

इसमे श्री भागवत के अनुसार बहुत से भाव लिखे है, इस कारण से श्री भागवत जाननेवालों को इसका स्वाद विशेष मिलेगा।

अनुप्रासो की संकीर्णता से इसमे पुनरुक्ति बहुत है, जिसको रसिक लोग (भगवन्नामांकित जान कर) क्षमा करेंगे। मै आशा करता हूँ कि जो रसिक भगवदीय जन इसको पाठ करें, वह मेरे (इस) बाल-चापल्य को क्षमा करे और (जहाँ तक हो सके) इस पुस्तक को कु-रसिको से बचावे और अनुग्रहपूर्वक सर्व्वदा मुझ से दीन को (अपना दास जान कर) स्मर्ण रक्खें।

श्रीहरिश्चन्द्र।
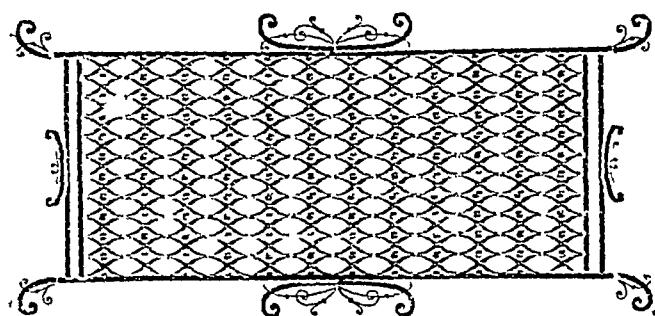
भक्त-सर्वस्व

अथ चरण-चिन्ह-वर्णन

दोहा

जयति जयति श्री राधिका चरण जुगल करि नेम ।
जाकी छटा प्रकास ते पावत पामर प्रेम ॥ १ ॥
जयति जयति तैलंग-कुल रत्नद्वीप-द्विजराज ।
श्री वल्लभ जग-अघ-हरन तारन पतित-समाज ॥ २ ॥
नमो नमो श्री हरि-चरण शिव-मन-मंदिर रूप ।
बास हमारे उर करौ जानि पर्यौ भव-कूप ॥ ३ ॥
प्रगटित जसुमति-सीप तैं मधि ब्रज-रतनागार ।
जयति अलौकिक मुक्त-मणि ब्रज-तिय को शृंगार ॥ ४ ॥
दक्षिन दिसि चन्द्रावली श्री राधा दिसि वाम ।
तिन के मधि नट रूप-धर जै जै श्री घनश्याम ॥ ५ ॥
हरि-मन-कुमुद-प्रमोद-कर ब्रज-प्रकासिनी वाम ।
जयति कापिसा-चन्द्रिका राधा जाको नाम ॥ ६ ॥
चंद्रभानु नृप-नंदिनी चंद्राननि सुकुवाँरि ।
कृष्णचंद्र-मन-हारिनी जय चंद्रावलि नारि ॥ ७ ॥

जै जै ब्रज-जुवती सबै जिन सम जग नहि कोइ ।
मगन भई हरि-रूप मैं लोक-लाज-भय खोइ ॥ ८ ॥
जसुदा लालित ललनवर कीरति-प्रान-अधार ।
श्याम गौर द्वै रूप धर जै जै नंद-कुमार ॥ ९ ॥
जै जै श्री वल्लभ विमल तैलँग कुल द्विजराज ।
भुव प्रगटित आनंदमय विष्णु स्वामि पथ-काज ॥१०॥
तम पाखंडहि हरत करि जन-मन-जलज-विकास ।
जयति अलौकिक रवि कोऊ श्रुति-पथ करन प्रकास ॥११॥
मायावाद-मतंग-मद हरत गरजि हरि-नाम ।
जयति कोऊ सो केसरी बृन्दावन वन धाम ॥१२॥
गोपीनाथ अनाथ-गति जग-गुरु विट्ठलनाथ ।
जयति जुगल वल्लभ-तनुज गावत श्रुति गुन-गाथ ॥१३॥
श्री गिरिधर गोविंद पुनि बालकृष्ण सुख-धाम ।
गोकुलपति रघुपति जयति जदुपति श्री घनश्याम ॥१४॥
जै जै श्री शुकदेव जिन समुझि सकल श्रुति-पंथ ।
हम से कलिमल ग्रसित हित कह्यौ भागवत ग्रंथ ॥१५॥
बंदौं पितु-पद जुग जलज हरन हृदय-तम घोर ।
सकल नेह-भाजन विमल मंगलकरन अथोर ॥१६॥
कविजन-उडुगन-मोद-कर पूरन परम अमंद ।
सुत-हिय-कुमुद-अनंद-भर जयति अपूरब चंद ॥१७॥
जुगल चरन जग-तम-हरन भक्तन-जीवन-प्रान ।
बरनत तिन के चिन्ह के भाव अनेक बिधान ॥१८॥
बरनन श्री हरिराय किय तिनको आसय पाइ ।
चरन-चिन्ह हरिचंद कछु कहत प्रेम सो गाइ ॥१९॥
भक्तन को सर्वस्व लखि बरनन या थल कीन ।
प्रेम-सहित अवलोकिहैं जे जन रसिक प्रवीन ॥२०॥

कहँ हरि-चरन अगाध अति कहँ मोरी मति थोर।
तदपि कृपा-बल लहि कहत छमिय ढिठाई मोर ॥२१॥

छप्पय

स्वस्तिक स्यंदन संख सक्ति सिंहासन सुंदर।
अंकुस ऊरध रेख अब्ज अठकोन अमलतर ॥
बाजी बारन वेनु बारिचर वज्र विमलवर।
कुंत कुमुद कलधौत कुंभ कोदंड कलाधर ॥
असि गदा छत्र नवकोन जव तिल त्रिकोन तरु तीर गृह।
हरिचरन चिन्ह बत्तिस लखे अग्निकुंड अहि सैल सह ॥ १ ॥

स्वस्तिक चिन्ह भाव वर्णन

दोहा

जे निज उर मैं पद धरत असुभ तिन्हैं कहुँ नाहि।
या हित स्वस्तिक चिन्ह प्रभु धारत निज पद माँहि ॥ १ ॥

रथ को चिन्ह वर्णन

निज भक्तन के हेतु जिन सारथिपन हूँ कीन।
प्रगटित दीन-दयालुता रथ को चिन्ह नवीन ॥ १ ॥
माया को रन जय करन बैठहु यापै आइ।
यह दरसावन हेत रथ चिन्ह चरन दरसाइ ॥ २ ॥

शंख चिन्ह के भाव वर्णन

भक्तन की जय सर्वदा यह दरसावन हेतु।
शंख चिन्ह निज चरन मैं धारत भव-जल-सेतु ॥ १ ॥
परम अभय पद पाइहौ याकी सरनन आइ।
मनहुँ चरण यह कहत है शंख बजाइ सुनाइ ॥ २ ॥
जग-पावनि गंगा प्रगट याही सो इहि हेत।
चिन्ह सुजल के तत्व को धारत रमा-निकेत ॥ ३ ॥

शक्ति चिन्ह भाव वर्णन

विना मोल की दासिका शक्ति स्वतंत्रा नाहि ।
शक्तिमान हरि याहि ते शक्ति चिन्ह पद माँहि ॥ १ ॥
भक्तन के दुख दलन की विधि की लीक मिटाइ ।
परम शक्ति यामे अहै सोई चिन्ह लखाइ ॥ २ ॥

सिंहासन चिन्ह भाव वर्णन

श्री गोपीजन के सुमन यापैं करै निवास ।
या हित सिंहासन धरत हरि निज चरनन पास ॥ १ ॥
जो आवै याकी शरण सो जग राजा होइ ।
या हित सिंहासन सुभग चिन्ह रह्यो दुख खोइ ॥ २ ॥

अंकुस चिन्ह भाव वर्णन

मन-मतंग निज जनन के नेकु न इत उत जाहि ।
एहि हित अंकुस धरत हरि निज पद कमलन माँहिं ॥ १ ॥
याको सेवक चतुरतर गननायक सम होइ ।
या हित अंकुस चिन्ह हरि चरनन सोहत सोइ ॥ २ ॥

ऊरध रेखा चिन्ह भाव वर्णन

कबहुँ न तिनकी अधोगति जे सेवत पद-पद्म ।
ऊरध रेखा चिन्ह पद येहि हित कीनो सद्म ॥ १ ॥
ऊरधरेता जे भये ते या पंद को सेइ ।
ऊरध रेखा चिन्ह यो प्रगट दिखाई देइ ॥ २ ॥
याते ऊरध और कछु ब्रह्म अंड मै नाहि ।
ऊरध रेखा चिन्ह है या हित हरि-पद माँहि ॥ ३ ॥

कमल के चिन्ह को भाव वर्णन

सजल नयन अरु हृदय मैं यह पद रहिबे जोग ।
या हित रेखा कमल की करत कृष्ण-पद भोग ॥ १ ॥

श्री लक्ष्मी को वास है याही चरनन-तीर ।
या हित रेखा कमल की धारत पद बलबीर ॥ २ ॥
विधि सों जग, विधि कमल सो, सो हरि सों प्रगटाइ ।
राधावर-पद-कमल मैं या हित कमल लखाइ ॥ ३ ॥
फूलत सात्विक दिन लखे सकुचत लखि तम रात ।
या हित श्री गोपाल-पद जलज चिन्ह दरसात ॥ ४ ॥
श्री गोपीजन-मन-भ्रमर के ठहरन की ठौर ।
या हित जल-सुत-चिन्ह श्री हरिपद जन सिरमौर ॥ ५ ॥
बढ़त प्रेम-जल के बढ़े घटे नाहि घटि जान ।
यह दयालुता प्रगट करि पंकज चिन्ह लखात ॥ ६ ॥
काठ ज्ञान वैराग्य मैं बॅध्यो वेधि उड़ि जात ।
याहि न बेधत मन-भ्रमर या हित कमल लखात ॥ ७ ॥

अष्टकोण के चिन्ह को भाव वर्णन

आठो दिसि भूलोक को राज न दुर्लभ ताहि ।
अष्टकोन को चिन्ह यह कहत जु सेवै याहि ॥ १ ॥
अनायास ही देत है अष्ट सिद्धि सुख-धाम ।
अष्टकोन को चिन्ह पद धारत येहि हित स्याम ॥ २ ॥

घोड़ा के चिन्ह को भाव वर्णन

हयमेधादिक जग्य के हम ही है इक देव ।
अश्व-चिन्ह पद धरत हरि प्रगट करन यह भेव ॥ १ ॥
याही सो अवतार सब हयग्रीवादिक देख ।
अवतारी हरि के चरन याही ते हय-रेख ॥ २ ॥
वैरहु जे हरि सो करहिं पावहि पद निर्वान ।
या हित केशी-दमन-पद हय को चिन्ह महान ॥ ३ ॥

हाथी के चिन्ह को भाव वर्णन

जाहि उधारत आपु हरि राखत तेहि पद पास ।
या हित गज को चिन्ह पद धारत रमा-निवास ।। १ ।।
सब को पद गज-चरन मै *सो गज हरि-पग माँ हि ।
यह महत्व सूचन करत गज के चिन्ह देखाहि ।। २ ।।
सब कवि कविता मै कहत गजगति राधानाथ ।
ताहि प्रगट जग मै करन धस्यो चिन्ह गज साथ ।। ३ ।।

वेणु के चिन्ह को भाव वर्णन

सुर नर मुनि नर नाह के बंस यही सो होत ।
या हित बंसी चिन्ह हरि पद मै प्रगट उदोत ।। १ ।।
गाँठ नही जिनके हृदय ते या पद के जोग ।
या हित बंसी चिन्ह पद जानहु सेवक लोग ।। २ ।।
जे जन हरि-गुन गावही राखत तिनको पास ।
या हित बंसी चिन्ह हरि पद मै करत निवास ।। ३ ।।
प्रेम भाव सो जे बिंधे छेद करेजे माहि ।
तेई या पद मैं बसै आइ सकै कोउ नाहि ।। ४ ।।
मनहुँ घोर तप करति है बंसी हरि-पद पास ।
गोपी सह त्रैलोक के जीतन की धरि आस ।। ५ ।।
श्री गोपिन की सौति लखि पद-तर दीनी डारि ।
यातैं बंसी चिन्ह निज पद मै धरत मुरारि ।। ६ ।।
आई केवल ब्रज-बधू क्यो नहिं सब सुर-नारि ।
या हित कोपित होइ हरि दीनी पद तर डारि ।। ७ ।।
मन चोस्यो बहु त्रियन को इन श्रवनन मग पैठि ।
ता प्राछित को तप करत मनु हरि-पद-सर बैठि ।। ८ ।।

* सर्वे पदाः हस्तिपदे निमग्नाः ।

वेणु सरिस हू पातकी शरण गये रखि लेत ।
वेणु-धरन के कमल-पद वेणु चिन्ह यहि हेत ॥ ९ ॥

मीन चिह्न का भाव वर्णन

अति चंचल वहु ध्यान सो आवत हृदय मँझार ।
या हित चिन्ह सुमीन को हरि-पद मै निरधार ॥ १ ॥
जव लौं हिय मे सजलता तव लौं याको वास ।
सुष्क भए पुनि नहि रहत झप यह करत प्रकास ॥ २ ॥
जाके देखत ही बढ़ै ब्रज-तिय-मन मै काम ।
रति-पति-ध्वज को चिन्ह पद याते धारत स्याम ॥ ३ ॥
हरि मनमथ कौ जीति कै ध्वज राख्यौ पद लाइ ।
यातैं रेखा मीन की हरि-पद मै दरसाइ ॥ ४ ॥
महा प्रलय मैं मीन बनि जिमि मनु रक्षा कीन ।
तिमि भवसागर कों चरन या हित रेखा मीन ॥ ५ ॥

वज्र के चिह्न को भाव वर्णन

चरण परस नित जे करत इन्द्र-तुल्य ते होत ।
वज्र-चिन्ह हरि-पद-कमल येहि हित करत उदोत ॥ १ ॥
पर्वत से निज जनन के पापहिं काटन काज ।
वज्र-चिन्ह पद मै धरत कृष्णचंद्र महराज ॥ २ ॥
वज्रनाभ यासो प्रगट जादव सेस लखाहि ।
थापन-हित निज वंश भुवि वज्र चिन्ह पद माहि ॥ ३ ॥

बरछी के चिह्न को भाव वर्णन

मनु हरिहू अघ सो डरत मति कहुँ आवै पास ।
या हित बरछी धारि पग करत दूर सो नास ॥ १ ॥

ब्रज राख्यो सुर-कोप ते भव-जल ते निज दास।
छत्र-चिन्ह पद मै धरत या हित रमानिवास ॥ २ ॥
याकी छाया मे वसत महाराज सम होय।
छत्र-चिन्ह श्रीकृष्ण पद याते सोहत सोय ॥ ३ ॥

नवकोण चिन्ह को भाव वर्णन

नवो खंड पति होत है सेवत जे पद-कंजु।
चिन्ह धरत नवकोन को या हित हरि-पद मंजु ॥ १ ॥
नवधा भक्ति प्रकार करि तव पावत येहि लोग।
या हित है नवकोन को चिन्ह चरन गत-सोग ॥ २ ॥
नव जोगेश्वर जगत तजि यामे करत निवास।
या हित चिन्ह सुकोन नव हरि-पद करत प्रकास ॥ ३ ॥
नव ग्रह नहि बाधा करत जो एहि सेवत नेक।
याही ते नवकोन को चिन्ह धरत सविवेक ॥ ४ ॥
अष्ट सखिन के संग श्री राधा करत निवास।
याही हित नवकोन को चिन्ह कृष्ण-पद पास ॥ ५ ॥
यामै नव रस रहत है यह अनंद की खानि।
याही ते नवकोन को चिन्ह कृष्ण-पद जानि ॥ ६ ॥
नव को नव-गुन लगि गिनौ नवै अंक सब होत।
ताते रेखा कहत जग यामै ओत न प्रोत ॥ ७ ॥

यव के चिन्ह को भाव वर्णन

जीवन जीवन के यहै अन्न एक तिमि येह।
या हित जव को चिन्ह पद धारत साँवल देह ॥ १ ॥

तिल के चिन्ह को भाव वर्णन

याके शरण गए विना पित्रन कौ गति नाहि।
या हित तिल को चिन्ह हरि राखत निज पद माँहि ॥ १ ॥

त्रिकोण के चिन्ह को भाव वर्णन

स्वीया परकीया बहुरि गनिका तीनहु नारि।
सबके पति प्रगटित करत मनमथ-मथन मुरारि ॥ १ ॥
तीनहु गुन के भक्त को यह उद्धरण समर्थ।
सम त्रिकोन को चिन्ह पद धारत याके अर्थ ॥ २ ॥
ब्रह्मा-हरि-हर तीनि सुर याही ते प्रगटंत।
या हित चिन्ह त्रिकोन को धारत राधाकंत ॥ ३ ॥
श्री-भू-लीला तीनहू दासी याकी जान।
याते चिन्ह त्रिकोन को पद धारत भगवान ॥ ४ ॥
स्वर्ग-भूमि-पाताल मै विक्रम ह्वै गए धाइ।
याहि जनावन हेत त्रय कोन चिन्ह दरसाइ ॥ ५ ॥
जो याकै शरनहि गए मिटे तीनहूँ ताप।
या हित चिन्ह त्रिकोन को धरत हरत जो पाप ॥ ६ ॥
भक्ति-ज्ञान-वैराग है याके साधन तीन।
यातें चिन्ह त्रिकोन को कृष्ण-चरन लखि लीन ॥ ७ ॥
त्रयी सांख्य आराधि कै पावत जोगी जौन।
सो पद है येहि हेत यह चिन्ह त्रिश्रुति को भौन ॥ ८ ॥
बृन्दावन द्वारावती मधुपुर तजि नहि जाहि।
याते चिन्ह त्रिकोन है कृष्ण-चरन के माहि ॥ ९ ॥
का सुर का नर असुर का सब पैं दृष्टि समान।
एक भक्ति ते होत बस या हित रेखा जान ॥१०॥
नित शिव जू वंदन करत तिन नैननि की रेख।
या हित चिन्ह त्रिकोन को कृष्ण-चरन मै देख ॥११॥

वृक्ष के चिन्ह को भाव वर्णन

वृक्ष-रूप सब जग अहै बीज-रूप हरि आप।
याते तरु को चिन्ह पग प्रगटत परम प्रताप ॥ १ ॥

जे भव आतप सो तपे तिनही के सुख हेतु ।
वृक्ष-चिन्ह निज चरन मै धारत खगपति-केतु ॥ २ ॥
जहँ पग धरै निकुंजमय भूमि तहाँ की होय ।
या हित तरु को चिन्ह पद पुरवत रस को सोय ॥ ३ ॥
यहाँ कल्पतरु सो अधिक भक्त मनोरथ दान ।
वृक्ष चिन्ह निज पद धरत याते श्री भगवान ॥ ४ ॥
श्री गोपीजन-मन-विहँग इहाँ करै विश्राम ।
या हित तरु को चिन्ह पद धारत है घनश्याम ॥ ५ ॥
केवल पर-उपकार-हित वृक्ष-सरिस जग कौन ।
ताते ताको चिन्ह पद धारत राधा-रौन ॥ ६ ॥
प्रेम-नयन-जल सो सिचे सुद्ध चित्त के खेत ।
बनमाली के चरन मे वृक्ष चिन्ह येहि हेत ॥ ७ ॥
पाहन मारेहु देत फल सोइ गुन यामै जान ।
वृक्ष-चिन्ह श्रीकृष्ण-पद पर-उपकार-प्रमान ॥ ८ ॥

बाण चिन्ह वर्णन

सब कटाक्ष ब्रज-जुवति के बसत एक ही ठौर ।
सोई बान को चिन्ह है कारन नहि कछु और ॥ १ ॥

गृह के चिन्ह को भाव वर्णन

केवल जोगी पावही नहि यामैं कछु नेम ।
या हित गृह को चिन्ह जिहि गृही लहै करि प्रेम ॥ १ ॥
मति डूबौ भव-सिधु मै यामै करौ निवास ।
मानहु गृह को चिन्ह पद जनन बोलावत पास ॥ २ ॥
शिव जू के मन को मनहुँ महल बनाये स्याम ।
चिन्ह होय दरसत सोई हरि-पद कंज ललाम ॥ ३ ॥

गृही जानि मन बुद्धि को दंपति निवसन हेत।
अपने पद कमलन दियो दयानिकेत निकेत ॥ ४ ॥

अग्निकुंड के चिन्ह को भाव वर्णन

श्री वल्लभ हैं अनल-वपु तहाँ सरन जे जात।
ते मम पद पावन सदा येहि हित कुंड लखात ॥ १ ॥
श्री गोपीजन को बिरह रह्यौ जौन श्री गात।
एक देस मे सिमिटि सोइ अग्निकुंड दरसात ॥ २ ॥
मन तपि कै मम चरन मै कथित धान सम होइ।
तव न और कछु जन चहै अग्निकुंड है सोइ ॥ ३ ॥
जग्य-पुरुष तजि और को को सेवै मतिमंद।
अग्निकुंड को चिन्ह येहि हित राख्यौ ब्रजचन्द ॥ ४ ॥

सर्प चिन्ह को भाव वर्णन

निज पद चिन्हित तेहि कियो ताको निज पद राखि।
काली-मर्दन-चरन यह भक्त-अनुग्रह-साखि ॥ १ ॥
नाग-चिन्ह मत जानियो यह प्रभु-पद के पास।
भक्तन के मन बाँधिबे हित राखी अहि पास ॥ २ ॥
श्री राधा के बिरह मै मति त्रि-अनिल दुख देइ।
सर्प-चिन्ह प्रभु सर्वदा राखत है पद सेइ ॥ ३ ॥
याकी सरनन दीन जन सर्पहि* आवहु धाय।
सर्प-चिन्ह एहि हेतु पद राखत श्री ब्रजराय ॥ ४ ॥

सैल चिन्ह को भाव वर्णन

सत्य-करन हरिदास वर श्री गिरिवर को नाम।
सैल-चिन्ह निज चरन मै राख्यो श्री घनस्याम ॥ १ ॥

* सर्प का अर्थ शीघ्र है।

श्री राधा के बिरह में पग पग लगत पहार।
सैल-चिन्ह निज चरन मैं राख्यौ यहै विचार ॥ २ ॥

श्रीगोपालतापिनी श्रुति के मत से

चरण-चिन्ह वर्णन

परम ब्रह्म के चरन मैं मुख्य चिन्ह ध्वज-छत्र।
ऊरध अध अज लोक सो सोई द्वै पद अत्र ॥ १ ॥
ध्वजा दंड सो मेरु है बन्यो स्वर्णमय सोय।
सूर्य्य-चन्द्र की कान्ति जो ध्वज पताक सो होय ॥ २ ॥
आत पत्र को चिन्ह जोइ ब्रह्मलोक सो जान।
येहि बिधि श्रुति निरनै करत चरन-चिन्ह परमान ॥ ३ ॥
रथ बिनु अश्व लखात है मीन चिन्ह द्वै जान।
धनुष बिना परतंच को यह कोउ करत प्रमान ॥ ४ ॥

मिलि कै चिन्हन को भाव वर्णन

दो चिह्न को मिलि कै वर्णन

तहाँ हाथी के और अंकुश के चिन्ह को भाव वर्णन

काम करत सब आपु ही पुनि प्रेरकहू आप।
या हित अंकुश-हस्ति दोउ चिन्ह चरन गत पाप ॥ १ ॥

तिल और यव के चिन्ह को भाव वर्णन

देव-काज अरु पितर दोउ याही सो सिधि होइ।
याके बिन कोउ गति नही येहि हित तिल-यव दोइ ॥ १ ॥
देव-पितर दोउ रिनन सो मुक्त होत सो जीव।
जो या पद को सेवई सकल सुखन को सीव ॥ २ ॥

कुमुद और कमल के चिन्ह को भाव वर्णन

राति दिवस दोउ सम अहै यह तौ स्वयं प्रकास।
या हित निसि दिन के दोऊ चिन्ह कृष्ण-पद पास ॥ १ ॥

तीनि चिह्न को मिलि कै वर्णन

तहाँ पर्वत, कमल और वृक्ष के चिन्ह को भाव वर्णन

श्री कालिंदी कमल सो गिरि सों श्री गिरिराज ।
श्री वृन्दावन वृक्ष सों प्रगटत सह सुख साज ॥ १ ॥
जहाँ जहाँ प्रभु पद धरत तहाँ तीन प्रगटंत ।
या हित तीनहु चिन्ह ए धारत राधाकंत ॥ २ ॥

त्रिकोन, नवकोन और अष्टकोन के चिन्ह को भाव वर्णन

तीन आठ नव मिलि सबै बीस अंक पद जान ।
जीत्यौ बिस्वे बीस सोइ जो सेवत करि ध्यान ॥ १ ॥

चारि चिह्नन को मिलि कै वर्णन

तहाँ अमृत-कुंभ, धनु, वंशी और गृह के चिन्ह को भाव वर्णन

वैद्यक अमृत-कुंभ सो धनु सो धनु को वेद ।
गान वेद वंशी प्रगट शिल्प वेद गृह भेद ॥ १ ॥
रिग यजु साम अथर्व के ये चारहु उपवेद ।
सो या पद सो प्रगट एहि हेतु चिन्ह गत खेद ॥ २ ॥

सर्प, कमल, अग्निकुंड और गदा के चिन्ह को भाव वर्णन

रामानुज मत सर्प सो शेष अचारज मानि ।
निंबारक मत कमल सो रविहि पद्म प्रिय जानि ॥ १ ॥
विष्णुस्वामि मत कुंड सो श्रीवल्लभ वपु जान ।
गदा चिन्ह सो माध्व मत आचारज हनुमान ॥ २ ॥
इन चारहु मत मै रहै तिनहि मिलै भगवंत ।
कुंड गदा अहि कमल येहि हित जानहु सब संत ॥ ३ ॥

शक्ति, सर्प, बरछी, अंकुश को भाव वर्णन

सर्प चिन्ह श्री शंभु को शक्ति सु गिरिजा भेस ।
कुंत कारतिक आपु है अंकुश अहै गणेस ॥ १ ॥
प्रिया-पुत्र सँग नित्य शिव चरन बसत हैं आप ।
तिनके आयुध चिन्ह सब प्रगटित प्रबल प्रताप ॥ २ ॥

पाँच चिन्हन को मिलि कै वर्णन

तहाँ गदा, सर्प, कमल, अंकुश और शक्ति के चिन्ह को भाव वर्णन

गदा विष्णु को जानिए अहि शिव जू के साथ ।
दिवसनाथ को कमल है अंकुश है गणनाथ ॥ १ ॥
शक्ति रूप तहँ शक्ति है एई पाँचौ देव ।
चिन्ह रूप श्रीकृष्ण-पद करत सदा शुभ सेव ॥ २ ॥
जिमि सब जल मिलि नदिन मैं अंत समुद्र समात ।
तिमि चाहौ जाकौ भजौ कृष्ण चरन सब जात ॥ ३ ॥

छ चिन्हन को मिलि कै वर्णन

तहाँ छत्र, सिंहासन, रथ, घोड़ा, हाथी और धनुप के चिन्ह को भाव वर्णन

छत्र सिंहासन वाजि गज रथ धनु ए षट जान ।
राज-चिन्ह मैं मुख्य है करत राज-पद दान ॥ १ ॥
जो या पद को नित भजै सेवै करि करि ध्यान ।
महाराज तिनको करत सह स्यामा भगवान ॥ २ ॥

सात चिन्ह को मिलि कै वर्णन

तहाँ वेणु, मत्स्य, चन्द्र, वृक्ष,
कमल, कुमुद, गिरि के चिन्ह को भाव वर्णन

आवाहन हित वेणु झष काम बढ़ावन हेत ।
चंद्र विरह-वरधन करन तरु सुगंधि रस देत ॥ १ ॥
कमल हृदय प्रफुलित-करन कुमुद प्रेम-दृष्टान्त ।
गिरिवर सेवा करन हित धारत राधा-कांत ॥ २ ॥
रास-बिलास-सिगार के ये उद्दीपन सात ।
आलबन हरि संग ही राखत पद-जलजात ॥ ३ ॥

आठ चिन्ह को मिलि कै वर्णन

तहाँ वज्र, अग्निकुंड, तिल, तलवार,
मच्छ, गदा, अष्टकोण और सर्प को भाव वर्णन

बज्र इन्द्र वपु, अनल है अग्निकुंड वपु आप ।
जम तिल वपु, तरवार वपु नैरित्त प्रगट प्रताप ॥ १ ॥
वरुन मच्छ वपु, गदा वपु वायु जानि पुनि लेहु ।
अष्टकोन वपु धनद है, अहि इसान कहि देहु ॥ २ ॥
आयुध वाहन सिद्धि झष आदिक को संबंध ।
इन चिन्हन सो देव सो जानहु करि मन संध ॥ ३ ॥
सोइ आठो दिगपाल मनु सेवत हरि-पद आइ ।
अथवा दिगपति होइ जो रहै चरन सिरु नाइ ॥ ४ ॥

पुनः

अंकुश, बरछी, शक्ति, पवि, गदा, धनुष, असि, तीर ।
आठ शस्त्र को चिन्ह यह धारत पद बलवीर ॥ १ ॥
आठहु दिसि सो जनन की मनु-इच्छा के हेत ।
निज पद मे ये शस्त्र सब धारत रमा-निकेत ॥ २ ॥

गज जानौ गज को चरम धरत जाहि भगवान।
कुंभ गंग-जल को कहौ रहत सीस अस्थान ॥ ३ ॥
धनुष पिनाकहि मानियै सब आयुध को ईस।
चंद्र जानि चूड़ारतन जेहि धारत शिव सीस ॥ ४ ॥
श्रीतनु नवधा भक्तिमय सोइ नवकोन लखाइ।
वृक्ष महावट वृक्ष है रहत जहाँ सुरराइ ॥ ५ ॥
नेत्र रूप वा शूल को रूप त्रिकोनहि जान।
पर्व्वत सोइ कैलास है जहँ बिहरत भगवान ॥ ६ ॥
सर्प अभूखन अंग के कंकन मै वा सेस।
एहि बिधि श्री शिव बसहि नित चरन माँहि सुभ बेस ॥ ७ ॥
को इनकी सम करि सकै भक्तन के सिरताज।
आसुतोष जो रीझि कै देहि भक्ति सह साज ॥ ८ ॥
जिन निज प्रभु को जा दिवस आत्म-समर्पन कीन।
चंदन-भूषन-वसन-भष-सेज आदि तजि दीन ॥ ९ ॥
भस्म-सर्प-गज-छाल विष परवत माँहि निवास।
तवसो अंगीकृत कियो तज्यौ सबै सुखरास ॥१०॥

अन्य मत से चिन्हन को रंग वर्णन

स्वस्तिक पीवर वर्ण को, पाटल है अठ-कोन।
स्वेत रंग को छत्र है, हरित कल्पतरु जौन ॥ १ ॥
स्वर्ण वर्ण को चक्र है, पाटल जव की माल।
ऊरध रेखा अरुण है, लोहित ध्वजा विसाल ॥ २ ॥
वज्र बीजुरी रंग को, अंकुश है पुनि स्याम।
सायक त्रय चित्रित वरन, पद्म अरुण अठ-धाम ॥ ३ ॥
अस्व चित्र रँग को वन्यौ, मुकुट स्वर्ण के रंग।
सिंहासन चित्रित वरन सोभित सुभग सुढंग ॥ ४ ॥

व्योम चँवर को चिन्ह है नील वर्ण अति स्वच्छ ।
जव अँगुष्ठ के मूल मै पाटल वर्ण प्रतच्छ ॥ ५ ॥
रेखा पुरुषाकार है पाटल रंग प्रमान ।
ये अष्टादश चिन्ह श्री हरि दहिने पद जान ॥ ६ ॥
जे हरि के दक्षिन चरन ते राधा-पद वाम ।
कृष्ण वाम पद चिन्ह अव सुनहु विचित्र ललाम ॥ ७ ॥
स्वेत रंग को मत्स्य है, कलश चिन्ह है लाल ।
अर्ध चंद्र पुनि स्वेत है, अरुण त्रिकोन बिसाल ॥ ८ ॥
स्याम वरन पुनि जंवु फल, काही धनु की रेख ।
गोखुर पाटल रंग को, शंख श्वेत रँग देख ॥ ९ ॥
गदा स्याम रँग जानिये, विंदु चिन्ह है पीत ।
खड्ग अरुन षटकोन, जम दंड श्याम की रीत ॥१०॥
त्रिवली पाटल रंग की पूर्ण चंद्र घृत रंग ।
पीत रंग चौकोन है पृथ्वी चिन्ह सुढंग ॥११॥
तलवा पाटल रंग के दोउ चरनन के जान ।
कृष्ण वाम पद चिन्ह सो राधा दक्षिन मान ॥१२॥
या विधि चौंतिस चिन्ह हैं जुगल चरन जलजात ।
छाँडि सकल भव-जाल को भजौ याहि हे तात ॥१३॥

श्री स्वामिनी जी के चरण चिन्ह के भाव वर्णन

छप्पय

छत्र चक्र ध्वज लता पुष्प कंकण अंबुज पुनि ।
अंकुश ऊरध रेख अर्ध ससि यव बाएँ गुनि ॥
पाश गदा रथ यज्ञवेदि अरु कुंडल जानौ ।
बहुरि मत्स्य गिरिराज शंख दहिने पद मानौ ॥
श्रीकृष्ण प्राणप्रिय राधिका चरण चिन्ह उन्नीसवर ।
'हरिचंद' सीस राजत सदा कलिमल-हर कल्याणकर ॥ १ ॥

छत्र के चिन्ह को भाव वर्णन

दोहा

सब गोपिन की स्वामिनी प्रगट करन यह अत्र ।
गोप-छत्रपति-कामिनी धर्यौ कमल-पद छत्र ॥ १ ॥
प्रीतम-बिरहातप-शमन हेत सकल सुखधाम ।
छत्र चिन्ह निज कंज पद धरत राधिका बाम ॥ २ ॥
यदुपति ब्रजपति गोपपति त्रिभुवनपति भगवान ।
तिनहूँ की यह स्वामिनी छत्र चिन्ह यह जान ॥ ३ ॥

चक्र के चिन्ह को भाव वर्णन

एक-चक्र ब्रजभूमि मैं श्रीराधा को राज ।
चक्र चिन्ह प्रगटित करन यह गुन चरन बिराज ॥ १ ॥
मान समै हरि आप ही चरन पलोटत आय ।
कृष्ण कमल कर चिन्ह सो राधा-चरन लखाय ॥ २ ॥
दहन पाप निज जनन के हरन हृदय-तम घोर ।
तेज तत्व को चिन्ह पद मोहन चित को चोर ॥ ३ ॥

ध्वज के चिन्ह को भाव वर्णन

परम विजय सब तियन सो श्रीराधा पद जान ।
यह दरसावन हेतु पद ध्वज को चिन्ह महान ॥ १ ॥

लता चिन्ह को भाव वर्णन

पिया मनोरथ की लता चरन बसी मनु आय ।
लता चिन्ह ह्वै प्रगट सोइ राधा-चरन दिखाय ॥ १ ॥
करि आश्रय श्रीकृष्ण को रहत सदा निरधार ।
लता-चिन्ह एहि हेत सो रहत न बिनु आधार ॥ २ ॥
देवी वृंदा विपिन की प्रगट करन यह बात ।
लता चिन्ह श्रीराधिका धारत पद-जलजात ॥ ३ ॥

सकल महौषधि गनन की परम देवता आप।
सोइ भव रोग महौषधी चरन लता की छाप ॥ ४ ॥
लता चिन्ह पद आपुके वृक्ष चिन्ह पद श्याम।
मनहुँ रेख प्रगटित करत यह संबंध ललाम ॥ ५ ॥
चरन धरत जा भूमि पर तहाँ कुंजमय होत।
लता चिन्ह श्री कमल पद या हित करत उदोत ॥ ६ ॥
पाग चिन्ह मानहुँ रह्यौ लपटि लता आकार।
मानिनि के पद-पद्म मे बुधजन लेहु विचार ॥ ७ ॥

पुष्प के चिन्ह को भाव वर्णन

कीरतिमय सौरभ सदा या सो प्रगटित होय।
या हित चिन्ह सुपुष्प को रह्यो चरन-तल सोय ॥ १ ॥
पाय पलोटत मान मे चरन न होय कठोर।
कुसुम चिन्ह श्रीराधिका धारत यह मति मोर ॥ २ ॥
सब फल याही सो प्रगट सेओ येहि चित लाय।
पुष्प चिन्ह श्री राधिका पद येहि हेत लखाय ॥ ३ ॥
कोमल पद लखि कै पिया कुसुम पाँवड़े कीन।
सोइ श्रीराधा कमल पद कुसुमित चिन्ह नवीन ॥ ४ ॥

कंकण के चिन्ह को भाव वर्णन

पिय-बिहार मै मुखर लखि पद तर दीनो डारि।
कंकन को पद चिन्ह सोइ धारत पद सुकुमारि ॥ १ ॥
पिय कर को निज चरन को प्रगट करन अति हेत।
मानिनि-पद मै वलय को चिन्ह दिखाई देत ॥ २ ॥

कमल के चिन्ह को भाव वर्णन

कमलादिक देवी सदा सेवत पद दै चित्त।
कमल चिन्ह श्रीकमल पद धारत एहि हित नित्त ॥ १ ॥

अति कोमल सुकुमार श्री चरन कमल है आप ।
नेत्र कमल के दृष्टि की सोई मानौ छाप ॥ २ ॥
कमल रूप वृंदा बिपिन बसत चरन मे सोइ ।
अधिपतित्व सूचित करत कमल कमल पद होइ ॥ ३ ॥
नित्य चरन सेवन करत विष्णु जानि सुख-सद्म ।
पद्मादिक आयुधन के चिन्ह सोई पद-पद्म ॥ ४ ॥
पद्मादिक सब निधिन को करत पद्म-पद दान ।
याते पद्मा-चरन मैं पद्म चिन्ह पहिचान ॥ ५ ॥

ऊर्ध रेखा के चिन्ह को भाव वर्णन

अति सूधो श्री चरन को यह मारग निरुपाधि ।
ऊरध रेखा चरन मैं ताहि लेहु आराधि ॥ १ ॥
शरन गए ते तरहिंगे यहै लीक कहि दीन ।
ऊरध रेखा चिन्ह है सोई चरन नवीन ॥ २ ॥

अंकुश के चिन्ह को भाव वर्णन

बहु-नायक पिय-मन-सुगज मति औरन पै जाय ।
या हित अंकुश चिन्ह श्री राधा-पद दरसाय ॥ १ ॥

अर्ध-चन्द्र के चिन्ह को भाव वर्णन

पूरन दस ससि-नखन सों मनहुँ अनादर पाय ।
सूखि चंद्र आधो भयो सोई चिन्ह लखाय ॥ १ ॥
जे अ-भक्त कु-रसिक कुटिल ते न सकहि इत आय ।
अर्ध-चंद्र को चिन्ह येहि हेत चरन दरसाय ॥ २ ॥
निष्कलंक जग-वंद्य पुनि दिन दिन याकी वृद्धि ।
अर्ध-चंद्र को चिन्ह है या हित करत समृद्धि ॥ ३ ॥
राहु ग्रसै पूरन ससिहि ग्रसै न येहि लखि वक्र ।
अर्ध-चन्द्र को चिन्ह पद देखत जेहि शिव-सक्र ॥ ४ ॥

यव के चिन्ह को भाव वर्णन

परम प्रथित निज यश-करन नर को जीवन प्रान ।
राजस यव को चिन्ह पद राधा धरत सुजान ॥ १ ॥
भोजन को मत सोच करु भजु पद तजु जंजाल ।
जव को चिन्ह लखात पद हरन पाप को जाल ॥ २ ॥

इति श्री वाम पद चिन्हम् ।

पाश के चिन्ह को भाव वर्णन

भव-बंधन तिनके कटै जे आवै करि आस ।
यह आशय प्रगटित करत पास प्रिया-पद पास ॥ १ ॥
जे आवै याकी सरन कबहुँ न ते छुटि जाहि ।
पास-चिन्ह श्री राधिका येहि कारन पद माहि ॥ २ ॥
पिय मन बंधन हेत मनु पास-चिन्ह पद सोभ ।
सेवत जाको शंभु अज भक्ति दान के लोभ ॥ ३ ॥

गदा के चिन्ह को भाव वर्णन

जे आवत याकी शरन पितर सबै तरि जात ।
गया गदाधर चिन्ह पद या हित गदा लखात ॥ १ ॥

रथ के चिन्ह को भाव वर्णन

जामै श्रम कछु होय नहि चलत समय बन-कुंज ।
या हित रथ को चिन्ह पग सोभित सब सुख-पुंज ॥ १ ॥
यह जग सब रथ रूप है सारथि प्रेरक आप ।
या हित रथ को चिन्ह है पग मै प्रगट प्रताप ॥ २ ॥

वेदी के चिन्ह को भाव वर्णन

अग्नि रूप है जगत को किया पुष्टि रस दान ।
या हित वेदी चिन्ह है प्यारी-चरन महान ॥ १ ॥

यग्य रूप श्रीकृष्ण है स्वधा रूप है आप।
याते वेदी चिन्ह है चरन हरन सब पाप ॥ २ ॥

कुंडल के चिन्ह को भाव वर्णन

प्यारी पग नूपुर मधुर धुनि सुनिबे के हेत।
मनहुँ करन पिय के बसे चरन सरन सुख देत ॥ १ ॥
सांख्य योग प्रतिपाद्य है ये दोउ पद जलजात।
या हित कुंडल चिन्ह श्री राधा-चरन लखात ॥ २ ॥

मत्स्य के चिन्ह को भाव वर्णन

जल बिनु मीन रहै नहीं तिमि पिय बिनु हम नाहिं।
यह प्रगटावन हेत है मीन चिन्ह पद माँहि ॥ १ ॥

पर्व्वत के चिन्ह को भाव वर्णन

सब ब्रज पूजत गिरिवरहि सो सेवत है पाय।
यह महात्म्य प्रगटित करन गिरिवर चिन्ह लखाय ॥ १ ॥

शंख के चिन्ह को भाव वर्णन

कबहूँ पिय को होइ नहि बिरह ज्वाल की ताप।
नीर तत्व को चिन्ह पद या सो धारत आप ॥ १ ॥

इति श्री दक्षिन पद चिन्हम्।

भक्त-मंजूषा आदिक ग्रन्थ सों अन्य वर्णन

जव वेड़ो अंगुष्ठ मध ऊपर मुख को छत्र।
दक्षिन दिसि को फरहरै ध्वज ऊपर मुख तत्र ॥ १ ॥
पुनि पताक ताके तले कल्पलता के रेख।
जो ऊपर दिसि को वढ़ी देत सकल फल लेख ॥ २ ॥

ऊरध रेखा कमल पुनि चक्र आदि अति स्वच्छ ।
दक्षिण श्री हरि के चरण इतने चिन्ह प्रतच्छ ॥ ३ ॥
श्री राधा के वाम पद अष्ट पत्र को पद्म ।
पुनि कनिष्ठिका के तले चक्र चिन्ह को सद्म ॥ ४ ॥
अग्र शृंग अंकुश करौ ताही के ढिग ध्यान ।
नीचे मुख को अर्ध ससि एड़ी मध्य प्रमान ॥ ५ ॥
ताके ढिग है वलय को चिन्ह परम सुख-मूल ।
दक्षिन पद के चिन्ह अब सुनहु हरन भव-सूल ॥ ६ ॥
शंख रह्यौ अंगुष्ठ मै ताको मुख अति हीन ।
चार अँगुरियन के तले गिरिवर चिन्ह नवीन ॥ ७ ॥
ऊपर सिर सब अंग-जुत रथ है ताके पास ।
दक्षिन दिसि ताके गदा बाँए शक्ति विलास ॥ ८ ॥
एडी पै ताके तले ऊपर मुख को मीन ।
चरन-चिन्ह तेहि भाँति श्री राधा-पद लखि लीन ॥ ९ ॥

अन्य मत सो श्री स्वामिनी जू के चरन चिन्ह

वाम चरन अंगुष्ठ तल जव को चिन्ह लखाइ ।
अर्ध चरन लौ घूमि कै ऊरध रेखा जाइ ॥ १ ॥
चरन-मध्य ध्वज अब्ज है पुष्प-लता पुनि सोह ।
पुनि कनिष्ठिका के तले अंकुश नासन मोह ॥ २ ॥
चक्र मूल मे चिन्ह है कंकन है अरु छत्र ।
एड़ी मे पुनि अर्ध ससि सुनो अबै अन्यत्र ॥ ३ ॥
एड़ी मे सुभ सैल अरु स्यंदन ऊपर राज ।
शक्ति गदा दोउ ओर दर अँगुठा मूल विराज ॥ ४ ॥
कनिष्ठिका अँगुरी तले वेदी सुंदर जान ।
कुण्डल है ताके तले दक्षिन पद पहिचान ॥ ५ ॥

तुलसी शब्दार्थ प्रकाश के मत सों युगल स्वरूप के चिन्ह

छप्पय

ऊरध रेखा छत्र चक्र जव कमल ध्वजावर।
अंकुस कुलिस सुचारि सथीये चारि जंबुधर॥
अष्टकोन दश एक लछन दहिने पग जानौ।
वाम पाद आकास शंखवर धनुष पिछानौ॥
गोपद त्रिकोन घट चारि ससि मीन आठ ए चिन्हवर।
श्रीराधा-रमन उदार पद ध्यान सकल कल्यानकर॥ १॥

पुष्प लता जव वलय ध्वजा ऊरध रेखा वर।
छत्र चक्र बिधु कलस चारु अंकुश दहिने धर॥
कुंडल बेदी शंख गदा बरछी रथ मीना।
वाम चरन के चिन्ह सप्त ए कहत प्रवीना॥
ऐसे सत्रह चिन्ह-जुत राधा-पद बंदत अमर।
सुमिरत अघहर अनघवर नंद-सुअन आनंदकर॥ २॥

गर्ग-संहिता के मत सों चरण-चिन्ह वर्णन

दोहा

चक्रांकुश यव छत्र ध्वज स्वस्तिक बिंदु नवीन।
अष्टकोन पवि कमल तिल शंख कुंभ पुनि मीन॥ १॥
ऊरध रेख त्रिकोन धनु गोखुर आधो चंद।
ए उनीस सुभ चिन्ह निज चरन धरत नँद-नंद॥ २॥

अन्य मत सो श्रीमती जू के चरन-चिन्ह वर्णन

केतु छत्र स्यंदन कमल ऊरध रेखा चक्र।
अर्ध चंद्र कुश बिन्दु गिरि शंख शक्ति अति वक्र॥ १॥
लोनी लता लवंग की गदा बिन्दु द्वै जान।
सिंहासन पाठीन पुनि सोभित चरन विमान॥ २॥

ए अष्टादश चिन्ह श्री राधा-पद मे जान।
जा कहँ गावत रैन दिन अष्टादसौ पुरान ॥ ३ ॥
जग्य श्रुवा को चिन्ह है काहू के मत सोइ।
पुनि लक्ष्मी को चिन्हहू मानत हरि-पद कोइ ॥ ४ ॥
श्रीराधा-पद मोर को चिन्ह कहत कोउ संत।
द्वै फल की बरछी कोऊ मानत पद कुश अंत ॥ ५ ॥

श्री मद्भागवत के अनेक टीकाकारन के मत सों श्री चरण-चिन्ह को वर्णन

लाँबो प्रभु को श्री चरन चौदह अंगुल जान।
षट अंगुल विस्तार मै याको अहै प्रमान ॥ १ ॥
दक्षिन पद के मध्य मै ध्वजा-चिन्ह सुभ जान।
अँगुरी नीचे पद्म है, पवि दक्षिन दिसि जान ॥ २ ॥
अंकुश वाके अग्र है, जव अँगुष्ट के मूल।
स्वस्तिक काहू ठौर है हरन भक्त-जन-सूल ॥ ३ ॥
तल सो जहँ लौ मध्यमा सोभित ऊरध रेख।
ऊरध गति तेहि देत है जो वाको लखि लेख ॥ ४ ॥
आठ अँगुल तजि अग्र सो तर्जनि अँगुठा वीच।
अष्टकोन को चिन्ह लखि सुभ गति पावत नीच ॥ ५ ॥
वाम चरन मै अग्र सो तजि कै अंगुल चार।
बिना प्रतंचा को धनुष सोभित अतिहि उदार ॥ ६ ॥
मध्य चरन त्रैकोन है अमृत कलश कहुँ देख।
द्वै मंडल को विंदु नभ चिन्ह अग्र पै लेख ॥ ७ ॥
अर्ध चंद्र त्रैकोन के नीचे परत लखाय।
गो-पद नीचे धनुष के तीरथ को समुदाय ॥ ८ ॥
एड़ी पै पाठीन है दोउ पद जंबू-रेख।
दक्षिन पद अंगुष्ट मधि चक्र चिन्ह को लेख ॥ ९ ॥

छत्र चिन्ह ताकें तले शोभित अतिहि पुनीत।
बाम अँगूठा शंख है यह चिन्हन की रीत ॥१०॥
जहँ पूरन प्रागट्य तहँ उन्निस परत लखाइ।
अंश कला मैं एक द्वै तीन कहूँ दरसाइ ॥११॥
बाल-बोधिनी तोषिनी चक्र-वर्त्तिनी जान।
वैष्णव-जन-आनंदिनी तिनको यहै प्रमान ॥१२॥
चरन-चिन्ह निज ग्रंथ मैं यही लिख्यौ हरिराय।
विष्णु पुरान प्रमान पुनि पद्म-बचन कों पाय ॥१३॥
स्कंध-मत्स्य के वाक्य सों याको अहै प्रमान।
हयग्रीव की संहिता वाहू मै यह जान ॥१४॥

श्री राधिका-सहस्र-नाम के मत सों चिन्ह को वर्णन

कमल गुलाब अटा सु-रथ कुंडल कुंजर छत्र।
फूल माल अरु बीजुरी दंड मुकुट पुनि तत्र ॥ १ ॥
पूरन ससि को चिन्ह है बहुरि ओढ़नी जान।
नारदीय के बचन को जानहु लिखित प्रमान ॥ २ ॥

श्री महाप्रभु श्री आचार्य्य जी के चरण-चिन्ह वर्णन

छप्पय

कमल पताका गदा वज्र तोरन अति सुंदर।
कुसुमलता पुनि धनुप धरत दक्षिन पद मैं वर ॥
ध्वज अंकुश झष चक्र अष्टदल अंवुद मानौ।
अमृत-कुंभ यव चिन्ह वाम पद मैं पुनि जानौ ॥
तैलंग वंश सोभित-करन विष्णु स्वामि पथ प्रगट कर।
श्री श्री वल्लभ-पद-चिन्ह ये हृदय नित्य 'हरिचंद' धर ॥ १ ॥

श्री रामचन्द्र जी के चरण-चिन्ह वर्णन

स्वस्तिक ऊरध रेख कोन अठ श्रीहल-मूसल ।
अहि वाणांबर वज्र सु-रथ यव कंज अष्टदल ।।
कल्पवृक्ष ध्वज चक्र मुकुट अंकुश सिंहासन ।
छत्र चॅवर यम-दंड माल यव की नर को तन ।।
चौवीस चिन्ह ये राम-पद प्रथम सुलच्छन जानिए ।
'हरिचंद' सोई सिय वाम पद जानि ध्यान उर आनिए ।। १ ।।

सरयू गोपद महि जम्बू घट जय पताक दर ।
गदा अर्ध ससि तिल त्रिकोन षटकोन जीव वर ।।
शक्ति सुधा सर त्रिवलि मीन पूरन ससि वीना ।
वंशी धनु पुनि हंस तून चन्द्रिका नवीना ।।
श्री राम-वाम पद चिन्ह सुभ ए चौबिस शिव उक्त सब ।
सोइ जनकनंदिनी दक्ष पद भजु सब तजु 'हरिचंद' अब ।। २ ।।

रसिकन के हित ये कहे चरन-चिन्ह सब गाय ।
मति देखै यहि और कोउ करियो वही उपाय ।। १ ।।
चरन-चिन्ह व्रजराय के जो गावहि मन लाय ।
सो निहचै भव-सिंधु को गोपद सम करि जाय ।। २ ।।
लोक वेद कुल-धर्म बल सब प्रकार अति हीन ।
पै पद-बल व्रजराज के परम ढिठाई कीन ।। ३ ।।
यह माला पद-चिन्ह की गुही अमोलक रत्न ।
निज सुकंठ मैं धारियो अहो रसिक करि जत्न ।। ४ ।।
भटक्यौ बहु विधि जग विपिन मिल्यौ न कहुँ विश्राम ।
अब आनंदित ह्वै रह्यौ पाइ चरन घनस्याम ।। ५ ।।
दोऊ हाथ उठाइ कै कहत पुकारि पुकारि ।
जो अपनो चाहौ भलौ तौ भजि लेहु मुरारि ।। ६ ।।

सुत तिय गृह धन राज्य हू या मै सुख कछु नाहि ।
परमानंद प्रकास इक कृष्ण-चरन के माहि ॥ ७ ॥
वेद भेद पायो नहीं भए पुरान पुरान ।
स्मृतिहू की सब स्मृति गई पै न मिले भगवान ॥ ८ ॥
मोरौ मुख घर ओर सो तोरौ भव के जाल ।
छोरौ सब साधन सुनौ भजौ एक नँदलाल ॥ ९ ॥
अहो नाथ ब्रजनाथ जू कित त्यागौ निज दास ।
बेगहि दरसन दीजिये व्यर्थ जात सब साँस ॥१०॥
मरै नैन जो नहि लखै मरै श्रवन बिनु कान ।
मरैं नासिका करहि नहि जे तुलसी-रस घ्रान ॥११॥
जीवन तुम बिनु व्यर्थ है प्यारे चतुर सुजान ।
यासो तो मरिबो भलौ तपत ताप ते प्रान ॥१२॥
निज अंगीकृत जीव को दसा देखि अति दीन ।
क्यों न द्रवत हरि बेगही करुना-करन प्रवीन ॥१३॥
निठुराई मत कीजिये नाहीं तौ प्रन जाय ।
दया-समुद्र कृपायतन करुना-सीव कहाय ॥१४॥
तुमरे तुमरे सब कहे भे प्रसिद्ध जग माहि ।
कहो सु तुम कहँ छाँड़ि कै कृपासिन्धु कहँ जाहि ॥१५॥
जद्यपि हम सब भाँति ही कुटिल क्रूर मतिमंद ।
तदपि उधारहु देखि कै अपनी दिसि नँद-नंद ॥१६॥
कहूँ हँसै नहि दीन लखि मोहि जग के नँदलाल ।
दीन-बंधु के दास को देखहु ऐसो हाल ॥१७॥
श्रीराधे वृपभानुजा तुम तौ दीन-दयाल ।
केहि हित निठुराई धरी देखि दीन को हाल ॥१८॥
मान समै करि कै दया देहु बिलम्ब लगाय ।
तौ हरि को मालुम परै आरत जन की हाय ॥१९॥

जौं हमरे दोसन लखौ तौ नहिं कछु अवलंब ।
अपुनी दीन-दयालता केवल देखहु अंब ॥२०॥
श्रीवल्लभ वल्लभ कहौ छोड़ि उपाय अनेक ।
जानि आपनो राखिहैं दीनबंधु की टेक ॥२१॥
साधन छाँड़ि अनेक बिधि परि रहु द्वारे आय ।
अपनो जानि निबाहिहैं करि कै कोउ उपाय ॥२२॥
श्री जमुना-जल पान करु वसु वृंदावन धाम ।
मुख मे महाप्रसाद रखु लै श्री वल्लभ नाम ॥२३॥
तन पुलकित रोमांच करि नैनन नीर बहाव ।
प्रेम-मगन उन्मत्त ह्वै राधा राधा गाव ॥२४॥
ब्रज-रज मै लोटत रहौ छोड़ि सकल जंजाल ।
चरन राखि विश्वास दृढ़ भजु राधा-गोपाल ॥२५॥
सब दीनन की दीनता सब पापिन को पाप ।
सिमिट आइ मो मे रह्यो यह मन समझहु आप ॥२६॥
ताहू पै निस्तारियै अपनी ओर निहारि ।
अंगीकृत रच्छहि बड़े यह जिय धर्म बिचारि ॥२७॥
प्राननाथ ब्रजनाथ जू आरति-हर नँद-नंद ।
धाइ भुजा भरि राखिये डूबत भव 'हरिचंद' ॥२८॥
मरौ ज्ञान वेदान्त को जरौ कर्म को जाल ।
दया-दृष्टि हम पै करौ एक नन्द के लाल ॥२९॥
साधुन को सँग पाइ कै हरि-जस गाइ बजाइ ।
नृत्य करत हरि-प्रेम मै ऐसे जनम बिहाइ ॥३०॥
अहो सहो नहि जात अब वहुत भई नँद-नंद ।
करुना करि करुनायतन राखहु जन 'हरिचंद' ॥३१॥

इति

"संचिन्तयेद्भगवतश्चरणारविन्द,
वज्रांकुशध्वजसरोरुहलांछनाढ्यम् ।
उत्तुंगरक्तविलसन्नखचक्रवाल,
ज्योत्स्नाभिराहरमहद्धृदयान्धकारम् ॥१॥

यच्छौचनिसृतसरित्प्रवरोदकेन,
तीर्थेन मूर्ध्न्यधिकृतेन शिवः शिवोभूत् ।
ध्यातुर्मनश्शमलशैलनिसृष्टवज्र,
ध्यायेच्चिरं भगवतश्चरणारविन्दम् ॥२॥"

प्रेम-मालिका

TO

THE LOVE

THESE

Few Pages are Affectionately

DEDICATED

WITH THE GOOD WISHES

OF

HARISH CHANDRA

BENARES.
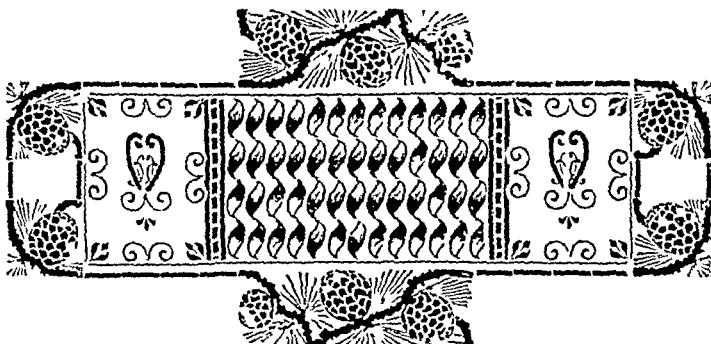
प्रेम-मालिका

राग यथा-रुचि

प्यारी छबि की रासि बनी ।
जाहि बिलोकि निमेष न लागत श्री वृषभानु-जनी ॥
नंद-नँदन सों बाहु मिथुन करि ठाढ़ी जमुना-तीर ।
करक होत सौतिन के छबि लखि सिंह कमर पर चीर ॥
कीरति की कन्या जग-धन्या अन्या तुला न वाकी ।
वृश्चिक सी कसकत मोहन-हिय भौंह छबीली जाकी ॥
धन धन रूप देखि जेहि प्रति छिन मकरध्वज-तिय लाजै ।
जुग कुच-कुंभ वढ़ावत सोभा मीन नयन लखि भाजै ॥
बैस-संधि-संक्रौन-समय तन जाके वसत सदाई ।
'हरीचंद' मोहन बड़भागी जिन अंकम करि पाई ॥१॥

आजु तन नीलाम्बर अति सोहै ।
तैसे ही केश खुले मुख ऊपर देखत ही मन मोहै ॥
मनु तम-गन लियो जीति चन्द्रमा सौतिन मध्य बँध्यो है ।
कै कवि निज जिजमान जूथ मे सुंदर आइ वस्यौ है ॥

श्री जमुना जल कमल खिल्यौ कोउ लखि मन अलि ललच्यौ है।
जीति तमोगुन को ताके सिर मनु सतगुन निवस्यौ है ।।
सघन तमाल कुंज मैं मनु कोउ कुंद फूल प्रगट्यौ है।
'हरीचंद' मोहन-मोहनि छबि बरनै सो कवि को है ।।२।।

राग सारंग

अहो पिय पलकन पै धरि पाँव।
ठीक दुपहरी तपत भूमि मैं नाँगे पद मत आव ।।
करुना करि मेरो कह्यौ मानिकै धूपहि मैं मति धाव।
मुरझानो लागत मुख-पंकज चलत चहूँ दिसि दाव ।।
जा पद को निज कुच अरु कर पै धरत करत सकुचाव।
जाको कमला राखत है नित कर मैं करि करि चाव ।।
जामैं कली चुभत कुसुमन की कोमल अतिहि सुभाव।
जो मम हृदय कमल पैं विहरत निसि दिन प्रेम-प्रभाव ।।
सोइ कोमल चरनन सों मो हित धावत हौ ब्रजराव।
'हरीचंद' ऐसी मति कीजै सह्यौ न जात बनाव ।।३।।

नैना मानत नाही, मेरे नैना मानत नाहीं।
लोक-लाज-सीकर मैं जकरे तऊ उतै खिच जाही ।।
पचि हारे गुरुजन सिख दै कै सुनत नही कछु कान।
मानत कह्यौ नाहि काहू को जानत भए अजान ।।
निज चवाव सुनि औरहु हरखत उलटी रीति चलाई।
मदिरा प्रेम पिये पागल ह्वै इत उत डोलत धाई ।।
पर-बस भए मदनमोहन के रंग रँगे सब त्यागी।
'हरीचंद' तजि मुख-कमलन अलि रहै कितै अनुरागी ।।४।।

नैन भरि देखि लेहु यह जोरी।
मनमोहन सुन्दर नट-नागर श्री वृषभानु-किसोरी ।।

कहा कहूँ छवि कहि नहि आवै वे साँवर यह गोरी ।
ये नीलाम्बर सारी पहिने उनको पीत पिछौरी ।।
एक रूप एक बेस एक बय बरनि सकै कवि को री ।
'हरीचंद' दोउ कुंजन ठाढ़े हँसत करत चित-चोरी ।।५।।

सखी री देखहु बाल-विनोद ।
खेलत राम-कृष्ण दोउ आँगन किलकत हँसत प्रमोद ।।
कबहुँ घुटुरुअन दौरत दोउ मिलि धूर धूसरित गात ।
देखि देखि यह बाल-चरित-छवि जननी बलि बलि जात ।।
झगरत कबहुँ दोउ आनँद भरि कबहुँ चलत है धाय ।
कबहुँ गहत माता की चोटी माखन माँगत आय ।।
घर घर ते आवत बृजनारी देखन यह आनंद ।
बाल रूप क्रीड़त हरि आँगन छवि लखि बलि 'हरिचंद' ।।६।।

राग केदारा चौताल

अरी हरि या मग निकसे आइ अचानक, हौ तो झरोखे रही ठाढ़ी ।
देखत रूप ठगौरी सी लागी, बिरह-बेलि उर बाढ़ी ।।
गुरुजन के भय संग गई नहि, रहि गई मनहुँ चित्र लिखि काढ़ी ।
'हरीचंद' बलि ऐसी लाज मैं लगौ री आग, हौ बिरहा दुख दाढ़ी ।।७।।

अरी सखी गाज परौ ऐसी लोक-लाज पै, मदनमोहन सँग जान न पाई ।
हौ तो झरोखे ठाढ़ी देखत ही कछु, आए इतै मै कन्हाई ।।
औचक दीठ परी मेरे तन, हँसि कछु बंसी बजाई ।
"हरीचंद' मोहि बिबस छोड़ि कै, तन मन धन प्रान लीनौ सँग लाई ।।८।।

राग बिहागरा

सखी मोरे सैया नहिं आये बीति गई सारी रात ।
दीपक-जोति मलिन भई सजनी होय गयो परभात ।।

देखत बाट भई यह बिरियाँ बात कही नहि जात ।
'हरीचंद' बिन बिकल बिरहिनी ठाढ़ी है पछितात ।।९।।

सखी मोहि पिया सो मिला दे दैहौं गले को हार ।
मग जोहत सारी रैन गँवाई मिले न नंद-कुमार ।।
उन पीतम सो यौं जा कहियो तुम बिनु व्याकुल नार ।
'हरीचंद' क्यों सुरति बिसारी तुम तो चतुर खिलार ।।१०।।

नैन भरि देखौ गोकुल-चंद ।
श्याम बरन तन खौर बिराजत अति सुन्दर नँद-नंद ।।
बिथुरी अलकैं मुख पै झलकैं मनु दोउ मन के फंद ।
मुकुट लटक निरखत रबि लाजत छबि लखि होत अनंद।।
सँग सोहत बृषभानु-नंदिनी प्रमुदित आनँद-कंद ।
'हरीचंद' मन लुब्ध मधुप तहँ पीवत रस मकरंद ।।११।।

नैन भरि देखो श्री राधा बाल ।
मुख छबि लखि पूरन ससि लाजत सोभा अतिहि रसाल ।।
मृग से नैन कोकिल सी बानी अरु गयंद सी चाल ।
नख सिख लौं सब सहजहि सुन्दर मनहुँ रूप की जाल ।।
वृंदाबन की कुंज-गलिन मैं सँग लीने नँदलाल ।
'हरीचंद' बलि बलि या छबि पर राधा-रसिक गोपाल ।।१२।।

सखी हम कहा करैं कित जायँ ।
बिनु देखे वह मोहनि मूरति नैना नाहिं अघायँ ।।
कछु न सुहात धाम धन पति सुत मात पिता परिवार ।
बसति एक हिय मैं उनकी छबि नैननि वही निहार ।।
बैठत उठत सयन सोवत निस चलत फिरत सब ठौर ।
नैनन तें वह रूप रसीलो टरत न एक पल और ।।

हमरे तन धन सरबस मोहन मन बच क्रम चित माहि ।
पै उनके मन की गति सजनी जानि परत कछु नाहि ।।
सुमिरन वही ध्यान उनको ही मुख मे उनको नाम ।
दूजी और नाहि गति मेरी बिनु मोहन घनश्याम ।।
नैना दरसन बिनु नित तलफै वचन सुनन को कान ।
बात करन को रसना तलफै मिलबे को ए प्रान ।।
हम उनकी सब भाँति कहावहि जगत-वेद सरनाम ।
लोक-लाज पति गुरुजन तजिकै एक भज्यौ घनश्याम ।।
सब बृज बरजौ परिजन खीझौ हमरे तौ हरि प्रान ।
'हरीचंद' हम मगन प्रेम-रस सूझत नाहिन आन ।।१३।।

ठुमरी

तू मिलि जा मेरे प्यारे ।
तेरे बिना मनमोहन प्यारे व्याकुल प्रान हमारे ।
'हरीचंद' मुखड़ा दिखला जा इन नैनन के तारे ।। १४ ।।

राग रामकली

ऐसी नहि कीजै लाल, देखत सब सँग को बाल,
काहे हरि गए आजु बहुतै इतराई ।
सूधे क्यौ न दान लेहु, अँचरा मेरो छाँड़ि देहु,
जामैं मेरी लाज रहै करौ सो उपाई ।।
जानत व्रज प्रीत सबै, औरहू हँसैंगे अबै,
गोकुल के लोग होत बडे ही चवाई ।
'हरीचंद' गुप्त प्रीति, बरसत अति रस की रीति,
नेकहूँ जो जानै कोउ प्रगटत रस जाई ।।१५।।

छाँड़ौ मेरी बहियाँ लाल, सीखी यह कौन चाल,
हा हा तुम परसत तन औरन की नारी ।

अँगुरी मेरी मुरुक गई, परसत तन पीर भई,
भीर भई देखत सब ठाढ़ीं बृज-नारी ॥
बाट परौ ऐसी बात, मोहि तौ नहीं सुहात,
काहे इतरात करत अपनो हठ भारी ।
'हरीचंद' लेहु दान, नाही तौ परैगी जान,
नेक करो लाज छाँड़ौ अंचल गिरिधारी ॥१६॥

राग सारंग

हमारे घर आओ आजु प्रीतम प्यारे ।
फूलन ही की सेज बिछाई फूलन के चौबारे ॥
कोमल चरनन-हित फूलन के रचि पाँवड़े सँवारे ।
'हरीचंद' मेरो मन फूल्यौ आउ भँवर मतवारे ॥१७॥

राग बिभास

आजु उठि भोर बृषभानु की नंदिनी,
फूल के महल ते निकसि ठाढ़ी भई ।
खसित सुभ सीस ते कलित कुसुमावली,
मधुप की मंडली मत्त रस ह्वै गई ॥
कछुक अलसात सरसात सकुचात अति,
फूल की बास चहुँ ओर मोदित छई ।
दास 'हरिचंद' छबि देखि गिरिधर लाल,
पीत पट लकुट सुधि भूलि आनंद-मई ॥१८॥

अहो हरि ऐसी तौ नहि कीजै ।
अपनी दिसि बिलोकि करुनानिधि हमरे दोस न लीजै ॥
तुव माया मोहित कहँ जानै कैसे मति रस भीजै ।
'हरीचंद' पहिलै अपनो करि फिरि काहे तजि दीजै ॥१९॥

राग सोरठ

बनी यह सोभा आजु भली ।
नथ, मै पोही प्रान-पियारे निज कर कुसुम-कली ।।
झीने बसन बिथुरि रही अलकैं श्री वृषभानु-लली ।
यह छबि लखि तन मन धन वार्यौ तहँ 'हरिचंद' अली ।।२०।।

फबी छबि थोरे ही सिंगार ।
बिना कंचुकी विनु कर कंकन सोभा बढ़ी अपार ।।
खसि रहि तन ते तनसुख सारी खुलि रहे सोधे बार ।
'हरीचंद' मन-मोहन प्यारो रिझयो है रिझवार ।।२१।।

आजु सिर चूड़ामनि अति सोहै ।
जूड़ो कसि बाँध्यो है प्यारी पीतम को मन मोहै ।।
मानहुँ तम के तुंग सिखर पै बाल चंद उदयो है ।
'हरीचंद' ऐसी या छबि को बरनि सकै सो को है ।।२२।।

राग विभास

भोर भये जागे गिरिधारी ।
सगरी निसि रस बस करि बितई कुंज-महल सुखकारी ।।
पट उतारि तिय-मुख अवलोकत चंद-बदन छबि भारी ।
बिलुलित केस पीक अरु अंजन फैली बदन उज्यारी ।।
नाहि जगावत जानि नींद वहु समुझि सुरति-श्रम भारी ।
छबि लखि मुदित पीत पट कर लै रहे भँवर निरुवारी ।।
संगम गुन मधुरे सुर गावत चौकि उठी तब प्यारी ।
रही लपटाइ जँभाइ पिया उर 'हरीचंद' बलिहारी ।।२३।।

जागे माई सुंदर स्यामा-स्याम ।
कछु अलसात जँभात परस्पर टूटि रही मोतिन की दाम ।।

धखुले नैन प्रेम की चितवनि आधे आधे वचन ललाम ।
लुलित अलक मरगजे बागे नख-छत उरसि सुदाम ।।
गम गुन गावत ललितादिक बाजत बीन तीन सुर ग्राम ।
'रीचंद' यह छबि लखि प्रमुदित तृन तोरत ब्रज-बाम ।।२४।।

राग देस

बेगाँ आवो प्यारा बनवारी म्हारी ओर ।
न बचन सुनताँ उठि धावौ नेकु न करहु अबारी ।।१।।
पासिंधु छाँड़ौ निठुराई अपनो बिरद सँभारी ।
नै जग दीनदयाल कहै छै क्यौं म्हारी सुरत बिसारी ।।
ण दान दीजै मोहि प्यारा होछूँ दासी थारी ।
ग्रै नहि दीन बैण सुनो लालन कौन चूक छे म्हारी ।।
उफैं प्रान रहै नहि तन मैं बिरह-बिथा बढ़ी भारी ।
'रीचंद' गहि बाँह उबारौ तुम तौ चतुर बिहारी ।।२५।।

राग सारंग

जयति वेणुधर चक्रधर शंखधर,
पद्मधर गदाधर शृंगधर वेत्रधारी ।
मुकुटधर क्रीटधर पीतपट-कटिनधर,
कंठ-कौस्तुभ-धरन दुखहारी ।।
मत्स को रूप धरि वेद प्रगटित करन,
कच्छ को रूप जल मथनकारी ।
दलन हिरनाच्छ वाराह को रूप धरि,
दन्त के अग्र धर पृथ्वि भारी ।।
रूप नरसिंह धर भक्त रच्छा-करन,
हिरनकश्यप-उदर नख विदारी ।

रूप बावन धरन छलन बलिराज को,
परसुधर रूप छत्री सँहारी ॥
राम को रूप धर नास रावन करन,
धनुपधर तीरधर जित सुरारी ।
मुशलधर हलधरन नीलपट सुभगधर,
उलटि करपन करन जमुन-वारी ॥
बुद्ध को रूप धर बेद निंदा करन,
रूप धर कल्कि कलजुग-सँघारी ।
जयति दश रूपधर कृष्ण कमलानाथ,
अतिहि अज्ञात लीला बिहारी ॥
गोपधर गोपिधर जयति गिरराजधर
राधिका बाहु पर बाहु धारी ।
भक्तधर संतधर सोइ 'हरिचंद' धर
वल्लभाधीश द्विज बेपकारी ॥२६॥

राग कन्हरा

दोउ कर जोरे ठाढ़ो बिहारी ।
मान कह्यौ तजि मान मया करि सुनि चन्द्रावलि प्यारी ॥
ये बहु-नायक मिलत भाग्य सो यह लै चित्त बिचारी ।
'हरीचंद' ब्रजचंद पिया वे तूँ चन्द्रावलि नारी ॥२७॥

राग विहाग

आजु नव कुंज बिहरत दोऊ रस भरे
प्रिया ब्रजचंद सँग चतुर चंद्रावली ।
सुरति श्रम स्वेद मुख परस्पर बढ़्यौ सुख
टूटि रही उरसि मुकुतानि हारावली ॥
गिरत नन बसन नहिं थिरत बेसरि तनिक
स्वसित सुभ सीस तें फलित कुसुमावली ।

सखो 'हरिचंद' लखि मूँदि दृग दोउ रही
पाइ आनँद परम बुद्धि भई बावली ॥२८॥

जयति राधिकानाथ चंद्रावली-प्रानपति
घोष-कुल-सकल-संताप-हारी।
गोपिका-कुमुद-बन-चंद्र साँवर बरन
हरन बहु बिरह आनंदकारी ॥
त्रिखित लोचन जुगल पान हित अमृतवपु
विमल-वृन्दाविपिन-भूमिचारी।
गाय गिरिराज के हृदय आनँद करन
नित्य बिह्वल-करन जमुन-बारी ॥
नंद के हृदय आनंद वर्धित-करन
भरनि जसुदा-मनसि मोद भारी।
बाल क्रीड़ा-करन नंद-मन्दिर सदा
कुंज मैं प्रौढ़ लीला बिहारी ॥
गोप-सागर-रतन सकल गुन-गन भरे
क्वनित स्वर सप्त मुख मुरलिधारी।
मंजु मंजीर पद कलित कटि किंकिनी
उरसि बनमाल सुन्दर सँवारी ॥
सदा निज भक्त संताप आरति-हरन
करन रस-दान अपनो बिचारी।
दास 'हरिचंद' कलि वल्लभाधीश ह्वै
प्रगट अज्ञात लीला बिहारी ॥२९॥

राग देव

स्यामा जी देखो आवे छे थारो रसियो।
कछु गातो कछु सैन बतातो कछु लखिकै हँसियो ॥

मोर मुकुट वाके सीस सोहणो पीतांबर कटि कसियो ।
'हरीचंद' पिय प्रेम रँगीलो थाके मन वसियो ॥३०॥

म्हारी सेजाँ आवो जू लाल बिहारी ।
रंग रँगीली सेज सँवारी लागी छे आशा थारी ॥
विरह-विथा बाढ़ी घणी ही मैसों नहि जात सँभारी ।
'हरीचंद'सो जाय कहो कोउ तलफै छे थारे विन प्यारी ॥३१॥

राग असावरी

सुन्दर श्याम कमलदल लोचन कोटिन जुग बीते बिनु देखे ।
तलफत प्रान विकल निसि वासर नैनन हूँ नहि लगत निमेखे ॥
कोउ मोहिं हँसत करत कोउ निंदा नाहिं समुझत कोउ प्रेम परेखे ।
मेरे लेखे जगत बावरो मै वावरी जगत के लेखे ॥
तापै ऊधव ज्ञान सुनावत कहत करहु जोगिन के भेखे ।
बलिहारी यह रीझ रावरी प्रेमिन लिखत जोग के लेखे ॥
बहुत सुने कपटी या जग मै पै तुमसे तो तुमही पेखे ।
'हरीचंद' कहा दोष तुम्हारो मेटै कौन करम की रेखे ॥३२॥

राग बिहाग

हम तौ श्री वल्लभ ही को जानै ।
सेवन वल्लभ-पद-पंकज को वल्लभ ही को ध्यानै ॥
हमरे मात पिता गुरु वल्लभ और नही उर आनै ।
'हरीचन्द' वल्लभ-पद-बल सो इन्द्रहु को नहि मानै ॥३३॥

अहो प्रभु अपनी ओर निहारौ ।
करिकै सुरति अजामिल गज की हमरे करम बिसारौ ।
'हरीचंद' डूबत भव-सागर गहि कर धाइ उबारौ ॥३४॥

हम तो मोल लिए या घर के ।
दास-दास श्री वल्लभ-कुल के चाकर राधा-बर के ॥
माता श्री राधिका पिता हरि बंधु दास गुन-कर के ।
'हरीचन्द' तुम्हरे ही कहावत नहि बिधि के नहि हर के ॥३५॥

राग परज

तुम क्यों नाथ सुनत नहि मेरी ।
हमसे पतित अनेकन तारे पावन की बिरुदावलि तेरी ॥
दीनानाथ दयाल जगतपति सुनिये बिनती दीनहु केरी ।
'हरीचन्द' को सरनहि राखौ अब तौ नाथ करहु मत देरी ॥३६॥

राग बिहाग

अहो हरि वेहू दिन कब ऐहैं ।
जा दिन मे तजि और संग सब हम ब्रज-बास बसैहैं ॥
संग करत नित हरि-भक्तन को हम नेकहु न अघैहैं ।
सुनत श्रवन हरि-कथा सुधारस महामत्त ह्वै जैहैं ॥
कब इन दोउ नैनन सों निसि दिन नीर निरंतर बहिहैं ।
'हरीचंद' श्री राधे राधे कृष्ण कृष्ण कब कहिहैं ॥३७॥

अहो हरि वह दिन बेगि दिखाओ ।
दै अनुराग चरन-पंकज को सुत-पितु-मोह मिटाओ ॥
और छोड़ाइ सबै जग-वैभव नित ब्रज-बास बसाओ ।
जुगल-रूप-रस-अमृत-माधुरी निस दिन नैन पिआओ ॥
प्रेम-मत्त ह्वै डोलत चहुँ दिसि तन की सुधि बिसराओ ।
निस दिन मेरे जुगल नैन सो प्रेम-प्रवाह बहाओ ॥
श्री वल्लभ-पद-कमल अमल मै मेरी भक्ति दृढ़ाओ ।
'हरीचंद' को राधा-माधव अपनो करि अपनाओ ॥३८॥

रसने, रटु सुन्दर हरि-नाम ।
मंगल-करन हरन सब असगुन करन कलपतरु काम ।।
तू तौ मधुर सलोनो चाहत प्राकृत स्वाद मुदाम ।
'हरीचंद' नहि पान करत क्यों कृष्ण-अमृत अभिराम ।।३९।।

उधारौ दीनबंधु महराज ।
जैसे है तैसे तुमरे ही नाहि और सों काज ।।
जौ बालक कपूत घर जनमत करत अनेक बिगार ।
तौ माता कहा वाहि न पूछत भोजन समय पुकार ।।
कपटहु भेष किए जो जाँचत राजा के दरबार ।
तौ दाता कहा वाहि देत नहि निज प्रन जानि उदार ।।
जौ सेवक सब भाँति कुचाली करत न एकौ काज ।
तऊ न स्वामि सयान तजत तेहि बाँह गहे की लाज ।।
विधि-निषेध कछु हम नहि जानत एक आस विश्वास ।
अब तौ तारे ही बनिहै नहि ह्वैहै जग उपहास ।।
हमरो गुन कोऊ नहि जानत तुमरो प्रन विख्यात ।
'हरीचंद' गहि लीजै भुज भरि नाहीं तो प्रन जात ।।४०।।

राग भैरव

लाल यह बोहनियाँ की बेरा ।
हौं अबही गोरस लै निकसी बेचन काज सवेरा ।।
तुम तौ याही ताक रहत हौ करत फिरत मग फेरा ।
'हरीचंद' झगरौ मति ठानो ह्वैहै आजु निबेरा ।।४१।।

रागिनी अहीरी

अरी यह को है साँवरो सो लँगर ढोटा ऐंड़ोई ऐंड़ो डोलै ।
काहू को कोहनी काहू को चुटकी काहू सो हँसि बोलै ।।

काहू की गहि कंचुकि छोरत काहू को घूँघट खोलै ।
'हरीचन्द' सब लाज गॅवाई बात कहै अनमोलै ॥४२॥

राग गौरी ताल चर्चरी

आजु नंदलाल पिय कुंज ठाढ़े भए
श्रवत सुभ सीस पै कलित कुसुमावली ।
मनहुँ निज नाथ ससि भूमि-गत देखिकै
खसित आकास ते तरल तारावली ॥
वहत सौरभ मिलित सुभग त्रैविधि पवन
गुंजरत महारस मत्त मधुपावली ।
दास 'हरिचंद' ब्रजचंद ठाढ़े मध्य,
राधिका बाम दक्षिण सुचन्द्रावली ॥४३॥

राग केदारा

फूलन के सब साज सजि गोरी कित बदन दुराए जात ।
फूलन की तन सारी फूलनि की छबि भारी फूली न हृदय समात ॥
फूल्यौ श्री बृन्दाबन फूलै तेरे अँग अँग काहे को सकुचात ।
'हरीचंद' हम जानि पिय जू सो रति मानी प्रीति छिपे न छिपात ॥४४॥

राग सारंग चर्चरी

आजु ब्रजचन्द्र तन लेप चन्दन किए,
ठाढ़े अति रस-भरे जमुना तीरे ।
फूल के आभरन बसन झीने बने,
खौर चन्दन दिए सीरे सीरे ॥
तैसही संग वृषभानु-नृपनंदिनी,
धारि चन्दन के तन चोली चीरे ।
दास 'हरिचन्द' बलि जात छबि देखि कै,
जयति बृजराज-सुत गोप बीरे ॥४५॥

राग सारंग

नटवर रूप निहार सखी री नटवर रूप निहार ।
गोहन लगी फिरत जाके हित कुल की लाज बिसार ।।
ललित त्रिभंग काछनी काछे अमल कमल से नैन ।
कर लै फूल फिरावत गावत मोहत कोटिक मैन ।।
जग उपहास सहे बहु भाँतिन जा दरसन के हेत ।
सो हरि नीके नैननि भरि के काहे देखि न लेत ।।
तुमरी प्रीति अलौकिक सजनी लखि न परै कछु ख्याल ।
'हरीचन्द' धनि धनि तुम दोऊ राधा अरु गोपाल ।।४६।।

राग हमीर

ठाढ़े हरि तरनि-तनैया-तीर ।
संग श्री कीरति-कुमारी पहिनि झीने चीर ।।
उरनि फूलन माल जा पै भँवर-गन की भीर ।
हाथ कमल लिए फिरावत राधिका बलबीर ।।
साँझ समय सोहावनो तहँ बहत त्रिविध समीर ।
वारने 'हरिचन्द' छवि लखि श्याम गौर सरीर ।।४७।।

राग केदारा

मेरेई पौरि रहत ठाढ़ो टरत न टारे नन्दराय जू को ढोटा ।
पाग रही भुव ढरकि छबीली जामैं बाँध्यौ है मंजुल चोटा ।।
चितवत मो तन फिरि फिरि हेरत कर लै वेनु बजावत ।
धरि अधरन वह ललन छबीलो नाम हमारोइ गावत ।।
सुन्दर कमल फिरावत चहुँ दिसि मो तन दृष्टि न टारै ।
'हरीचन्द' मन हरत हमारो हँसि हँसि पाग सँवारै ।।४८।।

मारग रोकि भयो ठाढ़ो जान न देत मोहि पूछत है तू को री ।
कौन गाँव कहा नाँव तिहारो ठाढ़ि रहि नेक गोरी ।।

कित चली जात तू वदन दुराए एरी मति की भोरी।
साँझ भई अब कहाँ जायगी नीकी है यह साँकरी खोरी ॥
बहुत जतन करि हारी ग्वालिनी जान दियो नहि तेहि घर ओरी।
'हरीचन्द' मिलि बिहरत दोऊ रैननि नन्दकुँवर वृषभानु किशोरी ॥४९॥

राग गौरी

नैना वह छवि नाहिन भूले।
दया भरी चहुँ दिसि की चितवनि नैन कमल-दल फूले ॥
वह आवनि वह हँसनि छबीली वह मुसकनि चित चोरै ॥
वह बतरानि सुरनि हरि की वह वह देखन चहुँ कोरै।
वह धीरी गति कमल फिरावन कर लै गायन पाछे।
वह बीरी मुख बेनु बजावनि पीत पिछौरी काछे ॥
पर-बस भए फिरत है नैना एक छन टरत न टारे।
'हरीचन्द' ऐसी छबि निरखत तन मन धन सब हारे ॥५०॥

बैठे लाल नवल निकुंजन माहीं।
अति रस भरे दोऊ अँग जोरि कै हिलि मिलि दै गलबाँही ॥
तैसे श्री गिरिराज शिला मे फूले कुसुम अनेकन भाँती।
तैसी वै जमुना अति सोभित लहकि रही कमलन की पाँती ॥
तैसेई भँवर गुँजार करत है तैसोइ त्रिविध बयार।
तैसेई सौरभ झरत अनेकन वृन्दावन तरु डार ॥
कर लै कमल फिरावत दोऊ उर फूलन की माल।
"हरीचन्द' बलि बलि यह छबि लखि राधा और गोपाल ॥५१॥

राग ईमन

तू तो मेरी प्रान-प्यारी नैन मै निवास करै
तू ही जो करैगी मान कैसे कै मनाइहै।

तू ही तो जीवन-प्रान तोहि देखि जीव राखैं
तू ही जो रहेगी रूसि हम कहाँ जाइहैं ।।
कियो मान राधे महरानी आजु पीतम सो
ऐसी जो खबरि कहूँ सौति सुनि पाइहै ।
'हरीचन्द' देखि लीजो सुनतहि दौरि दौरि
निज निज द्वार पै बधाई बजवाइहै ।।५२।।

प्यारे जू तिहारी प्यारी अति ही गरब भरी
हठ की हठीली ताहि आपु ही मनाइए ।
नैकहू न मानै सब भाँति हौं मनाय हारी
आपुहि चलिए ताहि बात बहराइए ।।
रिस भरि बैठि रही नेकहू न बोलै बैन
ऐसी जो मानिनि तेहि काहे को रिसाइए ।।
'हरीचन्द' जामे मानै करिए उपाय सोई
जैसे बनै तैसे ताहि पग परि लाइये ।।५३।।

आजु मैं देखे री आली री दोऊ
मिलि पौढ़े ऊँची अटारी ।
मुख सो मुख मिलाइ बीरी खात
रंग भरि नवल पिया प्रानप्यारी ।।
चाँदनी प्रकास चारु ओर छिरकाव भयो
सीतल चहुँ दिसि चलत बयारी ।
'हरीचन्द' सखीगन करत बिजना
जानि सुरति-श्रम भारी ।।५४।।

राग बिहाग

पौढ़े दोउ बातन के रस भीने ।
नीद न लेत अरुझि रहे दोऊ केलि-कथा चित दीने ।।

तैसइ सीतल सेज बिछाई सखि बिजन कर लीने।
'हरीचन्द' आलस भरि सोए ओढ़िकै पट झीने ॥५५॥

राग सारंग

मेरे प्यारे सों सँदेसवा कौन कहै जाय।
उर की बेदन हरे बचन सुनाय ॥
कोऊ सखी देइ मोरी पाती पहुँचाय ॥
जाइ कै बुलाय लावै बहुत मनाय।
मिलि 'हरिचन्द' मोरा जियरा जुड़ाय ॥ ५६ ॥

जमुना जू की तिवारी चलु सखि।
तेरो मग जोहत मनमोहन सुंदर गिरिवर-धारी ॥
तेरे हित छिरकाव कियो है सुंदर सेज सँवारी।
बिजन चलत फुहारे छूटत खस परदे रुचिकारी ॥
मृगमद चन्दन घोरि धरे हैं फूल-माल छबि भारी।
मिलि बिहरो दोऊ आनँद भरि 'हरीचन्द' बलिहारी ॥५७॥

साँझ के गए दुपहरी आए।
साँची बात कहो नँद-नंदन भले बने मन-भाए ॥
अब लौं बाट रही तुव हेरत साजि धरे सब साज।
बैठो हौं बींजना डुलाऊँ अब न जाहु ब्रजराज ॥
आए मेरे नैन सिराए सीतल जल लै पीजै।
रैनि नाहि तौ दुपहरिया मै 'हरीचन्द' सुख दीजै ॥५८॥

अरी कोऊ करिकै दया नेक ठाँव मोहि दीजौ धूप लगै मोहि भारी।
पाँव तपै मेरो गो चारत मै यह बोलत गिरिधारी ॥

सुनि यह बचन उसीर महल मैं लै आई सुकुमारी।
"हरीचन्द' येहि मिसि मिलि बिहरे नवल पिया अरु प्यारी ॥५९॥

अरी हौं बरजि रही बरज्यौ नहि मानत
दौरि दौरि बार बार धूप ही मै जाय।
सीरे खसखाने साजि सेजहू बिछाय राखी
भयो छिड़काव आइ नेकु तौ जुड़ाय॥
छूटत फुहारो चारु देखि तौ कौतुक आइ
मोतिन सी बूँद झरै चित ललचाय।
'हरीचन्द' मातु के बचन सुनि आइ पौढ़े
बिजन करत सब सखि हरखाय॥६०॥

राग केदारा

फूलि रही द्वै बेली श्री बृन्दाबन।
नव तमाल घनश्याम पिया श्री राधा पीत चमेली॥
और फूल फूली सब सखियाँ फूलनि पहिरि नवेली।
'हरीचन्द' मन फूल्यौ सब साज देखि भँवर भयो है हेली॥६१॥

राग सोरठ

सखी मोहिं लै चलि जमुना-तीर।
जहाँ मिले नटवर मनमोहन सुंदर श्याम शरीर॥
नंद-द्वार सब बड़े गोप मै हौ कैसे धँसि जाऊँ।
भौन माहि जसुदा जू के भय नीके लखन न पाऊँ॥
गुरुजन की भय अटा झरोखाहू नहि बैठन पावै।
राह बाट मै लाज निगोड़ी कैसे नैन मिलावैं॥
तू सब जिय की जाननिहारी तो सो कहा दुराऊँ।
'हरीचन्द' जीवन-धन दै मोहि नैना निरखि सिराऊँ॥६२॥

राग सोरठ

नाव हरि अवघट घाट लगाई ।
हम ब्रज-बाल कहो कित जैहैं करिहैं कौन , उपाई ।।
साँझ भई सँग मै कोउ नाहीं देहु हमै पहुँचाई ।
'हरीचन्द' तन मन धन जोबन सब दैहैं उतराई ।।६३।।

हमैं तुम दैहौ का उतराई ।
पार उतार देहि जो तुम को करि कै बहुत खेवाई ।।
जोबन धन बहु है तुम्हरे ढिग सो हम लेहि छोड़ाई ।
हम तुम्हरे बस है मन-मोहन जो चाहौ सो करौ कन्हाई ।।
निरजन बन मै नाव लगाई करी केलि मन-भाई ।
'हरीचन्द' प्रभु गोपी-नायक जग-जीवन ब्रजराई ।।६४।।

राग सारंग

आजु श्री राधिका प्रानपति-काज निज,
हाथ सो कुंज मै कुसुम सज्जा सजी ।
परम सीतल पवन चलत सुंदर भवन,
देखि छबि उष्णता दूर कोसन भजी ।।
मोद भरि बिहरहीं दोउ अति सुख पगे,
काम की बाम लखि ललित सोभा लजी ।
दास 'हरिचन्द' धुनि करत किंकिनि चुरी,
मदन के सदन मनु नवल नौबत बजी ।।६५।।

आजु दुपहरी मैं श्याम के काम तू
बाम, छबि-धाम भई नवल अभिसारिका ।
अतिहि कोमल चरन तपित धरनी धरन,
गयो कुम्हलाय मुख-कमल सुकुमारिका ।।

उरसि मुक्ताहार स्वेत सारी बनी,
कहत कोमल बचन मनहुँ पिक सारिका।
बदत 'हरिचन्द' छल-छन्द एतो कियो,
कहाँ सीखी नई कोक की कारिका ॥६६॥

वृज के लता-पता मोहि कीजै।
गोपी-पद-पंकज पावन की रज जामैं सिर भीजै ॥
आवत जात कुंज की गलियन रूप-सुधा नित पीजै।
श्री राधे राधे मुख यह बर 'हरीचन्द' को दीजै ॥६७॥

राग आसावरी वा सारंग

ऊधो जौ अनेक मन होते।
तौ इक श्याम-सुँदर को देते इक लै जोग सँजोते ॥
एक सो सब गृह-कारज करते एक सो धरते ध्यान।
एक सो श्याम रंग रँगते तजि लोक-लाज कुल-कान ॥
को जप करै जोग को साधै को पुनि मूँदै नैन।
हिये एक रस श्याम मनोहर मोहन कोटिक मैन ॥
ह्याँ तो हुतो एक ही मन सो हरि लै गए चुराई।
'हरीचंद' कोउ और खोजि कै जोग सिखावहु जाई ॥६८॥

राग भैरव (खंडिता)

श्याम पियारे आजु हमारे भोरहि क्यौं पगु धारे।
विनु मादक ही आज कहो क्यौं घूमत नैन तुम्हारे ॥
दीपक जोति मलिन भई देखो पच्छिम चन्द सिधार्यौ।
सूरज किरिन उदित उदयाचल पच्छिन शब्द उचार्यौ ॥
कुमुदिनि सकुची कमल प्रफुल्लित चक्रवाक सुख पायो।
सीतल मरुत चलत उठि मुनियन निज निज ध्यान लगायो ॥

कहा कहौं कछु कहि नहिं आवै आज बनी जो सोभा।
पेंच खुले लटपटी पाग के देखत ही मन लोभा ॥
ऐसी को है सुघर सुनरिया जिन यह हार बनायो।
बिन नग जड्यौ हेम बिन निरमित बिन गुन दाम पोहायो ॥
मोहन तिलक महावर को सिर लीलाम्बर कटि धारे।
कौन सी चूक परी हरि हम सों नैन लाल क्यौं प्यारे ॥
लै आरसी सामुहे राखी जल लाई भरि झारी।
'हरीचन्द' उठि कंठ लगाई हँसि कै गिरिवरधारी ॥६९॥

राग सारंग

सखी ए नैना बहुत बुरे।
तब सों भए पराए हरि सों जब सो जाइ जुरे ॥
मोहन के रस-बस ह्वै डोलत तलफत तनिक दुरे।
मेरी सीख प्रीत सब छाँड़ी ऐसे ये निगुरे ॥
जग खीझ्यौ बरज्यो पै ए नहि हठ सों तनिक मुरे।
'हरीचन्द' देखत कमलन से बिष के बुते छुरे ॥७०॥

राधिका पौढ़ी ऊँची अटारी।
पूरन चन्द उयो नभ-मंडल फैली बदन उजारी ॥
दोऊ जोति मिलि एक भई है भूमि गगन लौं भारी।
सो छबि देखि सखा तृन तोरत 'हरीचन्द' बलिहारी ॥७१॥

देखु सखी देखु आजु कुंजन मैं नवल केलि,
करत कृष्ण संग बिबिध भाँति राधिका।
तैसोइ बहै त्रिबिध पौन तैसोइ नभ चंद उग्यो,
तैसी परछाहीं परत लाज बाधिका ॥
किंकिनि की धुनि सुनात पातन की खरखरात,
तैसी निसि सनसनात सुखहि साधिका।

तहँ अलि 'हरिचंद' आय बिनवत ससि कों, मनाय
आजु रहो थिर ह्वै रथ यह अराधिका ।।७२।।

तुम्हैं तो पतितन ही सो प्रीति ।
लोकरु वेद-बिरुद्ध चलाई क्यौं यह उलटी रीति ।।
सब विधि जानत हौ निश्चय करि तुम सों छिप्यौ न नेक ।
बेद-पुरान-प्रमान तजन को मेरो यह अविवेक ।।
महा पतित सब धर्म्म-बिवर्जित श्रुतिनिन्दक अघ-खान ।
मरजादा तें रहित मनस्वी मानत कछु न प्रमान ।।
जानत भए अजान कहो क्यौं रहे तेल दै कान ।
तुम्है छोड़ि जग को नहि जो मोहि विगर्यौ करत बखान ।।
बलिहारी यह रीझि रावरी कहाँ खुटानी आय ।
"हरीचन्द' सों नेह निवाहत हरि कछु कही न जाय ।।७३।।

रावरी रीझ की बलि जैये ।
महा पतित सो प्रीति पियारे एक तुमहि मे पैये ।।
नेमिन ज्ञानिन दूर राखि कै हम से पास बिठैये ।
'हरीचंद' यह जग उलटी गति केवल कहा कहैये ।।७४।।

नाथ तुम प्रीति निवाहत साँची ।
करत इकंगी नेह जनन सो यह उलटी गति खाँची ।।
जेहि अपनायो तेहि न तज्यौ फिर अहो कठिन यह नेम ।
जेहि पकर्यौ छोड़त नहि ताको परम निवाहत प्रेम ।।
सो भूले पै तुम नहि भूलत सदा सँवारत काज ।
'हरीचन्द' को राखत हौ बलि बाँह गहे की लाज ।।७५।।

तुम्हारौ साँचौ हम मैं नेह ।
कबहूँ नाहिं छाँड़िहौ हमको दृढ़ ब्रत लीनो एह ।।

प्रेम सत्य तुमरो जग मिथ्या यामैं कछु न सँदेह।
'हरीचन्द' जो याहि न मानैं तिन के मुख में खेह ॥७६॥

नाथ तुम उलटी रीति चलाई।
सब शास्त्रन की बात बिगारी पतितन पास बिठाई॥
बिधि-निषेध तामैं नहि राख्यौ जाहि लियो अपनाई।
नाहीं तो क्यौं 'हरीचन्द' सों इतनी प्रीति बढ़ाई ॥७७॥

बलिहारी या दरबार की।
बिधि-निषेध मरजाद शास्त्र की गति नहि जहाँ पुकार की॥
नेमी धरमी ज्ञानी जोगी दूर किये जिमि नारकी।
पूछ होत जहँ 'हरीचन्द' से पतितन के सरदार की ॥७८॥

हम तो दोसहु तुमपै धरिहै।
व्यापक प्रेरक भाखि भाखि कै बुरे कर्म सब करिहै॥
भलो करम जौ कछु बनि जैहै सो कहिहै हम कीनो।
निसि दिन बुरे करम को फल सब तुम्हरे माथे दीनो॥
पतित-पवित्र-करन तब तुमरो साँचो ह्वैहै नाम।
जब तारिहौ हठी कोउ जैसे 'हरिचन्द' अघ-धाम ॥७९॥

प्यारे अब तो तारेहि बनिहै।
नाही तो तुमको का कहिहै जो मेरी गति सुनिहै॥
लोक बेद मै कहत सबै हरि अभय-दान के दानी।
तेहि करिहौ साँचो कै झूठो सो मोहि भाषो बानी॥
भले बुरे जैसे है तैसे तुम्हरे ही जग जानै।
'हरीचन्द' को तारेहि बनिहै को अब औरहि मानै ॥८०॥

छिपाए छिपत न नैन लगे।
उघरि परत सब जानि जात है घूँघट मै न खगे॥

कितनो करौ दुराव दुरत नहि जब ये प्रेम पगे।
'हरीचन्द' उघरे से डोलत मोहन रंग रँगे ॥८१॥

लगौहीं चितवनि औरहि होति।
दुरत न लाख दुराओ कोऊ प्रेम झलक की जोति ॥
निज पीतम कों खोजि लेत हैं भीरहू मैं भरि रंग।
रूप-सुधा छिपि छिपि कै पीयत गुरु-जनहूँ के संग ॥
घूँघट मै नहि थिरत तनिकहूँ अति ललचौंही बानि।
छिपत न क्योंहूँ 'हरीचन्द' ये अन्त जात सब जानि ॥८२॥

आजु हम देखत हैं को हारत।
हम अघ करत कि तुम मोहि तारत को निज बान बिसारत ॥
होड़ पड़ी है तुम सो हम सों देखैं को प्रन पारत।
'हरीचन्द' अब जात नरक मै कै तुम धाइ उबारत ॥८३॥

कै तौ निज परतिज्ञा टारौ।
गीतादिक मै जौन कही है ताकों तुरत बिसारौ ॥
दीनबन्धु प्रनतारति-नासन अपनो बिरद बिगारौ।
कै झट धाइ उठाइ भुजा भरि 'हरीचंद' को तारौ ॥८४॥

लगाओ बेदन पै हरताल।
जिन तुमको गायो करुनानिधि भक्तन के प्रतिपाल ॥
पतित-उधारन आरति-नासन दीनानाथ दयाल।
इन नामन को झूठ करौ पिय छाँड़ो सब जंजाल ॥
देहु बहाइ लोक-मरजादा तोरि आपुनी चाल।
नाही तौ 'हरिचन्दहि' तारौ बेगहि धाइ गुपाल ॥८५॥

कहौ तुम व्यापक हौ की नाही।
जौ तुम व्यापक हौ तौ अघ करि क्यौ हम नरकहि जाही ॥

जो नहि पूरन घट घट तो क्यौ लिख्यौ पुरानन माहीं ।
तासों राखौ 'हरीचन्द' कों चरन-छत्र की छाँहीं ॥८६॥

बही मै ठाम न नैकु रही ।
भरि गई लिखत लिखत अघ मेरे बाकी तबहु रही ॥
चित्रगुप्त हारे अति थकि कै बेसुध गिरे मही ।
जमपुर में हरताल परी है कछु नहि जात कही ॥
जम भागे कछु खोज मिलत नहि सबही वही बही ।
'हरीचंद' ऐसे को तारो तौ तुव नाम सही ॥८७॥

पियारे हम तो भक्त इकंगी ।
सब छोड़्यौ तुमरे हित मोहन लोक-लाज कुल संगी ॥
बिधि-निषेध अरु बेद छाँड़ि कै होइ गई मनु नंगी ।
'हरीचन्द' चाहै मति मानौ हम तौ तुव रँग रंगी ॥८८॥

छूट नहिं तुमको कोउ बिधि प्यारे ।
हम सब पाप करैंगे बनिहै ताहू पै पुनि तारे ॥
बेदन मैं निज क्यौ कहवायो पतित-उधारन नाम ।
क्यौ परतिज्ञा यह कीनौ कै तारहिगे अघ-धाम ॥
सुबरन-चोर ब्रह्म-हत्यारो गुरुतल्पगहु सुरापी ।
अबकी बेर निबाहि लेहु पिय 'हरिचन्द' सों पापी ॥८९॥

हम नहिं अपुने कों पछितात ।
यह सोचत कै बिनु मोहि तारे बात तुम्हारी जात ॥
अजामिलादिक के तारन सों भई अतिहि बिख्यात ।
सो काहू बिधि अब लौं निबही जानी जगत जगात ॥
'हरीचन्द' तुमरो औ पापी यह दोऊ अति ख्यात ।
तासों ताकहँ तारि कोऊ बिधि राखौ अपनी बात ॥९०॥

राग असावरी

जे जन अन्य आसरो तजि श्री बिट्ठलनाथहि गावैं ।
ते बिनु श्रम थोरेहि साधन मै भव-सागर तरि जावैं ॥
जिनके मात पिता गुरु बिट्ठल और कतहुँ कोउ नाही ।
ते जन यह संसार समुद्रहि बत्सचरन करि जाही ॥
जिनकों श्रवन कीर्तन सुमिरन बिट्ठल ही को भावै ।
ते जन जीवनमुक्त कहावहि मुख देखे अघ जावै ॥
जिनके इष्ट सखा श्री बिट्ठल और बात नहि प्यारी ।
जिनके बस मे सदा सर्वदा रहत गोवर्द्धनधारी ॥
तिनके मन क्रम वच सब भाँतिन श्री बिट्ठल-पद पूजो ।
ते कृतकृत्य धन्य ते कलि मै तिन सम और न दूजो ॥
जे निस-दिन श्री बिट्ठल बिट्ठल बिट्ठल ही मुख भाखै ।
'हरीचन्द' तिनके पद की रज हम अपुने सिर राखैं ॥९१॥

राग असावरी (चीर हरण)

जमुना-तट ठाढ़े नँदनंदन कोऊ न्हान न पावै हो ।
जो कोउ जल पैठत मज्जन-हित ताको चीर चुरावै हो ॥
तोरत हार कंचुकी फारत चढ़त कदम पै धाई ।
पुनि पाछे ते पीठ मलत है ऐसो ढीठ कन्हाई ॥
गारी देत कह्यौ नहि मानत हाथ नचावत आई ।
हम जल मैं नाँगी सकुचाही सुनहु जसोदा माई ॥
तुम निज सुत के गुन नहि जानत कहत लाज अति आवै ।
'हरीचंद' बरजति नहि काहे नित नित धूम मचावै ॥९२॥

राग टोडी

बिनती सुन नंद-बाल बरजो क्यौ न अपनो बाल
प्रातकाल आइ आइ अम्बर लै भागै ।

भोर होत जमुन तीर जुरि जुरि सब गोपी भीर
न्हात जबै बिमल नीर शीत अतिहि जागै ॥
लेत बसन मन चुराइ कदम चढ़त तुरत धाइ
ठाढ़ी हम नीर माहि नाँगी सकुचाही ।
'हरीचंद' ऐसो हाल करत नित्य प्रति गोपाल
ब्रज में कहो कैसे बसैं अब निवाह नाही ॥९३॥

चलो सखी मिल देखन जैये दुलहिन राधा गोरी जू ।
कोटि रमा मुख छबि पै वारौं मेरी नवल-किसोरी जू ॥
घँघरी लाल जरकसी सारी सोंधे भीनी चोली जू ।
मरवट मुख मैं सिर पै मौरी मेरी दुलहिया भोली जू ॥
नकबेसर कनफूल बन्यौ है छबि का पै कहि आवै जू ।
अनवट बिछिया मुँदरी पहुँची दूलह के मन भावै जू ॥
ऐसे बना बनी पै री सखि अपनो तन मन वारी जू ।
सब सखियाँ मिलि मंगल गावत 'हरीचंद' बलिहारी जू ॥९४॥

राग सारंग (रथ-यात्रा)

अटा पै मग जोवत है ठाढ़ी ।
यहि मारग हरि को रथ ऐहै प्रेम-पुलक तन बाढ़ी ॥
कोउ खिरकिन छज्जन पै ठाढी कोउ द्वारे मग जोहै ।
करि श्रृंगार श्यामसुंदर-हित प्रेम भरी अति सोहै ॥
यह आयो वह आयो सजनी कहति सबै ब्रज-नारी ।
लै लै भेट सामुहे आई भरि कै कंचन थारी ॥
बीरी देत करति न्यौछावरि लै आरती उतारै ।
'हरीचंद' ब्रजचंद पिया पै अपनो तन मन वारै ॥९५॥

निविड़ तम-पुंज अति श्याम गह्वर कुंज
राधिका-श्याम तहँ केलि सुंदर रची ।

परम अँधियार मधि उदय मुख-चंद को
करत तम दूर सब भाँति सोभा सची ॥
हार हिय चमकि उडुगनन की छबि हरत
करत किंकिनि चुरी शब्द मनिगन खची ।
लखत 'हरिचन्द' सखि ओट ह्वै सुरति-सुख
काम-कामिनि-काम-गरब गति नहि बची ॥९६॥

ठुमरी

सजन तेरी हो मुख देखे की प्रीत ।
तुम अपने जोबन मदमाते कठिन बिरह की रीत ॥
जहाँ मिलत तहँ हँसि हँसि बोलत गावत रस के गीत ।
'हरीचन्द' घर घर के भौरा तुम मतलब के मीत ॥९७॥

राग असावरी

अरे कोऊ कहौ सँदेसो श्याम को ।
हमरे प्रान-पिया प्यारे को अरु भैया बलराम को ॥
बहुत पथिक आवत हैं या मग नित प्रति वाही गाम को ।
कोऊ न लायो पिय को सँदेसो 'हरीचन्द' के नाम को ॥९८॥

राग सारंग

हम तौ मदिरा प्रेम पिए ।
अब कबहूँ न उतरिहै यह रँग ऐसो नेम लिए ॥
भई मतवार निडर डोलत नहि कुल-भय तनिक हिये ।
डगमग पग कछु गैल न सूझत निज मन मान किए ॥
रहत चूर अपुने प्रीतम पै तिन पै प्रान दिए ।
'हरीचन्द' मोहन छैला बिनु कैसे बनत जिए ॥९९॥

बैठी ही वह गुरुजन के ढिग पाती एक तहाँ लै आई ।
पाती लाय हाथ मैं दीनी कही श्याम यह तोहि पठाई ॥
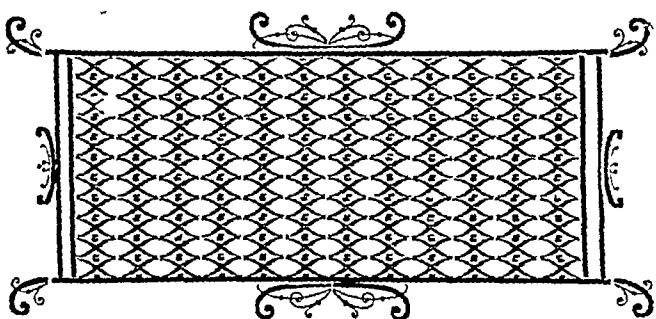
अथ कार्तिक-स्नान

नील-हीर-दुति अति मधुर सब ब्रज-जन-चित-चोर ।
जय जय बिरहातप-समन राधा-नंदकिशोर ॥ १ ॥
जुगल जलद केकी जुगल दोऊ चन्द चकोर ।
उभय रसिक रस रास जय राधा-नंदकिशोर ॥ २ ॥
जल तरंग बुधि प्रान पुनि दीप प्रकाश समान ।
जुगल अभिन्नहु दोय वपु जय राधा-भगवान ॥ ३ ॥
नलिन-नयन अमृत-वयन वेनु वाद्य-रत धीर ।
राधा-मुख-मधु-पान-रत जय जय जय बलबीर ॥ ४ ॥
बिनु हरि-पद-राधा-भजन नाहिंन और उपाय ।
क्यौं मन तू भटकत बृथा जगत-जाल फँसि धाय ॥ ५ ॥
मथिकै बेद पुरान बहु यहै लह्यौ इक सार ।
राधा-माधव-चरन भजु तजु जप जोग हजार ॥ ६ ॥
भ्रमि मत तू वेदान्त-वन बृथा अरे मन मोर ।
चलु कलिन्दजा-कुंज-तट लखु घनश्याम किशोर ॥ ७ ॥
शास्त्र एक गीता परम मन्त्र एक हरि-नाम ।
कर्म एक हरि-पद-भजन देव एक घनश्याम ॥ ८ ॥

विधि-निषेध जग के जिते तिनको यह सिरमौर।
भजनो इक नँदलाल-पद तजनो साधन और ॥ ९ ॥
साधकगन सों तुम सदा छिपत फिरत ब्रजराय।
अति अँधियारो मम हृदय तहाँ छिपत किन आय ॥१०॥
बेद कहत जग बिरचि हरि व्यापि रहत ता माहि।
मम हिय जग बाहर कहा जो इत व्यापत नाहि ॥११॥
तुमहि रिझावन हित सज्यो लख चौरासी रूप।
रीझि देहु गति खीझि कै बरजहु मोहिं ब्रज-भूप ॥१२॥
कोऊ जप संजम करौ करौ कोइ तप ध्यान।
मेरे साधन एक हरि सपनेहु रुचत न आन ॥१३॥
नर्क स्वर्ग कै ब्रह्म-पद कै चौरासी माँहि।
जहाँ रहौ निज कर्म-बस छुटै कृष्ण-रति नाहि ॥१४॥
कृष्ण नाम मुख सो कढ़ौ सुनौ कृष्ण-जस कान।
मन में कृष्ण सदा बसौ नयन लखौ हरि ध्यान ॥१५॥
चोरि चीर दधि दूध मन दुरन चहत ब्रजराय।
मेरे हिय अँधियार मै तौ न छिपत क्यौ आय ॥१६॥
सुनत दूध दधि चीर मन हरत फिरत ब्रजराय।
तौ अघ मेरे किन हरत यह मोहि देहु बताय ॥१७॥
कृष्ण-नाम मनि-दीप जो हिय-घर मे न प्रकाश।
दीप बहुत बारे कहा हिय-तम भयो न नाश ॥१८॥
जय जय श्रुति-पद-बन्दिनी कीर्तिनन्दिनी बाल।
हरि-मन परमानन्दिनी कन्दिनि भव-भय-जाल ॥१९॥

सोरठा

जय जय परमानन्द कृपाकन्द गोविन्द हरि।
जय जय जसुदा-नन्द नंदानंदन दुन्द-हर ॥२०॥

सवैया

पूजि के कालिहि सत्रु हतौ कोऊ लक्ष्मी पूजि महा धन पाओ ।
सेइ सरस्वति पंडित होउ गनेसहि पूजिकै विघ्न नसाओ ।।
त्यो 'हरिचंद जू' ध्याइ शिवै कोऊ चार पदारथ हाथ ही लाओ ।
मेरे तो राधिका-नायक ही गति लोक दोऊ रहौ कै नसि जाओ ।। १ ।।

सन्ध्या जु आपु रहौ घर नीकी नहान तुम्है है प्रणाम हमारी ।
देवता पित्र छमौ मिलि मोहि अराधना होइ सकै न तुम्हारी ।।
वेद पुरान सिधारौ तहाँ 'हरिचंद' जहाँ तुम्हरी पतियारी ।
मेरे तो साधन एक ही है जग नंदलला बृषभानु-दुलारी ।। २ ।।

भजन

जय बृषभानु-नन्दिनी राधा ।
शिव ब्रह्मादि जासु पद-पंकज हरि बस हेतु अराधा ।।
करुनामयी प्रसन्न चन्दमुख हँसत हरति भव-बाधा ।
'हरीचंद' ते क्यौं जग जीवत जिन नहि इनहि अराधा ।। १ ।।

जय जय हरि नंद-नंद पूर्ण ब्रह्म दुख-निकंद,
परमानंद जगत-चंद सेवक सुखदाई ।
परम जस पवित्र गाथ दीनबन्धु दीनानाथ,
स्रवन दरस ध्यान सुखद गोवर्द्धन-राई ।।
गोप गोपिकादि-पाल सतत असुर-बंस-काल,
सकल कला-गुन-निधान कीरति जग छाई ।
'हरीचंद' प्राननाथ कीर्तिसुता लिए साथ,
पावनगुन अवलि बिमल श्रुतिगन नित गाई ।। २ ।।

मेरी गति होउ सोई महरानी ।
जासु भौंह की हिलनि बिलोकत निसु दिन सारँगपानी ।।
खेलन मैं कबहूँ जौ आँचर उड़त बात-बस जाको ।

रिसि मुनि बंदित हू हरि मानत परम धन्य करि ताको ॥
परम पुरुष जो जोग जग्य जप क्योंहू लख्यौ न जाई ।
सो जा पद-रज बस निसि-बासर तुरतहि प्रगटत आई ॥
ग्राम बधूटी जा कटाच्छ-बल उमा रमाहि लजावैं ।
'हरीचंद' ते महामूढ़ जे इनहि न अनुछिन ध्यावै ॥ ३ ॥

जय जय श्री बृन्दाबन देवी ।
अखिल विश्वनायक पुरुषोत्तम जा पद-पंकज-सेवी ॥
जो निज दृष्टि कोर सों जग के जीवहिं नितहि जिआवै ।
परमानंद-घनहु पै जो निज आनँद-कन बरसावै ॥
जगत-अधार भूत परमातम जिय अधार सो ताकी ।
'हरीचंद' स्वामिनि अभिरामिनि तुल न जगत मैं जाकी ॥ ४

बिपुल बृन्दा बिपिन चक्रवर्ती-चतुर
रसिक-चूड़ा-रतन जयति राधा-रमन ।
गोप-गोपी सुखद भक्त नयनानंद
बिरहिजन कोटि सन्ताप सन्तत समन ॥
जयति गिरिराज धृत बास अंगुरि नखन
जयति कृत बेनु-रव मत्त गज-गति-गमन ।
अघ बकी बक सकट पूतनादिक काल जयति
'हरिचंद' हित-करन कालिय-दमन ॥ ५ ॥

जय जय गोवर्द्धन-धर देव ।
जय जय देव राजमद-मर्दन करत सकल सुर सेव ॥
जय जय श्रुति जस गावत निसि-दिन पावत तऊ न भेव ।
जय जय 'हरीचन्द' रक्षण कृत दीन-उधारन टेव ॥ ६ ॥

बाजी नैनन में लागी।
रसिकराज इत उत श्री राधा परम प्रेम-रस-पागी॥
दोऊ हारे दोऊ जीते आपुस के अनुरागी।
'हरीचंद' निज जन-सुखदायक रहे केलि निसि जागी॥ ७॥

हम मैं कौन बड़ो री प्यारी।
ठाढ़ी होउ बराबर नापैं बिहँसि कह्यो गिरिधारी॥
सुनत उठी बृषभानु-नंदिनी खरी भई समुहाई।
पद-अँगुरी-बल उचकि पिया सों बढ़वन चहत उँचाई॥
सुन्दर मुख आपुहि ढिग आवत लखि चूम्यो पिय प्यारे।
'हरीचन्द' लजि हँसि भुव निरखत पिया कह्यौ हम हारे॥ ८॥

राग बिहाग (दीपावली)

करत मिलि दीप-दान व्रज-बाला।
जमुना सो कर जोरि मनावत मिलैं पिया नँदलाला॥
स्नान दान जप जोग ध्यान तप संजम नियम विसाला।
इनके फल मे 'हरीचन्द' गल लगै कृष्ण गुनवाला॥ ९॥

अरी तू हठ नहि छाँड़त प्यारी।
दीप-दान मैं मगन ह्वै रही भूलि गई गिरिधारी॥
तेरे बिनु उत बिनही दीपक बिरह-अगिनि संचारी।
'हरीचन्द' पीतम गर लगि कै करु त्यौहार दिवारी॥१०॥

हमारे बृज के द्वै मनि-दीप।
पुष्पराग श्रीराधा मरकत गोबिद गोप महीप॥
सदा प्रकाश करत व्रज-मंडल बृन्दाबन अवनीप।
'हरीचन्द' सुमिरत वियोग-तम कहुँ नहि रहत समीप॥११॥

राग बिहाग चौताला

अरी हौं बरजि रही बरज्यौ नहीं मानत,
सबै छोरि कृष्ण-प्रेम दीप जोरि।
भरि अखंड दै सनेह एक लौ लगाइ वासों,
मन बाती राखु तामे नित्य बोरि॥
बिरह प्रगट करि जोति सों मिलाइ जोति,
करि पतंग नेम धरम लाज ओट डारि छोरि।
'हरीचंद' कह्यो मानि देखिहै तू प्रीति-पन्थ,
भाजैगो वियोग-तम मुख मोरि॥१२॥

राग बिहाग (दीपावली)

आजु गिरिराज के उच्चतर शिखर पर,
परम शोभित भई दिव्य दीपावली।
मनहुँ नगराज निज नाम नग सत्य किय,
बिबिध मनि-जटित तन धारि हारावली॥
औषधी-गन मनहुँ परम प्रज्वलित भई,
किधौं ब्रज-बास हित बसी तारावली।
दास 'हरिचंद' मन मुदित छबि देखिकै,
करत जै जै बरषि देव कुसुमावली॥१३॥

आजु तरनि-तनया निकट परम परमा प्रगट,
ब्रज-बधुन मिलि रची दीप-माला।
जोति-जाल जगमगत दृष्टि थिर नहि लगत
छूट छबि को परत अति बिसाला॥
खड़ी नवल बनिता बनी चार दिसि,
छबि-सनी हँसहि गावहि बिबिध ख्याला।

निरखि सखी 'हरीचंद' अति चकित सी ह्वै,
कहत जयति राधे जयति नंद-लाला ॥१४॥

आजु व्रजछवि की छूट परै ।
इत नँदलाल लाडिली उत इत दीपक ज्योति बरै ॥
उत सहचरी ललित ललितादिक मुरछल चँवर ढरै ।
इत जरतार तास बागो उत भूषण झलक भरै ॥
इत नवखण्ड सीसमहला उत दुगनित बिंब परै ।
इत बादलन लपेटी झालर झलाबोर झलरै ॥
उत सारी कोरन सो मुकुता मानिक हीर झरै ।
जमुना-जल प्रतिबिंब सुहायो जल-छबि मिलि लहरै ॥
'हरीचन्द' मुख चन्द मिलो सब रबि ससि गरब हरै ॥१५॥

आजु सँकेतन दीपक बारे ।
निकट जानि गोवर्द्धन घटियाँ अपने हाथ सँवारे ॥
किए प्रकासित गहवर गिरि थल कुंज पुंज व्रज सारे ।
'हरीचंद' अपनी प्यारी की बाट निहारत प्यारे ॥१६॥

अरी तू हठि चलि प्यारी दीप मण्डल ते क्यों शोभा हरि लेत ।
तेरे मुख-प्रकास दीपक-गन मन्द दिखाई देत ॥
मंद परे आभा सब मेटी झिलमिलि झीने सेत ।
'हरीचंद' तू दूरि बैठि कै कर त्योहार सहेत ॥१७॥

ईमन

कविन सो साँचेहि चूक परी ।
दीप-सिखा की उपमा जिन तुलि प्यारी हेत धरी ॥
वह दाहत यह अंग जुड़ावति वह चंचल थिर येह ।
वह निज प्रेमिन परम दुखद यह सदा सुखद पिय-देह ॥

वा मे धूम स्वच्छ अति ही यह रैनि दिना इक रास ।
वह परिछिन्न बात-बस यह निज-बस सर्वत्र प्रकास ॥
वह सनेह-आधीन और यह है सदेह भरपूर ।
'हरीचन्द' दीपक प्यारी की नहि कोउ बिधि सम तूर ॥१८॥

जमुना-जल बढ़ी दीप-छवि भारी ।
प्रतिबिम्बित प्रतिबिब लहरि प्रति तहँ राजत पिय प्यारी॥
तैसेही नभतर तारावलि तरल वायु गुन होई ।
तैसेहि उठत गगन गुब्बारे छुटत दारुगति जोई ॥
अवनि नीर आकास प्रकासित दीपहि दीप लखाई ।
मनु ब्रजमण्डल ज्योति-रूपता अपनी प्रगट दिखाई ॥
मुख प्रकास रंजित सबही थल सोभा नहि कहि जाई ।
'हरीचंद' राधे मनमोहन रहे त्योहार मनाई ॥१९॥

तुव विनु पिय को घर अँधियारो ।
जदपि चहूँ दिसि प्रगटि श्वास मद विरहानल संचारो ॥
कछु न लखात ताहि अति व्याकुल दृग-झर लावत सारो ।
प्रिये प्रिये कहि प्रति कानन मे ढूँढ़ि रहत घर सारो ॥
तू इत बैठी बदन बनाये उत वह विकल विचारो ।
'हरीचंद' उठि चलु री प्यारी लाउ गरे पिय प्यारो ॥२०॥

दीपन उलटी करी सहाय ।
चली गई पिय पास प्रगट मग काहु न परी लखाय ॥
अँधियारी मै तो भय भारी मुख-ससि नाहि दुराय ।
इत प्रकाश मे मिलि अलबेली एक भई चमकाय ॥
जगमगे बसन कनक-मनि-भूषन एक भये सब आय ।
'हरीचंद' मिलि कै वियोग मे दीनो तुरत नसाय ॥२१॥

दिपति दिव्य दीपावली, आजु दिपति दिव्य दीपावली ।
मनु तम-नाश करन को प्रगटी कश्यप-सुत-बंसावली ॥
मनु ब्रजमण्डल-कृष्ण चन्द्रमा तहँ तारन की मण्डली ।
जीतन को मनु राहु-सेन को अति सुबरन किरनावली ॥
बिगत भई सब रैनि-कालिमा सोभा लागति है भली ।
'हरीचन्द' मनु रतन-रासि की उज्ज्वल ज्योति जुगावली ॥२२॥

नेकु चलु पिय पै बेगहि प्यारी ।
देखु करी तेरे हित कैसी मोहन आजु तयारी ॥
पड़े पाँवड़े मग मखमल के दल गुलाब रुचिकारी ।
छिरक्यो नीर गुलाब अतर मृगमद चन्दन घनसारी ॥
परदे परे झालरैं झमकैं तने बितान सुतारी ।
फरश गलीचन को अति राजत कोमल बहुरँग डारी ॥
धरे साज ढिग अतर पान मधु फूल-माल जल झारी ।
लगी मिठाई रासि दुहूँ दिशि दीपक धरे कतारी ॥
बिछी पलँग पय-फेनु मैनु-सम पोस पर्यो रुचिकारी ।
पास साज पालन के सोहत कहुँ सतरंज सँवारी ॥
ठौर ठौर आरसी लगाई दूनी द्युति करि डारी ।
प्रति खूँटिन हारावलि माला फूल बसन लै धारी ॥
प्रति आले सुगंध सों पूरे पान मिठाई डारी ।
जहँ तहँ अदब किये सब सखियाँ ठाढ़ीं साज सँवारी ॥
मुरछल चँवर रुमाल अडानो पीकदान लै वारी ।
चौंकि चौंकि पिय उठत विना तुव अगम संक बनवारी ॥
'हरीचंद' प्रीतम गर लगिकै कर त्योहार दिवारी ॥२३॥

रच्यो यह तेरेहि हित त्योहार ।
दीप-दिवारी युक्ति निकारी तव हित नंदकुमार ॥

तुव महलन की सुरति करन हित हठरी रुचिर बनाई ।
तुव मुख चन्द्रप्रकाश लखन हित दीपावली सुहाई ।।
हाट लगाई तुव आवन हित और कछु न सन्देह ।
'हरीचंद' बिहरै किन भुज भरि प्रीतम सों करि नेह ।।२४।।

कार्तिक मे साँझ के गाइबे को पद

साँचहि दीपसिखा सी प्यारी ।
धूमकेश तन जगमगाति द्युति दीपति भई दिवारी ।।
स्वयं प्रकाश अकुण्ठ सुहाई बिनु असार छबि छाई ।
सदा एक रस नित्य अधिक यह वासों चाल लखाई ।।
भरत सुगंधन व्रज कुंजन मग शीतल तन कर वारी ।
प्रीतम-तन को बिरह मिटावत 'हरीचन्द' दुख जारी ।।२५।।

इति
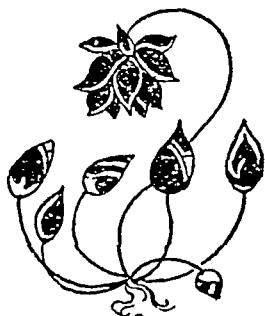
वैशाख-माहात्म्य
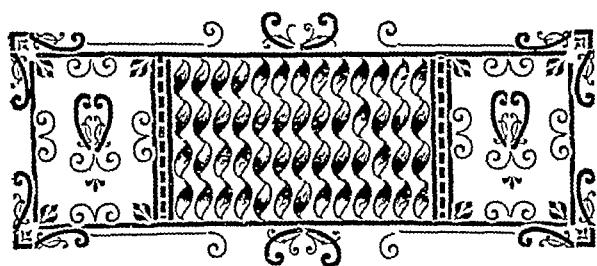
वैशाख-माहात्म्य

दोहा

भरति नेह नव नीर सो बरसत सुरस अथोर ।
जयति अलौकिक घन कोऊ लखि नाचत मनमोर ॥

नित्य उमाधव जेहि नवत माधव अनुज मुरारि ।
श्यामाधव माधव भजौ माधव मास बिचारि ॥ १ ॥
रमत माधवी कुंज करि प्रेम माधवी पान ।
माधव रितु सँग माधवी लै माधव भगवान ॥ २ ॥
वैशाखा-पति नहि भजहि जे वैशाप-मँझार ।
ते वै शाषामृग अहै वा वैशाष-कुमार ॥ ३ ॥
गुरु-आयसु निज सीस धरि सुमिरि पिया नँदनन्द ।
माधव की कछु विधि लिखत ग्रंथन लखि हरिचन्द ॥ ४ ॥
चैत्र कृष्ण एकादशी अथवा पूनो मान ।
मेष संक्रमन सो करै वा अरंभ अज्ञान ॥ ५ ॥
ब्राह्मण-गन सों पूछि कै नियम शास्त्र को मान ।
हरिहि नौमि संकल्प करि न्याय समेत विधान ॥ ६ ॥

(मन्त्र)

सकल मास वैशाष में मेष रासि रवि मान ।
मधुसूदन प्रिय होहि लखि सनियम माधव-न्हान ॥ ७ ॥
मधु-रिपु के परसाद सो द्विज अनुग्रहहि जोय ।
नित वैशाख नहान यह विघ्न-रहित मम होय ॥ ८ ॥
माधव मेषग भानु मैं हे मधु-सत्रु मुरारि ।
प्रात-न्हान फल दीजिए नाथ पाप निरुवारि ॥ ९ ॥

इति

जा तीरथ मे न्हाइये लीजै ताको नाम ।
जहँ न जानिए नाम तहँ विश्नु-तीर्थ सुखधाम ॥१०॥
तुलसी श्यामा ऊजरी जो मधु-रिपु को देत ।
सो नारायन होत है माधव मै करि हेत ॥११॥
तुलसी-दल वैशाष में अरपहि तीनों काल ।
जनम मरन सों मुक्त तेहि करत नन्द के लाल ॥१२॥
जो सींचत पीपर तरुहि प्रात न्हाइ हरि मानि ।
करत प्रदक्षिन भाँति बहु सर्व्व देवमय जानि ॥१३॥
तरपन करि सुर पित्र नर स-चराचर तरु मूल ।
मेटै अपने पित्र की नरक-कुंड की सूल ॥१४॥
जे सींचहि जल भक्ति सो पीपर तरु जड़ माहिं ।
तिन तार्यौ निज अयुत कुल यामै संशै नाहि ॥१५॥
गऊ-पीठ सुहराइ कै न्हाइ तरुहि जल देइ ।
कृष्ण पूजि तजि दुर्गतिहि देवन की गति लेइ ॥१६॥
एक बेर भोजन करै कै तारा लखि खाइ ।
कै बिन माँगो पाइकै दै निसि नींद बिहाइ ॥१७॥
ब्रह्मचर्य्य धरनी-शयन अशन हविश्यन आन ।
श्रीगंगादिक मै करै विधि-बिधान असनान ॥१८॥

पुन्य मास वैशाष में हरि सों राखि सनेह ।
मन भायो ताको मिलै यामे कछु न सँदेह ॥१९॥
मधुसूदन पूजन करै तप व्रत सह दै दान ।
पाप अनेकन जनम के दाहैं तूल-समान ॥२०॥
माधव थापै पौसरा करै चटाई दान ।
छत्र ब्यजन जूता छरी अरु सूछम परिधान ॥२१॥
चन्दन जल-घट पुष्प ग्रह चित्र वस्तु अंगूर ।
देवहि दीजै प्रीति सो केला फल करपूर ॥२२॥
माधव मे जो पित्र-हित करत अंबु-घट-दान ।
सक्तु व्यजन मधु फल सहित प्रीति करत भगवान ॥२३॥
माधव-हित जे देत घट या माधव के माहिं ।
भोजन के सह बिप्र को ते बैकुंठहि जाहिं ॥२४॥
होइ सकै नहि मास भर जौ विधिवत् असनान ।
करै अंत के तीन दिन तो फल होइ समान ॥२५॥

(अथ अक्षय तृतीया)

रोहिनि माधव शुक्ल पख तीज सोम बुध होय ।
अति पवित्र दुरलभ बहुरि पाप नसावत सोय ॥२६॥
माघी पूनो भाद्रपद कृष्ण चतुर्दशि जान ।
माधव तृतिया कारतिक नवमी युग परमान ॥२७॥
इन चारहू युगादि मे श्राद्ध करत जो कोय ।
द्वै सहस्र संवत दिनन तृप्ति पित्र की होय ॥२८॥
तिथि युगादि मे न्हाइ कै करै दान जप ध्यान ।
ताकों शुभ फल देत श्री कृष्णचन्द्र भगवान ॥२९॥
माधव शुक्ला तीज को श्री गंगाजल न्हाय ।
सर्व्व पाप सो छूटिकै विष्णु-लोक सो जाय ॥३०॥

जे पशु-पक्षिन देत हैं ग्रीषम मैं जल-पान ।
ते नर सुरपुर जात है सुन्दर बैठि बिमान ॥५६॥
जे अति आतप सो तपे देहु तिन्है विश्राम ।
छाया-जल बहु भाँति सो ह्वैहै पूरन काम ॥५७॥
गरमी के हित जे करत बापी कूप तड़ाग ।
तिनको पुन्य अखण्ड ते करत न सुरपुर त्याग ॥५८॥
साधुन को अरु द्विजन-गृह नदी-तीर हरि-धाम ।
जे छावत छाया तिन्हैं मिलत श्याम अभिराम ॥५९॥

अथ श्री गङ्गा सप्तमी

माधव सुदि सप्तमि कियो क्रुद्ध जन्हु जल-पान ।
छोड़्यौ दक्षिण कर्ण तें ताते पर्व्व महान ॥६०॥
ताही सो जान्हवि भई ता दिन सो श्री गंग ।
तिनको उत्सव कीजिए ता दिन धारि उमंग ॥६१॥
तामें गंगा न्हाय कै पूजन कीजे चारु ।
गंगा नाम सहस्र जपि लीजै पुन्य अपार ॥६२॥

अथ वैशाख शुद्ध द्वादशी

सिह राशि-गत होहि जौ मंगल गुरु इक ठौर ।
मेष राशि-गत दिवसपति शुक्ल पक्ष-जुत और ॥६३॥
द्वादशि तिथि मै होइ पुनि बितीपात संयोग ।
हस्त होय नक्षत्र तौ होय महा यह जोग ॥६४॥
प्रात स्नान यामैं करै सहित बिबेक बिधान ।
गो सुबरन अवनी बसन देइ द्विजन कहँ दान ॥६५॥
देव होइ सुरपति बनै नरपतिहू जग माहि ।
जो मन इच्छित सो मिलै यामै संशय नाहि ॥६६॥

अथ नृसिंह चतुर्दशी

माधव शुक्ल चतुर्दशी स्वाती पुनि शनिवार।
वनिज करन सिध जोग मै नरहरि लिय अवतार ॥६७॥
जो सब जोग कहूँ मिले तौ पूरन सौभाग।
बिना जोगहू व्रत करै करि हरि सो अनुराग ॥६८॥
सब लोगन को व्रत उचित चौदस माधव मास।
पै वैष्णव जन तो करै निश्चय व्रत उपवास ॥६९॥
साँझ समै हरि को करै पंचामृत असनान।
शीतल भोग लगावई करि आनन्द विधान ॥७०॥
वा मृद गोमय आँवलनि करि मध्यान्ह स्नान।
पूछि द्विजन सो यह करे सुभ संकल्प विधान ॥७१॥

(मन्त्र)

देव देव नरसिंह जू जानि जनम को जोग।
आज करैं उपवास हम त्यागि सकल जग-भोग ॥७२॥

इति

यह पढ़ि नदी नहाइ के साँझ समै घर आइ।
लक्ष्मी सहित नृसिह की सुबरन मूर्ति बनाइ ॥७३॥
रात पूजि जागरन करि प्रात पूजि पुनि श्याम।
पीठक विप्रहि दे करै यह बिन्ती सुखधाम ॥७४॥

(मन्त्र)

नरहरि अच्युत जगतपति लक्ष्मीपति देवेस।
पूजौ पीठक-दान सो मन-कामना अशेस ॥७५॥
जे मम कुल मे होयँगे होय गए जे साथ।
या भव-सागर दुसह ते तिनहि उधारौ नाथ ॥७६॥
डूब्यौ पातक-सिन्धु मैं महादुःख के वारि।
दुखित जानि मोहि राखिए नरहरि भुजा पसारि ॥७७॥

श्री नरसिंह रमेश जू भक्तन को भय टारि ।
क्षीर समुद्र निवास तुव चक्रपाणि दनुजारि ॥७८॥
जय जय कृष्ण गुबिन्द हरि राम जनार्दन नाथ ।
या व्रत सों मोहि दीजिए भक्ति मुक्ति दोउ साथ ॥७९॥

इति

या विधि सो व्रत जे करैं कृष्ण-जन्म दिन जानि ।
ते चारहु फल पावही यह उर निश्चय मानि ॥८०॥
जिमि निकसे प्रभु खंभ ते राख्यौ जन प्रहलाद ।
तिमि तिनकी रक्षा करत जे राखत व्रत स्वाद ॥८१॥

अथ पूर्णिमा

माधव कातिक माघ की पूनो परम पुनीत ।
ता दिन गंगा न्हाइयै करि केशव सो प्रीति ॥८२॥
एक मास जो नहि बनै श्रीगंगा-असनान ।
तौ पूनो दिन न्हाइयै अरु करियै जल-दान ॥८३॥
व्रत समाप्त या दिन करै देइ द्विजन को दान ।
हाथ जोड़ि कै यह कहै लखि कै श्री भगवान ॥८४॥

(मंत्र)

हे मधुसूदन, कृष्ण हरि राधा-जीवन-प्रान ।
तव प्रताप पूरन भयो माधव बिधिवत स्नान ॥८५॥

इति

श्याम मृगा के चर्म पै श्याम तिलहि दै दान ।
सुबरन सह कहि होहि प्रिय मधुसूदन भगवान॥८६॥
ब्राह्मण बहुत खवावई करि अनेक पकवान ।
जौ बहु द्विज नहि होइ तौ बारह सहित विधान ॥८७॥
एहि बिधि माधव मे करै प्रेम सहित असनान ।
ताको सब कछु देहि श्री मधुसूदन भगवान ॥८८॥

लखि कै निरनयसिंधु अरु भगवद्भक्ति-बिलास ।
माधव की यह बिधि लिखी 'हरीचन्द' हरिदास ॥८९॥
एक दिवस में यह लिखी माधव-बिधि अभिराम ।
जेहि पढ़ि कै सुख पाइहै कृष्ण-भक्त सुखधाम ॥९०॥
लीजौ चूक सुधारि कै कविगन सहित अनन्द ।
हौं नहि जानत रचन-बिधि नहि पिंगल नहि छन्द ॥९१॥
माधव-बिधि माधव सुमिरि उर अति धारि अनन्द ।
परम प्रेमनिधि रसिकबर बिरच्यौ श्रीहरिचन्द ॥९२॥
प्रान-पियारे, प्रेमनिधि प्रेमिन-जीवन-प्रान ।
तिनके पद अरपन कियो यह वैशाख-बिधान ॥९३॥
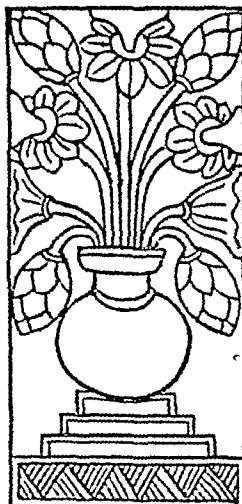
प्रेम-सरोवर

समर्पण

आज अक्षय तृतीया है, देखो जल-दान की आज कैसी महिमा है। क्या तुम मुझे फिर भी जल-दान दोगे ? कहाँ ! वरंच जलांजलि दोगे; देखो मैं कैसा प्यासा हूँ और प्यास में भी चातकाभिमानी हूँ। हॉ ! जिस चातक ने एक श्याम घन की आशा पर परिपूर्ण समुद्र और नदियों तथा अनेक उत्तम मीठे-मीठे सोते, झील, कूप, कुंड, बावली और झरनों को तुच्छ करके छोड़ दिया, उसे पानी बरसना तो दूर रहे, जो मधुर घन की ध्वनि भी न सुन पड़े तो कैसे प्रान बचे ? देखो यह कैसी अनीति है, वही आनन्दघन जी का कहना 'सब छोड़ि अहो हम पायो तुम्है हमै छोड़ि कहो तुम पायो कहा।' यह देखो कैसे संशय की बात है कि मै तो दोनो लोक के यावत् पदार्थ छोड़ बैठा, उस पर भी आप न पिघले तो इससे तुम्हारे ही विषय मे संशय होते है जो चित्त के धैर्य्यों को हिलाते हैं। पर चाहे तुम कुछ कहो, मैं तो व्रत नही छोड़ने का। यह बड़ा हठ कौन मिटा सकता है ? जो कहो कि 'तुम कच्चे हो, घर बैठे ही यह सम्पत लूटा चाहते हो और संसार की वासनाओ से दूपित होकर भी हमें खोजते हो' तो हम कैसे भी हो, तुम तो अच्छे हो और हम कहाते तो तुम्हारे है, तो फिर तुमको इससे क्या ? भले आदमी ही बनो 'सतां सप्तपदी मैत्री' इसी का निबाह करो, किसी भॉति समझो। ए मेरे प्यारे, कुछ तो मानो। जो कहो धर्म, तो तुम फल रूप हो। अब धर्म्म फिर कैसा ? जो कहो कलंक, तो प्रथम तुमको कलंक ही नहीं, और जो होता भी हो तो हम तुमको ढिंढोरा पीटने तो कहते नही। केवल इस अपने दीन को आश्वासन दे दो कि निराश न हो और इन अनिवार्य्य अश्रुओ को

अपने अंचल से निवारण करो और भव-ताप से परम तापित इस दीन-हीन दुखी को अपने चरण-कल्पतरु की छाया में विश्राम दो, क्योंकि वैशाख में छायादान का बड़ा पुण्य है। जो कहो कि वैशाख बड़ा पुण्य मास है, इसमें तुमने क्या किया ? तो मैंने देखो यह कैसा उत्तम तीर्थ प्रेम-सरोवर बनाया है। जो इस तीर्थ मे स्नान करेंगे, जो इस तीर्थ की विधि करेंगे, जो इस तीर्थ का ध्यान धरेंगे, वे आप पुण्य-स्वरूप पावन होकर अपने शरीर के स्पर्श के वायु से तथा हवा से लोक को पवित्र करेंगे, क्योंकि सत्य प्रेम ऐसी ही वस्तु है। तो क्या इस सीतल सरोवर में तुम न नहाओगे ? अवश्य नहाना होगा, आप नहाओ और अपने जनों को कहो कि इसमे स्नान करे। प्यारे, यह अक्षय सरोवर नित्य भरा रहेगा और इसमे नित्य नए कमल फूलेंगे और कभी इसमे कोई मल न आवेगा और इस पर प्रेमियों की भीड़ नित्य लगी रहेगी और प्रेम शब्द को विषय का पूजादिक कहनेवाले वा प्रेमाधिकारी के अतिरिक्त कोई भी इस तीर्थ पर कभी न आवेंगे (एवमस्तु-एवमस्तु)। तो तुम तो स्नान करो कि मेरा परिश्रम सार्थक हो और इसका तीर्थपना पक्का हो जाय, क्योंकि तुम्हारे वा हमारे वा तुम्हारे किसी सेवक के नहाने से जल मात्र गंगा हो जाते हैं। तो आओ, इधर आओ, इस उत्तम तीर्थ का मार्ग दिखानेवाला तुम्हारे आगे चलता है, जिसका नाम—
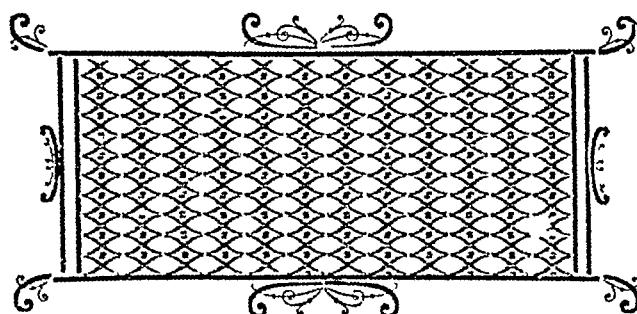
प्रेम-सरोवर

जिहि लहि फिर कछु लहन की आस न चित मे होय ।
जयति जगत पावन-करन प्रेम बरन यह दोय ॥ १ ॥
प्रेम प्रेम सब ही कहत प्रेम न जान्यौ कोय ।
जो पै जानहि प्रेम तो मरै जगत क्यो रोय ॥ २ ॥
प्राननाथ के न्हान हित धारि हृदय आनंद ।
प्रेम-सरोवर यह रचत रुचि सो श्री हरिचंद ॥ ३ ॥
प्रेम-सरोवर यह अगम यहाँ न आवत कोय ।
आवत सो फिर जात नहिं रहत वही के होय ॥ ४ ॥
प्रेम-सरोवर मै कोऊ जाहु नहाय विचारि ।
कछु के कछु ह्वै जाहुगे अपनेहि आप बिसारि ॥ ५ ॥
प्रेम-सरोवर नीर को यह मत जानेहु कोय ।
यह मदिरा को कुण्ड है न्हातहि बौरो होय ॥ ६ ॥
प्रेम-सरोवर नीर है यह मत कीजौ ख्याल ।
परे रहै प्यासे मरै उलटी ह्याँ की चाल ॥ ७ ॥
प्रेम-सरोवर-पंथ मै चलिहै कौन प्रवीन ।
कमल-तंतु की नाल सो जाको मारग छीन ॥ ८ ॥

प्रेम-सरोवर के लग्यौ चम्पाबन चहुँ ओर।
भँवर बिलच्छन चाहिए जो आवै या ठौर ॥ ९ ॥
लोक-लाज की गाँठरी पहिले देइ डुबाय।
प्रेम-सरोवर पंथ मै पाछे राखै पाय ॥१०॥
प्रेम-सरोवर की लखी उलटी गति जग माँहि।
जे डूबे तेई भले तिरे तरे ते नाँहि ॥११॥
प्रेम-सरोवर की यहै तीरथ विधि परमान।
लोक वेद कों प्रथम ही देहु तिलाजंलि-दान ॥१२॥
जिन पाँवन सो चलत तुम लोक वेद की गैल।
सो न पाँव या सर धरौ जल ह्वै जैहै मैल ॥१३॥
प्रेम-सरोवर पंथ मै कीचड़ छीलर एक।
तहाँ इनारू के लगे तट पैं बृक्ष अनेक ॥१४॥
लोक नाम है पंक को बृच्छ वेद को नाम।
ताहि देखि मत भूलियो प्रेमी सुजन सुजान ॥१५॥
गह्वर बन कुल वेद को जहँ छायो चहुँ ओर।
तहँ पहुँचै केहि भाँति कोउ जाको मारग घोर ॥१६॥
तीछन बिरह दवागि सों भसम करत तरुवृंद।
प्रेमीजन इत आवही न्हान हेत सानंद ॥१७॥
या सरवर की हौ कहा सोभा करौ बखान।
मत्त मुदित मन भौंर जहँ करत रहत नित गान ॥१८॥
कबहुँ होत नहि भ्रम निसा इक रस सदा प्रकास।
चक्रवाक बिछुरत न जहँ रमत एक रस रास ॥१९॥
नारद शिव शुक सनक से रहत जहाँ बहु मीन।
सदा अमृत पीके मगन रहत होत नहि दीन ॥२०॥
नंददास, आनंदघन, सूर, नागरीदास।
कृष्णदास, हरिवंस, चैतन्य, गदाधर, व्यास ॥२१॥

इन आदिक जग के जिते प्रेमी परम प्रसंस।
तेई या सर के सदा सोभित सुंदर हंस ॥२२॥
तिन बिनु को इत आवई प्रेम-सरोवर न्हान।
फँस्यौ जगत मरजाद मे बृथा करत जप ध्यान ॥२३॥
अरे बृथा क्यो पचि मरौ ज्ञान-गरूर बढ़ाय।
विना प्रेम फीको सबै लाखन करहु उपाय ॥२४॥
प्रेम सकल श्रुति-सार है प्रेम सकल स्मृति-मूल।
प्रेम पुरान-प्रमाण है कोउ न प्रेम के तूल ॥२५॥
बृथा नेम, तीरथ, धरम, दान, तपस्या आदि।
कोऊ काम न आवई करत जगत सब बादि ॥२६॥
करत देखावन हेत सब जप तप पूजा पाठ।
काम कछू इन सो नही यह सब सूखे काठ ॥२७॥
विना प्रेम जिय ऊपजे आनँद अनुभव नाँहि।
ता बिनु सब फीको लगै समुझि लखहु जिय माँहि ॥२८॥
ज्ञान करम सो औरहू उपजत जिय अभिमान।
दृढ़ निहचै उपजै नही विना प्रेम पहिचान ॥२९॥
परम चतुर पुनि रसिकबर कैसोहू नर होय।
विना प्रेम रूखी लगै बादि चतुरई सोय ॥३०॥
जान्यो वेद पुरान भे सकल गुनन की खानि।
जु पै प्रेम जान्यौ नही कहा कियो सब जानि ॥३१॥
काम क्रोध भय लोभ मद सबन करत लय जौन।
महा मोहहू सो परे प्रेम भाखियत तौन ॥३२॥
विनु गुन जोवन रूप धन विनु स्वारथ हित जानि।
शुद्ध कामना ते रहित प्रेम सकल रस-खानि ॥३३॥
अति सूछम कोमल अतिहि अति पतरो अति दूर।
प्रेम कठिन सब ते सदा नित इक रस भरपूर ॥३४॥

जग मैं सब कथनीय है सब कछु जान्यौ जात ।
पै श्री हरि अरु प्रेम यह उभय अकथ अलखात ॥३५॥
बँध्यौ सकल जग प्रेम मे भयो सकल करि प्रेम ।
चलत सकल लहि प्रेम कों बिना प्रेम नहिं छेम ॥३६॥
पै पर प्रेम न जानही जग के ओछे नीच ।
प्रेम जानि कछु जानिबो बचत न या जग बीच ॥३७॥
दंपति-सुख अरु विषय-रस पूजा निष्ठा ध्यान ।
इनसो परे बखानिए शुद्ध प्रेम रस-खान ॥३८॥
जदपि मित्र सुत बंधु तिय इनमै सहज सनेह ।
पै इन मैं पर प्रेम नहि गरे परे को एह ॥३९॥
एकंगी बिनु कारने इक रस सदा समान ।
पियहि गनै सर्वस्व जो सोई प्रेम प्रमान ॥४०॥
डरै सदा चाहै न कछु सहै सवै जो होय ।
रहै एक रस चाहि कै प्रेम वखानौ सोय ॥४१॥

प्रेमाश्रु-वर्षण

'पर-कारज देह कों धारे फिरौ परजन्य जथारथ ह्वै दरसौ।
निधि नीर सुधा के समान करौ सबही विधि सुंदरता सरसौ ॥
'घन आनँद' जीवन-दायक ह्वै कबौ मेरियौ पीर हिये परसौ।
कबहूँ वा बिसासी सुजान के आँगन मों अँसुवान कों लै बरसौ ॥'

सं० १९३०

समर्पण

कितव,

यह प्रेमाश्रु की वर्षा है। इससे नहाके तब मुझे छूओ, क्योंकि बहुत धूर्तता करने से तुम अशुद्ध हो गए हो। क्या कहूँ, बहुत कुछ कहने को जी चाहता है और लेखनी कहनी-अनकहनी सभी कहना चाहती है, पर क्या करे, अदब का स्थान है, इससे चुप है और चुप रहेगी। हाय हाय, कभी मैं इस दुष्ट लेखनी को अपने प्रान-प्यारे जीवितेश, मेरे सर्वस्व की कुछ निंदा कैसे लिखने दूँगा। और जो लिखा भी हो तो क्षमा करना।

यह बखेड़ा जाने दो, आज क्यों नहीं मिले ?

ले इन्हीं लक्षणों से तो कुछ कहने को जी चाहता है
न कहूँगा, रूठने का डर तो सबसे बड़ा है न
जैसा कुछ हूँ, बुरा भला तुम्हारा हूँ
लो इस वर्षा से जी बहलाओ
पर प्यारे, तुम भी कभी बरसो।

बरसि नदी नद सर समुद पूरे करुना-भौन।
हम चातक लघु चंचु-पुट पूरन में श्रम कौन ॥

सावन हरिआरी अमावस
गुरु पुष्य सं० १९२०

तुम्हारा चातक
हरिश्चंद्र
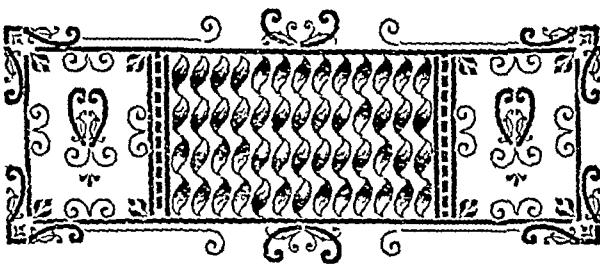
प्रेमाश्रु-वर्षण

भइ सखि साँझ फूलि रहि बन द्रुम बेली चलै किन कुंज कुटीर ।
हरे तरोवर भए सुनहरे छिरकी मनहुँ अबीर ।।
झुकि रहे रंग रंग के बादर मनु सुखए बहु चीर ।
जानि बसेरा-समय कुलाहल करत कोकिला कीर ।।
तन्यो बितान गगन अवनी लौ भयो सुहावन तीर ।
जमुना-जल झलकत आभा मिलि लहरत रँग भरि नीर ।।
धीर समीर बहत अँग सहरत सोभित धीर समीर ।
'हरीचंद' इक तुव बिनु फीको सब मानत बलबीर ।।१।।

सखी री साँझ सहायक आई ।
मेट्यो भय बैरी प्रकास को सब कछु दीन दुराई ।।
अवनि अकास एक भयो मारग कहुँ नहि परत दिखाई ।
सूने भए सबै थल ब्रजजन घर मै रहे दुराई ।।
गरजि बुलावत तोहि चंचला चमकत राह दिखाई ।
औरन के चकचौधा लावत तेरी करत सहाई ।।
तैसेहि झींगुर झनकत नूपुर जासो नाहि सुनाई ।
वायु सुखद ता दिसि तोहिं भेजत तरु हिलि रहत बुलाई ।।

बरसत नान्ही बूँद हरन श्रम कोकिल करत बधाई।
'हरीचंद' चलि उत किन भामिनि रहु पिय अंकम लाई ॥२॥

साँझ भई री परम सुहावनि घिरि तम कीन बितान।
भए अँधेरे कुंज लता-तरु दुरयौ दुखद सो भान ॥
घर गए गोप गाय गईं गोहर सून भए मग थान।
पावस समय जानि सब बेगहि सोए नर-नारी पट तान ॥
अवनि अकास एक भयो देखियत परत नाहि कछु जान।
झनकत झिल्ली रट रहे दादुर कियो जात नहि कान ॥
तारे चंद मंद भए सारे लखिहै कोउ न प्रयान।
'हरीचंद' उठि चलु निधरक तू मति चूकै करि मान ॥३॥

जगावन ही मनु पावस आयो।
भयो भोर पिय उठौ उठौ कहि मधुरे गरजि सुनायो ॥
बोले मोर कोकिला कुहके दादुर रोर मचायो।
दामिनि दमकी मंगल बंदी-जन मनु नाच्यौ गायो ॥
छोटी बूँद बरसि चौंकाए आलस सबै मिटायो।
'हरीचंद' पिय प्यारी कों इन बेगहि आज जगायो ॥४॥

आजु प्रानप्यारी प्राननाथ सों मिलन चली
लखि कै पावस दास साजी है सवारी।
तृन के पाँवरे बिछाय घन धुनि मंगल सुनाय
दामिनि दमकि आगे करै उँजियारी ॥
ठौर ठौर राह बतावत झिल्ली
बूँद बरसि हरै श्रम सुखकारी।
'हरीचंद' समै को उचित उपचार करि
पावत न्यौछावर पिय उनहारी ॥५॥

आजु तन भींजे बसनन सोहै ।
देखि लेहु भरि लोचन सोभा जुगल अरी मन मोहै ।।
उघरे तन अनुरागहु उर के छिपे न जदपि लजौहै ।
रति के चिन्ह जुगल तन बसनन ढँकेहु उघरि उलटौहै ।।
अंग प्रभा मनु बसन रुको नहि प्रगटि खुली सब सौंहै ।
'हरीचंद' दृग भीजि रहे रुकि उड़ि न सकत ललचौहै ।।६।।

बात बिनु करत पिया बदनाम ।
कौन हेतु वह लाज हरै मम बिना बात बे-काम ।।
आजु गई हौ प्रात जमुन-तट आयो तहँ घनस्याम ।
पकरि मोहि जल बीच हलोख्यो तोर्यो गर की दाम ।।
लरि कंकन को दियौ खरौटा मेरे मुख सुनु बाम ।
'हरीचंद' जाने जामै सब छिपै न प्रीति मुदाम ।।७।।

बिहरत रस भरि लाल बिहारी ।
ज्यौं ज्यौं घन गरजत है त्यो त्यो लपटि रहत पिय प्यारी ।।
होड़ा-होड़ी घन दामिनि सो केलि करत सुखकारी ।
बोलत मोर दामिनी चमकत लखि उमगत रस भारी ।।
रहे सिहराइ भुजा भुज दीने राधा भानु-दुलारी ।
'हरीचंद' कवि-गन किए पावन कविता दोस निवारी ।।८।।

दामिनि बैर करै बिनु बात ।
बिघन बनत बिनु बात कुंज मै जब कबहूँ चमकात ।।
निधरक जुगल रहन नहि पावत प्रगटावत रस-बात ।
'हरीचंद' आखिर तौ चपला सहि नहि सकत सिहात ।।९।।

दामिनि बैरिनि बैर परी ।
जान न देत पिया प्यारे ढिग प्रगटत बात दुरी ।।

रैन अँधेरी स्याम बसन तन जद्यपि रहत धरी।
तऊ चमकि बिनु वात वैरिनी मेरी लाज हरी॥
घन गरजत बूँदन लखि घर नहि रहियै धीर धरी।
'हरीचंद' तजि संक अकेली पिय-मारग निकरी॥१०॥

मंगलमय सखि जुगल-विहार।
वड़े प्रात ही कुंज ओट ते क्यो चुपके नहि लेत निहार॥
मंगल सेस भवन रस मंगल तहाँ जुगल मंगल की खानि।
मंगल बाहु बाहु मै दीने मंगल वलि अलसौही वानि॥
मंगल जागत आलस पागत मंगल नीद भरे जुग नैन।
मंगल लपटि लपटि कै पुनि पुनि कवहुँ उठत करि कवहूँ सैन॥
मंगल परिरंभन आलिगन मंगल तोतरे शब्द उचार।
'हरीचंद' मंगल वल्लभ-पद जा वल विहरत विना विकार॥११॥

आजु कछु मंगल घन उनए।
गरजत मंद मंद सोई मंगल सनवत कुंज छए॥
बरसत बूँदन मनु अभिसेचत मंगल कलस लए।
चमकि मंगलामुखी दामिनी मंगल करत नए॥
मंगल वैरख बग की पंगत मंगल दादुर गान गए।
मंगल नाचत मोर मोरनी मंगल कुंज बितान ठए॥
मंगल ब्रज बृंदाबन जमुना मंगल गिरिवर नाम लए।
'हरीचंद'मंगल वल्लभ-पद जा बल जुगल बिहार भए॥१२॥

सखि ये बदरा बरसन लागे री।
मोहि मोहन पिय विनु जानि जानि,
झुकि झुकि कै सरसन लागै री।
हम उन विनु अति व्याकुल डोलै, मुख सो हाय पिया कहि बोलैं,
प्रान आइ अटके नैनन मे तेरे दरसन लागे री॥

सुनि सुनि कै सँजोग कुबिजा को, करि कै याद बिछुरिबो वाको,
लखि झमकनि बूँदनि की मेरे जियरा हरसन लागे री।
'हरीचंद' नहि बरसत पानी, विरह अगिनि को घृत सम जानी,
कहा करैं कित जाइँ सेज सूनी लखि तरसन लागे री ॥१३॥

सखी मन-मोहन मेरे मीत।
लोक वेद कुल-कानि छाँड़ि हम करी उनहि सो प्रीत ॥
विगरौ जग के कारज सगरे उलटौ सबही नीत।
अब तौ हम कबहूँ नहिं तजिहैं पिय की प्रेम प्रतीत ॥
यहै बाहु-बल आस यहै इक यहै हमारी रीत।
'हरीचंद' निधरक विहरैंगी पिय बल दोउ जग जीत ॥१४॥

अरी सोहागिन तेरे ही सिर राजतिलक बिधि दीनो।
तोही कों फबै सेंदुर को टीको जिन पिय मन हरि लीनो ॥
नास्यौ दरप सुन्दरीगन को भोग-भाग सब छीनो।
'हरीचंद' भय मेटि काम को राज अचल ब्रज कीनो ॥१५॥

श्रीराधे सबको मान हर्‌यौ।
अरी सुहागिन मेरी तू जब सेंदुर तिलक धर्‌यौ ॥
गिरे गरब-परबत जुवतिन के रूप गरूर गर्‌यौ।
रीती सिद्धि भई रिषिगन की देविन दरप दर्‌यौ ॥
शिव समाधि छूटी शुक डोल्यौ रवि ससि तेज छर्‌यौ।
फूलन रूप-रंग तजि दीनौ जग आनंद भर्‌यौ ॥
सबको भाग रूप अधरामृत इकलौ पान कर्‌यौ।
'हरीचंद' हरि तोहि अंक लै ह्वै निसंक बिहर्‌यौ ॥१६॥

सुरत-श्रम-जल विहरत पिय-प्यारी।
चाव भरे दोउ सेज नाव पै बाहु बाहु मैं धारी ॥

करि आसरो पियारी को पिय पावत कोउ विधि पारी ।
'हरीचंद' तहँ मौन बाँधि गल डूबे भयो सुखारी ॥१७॥

प्यारी-रूप-नदी छवि देत ।
सुखमा-जल भरि नेह-तरंगनि बाढ़ी पिय के हेत ॥
नैन-मीन कर-पद-पंकज से सोभित केस-सिवार ।
चक्रवाक जुग उरज सुहाए लहर लेत गल-हार ॥
रहत एक-रस भरी सदा यह जदपि तऊ पिय भेटि ।
'हरीचंद' बरसै साँवल घन बढ़त कूल कुल मेटि ॥१८॥

आजु तन आनँद-सरिता बाढ़ी ।
निरखत मुख प्रीतम प्यारे को प्रीति तरंगनि काढ़ी ॥
लोक बेद दोउ कूल तरोवर गिरे न रहे सम्हारे ।
हाव भाव के भरे सरोवर बहे होइ कै नारे ॥
बुझे दवानल परम बिरह के प्रेम-परब भो भारी ।
मीन-बान के जे प्रेमी जन जल लहि भए सुखारी ॥
भई अपार न छोर दिखावै नीति-नाव नहिं चाली ।
'हरीचंद' वल्लभ-पद-बल वै अवगाहत सोई आली ॥१९॥

हमारे नैन बही नदियाँ ।
बीती जानि औधि सब पिय की जे हम सों बदियाँ ॥
अवगाह्यौ इन सकल अंग ब्रज अंजन को धोयो ।
लोक बेद कुल-कानि बहाई सुख न रह्यो खोयो ॥
डूबत हौं अकुलाइ अथाहन यहै रीति कैसी ।
'हरीचंद' पिय महाबाहु तुम आछत गति ऐसी ॥२०॥

खेमटा ।

ए री मेरी प्यारी आजु पौढ़ि तू हिंडोरे ।
ललित लतान मैं सेज फँसाई झरत फूल चहुँ ओरे ॥

मंद पवन लगिहैं हालन मैं पीतम सों भुज जोरें।
'हरीचंद' सुख नीद सोइ तूॅ अपने पिय के कोरें ॥२१॥

पिय की अँकोर रच्यो है हिंडोर ।
खंभ जाँघैं अंक पटुली मंद झुलनि झकोर ॥
हार झूमर पीत पट झालर लगी चहुँ ओर ।
सुक मोर पिक किंकिनि वदत तन स्वेद बरसत जोर ॥
तहँ रमकि झूलत प्रान-प्यारी उमगि थोरहि थोर ।
'हरिचंद' सखि श्रम-हरन बीजन रहत है तृन तोर ॥२२॥

दोऊ मिलि झूलत कुंज बितान ।
चहुँ ओर एकन एक सो लगे सघन बिटप कतार ।
तापै लता रहि लपटि घेरे मूल सो प्रति डार ॥
बहु फूल तिन मै फूलि सोहत विविध बरन अपार ।
तिमि अवनि तृन अंकुर-मई भयो दसो दिसि इक सार ॥ दोऊ० ॥
इक सबल लखि कै डार डारयौ तहाँ ललित हिंडोल ।
तापैं लता चहुँघा लपेटीं झूमि झूमर लोल ॥
तहँ झमकि झूलत होड़ वदि वदि उमगि करहि कलोल ।
खेलै हँसैं गेंदुक चलावै गाइ मीठे बोल ॥ दोऊ० ॥
झोटा बढ़्यो रमकत दोऊ दिसि डार परसत जाइ ।
फरहरत चंचल खुलत बेनी अंग परत दिखाइ ॥
टूटि मोती-माल मुक्ता गिरत भू पै आइ ।
मनु मुक्त जन अधिकार गत लखि देत धरनि गिराइ ॥ दोऊ० ॥
कसी कंचुकि होत ढीली खुलि तनी के बंद ।
सिथिल कबरी उड़त सारी गिरत करके छंद ॥
प्रगट बदन दुरात झूलत मै तहाँ सानंद ।
मनु प्रेम-सागर मथत इत उत तरत कढ़ि बहु चंद ॥ दोऊ० ॥

इक डार पकरि हिलाइ बरसावत कुसुम बहु रंग।
इक नचत गावत इक बजावत बीन मधुर मृदंग॥
इक खींचि भाजत एक को पट हँसत भरी उमंग।
इक लपटि डोरी खात भँवरी प्रगटि अंग अनंग॥ दोऊ०॥
इक रीझि झूलनि पै रही इक रही बिरछन ओर।
इक होड़ दै झोटन बढ़ावत सौंह देत निहोर॥
इक थकित उतरत सिथिल बैठत नटत घूमरि घोर।
इक चढ़त झूलन हेत बदिकै दाँव लाख करोर॥ दोऊ०॥
इक भजत तेहि गहि रहत दूजी हँसत झगरत बात।
इक कहत हम नहि झूलिहैं भई सिथिल सगरे गात॥
तेहि खैंचि कोऊ आपुने बल डोल पै लै जात।
इक श्रमित बैठत ताहि दूजी करत अंचल बात॥ दोऊ०॥
कोऊ अंचल छोर कटि मैं बाँधि कसिकै देत।
कोऊ किए लावन की कछोटी चढ़त झोटा हेत॥
कोऊ दाबि अंचल दाँत सो सुख सो झकोरे लेत।
कोऊ बाँधि गाती हार सगरे भिरत रति रन-खेत॥ दोऊ०॥
इक श्रमित मुख करि अरुन स्वेदित लेत बिबिध उसास।
भए हाथ डोरी गहत राते मनहुँ राग प्रकास॥
पिछुरि काँपत अंग थहरत लहरि कच मुख पास।
तन स्वेद-कन झलकत रहत कोउ चाहि मंद बतास॥ दोऊ०॥
इक डरत झोटा देत पिय के गल रहत लपटाइ।
इक बीनि सबके आभरन पोहत तहाँ मन लाइ॥
इक गिरत रपटत घन गरज सुनि डरि छिपत इक जाइ।
इक बसन डारन सो छुड़ावत रहे जे लपटाइ॥ दोऊ०॥
गए भीजि सबके बसन लपटे बिबिध अंबर गात।
तन दुति अभूखन सहित भइ तहँ सबन को प्रगटात॥

मनु प्रान-पिय के मिलन अंतर-पट दुरायो जात।
खुलि गई कलई दुरयो फल भयो प्रगट प्रेम लखात ।।दोऊ०।।
इत वदत सुक पिक भँवर चातक भेक मोर चकोर।
इत डार हहरनि होत प्रतिधुनि मचकि डोल झकोर ।।
इत हँसनि हाहा सी सराहनि किंकिनी की रोर।
उत गान तान बँधान बाजन मिलि तुमुल कल घोर ।।दोऊ०।।
रँग रंग सारी रंग रँग के बहु अभूखन अंग।
रँग रंग फूले फूल चहुँ दिसि झालरैं रँग रंग ।।
रँग रंग बादर छए नभ तन रंग रंग अनग।
मनु श्याम ससि लखि रंग सागर चढ़ि चल्यौ इक संग ।।दोऊ०।।
जर-तार सारी बादला लै करत मोती पात।
तन स्वेद-कन घनश्याम जल हरि-प्रेम बरसत जात ।।
तरु सो पराग अमोद मधु-मद फूल बरसत पात।
मनु श्याम घन लखि उमगि चहुँ दिसि ते चली बरसात ।।दोऊ०।।
तरु फूल फल महि रहि गमकि तपि धूप ठौरहि ठौर।
मिहदी सुगंध कुसुंभ सारी अतर बासित छोर ।।
मिलि केस सोंधे अरगजा कुच लेप मृगमद जोर।
सुख मोद मधु तंबोल स्वेद सुगंध लेत झकोर ।।दोऊ०।।
घन तड़ित चमकनि तासु आभा पाइ जल चमकात।
तन बिबिध भूखन वसन चमकनि हँसनि मै द्विजपाँत ।।
चौकि चमकनि नारि की मुख-चंद चमकनि गात।
मिलि पीत पट के चमक मै इक रंग सबै दिखात ।।दोऊ०।।
तन भीजि सारी रंग रँग के बारि बहत उदोत।
सब रंग मिलि के बसन छापित मै प्रगट मुख जोत ।।
पिय के निचोरत चूनरी मै रंग दूनो होत।
मनु बहे मिलि रँग-समुद मै इक संग बहु रँग सोत ।।दोऊ०।।

मुख पै कसूंभी रंग सारी भीजि रही चुचाय।
लट सगबगी ह्वै तिमि रही गल कुचन मै लपटाय॥
मनु बाल ससि ढिग लाल बादर सुधा बरसत आय।
तेहि पान करि अहि-पुच्छ सो सिव-सीस देत बहाय॥दोऊ०॥
तिनमैं छबीली ललित श्री बृपभानुराय-कुमारि।
जापैं रमा रति उरवसी सी कोटि फेकिय वारि॥
जगस्वामिनी जन-काम-पूरनि सहज ही सुकुँवारि।
कीरति-जसोमति-लाडली ब्रजराज-प्रान-पियारि॥दोऊ०॥
तन नील सारी मै किनारी चंद-मुख परिबेख।
सिदूर सिर दोऊ नैन काजर पान की मुख रेख॥
बड़े नैना चपल चितवनि श्याम हित अनमेख॥
गोरी किसोरी परम भोरी सहज सुन्दर भेख॥दोऊ०॥
ढिग बाँह जोरे जासु बैठे नंदराय-कुमार।
प्रति रमक चितवनि हँसनि लखि जीवन करत मनुहार॥
सुरझाइ अंचल केस हारन करत मधुर बयार।
रहे रीझि आपा भूलि बारंबार कहि बलिहार॥दोऊ०॥
सिर मोर-मुकुट सोहावनो गल गुंज-माल अनूप।
तन श्यामसुंदर पीत पट कटि सहजहीं नट रूप॥
मनु नीलगिरि पैं बाल रवि की ललित लपटी धूप।
प्रेमिन महा सुख देत अतिहि उदार श्री ब्रज-भूप॥दोऊ०॥
मुरछल चँवर बिजना अड़ानी लिए हाथ रुमाल।
पिकदान फूल चँगेर भूखन बसन कुसुमन माल॥
झारी भरी जल डबा बीरा बिबिध बिजन थाल।
ललितादि ठाढ़ीं अनुचरी ढिग रूप की सी जाल॥दोऊ०॥
इक करत आरति इक निछावरि करत मनिगन छोरि।
इक आइ राई लोन वारत इक रहत तृन तोरि॥

इक भौर निरवारत खरी इक रहत भूखन जोरि।
इक बूँद आड़त आइ इक पद पोंछि रहत निहोरि ॥ दोऊ०॥
आनंद-सागर बढ़ो ताको कहूँ वार न पार।
डूबे करम कुल ज्ञान नेम विवेक काम-बिकार ॥
पायो न क्यौहूँ थाह शिव शुक रहे हारि बिचार।
'हरिचंद' तेहि अवगाह किय वल्लभ-कृपा-आधार ॥२३॥

सखी लखि यह रितु बन की शोभा।
कुहकत कुंज कुंज मे कोकिल लखि कै सब मन लोभा ॥
नए नए वृक्ष नए नए पल्लव नए नए सब गोभा।
नए नए पात फूल फल नए नए देत हिये मे चोभा ॥
सीतल चलत समीर सुहायो लेत सुगंध झकोर।
तैसोइ सुख घन उमड़ि रह्यौ है जमुना जू लेत हलोर ॥
नाचत मोर सोर चहुँ ओरन गुंजत अलि बहु भाँति।
बोलत चातक सुक पिक चहुँ दिसि लखि कै घन की पाँति ॥
हरी हरी भूमि भरी सोभा सो देखत ही बनि आवै।
जहँ राधा अरु माधव विहरत कुंजन छिपि छिपि जावै ॥
वह सौदामिनि वह स्यामल घन वृंदा-बिपिन-बिहारी।
जुगल चरन कमलन के नख पै 'हरीचंद' वलिहारी ॥२४॥

आजु ब्रज-वधू फूली फूलन के साज सजि,
प्यारी को झुलावत फूल के हिंडोरे।
फूली ब्रज भूमि सब द्रुम लता रहे फूलि,
तैसोई पवन वहै फूल के झकोरे ॥
फूली सखी एक आई साँवरे सलोने गात,
फूली प्यारी कंठ लगी प्रेम के हलोरे।

'हरीचंद' बलिहारी फूलि फूलि जात वारी,
संगम गुन गावत सुर थोरें ॥२५॥

परज

सखी री मोरा बोलन लागे ।
मनु पावस को टेरि बोलावत तासों अति अनुरागे ॥
किधौं स्याम घन देखि देखि कै नाचि रहे मद पागे ।
'हरीचंद' बृजचंद पिया तुम आइ मिलौ बड़-भागे ॥२६॥

देखि सखि चंदा उदय भयो ।
कबहूँ प्रगट लखात कबहुँ बदरी को ओट भयो ॥
करत प्रकास कबहुँ कुंजन मे छन छन छिपि छिपि जाय ।
मनु प्यारी मुख-चंद देखि के घूँघट करत लजाय ॥
अहो अलौकिक यह रितु-सोभा कछु बरनी नहि जात ।
'हरीचंद' हरि सो मिलिबे को मन मेरो ललचात ॥२७॥

सखी अब आनँद को रितु ऐहै ।
बहु दिन ग्रीसम तप्यो सखी री सब तन-ताप नसैहै ॥
ऐहैं री झुकि झुकि कै बादर चलिहै सीतल पौन ।
कोइलि कुहुकि कुहुकि बोलैंगी बैठि कुंज के भौन ॥
बोलैंगे पपिहा पिउ पिउ बन अरु बोलैंगे मोर ।
'हरीचंद' यह रितु-छबि लखि कै मिलिहै नंदकिसोर ॥२८॥

सखी री कछु तौ तपन जुड़ानी ।
जब सों सीरी पवन चली है तब सो कछु मन-मानी ॥
कछु रितु बदलि गई आली री मनु बरसैगो पानी ।
'हरीचंद' नभ दौरन लागे बरसा के अगवानी ॥२९॥

भोजन कीजै प्रान-पिआरी ।
भई बड़ी बार हिंडोले झूलत आज भयो श्रम भारी ॥
बिजन मीठे दूध सुहातो लीजै भानु-दुलारी ।
स्यामा-स्याम-चरन-कमलन पर 'हरीचंद' बलिहारी ॥३०॥

ऐरी आज झूलै छै जी श्याम हिंडोरें ।
बृंदावन री सघन कुंज मे जमुना जी लेती हलोरे ॥
सॅग थारे वृषभानु-नंदिनी सोहै छे रॅग गोरे ।
'हरीचंद' जीवन-धन वारी मुख लखती चित चोरे ॥३१॥

आजु फूली साँझ तैसी ही फूली राधा प्यारी ।
तैसी ही जमुना फूली, भौरन की भीर भूली,
तैसो ही समय भयो तैसी ही फूली फुलवारी ॥
तैसे ही झोटा बढ़े, अति ही अनंद मढ़े,
तैसोई अड़ानो राग गावै सुकुँवारी ।
तैसोई बृंदाबन, तैसोई आनंद मन, तैसोही
मोहन बनै 'हरीचंद' तहाँ बलिहारी ॥३२॥

कहूँ मोर बोलै री घन को गरज सुनि दामिनी दमकै छतिया धरकै ।
पिय बिन बिकल अकेली तड़पूँ बिरह-अगिनि उठि भरकै ॥
वह सुख की रतियाँ नहि भूलै सोई बात जिय करकै ।
'हरीचंद' पिय से कैसे मिलूँ छतियाँ सो बिरह बोझ मेरे सरकै ॥३३॥

चौखडा

हिंडोरे झूलत कुंज कुटीर ।
हिंडोरे राधा औ बलबीर ॥
हिंडोरे सब गोपिन की भीर ।
हिंडोरे कालिंदी के तीर ॥

कालिंदी के तीर गहबर कुंज रच्यो है हिंडोर।
नव द्रुम लतन मैं ग्रंथि दै दै फूल हैं चहुँ ओर॥
तहँ निबिड़ में शोभा भई अति ही सुगंध झकोर।
लखि हंस सारस भँवर गुंजत नचत बहु बिधि मोर॥
सोभा अति झूलत भई आजु बृंदाबन माँहि।
एक उतरहि एक चढ़हिं पुनि एक आवहि एक जाँहि॥

तैसी भूमि सबै हरियारी।
तैसी सीतल चलत बयारी।
डोलत कीर कतारी।
तैसी दादुर की धुनि न्यारी॥

दादुर की धुनि चहुँ ओर तैसी बीर-बधु छबि देत।
बग-पाँति तैसी श्याम घन मैं इंद्रधनुष समेत॥
जल बरसि नान्ही नान्ही बूँदन जिय बढ़ावत हेत।
कहुँ पंथ नहिं सूझत तृनन सों जल हलोरा लेत॥
जब चमकत घन दामिनी प्यारी तबै तुरंत।
पिय के कंठन लागई बाढ़्यौ मोद अनंत॥

तैसी झुकी रही लतारी।
तैसे सोभित नवल पतारी॥
तामैं अँटकि रहै सारी।
तेहि आप छुड़ावत प्यारी॥

प्यारी छोड़ावत आपु सारी फूल सखि खसि कै गिरै।
सब हिलत द्रुम अरु डार सोभा लखत ही मन को हरैं॥
बेला चमेली कुंद मरुआ अरु गुलाबन के तरैं।
बहु रंग फूले फूल तापै भँवर बहु बिधि गुंजरैं॥
अति आनँद बाढ़्यौ तहाँ झूलत है बृजचंद।
सब बृजनारि झुलावही कबहुँ तरल कहुँ मन्द॥

सिर मोर मुकुट छवि छाजै ।
उनके सुरंग चूनरी राजै ॥
बिछुआ किंकिनि सब बाजै ।
मनु काम नृपति-दल गाजै ।
मनु काम नृप की सैन गाजै जीति सब संसार को ।
कियो अचल पूरन प्रेम पंथहि नासि ग्यान-बिकार को ॥
नित एक रस यह ब्रज बसौ श्री श्याम नंदकुमार को ।
'हरिचन्द' का बरनै कहो या नित्य नवल बिहार को ॥३४॥

राग मलार

बोलै भाई गोवर्द्धन पर मोर ।
सावन मास घटा जुरि आई करत पपीहा सोर ॥
बृंदावन तरु पुंज कुंज मैं ठाढ़े नंदकिसोर ।
तैसिहि सँग वृषभानु-नंदनी तन जोरन को जोर ॥
सीतल चलत समीर सुहायो भरत सुगंधि अथोर ।
या बृज माहि सदा चिरजीवै 'हरीचंद' चित-चोर ॥३५॥

सखि री कुंजन बोलत मोर ।
दामिनि दमकि दसो दिसि दावत छूटि छुवत छित छोर ॥
मंद मंद मारुत मन मोहत मत्त मधुपगन सोर ।
'हरीचंद' बृजचंद पिया बिनु मारत मदन मरोर ॥३६॥

जेवत भीजत हैं पिय प्यारी ।
सावन मास घटा जुरि आई बैठे मोर कतारी ॥
मुरछल चँवर करत ललितादिक बैठे कंचन थारी ।
स्यामा-स्याम-बदन के ऊपर 'हरीचंद' बलिहारी ॥३७॥

घिरि घिरि घोर घमक घन धाए ।
बरसत बारि बड़ी बड़ी बूँदन बृज-मंडल पर छाए ।।
दादुर बक पिक मोर पपीहा चातक सोर मचाए ।
दामिनि दमकति दसहुँ दिसा सों बहु खद्योत चमकाए ।।
कुसुमित कुंज कुंद की कलिका केतकि कदम सुहाए ।
'हरीचंद' हरिचँद-नंदन-छबि लखि रति-काम लजाए ।।३८।।

चौताला

स्याम घटा मधि स्यामही हिंडोरो बन्यौ,
स्यामा स्याम झूलैं जामे अतिही अनंद सों ।
तैसोई तमाल कुंज स्याम रंग सोहत गोपी,
सब मिलि गावैं आनँद के कंद सो ।।
अलि पिक मोर नीलकंठ स्याम रंग सोहै,
स्याम श्री यमुना वहैं गति अति मंद सो ।
'हरिचंद' हरि की निरखि छबि महादेव,
स्याम गज-खाल ओढ़ि नाचैं गावैं छंद सो ।।३९।।

सखी री ठाढ़े नंद-कुमार ।
सुभग स्याम घन सुख रस बरसत चितवन माँझ अपार ।।
नटवर नवल टिपारो सिर पर लखि छबि लाजत मार ।
'हरीचंद' बलि बूँद निवारत जब बरसत घन-धार ।।४०।।

हिंडोला

झूलत हैं राधिका स्याम संग नव रंग सुखद हिंडोरे ।
गावत मालव राग रस भरे तान मान मधुरे सुर जोरे ।।
उमगि रही ब्रजनारि नवेली पँचरँग चीर पहिरि चित चोरे ।
पँचरँग छबि रस जुगल माधुरी कहि न जाइ स्यामल रँग गोरे ।।

बरसत मंद मंद घन तेहि छन पँच-रँग बादर सब सुख-बोरे ।
'हरीचंद' वृषभानुनंदनी कोटिन ससि-छबि छिन महँ छोरे ॥४१॥

वृषभानु-कुमारी लाडिली प्यारी झूलत हैं संकेत हो ।
सँग सुंदर सखी सुहावनी जिन कीनो हरि सों हेत हो ॥
सुंदर साज सिगार किए सब पहिरे विविध रँग चीर ।
हिलि मिलि झुलवहि लाडिली हो नव रस जमुना तीर हो ॥
सबै सोहाई नवल बधू मिलि गावत गौरी राग हो ।
'हरीचंद' सुख को घन बरसत बाढ़्यो सलिल सोहाग हो ॥४२॥

कलेऊ कीजै नंद-कुमार ।
भई बड़ि बार जाहु जमुना-तट ठाढ़े सखा सब द्वार ॥
आज प्रात ही घेर रह्यौ है बरसैगो बड़ी धार ।
'हरीचंद' बलि वेगहि ऐयो भीजोगे सुकुमार ॥४३॥

घूम घूम घन आए बरसत धूम धूम पिय,
प्यारी रंग भौन भोजन रस भीने ।
फुहु फुहु फुहु बूँद परै छज्जन सों नीर झरैं,
बातन रँग-भरे दोऊ अरस-परस कीने ॥
नागरि ललितादि ठाढीं बिजन बहु भाँति हात,
सीतल जल झारी भरि बीड़ादिक लीने ।
'हरीचंद' हँसै गावैं भोजन को सुख पावै,
वारि फेरि सखी तृन तोरि तोरि दीने ॥४४॥

लाल यह सुंदर बीरी लीजै ।
हँसि हँसि कै नँदलाल अरोगौ मुख ओगार मोहि दीजै ॥
रंग रह्यौ बीड़ी की रचन मै चूनरि तैसिय कीजै ।
रस बाढ़्यौ तिय की बातन मै 'हरीचंद' पिय भीजै ॥४५॥
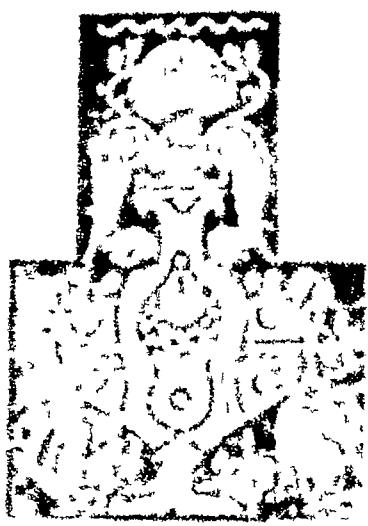
जैन-कुतूहल

समर्पण

प्यारे !

तुम तो मेरा मत जानते ही हो, तो इस पचड़े से तुम्हे क्या ! यह देखो यह नया तमाशा जैन-कुतूहल नाम का तुम्हे दिखाता हूँ। तुम्हे मेरी सौगंद, वाह वाह अवश्य कहना।

केवल तुम्हारा
हरिश्चंद्र
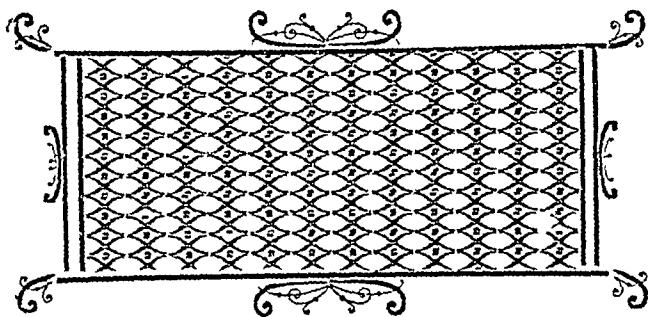
जैन-कुतूहल

—❀—
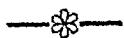
पियारे दूजो को अरहंत।
पूजा जोग मानिकै जग मैं जाको पूजैं संत॥
अपुनी अपुनी रुचि सब गावत पावत कोउ नहिं अंत।
'हरीचंद' परिनाम तुही है तासो नाम अनंत॥ १॥

जय जय जयति ऋषभ भगवान।
जगत ऋषभ बुध ऋषभ धरम के ऋषभ पुरान प्रमान॥
प्रगटित-करन धरम पथ धारत नाना बेश सुजान।
'हरीचंद' कोउ भेद न पायो कियो यथारुचि गान॥ २॥

तुमहिं तौ पार्श्वनाथ हौ प्यारे।
तलपन लागैं प्रान बगल ते छिनहु होहु जो न्यारे॥
तुमसो और पास नहिं कोऊ मानहु करि पतियारे।
'हरीचंद' खोजत तुमहीं को बेद पुरान पुकारे॥ ३॥

अहो तुम बहु बिधि रूप धरो।
जब जब जैसो काम परै तब तैसो भेख करो॥

कहुँ ईश्वर कहुँ बनत अनीश्वर नाम अनेक परो ।
सत पंथहि प्रगटावन कारन लै सरूप बिचरो ॥
जैन धरम में प्रगट कियो तुम दया धर्म सगरो ।
'हरीचंद' तुमकों बिनु पाए लरि लरि जगत मरो ॥ ४ ॥

बात कोउ मूरख की यह मानो ।
हाथी मारै तौहू नाही जिन-मंदिर मे जानो ॥
जग मे तेरे बिना और है दूजो कौन ठिकानो ।
जहॉ लखो तहँ रूप तुम्हारो नैनन माहि समानो ॥
एक प्रेम है एकहि प्रन है हमरो एकहि बानो ।
'हरीचंद' तब जग में दूजो भाव कहॉ प्रगटानो ॥ ५ ॥

नाहि ईश्वरता अँटकी बेद मे ।
तुम तो अगम अनादि अगोचर सो कैसे मत-भेद मे ॥
तुम्हरी अनित अपार अहै गति जाको वार न पारो ।
ताको इति करि गाइ सकै क्यौं बपुरो बेद बिचारो ॥
बेद लिखी ही होय तुम्हारी जो पै महिमा स्वामी ।
तौ परिमिति गुन भए तिहारे नेति नेति के नामी ॥
बेद-मारगहि वारो प्यारे जो इक तुमकों पावै ।
तौ जग-स्वामी जग-जीवन क्यों तुमरो नाम कहावै ॥
जो तुव पद-रज-अंजन नैनन लागै तौ यह सूझै ।
'हरीचंद' बिनु नाथ-कृपा क्यो यह अभेद गति बूझै ॥ ६ ॥

जैन को नास्तिक भाखै कौन ?
परम धरम जो दया अहिंसा सोई आचरत जौन ॥
सत् कर्मन को फल नित मानत अति बिबेक के भौन ।
तिन के मतहि बिरुद्ध कहत जो महा मूढ़ है तौन ॥

सब पहुँचत एक हि थल चाहों करौ जौन पथ गौन ।
इन ऑखिन सो तो सब ही थल सूझत गोपी-रौन ॥
कौन ठाम जहँ प्यारो नाहीं भूमि अनल जल पौन ।
'हरीचंद' ए मतवारे तुम रहत न क्यों गहि मौन ॥ ७ ॥

पियारे तुव गति अगम अपार ।
यामैं खोलै जीह जौन सो मूरख कूर गँवार ॥
तेरे हित बकनो बिन बातहि ठानि अनेकन रार ।
यासों बढ़िकै और जगत नहिं मूरखता-व्यवहार ॥
कहँ मन बुद्धि बेद अरु जिह्वा कहँ महिमा-विस्तार ।
'हरीचंद' बिनु मौन भए नहिं और उपाय बिचार ॥ ८ ॥

कहाँ लौं बकिहैं बेद बिचारे ।
जिनसों कछु नातो नहि तोसों तिनके का पतियारे ॥
कागज अक्षर शब्द अर्थ हिय धारण मुख उचार ।
इनसों बढ़ि जा मैं कछु नाहीं ते पावहि क्यों पार ॥
तेरी महिमा अमित इतै है गिनती की सब बात ।
'हरीचंद' बपुरे कहिहैं का यह नहिं मोहिं लखात ॥ ९ ॥

युक्ति सों हरि सो का संबंध ।
बिना बात ही तरक करैं क्यौं चारहु दृग के अंध ॥
युक्तिन को परमान कहा है ये कबहूँ बढ़ि जात ।
जाको बात फुरै सो जीतै याने कहा लखात ॥
अगम अगोचर तुमहि मूरख युक्तिन मैं क्यो सानै ।
'हरीचंद' कोउ सुनत न मेरी करत जोई मन मानै ॥१०॥

जो पै झगरेन मैं हरि होते ।
तौ फिर श्रम करिकै उनके मिलिबे हित क्यों सब रोते ॥

घर-घर मैं नर नारिन मै नित उठिकै झगरो होत।
वहाँ क्यों न हरि प्रगट होत है भव-बारिधि के पोत ॥
पसुगन मैं पच्छिन मै नितही कलह होत है भारी।
तौ क्यों नहि तहँ प्रगट होत हैं आसुहि गिरवरधारी ॥
झगड़हु मैं कछु पूँछ लगी है याहि होत का बार।
तनिक बात पै झगरि मरत हैं जग के फोरि कपार ॥
रे पंडितो करत झगरो क्यो चुप ह्वै बैठो भौन।
'हरीचंद' याही मै मिलिहैं प्यारे राधा-रौन ॥११॥

खंडन जग मैं काको कीजै।
सब मत तो अपने ही है इनको कहा उत्तर दीजै ॥
तासों बाहर होइ कोऊ जब तब कछु भेद बतावै।
ह्याँ तो वही सबै मत ताके तहँ दूजो क्यों आवै ॥
अपुने ही पै क्रोधि बावरे अपुनो काटैं अंग।
'हरीचंद' ऐसे मतवारेन को कहा कीजै संग ॥१२॥

पियारो पैये केवल प्रेम मै।
नाहि ज्ञान मै नाहि ध्यान मै नाहि करम-कुल-नेम मै ॥
नहि भारत मै नहि रामायन नहि मनु मै नहि बेद मै।
नहि झगरे मै नाहि युक्ति मै नाहि मतन के भेद मै ॥
नहि मंदिर मै नहि पूजा मै नहि घंटा की घोर मै।
'हरीचंद' वह बाँध्यो डोलत एक प्रीति के डोर मै ॥१३॥

धरम सब अटक्यो याही बीच।
अपुनी आपु प्रसंसा करनो दूजेन कहनो नीच ॥
यहै बात सबने सीखी है का वैदिक का जैन।
अपनी-अपनी ओर खीचनो एक लैन नहि दैन ॥

आग्रह भयो सबन के तन मै तासों तत्व न पावैं ।
'हरीचंद' उलटी की पुलटी अपुनी रुचि सो गावैं ॥१४॥

जै जै पद्मावति महरानी ।
सब देविन मै तुमरी मूरति हम कहँ प्रगट लखानी ॥
तुमहि लच्छमी काली तारा दुरगा शिवा भवानी ।
'हरीचंद' हमको तो नैनन दूजी कहुँ न दिखानी ॥१५॥

कंत है बहुरूपिया हमारो ।
ठगत फिरत है भेस बदलि जग आप रहत है न्यारो ॥
बूढ़ो-ज्वान-जती-जोगिन को स्वाँग अनेकन लावै ।
कबहूँ हिंदू जैन कबहुँ अरु कबहुँ तुरुक बनि आवै ॥
भरमत वाके भेदन मै सब भूले धोखा खात ।
'हरीचंद' जानत नहि एकै ह्वै बहुरूप लखात ॥१६॥

लगाओ चसमा सबै सफेद ।
तब सब ज्यौं को त्यौं सूझैगो जैसो जाको भेद ॥
हरो लाल पीरो अरु लीलो जो जो रंग लगायो ।
सोइ सोइ रंग सबै कछु सूझत वासो तत्व न पायो ॥
आग्रह छोड़ि सबै मिलि खोजहु तब वह रूप लखैहै ।
'हरीचंद' जो भेद भूलिहै सोई पियको पैहै ॥१७॥

कहो अद्वैत कहाँ सो आयो ।
हमै छोड़ि दूजो है को जेहि सब थल पिया लखायो ॥
बिनु वैसो चित पाएँ झूठो यह क्यौं जाल बनायो ।
'हरीचंद' बिनु परम प्रेम के यह अभेद नहि पायो ॥१८॥

यह पहिले ही समुझि लियो ।
हम हिंदू हिंदू के बेटा हिंदुहि को पय पान कियो ॥

नहिं इन झगड़न मैं कछु सार ।
क्यों लरि लरिकै मरो बावरे बादन फोरि कपार ।।
कोइ पायौ कै तुमही पैहो सो भाखौ निरधार ।
'हरीचंद' इन सब झगड़न सों बाहर है वह यार ।।२८।।

अरे क्यों घर घर भटकत डोलौ ।
कहा धर्‌यौ तेहि कहूँ पाइहो क्यों बिन बातन छोलौ ।।
क्यों इन थोथिन पोथिन लै कै बिना बात ही बोलौ ।
'हरीचंद' चुप ह्वै घर बैठो यामैं जीभ न खोलौ ।।२९।।

खराबी देखहु हो भगवान की ।
कहाँ कहाँ भटकत डोलत है सुधि न ताहि कछु प्रान की ।।
तीन ताग मैं कहुँ अँटक्यौ कहुँ बेदन मैं यह डोलै ।
कहुँ पानी मैं कहुँ उपवासन मैं कहुँ स्वाहा मैं बोलै ।।
कहुँ पथरा बनि बनि बैठो कहुँ बिना सरूप कहायो ।
मंदिर महजिद गिरजा देहरन डोलत धायो धायो ।।
बादन मै पोथिन मै बैठ्यौ बचन विषय बनि आय ।
"हरीचंद' ऐसे को खोजै केहि थल देहु बताय ।।३०।।

लखौ हरि तीन ताग मै लटक्यौ ।
रीझि रह्यौ पानी चाटन पै करम-जाल में अँटक्यौ ।।
हाथ नचावत सोर मचावत अगिन-कुंड दै पटक्यौ ।
'हरीचंद' हरजाई बनिकै फिरत लखहु वह भटक्यौ ।।३१।।

माया तुम सों बड़ी अहै ।
तुम्हरो केवल नाम बड़ो है बेद पुरान कहै ।।
बस कछु नहि तुम्हरो या जग मै यह जन साँच कहै ।
नाही तो 'हरिचंद' तुम्हारो ह्वै क्यौं काम दहै ।।३२।।

न जानै तुम कछु हौ की नाँहीं ।
झूठहि वेद पुरान बकत सब भेद जान नहि जाँहीं ॥
तुम साँचे हौ कै सपना हौ कै हौ झूठ कहानी ।
पतित-उधारन दीन-नेवाज़न यह सब कैसी बानी ॥
जौ साँचे हौ तुम अरु सगरे वेदादिक सब साँचे ।
'हरीचंद' तौ हमहुँ पतित ह्वै उधरन सो क्यौ बाँचे ॥३३॥

अहो यह अति अचरज की बात ।
जानि बूझि कै बिष के फल को क्यों भूल्यौ जग खात ॥
सब जानत मरनो है जग मैं झूठे सुत पितु मात ।
'हरीचंद' तो फिर क्यों नित नित याही मै लपटात ॥३४॥

कहाँ तोहिं खोजिए ए राम ।
मंदिर वेद पुरान जग्य जप तप मैं तो नहि ठाम ॥
जहँ जहँ भाखत तहँ तहँ धावत मिलत न कहुँ बिसराम ।
'हरीचंद' इन सो कहा बाहर अहै तिहारो धाम ॥३५॥

देखैं पावस कौन सोहाग ।
बहुत सोहागिन एक पियरवा सब ही को अनुराग ॥
खोजत सब पावत नहि कोऊ धावत करि करि लाग ।
'हरीचंद' देखै पहिले हम काको लागत भाग ॥३६॥

——❀——

प्रेम-माधुरी

चन्द्रप्रभा प्रेस मे सन् १८८२ मे दूसरी आवृत्ति हुई
कविवचन सुधा, अक्तूबर १८७५ ई०
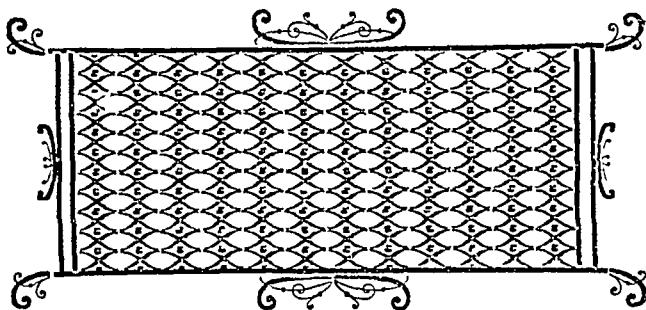
प्रेम-माधुरी

दोहा

बार बार पिय आरसी मत देखहु चित लाय ।
सुंदर कोमल रूप मे दीठ न कहुँ लगि जाय ।।
देखन देहुँ न आरसी सुंदर नन्दकुमार ।
कहुँ मोहित ह्वै रूप निज, मति मोहि देहु बिसार ।।

सवैया

राखत नैनन मै हिय मै भरि दूर भए छिन होत अचेत है ।
सौतिन की कहै कौन कथा तसवीर हू सो सतराति सहेत है ।
लाग भरी अनुराग भरी 'हरिचंद' सबै रस आपुहि लेत है ।
रूप-सुधा इकली ही पियै पियहू को न आरसी देखन देत है ।। १ ।।

कूकै लगी कोइलैं कदंबन पै बैठि फेरि
धोए धोए पात हिलि-हिलि सरसै लगे ।
बोलै लगे दादुर मयूर लगे नाचै फेरि
देखि कै सँजोगी जन हिय हरसै लगे ।

हरो भई भूमि सीरी पवन चलन लागी
लखि 'हरिचंद' फेर प्रान तरसै लगे।
फेरि झूमि झूमि बरषा की रितु आई फेरि
बादर निगोरे झुकि झुकि बरसै लगे ॥ २ ॥

पहिले ही जाय मिले गुन में श्रवन फेरि
रूप-सुधा मधि कीनो नैनहू पयान है।
हँसनि नटनि चितवनि मुसुकानि सुघराई
रसिकाई मिलि मति पय पान है।
मोहि मोहि मोहन-मई री मन मेरो भयो
'हरीचंद' भेद ना परत कछु जान है।
कान्ह भये प्रानमय प्रान भये कान्हमय
हिय मे न जानी परै कान्ह है कि प्रान है ॥ ३ ॥

करि कै अकेली मोहिं जात प्राननाथ अबै
कौन जानै आय कब फेर दुख हरिहौ।
औध को न काम कछू प्यारे घनश्याम बिना
आप कैं न जीहैं हम जो पै इतै धरिहौ।
'हरीचंद' साथ नाथ लेन मैं न मोहिं कहा
लाभ निज जीअ मै बताओ तो बिचरिहौ।
देह संग लेते तो टहलहू करत जातो
एहो प्रान-प्यारे प्रान लाइ कहा करिहौ ॥ ४ ॥

गुरु-जन बरजि रहे री बहु भाँति मोहिं
संक तिनहूँ की छाँड़ि प्रेम-रंग राँची मै।
त्योही बदनामी लई कुलटा कहाई हौ
कलंकिनिहु बनी ऐसी प्रेम-लीक खाँची मैं।

कहै 'हरिचंद' सबै छोड़्यो प्रान-प्यारे काज
यातैं जग झूठ्यो रह्यो एक भई साँची मैं ।
नेह के बजाय बाज छोड़ि सब लाज आज
घूँघट उघारि ब्रजराज-हेतु नाची मैं ॥ ५ ॥

बाढ़्यौ करै दिन ही छिन ही छिन कोटि उपाय करौ न बुझाई ।
दाहत लाज समाज सुखै गुरु की भय नींद सबै सँग लाई ।
छीजत देह के साथ मे प्रानहु हा 'हरिचंद' करौ का उपाई ।
क्योहू बुझे नहि आँसू के नीरन लालन कैसी दवारि लगाई ॥६॥

छाँड़ि कै मोहि गए मथुरा कुबरी तहँ जाय भई पटरानी ।
जो सुधि लीनी तो जोग सिखायो भए 'हरिचंद' अनूपम ज्ञानी ॥
गोप सो जो पै भए रजपूत लड़ौ किन जोड़ को आपुने जानी ।
मारत हौ अबलागन को तुम याही मैं बीरता आय खुटानी ॥७॥

बाजी करै बंसी धुनि बाजि बाजि श्रवनन,
जोरा-जोरी मुख-छबि चितहि चुराए लेत ।
हँसनि हँसावति जगत सो तिहारी मुरि,
मुरनि पियारी मन सब सो मुराए लेत ।
'हरिचंद' बोलनि चलनि बतरानि पीत- ,
पट फहरानि मिलि धीरज मिटाए लेत ।
जुलफै तिहारी लाज-कुलफन तोरैं प्रान,
प्यारे नैन-सैन प्रान संग ही लगाए लेत ॥ ८ ॥

हौ तो तिहारे दिखाइबे के हित जागत ही रही नैन उजार सी ।
आए न राति पिया 'हरिचंद' लिए कर भोर लौ हो रही भार सो ।
है यह हीरन सो जड़ी रंगन तापै करी कछु चित्र चितार सी ।
देखो जू लालन कैसी बनी है नई यह सुन्दर.कंचन-आरसी ॥९॥

सोई तिया अरसाय कै सेज पै सो छबि लाल विचारत ही रहे।
पोंछि रुमालन सों श्रम-सीकर भौरन कौ निरुवारत ही रहे।
त्यौं छबि देखिबे कौं मुख तैं अलकैं 'हरिचंद जू' टारत ही रहे।
द्वैक घरी लौं जके से खरे वृषभानु-कुमार निहारत ही रहे ॥१०॥

बोल्यौ करै नूपुर श्रवन के निकट सदा,
पद-तल लाल मन मेरे बिहर्‌यो करै।
बाजी करै बंसी धुनि पूरि रोम-रोम मुख,
मन मुसुकानि मंद मनहि हँस्यो करै।
'हरिचंद' चलनि मुरनि बतरानि चित,
छाई रहै छबि जुग दृगन भर्‌यो करै।
प्रानहू ते प्यारौ रहै प्यारो तू सदाई तेरो,
पीरो पट सदा जिय बीच फहर्‌यो करै ॥ ११ ॥

बृजवासी बियोगिन के घर मैं जग छाँड़ि कै क्यौ जनमाई हमैं।
मिलिबो बड़ी दूर रह्यो 'हरिचंद' दई इक नाम-धराई हमैं।
जग के सगरे सुख सों ठगि कै सहिबे को यही है जिवाई हमै।
केहि बैर सो हाय दई बिधिना दुख देखिबेही को बनाई हमैं ॥१२॥

कहा कहौ प्यारे जू वियोग मै तिहारे चित,
बिरह-अनल लूक भरकि भरकि उठै।
कैसे कै बिताऊँ दिन जोवन के हा-हा काम,
कर लै कमान मोपै तरकि तरकि उठै।
भूलै नाहि हँसनि तिहारी 'हरिचंद' तैसी,
बाँकी चितवनि हिय फरकि फरकि उठै।
बेधि बेधि उठत बिसीले नैन-बान मेरे,
हिय मै कँटीली भौह करकि करकि उठै ॥१३॥

कुबजा जग के कहा बाहर है नँदलाल ने जा उर हाथ धस्यौ ।
मथुरा कहा भूमि की भूमि नहीं जहँ जाय कै प्यारे निवास कस्यौ ।
'हरिचंद' न काहू को दोष कछू मिलिहै सोइ भाग मै जो उतस्यौ ।
सबको जहाँ भोग मिल्यौ वहाँ हाय वियोग हमारे ही बाँटे पस्यौ ।।१४।।

रोकहि जो तो अमंगल होय औ प्रेम नसै जो कहै पिय जाइए ।
जौ कहै जाहु न तौ प्रभुता जौ कछू न कहै तो सनेह नसाइए ।
जौ 'हरिचंद' कहैं तुमरे बिन जीहैं न तो यह क्यौ पतिआइए ।
तासौ पयान समै तुमरे हम का कहै आपै हमै समझाइए ।।१५।।

आजु सिंगार कै केलि के मंदिर बैठी न साथ मैं कोऊ सहेली ।
धाय कै चूमै कबौ प्रतिबिंब कबौ कहै आपुहि प्रेम-पहेली ।
अंक मे आपुने आपै लगै 'हरिचंद जू' सी करै आपु नवेली ।
प्रीतम के सुख मै पिय-मैभई आए तें लाज कै जान्यौ अकेली ।।१६।।

सोई बने सब मंजुल कुंज अलीन की भीर जहाँ अति हेली ।
साज अनेक सजे सुख के 'हरिचंद जू' त्यों ही खरी हैं सहेली ।
सोई नई रतियाँ रति की पिय सोई कहै ढिग प्रेम-पहेली ।
सोचत सो सुख सोई भई तिय आए तें लाल के जान्यौ अकेली ।।१७।।

तब तौ बखानी निज बीरता प्रमानी कै कै
प्रेम के निबाह भारे गरब गरूरे हौ ।
जान सों पिया कै कह्यो प्रथम पयान 'हरि-
चंद' अब बैठे कित दुरि दुरि दूरे हौ ।
हाय प्राननाथ-बिनु भोगत अनेक बिथा
खोइ सुख आसा लागि अब लौं मजूरे हौ ।
अजौं तन तजिकै न जाओ लजवाओ मोहि
हा हा मेरे प्रान निरलज्ज तुम पूरे हौ ।।१८।।

जा दिन लाल बजावत बेनु अचानक आय कढ़े मम द्वारे।
हौं रही ठाढ़ी अटा अपने लखि कै हँसे मो तन नंद-दुलारे।
लाजि कै भाजि गई 'हरिचंद' हौं भौन के भीतर भीति के मारे।
ताही दिना तें चवाइनहूँ मिलि हाय चवाय कै चौचँद पारे ॥१९॥

बृज में अब कौन कला बसिये बिनु बात ही चौगुनो चाव करै।
अपराध बिना 'हरिचंद जू' हाय चवाइनैं घात कुदाव करै।
पौन मों गौन करे ही लरी परैं हाय बड़ोई हियाव करै।
जौ सपनेहूँ मिलै नँदलाल तौ सौतुख मै ये चवाव करै ॥२०॥

आजु कुंज मंदिर मैं छके रंग दोऊ बैठे,
केलि करै लाज छोड़ि रंग सो जहकि जहकि।
सखीजन कहत कहानी 'हरिचंद' तहाँ,
नेह भरी केकी कीर पिक सी चहकि चहकि।
एक टक बदन निहारे बलिहार लै लै,
गाढ़े भुज भरि लेत नेह सो लहकि लहकि।
गरे लपटाय प्यारी बार बार चूमि मुख,
प्रेम भरी बातैं करैं मद सो बहकि बहकि ॥२१॥

आजु कुंज-मंदिर अनंद भरि बैठे श्याम,
श्यामा-संग रंगन उमंग अनुरागे है।
घन घहरात बरसात होत जात ज्यौं ज्यौं,
त्यौंही त्यौं अधिक दोऊ प्रेम-पुंज पागे है।
'हरीचंद' अलकै कपोल पैं सिमिटि रही,
बारि'बुंद चूअत अतिहि नीके लागे है।
भींजि भींजि लपटि लपटि सतराइ दोऊ,
नील पीत मिलि भए एकै रंग बागे है ॥२२॥

बृज के सब नॉव धरैं मिलि ज्यौं ज्यौं वढ़ाइकै त्यौं दोऊ चाव करैं ।
'हरिचंद' हँसैं जितनो सबही तितनो दृढ़ दोऊ निभाव करैं ।
सुनि कै चहुँधा चरचा रिसि सों परतच्छ ये प्रेम-प्रभाव करैं ।
इत दोऊ निसंक मिलैं बिहरैं उत चौगुनो लोग चवाव करैं ॥२३॥

मिलि गाँव के नाँव धरौ सबही चहुँधा लखि चौगुनौ चाव करौ ।
सव भाँति हमै बदनाम करौ कढ़ि कोटिन कोटि कुदावँ करौ ।
'हरिचंद' जू जीवन को फल पाय चुकी अब लाख उपाव करौ ।
हम सोवत हैं पिय-अंक निसंक चवाइनै आओ चवाव करौ ॥२४॥

व्याकुल हौ तड़पौ विनु पीतम कोऊ तौ नेकु दया उर लाओ ।
प्यासी तजौ तन रूप-सुधा बिनु पानिप पी को पपीहै पिआओ ।
जीअ मै हौस कहूँ रहि जाय न हा 'हरिचंद' कोऊ उठि धाओ ।
आवै न आवै पियारो अरे कोऊ हाल तौ जाइ के मेरी सुनाओ ॥२५॥

जानत हौ नही ऐसी सखी इन मोहन जैसी करी हम सों दई ।
होत न आपुने पीअ पराए कबौ यह बोलनि साँची अरी भई ।
हा हा कहा 'हरिचंद' करौ बिपरीत सबै विधि नै हम सो ठई ।
मोहन ह्वै निरमोही महा भए नेह बढ़ाय कै हाय दगा दई ॥२६॥

जानि कै मोहन के निरमोहहि नाहक बैर बिसाहि बरे परी ।
त्यौ 'हरिचंद' बिगारि कै लोक सो बेद की लीक भलै निदरे परी ।
आपुनि ही करनी को मिल्यो फल तासो सबै सहते ही सरे परी ।
यामै न और को दोप कछू सखि चूक हमारी हमारे गरें परी ॥२७॥

नेह लगाय लुभाय लई पहिले बृज की सब ही सुकुमारियाँ ।
वेनु वजाय बुलाय रमाय हँसाय खिलाय करी मनुहारियाँ ।
सो 'हरिचंद' जुदा ह्वै बसे बधि कै छलसो ब्रज-बाल विचारियाँ ।
वाह जू प्रेम निवाह्यो भले बलिहारियाँ लालन वे बलिहारियाँ ॥२८॥

मेरी गलीन न आइए लालन यासों सबै तुमहीं लखि जाइहै ।
प्रेम तो सोई छिप्यौ जो रहै प्रगटै रसहू सब भाँति नसाइहै ।
आइहौं हौंही उतै 'हरिचंद' मनोरथ आपको कुंज पुराइहै ।
अंक न बाट में लाइए जू कोउ देखि जौ लैहै कलंक लगाइहै ।।२९।।

मारग प्रेम को को समुझै 'हरिचंद' यथारथ होत यथा है ।
लाभ कछू न पुकारन में बदनाम ही होन की सारी कथा है ।
जानत है जिय मेरो भली विधि और उपाय सबै बिरथा है ।
बावरे हैं बृज के सगरे मोहि नाहक पूछत कौन बिथा है ।।३०।।

जिय पै जु होइ अधिकार तो बिचार कीजै
लोक-लाज भलो बुरो भलें निरधारिए ।
नैन श्रौन कर पग सबै पर-बस भए
उतै चलि जात इन्है कैसे कै सम्हारिये ।
'हरीचंद' भई सब भाँति सो पराई हम
इन्हैं ज्ञान कहि कहो कैसे कै निबारिए ।
मन मैं रहै जो ताहि दीजिये बिसारि मन
आपै बसै जामैं ताहि कैसे कै बिसारिए ।।३१।।

होते न लाल कठोर इते जु पै होते कहूँ तुमहूँ बरसानियाँ ।
गोकुल गाँव के लोग कठोर करैं छत हीय मैं मारि निसानियाँ ।
यौं तरसावत हौ अबलागन को मुख देखिबे को दधि-दानियाँ ।
दीनता की हमरे तुमरे निरदैपनहू की चलैंगी कहानियाँ ।।३२।।

बेनी सी बखानै कबि ब्याली काली काली आली
तिन सबहू कों प्रतिपाली अहो काली है ।
ताही सों उताल नँदलाल बाल कूदि जल
नाथ्यौ जाय ताहि चाहि उपमा न चाली है ।

तहाँ 'हरिचंद' सबै गाँव के तमासे लगे
तिन के अछत तुहू कीनी खूब ख्याली है।
ज्योंही ज्यों नचत प्यारी राधे तेरे दृग दोय
त्यौं ही त्यौं नचत फन पर बनमाली है ॥३३॥

नैन लाल कुसुम पलास से रहे है फूलि
फूल-माल गरे बन झालरि सी लाई है।
भँवर गुँजार हरि-नाम को उचार तिमि
कोकिला सो कुहुकि वियोग राग गाई है।
'हरीचंद' तजि पतझार घर-बार सबै
बौरी बनि दौरि चारु पौन ऐसी धाई है।
तेरे बिछुरे ते प्रान कंत कै हिमंत अंत
तेरी प्रेम-जोगिनी बसंत बनि आई है ॥३४॥

पीरो तन पखो फूली सरसों सरस सोई
मन मुरझानो पतझार मनौ लाई है।
सीरी स्वाँस त्रिविध समीर सी बहति सदा
अँखियाँ बरसि मधु झरि सी लगाई है।
'हरीचंद' फूले मन मैन के मसूसन सो
ताही सो रसाल बाल बदि कै बौराई है।
तेरे बिछुरे ते प्रान कंत के हिमंत अंत
तेरी प्रेम-जोगिनी बसंत बनि आई है ॥३५॥

एरी प्रानप्यारी बिन देखे मुख तेरो मेरे
जिय मै बिरह-घटा घहरि घहरि उठै।
त्योही 'हरिचंद' सुधि भूलत न क्योहू तेरो
लाँबो केस रैन दिन छहरि छहरि उठै ॥

गड़ि गड़ि उठत कँटीले कुच कोर तेरी
सारी सों लहरदार लहरि लहरि उठै ।
सालि सालि जात आधे आधे नैन-बान तेरे
घूँघट की फहरानि फहरि फहरि उठै ॥३६॥

बैठे सबै गुरु लोग जहाँ तहाँ आई बधू लखि सास भई खरी ।
देन उराहनो लागी तबै निसि को अति भोरी न जानत रीत री ।
ढीठ तिहारो बड़ो 'हरिचंद' न देखत मेरी सु ऐसी दसा करी ।
आँचर दीनो सखी मुख मै कहि सारी फटी तो बनाइहै दूसरी ॥३७॥

प्रानपियारे तिहारे लिये सखि बैठे है देर सो मालती के तर ।
तू रही बातैं बनाय बनाय मिलै न बृथा गहिकै कर सों कर ।
तोहि घरी छिन बीतत है 'हरिचंद' उतै जुग सो पलहू भर ।
तेरी तो हाँसी उतै नहिं धीरज नौ घरी भद्रा घरी में जरै घर ॥३८॥

दीनदयाल कहाइ कै धाइ कै दीनन सो क्यो सनेह बढ़ायो ।
त्यौ 'हरिचंद' जू बेदन मै करुनानिधि नाम कहो क्यौ गनायो ।
एती रुखाई न चाहिये तापैं कृपा करिकै जेहि को अपनायो ।
ऐसो ही जो पै सुभाव रह्यौ तो गरीब-नेवाज क्यौ नाम धरायो ॥३९॥

क्यों इन कोमल गोल कपोलन देखि गुलाब को फूल लजायो ।
त्यौ 'हरिचंद' जू पंकज के दल सो सुकुमार सबै अंग भायो ।
अमृत से जुग ओंठ लसे नव पल्लव सो कर क्यो है सुहायो ।
पाहन सो मन होते सबै अँग कोमल क्यौ करतार बनायो ॥४०॥

आओ सबै जुरि कै बृज गाँव के देखन को जे रहे अकुलात है ।
चार चवाइनै लै दुरबीनन धाओ न आज तमासे लखात है ।
सास-जेठानी-सखी संग की 'हरिचंद' करौ मिलि भेद की बात हैं ।
घूँघट टारि निवारि भयै पिय कौ हम आजु निहारन जात हैं ॥४१॥

एक ही गाँव में बास सदा घर पास इहौ नहि जानती है।
पुनि पाँचएँ सातएँ आवत जात की आस न चित्त में आनती है।
हम कौन उपाय करै इनको 'हरिचंद' महा हठ ठानती है।
पिय प्यारे तिहारे निहारे बिना अँखियाँ दुखियाँ नहिं मानती है ॥४२॥

यह संग मै लागियै डोलै सदा बिन देखे न धीरज आनती है।
छिनहू जो बियोग परै 'हरिचंद' तौ चाल प्रलै की सु ठानती है।
बरुनी मे थिरैं न झपैं उझपैं पल मै न समाइबो जानती है।
पिय प्यारे तिहारे निहारे बिना अँखियाँ दुखियाँ नही मानती है ॥४३॥

व्यापक ब्रह्म सबै थल पूरन है हमहूँ पहिचानती है।
पै बिना नँदलाल बिहाल सदा 'हरिचंद' न ज्ञानहि ठानती है।
तुम ऊधौ यहै कहियो उन सों हम और कछू नहि जानती है।
पिय प्यारे तिहारे निहारे बिना अँखियाँ दुखियाँ नही मानती है ॥४४॥

जिनको लरकाई सों संग कियो अब सोऊ न साथहि साजती है।
'हरिचंद' जू जानि हमैं बदनाम चबाव घने उपराजती है।
हम हाय कलंकिनि ऐसी भई सखियाँ लखि कै मोहि भाजती है।
निसि-बासर संग मै जे रहती मुख बोलिबे सो अब लाजती है ॥४५॥

पहिले बहु भाँति भरोसो दियो अब ही हम लाइ मिलावती है।
'हरिचंद' भरोसे रही उनके सखियाँ जे हमारी कहावती है।
अब वेई जुदा ह्वै रहीं हम सो उलटो मिलि कै समुझावती है।
पहिले तो लगाइ कै आग अरी जल को अब आपुहि धावती है ॥४६॥

सब आस तौ छूटी पिया मिलबे की न जानैं मनोरथ कौन सजै।
'हरिचंद' जू दुःख अनेक सहैं पै अड़े है टरै न कहूँ को भजैं।
सब सो निरसंक ह्वै बैठि रहै सो निरादर हू सो कछू न लजैं।
नहि जान परै कछु या तन को केहि मोह ते पापी न प्रान तजै ॥४७॥

मोहन सों जबै नैन लगे तब तो मिलिकै समुझावन धाईं।
प्रीति की रीति औ नीति कही मिलिबे की अनेकन बात सुनाईं।
वेऊ दगा दै जुदा ह्वै गईं 'हरिचंद' जू एकहू काम न आईं।
हाय मैं कौन उपाय करौं सखियाँ अपुनी ह्वै गईं जु पराईं ॥४८॥

हाय दशा यह कासो कहौं कोउ नाहिं सुनै जौ करेहूँ निहोरन।
कोऊ बचावनहारो नही 'हरिचंद' जू यों तो हितू हैं करोरन।
सो सुधि कै गिरिधारन की अब धाइ कै दूर करौ इन चोरन।
प्यारे तिहारे निवास की ठौर को बोरत हैं अँसुआ बरजोरन ॥४९॥

हित की हम सों सब बात कहौ सुख-मूल सबै बतरावती हौ।
पै पिया 'हरिचंद' सों नैन लगे केहि हेत ये बातैं बनावती हौ।
यहाँ कौन जो मानै तिहारो कह्यो हमे बातन क्यौं बहरावती हौ।
सजनी मन पास नहीं हमरे तुम कौन को का समुझावती हौ ॥५०॥

जब सों हम नेह कियो उन सों तब सों तुम बातैं सुनावती हौ।
हम औरन के बस मे हैं परी 'हरिचंद' कहा समुझावती हौ।
कोउ आपुन भूलिहै बूझहु तौ तुम क्यों इतनी बतरावती हौ।
इन नैनन को सखी दोष सबै हमैं झूठहिं दोष लगावती हौ ॥५१॥

जिनके हित त्यागिकै लोक की लाज को संगही संग में फेरो कियो।
'हरिचंद' जू त्यौं मग आवत जात मे साथ घरी घरी घेरो कियो।
जिनके हित मैं बदनाम भई तिन नेकु कह्यौ नहि मेरो कियो।
हमे ब्याकुल छोड़िकै हाय सखी कोउ और के जाइ बसेरो कियो ॥५२॥

पिय रूसिबे लायक होय जो रूसनो वाही सों चाहिए मान किये।
'हरिचंद' तौ दास सदा बिन मोल को बोलै सदा रुख तेरो लिये।
रहै तेरे सुखै सो सुखी नित ही मुख तेरो ही प्यारी बिलोकि जिये।
इतने हू पै जानै न क्यो तू रहै सदा पीय सों भौह तनेनी किये ॥५३॥

पहिले बिनु जाने पिछाने बिना मिली धाइ कै आगे बिचारे बिना।
अपुने सो जुदा ह्वै गईं तुरतै निज लाभ औ हानि सम्हारे बिना।
'हरिचंद' जू दोष सबै इनको जो कियो सब पूछे हमारे बिना।
बरिआई लखो इनकी उलटी अब रोवहि आपु निहारे बिना ॥५४॥

आय कै जगत बीच काहू सो न करै बैर
कोऊ कछू काम करै इच्छा जौ न जोई की।
ब्राह्मण की छत्रिन की बैसनि की सूद्रन की
अन्त्यज मलेछ की न ग्वाल की न भोई की।
भले की बुरे की 'हरिचंद' से पतितहू की
थोरे की बहुत की न एक की न दोई की।
चाहे जो चुनिन्दा भयो जग बीच मेरे मन
तौ न तू कबहुँ कहूँ निंदा करु कोई की ॥५५॥

मै बृषभानुपुरा की निवासिनि मेरी रहै बृज-बीथिन भाँवरी।
एक सँदेसो कहौ तुम सों पै सुनो जौ करो कछू ताको उपावरी।
जो 'हरिचंद' जू कुंजन मै मिलि जाहि करी लखि कै तुम बावरी।
बूझी है वाने दया करिकै कहिये परसों कब होयगी रावरी ॥५६॥

केहि पाप सों पापी न प्रान चलैं अटके कित कौन बिचार लयो।
नहि जानि परै 'हरिचंद' कछू बिधि ने हमसो हठ कौन ठयो।
निसि आजहू की गई हाय बिहाय बिना पिय कैसे न जीव गयो।
हत-भागिनी आँखिन को नित के दुख देखिबे को फिर भोर भयो ॥५७॥

हम तो सब भाँति तिहारी भई तुम्हैं छाँड़ि न और सो नेह करौ।
'हरिचंद' जू छाँड़यौ सबै कछु एक तिहारोई ध्यान सदा ही धरौ।
अपने को परायो बनाइ कै लाजहू छाँड़ि खरी बिरहागि जरौ।
सब ही सहौ नाहि कहौ कछु पै तुव लेखे नही या परेखे मरौ ॥५८॥

आजु लौं जौ न मिले तो कहा हम तो तुमरे सब भाँति कहावैं ।
मेरो उराहनो है कछु 'नाहि सबै फल आपुने भाग को पावैं ।
जा 'हरिचंद' भई सो भई अब प्रान चले चहैं तासो सुनावैं ।
प्यारे जू है जग की यह रीति बिदा की समै सब कंठ लगावैं ।।५९।।

जान दे री जान दे बिचार कुल-कानहू को
गावन दे मेरे कुलटापन के गाथ को ।
मै तो रही भूलि बिन बात को बिचारे जौन
प्रेम को बिगारै छाँडु ऐसे सब साथ को ।
देखो 'हरिचंद' कौन लाभ पायो जामैं पछि-
ताय रहि गई धन पाय खोयो हाथ को ।
जरौ ऐसी लाज आवै कौन काज जानै आज
लखन न दीनों भरि नैन प्राननाथ को ।।६०।।

सदा व्याकुल ही रहै आपु बिना इनको हू कछू कहि जाइये तो ।
इक बारहू तोहि न देख्यौ कभू तिनको मुखचंद दिखाइये तो ।
'हरिचंद'जू ये अँखियाँ नित की हैं बियोगी इन्हे समुझाइये तो ।
दुखियान को प्रीतम प्यारे कबौ बहराइ कै धीर धराइये तो ।।६१।।

रोवैं सदा नित की दुखिया बनि ये अँखियाँ जिहि द्यौस सों लागी ।
रूप दिखाओ इन्है कबहूँ 'हरिचंद'जू जानि महा अनुरागी ।
मानिहै औरन सों नहि ये तुव रंग रँगी कुल लाजहि त्यागी ।
आँसुन को अपने अँचरान सों लालन पोछि करौ बड़-भागी ।।६२।।

घर-बाहर-केन को काम कछू नहिं को यह रार निवारि सकै ।
'हरिचंद जू' जो बिगरी बदिकै तिन्है कौन है जौन सँवारि सकै ।
समुझाइ प्रबोधि कै नीति-कथा इन्है धीरज कोऊ न पारि सकै ।
तुम्हरे बिनु लालन कौन है जो यह प्रेम के आँसू निवारि सकै ।।६३।।

सँग मे निसि-बासर ही रहते जिनते कछु बातैं न मैंने छिपाई ।
जे हितकारिनी मेरी हुती 'हरिचंद जू' होय गईं सो पराई ।
सो सब नेह गयो कित को मिलिबे की न एकहू बात बताई ।
और चवाव करैं उलटो हरि हाय ये एकहू काम न आई ॥६४॥

हौ कुलटा हौं कलंकिनी हौ हमने सब छाँड़ि दयो कहा खोलौ ।
आछी रहौ अपने घर मे तुम क्यों यहाँ आइ करेजहि छोलौ ।
लागि न जाय कलंक तुम्है कहूँ दूर रहौ सँग लागि न डोलौ ।
बावरी हौ जो भई सजनी तो हटो हम सों मति आइ कै बोलौ ॥६५॥

आयो सखी सावन बिदेश मन-भावन जू
कैसे करि मेरो चित हाय धीर धारिहै ।
ऐहै कौन झूलन हिंडोरे बैठि संग मेरे
कौन मनुहारि करि भुजा कंठ पारिहै ।
'हरीचंद' भीजत बचैहै कौन भीजि आप
कौन उर लाइ काम-ताप निरवारिहै ।
मान समै पग परि कौन समुझैहै हाय
कौन मेरी प्रानप्यारी कहि कै पुकारिहै ॥६६॥

घेरि घेरि घन आए छाय रहे चहुँ ओर
कौन हेत प्राननाथ सुरति बिसारी है ।
दामिनी दमक जैसी जुगनूँ चमक तैसी
नभ मै बिशाल बग-पंगति सँवारी है ।
ऐसी समै 'हरिचंद' धीर न धरत नेकु
बिरह-बिथा ते होत व्याकुल पियारी है ।
प्रीतम पियारे नंदलाल बिनु हाय यह
सावन की रात किधौं द्रौपदी की सारी है ॥६७॥

लै मन फेरिबो जानौ नहीं बलि नेह निबाह कियो नहि आवत।
हेरि कै फेरि मुखै 'हरिचंद जू' देखनहू को हमैं तरसावत।
प्रीत-पपीहन कों घन-साँवरे पानिप-रूप कबौं न पिआवत।
जानौ न नेक बिथा पर की बलिहारी तऊ हौ सुजान कहावत ॥६८॥

आई गुरु लोग संग न्यौते ब्रज गाँव नई
दुलही सुहाई शोभा अंगन सनी रही।
पूछे मन-मोहन बतायो सखियन यह
सोई राधा प्यारी बृषभानु की जनी रही।
'हरीचंद' पास जाय प्यारो ललचायो दीठ
लाज की धँसी सो मानो हीर की अनी रही।
देखो अन-देखो देख्यो आधो मुख हाय तऊ
आधो मुख देखिबे की हौस ही बनी रही ॥६९॥

भूली सी भ्रमी सी चौकी जकी सी थकी सी गोपी
दुखी सी रहत कछू नाहीं सुधि देह की।
मोही सी लुभाई कछु मोदक सो खाए सदा
बिसरी सी रहै नेक खबर न गेह की।
रिस भरी रहे कबौ फूलि न समाति अंग
हँसि हँसि कहै बात अधिक उमेह की।
पूछे ते खिसानी होय उतर न आवै ताहि
जानी हम जानी है निसानी या सनेह की ॥७०॥

आई प्रात सोवत जगाई मै सखीन साथ
ननद बिलोकिवे को करै अभिलाख है।
'हरीचंद' हँसि हँसि पोछै मुख अंचल सों
आरसी लै दूजी ठाढ़ी कहै कछू माख है।

एक मोती बीनै एक गूथै वेनी एक हँसे
सॉसत हमारी एक करै मिल लाख है।
बसन के दाग धोवै नख-छत एक टोवै
चूर लै चुरी को खेलै एक जूस-ताख है ॥७१॥

आई आज कित अकुलाई अलसाई प्रात
रीसै मति पूछे बात रंग कित ढरिगो।
सोने से या गात छ्वै सोनो भयो आप कै वा
आतप प्रभात ही को प्रगट पसरिगो।
'हरीचंद' सौतिन की मुख-दुति छीनी कै वा
आपनो बरन कहुँ पाय धाय ररिगो।
नील पट तेरो आज औरै रंग भयो काहे
मेरे जान बिछुरि पिया तें पीरो परिगो ॥७२॥

कैसे सखी बसिए ससुरारि मै लाज को लेइबो क्यो सहि जावै।
ऐसी सहेलिनै ऊधमी है नख-दंत के दाग लै कोऊ गनावै।
त्यो 'हरिचंद' खरी ढिग सास के ढीठ जिठानी पिया को हँसावै।
ओढ़ि कै चादर रात के सेज की सामने ही ननदी चलि आवै ॥७३॥

हम तो तिहारे सब भॉति सो कहावैं सदा
हम सो दुराव कौन सो है सो सुनाइ दै।
द्वार पै खड़े है बड़ी देर सो अड़े है यह
आशा है हमारी ताहि नेक तो पुराइ दै।
'हरीचंद' जोरि कर बिनती बखानै यही
देखि मेरी ओर नेक मंद मुसुकाइ दै।
एरी प्रान-प्यारी बार बार बलिहारी नेक
घूँघट उघारि मोहि बदन दिखाइ दै ॥७४॥

सास जेठानिन सो दबती रहै लीने रहै रुख त्यो ननदी को ।
दासिन सों सतरात नही 'हरिचंद' करै सनमान सखो को ।
पीय कों दच्छिन जानि न दूसत चौगुनो चाउ बढ़ै या लली को ।
सौतिनहू को असीसै सुहाग करै कर आपने सेंदुर टीको ॥७५॥

कहो कौन मिलाप की बातैं कहै कही औरन की तो कछू न पतीजिये ।
चित चाहै जहाँ बसिए मिलिए न कभू जिय आवै सोई सोई कीजिये ।
अब प्रान चले चहै तासों कहैं 'हरिचंद' की सो विनती सुनि लीजिये ।
भरि नैन हमैं इक बेरहू तो अपुनो मुख मोहन जोहन दीजिये ॥७६॥

लाई केलि-मंदिर तमासा को बताइ छल
बाला ससि सूर के कला पै किये दावा सी ।
धाइ ताहि गहन चहत 'हरिचंद जू' के
घूमि रही घर मे चहूँघा करि कावा सी ।'
धोखा दै कै अंकम भरत अकुलानी अति
चंचल चखन सो लखानी मृग छावा सी ।
आहि करि सिसकि सकोरि तन मोहि पियै
कर ते छटकि छूटी छलकि छलावा सी ॥७७॥

तू रँगी रंग पिया के सखी कछू बात न तेरी लखाइ परी है ।
जद्यपि हौ नित पास रहौ तऊ मेरी यहै मति सोच भरी है ।
जानी अहो 'हरिचंद' अबै यह प्रीत प्रतीत तिहारी खरी है ।
श्याम बसै उर मै नित ताही सो पीतहू कंचुकी होत हरी है ॥७८॥

जाहु जू जाहु जू दूर हटो सो बकै बिन बात ही को अब यासो ।
वा छलिया नै बनाय कै खासो पठायो है याहि न जानै कहा सो ।
काहि करै उपदेस खरो 'हरिचंद' कहै किन जाइ कै तासो ।
सो बनि पंडित ज्ञान सिखावत कूबरीहू नहिं ऊबरी जासों ॥७९॥

सिसुताई अजौं न गई तन ते तऊ जोवन-जोति बटोरै लगी ।
सुनि कै चरचा 'हरिचंद' की कान कछूक दै भौंह मरोरै लगी ।
बचि सासु जेठानिन सो पिय तें दुरि घूँघट में दृग जोरै लगी ।
दुलही उलही सब अंगन तें दिन द्वै ते पियूष निचोरै लगी ॥८०॥

इत उत जग मे दिवानी सी फिरत रही
कौन वदनामी जौन सिर पै लई नहीं ।
त्रास गुरु लोगन की श्रास कै अनेक सही
कब बहु भाँतिन के ताप सो तई नही ।
'हरिचंद' गिरि वन कुंज जहाँ जहाँ सुन्यौ
तहाँ तहाँ कब उठि धाइ कै गई नही ।
होनी अनहोनी कीनी सब ही तिहारे हेतु
तऊ प्रान-प्यारे भेट तुम सो भई नहीं ॥८१॥

एक बेर नैन भरि देखैं जाहि मोहै तौन
माच्यौ ब्रज गाँव ठाँव ठाँव मै कहर है ।
संग लगी डोलै कोऊ घर ही कराहै परी
छूट्यो खान-पान रैन चैन बन घर है ।
'हरिचंद' जहाँ सुनो तहाँ चर्चा है यही
इक प्रेम-डोर नाथ्यो सगरो शहर है ।
यामैं न सँदेह कछू दैया हौ पुकारे कहौ
भैया की सौ मैया री कन्हैया जादूगर है ॥८२॥

जौन गली कढ़े तहाँ मोहे नर-नारी सब
भीरन के मारे बंद होइ जात राह है ।
जकी सी थकी सी सबै इत उत ठाढ़ी रहै
घायल सी घूमै केती किए हिए चाह हैं ।

'हरीचंद' जासों जोई कहै तौन सोई करै
बरबस तजै सब पतिव्रत राह है।
यामैं न सँदेह कछू सहजहि मोहै मन
साँवरो सलोना जानै टोना खामखाह है ॥८३॥

सुखद समीर रूखी ह्वै कै चलन लागी
घटि चली रैन कछु सिसिर हिमंत की।
फूलै लागे फूल फेरि बौर बन आम लागे
कोकिलै कुहूकै लागीं माती मदमंत की।
'हरीचंद' काम की दुहाई सौ फिरन लागी
आवै लागी छन छन सुधि प्यारे कंत की।
जानी परै आयु बिरहीन की सिरानी अब
आयो चहै रातै फेर दुखद बसंत की ॥८४॥

बन बन आग सी लगाइ कै पलास फूले
सरसों गुलाब गुललाला कचनारो हाय।
आइ गयो सिर पै चढ़ाय मैन बान निज
बिरहिन दौरि दौरि प्रानन सम्हारो हाय।
'हरीचंद' कोइलैं कुहूकि फिरैं बन बन
बाजै लाग्यौ जग फेरि काम को नगारो हाय।
दूर प्रान-प्यारो काको लीजिये सहारो अब
आयो फेरि सिर पै बसंत बजमारो हाय ॥८५॥

रूप दिखाइ कै मोल लियो मन बाल-गुड़ी बहु रंगन जोरी।
चाहत-माँझो दियो 'हरीचंद' जू लै अपने गुन की रस डोरी।
फेरि कै नैन परे तन पै बदनामी की तापे लगाइ पुँछोरी।
प्रीति की चंग उमंग चढ़ाय कै सो हरि हाय बढ़ाय कै तोरी ॥८६॥

जानत ही नहि हौं जग में किहि कों
सबरे मिलि भाखत है सुख।
चौंकत चैन को नाम सुने सपनेहू
न जानत भोगन को रुख।
ऐसन सो 'हरिचंद' जू दूर ही
बैठनो का लखनो न भलो मुख।
मो दुखिया के न पास रहौ उड़ि कै
न लगै तुमहू को कहूँ दुख॥ ८७॥

गरजे घन दौरि रहै लपटाइ
भुजा भरि कै सुख पागी रहैं।
'हरिचंद' जू भींजि रहै हिय मे
मिलि पौन चलें मद जागी रहैं।
नभ दामिनी के दमके सतराइ
छिपी पिय अंग सुहागी रहैं।
वड़-भागिनी वेई अहै बरसात मैं
जे पिय-कंठ सो लागी रहैं॥ ८८॥

ऊधो जू सूधो गहो वह मारग
ज्ञान की तेरे जहाँ गुदरी है।
कोऊ नही सिख मानिहै ह्याँ इक
श्याम की प्रीति प्रतीति खरी है।
ये बृजवाला सबै इक सी
'हरिचंद' जू मंडली ही बिगरी है।
एक जौ होय तो ज्ञान सिखाइए
कूप ही मे यहाँ भाँग परी है॥ ८९॥

महाकुंज पुंजन में मिलि कै बिहार कीने
तहाँ बाँधि आसन समाधि समुझावै जिनि।
जौन अंग लाग्यौ पिया अंगन में बार बार
तापै कूर धूर को रमाइबो बतावै जिनि।
'हरीचंद' जाही चख नित ही बिलोके श्याम
ताहि मूँद योग को अयोग ध्यान लावै जिनि।
जाही कान सुनी प्यारे हरि की मधुर बाते
हाहा ऊधो ताही कान अलख सुनावै जिनि ॥९०॥

कौन कहे इत आइए लालन
पावस मे तो दया उर लीजिए।
को हम है कहा जोर हमारो है
क्यो 'हरिचंद' बृथा हठ कीजिए।
जो जिय मैं रुचै भेंटिए ताहि
दया करि कै तेहि को सुख दीजिए।
कोरि ही कोरी भली हम है पिय
भींजिए जू उनके रस भींजिए ॥९१॥

सखि आयो बसंत रितून को कंत
चहूँ दिसि फूलि रही सरसो।
बर सीतल मंद सुगंध समीर
सतावन हार भयो गर सो।
अब सुंदर साँवरो नंदकिसोर
कहैं 'हरिचंद' गयो घर सों।
परसों को बिताय दियो बरसो
तरसो कब पाँय पिया परसों ॥ ९२ ॥

आजु केलि-मंदिर सो निकसि नवेली ठाढ़ी
भौंर चारो ओर रहे गंध लोभि वार के।
नैन अलसाने घूमैं पटहु परे हैं भू मैं
उर मे प्रगट चिन्ह पिय कंठहार के।
'हरिचंद' सखिन सो केलि की कहानी कहै
रस मे मसूसी रही आलस निवार के।
साँचे मे खरी सी परी सीसी उतरी सी खरी
बाजूबंद बाँधै बाजू पकरि किवार के ॥९३॥

साज्यौ साज गाँव मिलि तीज के हिंडोरना को
तानि कै बितान खासो फरस बिछायो री।
आवै मिलि गोपी तापै भीजि झुंड झुंड काम
छाप सी लगावैं गावै गीत मन-भायो री।
मोहि जान पाछे परी देरी तैं दया कै
'हरीचंद' अंक लैकै लाल छिपि पहुँचायो री।
जानि गई ताहू पै चवाइनै गजब देखे
पाँय बिनु पंक के कलंक मोहि लायो री ॥९४॥

खोरि साँकरी मै आजु छिपि कै बिहारी लाल
तरु पै बिराजे छल जिय अति कीनो है।
ग्वाल-बाल साथ केहू इत उत घाटिन मे
छिपे 'हरिचंद' दान हेतु चित दीनो है।
ताही समै गोपिन बिलोकि कूदि धाए सब
ऊधम मचायो दूध दधि घृत छीनो है।
दही जो गिरायो सो तो फेरहू जमाय लैहैं
मन कहाँ पैहैं दान-मिस जौन लीनो है ॥९५॥

लाज समाज निवारि सबै प्रन प्रेम को प्यारे पसारन दीजिये।
जानन दीजिये लोगन कों कुलटा कहि मोहि पुकारन दीजिये।
त्यों 'हरिचंद' सबै भय टारि कै लालन घूँघट टारन दीजिये।
छाँड़ि सकोचन चंदमुखै भरि लोचन आजु निहारन दीजिये ॥९६॥

पूरन पियूष प्रेम आसव छकी हौं रोम
रोम रस भीन्यौ सुधि भूली गेह गात की।
लोक परलोक छाँड़ि लाज सो बदन मोड़ि
उघरि नची हौं तजि संक तात मात की।
'हरीचंद' एतेहू पै दरस दिखावै क्यो न
तरसत रैन दिना प्यासे प्रान पातकी।
एरे बृजचंद तेरे मुख की चकोरी हूँ मैं
एरे घनश्याम तेरे रूप की हौं चातकी ॥९७॥

छाँड़ि कुल बेद तेरी चेरी भई चाह भरी
गुरुजन परिजन लोक-लाज नासी हौं।
चातकी तृषित तुव रूप-सुधा हेत नित
पल पल दुसह बियोग दुख गाँसी हौं।
'हरीचंद' एक ब्रत नेम प्रेम ही को लीनौ
रूप को तिहारे ब्रज-भूप हौं उपासी हौं।
ज्याय लै रे प्रानन बचाय लै लगाय कंठ
एरे नंदलाल तेरी मोल लई दासी हौं ॥९८॥

तरसत स्रौन विना सुने मीठे बैन तेरे
क्यौं न तिन माँहि सुधा-बचन सुनाइ जाय।
तेरे बिन मिले भई झाँझरि सी देह प्रान
राखि लै रे मेरो धाइ कंठ लपटाइ जाय।

'हरीचंद' बहुत भई न सहि जाय अब
हा हा निरमोही मेरे प्रानन बचाइ जाय।
प्रीति निरवाहि दया जिय मै बसाय आय
एरे निरदई नेकु दरस दिखाय जाय ॥९९॥

दौरि उठि प्यारी गर लावै गिरधारी किन
ऐसे पियहू सो किन बोलै कलबादिनी।
देखु 'हरिचंद' ठीक दुपहर तेरे हेतु
आयो चलि दूर सो पियारो री प्रमादनी।
तेरे गृह चलत न दुख सुख जान गिन्यौ
सीतल बनाउ ताहि सुरत सवादनी।
मखमल भूभल भो लूह सीरी पास
दूरी भई तेरे यह धूप भई चाँदनी ॥१००॥

हे हरि जू बिछुरे तुम्हरे नहिं धारि सकी सो कोऊ विधि धीरहि।
आखिर प्रान तजे दुख सो न सम्हारि सकी वा वियोग की पीरहि।
पै 'हरिचंद' महा कलकानि कहानी सुनाऊँ कहा बलबीरहि ॥
जानि महा गुन रूप की रासि न प्रान तज्यो चहैं वाके सरीरहि ॥१०१॥

साजि सेज रंग के महल मै उमंग भरी
पिय गर लागी काम-कसक मिटाएँ लेत।
ठानि विपरीत पूरी मैन के मसूसन सो
सुरत · समर जयपत्रहि लिखाएँ लेत।
'हरीचंद' उझकि उझकि रति गाढ़ी करि
जोम भरि पियहि झकोरन हराएँ लेत।
याद करि पी की सब निरदय घाते आजु
प्रथम समागम को बदलो चुकाएँ लेत ॥१०२॥

कबहुँक बारिन में कुंजन निवारिन में
इत उत बेलिन कों चौंकि चितवत है ।
कासन कपासन पै फिरत उदास कबौं
पल्लवन बैठि बैठि दिन रितवत है ।।
'हरीचंद' बागन कछारन पहारन मैं
जित तित पर्यो गुनि नेह हितवत है ।
सूखे सूखे फूलन पै तरुगन मूलन पै
मालती-बिरह भौंरि दिन बितवत है ।।१०३।।

काले परे कोस चलि चलि थक गये पाय
सुख के कसाले परे ताले परे नस के ।
रोय रोय नैनन में हाले परे जाले परे
मदन के पाले परे प्रान पर-बस के ।।
'हरीचंद' अंगहू हवाले परे रोगन के
सोगन के भाले परे तन बल खसके ।
पगन मे छाले परे नाँघिबे को नाले परे
तऊ लाल लाले परे रावरे दरस के ।।१०४।।

थाकी गति अंगन की मति पर गई मंद
सूख झाँझरी सी ह्वै कै देह लागी पियरान ।
बावरी सी बुद्धि भई हँसी काहू छीन लई
सुख के समाज जित तित लागे दूर जान ।।
'हरीचंद' रावरे-बिरह जग दुखमय
भयो कछू और होनहार लागे दिखरान ।
नैन कुम्हिलान लागे बैनहु अथान लागे
आओ प्राननाथ अब प्रान लागे मुरझान ।।१०५।।

लाई लिवाय तमासो बताय भुराय कै दूतिका कुंजन माँहीं ।
धाय गही 'हरिचंद' जबै न छपी वह चंदमुखी परछाँहीं ।
अंक मैं लेत छल्यो छलकै बलकै तब आप छोड़ाय कै बाँहीं ।
हाथन सो गहि नीबी कह्यो पिय नाँहीं जू नाँहीं जू नाँहीं जू नाँहीं ।।१०६।।

नव कुंजन बैठे पिया नँदलाल जू जानत है सब कोक-कला ।
दिन मैं तहाँ दूती भुराय कै लाई महा छबि-धाम नई अबला ।
जब धाय गही 'हरिचंद' पिया तब बोली अजू तुम मोही छला ।
मोहि लाज लगै बलि पाँव परौ दिन ही हहा ऐसी न कीजै लला ।। १०७।।

जानि सुजान मैं प्रीति करी सहिकै जग की बहु भाँति हँसाई ।
त्यो 'हरिचंद' जू जो जो कह्यो सो कर्यो चुप ह्वै करि कोटि उपाई ।
सोऊ नही निबही उनसो उन तोरत बार कछू न लगाई ।
साँची भई कहनावति वा अरी ऊँची दुकान की फीकी मिठाई।।१०८।।

जानति हो सब मोहन के गुन तौ पुनि प्रेम कहा लगि कीनो ।
त्यों 'हरिचंद' जू त्यागि सबै चित मोहन के रस रूप मे भीनो ।
तोरि दई उन प्रीति उतै अपवाद इतै जग को हम लीनो ।
हाय सखी इन हाथन सो अपने पग आप कुठार मैं दीनो ।।१०९।।

इन नैनन मै वह साँवरी मूरति देखति आनि अरी सो अरी ।
अब तो है निवाहिबो याको भलो 'हरिचंद' जू प्रीत करी सो करी ।
उन खंजन के मद-गंजन सो अँखियाँ ये हमारी लरी सो लरी ।
अब लोग चवाव करो तौ करो हम प्रेम के फंद परी सो परी।।११०।।

अब तौ बदनाम भई ब्रज मै घरहाई चवाव करौ तो करौ ।
अपकीरति होउ भले 'हरिचंद' जू सासु जेठानी लरौ तो लरौ ।
नित देखनो है वह रूप मनोहर लाज पै गाज परौ तो परौ ।
मोहि आपने काम सो काम अली कुल के कुल नाम धरौ तो धरौ।।१११।।

नाम धरो सिगरो बृज तो अब कौन सी बात को सोच रहा है।
त्यों 'हरिचंद' जू और हू लोगन मान्यो बुरो अरी सोऊ सहा है।
होनी हुती सु तो होय चुकी इन बातन ते अब लाभ कहा है।
लागे कलंक हू अंक लगैं नहि तौ सखि भूल हमारी महा है ॥११२॥

वह सुंदर रूप बिलोकि सखी मन हाथ ते मेरे भग्यो सो भग्यो।
चित माधुरी मूरति देखत ही 'हरिचंद' जू जाय पग्यो सो पग्यो।
मोहि औरन सो कछु काम नही अब तौ जो कलंक लग्यो सो लग्यो।
रँग दूसरो और चढ़ैगो नहीं अलि साँवरो रंग रँग्यो सो रँग्यो ॥११३॥

हमहूँ सब जानती लोक की चालहि क्यो इतनो बतरावती हौ।
हित जामै हमारो बनै सो करो सखियाँ तुम मेरी कहावती हौ।
"हरिचंद जू' यामै न लाभ कछू हमैं बातन क्यो बहरावती हौ।
सजनी मन पास नहीं हमरे तुम कौन को का समुझावती हौ॥११४॥

बिछुरे बलबीर पिया सजनी तिहि हेत सबै बिछुरावने है।
'हरिचंद' जू त्यौ सुनिकै अपवाद न औरहू सोच बढ़ावने है।
करिकै उनके गुन-गान सदा अपने दुख को बिसरावने है।
जेहि भाँति सो द्यौस ए बीतैं सखी तेहि भाँति सो बैठि बितावने हैं॥११५॥

मन-मोहन ते बिछुरी जब सो तन आँसुन सों सदा धोवती है।
"हरिचंद जू' प्रेम के फंद परी कुल की कुल लाजहि खोवती है।
दुख के दिन को कोऊ भाँति बितै बिरहागम रैन सँजोवती है।
हम हीं अपनी दसा जानैं सखी निसि सोवती हैं किधौं रोवती है॥११६॥

धिक देह औ गेह सबै सजनी जिहि के बस नेह को टूटनो है।
उन प्रान-पियारे बिना इहि जीवहि राखि कहा सुख लूटनो है।
'हरिचंद जू ' बात ठनी सो ठनी नित के कलकानि ते छूटनो है।
तजि और उपाव अनेक अरी अब तौ हमकों विष घूँटनो है ॥११७॥

सुनी है पुरानन में द्विज के मुखन बात
तोहि देखै अपजस होत ही अचूक है।
तासो 'हरिचंद' करि दरसन तेरो जिय
मेट्यौ चाहै कठिन मनोभव की हूक है।
ऐसो करि मोहि सबै प्यारे नँदनंद जू सो
मिली कहै लावैं मुख सौतिन के लूक है।
गोकुल के चंद जू सो लागै जो कलंक तौ तू
साँचो चौथ-चंद ना तो बादर को टूक है ॥११८॥

आई केलि-मंदिर मै प्रथम नवेली बाल
जोरा-जोरी पिय मन-मानिक छुड़ाएँ लेति।
सौ सौ बार पूछे एक उत्तरु मरु कै देति
घूँघट के ओट जोति मुख की दुराएँ लेति।
चूमन न देति 'हरिचंदै' भरी लाज अति
सकुचि सकुचि गोरे अंगहि चुराएँ लेति।
गहतहि हाथ नैन नीचे किए आँचर मै
छबि सो छबीली छोटी छातिन छिपाएँ लेति ॥११९॥

ह सावन सोक-नसावन है मन-भावन यामैं न लाजै भरो।
मुना पै चलो सु सबै मिलि कै अरु गाइ-बजाइ कै सोक हरो।
मि भाषत है 'हरिचंद' पिया अहो लाडिली देर न यामै करो।
लि झूलो झुलावो झुको उझको यहि पाषै पतिव्रत ताषैं धरो ॥१२०॥

उमड़ि उमड़ि दृग रोअत अबीर भए
मुख-दुति पीरी परी बिरह महा भरी।
'हरीचंद' प्रेम-माती मनहुँ गुलाबी छकी
काम झर झाँकरी सी दुति तन की करी।

प्रेम-कारीगर के अनेक रंग देखौ यह
जोगिआ सजाए बाल बिरिछ तरे खरी।
आँखिन मैं साँवरी हिए मैं बसै लाल वह
बार बार मुख ते पुकारत हरी हरी ॥१२

जिय सूधी चितौन की साधै रही सदा बातन मै अनखाय रहे।
हँसि कै 'हरिचंद' न बोले कबौ मन दूर ही सौं ललचाय रहे।
नहि नेक दया उर आवत क्यौं करिकै कहा ऐसे सुभाय रहे।
सुख कौन सो प्यारे दियो पहिले जेहि के बदले यौं सताय रहे ॥१२

जानत कौन है प्रेम-बिथा केहिसों चरचा या बियोग की कीजिर
को कही मानै कहा समुझै कोउ क्यौं बिन बात की रारहि लीजिर
कूर चवाइन मै पड़ि कै 'हरिचंद जू' क्यों इन बातन छीजिर
पूछत मौन क्यौं बैठि रही सब प्यारे कहा इन्हैं उत्तर दीजिये ॥१२:

तुमरे तुमरे सब कोऊ कहै तुम्हैं सो कहा प्यारे सुनात नहीं
बिरुदावलि आपनी राखो मिलौ मोहि सोचिबे की कछु बात नहीं
'हरिचंद जू' होनी हुती सो भई इन बातन सों कछु हात नही
अपनावते सोच बिचारि तबै जल-पान कै पूछनी जात नही ॥१२४

पिया प्यारे बिना यह माधुरी मूरति औरन को अब पेखिये का
सुख छाँड़ि कै संगम को तुमरे इन तुच्छन को अब लेखिये का
'हरिचंद जू' हीरन को बेवहार कै काँचन को लै परेखिये का
जिन आँखिन मे तुव रूप बस्यौ उन आँखिन सों अब देखिये का॥१२

कित को ढुरिगो वह प्यार सबै क्यों रुखाई नई यह साजत हौ
'हरिचंद' भये हौ कहा के कहा अनबोलिबे ते नहि छाजत हौ
नित को मिलनो तो किनारे रह्यौ मुख देखत ही दुरि भाजत हौ
पहिले अपनाय बढ़ाय कै नेह न रूसिबे मैं अब लाजत हौ ॥१२६।

पहिले मुसुकाइ लजाइ कछू क्यो चितै मुरि मो तन छाम कियो।
पुनि नैन लगाई बढ़ाइ कै प्रीति निबाहन को क्यों कलाम कियो।
'हरिचंद' कहा के कहा ह्वै गए कपटीन सो क्यो यह काम कियो।
मन मॉहि जौ छोड़न ही की हुती अपनाइ कै क्यो बदनाम कियो।।१२७।।

धाइ कै आगे मिली पहिले तुम कौन सों पूछि कै सो मोहि भाखो।
त्यों तुम ने सब लाज तजी केहि के कहे एतो कियो अभिलाखो।
काज बिगारी सबै अपुनो 'हरिचंद जू' धीरज क्यो नहि राखो।
क्यो अब रोइ कै प्रान तजौ अपुने किये को फल क्यो नहि चाखो।।१२८।।

इन दुखियान को न चैन सपनेहूँ मिल्यौ
तासो सदा व्याकुल बिकल अकुलायँगी।
प्यारे ' हरिचंद जू' की बीती जानि औध प्रान
चाहत चले पै ये तो संग ना समायँगी।
देख्यो एक बारहू न नैन भरि तोहिं यातें
जौन जौन लोक जैहै तहाँ पछतायँगी।
बिना प्रान-प्यारे भये दरस तुम्हारे हाय
मरेहू पै आँखे ये खुली ही रहि जायँगी ।।१२९।।

हौ तो तिहारे सुखी सो सुखी सुख सो जहाँ चाहिये रैन बिताइये।
पै विनती इतनी 'हरिचंद' न रूठि गरीब पै भौह चढ़ाइये।
एक मतो क्यों कियो तुम सों तिन सोउ न आवै न आप जो आइये।
रूसिबे सो पिय प्यारे तिहारे दिवाकर रूसत है क्यो बताइये।।१३०।।

धारन दीजिये धीर हिए कुल-कानि को आजु बिगारन दीजिए।
मारन दीजिए लाज सबै 'हरिचंद' कलंक पसारन दीजिए।
चार चवाइन को चहुँ ओर सो सोर मचाइ पुकारन दीजिए।
छाँड़ि सँकोचन चंदमुखै भरि लोचन आजु निहारन दीजिए ।।१३१।।

प्रेम-तरंग

भक्त-हृदय-वारिधि अगम झलकत श्यामहि रंग ।
विरह-पवन-हिल्लोर लहि उमग्यो प्रेमतरंग ॥

मल्लिकचंद्र और कंपनी
तृतीय आवृत्ति
कविवचन सुधा, ९-४-७७

प्रेम-तरंग

—❀—

खेमटा
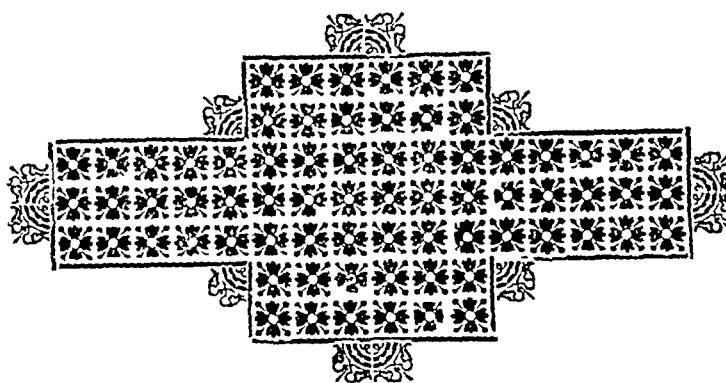
राधा जी हो बृषभानु-कुमारी ।
कोटि कोटि ससि नख पर वारौ कीरति-दृग-उँजियारी ॥
सब ब्रज की रानी सुखदानी जसुदानन्द-दुलारी ।
'हरीचन्द' के हिये विराजो मोहन-प्रान-पियारी ॥ १ ॥

बिरह की पीर सही नहि जाय ।
कहा करौं कछु बस नहि मेरो कीजे कौन उपाय ॥
'हरीचंद' मेरी बाँह पकरि कै लीजे आय उठाय ॥ २ ॥

अकेली फूल बिनन मैं आई ।
संग नहीं कोउ सखी सहेली फूल देख बिलमाई ॥
या बन के काँटन सो मेरी सारी गइ उरझाई ।
'हरीचन्द' पिया आय दया करि अपने हाथ छुड़ाई ॥ ३ ॥

खेमटा, साँझी का

श्याम सलोने गात मलिनियाँ ।
बड़े बड़े नैन भौंह दोउ बाँकी जोबन सों इठलात ।
सुनत नहीं कछु बात कोऊ की राधे के ढिग जात ।
'हरीचन्द' कछु जान परे नहिं घूँघट मैं मुसकात ॥ ४ ॥

लगत इन फुलवारिन में चोर ।
इन सों चौकत रहियो सजनी छिप रहे चारों ओर ॥
अबहि निकसि अइहैं गहबर सों लैहैं भूषन छोर ।
'हरीचन्द' इनसों बच रहिये ए ठगिया बरजोर ॥ ५ ॥

मुख पर तेरे लटूरी लट लटकी ।
काली घूँघरवाली प्यारी चुनवारी मेरे जिअ खटकी ॥
छल्लेदार छबीली लाँबी लखि नागिन सब रहि सिर पटकी ।
'हरीचंद' जंजीरन जकड़ी ये अँखियाँ अब छुटहि न अटकी॥ ६ ॥

कैसे नैया लागे मोरी पार खिवैया तोरे रूसे हो ।
औड़ी नदिया नावरि झँझरी जाय परी मँझधार ॥
देइ चुकी तन मन उतराई छोड़ि चुकी घर-बार ।
कहि 'हरिचन्द' चढ़ाइ नेवरिया करो दगा मति यार ॥ ७ ॥

सखी बंसी बजी नँद-नंदन की ।
श्री बृन्दाबन की कुंज-गलिन मे सुधि आई साँवर घन की ॥
मगन भई गोपी हरि के रस बिसरि गई सुधि तन मन की ॥८॥

काफी

कठिन भई आजु की रतियाँ ।
पिया परदेस बहुत दिन बीते नही आई पतियाँ ॥

विरह सतावत दिन दिन हमको कैसे करौं बतियाँ ।
आय मिलौ पिय 'हरीचंद' तुम लागूँ मै तोरी छतियाँ ॥ ९ ॥

बजन लागी बंसी लाल की ।
हौ बरसाने जात रही री सुधि आई बनमाल की ॥
बिसरत नाहि सखी वह चितवनि सुन्दर स्याम तमाल की ।
'हरीचंद' हँसि कंठ लगायो बिसरि गई सुधि बाल की ॥१०॥

झिझोटी

रँगीले रँग दे मेरी चुनरी ।
स्याम रंग से रँग दे चुनरिया 'हरीचन्द' उनरी ॥११॥

होली खेमटा

छबीले आ जा मोरी नगरी हो ।
साँवरे रंग मनोहर मूरति बाँधे सुरुख पगरी हो ॥
'हरीचन्द' पिय तुम बिनु कैसे रैन कटे सगरी हो ॥१२॥

चलो सोय रहो जानी, अँखियाँ खुमारी से लाल भई ।
सगरी रैन छतिया पर राखा अधरन का रस लीना ।
'हरीचन्द' तेरी याद न भूलै ना जानौ कहा कीना ॥१३॥

दादरा

सैयाँ बेदरदी दरद नहि जानै ।
प्रान दिए बदनाम भए पर नेक प्रीति नहि मानै ॥
'हरीचन्द' अलगरजी प्यारा दया नही जिय आनै ॥१४॥

सोरठ

जवनियाँ मोरी मुफुत गई बरबाद ।
सपन्यौ मै सखिया नहि जान्यौ सैयाँ–सुख सेजिया-सवाद ॥

बारी बैस सैयाँ दूर सिधारे दे गए बिरह-बिखाद ।
'हरीचन्द' जियरै मे रहि गई लाखन मोरी मुराद ॥१५॥

सखी राधा-बर कैसा सजीला ।
देखो री गोइयाँ नजर नहि लागै कैसा खुला सिर चीरा छबीला ॥
वार-फेर जल पीयो मेरी सजनी मति देखो भर नैना रँगीला ।
'हरीचन्द' मिलि लेहु बलैया अँगुरिन करि चटकारि चुटीला ॥१६॥

पीलू

का करौ गोइयाँ अरुझि गई अँखियाँ ।
कैसे छिपाऊँ छिपत नहि सजनी छैला मद-माती भई मधु-मखियाँ ॥
साँवरो रूप देख परबस भई इन कुल-लाज तनिक नहि रखियाँ ।
'हरीचंद' बदनाम भई मैं तो ताना मारत सब सँग कि सखियाँ ॥१७॥

नयन की मत मारो तरवरिया ।
मैं तो घायल बिनु चोट भई रे कहर करेजे करिया ॥
काहे को सान देत भौहन की काजर नयनन भरिया ।
'हरीचन्द' बिन मारे मरत हम मत लाओ तीर कटरिया ॥१८॥

जिय लेके यार करो मत हाँसी ।
तुमरी हँसी मरन है मेरो यह कैसी रीत निकासी ॥
आइ मिलौ गल लागौ पिअरवा अँखियाँ दरसन-प्यासी ।
'हरीचन्द' नहि तो जुलफन की मरिहैं दै गल-फाँसी ॥१९॥

ठुमरी, सहाना

आज तोहिं मिल्यो गोरी कुंजन पियरवा ।
काहे बोलै झूठे बैन कहे देत तेरे नैन
देखु न बिथुरि रहे मुख पर बरवा ॥

अँगिया के बँद टूटे कर सो कँकन छूटे
अपने पीतम जी के लागी है तू गरवा ॥
'हरीचन्द'लाज मेटी गाढ़े भुज भर भेंटी
द्वै द्वै के उपटि भये चार चार हरवा ॥२०॥

काहू सों न लागें गोरी काहू के नयनवाँ ।
हँसै सुनि सब लोग मिटै ना बिरह-सोग
पूछे ते न आवै कछू मुख सो बयनवाँ ।
'हरीचन्द'घबराय बिपति कही न जाय
छूटै खान-पान मिटैं चित के चयनवाँ ॥२१॥

ठुमरी

भए हो तुम कैसे ढीठ कुँअर कन्हाई ।
मटुकी मोरी सिर सों पटकि तापै हँसत हौ ठाढ़े
देखो किन ऐसी बान सिखाई ॥
भीर भई देखो ठाढ़ी हँसैं ब्रजबाल सब लखि मुख मेरे
'हरिचन्द' तुम ब्रज कैसी यह नई रीति चलाई ॥२२॥

हाँ दूर रहो ठाढ़े हो कन्हाई ।
जिन पकरो बहियाँ मेरी हटो लँगर
करो न लँगराई इठलाई ।
काहे इत आओ अरराने रहो दूर
'हरिचन्द' कैसी रीत चलाई मन-भाई ॥२३॥

ठुमरी, सोरठ

वेपरवाह मोहन मीत, हौं तो पछिताई हो दिल देके ।
बरबस आय फँसी इन फंदन छोड़ सकल कुल-रीत ॥
कीनी चाल पतंग-दीप की मानी तनक न नीत ।
'हरीचन्द' कछु हाथ न आयो करि ओछे सो प्रीत ॥२४॥

तू मिल जा मेरे प्यारे।
तेरे बिन मन-मोहन प्यारे व्याकुल प्रान हमारे।
'हरीचन्द' मुखड़ा दिखला जा इन नयनन के तारे ॥२५॥

बहियाँ जिन पकरो मोरी, पिया तुम साँवरे हम गोरी।
तुम तो ढोटा नन्द महर के, हम वृषभानु-किशोरी।
'हरीचन्द' तुम कमरी ओढ़ो, हम पै नील पिछौरी ॥२६॥

सेजिया जिन आओ मोरी, मै पइयाँ लागौ तोरी।
तुम सौतिन घर रात रहत हौ आवत हौ उठ भोरी।
'हरीचन्द' हम सों मत बोलो झूठ कहत क्यो जोरी ॥२७॥

झूठी सब बृज की गोरी, ये देत उलहनो जोरी।
मइया मैं नाहीं दधि खायो मै नहि मटुकी फोरी।
'हरीचन्द' मोहि निबल जान ये नाहक लावत चोरी ॥२८॥

कलिंगड़ा

आओ रे मोरे रूठे पियरवा, धाय लागो प्यारी के गरवा।
रूठ रहे क्यो मुख सो बोलो, हिय की गाँठैं हँस हँस खोलो,
'हरीचंद' अपनी प्यारी को मान राख राखौ अपने कोरवा ॥२९॥

छतियाँ लेहु लगाय सजन अब मत तरसाओ रे।
तुम बिन तलफत प्रान हमारे, नयनन सों बहे जल की धारे,
बाढ़ी है तन बिरह-पीर सूरत दिखलाओ रे।
'हरीचन्द' पिय गिरिवरधारी, पैयाँ परौ जाओ वलिहारी,
अब जिय नाही धरत धीर जलदी उठ धाओ रे ॥३०॥

मुकुट लटक भौंहन की मटक मोहन दिखला जा रे।
कुण्डल की लटक तानन की खटक मुख तनक हँसन कटि कछनी
कसन इन दरसन प्यासे नयनन को प्यारे दरसा जा रे॥

झुक झुक के चलन कलगी की हलन नित आय आय कछु गाय गाय
'हरिचंद' नाम मेरो लै लै नई तान सुना जा रे ॥३१॥

पीलू

सजन तोरी हो मुख देखे की प्रीत ।
तुम अपने जोबन मदमाते कठिन बिरह की रीत ॥
जहाँ मिलत तहाँ हँसि हँसि बोलत गावत रस के गीत ।
'हरीचंद' घर घर के भौंरा तुम मतलब के मीत ॥३२॥

हिंडोला

जमुना-तट कुंजन बीन रही सब सखियाँ फूलों की कलियाँ ।
एक गावत एक ताल बजावत हैं करती मिल के एक रँग-रलियाँ ॥
मृगनैनी आय अनेक जुरीं छबि छाय रही बृज की गलियाँ ।
'हरीचंद' तहाँ मनमोहन जू सखि बन आए लखि यों अलियाँ ॥३३॥

यह कैसी बान तिहारी मेरे प्यारे गिरवरधारी हो ।
मारग रोकि रहे सूने बन घेरि लई पर-नारी ।
करि बरजोरी मोरी बहियाँ मरोरी, लीनी मटुकीहु सिर सों उतारी ।
ऐसी चपलाई कहा करत कन्हाई, देखो लोक-लाज सब टारी ॥
पइयाँ परौं दूर रहौ अंग न छुओ हमारो 'हरीचन्द' तोपै बलिहारी ॥३४॥

सजन छतियाँ लपटा जा रे ।
दोउ नैन जोरि कछु भौंह मोरि झुकि झूमि चूमि सुख दै झकोरि
अधरन पै धरके अपनो अधर रस मोहि पिला जा रे ॥
दोउ भुज-विलास गलबाँही डाल मेरे गालन पै धर अपनो गाल,
उर छाय अंग संग मे सबै रस-रँग बरसा जा रे ॥
मेरो खोल कंचुकी-बँद हँसि के रस लै जोवन को कसि-कसि के,
'हरिचंद' रँगीली सेजन पै सब कसक मिटा जा रे ॥३५॥

सजन गलियों विच आ जा रे ।
तेरे विन बाढ़ी विरह-पीर गलियों-बिच आ जा रे ॥
तेरे बिना मोहि नींद न आवे, घर-अँगना कछु नाहि सुहावे,
इन नयनन सो बहत नीर सूरत दिखला जा रे ॥
'हरीचंद' तू मिल जा प्यारे, तेरे बिन तलफत प्रान हमारे,
निकल जाय सब जिय की कसक गरवाँ लिपटा जा रे ॥३६॥

सारंग

मेरे प्यारे सो सँदेसवा कौन कहै जाय ।
जिय की बेदन हरे बचन सुनाय राम
कोई सखी देय मोरी पाती पहुँचाय ॥
जाय कै बुलाय लावै वहुत मनाय राम
मिलै 'हरीचंद' मोरा जिअरा जुड़ाय ॥३७॥

क्यों गले न लगत रसिया वे ।
तू तो मेरे दिल बिच बसिया वे ॥
तेरी घूँघरवाली अलकैं मेरो तन मन डसिया वे ।
'हरीचंद' नहि मिलै करै तू सौतिन सँग रँग-हँसिया वे ॥३८॥

मेरे रूठे सैयाँ हो अरज मेरी सुनि लीजै ।
कापै इतनी भौंह चढ़ाओ क्यों न सजा मोहि दीजे ।
'हरीचंद' मै तो तुमरी ही जो चाहे सो कीजे ॥३९॥

किन वे रुठाया मेरा यार ।
कहाँ गया क्यो छोड़ गया मोहि तोड़ गया क्यों प्यार ॥
वन-वन पात-पात करि पूछूँ कोई न सुनै पुकार ।
'हरीचंद' गल-लगन-हौंस मै विरहिनि जरि भई छार ॥४०॥

किन बिलमायो मेरो प्रान ।
पाटी कर पटकत निसि बीती रोवत भयो है बिहान ॥
कहाँ रैन बसै को मन भाई किन तोर्यौ मेरो मान ।
'हरीचंद' बिन बिकल भई कछु करतब परत न जान ॥ ४१ ॥

भैरवी

सैयाँ तुम हमसे बोलो ना ।
कब के गए कहाँ रैन गँवाई मत घूँघट पट खोलो ॥ ४२ ॥

काफी

तेरी छबि मन मानी मेरे प्यारे दिल-जानी ।
प्रात समय जमुना-तट पै हौं जात रही पानी ॥
घूँघट उलटि बदन दिसि हेर्यौ कहि मीठी बानी ।
'हरीचंद' के चित में चुभि गई सूरति सैलानी ॥४३॥

छयल तोरी रे तिरछी नजर मोहि मारी ।
जब ते लगी तनक सुधि नाहीं तन की दसा बिसारी ॥४४॥

आजु की रात न जाओ सैयाँ मोरी बतियाँ मानो ।
तुम सौतन के रात रहत हौ हम सो छल मत ठानो ॥४५॥

बल खात गुजरिया बिरह भरी ।
भूलि गई सब सुध तन मन को लागी हरि की तिरछी नजरिया ।
'हरीचंद' पिया आय मिलो अब मारत है मोहि बिरह कटरिया ॥४६॥

न जाय मोसों सेजरिया चढ़िलो न जाय ।
जागत सब सास ननद मोरी बाजेगी पायल, मोसो सेजरिया० ।
तुम अपने मद चूर गिनत नहि सुख मेरो चूसो गर लाय हाय ॥
'हरीचंद' न ऐसी मोसों बनैगी पिआरे कैसे
लाज छाँड़ि दौरि आऊँ तोहि मिलूँ धाय ॥४७॥

भैरवी

नजरहा छैला रे नजर लगाए चला जाय।
नजर लगी बेहोस भई मै जिया मोरा अकुलाय ॥
व्याकुल तड़पूॅ नजर न उतरै हाय न और उपाय।
'हरीचंद' प्यारे को कोई लाओ जाय मनाय ॥४८॥

नशीली ऑखोवाले सोए रहो अभी है बड़ी रात।
सगरी रैन मेरे सॅग जागत रहे करत रॅगीली बात ॥
चिड़िया नही बोली मेरी चूरी खनकत काहे अकुलात।
'हरीचंद' मत उठो पियरवा गल लगि करौ रस-घात।
नशीली ऑखोंवाले सोए रहो अभी है बड़ी रात ॥४९॥

पीलू

हमसे प्रीति न करना प्यारी हम परदेसी लोगवा।
प्रीत लगाय दूर चलि जैहै रहि जैहै जिय सोगवा।
परदेसी की प्रीत बुरी है कठिन बिरह को रोगवा।
'हरीचंद' फिर दुख बढ़ि जैहै कटिहै नाहि बियोगवा ॥५०॥

भैरवी

पियारे गर लागो लागो रैन के जागे हो।
रैन के जागे प्यारी-रस-पागे जिया अनुरागे हो ॥
घूमत नैन पीक रॅग दागे रसमगे बागे हो।
'हरीचंद' प्यारी मुख चूमत हॅसि गर लागे हो ॥
पियारे गर लागो लागो रैन के जागे हो ॥५१॥

रैन के जागे पिया हो भोरहि मुख दिखलाओ।
रॅगीली नसीली छबीली ॲखियन ॲखियॉ यार मिलाओ ॥
घूॅघरवाली अलकैं बिथुरि रही जुलफै यार बनाओ।
'हरीचन्द' मेरे गलबहियॉ दै आलस रैन मिटाओ ॥५२॥

न जाय मोसों सेजरिया चढ़िलो न जाय।
विरह बाढ़्यौ पिय बिन कैसे कटै रैन सखी
मोसों सेजरिया चढ़िलो न जाय ।।
'हरीचन्द' पिया बिनु नीद न आवै साँपिन सी
लगै सेज हाय मोरी तड़पत रैन बिहाय।
न जाय मोसो सेजरिया चढ़िलो न जाय ।।५३।।

पूरबी

अजगुत कीन्ही रे रामा।
लगाय काँची प्रीति गए परदेसवा अजगुत कीन्ही रे रामा।
वारी रे उमिरि मोरी नरम करेजवा बिपति नई दीन्ही रे रामा ।।
अजगुत कीनी० ।
'हरीचन्द' विन रोइ मरौं रे खवरियौ न लीन्ही रे रामा ।।
अजगुत कीन्ही० ।।५४।।

आवन की कछु आज पिया की सुरति लगी मेरी सखियाँ।
उड़ि उड़ि अंचल जोबन उमगत फरकत मोरी बाई अँखियाँ।
'हरीचन्द' पिय कंठ लागि कै होइहैं ये छतियाँ सुखियाँ ।।५५।।

भैरवी

रैन की हो पिय की खुमारी न टूटै ।
बहुत जगाय हारी मोरी सजनी नीदड़िया नही छूटै।
भोर भए गर लगत न प्यारो अधर-सुधा नहि छूटै।
'हरीचन्द' पिया नीद को मातो सेज को सुख नहि लूटै ।।५६।।

शिकारी मियाँ वे जुलफों का फन्दा न डारो।
जुलफो के फन्दे फँसाय पियरवा नैन-बान मत मारो ।।
पलक कटारिन मार भँवन की मत तरवार निकारो।
'हरीचंद' मेरे जुलमी घायल छोड़ि न हमै सिधारो ।।५७।।

पूरबी

अरे प्यारे हम तुम बिनु व्याकुल आ जा रे प्यारे।
तड़पत प्रान हमारे तुम बिन हो दरस दिखला जा रे प्यारे।
'हरीचंद' तुम बिना तलफत गर लपटा जा रे प्यारे।
अरे प्यारे जल बिन मरत मछरिया इनहिं जिला जा रे प्यारे ॥५८॥

पूरबी वा गौरी

पिअरवा रे मिलि जा मत तरसाओ।
तुम बिन व्याकुल कल न परत छिन जलदी दरस दिखाओ।
'हरीचंद' पिया अब न सहौंगी धाइकै गरवाँ लगाओ ॥५९॥

प्यारी तोरी बाँकी रे नजरिया बड़े तोरे नैना रे प्यारी।
प्यारी तोरा रस भरा जोबन जोर मीठे मुख बैना रे प्यारी।
तड़पत छैला काहे छोड़ चली रे प्यारी मार गई सैना रे प्यारी ॥६०॥

साँवरे छैला रे नैन की ओट न जाओ।
तुम बिन देखे मोरे नैना अति व्याकुल इक छिन मुख न छिपाओ।
सदा रहो मोरे नयनन आगे बंसी मधुर बजाओ।
'हरीचन्द' पिय प्यासी अँखियन सुंदर रूप दिखाओ ॥६१॥

ना बोलौ मोसों मीत पियरवा जानि गए सब लोगवा।
तुमरी प्रीत छिपी न छिपाये, अब निबहैगी बहुत बचाये,
इन दइमारे नयनन पीछे यह भोगन पस्रो भोगवा।
'हरीचन्द' ब्रज बड़े चवाई, कहत एक की लाख लगाई,
कठिन भयो अब घाट-बाट मैं हमरो तुमरो सँजोगवा ॥६२॥

एरी सखी ऐसी मोहि परी लचारी रे।
का करौ मीत मोहन सों बोलतहि बनि आयो,
पैयाँ परत बिनती करत हा हा खात बलि बलि जात गिरिधारी रे॥

'हरीचन्द' पियरवा निकट आय मेरे पग सो,
रहत मुकुट छुवाय ऐसे ढीठ लँगरवा सों हारी रे ॥६३॥

राग सिंदूरा

भौंरा रे रस के लोभी तेरो का परमान।
तू रस-मस्त फिरत फूलन पर करि अपने मुख गान।
इत सों उत डोलत बौरानो किए मधुर मधु-पान।
'हरीचन्द' तेरे फन्द न भूलूँ बात परी पहिचान ॥६४॥

खयाल

न जाय मोसो ऐसो झोंका सहीलो ना जाय।
झुलाओ धीरे डर लगै भारी बलिहारी हो बिहारी,
मोसों ऐसो झोंका सहीलो न जाय ॥
देखो कर धर मेरी छाती धर धर करै पग दोऊ रहे थहराय हाय।
'हरीचन्द' निपट मैं तो डरि गई प्यारे मोहि लेहु झट गरवाँ लगाय ॥
न जाय मोसों ऐसो झोंका सहीलो ना जाय ॥६५॥

सोरठ

नींदड़िया नहि आवै, मै कैसी करूँ एरी सखियाँ।
'हरीचन्द' पिय बिनु अति तड़पै खुली रहे दुखियाँ अँखियाँ ॥६६॥

खयाल

सखियाँ री अपने सैयाँ के कारनवाँ हरवा गूथि गूथि लाई।
बाग गई कलियाँ चुनि लाई रचि रचि माल बनाई।
'हरीचन्द' पिय गल पहिराई हँसि हँसि कंठ लगाई ॥६७॥

बिहाग

जागत रहियो वे सोवनवालियो ऐहै कारो चोर।
आधी रात निखंड गए मै सुन्दर नन्द-किशोर ॥

लूटन लगिहै जोबन जब तब चलिहै कछू न जोर ।
'हरीचन्द' रीती करि जैहै तन-मन-धन सब छोर ॥६८॥

असावरी

एरी लाज निछावर करिहौं जौ पिय मिलिहैं आज ।
गहि कर सो कर गर लपटैहौं करिहौं मन को काज ।
लोक-संक एकौ नहि मानौं सब बाधक पर डरिहौं गाज ।
'हरीचन्द' फिर जान न दैहौं जो ऐहैं ब्रजराज ॥६९॥

ईमन कल्यान

चतुर केवटवा लाओ नैया ।
साँझ भई घर दूर उतरनो नदिया गहिरी मेरो जिय डरपै
अब मै तेरी लेहुँ बलैया ।
दैहौं जोबन-धन उतराई 'हरीचन्द' रति करि मन भाई
पैयाँ लागूँ तोरी रे बलदाऊ के भैया ।
गर लगो मेरे पीतम सुघर खिवैया ॥७०॥

पूरबी

प्रानेर बिना की करी रे आमी कोथाय जाई ।
आमी की सहिते पारी बिरह-जंत्रना भारी
आहा मरी मरी विष खाई ।
बिरहे ब्याकुल अति जल-हीन मीन गति
हरि विना आमि ना बचाई ॥७१॥

बेदरदी बे लड़िबे लगी तैड़े नाल ।
बे-परवाही वारी जी तू मेरा साहवा असी इत्थो बिरह-विहाल ।
चाहनेवाले दी फिकर न तुझ नूँ गल्लो दा ज्वाब ना स्वाल ।
'हरीचन्द' ततबीर ना सुझदी आशक बैतुल्-माल ॥७२॥

बिहाग वा कलिंगड़ा

मै तो राह देखत ही खड़ी रह गई हाय बीत गई सब रतियाँ।
पिया साँझ के कह गए भयो भोर, नहि आए मदन को बाढ्यो जोर,
'हरिचन्द' रही पछिताय सीस धुनि करिकै बजर सी छतियाँ ।।७३।।

पिया बिनु मोहि जारत हाय सखी देखो कैसी खुली उजियारियाँ।
चन्दा तन लावत बिरह लाय, कर पाटी पटकत करत हाय,
दुख बाढ़्यो सखी नहि पास कोऊ व्याकुल बिरहिन सुकुमारियाँ।
तलफत जल बिनु मछरी सी सेज, रहि जात पकरि कर सो करेज,
'हरिचन्द' पिया की याद परै जब बातैं प्यारी प्यारियाँ ।।७४।।

काफ़ी पीलू

क्यौ फकीर बनि आया वे, मेरे वारे जोगी।
नई बैस कोमल अंगन पर काहे भभूत रमाया वे, मेरे वारे जोगी।
को वे मात-पिता तेरे जोगी जिन तोहि नाहि मनाया वे।
काँचे जिय कहु काके कारन प्यारे जोग कमाया वे, मेरे वारे जोगी।
बड़े बड़े नैन छके मद-रँग सो मुख पर लट लटकाया वे।
'हरीचंद' बरसाने में चल घर घर अलख जगाया वे, मेरे वारे जोगी।।७५।।

गौरी

मोहन मीत हो मधुबनियाँ।
मतवारो प्यारो रसवादी रसिया छैल छिकनियाँ ।।
बटपारो लंगर लड़वारौ भरन देत नहि पनियाँ।
घाट बाट रोकत 'हरिचन्दहि' नयो बन्यो दधि-दनियाँ ।।७६।।

मोहन प्यारो हो नँद-गैयाँ।
नित नई अट-पट चाल चलावत देखी सुनी जो नैयाँ ।।
लकुट लिए रोकत मग जुवतिन मानत परेहु न पैयाँ।
'हरीचन्द' छैला ब्रज-जीवन वाको कोउ न गोसैयाँ ।।७७।।

मोहन बाँको हो गोकुलिया ।
चलन न देत पंथ रोकत गहि चंचल अंचल चुलिया ।
नैन नचावत दधि मटुकिन की करिकै ठाला-ठुलिया ।
'हरीचन्द' टोना कछु जानत जासों सब बृज भुलिया ॥७८॥

लावनी

बिना उसके जल्वा के दिखाती कोई परी या हूर नही ।
सिवा यार के, दूसरे का इस दुनियाँ मे नूर नही ॥
जहाँ में देखो जिसे खूबरू वहाँ हुस्न उसका समझो ।
झलक उसी की सभी माशूकों में यारो मानो ॥
जहाँ कोई खुशगुलू मिलै तुम वहाँ उसी का बोल सुनो ।
जुल्फो को भी उसी का पेच समझ कर आके फँसो ॥
नशीली आँखैं वहाँ नहीं है जहाँ मेरा मखमूर नही ।
सिवा यार के० ॥१॥

जहाँ पै देखो नाज ग़ज़ब का उसके सब नखरे जानो ।
देख करिश्मा, उसी सींगे मे उसको गरदानो ॥
जहाँ हो भोलापन तुम उस भोले को वहाँ पै पहिचानो ।
जुल्म जो देखो, तो उस जालिम की बेरहमी मानो ॥
बिना उसके इस शीशए-दिल को करता कोई चूर नही ।
सिवा यार के० ॥२॥

बिना मिले उस मह के झलक माशूकपना आता ही नही ।
बग़ैर उसके, निवानी शक्ल कोई पाता ही नही ॥
मजाल क्या है दिल छीनै उस बिना दिया जाता ही नही ।
उसको छोड़ कर, दूसरा आँखों को भाता ही नही ॥
जितने खूबरू जहाँ मे है वो कोई उससे दूर नही ।
सिवा यार के० ॥३॥

वही मेरा माशूक झलक इन बुतो मे भी दिखलाता है ।
वही इश्क मे, आशिको को हर तरह फँसाता है ॥
कही मेहरबाँ बनता है और कहीं जुल्म फैलाता है ।
गरज कि हर जा, मुझे वो यार ही नजर आता है ॥
'हरीचंद' जो और देखते वो आशक भरपूर नही ।
सिवा यार के० ॥४॥७९॥

करि निठुर श्याम सो नेह सखी पछताई ।
उस निरमोही की प्रीति काम नहि आई ॥
उन पहिले आकर हमसे आँख लगाई ।
करि हाव-भाव बहु भाँति प्रीति दिखलाई ॥
ले नाम हमारा बंसी मधुर वजाई ।
अब हमें छोड़ के दूर बसे जदुराई ॥
कुबरी ने मोहा रहे वही बिलमाई ।
उस निरमोही की प्रीत काम नहि आई ॥१॥

हमने जिसके हित लोक-लाज सब छोड़ी ।
सब छोड़ रहे एक प्रीत उसी से जोड़ी ॥
रही लोक-वेद घर-बाहर से मुख मोड़ी ।
पर उन नहि मानी सो तिनका सी तोड़ी ॥
इक हाथ लगी मेरे जग बीच हँसाई ।
उस निरमोही की प्रीत काम नहि आई ॥२॥

हम उन बिन सखियाँ बन बन ढूँढ़त डोलै ।
पिय प्यारे प्यारे मुख से सब छिन बोलै ॥
जिन कुंजन मे हरि हँसि हँसि करी कलोलै ।
वहाँ व्याकुल हो हम मूँद मूँद दृग खोलैं ।

दै दगा जुदा भए मोहन बिपति बढ़ाई ।
उस निरमोही की प्रीत काम नहि आई ॥३॥

क्या करैं कोई तद्‌बीर न और दिखाती ।
दिन रोते कटता रात जागते जाती ॥
बिरहा से सब छिन हाय दहकती छाती ।
कोई उनसे जा यह मेरी बिथा सुनाती ॥
'हरिचन्द' उपाय न चलै रही पछताई ।
उस निरमोही की प्रीत काम नहिं आई ॥४॥८०॥

तुम सुनो सहेली सँग की सखी सयानी ।
पिय प्यारे की मैं कहँ लौं कहौं कहानी ॥
एक दिन मैं अँधरी रात रही घर सोई ।
पलँगों पै इकली और पास नहि कोई ॥
हरि आय अचानक सोए पास भय खोई ।
मुख चूम कस्यो मेरे भुज सों भुज सोई ॥
मै चौंकि उठी लियो गल लगाय सुखदानी ।
पिय प्यारे की मैं कहँ लौं कहौं कहानी ॥१॥

एक साँझ अकेली मैं थी गलियो आती ।
लिये अंचल नीचे घर-हित दीआ-बाती ।
आए इतने में सखि मेरे बाल-सँघाती ।
उन दीप बुझाय लगाय लई मोहि छाती ॥
मै औचक रह गई कियो जोई मनमानी ।
पिय प्यारे की मैं कहँ लौं कहौं कहानी ॥२॥

एक दिन मेरे घर जोगी बन कर आये ।
सिर जटा बढ़ाये अंग भभूत लगाये ॥

चढ़ सिढ़ी नाम लै हर को अलख जगाए ।
मै भिच्छा ले गई तब मुख चूमि लुभाए ॥
बोले भिच्छा थी मुझे यही मेरी रानी ।
पिय प्यारे की मै कहँ लौ कहौ कहानी ॥३॥

जब मिले जहाँ हँसि लीनों चित्त चुराई ।
मुख चूमि भए बलिहार कंठ रहे लाई ॥
बिनती कर बोले सदा प्रीति दिखलाई ।
सपने मे भी नहि देखी कभी रुखाई ।
रहे सदा हाथ पर लिये मुझे दिल-जानी ।
पिय प्यारे की मै कहँ लौ कहौ कहानी ॥४॥

एक दिन कुंजों मे साथ दूसरी नारी ।
अपने सुख बैठे थे मिलकर गिरधारी ॥
मै गई तो सकुचे झट यह बुद्धि बिचारी ।
बोले यह आई तुमहि मिलावन प्यारी ॥
तुम घर भेजन को बिनती करि यहि आनी ।
पिय प्यारे की मै कहँ लौ कहौ कहानी ॥५॥

मेरे सुख मे पिय ने सब दिन सुख माना ।
मुझे अपना जीवन प्रान सदा कर जाना ॥
मेरे हित सब सखियो का सहते ताना ।
मुरझाए जो मुख मेरा कुछ मुरझाना ॥
गुन लाख एक मुख कैसे बोलौ बानी ।
पिय प्यारे की मै कहँ लौ कहौ कहानी ॥६॥

वह बन बन विहरन कुंज-कुंजतरु पातै ।
वह गल भुज डालन प्रीत-रीत की घातै ॥

वह चन्द चाँदनी और निराली रातैं ।
एक एक की सौ सौ जी मे खटकती बातैं ॥
'हरिचन्द' बिना भई रो रो हाय दिवानी ।
पिय प्यारे की मै कहँ लौ कहौ कहानी ॥७॥८१॥

दुख किस्से कहूँ कोई साथ न सखी सहेली ।
मुझे छोड़ गये मनमोहन हाय अकेली ॥
मै पिय विनु तड़पूँ हाय पास नहि कोई ।
रही सपने की संपत सी सब सुख खोई ॥
जो मै पिय बिनु नहि कभी पलँग पर सोई ।
सोइ आज सेज सूनी लखि दुख सो रोई ॥
जंगल सी मुझको लगती हाय हवेली ।
मुझे छोड़ गये मनमोहन हाय अकेली ॥१॥

मेरे बाल-सनेही मुझको छोड़ सिधारे ।
तड़पूँ व्याकुल मै बिन बृज के रखवारे ।
कहाँ बिलमि रहे किन मोहे पीय हमारे ।
नहि खबर मिली भये निपट निठुर पिय प्यारे ।
यह बिरह-बिथा नहि जाती है अब झेली ॥
मुझे छोड़ गये मनमोहन हाय अकेली ॥२॥

मेरा बाला जोबन पड़ी बिपति सिर भारी ।
दिन कैसे काटूँ भई उमर की ख्वारी ॥
यह नई आपदा सिर से जात न टारी ।
कहाँ गए हाय मुझे छोड़ पिया गिरधारी ॥
भई उन बिन मै मुरझाय जली ज्यो बेली ।
मुझे छोड़ गये मनमोहन हाय अकेली ॥३॥

गए सुरत भूल नहिं पाती भी भिजवाई ।
करि याद पिया की हाय आँख भरि आई ॥
साँपिन सि सेज घर वन सो परत दिखाई ।
जीना भया भारी दामोदर दुखदाई ॥
'हरिचन्द' विना भई जोगिन दे गलसेली ।
मुझे छोड़ गये मनमोहन हाय अकेली ॥४॥८२॥

वही तुम्हे जाने प्यारे जिसको तुम आप ही वतलाओ ।
देखे वही वस, जिसे तुम खुद अपने को दिखलाओ ॥
क्या मजाल है तेरे नूर की तरफ आँख कोई खोले ।
क्या समझे कोई, जो इस झगड़े के वीच आकर वोले ॥
खयाल के वाहर की वाते भला कोई क्योकर तोले ।
ताकत क्या है, मुअम्मा तेरा कोई हल कर जो ले ॥
कहाँ खाक यह कहाँ पाक तुम भला ध्यान मे क्यो आओ ।
देखे वही वस, जिसे तुम खुद अपने को दिखलाओ ॥१॥

गरचे आज तक तेरी जुस्तजू खासो आम सब किया किये ।
लिखीं कितावे, हजारो लोगो ने तेरे ही लिये ॥
वड़े वडे झगड़े मे पडे हर शख्स जान गहते थे दिये ।
उम्र गुजारी, रहे गल्तॉं पेचॉं जव तक कि जिये ॥
पर तुम हौ वह शै कि किसीके हाथ कभी क्योकर आओ ।
देखे वही वस, जिसे तुम खुद अपने को दिखलाओ ॥२॥

पहिले तो लाखो मे कोई विरला ही झुकता है इधर ।
अपने ध्यान से, रहा वह नूर भूला भी कोई अगर ॥
पास छोड़कर, मजाहब का खोजा न किसीने तुम्हे मगर ।
तुमको हाजिर, न पाया कभी किसी ने हर जा पर ॥

दूर भागते फिरो तो कोई कहाँ से पाए बतलाओ।
देखे वही बस जिसे तुम खुद अपने को दिखलाओ ॥३॥

कोई छाँट कर ज्ञान फूल के ज्ञानी जी कहलाते है।
कोई आप ही, ब्रह्म बन करके भूले जाते हैं॥
मिला अलग निरगुन व सगुन कोइ तेरा भेद बताते है।
गरज कि तुझको, ढूंढ़ते है सब पर नहि पाते है॥
'हरीचंद' अपनो के सिवा तुम नजर किसीके क्यों आओ।
देखे वही बस, जिसे तुम खुद अपने को दिखलाओ ॥४॥८३॥

चाहे कुछ हो जाय उम्र भर तुझीको प्यारे चाहैंगे।
सहेंगे सब कुछ, मुहब्बत दम तक यार निबाहैंगे॥
तेरी नजर की तरह फिरैगी कभी न मेरी यार नजर।
अब तो यों ही, निभैगी यो हो जिन्दगी होगी बसर॥
लाख उठाओ कौन उठे है अब न छुटैगा तेरा दर।
जो गुजरैगी, सहैंगे करैगे यो ही यार गुजर॥
करोगे जो जो जुल्म न उनको दिलवर कभो उलाहैंगे।
सहैंगे सब कुछ मुहब्बत दम तक यार निबाहैंगे ॥१॥

आह करैगे तरसैंगे गम खायेंगे चिल्लायेंगे।
दीन व ईमाँ बिगाड़ेंगे घर-बार डुबायेंगे॥
फिरैंगे दर दर बे-इज्जत हो आवारे कहलायेंगे।
रोएँगे हम हाल कह औरों को भी रुलायेंगे॥
हाय हाय कर सिर पीटैंगे तड़पैंगे कि कराहैंगे।
सहैंगे सब कुछ, मुहब्बत दम तक यार निबाहैंगे ॥२॥

रुख फेरो मत मिलो देखने को भी दूर से तरसाओ।
इधर न देखो, रकीबो के घर मे प्यारे जाओ॥

गाली दो कोसो झिड़की दो खफा हो घर से निकलवाओ ।
कत्ल करो या, नीम-बिस्मिल कर प्यारे तड़पाओ ॥
जितना करोगे जुल्म हम उतना उलटा तुम्हें सराहैंगे ।
सहैंगे सब कुछ, मुहब्बत दम तक यार निवाहैंगे ॥३॥

होके तुम्हारे कहाँ जाँय अब इसी शर्म से मरते हैं ।
अब तो यो ही, जिन्दगी के बाकी दिन भरते है ॥
मिलो न तुम या कत्ल करो मरने से नहीं हम डरते है ।
मिलेंगे तुमको, बाद मरने के कौल यह करते है ॥
'हरीचन्द' दो दिन के लिये घबरा के न दिल को डाहैंगे ।
सहैंगे सब कुछ, मुहब्बत दम तक यार निवाहैंगे ॥४॥८४॥

बाल य दिल के बबाल दिलबर ने मुखड़े पर डाले है ।
जुल्फ के फन्दे तुम्हारे सबसे यार निराले है ॥
छल्लेदार छबीले लम्बे लम्बे यह छहराते है ।
बल खा खा कर, फन्द मे अपने दिल को फँसाते है ॥
चिलकदार चुनवारे गिड्डुरी से होकर रह जाते है ।
हिल हिल करके कभी यह अपनी तरफ बुलाते है ॥
पेचदार खम खाये उलझे सुलझे घूँघरवाले है ॥
जुल्फ के फन्दे तुम्हारे सबसे यार निराले है ॥१॥

कहूँ इश्क-पेचाँ आशिक को पेच मे भी यह लाते हैं ।
फाँसी भी है, मुसाफिर को बेतरह फँसाते हैं ॥
जाल है यह जंजाल से सबको जाल मे करके जाते हैं ।
जादू की यह, गिरह है दिलको अजब भुलाते है ॥
काले काले गज़ब निकाले पाले क्या यह काले है ॥
जुल्फ के फन्दे तुम्हारे सबसे यार निराले है ॥२॥

देख इनका तलवार ने खम दम म्यान में मुँह को छिपा दिया।
भौरों ने भी, न इन सा हो के गूँजना शुरू किया॥
हजार सिर बुलबुल ने पटका हुई न ऐसी साँवलिया।
सिवार ने भी, शर्म से पानी मे मुँह डुबा लिया॥
मुश्क से खुशबू मे रेशम से चमक में ये चौकाले हैं॥
जुल्फ के फन्दे तुम्हारे सबसे यार निराले हैं॥३॥

बंसी है दिल के शिकार को लालच देके फँसाने के।
छींके हैं यह, लटकते दोनो दिल लटकाने के॥
आँकुस को है नोक जिगर से खींच के दिल को लाने के।
जंजीरों से यह बढ़ कर दिल को कैद कर जाने के॥
दिल के दुखाने को बीछू के डंक से भी जहरीले हैं॥
जुल्फ के फन्दे तुम्हारे सबसे यार निराले है॥४॥

तुम्है नूर की शमा कहूँ तो धुँआ इन्हैं कहना है बजा।
रुखसारो पर यः दोनो चँवर ढला करते है सदा॥
यह वह उक्दा है जो किसी से अब तक प्यारे नही खुला।
कहूँ मुअम्सा, तो इसमे नही बाल भर फर्क जरा॥
दिल के पहुँचने को गालों तक कमन्द दोनो डाले है॥
जुल्फ के फन्दे तुम्हारे सबसे यार निराले है॥५॥

इनमें जो आकर फँसा वह फिर न उम्र भर कभी छुटा।
बला है बस ये, हमेशः इनसे बचाये दिलको खुदा॥
जंत्र मंत्र कुछ लगा न उसको जिसको इन साँपो ने डसा।
'हरीचन्द'के, जुल्फ में दिल अब तो बेतरह फँसा॥
भूल-भुलैयाँ से उलझे चिकने महीन चमकाले है।
जुल्फ के फन्दे, तुम्हारे सबसे यार निराले है॥६॥८५॥

आँखों में लाल डोरे शराब के बदले ।
हैं जुल्फ छुटीं रुख पर निकाब के बदले ।।
नित नया जुल्म करना सवाब के बदले ।
झिड़की देना हर दम जवाब के बदले ।।
त्योरी मे बल बालो के ताव के बदले ।
खून मे रँगना कपड़ा शहाब के बदले ।।
सब ढंग आज-कल है जनाब के बदले ।।
है जुल्फ छुटी रुख पर निकाब के बदले ।।१।।

पीते हैं जिगर का खून आब के बदले ।
खाते हैं सदा हम गम कबाब के बदले ।।
खुशबू तेरी सूँघी गुलाब के बदले ।
लेते है नाम तेरा किताब के बदले ।।
तब रूपोशी यह किस हिसाब के बदले ।।
है जुल्फ छुटी रुख पर निकाब के बदले ।।२।।

ह्याँ सदा जईफी है शबाब के बदले ।
मस्तो से मिले बस शेखो शाब के बदले ।।
रातों जो जागते रहे ख्वाब के बदले ।
नागिन जिस पर अब है सहाब के बदले ।।
मुँह तेरा देखा माहताब के बदले ।।
है जुल्फ छुटी रुख पर निकाब के बदले ।।३।।

दिन कभी न इस खानःखराब के बदले ।
मरना बेहतर इस इजतिराब के बदले ।।
हो 'हरीचन्द' पर खुश अताब के बदले ।
कर अब तो रहम ज़ालिम अज़ाब के बदले ।।

क्यो नए चोचले हैं हिजाव के वदले।
है जुल्फ छुटी रुख पर निकाब के वदले ॥४॥८६॥

(सपने में वनाई हुई)

मोहि छोड़ि प्रान-पिय कहूँ अनत अनुरागे।
अव उन विनु छिन छिन प्रान दहन दुख लागे॥
रहे एक दिन वे जो हरि ही के सँग जाते।
वृन्दावन कुंजन रमत फिरत मदमाते॥
दिन रैन श्याम सुख मेरे ही सँग पाते।
मुझे देखे विन इक छन प्यारे अकुलाते॥
सोइ गोपीपति कुवरी के रस पागे॥
अव उन विनु छिन छिन प्रान दहन दुख लागे॥१॥

कहाँ गई श्याम की वे मनहरनी बातैं।
वह हँसि हँसि कण्ठ-लगावनि करि रस-घातैं॥
वह जमुना-तट नव कुंज कुंज द्रुम पातैं।
सपने सी भई अव वे विहरन की रातैं॥
सहि सकत न कठिन बियोग-अगिन तन दागे॥
अव उन विनु छिन छिन प्रान दहन दुख लागे॥२॥

पहिले तो सुन्दर मोहन प्रीति बढ़ाई।
सव ही विधि प्यारे अपनी करि अपनाई॥
सुख दै वहु भाँतिन नित नव लाड़ लड़ाई।
अब तोड़ि प्रीति मोहि छोड़ि गए ब्रजराई॥
संजोग-रैन बीतत बियोग-दुख जागे॥
अव उन विनु छिन छिन प्रान दहन दुख लागे॥३॥

क्या करूँ सखी कुछ और उपाय बताओ।
मेरे पीतम प्यारे मुझसे आन मिलाओ॥

जिय लगी विरह की भारी अगिन बुझाओ ।
मै बुरी मौत मर रही मिलाइ जिलाओ ।
'हरिचन्द' श्याम-सँग जीवन-सुख सब भागे ।
अब उन बिनु छिन छिन प्रान दहन दुख लागे ।। ४ ।।८७।।

जबतक फँसे थे इसमे तबतक दुख पाया औ बहुत रोए ।
मुँह काला कर, बखेड़े का हम भी सुख से सोए ।।
बिना बात इसमे फँस कर रंज सहा हैरान रहे ।
मजा बिगाड़ा, अपना नाहक ही को परेशान रहे ।।
इधर उधर झगड़े मे पड़े फिरते बस सर-गरदान रहे ।
अपना खोकर, कहाते बेवकूफो नादान रहे ।।
बोझ फिक्र का नाहक को फिरते थे गरदन पर ढोए ।
मुँह काला कर, बखेड़े का हम भी सुख से सोए ।।१।।

मतलब की दुनिया है कोई काम नही कुछ आता है ।
अपने हित को, मुहब्बत सब से सभी बढ़ाता है ।।
कोई आज औ कल कोई सब छोड़ के आखिर जाता है ।
गरज कि अपनी गरज को सभी मोह फैलाता है ।।
जब तक इसे जमा समझे थे तब तक थे सब कुछ खोए ।
मुँह काला कर, बखेड़े का हम भी सुख से सोए ।।२।।

जिसको अमृत समझे थे हम वह तो जहर हलाहल था ।
मीठा जिसको जानते थे वह इनारू का फल था ।।
जिसको सुख का घर समझे थे वह तो दुख का जंगल था ।
जिनको सच्चा समझते थे वह झूठो का दल था ।।
जीवन फल की आसा मे उलटे हमने थे विष बोए ।
मुँह काला कर, बखेड़े का हम भी सुख से सोए ।।३।।

जहाँ देखो वहीं दगा और फरेब औ मक्कारी है।
दुख ही दुख से, बनाई यह सब दुनिया सारी है॥
आदि मध्य औ अंत एक रस दुख ही इसमें जारी है।
कृष्ण-भजन बिनु, और जो कुछ है वह ख्वारी है॥
'हरीचन्द' भव पंक छुटै नहि विना भजन-रस के धोए।
मुँह काला कर, बखेड़े का हम भी सुख से सोए॥४॥८८॥

पिय प्राननाथ मनमोहन सुन्दर प्यारे।
छिनहूँ मत मेरे होहु दृगन सों न्यारे॥
घनश्याम गोप-गोपी-पति गोकुल-राई।
निज प्रेमीजन-हित नित नित नव सुखदाई॥
बृन्दावन-रच्छक ब्रज-सरबस बल-भाई।
प्रानहुँ ते प्यारे प्रियतम मीत कन्हाई॥
श्री राधानायक जसुदानन्द दुलारे।
छिनहूँ मत मेरे होहु दृगन सो न्यारे॥

तुव दरसन बिन तन रोम रोम दुख पागे॥
तुव सुमिरन बिनु यह जीवन बिष सम लागे॥
तुमरे सँयोग बिनु तन वियोग दुख दागे।
अकुलात प्रान जब कठिन मदन मन जागे॥
मम दुख जीवन के तुम हो इक रखवारे।
छिनहूँ मत मेरे होहु दृगन सों न्यारे॥

तुमही मम जीवन के अवलम्ब कन्हाई।
तुम बिनु सब सुख के साज परम दुखदाई॥
तुव देखे ही सुख होत न और उपाई।
तुमरे बिनु सब जग सूनो परत लखाई॥

हे जीवनधन मेरे नैनो के तारे ।
छिनहूँ मत मेरे होहु दृगन सों न्यारे ॥

तुमरे-बिनु इकछन कोटि कलप सम भारी ।
तुमरे-बिनु स्वरगहु महा नरक दुखकारी ॥
तुमरे सँग वनहू घर सो वढ़ि बनवारी ।
हमरे तौ सब कुछ तुमही हौ गिरधारी ॥
'हरिचन्द' हमारे राखौ मान दुलारे ।
छिनहूँ मत मेरे होहु दृगन ते न्यारे ॥८९॥

बरवा

(धुन—'मोरि तो जीवन राधे' इस चाल पर)

मोहन दरस दिखा जा ।
व्याकुल अति प्रान-प्यारे दरस दिखा जा ॥
बिछुरी मै जनम जनम की फिरी सब जग छान ।
अबकी न छोड़ों प्यारे यही राखो है ठान ॥
'हरीचन्द' विलम न कीजै दीजै दरसन दान ॥९०॥

दरस मोहि दीजै हो पिय प्रान ।
दरस दीजै अधर पीजै कीजै परस सुजान ॥
तुम बिनु व्याकुल धीर न आवत लीजै अरज यह मान ।
'हरीचन्द' मोहि जानि आपनी करिये जीवन दान ॥९१॥

पूरबी रेखता

हमै दरसन दिखा जाओ हमारे प्रान के प्यारे ।
तेरे दरसन को ऐ प्यारे तरस रही आँख बरसो से ॥
इन्है आकर के समझाओ हमारे आँखो के तारे ॥
सिथिल भई हाय यह काया है जीवन ओठ पर आया ।
भला अब तो करो माया मेरे प्रानो के रखवारे ॥

अरज 'हरिचन्द' की मानो लड़कपन अब भी मत ठानों।
बचा लो प्रान दरसन दो अजी ब्रजराज के बारे ॥९२॥

ठुमरी

पियारे सैयाँ कौने देस रहे रूसि जोवना को सब रँग चूसि।
'हरीचन्द' भये निठुर श्याम अब पहिले तो मन मूसि ॥९३॥

पियारे पिया कौन देश रहे छाय।
का पर रहे बिलमाय।
मेरी सुध बिसराय प्रेम सब जिय सो दूर भुलाय।
'हरीचन्द' पिय निठुर बसे कित जोगिन हमहिं बनाय ॥९४॥

पिया प्यारे तोहि बिनु रह्यो नहि जाय।
कौन सो करौ मै उपाय।
कहत 'चन्द्रिका' धाइ मिलो अब लेहु गरे लपटाय ॥९५॥

आओ पिआ प्यारे गरे लगि जाओ।
काहे जिअ तरसाओ, कहत 'चन्द्रिका' धाइ मिलो
अब जिय की जरनि जुड़ाओ ॥९६॥

खेमटा

अब ना आओ पिया मोरि सेजरिया।
जात बिदेस छोड़ि तुम हमको हनि हनि हिय मै बिरह कटरिया।
कहत 'चन्द्रिका' हरीचन्द पिय जाओ वही जहाँ लाए नजरिया ॥९७॥

रेखता

मोहन पिय प्यारे टुक मेरे ढिग आव।
बारी गई सूरत के बदन तो दिखाव।
तरस गए अँग अँग गर मै लपटाव।
तेरी मै चेरी मुझे मरत सो जिलाव।
वही रूप वही अदा दीने निज घाव।
प्यारे ! 'हरिचन्दहि' फिर आज भी दरसाव ॥९८॥

दिलदार यार प्यारे गलियो मे मेरे आ जा।
आँखें तरस रही है सूरत इन्हे दिखा जा।।
चेरी हूँ तेरी प्यारे इतना तो मत सता रे।
लाखो ही दुख सहा रे टुक अब तो रहम खा जा।।
तेरे ही हेत मोहन छानी है खाक बन बन।
दुख झेले सर पः अनगन अब तो गले लगा जा।।
मन को रहूँ मै मारे कब तक बता दे प्यारे।
सूखे बिरह मे तारे पानी इन्हे पिला जा।।
सब लोक-लाज खोई दिन-रैन बैठ रोई।
जिसका कही न कोई उसका तो जी बचा जा।।
मुझको न यो भुलाओ कुछ शर्म जी मे लाओ।
अपनों को मत सताओ ए प्रान-प्यारे राजा।।
'हरिचन्द' नाम प्यारी दासी है जो तुम्हारी।
मरती है वह बिचारी आकर उसे जिला जा।।९९।।

बंसी बजा के हम को बुलाना नही अच्छा।
घर-बार को यो हमसे छुड़ाना नहीं अच्छा।।
घर-बार छुड़ाते हो तो फिर हमको न छोड़ो।
अपनों को यो दामन से छुड़ाना नही अच्छा।।
करना किसी पै रहम इक अदना सी बात पर।
मुतलक किसी प ध्यान न लाना नही अच्छा।।
हम तो उसी मे खुश है खुशी हो जो तुम्हारी।
फिर हम से छिपा कर कही जाना नही अच्छा।।
गाओ जो चाहो बंसी मे है राग हज़ारो।
रट नाम की मेरे ही लगाना नही अच्छा।।

मिल जायँगे हम कुंज में मौका जो मिलेगा।
गलियों में हमारे सदा आना नहीं अच्छा॥
'हरिचन्द' तुम्हारे ही है हम तो सभी तरह।
यों अपने गुलामो को सताना नही अच्छा॥१००॥

अथ बँगला गान

प्रानप्रिय शशि-मुखि बिदाय दाओ आमारे।
शून्य देह लोए जाबो प्रान दिये तोमारे॥
करि हे बिनय हइया सदय आमारे बिदाय दाओ जाई देशांतरे॥१॥

प्राननाथ निदय ह्य बिदाय चेओ ना।
तोमा बिन प्रान, नाहि रबे प्रान॥
किसे पाब त्रान आमाय बलो ना।
आमि हे अबला, ताहा ते सरला, बिरह-ज्वाला, प्राने सबे ना॥२॥

जाई जाई करे नाथ दिओ नाहे जातना।
तोमार विच्छेदे ए जीवन रबे ना॥
पुनः ए नयन शशांक-बदन करिबे दर्शन कबे ओहे बलो ना।
तोमारे ना हेरे प्रान जेकी करे कि कब तोमारे, तुमि किये भावना॥३॥

प्राननाथ बिदेशे त जेते दिबना।
जाबे जाओ कांत किंतु हे नितांत, आमारे एकांत, आर कांत पावे ना।
तोमार विहन, ए छार जीवन, ओ प्रानधन आर रबे ना॥४॥

आर जातना प्रान सहे ना।
सदा मन उचाटन, झरिछे दु नयन,
कांत बुझि ए जीवन, आमार आर रबे ना॥
हाए एमन समय, कोथा ओहे रसमय,
हइया अति सदय, आछ प्रान बलो ना॥५॥

प्राननाथ देखा दाओ आसि अबलाय।
जे दुःख पेतेछि आमि, मन जाने आर,
आमि जानि आरि जानेन ईश।
जिनि के मने आमि जानाव तोमाय ॥६॥

आमार जे दशा नाथ आसिया हे देख ना।
हरिश्चन्द्र नाथ जार, केन हेन दशा तार,
बल ओहे गुन-मनि, आमार हे बलो ना ॥
सदा मन उचाटन, दहिते छे जीवन मन,
असह्य 'चन्द्रिका' जीवने सहेना यातना ॥७॥

कोथाय रहिल सखि से गुन-मान।
विच्छेद यातना, आर जे सहेना। कि करि बल न ओ प्रान सजनी।
केमने एखन, धरिब जीवन। से कांत विहन बल ओ धनी ॥८॥

हाय विधि एत मोरे केन निर्दय।
अमूल्य रतन करिया अर्पन, केन गो हरन ताहारे कराय।
मम प्रान-धन, हृदय-रतन रमनी-मोहन कोथाय गो जाय ॥९॥

तुमि कर के तोमार कारे बल रे मन आपन।
मिछा ए संसार माया जुड़े आछे त्रिभुवन ॥
दारा सुत परिवार संगे कि जात्रे तोमार।
जखन तुमि मुँदिबे दु नयन ॥१०॥

ओहे हरि दयामय।
ए भव-जंत्रना, आर जे सहे ना।
करिया करुना, उधारो आमाय ॥११॥

ओहे नाथ करुनामय !

प्रभु हरि दयामय, दया करो ए जनाय ,
नामे ना कलंक रय उद्धारो तराय ॥
आमि अति मूढ़ मति, ना जानी भक्ति स्तुति ,
कि हबे आमार गति, बल गो, आमाय ॥१२॥

मन केन रे भाव एत ।

ओई जे दिवा-निशि भावछ बसी, जेन बुधि हए छे हत ॥
एतेक भावना, किसेर कारन, हबे बूझि पागलेर मत ॥१३॥

आमार नाथ बड़ दयामय ।

करुना-आकर दयार सागर दयामय नाम जगत भीतर ।
एक मुखे गुन वर्णना जे भार, कहि छे 'चन्द्रिका' भाविया हृदये ॥१४॥

कलिंगड़ा एक-ताला

ओ प्रान नयन-कोने चाईले परे क्षति कि आछे ।
आमार केदे सोहाग जेचे मान तोमार काछे ॥
जथा इच्छा तथा जावो, सदत हृदय रओ ।
तोमार विहन कओ, आमार के आछे ॥१५॥

सिन्धु धीमा तिताला

ए सोहाग आर आमार काज नाई ।
सदत हृदय जे ज्वाला पाई ॥
हृदय दहन जायगो जीवन ।
कि करि एखन वल गोसाई ॥१६॥

प्राननाथ कि वल छिले ।
ए दारुण ज्वाला हृदये केन गो दिले ॥

हृदय माझे त राखिव तोमाय ।
सदत बलिते नाथ हे आमाय ॥
से सब कथन रहिल कोथाय ।
भेवे देख प्रान कि करिले ॥१७॥

कोथाय रहिले प्रान एमन बरखा ते ।
देख घन घन, वरिषे नयन, अवलारे भिजाते ।
बल ओरे प्रान, तोमाय कोन जन, शिखाले एमन आमारे काँदते ।
'चन्द्रिका' जे बले नाथ कि करिले अबला बधिले बुझि हे प्रानेते ॥१८॥

आदरे आदरे भालो तो छिले ।
जे तोमार अनुगत तार कि करिले ॥
नव जलधर तुमि तृषित चातकि आमी ,
ओहे प्राननाथ कोथा वारि विन्दू वरषिले ।
प्रानप्रिय प्रान-धन, बल जातना एमन ,
'चन्द्रिका' हृदये केन गो दिले ॥१९॥

ओहे हरि जगतेर पति ।
दया कर दयामय आमि दीन हीन अति ॥
लाए छे शरण चरणे जे जन, रुष्ट कि कारण ताहार प्रति ।
नाम दयाकर जगत भीतर कि हवे आमार बल गो गति ॥२०॥

आशाय आशाय भालो जातना दिले ।
जाओ तथा गुन-मनि जथा निशि पोहाईले ॥
से धनि तोमार धनि तुमि तार प्रेमे रिणि,
बाँधा आछ गुनमनी तवे हेथा केन आसिले ॥२१॥

तोमाय भुलिब केमने ।
हृदय अंकित छवि अति यतने ॥

दिवा निशि मुख देखि हृदय आदरे राखि,
प्रान सदा एई वासना मने ॥२२॥

एक बार भाव ओरे मन ।
शेषेर से दिन तव निकट एखन ॥
दिन दिन हीन बल मन हएछे दुर्बल,
रोगेर अति प्रबल भये भीत हएछे जीवन ॥२३॥

एतेक जीवने केन मरन वासना ।
बुझि कपालेर दोषे बिधिर विड़म्बना ॥
केन रे अबोध मन कर कामना एमन,
से दुःख तव कारन बुझि ताहा जान न ॥२४॥

एखनि एमन हबे स्वपने छिल ना ज्ञान ।
ना होते मिलने सुखि आगे ते जाइबे प्रान ॥
जन्म जन्मान्तरे जेन पाई प्राननाथ हेन ।
विधिर काछे एई मोर शेष अकिचन ॥२५॥

किछु सुख होलो जीवने ।
प्राननाथ भुलाएछे सेई नवीने ॥
आमार अभाव काले बिरह बेदना ज्वाले,
आघात हबे ना तार कोमल हृदय-
स्थाने एई भेवे सुखमने ॥२६॥

नव प्रेमे प्रेमी होते कर वासना ।
बल बल ओरे प्रान मोरे बल ना ॥
एई प्रेमे प्रेमी होले मम चिन्ता जाबे चले,
ईहा तेई जाबे मोर हृदि-बेदना ॥

तोमाय पाव जन्मान्तरे एई आशा हृदे कोरे।
प्रान जावे आर जावे हृदि जातना ।।२७।।

सेई जे आमाय तोमाय छिल कथा मने आछे कि ना आछे वल ।
सेई जे छिल जत भाल वासा मने आछे कि ना आछे वल ।।
कत कत छिल मने आशा कत छिल हृदे भालो वासा ।
शेपे होलो आशाय नैराशा मने आछे कि ना आछे वल ।।
सेई जे प्रेम प्रेम करि कइते कथा से प्रेम रईल एखन कोथा ।
हृदये द्रिए छ कतेक व्यथा मने आछे कि ना आछे वल ।।
तुमि हे कि कछु किछुई जान ना मम मने आछे सव वेदना ।
आमि हृदये पेयेछि व्यथा नाना मने आछे कि ना आछे वल ।।
दिए छिल-तक 'चन्द्रिका' वाधा ओहे चन्द्र, तव प्रेमे वाधा ।
आछे मन प्रान सव साधा मने आछे कि ना आछे वल ।।२८।।

हेरिव सतत सखी कालई वरन ।
मने पड़े जेन सदा से नील रतन ।।
मृगमद दिन सिरे कज्जल नयन तीरे,
नित्य नील वर्ण चीरे आच्छादित तन ।
'हरिश्चन्द्र' मुख सदा कृष्ण नामे आछे साधा,
से पेमे अंतर वाधा कृष्ण पदे आछे मन ।।२९।।

जाओ ओहे गुनमनि ए कि काज करिले ।
आमार प्रानेर छवि काड़िते वसिले ।।
ममाधिक प्रान-प्रिय के आछे तोमार प्रिय ।
आमार भाल वासा छवि कारे दिते निए छिले ।।
'चन्द्रिका' वले वल ना केन करहे छलना ।
रक्षित छवि ते मम तुमि केन हाथ दिले ।।३०।।

राखो हे प्रानेश ए प्रेम करिया जतन ।
तोमाय करेछि समर्पन ॥
जत दिन रबे प्रान श्रीचरने दिओ स्थान,
हरिश्चन्द्र प्रान-धन एई अकिंचन ।
'चन्द्रिका'-हृदय-धन नाहिक तोमा विहन,
तव करे ते आपने करेछि जीवन मन ॥३१॥

थाकिते जीवन मन नाथ ए कि करिले ।
आमार आशार प्रेम कारे तुमि दान दिले ॥
'चन्द्रिका' हृदय-मन तव करे समर्पन ।
तार हृदि हरिधन कारे प्राण दिते निले ॥३२॥

आमाय भालो बेशे आर तोमार काज नाई ।
तुमि अन्य प्रान ज्वले आमाय भालो बास बोले ॥
सदा भासि आँखि जले हृदे नाना दुःख पाई ।
विदाय दाओ गुनमनी सजव एबे सन्यासिनी ॥
हब नाथ विदेशिनी सुख पथे दिया छाई ।
हरिश्चन्द्र प्रान-धन 'चन्द्रिकार' निवेदन,
बासना एमन मन विदेशे ते प्रान जाई ॥३३॥

ए प्रेम राखिते केन करिछ जतनो रे ।
सेई प्रेम राखा गिया जथा बाँधा मनो रे ॥
सेई विनोदिनी धनि तुमि तार प्रेमे रिणी,
बाँधा आछो गुनमनि ताहारई प्रेम-डोरे ।
छाड़ो एई प्रेम आशा जाना गेल भालो वासा,
हृदय सब नैराशा 'चन्द्रिकार' एखनो रे ॥३४॥

मिछा केन दिते आश प्रेमेर परिचय ।
सतिनेर छवि आँकि आपन हृदये ॥
प्रेम कथा वलि प्रान कोरो ना आर जालातन,
राख गिया प्रानधन ताहार जा आज्ञा हय ।
हरिश्चन्द्र प्रान-पति तुमिरे निर्दय अति,
'चन्द्रिकार' नाहे गति जानिनु निश्चय ॥३५॥

आज आमार होलो सुप्रभात ।
नवीन वत्सरे पद दिल प्राननाथ ॥
ओ वत्सरे दिन हेन विधि पुनः देन जेन ।
धरे ए वासना मन पूर्ण करे जगन्नाथ ॥३५॥

आज किवा सुखि होलो जीवन ।
वेचे छिले ताई जीवन पाईले दिन एमन ॥
प्राननाथेर जन्म दिन दिल दरसन ।
देख 'चन्द्रिकार' आज किवा सुख हृदि माझे,
आनन्देर आज साज सेजे छे मन ॥३७॥

कि आनन्देर दिन आज हेरिनु नयने ।
इहार समान दिन नहिक ए भुवने ॥
हरिश्चन्द्र प्रानपति आज तारे जन्म-तिथि,
विधि सुख दिल अति आजि 'चन्द्रिका' मने ॥३८॥

एई दिन पुनः हेरि मने वासना ।
नवीन वत्सरे आइ पद दिले हृदिराज,
तारे सुखे राखुन प्रभु एई कामना ॥
पुन' एई दिन हेरी एकान्त वासना करी,
'चन्द्रिका' हृदय आज सुख उपजिल नाना ॥३९॥

सब्र की फौज के पा उठ गए दिल हार गया ।
आँख तूने जो लड़ाई मेरा जी जानता है ॥
ख्वाब सा हो गया शब को तेरी सुहबत का खयाल ।
रात वह फेर न आई मेरा जी जानता है ॥
दाग दिल पर य रहेगा कि तेरे कूचे तक ।
थी 'रसा' की न रसाई मेरा जी जानता है ॥१॥

दिल मेरा ले गया दगा करके ।
बेवफा हो गया वफा करके ॥
हिज्र की शब घटा ही दी हमने ।
दास्ताँ जुल्फ की बढ़ा करके ॥
शुअलारू कह तो क्या मिला तुझको ।
दिलजलों को जला जला करके ॥
वक्ते रेहलत जो आए बाली पर ।
खूब रोए गले लगा करके ॥
सर्व कामत गजब की चाल से तुम ।
क्यो कयामत चले बपा करके ॥
खुद बखुद आज जो वो बुत आया ।
मैं भी दौड़ा खुदा खुदा करके ॥
क्यो न दावा करे मसीहा का ।
मुर्दे ठोकर से वह जिला करके ॥
क्या हुआ यार छिप गया किस तर्फ ।
इक झलक सी मुझे दिखा करके ॥
दोस्तो कौन मेरी तुरबत पर ।
रो रहा है 'रसा रसा' कर के ॥ २ ॥

उत्तरार्द्ध भक्तमाल

हरिश्चंद्रचंद्रिका सन् १८७६–१८७७ ई० मे
प्रकाशित
कवि-वचनसुधा २७-३-१८७६ मे सूचना
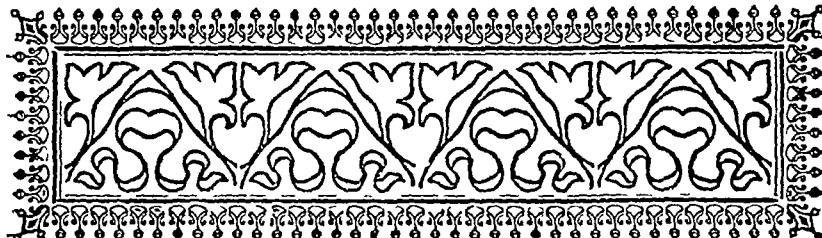
उत्तरार्द्ध भक्तमाल

दोहा

राधावल्लभ वल्लभी वल्लभ वल्लभताइ ।
चार नाम वपु एक पद बंदत सीस नवाइ ॥ १ ॥
ह्वै प्रतच्छ वसि गृह निकट दियो प्रेम को दान ।
जय जय जय हरि मधुर वपु गुरु रस-रीति-निधान ॥ २ ॥
जग के विषय छुड़ाइ सब सुद्ध प्रेम दिखराइ ।
बसे दूर ह्वै सहज पुनि, जै जै जादवराइ ॥ ३ ॥
धन जन हरि निहचिन्त करि, फिर डार्यौ भव-जाल ।
सोचि जुगति कछु मोहि जिन जै जै सो नँदलाल ॥ ४ ॥
कछु गीता मैं भाखि कै शुक ह्वै करुना धारि ।
कही भागवत मैं प्रगट प्रेम-रीति निरुवारि ॥ ५ ॥
पुनि बल्लभ ह्वै सो कही कबहूँ कही जु नाहि ।
शुद्ध प्रेम-रस-रीति सब निज ग्रंथन के माहि ॥ ६ ॥
वंश रूप करि कै द्विविध थापी पुनि जग सोय ।
अब लौ जाके लेस सो पामर प्रेमी होय ॥ ७ ॥
व्यास कृष्ण चैतन्य हरि दास सु हित हरिवंस ।
विविध गुप्त रस पुनि कहे धरि वपु परम प्रसंस ॥ ८ ॥

भाँति भाँति अनुभव सरस जिन दिखरायो आप।
अधमहुँ को सो नित जयति समन समन पुर दाप ॥ ९ ॥
अतिहि अघी अति हीन निज अपराधी लखि दीन।
जदपि छमा के जोग नहि तऊ दया अति कीन ॥१०॥
छत्रानी सों यों कह्यौ या कहँ जानहु संत।
अहो कृपाल कृपालुता तुमरी को नहि अंत ॥११॥
ज्वर-तापित हिय मे प्रगट जुगल हँसत आसीन।
स्वर्ण सिहासन पर लिए कर जुग कंज नवीन ॥१२॥
अगिनि वरत चारहुँ दिसा पै मधि सीतल नीर।
ताहि उजारत चरन सों देत दास कहँ धीर ॥१३॥
बहु नट वपु ह्वै आपुही कसरत करत अनेक।
कबहूँ पौढ़े महल मै तानि झीन पट एक ॥१४॥
कबहुँ सेत पाखान की कोच जुगल छवि धाम।
बैठे बाग बहार मै गल भुज दिए ललाम ॥१५॥
साँझ समय आरति करत सब मिलि गोपी ग्वाल।
कबहुँ अकेले ही मिलत पिय नँदलाल दयाल ॥१६॥
कबहुँ गौर दुति बाल बपु रजत अभूषन अंग।
पंच नदी पौसाक तन धरे किए सोइ ढंग ॥१७॥
कबहुँ जुगल आवत चले साँझ समय बरसात।
कै बसंत जँह हरित धर चारहु ओर दिखात ॥१८॥
देखि दीन भुव मै लुठत फूल-छरी सिर मारि।
हँसत परसपर रस भरे जिय अति दया विचारि ॥१९॥
कबहुँ प्रगट कबहूँ सुपन कबहुँ अचेतन माहि।
निज जय दृढ़ता हेत जो बारम्बार दिखाहि ॥२०॥
होत बिमुख रोकत तुरत करत बिबिध उपदेस।
जै जै जै हरि-राधिका बितरन नेह बिसेस ॥२१॥

मायावाद-मतंग-मद हरत गरजि हरि-नाम ।
जयति कोऊ सो केसरी बृंदाबन बन धाम ॥२२॥
तम-पाखंडहि हरत करि जन-मन-जलज बिकास ।
जयति अलौकिक रवि कोऊ, श्रुति-पथ करन प्रकास ॥२३॥

अथ परम्परा

तन्नमामि निज परम गुरु कृष्ण कमल-दल-नैन ।
जाको मत श्री राधिका नाम जपत दिन रैन ॥२४॥
श्रीगोपीजन पद जुगल बंदत करि पुनि नेम ।
जिन जग मैं प्रगटित कियो परम गुप्त रस प्रेम ॥२५॥
श्रीशिव-पद निज जानि गुरु वंदत प्रेम-प्रमान ।
परम गुप्त निज प्रगट किय भक्ति-पंथ अभिधान ॥२६॥
वंदौं श्री नारद-चरन भव पारद अभिराम ।
परम बिसारद कृष्ण-गुन-गान सदा गतकाम ॥२७॥
पुनि बंदत श्री व्यास-पद वेद-भाग जिन कीन ।
कृष्ण तत्व को ज्ञान सब सूत्र विरचि कहि दीन ॥२८॥
बंदत श्री शुकदेव जिन सोध प्रेम को पंथ ।
हमसे कलि-मल ग्रसित-हित कह्यो भागवत ग्रंथ ॥२९॥
विष्णुस्वामि-पद जुगल पुनि प्रनवत बारम्बार ।
जिन प्रगटायो प्रेम-पथ बहत जानि संसार ॥३०॥
गोपीनाथ अरंभि जै देवादिक मध थामि ।
विल्वमँगल लौं सप्त सत गुरु-अवली प्रनमामि ॥३१॥
नमो विल्वमंगल-चरन भक्ति-बीज उत्कर्ष ।
सूक्ष्म रूप सो तरु रहे जो अनेक सत वर्ष ॥३२॥
यह मारग डूबत निरखि जिन प्रगटायो रूप ।
नमो नमो गुरुवर-चरन श्री वल्लभ द्विजभूप ॥३३॥

जुगल सुअन तिनके तनय जिनहिं आठ निरधारि ।
भक्ति रूप दसधा प्रगट बंदत तिनहिं बिचारि ॥३४॥
एक भक्ति के दान हित थापित परम प्रसंस ।
भयो अहै अरु होइगो जै श्री वल्लभ वंस ॥३५॥
प्रगट न प्रेम प्रभाव नित नासन सोग कुरोग ।
जै जै जग-आरति-हरन विदित वल्लभी लोग ॥३६॥
जे प्रेमी-जन कोउ पथ हरि-पद नित अनुरक्त ।
बंदत तिनके चरन हम करहु कृपा सब भक्त ॥३७॥

अथ उपक्रम

नाभा जी महराज ने भक्तमाल रस जाल ।
आलबाल हरि-प्रेम की बिरची होइ दयाल ॥३८॥
ता पाछें अब लौं भए जे हरि-पद-रत-संत ।
तिनके जस बरनन करत सोइ हरि कहँ अति कंत ॥३९॥
कबहूँ कबहुँ प्रसंग-बस फिर सो प्रेमी नाम ।
ऐहैं या नव ग्रंथ मैं पूरब-कथित ललाम ॥४०॥
भक्तमाल जो ग्रंथ है नाभा-रचित विचित्र ।
ताही को एहि जानियो उत्तर भाग पवित्र ॥४१॥
भकृत-माल उत्तर-अरध याही सों सुभ नाम ।
गुथी प्रेम की डोर मैं सन्त-रतन अभिराम ॥४२॥
नव माला हरि-गल दई नाभा जी रचि जौन ।
दुगुन आजु करि कृष्ण कों पहिरावत हौं तौन ॥४३॥
लिखे कृष्ण-हिय मै सदा जदपि नवल कोउ नाहि ।
नाम धाम हरि-भक्त के आदि समय हू माँहि ॥४४॥
तदपि सदा निज प्रेम-पथ दीपक प्रगटन काज ।
समय समय पठवत अवनि निज भक्तन ब्रजराज ॥४५॥

ताही सों जब आवही भुव तव जानहिं लोग ।
भक्त नाम गुन आदि सब नासन भव-भय-रोग ॥४६॥
तिनहीं भक्त-दयाल की परम दया बल पाइ ।
तिनको चरित पवित्र यह कहत अहौं कछु गाइ ॥४७॥

स्ववंश-वर्णन

वैश्य अग्रकुल मैं प्रगट बालकृष्ण कुल-पाल ।
ता सुत गिरिधर-चरन-रत वर गिरधारीलाल ॥४८॥
अमींचंद तिनके तनय फतेचंद ता नंद ।
हरखचंद जिनके भए निज कुल-सागर-चंद ॥४९॥
श्री गिरिधर गुरु सेइ कै घर सेवा पधराइ ।
तारे निज कुल जीव सब हरि-पद भक्ति दृढ़ाइ ॥५०॥
तिनके सुत गोपाल-ससि प्रगटित गिरिधरदास ।
कठिन करम-गति मेटि जिन कीनी भक्ति प्रकास ॥५१॥
मेटि देव-देवी सकल छोड़ि कठिन कुल-रीति ।
थाप्यौ गृह मैं प्रेम जिन प्रगटि कृष्ण-पद-प्रीति ॥५२॥
पारबती की कूख सों तिनसों प्रगट अमंद ।
गोकुलचन्द्राग्रज भयो भक्त दास हरिचन्द ॥५३॥
तिन श्री वल्लभ वर कृपा बिरची माल बनाइ ।
रही जौन हरिकंठ मैं नित नव ह्वै लपटाइ ॥५४॥
लहिहै भक्त अनंद अति, ह्वैहै पतित पवित्र ।
पढ़ि पढ़ि कै हरि-भक्त को चित्र विचित्र चरित्र ॥५५॥

श्री विष्णु स्वामि संसार मैं प्रगट राजसेवा करी ।
श्री शुक सो लहि ज्ञान आंध्र भुव पावन कीनी ॥
नृप-प्रधानता जगत-जाल गुनि कै तजि दीनी ।
हठ करि हरि कों अपुने कर नित भोग लगायो ॥

भक्ति-प्रचारन द्विविध वंश भुव माहि चलायो।
जग मैं अनेक सत बरस बसि नाम दान भुव उद्धरी।
श्री विष्णु स्वामि संसार मैं प्रगट राजसेवा करी ॥५६॥

श्री निम्बादित्य सरूप धरि आपु तुंग विद्या भई।
द्राविड़ भुव मैं अरुण गेह द्विज ह्वै प्रगटाए॥
तम पखंड दलमलन सुदर्सन बपु कहवाए।
सकल वेद को सार कह्यौ दस ही छंदन महँ॥
शुक-मुख सो भागवत सुनी नृप देवरात जहँ।
बनि अरक बृच्छ चढ़ि दरस दै अतिथि संक सब हरि लई।
श्री निम्बादित्य सरूप धरि आपु तुंग विद्या भई ॥५७॥

मायावादी घननाद मद रामानुज मर्द्दन कियो।
अगनित तम पाखंड प्रगट ह्वै धूरि मिलायो॥
बीर बनक सो सुदृढ़ भक्ति को पंथ चलायो।
वादी-गनन प्रतच्छ सेस बनि दरसन दीनो॥
गुरु को चार मनोरथ पन करि पूरन कीनो।
जा सरन जाइ निरद्वंद ह्वै जीव नरक-भय तजि जियो।
मायावादी घननाद मद रामानुज मर्द्दन कियो ॥५८॥

दृढ़ भेद भगति जग मैं करन मध्व अचारज भुव प्रगट।
प्रथम शास्त्र पढ़ि सकल अरंभन खंडन ठान्यौ॥
द्वैतवाद प्रगटाइ दास-भावहि दृढ़ मान्यौ।
थापि देव गोपाल धरनि निज विजय प्रचार्‍यौ॥
मतिमंडित पंडितगन-बल खंडित करि डार्‍यौ।
दै संख चक्र की छाप भुज दई मुक्ति सारूप्य झट।
दृढ़ भेद भगति जग मै करन मध्व अचारज भुव प्रगट ॥५९॥

श्री विष्णु स्वामि-पथ-उद्धरन जै जै वल्लभ राजवर ।
तिलँग वंस द्विजराज उदित पावन वसुधा-तल ।।
भारद्वाज सुगोत्र यजुर साखा तैत्तिर कल ।
यज्ञनरायन कुलमनि लक्ष्मनभट्ट-तनूभव ।।
इल्लमगारू-गर्भ-रत्नसम श्रीलक्ष्मी धव ।
श्री गोपनाथ-विट्ठल-पिता भाष्यादिक वहु ग्रंथकर ।
श्री विष्णु स्वामि-पथ-उद्धरन जै जै वल्लभ राजवर ।।६०।।

निज प्रेम-पंथ सिद्धांत हरि विट्ठल वपु धरि कै कह्यौ ।
श्री श्री वल्लभ-सुअन विप्रकुल-तिलक जगत-वर ।।
माया - मत - तम - तोम - विमर्दन ग्रीष्म - दिवाकर ।
जन-चकोर हित-चंद भक्ति-पथ भुव प्रगटावन ।।
अंतरंग सखि-भाव स्वामिनी-दास्य दृढ़ावन ।
दैवी-जन मिलि अवलंव हित इक जा पद दृढ़ करि गह्यौ ।
निज प्रेम-पंथ सिद्धांत हरि विट्ठल वपु धरि कै कह्यौ ।।६१।।

निज फलित प्रफुल्लित जगत मैं जय वल्लभ-कुल-कलपतर ।
गुरुवर गोपीनाथ प्रगट पुरुषोत्तम प्यारे ।।
श्री गिरिधर गोविंद राय रुक्मिनी दुलारे ।
वालकृष्ण श्री वल्लभ माला विजय प्रकासन ।।
श्री रघुपति जदुनाथ स्याम-घन भव-भय-नासन ।
मुरलीधर दामोदर सुकल्यानराय आदिक कुँवर ।
निज फलित प्रफुल्लित जगत मैं जय वल्लभ-कुल-कलपतर।।६२।।

जग कठिन स्रृंखला सिथिल कर प्रगटि प्रेम चैतन्य को ।
श्री गोपीजन-सम हरि-हित सब सों मुख मोर्‍यौ ।।
लोक-लाज भव-जाल सकल तिनुका सो तोर्‍यौ ।
वेद-सार हरिनाम दान करि प्रगट चलायो ।।

अनुदिन हरि-रस निरतत जुग दृग नीर बहायो।
नित मत्त कृष्ण मधुपान करि सपनेहु ध्यान न अन्य को।
जग कठिन सृंखला सिथिल कर प्रगटि प्रेम चैतन्य को ॥६३॥

ये मध्व संप्रदा के परम प्रेमी पंडित जग-विदित।
बिजय-ध्वज अति निपुन बहुत बादी जिन जीते॥
माधवेन्द्र नरसिंह भारती हरि-पद प्रीते।
ईश्वरपुरी प्रकाशभट्ट रघुनाथ अचारज॥
त्रिपुर गङ्ग श्रीजीव प्रबोधानन्द सु आरज।
अद्वैत सुनित्यानन्द प्रभु प्रेम-सूर-ससि से उदित।
ये मध्व संप्रदा के परम प्रेमी पंडित जग-विदित ॥६४॥

जान्यौ वृंदाबन रूप हरिदास ब्यास हरिवंस मिलि।
निम्बारक मत बिदित प्रेम को सारहि जान्यौ॥
जुगल-केलि-रस-रीति भले करि इन पहिचान्यौ।
सखी-भाव अति चाव महल के नित अधिकारी॥
पियहू सों बढ़ि हेत करत जिन पैं निज प्यारी।
जग दान चलायो भक्ति को ब्रज-सरवर-जल जलज खिलि।
जान्यौ वृंदाबन रूप हरिदास ब्यास हरिवंस मिलि ॥६५॥

ये वृंदाबन के संत सब जुगल भाव के रँग रँगे।
मौनीदास गुविन्ददास निम्बार्कसरन जू॥
ललितमोहनी चतुरमोहनी आसकरन जू।
सखी - चरन राधाप्रसाद गोवर्द्धन देवा॥
कंवल ललित गरीबदास भीमा सखि - सेवा।
श्री वल्लभदास अनन्य लघु विट्ठल मोहन रस पगे।
ये वृंदाबन के संत सब जुगल भाव के रँग रँगे ॥६६॥

रघुनाथ-सुअन पंडित-रतन श्री देवकिनन्दन प्रगट ।
किय रसाब्धि नव काव्य कृष्ण-रस रास मनोहर ॥
श्री गोकुल-ससि सेइ लहे अनुभव बहु सुंदर ।
पिता पितामह प्रपितामह की पंडितताई ॥
भक्ति रीति हरि प्रीति भलें करि आपु निभाई ।
जानकी-उदर-अंबुधि-रतन पितु-गुन जिन मैं विदित खट ।
रघुनाथ-सुअन पंडित-रतन श्री देवकिनन्दन प्रगट ॥६७॥

पीताम्बर-सुत विद्या-निपुन पुरुषोत्तम वादीन्द्रजित ।
श्री वल्लभ पाछे बुधि-बल आचार्ज कहाए ॥
निरनय वाद-विवाद अनेकन ग्रंथ बनाए ।
गाड़ा पैं धुज रोपि जयति वल्लभ लिखि तापर ॥
ग्रंथ साथ सब लिए फिरे जीतत चहुँ दिसि धर ।
श्री बालकृष्ण-सेवा-निरत निज बल प्रगटायो अमित ।
पीताम्बर-सुत विद्या-निपुन पुरुषोत्तम वादीन्द्रजित ॥६८॥

श्री द्वारकेश व्रजपति व्रजाधीश भए निज कुल-कमल ।
सेवा भाव अनेक गुप्त इन प्रगट दिखाए ॥
श्री युगल नित्य रस-रास कीरतन बहुत बनाए ।
शुद्ध पुष्टि अनुभवत उच्छलित रस हिय माही ॥
सपनेहु जिनकी वृत्ति कबहुँ लौकिक-मय नाही ।
श्री वल्लभ को सिद्धांत सब थित जिनके चित नित विमल ।
श्री द्वारकेश व्रजपति व्रजाधीश भए निज कुल-कमल ॥६९॥

श्री श्री हरिराय स्व-भक्ति-बल नाथहि फिर बोलवाइयो ।
रसिक नाम सौ ग्रंथ रचे भाषा के भारे ।
नाम राखि हरिदास तथा संस्कृत के न्यारे ॥
परम गुप्त रस प्रगट बिरह अनुभव जिन कीनो ।

सेवा महँ सब त्यागि सदा हरि के चित दीनो ॥
हरि-इच्छा लखि बिनु समयहू मंदिर इन खुलवाइयो ।
श्री श्री हरिराय स्व-भक्ति-बल नाथहि फिर बोलवाइयो ॥७०॥

जो अनुभव श्री विट्ठल कियो सोइ दाऊ जी मैं उघट ।
सात सरूपहि फिर श्री जी पासहि पधराए ।
पहिले ही की भाँति अन्नकुट भोग लगाए ॥
सब रितु उच्छव प्रगट एक रितु माहि दिखाए ।
हून परस करि सो कर फिर नहि प्रभुहि छुवाए ॥
करि लाखन व्यय सेवा करी किय गोकुल मेवाड़ अट ।
जो अनुभव श्री विट्ठल कियो सोइ दाऊ जी मै उघट ॥७१॥

लखि कठिन काल फिर आपुही आचारज गिरिधर भए ।
बालकपन खेलत ही मैं पाखान तरायो ।
बादी दक्षिण जीति पंथ निज सुदृढ़ दृढ़ायो ॥
श्री मुकुन्द भव-दुन्द-हरन काशी पधराए ।
थापी कुल-मरजादा अनुभव प्रगट दिखाए ॥
पूरे करि ग्रंथ अनेक पुनि आपहु बहु बिरचे नए ।
लखि कठिन काल फिर आपुही आचारज गिरिधर भए ॥७२॥

बारानसि प्रगट प्रभाव श्री स्यामा बेटी को भयो ।
श्री गिरिधर की सुता सतोगुन-मय सब अंगा ।
हरि-सेवा मैं चतुर पतित-पावनि जिमि गंगा ॥
खट ऋतु छप्पन भोग मनोरथ करि मन-भायो ।
वृंदाबन को अनुभव कासी प्रगटि दिखायो ॥
थिर थापी करि सब रीति निज सुजस दसहु दिसि मै छयो ।
बारानसि प्रगट प्रभाव श्री स्यामा बेटी को भयो ॥७३॥

ये वल्लभ कुल के रत्न-मनि बालक सब भुव मैं भए ।
मोम चिरैया रचि कै श्री रनछोर उड़ाई ।
पुरुषोत्तम प्रभु-पद रचि लीला ललित सुनाई ॥
बिट्ठलनाथ दयाल सतोगुन-मय बपु धारे ।
तैसेहि गोविंदलाल गोकुलाधीस पियारे ॥
जीवन जी जन-जीवन-करन बिबिध ग्रंथ बिरचे नए ।
ये वल्लभ कुल के रत्न-मनि बालक सब भुव मैं भए ॥७४॥

अघ-निकर सूर-कर सूर-पथ सूर सूर जग मैं उयो ।
वल्लभ सागर बिट्ठल जाहि जहाज बखान्यौ ।
जग-कवि-कुल-मद हर्‌यौ प्रेम नीके पहिचान्यौ ॥
एक वृत्ति नित सवा लाख हरि-पद रचि गाए ।
श्री बल्लभ बल्लभ अभेद करि प्रगट जनाए ॥
जा पद-बल अब लौं नर सकल गाइ गाइ हरि गुनि जियो ।
अघ-निकर सूर-कर सूर-पथ सूर सूर जग मैं उयो ॥७५॥

श्री कुंभनदास कृपाल अति मूरति धारे प्रेम मनु ।
राधा-माधव बिनु कोउ पद जिन कबहुँ न गायो ।
बिरह-रीति हरि-प्रीति-पंथ करि प्रगट दिखायो ॥
सुनत कृष्ण को नाम स्रवन हियरो भरि आवत ।
प्रेम-मगन नित नव पद रचि हरि सनमुख गावत ॥
श्री वल्लभ-गुरुपद-जुग-पदुम प्रगट सरस मकरंद जनु ।
श्री कुंभनदास कृपाल अति मूरति धारे प्रेम मनु ॥७६॥

परमानँददास उदार अति परमानँद ब्रज बसि लह्यो ।
हिय हरि-रस उच्छलित निरखि गुरु कर धरि रोक्यौ ।
जिनके दृग जुग जुगल रूप रसिकन अवलोक्यौ ॥
लाखन पद रचि कहे बिरह व्यापी अनुछिन गति ।

सखी सखा वात्सल्य महातम भाव सिद्ध श्रुति ॥
श्री वल्लभ प्रभु-पद प्रेम सो जागरूक जग जस लह्यौ ।
परमानँददास उदार अति परमानँद ब्रज बसि लह्यौ ॥७७॥

श्री कृष्णदास अधिकार करि कृष्ण-दास्य अधिकार लह ।
अंतरंग हरि-सखा स्वामिनी के एकंगी ।
जासु गान मुनि नचत मुदित ह्वै ललित तृभंगी ॥
जगत प्रीति अभिमान द्वेष हरि को अपनावन ।
इनके गुन औगुन प्रगटे तनहू तजि पावन ॥
नव बार-बधू हरि भेट करि बल्लभ-पद कर सुदृढ़ गह ।
श्री कृष्णदास अधिकार करि कृष्ण-दास्य अधिकार लह ॥७८॥

गोविंद स्वामी श्रीदाम-वपु सखा अंतरंगी भए ।
हरि सँग खेलत फिरत तुरग बनि कबहूँ धावत ।
भूख लगत बन छाक लेन तब इनहिं पठावत ॥
अनुछिन साथहि रहत केलि परतच्छ निहारत ।
गाइ रिझावत हरिहि प्रेम जग में बिस्तारत ॥
द्वै सै बावन पद जुगल रस-केलि-मए बिरचे नए ।
गोविंद स्वामी श्रीदाम-वपु सखा अंतरंगी भए ॥७९॥

श्री नंददास रस-रास-रत प्रान तज्यौ सुधि सो करत ।
तुलसिदास के अनुज सदा बिट्ठल-पद-चारी ।
अंतरंग हरि-सखा नित्य जेहि प्रिय गिरिधारी ॥
भाषा मैं भागवत रची अति सरस सुहाई ।
गुरु आगे द्विज कथन सुनत जल माहिं डुबाई ॥
पंचाध्यायी हठि करि रखी तब गुरुवर द्विज भय हरत ।
श्री नंददास रस-रास-रत प्रान तज्यौ सुधि सो करत ॥८०॥

श्री दास चतुर्भुज तोक बपु सख्य दास्य दोऊ निरत ।
निज मुख कुंभनदास पुत्र पूरो जेहि भाख्यौ ।
गाइ गाइ पद नवल कृष्ण-रस नित जिन चाख्यौ ।।
बिछुरि बिरह अनुभयो संग रहि जुगल केलि रस ।
सब छिन सोइ रँग रँगे बल्लभी-जन के सरवस ।।
सेयो श्री बिट्ठल भाव करि जगत-वासना सो विरत ।
श्री दास चतुर्भुज तोक बपु सख्य दास्य दोऊ निरत ।।८१।।

श्री छीत स्वामि हरि और गुरु प्रगट एक करि कै लखे ।
गुरुहि परिच्छन हेत प्रथम सनमुख जब आए ।
पोलो नरियर खोटो रुपया भेट चढ़ाए ।।
श्री बिट्ठल तेहि साँचो किय लखि अचरज धारी ।
शरन गए कहि छमहु नाथ यह चूक हमारी ।।
पद बिरचि सेइ श्रीनाथ कहँ विविध गुप्त अनुभव चखे ।
श्री छीत स्वामि हरि और गुरु प्रगट एक करि कै लखे ।।८२।।

चौरासी परसंग मै मम आयसु धरि सीस ।
छंद रचे ब्रजचंद कछु सुमिरि गोकुलाधीस ।।

अथ चौरासी वैष्णव प्रसंग

दामोदरदास दयाल भे सूत्र रूप यह माल के ।
जिन कहँ श्री प्रभु* कह्यौ कियो तेरे हित मारग ।
एक मात्र ये रहे रहस्यन के नित पारग ।।
वल्लभ पथ के खंभ समर्पन प्रथम किये जिन ।
अनुदिन छाया सरिस संग रहि भेद लहे इन ।।

* चौरासी वार्त्ता प्रसंग मे प्रभु शब्द से श्री महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य जी का नाम जानना ।

रहिहैं जब लौं भुव पंथ यह अंतरंग नँदलाल के ।
दामोदरदास दयाल भे सूत्र रूप यह माल के ॥८३॥

दृढ़ दास्य परम बिस्वास के कृष्ण-दास मेघन भये ।
जब गुरु बल्लभ वेदव्यास-ढिग मिलन पधारे ।
तीनि दिवस लौं जल बिनु ठाढ़े रहे दुआरे ॥
निसि मैं गंगा तरि गुरु के हित चूड़ा लाए ।
करि प्रसन्न श्री प्रभुहि परम उत्तम बर पाए ॥
गिरि-सिला हाथ रोकी गिरत भूमि-परिक्रम सँग गये ।
दृढ़ दास्य परम बिस्वास के कृष्णदास मेघन भये ॥८४॥

दामोदरदास कनौज के सँभलवार खत्री रहे ।
हरि सेयो तजि लाज सबै भय लीक मिटाई ।
नारी सिर घट धारि प्रगट गागरी भराई ॥
तृन सम धन के मोह तजे सेवा हित धारी ।
अन्याश्रय को त्याग सदा भक्तन हितकारी ॥
नित सेवत मथुरानाथ को प्रकट संप्रदा फल लहे ।
दामोदरदास कनौज के सँभलवार खत्री रहे ॥८५॥

पद्मनाभदास कन्नौज कों श्री मथुरानाथ न तजे ।
नाम दान लै व्यास वृत्त प्रभु रुष लै त्यागी ।
भीपौ अनुचित जानि पुष्टि मारग अनुरागी ॥
कौड़ी लकड़ी बेचि भागवत कृत निरवाहे ।
छोला ही तें तोषि इष्ट ऐश्वर्ज न चाहे ॥
सर्वज्ञ भक्त अरु दीन-हित जानि एक कृष्णहि भजे ।
पद्मनाभदास कन्नौज को श्री मथुरानाथ न तजे ॥८६॥

तनया पद्मनाभ-दास की तुलसा वैष्णव रुचि रपी ।
सषड़ी महाप्रसाद जाति-भय भगत न लीनी ।
जिय मे यही विचारि वैष्णवी पूरी कीनी ॥
पै दोउन को श्री मथुरापति कही सपन मे ।
सषड़िहि महाप्रसाद जाति-भय करौ न मन मे ॥
श्री गोस्वामी हू मुदित भे सानुभावता अति लपी ।
तनया पद्मनाभ-दास की तुलसा वैष्णव रुचि रपी ॥८७॥

पद्मनाभदास की वहू की ग्लानि गई सब जीय की ।
लिख्यौ कुष्ट-विरतांत महाप्रभु निकट पठायो ।
सेवक दुख सुनि कै प्रभुहू कछु जिय दुख पायो ॥
दृढ़ विश्वास सुहेत दई अज्ञा प्रभु सेवहु ।
वर पुरुषोत्तमदास कथा को समझ्यौ भेवहु ॥
सेवत ही चारहि मास के भई पूर्व्व गति पीय की ।
पद्मनाभदास की वहू की ग्लानि गई सब जीय की ॥ ८८ ॥

नाती पद्मनाभदास के रघुनाथदास सास्त्री रहे ।
श्रीगोस्वामी - चरन - कमल बंदे गोकुल मै ।
पाई सुगम सुराह तिगुन-मय या वपु कुल मै ॥
श्री मथुरापति प्रगट भाव-बस बिहरत भूले ।
या कुल की मरजाद जान जापै अनुकूले ॥
परमानँद सोनी संग तें परम भागवत पद लहे ।
नाती पद्मनाभदास के रघुनाथदास सास्त्री रहे ॥८९॥

छत्रानी रजो अडेल की परम भागवत रूप ही ।
श्राद्ध लक्षमन भट्ट सरपि कछु थोरो हो तहँ ।
महाप्रभुन घृत हेत पठाए सेवक तेहि पहँ ॥

दिए नहीं बहु भाँति माँगि थकि पारिष लीने ।
इन ठाकुर घी देनो अति अनुचित दृढ़ कीने ।
स्राधहु दिन प्रभुहि जिवाँइ कै लोक मेटि हरि-गति लही ।
छत्रानी रजो अडेल की परम भागवत रूप ही ॥९०॥

पुरुपोत्तमदास सुसेठ-वर छत्री श्री काशी रहे ।
नाम दान सनमान जासु गिरजापति कीने ।
निसि दिन भैरौ द्वारपाल सिव सासन दीने ॥
अन्याश्रय गत विरज मदनमोहन अनुरागी ॥
महाप्रभुन की कृपापात्रता जिन सिर जागी ।
जिन घर नंदादिक कूप सों प्रगटि जनम उत्सव लहे ।
पुरुपोत्तमदास सुसेठ-वर छत्री श्री काशी रहे ॥९१॥

जाई पुरुपोत्तमदास की रुकमिनि मोहन-मदन-रत ।
गंगा-स्नानहु सों बढ़ि जिन सेवा गुनि लीनी ।
श्री गोस्वामी श्री मुख जासु बड़ाई कीनी ॥
गहन नहानी एक बार चौबीस बरष में ।
सेठौ सुनि भे मगन भजन सुख-सिंधु हरष मे ॥
सेवक स्वामी एकै अहैं यातैं नित एकतै रहत ।
जाई पुरुषोत्तमदास की रुकमिनि मोहन-मदन-रत ॥९२॥

गोपालदास तिन तनय कों सुमिरत श्री मोहन-मदन ।
भगवद् नामस्मरन हुँकारी प्रगट आप भर ।
श्री गोस्वामी श्री मुख जिनहि सराहत निरभर ॥
भगवद्-लीला सदा नित्त नव अनुभव करते ।
तिलक सुबोधनि पाठ कीरतन चित हित धरते ॥
पुरुषोत्तमदास सुबंस मे अति अनुपम अवतंस मन ।
गोपालदास तिन तनय कों सुमिरत श्री मोहन-मदन ॥९३॥

सारस्वत ब्राह्मण रामदास ठाकुर-हित चाकर भये।
देनो दियो चुकाइ जासु नवनीत पियारे।
श्री आचारज महाप्रभुन धनि धन्य उचारे।।
बाल-भाव निज इष्टहि सेवत बालक पाये।
सेवा मै बसु जाम लीन तन धन बिसराये।।
नित सकल काम-पूरन परम दृढ़ बिस्वास सरूप ये।
सारस्वत ब्राह्मण रामदास ठाकुर-हित चाकर भये।।९४।।

गदाधरदास द्विज सारस्वत अतिहि कठिन पन चित धरे।
जजमानाश्रय भोग मदन-मोहन के राषे।
जो आवै सो सकल तुरत अपने अभिलाषे।।
जा दिन नहि कछु मिलै छानि जल अर्पन करते।
भूषे ही रहि आप वैष्णवनि हित अनुसरते।।
सागौ स्वादित अति जासु घर भक्त भाव सो नहि टरे।
गदाधरदास द्विज सारस्वत अतिहि कठिन पन चित धरे।।९५।।

बेनीदास माधवदास दोउ श्री नवनीत-प्रिया निरत।
बेनीदास महान भागवत बड़े भ्रात हे।
विषई माधवदास अनुज पै नहि रिसात हे।।
बॉटि सकल धन भए बिलग कामिनि अनुकूले।
मुक्तमाल लिय मोल इष्ट हित आपुहि भूले।।
प्रगटे ठाकुर बोरन लगे भये विषय ते तब विरत।
बेनीदास माधवदास दोउ श्री नवनीत-प्रिया निरत।।९६।।

हरिवंस पाठक सारस्वत ब्राह्मण श्री कासी निवस।
द्वै दिन पटने रहे तहॉ हाकिम चित ऐसी।
अनुसरिहै हम तुरत करैं ये आज्ञा जैसी।।

सपने ठाकुर कही डोल झूलन हम चाहत।
हाकिम ते ह्वै बिदा तयारी करी बचन रत ॥
श्री काशी मे आए तुरत डोल झुलाए प्रेम-बस।
हरिवंस पाठक सारस्वत ब्राह्मण श्री कासी निवस ॥९७॥

गोविंददास भल्ला तज्यौ प्रानहु प्रिय निज इष्ट हित।
चारि भाग निज द्रव्य प्रभुन आज्ञा तें कीने।
एक भाग श्री नाथै इक निज गुरु कहँ दीने ॥
एक भाग दै तजी नारि एक आपुहि लीने।
सोउ वैष्णवन हेत कियो सब व्यय भय हीने ॥
तजि देव अंस गुरु अंस लहि सेवा केसवराय नित।
गोविददास भल्ला तज्यौ प्रानहु प्रिय निज इष्ट हित ॥९८॥

अम्मा पैं नित अनुकूल श्री बालकृष्ण ठाकुर प्रगट।
अम्मा बालक दोय ताहि करि प्यार पुकारै।
मरे एक के ता रोवत हरि दुख जिय धारै ॥
रोवत रोवत मरो सोऊ सुत बहु बिलाप कर।
श्री गोस्वामी समुझावन हित आये तेहि घर ॥
मंदिर को टेरा खोलि कै देषे पय पीवत निकट।
अम्मा पैं नित अनुकूल श्री बालकृष्ण ठाकुर प्रगट ॥९९॥

गंजन धावन छत्री हुते श्री नवनीत-प्रिया सुखद।
जिन बिन ठाकुर महाप्रभू घरहू नहि रहते।
जे ठाकुर बिन अतिहि दुसह दुख सहत न कहते ॥
छन बिछुरत इन देह दहत जर वे न अरोगत।
इन दोउन की प्रीति परसपर कौन कहि सकत ॥
सब भावहि बस नित ही रहे दिये जिनहि निज परम पद।
गंजन धावन छत्री हुते श्री नवनीत-प्रिया सुखद ॥१००॥

ब्रह्मचारि नरायनदास जू बसत महावन भजन-रत ।
धन कहँ गुन्यौ बिगार देखि निज सेज चहूँ कित ॥
दिय बोहारि फेकवाइ बहुरि लिपवायो हँसि हित ।
श्री गोकुल चन्द्रमा षीर खाई जिनके घर ॥
आरोगाई प्रभुन कही मति डरौ जाति-डर ।
तबही तै सपड़ी खीर नहि यहै रीति या पुष्टि मत ॥
ब्रह्मचारि, नरायनदास जू बसत महावन भजन रत ॥१०१॥

छत्रानी एक महावनहि सेवत नित नवनीत-प्रिय ।
पृथ्वि-परिक्रम करत महाप्रभु तहाँ पधारे ।
पाये श्रुति - सरवस्व आपने प्रान अधारे ॥
चार बेद के सार चार हरि विग्रह रूरे ।
आस पास ही बसन मनोरथ निज-जन पूरे ॥
तिन मै यह प्रेम-सुरंग रँगि रही धरे अति भक्ति हिय ।
छत्रानी एक महावनहि सेवत नित नवनीत-प्रिय ॥१०२॥

जियदास भजन-रत जाम चहुँ श्री लाडिले सुजान के ।
उभय तनय पुरुषोत्तमदास छबीलदास जिन ।
सेवा कीनी कछुक दिवस इन पै संतति बिन ॥
तिनके मामा कृष्णदास पुनि सेवा कीनी ।
तिन पीछे तिन मित्र सोई सेवा सिर लीनी ॥
तहुँ डेढ़ बरस रहि पुनि गए मंदिर निज प्रिय प्रान के ।
जियदास भजन-रत जाम चहुँ श्री लाडिले सुजान के॥१०३॥

श्री ललित त्रिभंगी लाल की सेवा देवा सिर रही ।
देवा पत्नी सहित सरस सेवा चित दीन्ही ।
तिनही लौ तहँ रहे ठाकुरौ भावहि चीन्ही ॥
रहे तनय तिन चारि लई नहिं तिनते सेवा ।

भाव-बस्य भगवान जासु कर्मादि कलेवा ॥
अंतरध्यान भे सु भौन तें निज इच्छा बिचरन मही ।
श्री ललित त्रिभंगी लाल की सेवा देवा सिर रही ॥१०४॥

रसिकाई दिनकरदास की कथा सुननि में अकथ ही ।
तुरतहि धावत सुनत महाप्रभु-कथा कहत अब ।
काचिहि लीटी पाइ लेत सुधि रहति न तन तब ॥
जानि कही प्रभु अति अनुचित तुम करी कथा-हित ।
भोग लगाइ प्रसाद पाइ अब तें ऐहौ नित ॥
येई श्रोता अब आजु तें श्री मुख यह आपै कही ।
रसिकाई दिनकरदास की कथा सुननि में अकथ ही ॥१०५॥

मुकुन्ददास कायस्थ हे जिन मुकुन्द-सागर किये ।
श्री आचारज महाप्रभुन-पद प्रीति जिनहि अति ।
याही ते प्रभु तिलक सुबोधनि भै तिन की मति ॥
निज मुख श्री भागवत कहै नहि सुनैं सु अपर मुष ।
कर्म सुभासुभ जनित पंडितनि सुलभ न वह सुष ॥
बरनाश्रम धर्मनि बंचकनि सहजहि मे इन ठगि लिये ।
मुकुन्ददास कायस्थ हे जिन मुकुन्द-सागर किये ॥१०६॥

छत्री प्रभुदास जलोटिया टका मुक्ति दै दधि लई ।
यह मारग अति बिषम कृष्ण चइतन्य सुनत ही ।
मुर्छित ह्वै ह्वै जाहि सु जिन कहँ सुलभ सुषद ही ॥
वृंदाबन प्रति बृच्छ पत्र ब्रज प्रगट दिखाये ।
अवगाहन नहि दीन प्रभुन परसाद पवाये ॥
सेवा श्री मोहन-मदन की जिनहि सावधानी दई ।
छत्री प्रभुदास जलोटिया टका मुक्ति दै दधि लई ॥१०७॥

प्रभुदास भाट सिहनंद के तीर्थ प्रथोदिक निदियो ।
सेवत नीकी भाँति ठाकुरहि वृद्ध भये अति ।
तीर्थ प्रथोदिक पहुँचाये सब अन्याश्रित मति ॥
अन्याश्रय लषि सावधान आये निज घर कहँ ।
करि सेवा निज सेव्य ललन की तजी देह तहँ ॥
निदा करि कीरति चौधरी मार षाइ पद वंदियो ।
प्रभुदास भाट सिहनंद के तीर्थ प्रथोदिक निदियो ॥१०८॥

पुरुपोत्तमदास जु आगरे राजघाट पै रहत हे ।
श्री गोस्वामी एक समै आये तिनके घर ।
भई रसोई भोग समर्प्यौं किए अनौसर ॥
पुनि सादर निज सेव्य ठाकुरै के भाजन मे ।
आरोगाये जस आरोगे नंद-भवन मे ॥
श्री ठाकुर ही की सेज पै पौढ़ाए सेवत रहे ।
पुरुपोत्तमदास जु आगरे राजघाट पै रहत हे ॥१०९॥

घर तिपुरदास को सेरगढ़ हुते सुकायथ जात के ।
श्री हरिके रँग रँगे प्रभुन-पद-पदुम प्रीति अति ।
सही कैद दइ जिनहि तुरुक बहु मार मंद मति ॥
बिन चरनोदक महाप्रसाद लिये न पियत जल ।
इन कहँ खेदित जानि ठाकुरहु परत न छन कल ॥
गज्जी की फरगुल इनहि की हरे सीत श्रीनाथ के ।
घर तिपुरदास को सेरगढ़ हुते सुकायथ जात के ॥११०॥

पूरनमल छत्री प्रभुन के कृपापात्र अति ही रहे ।
आयसु लहि श्रीनाथ-हेतु मंदिर समराये ।
सुभ मुहूर्त मे जहँ श्रीनाथहि प्रभु पधराए ॥
अति सुगंध अरगजा समर्पे जिन अपने कर ।

दिय ओढ़ाय आपने उपरना गोस्वामी वर ॥
गद्दल परसादी नाथ के बरस बरस पावत रहे ।
पूरनमल छत्री प्रभुन के कृपापात्र अति ही रहे ॥१११॥

यादवेंद्रदास कुम्हार श्री गोस्वामी-आयसु-निरत ।
श्री गोस्वामी संग कहूँ परदेस चलत जब ।
एक दिवस की सामग्री के भार वहत सब ॥
सेवा करहि रसोई निसि मे पहरा देते ।
मास दिवस के काम एक ही दिन करि लेते ॥
जे कूप खोदि निज कर-कमल खारो जल मीठो करत ।
यादवेंद्रदास कुम्हार श्री गोस्वामी-आयसु-निरत ॥११२॥

गोसॉईदास सारस्वत देह तजी बदरी बनै ।
ठाकुर-सेवा महाप्रभुन इन सिर पधराये ।
सेये नीकी भॉति ठाकुरहि अतिहि रिझाये ॥
ठाकुर आयसु पाइ बदरिकास्रमहि पधारे ।
ठाकुर सेवा काहु भागवत माथे धारे ॥
जिन यह इनसो निरधार किय ठाकुर देव न इहि तनै ।
गोसॉईदास सारस्वत देह तजी बदरी बनै ॥११३॥

माधवभट कसमीर के मरे बालकहि ज्याइयो ।
अतिहि दीन ह्वै लिषी सुबोधनि महाप्रभुन पै ।
सेवा मे अपराध पर्‌यौ अनजाने उनपै ॥
लघु बाधा मे तजी देह चोरनि सर लागे ।
श्री आचारज महाप्रभुन-पद रति-रस पागे ॥
श्रीनाथै जिनकी कानि ते निज पासहि पधराइयो ।
माधवभट कसमीर के मरे बालकहि ज्याइयो ॥११४॥

गोपालदास पै सदन बहु पथिकनि के बिस्राम हित ।
आवत श्री द्वारिका पद्मरावल निवसे जहँ ।
सुनि गोपालदास सेवा सो पहुँचि गए तहँ ॥
पूछि कुसल लषि द्वारिकेस दरसन अभिलाषी ।
कही प्रगट रनछोर अडेल लषौ निज ऑपी ॥
सुनि विरजो भाव पटेल लै आइ दरस लहि भे मुदित ।
गोपालदास पै सदन बहु पथिकनि के बिस्राम हित ॥११५॥

दुज साँचोरे रावल पदुम श्री रनछोर कही करी ।
परमारथी गुपालदास सिषये ये आये ।
महाप्रभुन दरसन करि निज अभिमत फल पाये ॥
लै प्रभु-पद चंदन चरनामृत भे विद्याधर ।
श्री ठाकुर आयसु ते गये कोऊ सेवक घर ॥
पथ बहु रोटी अरपन करी घी चुपरी न रुषी परी ।
दुज साँचोरे रावल पदुम श्री रनछोर कही करी ॥११६॥

पुरुषोत्तम जोसी दुज हुते कृष्णभट्ट पैं अति मुदित ।
आये ये उज्जैन पद्मरावल के सुत - घर ।
रहे तहाँ पै तिन सब इनको कीन अनादर ॥
वड़े पुत्र तिन कृष्ण भट्ट निज घर पधराये ।
राखे तहँ दिन चारि प्रसादहु भले लिवाये ॥
सुनि सतसंगी हरिवंस के गोस्वामी सुप भगत हित ।
पुरुषोत्तम जोसी दुज हुते कृष्णभट्ट पैं अति मुदित ॥११७॥

ऐसे भूले रजपूत को जगन्नाथ लीने सरन ।
श्री ठाकुर अर्पित अशुद्ध गुनि अति दुख पाये ।
ताती पीर समर्पि सिपे जो प्रभुन सिपाये ॥
ज्वार भोग अन्नकुट पैं पेट कुपीर उपाई ।

इरषा सों दुरजन इन पैं तरवारि चलाई ॥
तेहि श्री कर सों गहि कै कही मारै मति ये महत जन।
ऐसे भूले रजपूत कों जगन्नाथ लीने सरन ॥११८॥

जननी नरहर जगनाथ की महा प्रभुन-छबि छकि रही ।
इक इक मुहर भेट हित दै पठये दोउ भाइन ।
नाम निवेदन हेतु प्रभुन पैं अति चित चाइन ॥
मिले कृपा करि दियो दरस पुरुषोत्तम नगरी ।
भई स्वरूपासक्ति तुरत भूली सुधि सगरी ॥
पुनि माँगि भेंट की मुहर प्रभु लिए सरन दोउन तही।
जननी नरहर जगनाथ की महाप्रभुन-छबि छकि रही ॥११९॥

नरहर जोसी जगनाथ के भाई बड़े महान हे।
भोग अरोगन आये सिसु ह्वै अपन बिसारी।
पै इन प्रभु की कानि रंचकौ चित न विचारी ॥
सावधान भे सुनत अनुज सों प्रभु की करनी ।
गोस्वामी के सरन किये जजमान स-घरनी ॥
तेहि जरत बचाये आगि तें ऐसे ये सुषदान हे ।
नरहर जोसी जगनाथ के भाई वड़े महान हे ॥१२०॥

सॉचोरा राना व्यास द्विज सिद्धपूर निवसत रहे ।
जगन्नाथ जोसी गर मुद्गर तपित लाइकै ।
हाकिम पैं अविकारी इनकों किये जाइकै ॥
जिनकी मति लहि राजपुतानी सती भई नहि ।
शुद्ध होइ आई ताकों तिन दिये नाम तहि ॥
पुनि सरनागत करि प्रभुन के पर-उपकारी पद लहे ।
सॉचोरा राना व्यास द्विज सिद्धपूर निवसत रहे ॥१२१॥

धनि राजनगर-बासी हुते रामदास दुज सारस्वत ।
श्री नटवर गोपाल पादुका गुरु सेयौ इन ।
श्री रनछोर सु कहे ग्रहन किय निज नारिहु जिन ।।
ठाकुर ही आयसु ते तिय कों नामहु दीने ।
तब ताके कर महाप्रसाद मुदित मन लीने ।।
पुनि नाम निवेदन प्रभुन पै करवाये कहि कानि सत ।
धनि राजनगर-बासी हुते रामदास दुज सारस्वत ।।१२२।।

गोविंद दूबे साँचोर द्विज नवरत्नहि नित पाठ किय ।
श्री गोस्वामी-पत्र पाइ मीरहि द्रुत त्यागी ।
श्री ठाकुर रनछोर-बारता-रस-अनुरागी ।।
प्रभुन थार के महाप्रसाद दिये नहि इक दिन ।
सकल वैष्णवनि सहित उपास किये तिहि दिन तिन ।।
सुनि भूखे श्री रनछोर सो थार महापरसाद दिय ।
गोविंद दूबे साँचोर द्विज नवरत्नहि नित पाठ किय ।।१२३।।

राजा माधौ दूबे हुते दोउ भाई साँचोर दुज ।
रामकृष्ण हरिकृष्ण बड़े छोटे दोउ भाई ।
बड़े पढ़े बहु कथा कहै लघु मूढ़ सदाई ।।
भावज की कटु सुनि दूबे के सरनहि आये ।
अष्टोत्तर सतनाम बार द्वै जपि सब पाये ।।
पुनि पाइ नाम श्रीप्रभुन पै भे निज कुल के कलस-धुज ।
राजा माधौ दूबे हुते दोउ भाई साँचोर दुज ।।१२४।।

जननी श्लोकोत्तम दास कों नाथ सेवकनि मिलि कह्यौ ।
करै रसोई प्रीति समेत परोसि लिवावैं ।
याही ते श्रीनाथ सेवकनि कों अति भावै ।।
श्री गोस्वामी रीझि रहे लपि शुद्ध प्रेम पन ।

रस वात्सल्य अलौकिक जानि सिहाहि मनहि मन ॥
मन शुद्धाद्वैत सरूप मति कृष्णभक्ति तजि तन लह्यौ ।
जननी श्लोकोत्तमदास कों नाथ सेवकनि मिलि कह्यौ ॥१२५॥

ईश्वर दूबे साँचोर के मुखिया भे श्रीनाथ के ।
श्लोकोत्तम जन नाम धन्य येऊ पुनि पाये ॥
नाथ सेवकनि अधिक घीय दै मातु कहाये ॥
अविरल भक्ति विशुद्ध गुसाईं सो इन लीन्हीं ।
महाप्रभुन पथ प्रीति रीति इन दृढ़ करि चीन्ही ।
पाई सेवा श्रीअंग की सरन अनाथनि नाथ के ॥
ईश्वर दूबे साँचोर के मुखिया भे श्रीनाथ के ॥१२६॥

वासुदेव जन जन्मस्थली काजी मद-मरदन किये ।
श्री [गोपीपति मुहर गुसाईं पैं पहुँचाई ।
करी दंडवत लाइ पहुँच पत्रिका सुहाई ॥
मथुरा ते आगरे गए आये जुग जामैं ।
सीहनंद वैष्णवनि उछाहनि में अभिरामैं ॥
मन डेढ़ नित्त ये खात है ढाल गुरज इक कर लिये ।
वासुदेव जन जन्मस्थली काजी मद-मरदन किये ॥१२७॥

बाबा वेनू के अनुजवर कृष्णदास घघरी रहे ।
श्री केसव के कीर्तनिया ये अरु जादव जन ।
कृष्णदास तहँ गिरिवरधर ध्यावत त्यागे तन ॥
नाथ दरस करि गिरि नीचे बेनू तन त्यागे ।
जादवदासौ सर रचि नाथ धुजा के आगे ॥
कहि नाथ देह तजि आगि धरि बायु बहे तिन तन दहे ।
बाबा बेनू के अनुजवर कृष्णदास घघरी रहे ॥१२८॥

जगतानंद द्विज सारस्वत थानेसर निवसत रहे।
एक श्लोक के अर्थ प्रभुन त्रै जाम बिताये॥
कही मास द्वै तीनि बीतिहै सुनि सिर नाये।
देहु नाम इन विनय करी तब प्रभु अपनाये॥
पुनि महाप्रभुन कों नित निज घर पधराये।
तहँ नित सेवा विधि तिनहि कहि सावधान सेवन कहे।
जगतानंद द्विज सारस्वत थानेसर निवसत रहे॥१२९॥

दोऊ भाई छत्री हुते महाप्रभुन-रस रँग रये।
आनँददास बड़े भाई नित बैठि अनुज सँग।
महाप्रभुन के चरित कृष्ण गुन कहत पुलकि अँग॥
सोइ जात जब दास बिसम्भर भरत हुँकारी।
भरत आप तब श्री हरिजू निज जन-हितकारी॥
कहि कथा पूछि अनुजहि मुदित जानि ठाकुरहि ठगि गये।
दोऊ भाई छत्री हुते महाप्रभुन-रस रँग रये॥१३०॥

इक निपट अकिंचन ब्राह्मनी जिन हरि कहँ निज कर लहे।
माटी के सब पात्र सदन साँकरो सुहायो।
वृद्धि भई निज ठाकुर रत अपरस बिसरायो॥
लषि वैष्णव श्री महाप्रभुन पधराये तेहि घर।
प्रीति भाव लखि भे प्रसन्न अति ही जिय प्रभुवर॥
सेवकन कह्यौ मरजाद तजि इन प्रभु-पद दृढ़ करि गहे।
इक निपट अकिंचन ब्राह्मनी जिन हरि कहँ निज कर लहे॥१३१॥

छत्रानी इक हरि-नेह-रत वत्सलता की खानि ही।
दिन दस के लड्डुआ इक ही दिन करिकै राखे।
सो प्रभु आप उठाइ अंक लै तुरतहि चाखे॥

यह मरजादा भंग देखि रोई भय होई।
आरति के हित कियो कह्यौ तव प्रभु दुख जोई ॥
तब नित सामग्री नव करति ऐसी चतुर सुजानि ही।
छत्रानी इक हरि-नेह-रत वत्सलता की खानि ही ॥१३२॥

समराई हठ करि प्रभुन को निज कर भोग लगाइयो।
सास गोरजा महाप्रभुन के दरस पधारी ॥
तब यह हरि सनमुख लाई रचि रुचि कै थारी।
जब न अरोगे तब इन कछु आपहु नहि खायो ॥
ऐसे ही हठ करि जल बिनु दिन कछुक बितायो।
तब आपु प्रगट ह्वै प्रेम सो जाल लै याहि पिवाइयौ।
समराई हठ करि प्रभुन कों निज कर भोग लगाइयो ॥१३३॥

दासी कृष्णा मति रुचि भरी गुरु-सेवा मैं अति निरत।
जब गोस्वामी कहँ चतुर्थ बालक प्रगटाए।
तब श्री बल्लभ गोस्वामी बर नाम धराए ॥
कृष्णा भाख्यो इनकों गोकुलनाथ पुकारो।
तासों जग में यहै नाम सब लेत हँकारो ॥
गोस्वामी हू जा कानि सों यहै नाम भाखे तुरत।
दासी कृष्णा मति रुचि भरी गुरु-सेवा मैं अति निरत ॥१३४॥

श्री बूला मिश्र उदार अति बिनु रितुहू बालक दियो।
जिजमानहि हरिबंस एक ही छंद सुनाई।
करम लिखी हू उलटन पतनी गोद भराई ॥
छत्री को इन सकल मनोरथ पूरन कीनो।
करुना चित मै धारि दान बालक को दीनो ॥
हरि-गुरु-बल जो मुख सों कह्यौ सोई हठ करि कै कियो।
श्री बूला मिश्र उदार अति बिनु रितुहू बालक दियो ॥१३५॥

मीराबाई की प्रोहिती रामदास जू तजि दई।
हरि-गुरु परम अभेद भाव हिय रहत सदाई।
याही ते गुरु-कीरति इन हरि-सनमुख गाई॥
मीरा भाख्यौ हरि-चरित्र गाओ द्विजराई।
सुनि अति कोपे इन जाने नहि वल्लभराई॥
लखि द्वैध भाव तजि गाँव सो दूर बसे मति गुरु भई।
मीराबाई की प्रोहिती रामदास जू तजि दई॥१३६॥

सेवक गोबर्द्धननाथ के रामदास चौहान हे।
जब प्रगटे प्रभु प्रथम गोबरधन गिरि के ऊपर।
नाम नवल गोपाललाल त्रय-दमन मनोहर॥
तब श्री वल्लभ इनको सेवा हरि की दीनी।
रहै मँड़ैया छाइ परम रति मै मति भीनी॥
नित ब्रज को गोरस अरपि कै सेवत हरि सुख-खान हे।
सेवक गोबर्द्धननाथ के रामदास चौहान हे॥१३७॥

द्विज रामानंद बिछिप्त बनि जगहि सिखाई प्रेम-बिधि।
गुरु रिसि करि कै तज्यौ तऊ हरि जेहि नहिं त्याग्यौ।
दरसायो सिद्धान्त यहै पथ को अनुराग्यौ॥
बिकल पथहि पथ फिरत खात तन की सुधि नाही।
निरखि जलेबी हरिहि समर्पी अति चित-चाही॥
ताको रस हरि के बसन मै देख्यौ गुरुवर भावनिधि।
द्विज रामानंद बिछिप्त बनि जगहि सिखाई प्रेम-बिधि॥१३८॥

छीपा-कुल-पावन मे प्रगट विष्णुदास वादीन्द्र-जित।
हरि-सेवक बिन लेत न जलहू प्रेम बढ़ावन।
भट्टनहू के परस लेत नहि जानि अपावन॥

श्री गोस्वामी–चरन–कमल–मधुकर ये ऐसे।
स्वाती-अम्बर कों चातक चाहत है जैसे ॥
धनि धनि जिनके प्रेम-पन अन्याश्रय गत धीर चित।
छीपा-कुल-पावन भे प्रगट विष्णुदास वादीन्द्र-जित ॥१३९॥

जन-जीवन प्रभु की आनि दै मेघनि नहि बरसन दये।
एक समै श्री महाप्रभू दरसन करिबे हित।
आवत हे सब सीहनंद के वैष्णव इक चित ॥
लागे करन रसोई मग मे घन घिरि आये।
निहचै जानि अकाज अनन्यनि अति अकुलाये ॥
चढ़ि आई गुर की कानि चित मघवा-मद जिन हरि लये।
जन-जीवन प्रभु की आनि दै मेघनि नहि बरसन दये ॥१४०॥

भगवानदास सारस्वतै दई प्रभुन श्री पॉवरी।
श्री आचारज जाइ बिराजे इनके घर जहँ।
नित उठि प्रातहि करहि दंडवत ये सादर तहँ ॥
तातें कोउ नहि धरत पाव तेहि पूजित ठौरहि।
ठाकुर जिन सो सानुभाव कहिए का औरहि ॥
सेये जिन अपन बिसारि कै भरी निरंतर भॉवरी।
भगवानदास सारस्वतै दई प्रभुन श्री पॉवरी ॥१४१॥

भगवानदास श्रीनाथ के हुते भितरिया सुखद अति।
कछु सामग्री दाझि गई इक दिन अनजाने।
गोस्वामी सेवा तें बाहिर किये रिसाने ॥
सुनि जन अच्युत गोस्वामी सों रोइ बिनय की।
नाथ हाथ गति प्रभु संबंधी जीव निचय की ॥
सुनि कर गहि लै गिरिराज पै कही सेइ अबतें सुमति।
भगवानदास श्रीनाथ के हुते भितरिया सुखद अति ॥१४२॥

द्विज अच्युतदास सनोढ़िया चक्रतीर्थ पै रहत हे ।
आवैं नित सिंगार समै श्रीनाथ-दरस हित ।
पुनि निज थल को जात हुते ऐसो साहस चित ।।
नाथ-परिक्रम दंडवती इन तीन करी जब ।
श्री गोस्वामी श्री-मुख करी बड़ाई बहु तब ।।
हे गुनातीत ये भगवदी प्रभुन-भगति रस वहत हे ।
द्विज अच्युतदास सनोढ़िया चक्रतीर्थ पै रहत हे ।।१४३।।

द्विज गौड़ दास अच्युत तही प्रभु विरहानल तन दहे ।
सेवा पधराई श्री मोहन मदन लाल की ।
आपहु बैठे पाट प्रगटि तन छबि रसाल की ।।
सेये नीकी भाँति मदन-मोहन रिझवारे ।
श्री गोस्वामी जिनहि नमत लषि अपन विसारे ।।
प्रभु-असुर-विमोहन-चरित लषि बद्रिनाथ दरसन लहे ।
द्विज गौड़ दास अच्युत तही प्रभु विरहानल तन दहे ।।१४४।।

श्री प्रभुन सरूप सुजान सुभ अच्युत अच्युतदास द्विज ।
प्रभु सँग पृथी-परिक्रम करि पद-पाँवरि पूजत ।
प्रभु के लौकिक करम धरम तिन कहँ नहि सूझत ।।
जिन लषि नर सुर असुर विमोहि परत भव-सागर ।
गुनातीत प्रभु-चरित-मगन मन जन नव नागर ।।
मोहित जन लषि प्रभु दरस दै कहे सगुन प्रागट्य निज ।
श्री प्रभुन सरूप सुजान सुभ अच्युत अच्युतदास द्विज ।।१४५।।

नरायनदास प्रभु-पद-निरत अम्बालय मे बसत हे ।
नृप-नौकर अवसर न पावते प्रभु दरसन को ।
उत्कंठित दिन राति धन्य धनि जिनके मन को ।।

कब जैहौ भैया श्री वल्लभ के दरसन हित।
चाकर राषे सुरति देन कों यों छन छन तिन ॥
बहु भेंट पठावत हे प्रभुहि ऐसे ये भागवत हे।
नरायनदास प्रभु-पद-निरत अम्बालय में बसत हे ॥१४६॥

नरायनदास भाट जाति मथुरा में निवसत रहे।
जिनको आयुस दई मदनमोहन गुनि प्रभु-जन।
बाहिर मुहि पधारउ काढ़िहों गुप्त इतै बन ॥
मथुरा ते निकसाइ तुरत बाहिर पधराये।
पुनि श्री गोपीनाथ सिहासन पै बैठाए ॥
तातें दरसन करि सबै सहजहि अभिमत फल लहे।
नारायनदास भाट जाति मथुरा मे निवसत रहे ॥१४७॥

नारिया नारायनदास भे सरन प्रभुन के अनुसरे।
पातसाह ठट्ठा के ये दीवान हेत हे।
दुसह दंड मे परि नित पाँच हजार देत हे ॥
रुपये लाख पचास भरन लौं कैद किये तिन।
इक दिन के द्वै गुर-भाइन को देइ दिये जिन ॥
छुटि पातसाह सों साँच कहि सहस मुहर प्रभु-पद धरे।
नरिया नारायनदास भे सरन प्रभुन के अनुसरे ॥१४८॥

छत्रानी एक अकेलियै सीहनन्द मै बसत ही।
श्री नवनीत-प्रिया की करति अकिचन सेवा।
तरकारी हित सिसु लौं झगरत जासो देवा ॥
माया विद्या अन-सषड़ी सषड़ी कै त्यागी।
भावहि भूषे घी चुपरी रोटिहि अनुरागी ॥
माया विसिष्ट प्रगटत सदा प्रेमहि तें प्रभु तुरत ही।
छत्रानी एक अकेलियै सीहनन्द मै बसत ही ॥१४९॥

कायथ दामोदरदास जिन श्री कपूररायहि भज्यौ ।
जिनकी जुवती हुती बीरबाई प्रसूतिका ।
श्री ठाकुर-सेवा की सोई सुचि विभूतिका ॥
लई सूतकौ मै सेवा जासो प्रभु पावन ।
सेवक प्रभुन सरूप होत नहि कबहुँ अपवान ॥
नहि आतम सुद्धासुद्ध कहुँ सोइ प्रभु सोइ सेवक सज्यौ ।
कायथ दामोदरदास जिन श्री कपूररायहि भज्यौ ॥१५०॥

छत्री दोउ स्त्री पुरुष हे रहे आइ सिहनंद मे ।
निपटै लघु घर हुतो मेड़ ठाकुर पौढ़ाए ।
जिनके डर सो सोवत निसि ऑगन सचुपाए ॥
पावस रितु में भीजत जानि पुकारि कही सुनि ।
घर मै सोवहु भीजौ मति न करौ ऐसो पुनि ॥
तौऊ साँस न पावै वजन सोये या आनन्द में ।
छत्री दोउ स्त्री पुरुष हे रहे आई सिहनंन्द मे ॥१५१॥

श्री महाप्रभुन सूतार घर श्रम पिछानि पग धारते ।
प्रभुन दरस बिन किये रहे नहि जे एकौ दिन ।
छुटे सकल गृह-काज भये घर के सब सुप बिन ॥
याही ते प्रभु आपै आवत हुते सदन जिन ।
बहुत बारता करत हुते धनि जिनसो अनुदिन ॥
पै दिन चौथे पचये न कछु जननी रिस जिय धारते ।
श्री महाप्रभुन सूतार घर श्रम पिछानि पग धारते ॥१५२॥

अन्य मारगी मित्र इक छत्री सेवक अति बिमल ।
अन्य मारगी भवन नेह बस गए एक दिन ।
किये पाक तेहि ठाकुर आगे नाथ अरपि तिन ॥
भोग सराये ताहि लिवाये लिय आपौ पुनि ।

भूषे ठाकुर ताहि जगाय कही सब सों सुनि ॥
परभाव जानि या पंथ को भयो सरन सोऊ बिकल ।
अन्य भारगी मित्र इक छत्री सेवक अति बिमल ॥१५३॥

चित लघु पुरुषोत्तमदास के गुरु ठाकुर मैं भेद नहि ।
श्री आचारज महाप्रभुन-पद रति रस-भीने ।
आपै के गुन श्रवन कीरतन सुमिरन कीने ॥
आपै कहँ आतम अरपे सेये पूजे जन ।
सषा दास आपहि के बंदे आपहि कों इन ॥
आपहु जिनकों अति ही चहे भक्ति भाव धरि जीय महि ।
चित लघु पुरुषोत्तमदास के गुरु ठाकुर मैं भेद नहि ॥१५४॥

कविराज भाट श्रीनाथ कों नित नव कबित सुनावते ।
तीनो भाई नाम पाइकै किये निवेदन ।
नाथ निकट बहु कबित पढ़े प्रभु भये मुदित मन ॥
धनि धनि धनि वे कबित धन्य वे धन्य भगति जिन ।
धनि धनि धनि श्री प्रभुन नाम उद्धारन अगतिन ॥
किय कबित अनेकनि प्रभुन के सदा प्रभुन मन भावते ।
कविराज भाट श्रीनाथ को नित नव कबित सुनावते ॥१५५॥

गोपालदास टोरा हुते अति आसक्त प्रभून पै ।
मार्कण्डे पूजत हे प्रभु निज जन्मोत्सव दिन ।
इक दिन आगे आये हे गाये पद तेहि छिन ॥
सुनि माधव मे वल्लभ हरि अवतरे दास सुष ।
कृष्ण-भगति मुद मगन भये तजि ज्ञानादिक सुप ॥
बहु छंद प्रबंध प्रवीन ये बारे रसिक दुहून पै ।
गोपालदास टोरा हुते अति आसक्त प्रभून पै ॥१५६॥

जनार्दनदास छत्री भये सरन पूर्न बिस्वास ते ।
दरसन करत प्रभुन पूरन पुरुषोत्तम जाने ।
करी विनय कर जोरि सरन मोहिं लेहु सुजाने ॥
आपौ आज्ञा दई न्हाइ आवौ ते आये ।
पाइ नाम पुनि किए समर्पन अति चित चाये ॥
ये सन्निधान श्रीनाथ के न्यारे ह्वै भव-पास ते ।
जनार्दनदास छत्री भये सरन पूर्न बिस्वास तें ॥१५७॥

गडुस्वामी ब्रह्म सनोड़िया प्रभुन सरन भे प्रभु कहे ।
गये प्रभुन पैं न्हाइ दण्डवत करी विनय कै ।
कही सरन मोहिं लेहु नाथ अब देहु अभय कै ॥
कही आप मुसिकाय कहौ स्वामी किमि सेवक ।
पुनि तिन बन्दन करी कही आज्ञा मुहि देवक ॥
लहि नाम सेवकनि सहित निज किये निवेदन मुद लहे ।
गडुस्वामी ब्रह्म सनोड़िया प्रभुन सरन भे प्रभु कहे ॥१५८॥

कन्हैया साल छत्री जिन्है प्रभुन पढ़ाए ग्रंथ निज ।
श्रीमद्गोस्वामी जू जिन सो पढ़े ग्रन्थ बहु ।
इनकी कहा बड़ाई करिये मुख अति ही लहु ॥
प्रेम दास्य बिस्वास रूप ये नीके जानत ।
श्रीहरि गुरु की भगति भाव करिकै पहिचानत ॥
निज गमन समय राख्यौ इन्है थापन कों भुव पंथ निज ।
कन्हैया साल छत्री जिन्है प्रभुन पढ़ाए ग्रन्थ निज ॥१५९॥

गौड़िया सु नरहरदास जू प्रभुन-कृपा पाये सुपद ।
जिन घर बैठे पाट मदन-मोहन पिय प्यारे ।
सोये सहित सनेह जानि प्रेमहि पर वारे ॥

पुनि पधराये श्री गोस्वामी पैं यह गुनि जिय।
ये सुष पैहैं यहीं लाल है इनहीं के प्रिय॥
पुनि गोस्वामी पधरायो श्रीरघुनाथ-सदन सुषद।
गौड़िया सु नरहरिदास जू प्रभुन-कृपा पाये सुपद॥१६०॥

बादा श्रीप्रभु की कृपा ते दास बादरायन भये।
आछे भट ते सुने भागवत नाम पाइ कैं।
जाते श्री रनछोर प्रभुन तहँ टिके आइ कै॥
पाये प्रभु पैं नाम समर्पन किये गए सँग।
दरसन करि पुनि आइ मोरवी रँगे प्रभुन रँग॥
पुनि रहे तहँ आयसु प्रभुन आपुन श्रीगोकुल गये।
बादा श्रीप्रभु की कृपा तें दास बादरायन भये॥१६१॥

नरो सुता तिय आदि सब सद्दू मानिकचंद की।
देवदमन जिन सदन पियत पय नरो पियावति।
जात कटोरो भूलि ताहि मुषियहि दै आवति॥
माँगि प्रभुन सो गाय नाम गोपाल धराये।
निज प्रागट्य जनाइ प्रभुन तिन गृह पधराये॥
प्रभु कृपापात्र सुचि भगवदी मूरति ब्रह्मानंद की।
नरो सुता तिय आदि सब सद्दू मानिकचंद की॥१६२॥

सन्यासी नरहरदास पैं सुगुरु-कृपा अतिसय हुती।
एक समै श्री महाप्रभू द्वारिका पधारे।
बेना कोठारिहु लै एऊ संग सिधारे॥
तहाँ विनय करि किये सुसेवक सरन प्रभुन के।
जिनके सरनागत पै बस नहिं चलत तिगुन के॥
सेवा अपराधौ तिगुन सिर भेद भगति यह दृढ़मती।
सन्यासी नरहरदास पैं सुगुरु-कृपा अतिसय हुती॥१६३॥

गोपालदास जटाधारी नाथ खवासी करत हे ।
ग्रीषम भोग अरोगि जामिनी जगमोहन मे ।
पौढ़त जहँ श्रीनाथ स्वामिनी के गोहन मे ।।
ऑखि मीचि चहुँ जाम करत बीजन तहँ ठाढ़े ।
प्रभु आयसु ते आरस-गत अति आनँद बाढ़े ।।
ठाकुर सेवक कहँ दंड दै बादि बिरह मैं तन दहे ।
गोपालदास जटाधारी नाथ खवासी करत हे ।।१६४।।

सति धर्म मूल तिय बनिक गृह कृष्णदास पहुँचाइयौ ।
वैष्णव धर्म अकिंचनता तेहि प्रगटि दिखाई ।
जिनकी तिय करि कौल बनिक सों सीधो लाई ।।
करी रसोई भोग अरपि पुनि भोग सराये ।
बहुरि अनौसर करिकै सब वैष्णवनि जिंवाये ।।
लषि ज्ञानचन्द पै प्रभु-कृपा आपुहि कौल चिताइयौ ।
सति धर्म मूल तिय बनिक-गृह कृष्णदास पहुँचाइयौ ।।१६५।।

श्री गोस्वामी के प्रान-प्रिय संतदास छत्री रहे ।
श्री हरि-पद अरबिंद मरन्द मते मिलिन्द मे ।
गावन मे हरि-चरित मौन मे अति अमंद ये ।
अन्न-आश्रय अरु वैष्णव-धन विष जिनहि विषहु ते ।
याही ते ये हुते नियारे द्वन्द दुषहु ते ।।
कौड़ी बेचत हे ढाइयै पैसनि हित अधिक न चहे ।
श्रीगोस्वामी के प्रान-प्रिय संतदास छत्री रहे ।।१६६।।

सुंदरदासहि के संग तें वैष्णव माधवदास भे ।
माधवदास कृष्ण चैतन्य-सुसेवक दृढ़मति ।
जाको भोग समर्पित पावत प्रेत दुष्ट अति ।।

पै तिहि दृढ़ बिस्वास जु श्री ठाकुरै अरोगत।
श्री आचारज प्रभुन निंदि सो लह्यौ दंड द्रुत॥
अपराध आपनो जानि कैं महाप्रभुन की आस भे।
सुंदरदासहि के संग ते वैष्णव माधवदास भे॥१६७॥

बिरजो मावजी पटेल दोउ वैष्णव ही हित अवतरे।
श्री गोकुल द्वै बेर साल में सदा आवते।
गाड़ा गाड़ा गुड़ घृत सौजनि सहित लावते॥
एक पाष श्री गोकुल इक श्रीनाथद्वार रह।
खिरक लिवावत भोग समर्पित सब ग्वालिनि कहँ॥
पुरुषोत्तम खेतहि वैष्णवनि सबै लिवाए मुद भरे।
बिरजो मावजी पटेल दोउ वैष्णव ही हित अवतरे॥१६८॥

गोपालदास रोड़ा दिये नाम दान प्रभु के कहे।
एक समै गोपालदास श्रीनाथहि आये।
आयो ज्वर द्वै चारि भये लंघन दुष पाये॥
लागी प्यास कही सेवक सों सोइ गयो सो।
आपुहि झारी लै प्याये जल दुप विसरो सो॥
श्री गोस्वामी की सीप सों प्रभुता मद रंच न रहे।
गोपालदास रोड़ा दिये नाम दान प्रभु के कहे॥१६९॥

काका हरिवंस प्रसंस मति धरम परम के हंस भे।
श्री विट्ठल-सुत जेहि काका सम आदर करहीं।
वैष्णव पर अति नेह सुअन सम नित अनुसरहीं॥
नाम-दान दै जगत जीव फिरि फिरि के तारे।
ठौर ठौर हरि सुजस भक्ति हित वहु बिस्तारे॥
प्रिय कंस धंस के होइ कै छत्रिहु वल्लभ वंस भे।
काका हरिवंस प्रसंस मति धरम परम के हंस भे॥१७०॥

गंगा बाई श्रीनाथ की अतिहि अंतरंगिनि भई ।
जवन-उपद्रव जब श्रीप्रभु मेवाड़ पधारे ।
मारग मै यह साथ रही हिय भगति बिचारे ॥
जब रथ कहुँ अड़ि जात तबै सब इनहि बुलावैं ।
श्री जी के ढिग भेजि नाथ-इच्छा पुछवावै ॥
श्री बिट्ठल गिरिधर नाम सो पद रचि हरि-लीला गई ।
गंगा बाई श्रीनाथ की अतिहि अंतरंगिनि भई ॥१७१॥

श्रीतुलसिदास-परताप तें नीच ऊँच सब हरि भजे ।
नंददास अग्रज द्विज-कुल मति गुन-गन-मंडित ।
कवि हरि-जस-गायक प्रेमी परमारथ पंडित ॥
रामायन रचि राम-भक्ति जग थिर करि राखी ।
थोरे मै बहु कह्यौ जगत सब याको साखी ॥
जग-लीन दीनहू जा कृपा-बल न राम-चरितहि तजे ।
श्रीतुलसिदास-परताप ते नीच ऊँच सब हरि भजे ॥१७२॥

गोस्वामी बिट्ठलनाथ के ये सेवक जग मे प्रगट ।
भट्ट नाग जी कृष्णभट्ट पद्मा रावल-सुत ।
माधोदास हिसार बास कायथ निज पितु जुत ॥
बिट्ठलदास निहालचंद श्रीरूपमुरारी ।
रूपचंद नंदा खत्री भाइला कुठारी ॥
राजा लाखा हरिदास भाई जलौट हरि नाम रट ।
गोस्वामी बिट्ठलनाथ के ये सेवक जग मे प्रगट ॥१७३॥

गोस्वामी बिट्ठलनाथ के ये सेवक हरि-चरन-रत ।
कृष्णदास कायस्थ नरायनदास निहाला ।
ज्ञानचन्द ब्राह्मणी सहारनपुर के लाला ॥

जन-अर्दन परसाद गोपालदास पाथी गनि।
मानिकचंद मधुसूदनदास गनेस ब्यास पुनि॥
जदुनाथ दास कान्हो अजब गोपीनाथ गुआल सत।
गोस्वामी बिट्ठलनाथ के ये सेवक हरि-चरन-रत॥१७४॥

हित रामराय भगवान बलि हठी अली जगनाथ जन।
कही जुगल रस-केलि माधुरीदास मनोहर।
बिट्ठल बिपुल बिनोद बिहारिनि तिमि अति सुन्दर॥
रसिक-बिहारी त्यौंही पद बहु सरस बनाए।
तिमि श्री भट्टहु कृष्ण-चरित गुप्तहु बहु गाए॥
कल्यानदेव हित कमल-दृग नरबाहन आनंदघन।
हित रामराय भगवान बलि हठी अली जगनाथ जन॥१७५॥

श्री ललितकिशोरी भाव सों नित नव गायो कृष्ण-जस।
भट्ट गदाधर मिस्र गदाधर गंग गुआला।
कृष्ण-जिवन हरि लछीराम पद रचत रसाला।
जन हरिया घनस्याम गोबिंदा प्रभु कल्याना।
बिचित्र-बिहारी प्रेम-सखी हरि सुजस बखाना॥
रस रसिकबिहारी गिरिधरन प्रभु मुकुंद माधव सरस।
श्री ललितकिशोरी भाव सो नित नव गायो कृष्ण-जस॥१७६॥

श्री बल्लभ आचारज अनुज रामकृष्ण कबि मुकुटमनि।
बसत अजुध्या नगर कृष्ण सों नेह बढ़ावत।
कृष्ण-कुतूहल कहि गुपाल लीला नित गावत॥
दोऊ कुल की वृत्ति तिनूका सी तजि दीनी।
ब्याह कियो नहि जानि दुखद हरि-पद मति भीनी॥
करि वाद पंथ थापन कियो ग्रंथ रचे नव तीन गनि।
श्री बल्लभ आचारज अनुज रामकृष्ण कवि मुकुटमनि॥१७७॥

हरि-प्रेम-माल रस-जाल के नागरिदास सुमेर भे।
वल्लभ पथहि दृढ़ाइ कृष्णगढ़ राजहि छोड़्यौ।
धन जन मान कुटुम्बहि बाधक लखि मुख मोड़्यौ॥
केवल अनुभव सिद्ध गुप्त रस चरित बखाने।
हिय सँजोग उच्छलित और सपनेहुँ नहि जाने॥
करि कुटी रमन-रेती बसत संपद भक्ति कुबेर भे।
हरि-प्रेम-माल रस-जाल के नागरिदास सुमेर भे॥१७८॥

हिय गुप्त बियोगहि अनुभवत बड़े नागरीदास हे।
वार-बधू ढिग बसत सबै कछु पीयो खायो।
पै छनहूँ हिय सो नहि सो अनुभव विसरायो॥
सुनतहि बिट्ठल नाम भक्त-मुख श्रवन मँझारी।
प्रान तज्यो कहि अहो तिनहि सुधि अजहुँ हमारी॥
दरसन ही दै हरिभक्त अपराध कुष्ट जन दुख दहे।
हिय गुप्त बियोगहि अनुभवत बड़े नागरीदास हे॥१७९॥

श्री बृंदाबन के सूर-ससि उभय नागरीदास जन।
निज गुरु हित हरिबंस कृष्ण-चैतन्य चरन-रत।
हरि-सेवा मे सुदृढ़ काम क्रोधादि दोषगत॥
अद्भुत पद बहु किये दीन जन दै रस पोषे।
प्रभु-पद-रति विस्तारि भक्तजन मन संतोषे॥
दृढ़ सखी भाव जिय मे बसत सपनेहुँ नहि कहुँ और मन।
श्री बृंदाबन के सूर-ससि उभय नागरीदास जन॥१८०॥

इन मुसलमान हरि-जनन पै कोटिन हिंदुन वारियै।
अलीखान पाठान सुता-सह ब्रज रखवारे।
सेख नबी रसखान मीर अहमद हरि-प्यारे॥

निरमलदास कबीर ताजखाँ बेगम बारी।
तानसेन कृष्णदास बिजापुर नृपति-दुलारी ॥
पिरजादी बीबी रास्ती पद-रज नित सिर धारियै।
इन मुसलमान हरि-जनन पै कोटिन हिन्दुन वारियै ॥१८१॥

बाबा नानक हरि-नाम दै पंचनदहि उद्धार किय।
बार बार निज सौज साधुजन लखत लुटाई।
बेदी बंस प्रसंस प्रगटि रस-रीति दृढ़ाई ॥
गुप्त भाव हरि प्रियतम को निज हिये पुरायो।
गाइ गाइ प्रभु-सुजस जगत अघ दूरि बहायो ॥
जग ऊँच नीच जन करि कृपा एक भाव अपनाइ लिय।
बाबा नानक हरिनाम दै पंचनदहि उद्धार किय ॥१८२॥

कवि करनपूर हरि-गुरु-चरित करनपूर सबको कियो।
सेन बंस श्री शिवानंद सुत बंग उजागर।
सुर-बानी मैं निपुन सकल रस के मनु सागर ॥
अति छोटे तन गुरु महिमा करि छंद बखानी।
जननि गोद सों किलकि हँसे निज गुरु पहिचानी ॥
परमानँद सों चैतन्य ससि नाम पलटि दूजो दियो।
कवि करनपूर हरि-गुरु-चरित करनपूर सबको कियो ॥१८३॥

बनमाली के माली भए नाभा जी गुन-गन-गथित।
नाम नरायनदास विदित हनुमत कुल जायो।
अग्र कील्ह गुरु-कृपा नयन खोयोहू पायो ॥
गुरु-आयसु धरि सीस भक्त-कीरति जिन गाई।
भक्तमाल रस-जाल प्रेम सों गूथि बनाई ॥
नित ही नव-रूप सुवास सम सुमन-संत करनी कथित।
बनमाली के माली भए नाभा जी गुन-गन-गथित ॥१८४॥

ये भक्तमाल रस-जाल के टीकाकार उदार-मति ।
कृष्णदास बंगाल कृष्ण-पद-पद्म परम रत ।
प्रियादास सुखदास प्रिया जुग चरन-कुमुद नत ॥
ललितलालजी दास एक औरहु कोउ लाला ।
लाल गुमानी तुलसिराम पुनि अग्गरवाला ॥
परतापसिह सिधुआपती भूपति जेहि हरि-चरन-रति ।
ये भक्तमाल रस-जाल के टीकाकार उदार-मति ॥१८५॥

लाला बाबू बंगाल के वृंदावन निवसत रहे ।
छोड़ि सकल धन-धाम बास ब्रज को जिन लीनो ।
माँगि माँगि मधुकरी उदर पूरन नित कीनो ॥
हरि-मंदिर अति रुचिर बहुत धन दै बनवायो ।
साधु-संत के हेत अन्न को सत्र चलायो ॥
जिनकी मृत देहहु सब लखत ब्रज-रज लोटन फल लहे ।
लाला बाबू बंगाल के वृंदाबन निवसत रहे ॥१८६॥

कुल अग्रवाल पावन-करन कुन्दनलाल प्रगट भये ।
प्रथम लखनऊ बसि श्री घन सो नेह बढ़ायो ।
तहँ श्री युगल सरूप थापि मंदिर बनवायो ॥
द्वापर को सुखरास रास कलियुग मे कीनी ।
सोइ भजन आनंद भाव सहचरि रँग भीनी ॥
लाखन पद ललित किशोरिका नाम प्रगटि बिरचे नए ।
कुल अग्रवाल पावन-करन कुन्दनलाल प्रगट भये ॥१८७॥

गिरिधरनदास कवि-कुल-कमल वैश्य वंश भूषन प्रगट ।
रामायन भागवत गरग संहिता कथामृत ।
भाषा करि करि रचे बहुत हरि-चरित सुभाषित ॥

दान मान करि साधु भक्त मन मोद बढ़ायो।
सब कुल-देवन मेटि एक हरि-पंथ दृढ़ायो॥
लक्षावधि ग्रन्थन निरमये श्री वल्लभ विश्वास अट।
गिरिधरनदास कवि-कुल-कमल वैश्य वंश-भूषन प्रगट॥१८८॥

यह चार भक्त पंजाब मे चार बेद पावन भए।
श्री रामानुज वृद्ध हरिचरन बिनु सब त्यागी।
भाई सिह दयाल भजन मैं अति अनुरागी॥
कविवर दास अमीर कृष्ण-पद मै मति पागी।
मयाराम रसरास ललित प्रेमो बैरागी॥
श्री हरि के प्रेम प्रचार-हित जिन उपदेस बहुत दये।
यह चार भक्त पंजाब मे चार बेद पावन भए॥१८९॥

श्रीभक्त रत्नहरिदास जू पावन अमृतसर कियो।
क्षत्रिय बंश गुलाबसिह - सुत मत रामानुज।
रामकुमारी–गर्भ–रत्न त्यागी–मंडल–धुज॥
सुबसु बेद बसु चंद आठ कातिक प्रगटाए।
श्री हरि-महिमा ग्रंथ ललित बत्तीस * बनाए॥

---

*श्री रघुनाथ के परम भक्त अति रसिक विद्वज्जन मान्य महानुभाव श्री रत्नहरिदास जी ने ३२ ग्रंथ नवीन बनाये है। तिन ग्रंथो में प्रति पद जमक अनुप्रासादि अलंकार भरे है और वर्णमैत्री की तो प्रतिज्ञा है कि एक पद वर्णमैत्री बिना नहीं होगा। तथा उनके पढ़ने से अत्यानंद प्रकट होता है कि कथन मे नही आता। जो पुरुष सुनते है, वही मोहित हो जाते है।

१–रामरहस्य। चौपाई दोहादि छंदो मे बाल्यलीला रघुनाथजी की श्लोक ५०००।

२–प्रश्णोत्तरी। दोहा ४० शुक प्रोक्तप्रश्णोत्तरी की भाषा है।

रणजीत सिंह नृप बहु कह्यौ तदपि नाहि दरसन दियो।
श्री भक्त रत्नहरिदास जू पावन अमृतसर कियो ॥१९०॥

त्रेता मे जो लछिमन करी सो इन कलियुग माहि किय।
अग्रज कुन्दनलाल सदा दैवत सम मान्यौ।
परम गुप्त हरि-बिरह अमृत सों हियरो सान्यौ ॥

३–रामललाम–ललित पद छंदों मे रामायण है। श्लोक ६००० राम कलेवा ग्रथवत्।

४–सार संगीत—उक्त छंदों मे श्लोक ६००० भागवत की कथा।

५–नानक-चद्र-चंद्रिका—चौपाई दोहादि छदों में श्री नानक शाह का जीवन चरित वर्णन।

६–दाशरथी दोहावली—दोहा ११०० रामायण है अति चमत्कार युत।

७–जमकदमक दोहावली—दोहा १२५ प्रति दोहा मे ४ जमक है।

८–गूढ़ार्थ दोहावली—दोहा १०० फुटकर हैं।

९–एकादशस्कंध भागवत का चौपाई दोहा में।

१०–कौशलेश कवितावली—कवित्त १०८ रामायण क्रम से।

११–गुरु कीरति कवितावली—१०८ नानक शाह का चरित्र है।

१२–कुसुमक्यारी—कवित्त ३६, दशमस्कंध का समास से।

१३–दशमस्कंध कवितावली—कवित्त १६७ अति विचित्र है।

१४–महिम्न कवितावली—कवित्त २७।

१५–नानक नवक—कवित्त ९ नानक शाह की स्तुति।

१६–रासपंचाध्यायी—कवित्त ६०।

१७–ब्रजयात्रा—कवित्त १५० ब्रज के यात्रा का वर्णन।

१८–कवित्त कादंबिनी—भागवत क्रम से कवित्त १५०।

१९–रघूत्तमसहस्र नाम—श्लोक २५ वाल्मीकि रामायण की कथा भी क्रम से।

२०–पद रत्नावली—विष्णु पदो मे रामायण। इसी प्रकार और भी उत्तम ग्रंथ है।

नहिं तो समरथ यह कहाँ हरिजन गुन सक गाय।
ताहू मैं हरिचंद सो पामर है केहि भाय॥

जगत-जाल मैं नित बँध्यो पस्यौ नारि के फंद।
मिथ्या अभिमानी पतित झूठो कवि हरिचंद॥

धोबी बच सों सिय तजन ब्रज तजि मथुरा गौन।
यह द्वै संका जा हिये करत सदा ही भौन॥

दुखी जगत-गति नरक कहँ देखि क्रूर अन्याय।
हरि-दयालुता मैं उठत संका जा जिय आय॥

ऐसे संकित जीअ सों हरि हरि-भक्त चरित्र।
कबहूँ गायो जाइ नहिं यह बिनु संक पवित्र॥

हरि-चरित्र हरि ही कह्यौ हरिहि सुनत चित लाय।
हरिहि बड़ाई करत हरि ही समुझत मन भाय॥

हम तो श्री वल्लभ-कृपा इतनो जान्यौ सार।
सत्य एक नँदनंद है झूठो सब संसार॥

तासों सब सों बिनय करि कहत पुकार पुकार।
कान खोलि सबही सुनौ जौ चाहौ निस्तार॥

मोरौ मुख घर ओर सों तोरौ भव के जाल।
छोरौ जग साधन सबै भजौ एक नँदलाल॥

हरिश्चन्द्रो माली हरिपदगतानां सुमनसां
सदाऽम्लानां भक्ति प्रकटतर गंधां च सुगुणां।
अगुंफत्सन्मालां कुरुत हृदयस्थां रस-पदा
यतोन्येषां स्वस्य प्रणय सुखदात्रीयमतुला॥

——❀——

प्रेम-प्रलाप

सं० १९३४

हरिश्चंद्र-चंद्रिका
सन् १८७७ ई०
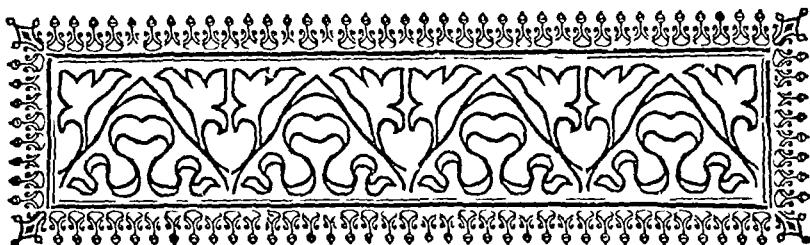
प्रेम-प्रलाप

नखरा राह राह को नीको।
इत तो प्रान जात है तुम बिनु तुम न लखत दुख जी को ॥
धावहु बेग नाथ करुना करि करहु मान मत फीको।
'हरीचंद' अठलानि-पने को दियो तुमहिं बिधि टीको ॥ १ ॥

खुटाई पोरहि पोर भरी।
हमहि छाँड़ि मधुवन मे बैठे बरी कूर कुबरी ॥
स्वारथ लोभी मुँह-देखे की हमसो प्रीति करी।
'हरीचंद' दूजेन के ह्वै कै हा हा हम निदरी ॥ २ ॥

चरित सब निरदय नाथ तुम्हारे।
देखि दुखी-जन उठि किन धावत लावत कितहि अवारे ॥
मानी हम सब भाँति पतित अति तुम दयाल तौ प्यारे।
'हरीचंद' ऐसिहि करनी ही तौ क्यौ अधम उधारे ॥ ३ ॥

प्रभु हो ऐसी तो न बिसारो।
कहत पुकार नाथ तव रूठे कहुँ न निबाह हमारो ॥
जौ हम बुरे होइ नहि चूकत नित ही करत बुराई।
तो फिर भले होइ तुम छाँड़त काहे नाथ भलाई ॥

जो बालक अरुझाइ खेल मैं जननी-सुधि बिसरावै ।
तो कहा माता नाहि कुपित ह्वै ता दिन दूध न प्यावै ।।
मात पिता गुरु स्वामी राजा जौ न छमा उर लावैं ।
तौ सिसु सेवक प्रजा न कोउ बिधि जग मैं निवहन पावैं ।।
दयानिधान कृपानिधि केशव करुण भक्त-भयहारी ।
नाथ न्याव तजते ही बनिहै 'हरीचंद' की बारी ।। ४ ।।

नाथ तुम अपनी ओर निहारो ।
हमरी ओर न देखहु प्यारे निज गुन-गनन बिचारो ।।
जौ लखते अब लौं जन-औगुन अपने गुन बिसराई ।
तौ तरते किमि अजामेल से पापी देहु बताई ।।
अब लौं तो कबहुँ नहि देख्यौ जन के औगुन प्यारे ।
तौ अब नाथ नई क्यौं ठानत भाखहु बार हमारे ।।
तुव गुन छमा दया सो मेरे अघ नहि बड़े कन्हाई ।
तासो तारि लेहु नँद-नंदन 'हरीचंद' को धाई ।। ५ ।।

मेरी देखहु नाथ कुचाली ।
लोक बेद दोउन सों न्यारी हम निज रीति निकाली ।।
जैसो करम करै जग मै जो सो तैसो फल पावै ।
यह मरजाद मिटावन की नित मेरे मन में आवै ।।
न्याय सहज गुन तुमरो जग के सब मतवारे मानै ।
नाथ ढिठाई लखहु ताहि हम निह्चय झूठो जानै ।।
पुन्यहि हेम हथकड़ी समझत तासों नहि बिस्वासा ।
दयानिधान नाम की केवल या 'हरिचंदहि' आसा ।।६।।

लाल यह नई निकाली चाल ।
तुम तो ऐसे निठुर रहे नहि कबहुँ पिया नँदलाल ।।

हमरिहि बारी और भए कह तुम तौ सहज दयाल ।
'हरीचंद' ऐसी नहि कीजै सरनागत प्रतिपाल ॥७॥

अनीतै कहौ कहाँ लौ सहिए ।
जग-ब्यौहारन देखि देखि कै कब लौ यह जिय दहिए ॥
तुम कछु ध्यानहि मै नहि लावत तौ अब कासों कहिए ।
'हरीचंद' कहवाइ तुम्हारे मौन कहाँ लौ रहिए ॥८॥

अहो इन झूठन मोहि भुलायो ।
कबहुँ जगत के कबहुँ स्वर्ग के स्वादन मोहिं ललचायो ॥
भले होइ किन लोह-हेम की पाप पुन्य दोउ बेरी ।
लोभ मूल परमारथ स्वारथ नामहि मै कछु फेरी ॥
इनमै भूलि कृपानिधि तुमरो चरन-कमल बिसरायो ।
तेहि सो भटकत फिस्यौ जगत मै नाहक जनम गँवायो ॥
हाय-हाय करि मोह छाँड़ि कै कबहुँ न धीरज धास्यौ ।
या जग जगती जोर अगिनि मै आयसु-दिन सब जास्यौ ॥
करहु कृपा करुनानिधि केशव जग के जाल छुड़ाई ।
दीन हीन 'हरिचंद' दास को बेग लेहु अपनाई ॥९॥

दीन पैं काहे लाल खिस्याने ।
अपुनी दिसि देखहु करुनानिधि हमपैं कहा रिसाने ॥
माछर मारे हाथ जलहि इक कहत बात परमाने ।
महा तुच्छ 'हरिचंद' हीन सो नाहक भौहहि ताने ॥१०॥

हमहूँ कबहुँ सुख सों रहते ।
छाँड़ि जाल सब निसि-दिन मुख सो केवल कृष्णहि कहते ॥
सदा मगन लीला अनुभव मै दृग दोउ अविचल बहते ।
'हरीचंद' घनस्यान-विरह इक जग-दुख तृन सम दहते ॥११॥

कहो किमि छूटै नाथ सुभाव।
काम क्रोध अभिमान मोह सँग तन को बन्यौ बनाव ॥
ताहू मै तुव माया सिर पैं औरहु करन कुदाँव।
'हरीचंद' बिनु नाथ कृपा के नाहिन और उपाव ॥१२॥

बेदन उलटी सबहि कही।
स्वर्ग लोभ दै जगहि भुलायो दुनिया भूलि रही ॥
सुद्ध प्रेम तुव कहुँ नहि गायो जो श्रुति-सार सही।
'हरीचंद' इनके फंदन परि तुव छबि जिय न गही ॥१३॥

सूरता अपुनी सबै डुलाई।
हमसे महा हीन किंकर सों करि कै नाथ लराई ॥
दयानिधान क्षमासागर प्रभु बिदित नाम कहवाई।
हमरे अघहि देखि तुम प्यारे कीरति तौन मिटाई ॥
कबहुँ न नाथ-कृपा सों मेरे अघ ह्वैहै अधिकाई।
तौ किन तारि हीन 'हरिचन्दहि' मेटत जागत हँसाई ॥१४॥

कुढ़त हम देखि देखि तुव रीतैं।
सब पैं इक सी दया न राखत नई निकाली नीतैं ॥
अजामेल पापी पै कीनी जौन कृपा करि प्रीतैं।
सो 'हरिचंद' हमारी बारी कहाँ बिसारी जी तैं ॥१५॥

बड़े की होत बड़ी सब बात।
बड़ो क्रोध पुनि बड़ी दयाहू तुम मैं नाथ लखात ॥
मोसे दीन हीन पै नहि तौ काहे कुपित जनात।
पै 'हरिचंद' दया-रस उमड़े ढरतेहि बनिहै तात ॥१६॥

हमारे जिय यह सालत बात।
दयानिधान नाम तुव आछत हम ऐसेहिं रहि जात ॥

और अघी तो तरत पाप करि यह श्रुति-कथा सुनात ।
हम मैं कौन कसर नँद-नंदन यह कछु नाहि जनात ।।
जहँ लौं सोचे सुने किये अघ वदि वदि संज्ञा प्रात ।
तऊ तरन को कारन दूजो 'हरिचन्दहि' न लखात ।।१७।।

अहो हरि अपुने विरुदहि देखौ ।
जीवन की करनी करुनानिधि सपनेहुँ जनि अवरेखौ ।।
कहुँ न निबाह हमारो जौ तुम मम दोसन कहँ पेखौ ।
अवगुन अमित अपार तुम्हारे गाइ सकत नहि सेखौ ।।
करि करुना करुनामय माधव हरहु दुखहि लखि भेखौ ।
'हरीचंद' मम अवगुन तुव गुन दोउन को नहि लेखौ ।।१८।।

करुना करि करुनाकर बेगहि सुध लीजिए ।
सहि न सकत जगत-दाव तुरत दया कीजिए ।।
हमरे अवगुनहि नाथ सपनेहुँ जिनि देखौ ।
अपुनी दिसि प्राननाथ प्यारे अवरेखौ ।।
हम तो सब भाँति हीन कुटिल कूर कामी ।
करत रहत धन-जन के चरन की गुलामी ।।
महा पाप पुष्ट दुष्ट धरमहि नहि जानौं ।
साधन नहि करत एक तुमहि सरन मानौं ।।
जैसे है तैसे तुव तुमही गति प्यारे ।
कोऊ विधि राखि लेहु हम तो सबहि हारे ।।
द्रुपद-सुता अजामिल गज की सुध कीजै ।
दीन जानि 'हरीचंद' बाँह पकरि लीजै ।।१९।।

जोड़ को खोजि लाल लरिए ।
हम अवलन पै बिना बात ही रोस नहो करिए ।।

मधुसूदन हरि कंस-निकंदन रावन-हरन मुरारि ।
इन नॉवन की सुरत करो क्यों ठानत हमसों रारि ॥
निबलन कों बधि जस नहि पैहौ सॉची कहत गुपाल।
'हरीचंद' ब्रज ही पैं इतने कहा खिसाने लाल ॥२०॥

पियारे बहु विधि नाच नचायो ।
यह नहि जानि परी केहि सुख के बदले इतो दुखायो ।
ब्रज बसि कै सब लाज गॅवाई घर घर चाव चलायो ॥
हम कुल-बधुन कलंकिनि कुलटा डगरै डगर कहायो ।
हम जानी बदनामी दै हरि करिहैं सब मन-भायो ।
ताको फल यों उलटो दीनो भलो निबाह निभायो ॥
ऐसी नहि आसा ही तुम सों जो तुम करि दिखरायो ।
'हरीचंद' जेहि मीत कह्यौ सोइ निठुर बैरि बनि आयो ॥२१॥

जिनके देव गुबरधन-धारी ते औरहि क्यौं मानै हो ।
निरभय सदा रहत इनके बल जगतहि तृन करि जानै हो ॥
देवी देव नाग नर मुनि बहु तिनहि नाहि उर आनै हो ।
'हरीचंद' गरजत निधरक नित कृष्ण कृष्ण बल साने हो ॥२२॥

हमारे ब्रज के सरबस माधो ।
किन ब्रत जोग नेम जप संजम बृथा गोरि तन साधो ॥
अष्ट-सिद्धि नव-निधि को सब फल यहै न और अराधौ ।
'हरीचंद' इनही के पद-जुग-पंकज मन-अलि बॉधो ॥२३॥

पिय तोहि राखौगी हिय मैं छिपाय ।
देखन न दैहौ काहु पियारे रहौगी कंठ निज लाय ॥
पल की ओट होन नहि दैहौ लूटौगी सुख-समुदाय ।
'हरीचंद' निधरक पीओंगी अधरामृतहि अघाय ॥२४॥

तुम सम कौन गरीब-नेवाज ।
तुम साँचे साहेब करुनानिधि पूरन जन-मन-काज ॥
सहि न सकत लखि दुखी दीन जन उठि धावत ब्रजराज ।
बिह्वल होइ सँवारत निज कर निज भक्तन के काज ॥
स्वामी ठाकुर देव साँच तुम वृन्दावन-महराज ।
'हरीचंद' तजि तुमहि और जे जाँचत ते बिनु-लाज ॥२५॥

तो तेरे मुख पर वारी रे ।
इन अँखियन को प्रान-पिया छबि तेरी लागत प्यारी रे ॥
तुम बिनु कल न परत पिय प्यारे बिरह बेदना भारी रे ।
'हरीचंद' पिय गरे लगाओ पैयाँ परौं गिरधारी रे ॥२६॥

तुमरी भक्त-बछलता साँची ।
कहत पुकारि कृपानिधि तुम बिनु,
और प्रभुन की प्रभुता काँची ॥
सुनत भक्त-दुख रहि न सकत तुम,
बिनु धाए एकहु छिन बाँची ।
द्रवत दयानिधि आरत लखतहि,
साँच झूठ कछु लेत न जाँची ॥
दुखी देखि प्रहलाद भक्त निज,
प्रगटे जग जै जै धुनि माँची ।
'हरीचंद' गहि बाँह उबार्यौ,
कीरति नटी दसहुँ दिसि नाँची ॥२७॥

मेरे माई प्रान-जीवन-धन माधो ।
नेम धरम व्रत जप तप सबही जाके मिलन अराधो ॥
जो कछु करौं सबै इनके हित इन तजि और न साधो ।
'हरीचंद' मेरे यह सरबस भजौं कोटि तजि बाधो ॥२८॥

हौं जमुना जल भरन जात ही मारग मोहिं मिले री कान्ह ।
करि मुठ-भेर अंक बरबस भरि रोक्यौ री मोहिं अंचल तान ॥
भौंह नचाइ प्रेम चितवन लखि हँसि मुसुकाइ नैन रह्यौ जोरि ।
घट गिराइ करि और अचगरी दूर खरो भयो अंचर छोरि ॥
कहा कहौं कछु कहि नहिं आवत करिकै हिये काम की चोट ।
मन लै तन लै नैन-चैन लै प्रानहुँ लै भयो अँखियन ओट ॥
कहा करौं कित जाऊँ सखी री वा बिन मो कहँ कछु न सुहाय ।
हियो भर्यौ आवत छिनही छिन हाय कहा करौं कछु न बसाय ॥
कित पाऊँ कित अंक लगाऊँ कित देखूँ वह सुंदर रूप ।
हाथ मिले बिन किमि जिय राखो कहाँ मिलै मेरे गोकुल-भूप ॥
रोअत बीतत रैन दिवस मोहि बेबस ह्वै हौं रहौं करि हाय ।
जौ तन तजै मिलै मोहि निहचै तौ जिअ त्यागौं कोटि उपाय ॥
हाय कहा करौं करि न सकत कछु रोअत ही जैहै सखि जीय ।
'हरीचंद' बिनु मिले स्याम घन सुंदर मोहन प्यारे पीय ॥२९॥

जनन सो कबहूँ नाहिं चली ।
सदा सर्बदा हारत आए जानत भाँति भली ॥
कहा कियो तुम बलि राजा सो चतुराई न चली ।
बाँधन गए बँधाए आपुहि व्यर्थहि बने छली ॥
भीषम नै परतिज्ञा टारी चक्र गहायो हाथ ।
अरजुन को रथ हाँकत डोले रन मै लीने साथ ॥
जसुदा जू सो हाथ बँधायो नाचे माखन काज ।
मैं रिनियाँ तुम्हरो गोपिन सो कह्यौ छोड़ि कै लाज ॥
रिन बहु जानि छोड़ि कै गोकुल भागे मथुरा जाय ।
सदा सर्वदा हारत आए भक्तन सो ब्रजराय ॥
हम सोहूँ हारत ही बनिहै कबहुँ न जैहो जीत ।
तासों तारौ 'हरीचंद' को मानि पुरानी प्रीति ॥३०॥

श्री राधे कहा अजगुत कियो ।
अखिल लोक-निकुंज-नायक सहज निज करि लियो ।।
जासु माया जगत मोहत लखि तनिक दृग-कोर ।
सोई प्रभु तुव मोह मोहे नचत भौंह मरोर ।।
रसन को अवलम्ब जेहि आनंदघन स्रुति कहत ।
सोई रसिक कहात तो सो तोहि सो सुख लहत ।।
जासु रूठे जगत मै कछु सेस नहि रहि जात ।
सोई तव रूठे बिकल ह्वै दीन बने लखात ।।
जगत-स्वामी नाम के करि भेद जौन कहात ।
सो कहत तोहि स्वामिनी यह अतिहि अचरज बात ।।
रिखिन जो रस नहि लह्यौ करि थके कोटि प्रसंस ।
सहज किय 'हरिचंद' सो करि प्रगट बल्लभ-वंस ।।३१।।

तुम बिनु तलपत हाय बिपति बढ़ी भारी हो ।
तुम बिनु कोउ नहि मोर पिया गिरधारी हो ।।
तुम बिनु व्याकुल प्रान धरौं कैसे धीर हो ।
आइ मिलौ गर लगौ पिया बलबीर हो ।।
तुम बिनु सूनी सेज देखि जिय जारई ।
काम अकेली जानि बान कसि मारई ।।
तुम बिनु अति अकुलाय बैन नहि कहि सकौं ।
मिलौ पिया 'हरिचंद' भई बौरी बकौं ।।३२।।

करनी करुनासिंधु की कासो कहि जाई ।
अति उदार गुन-गन भरे गोबरधन-राई ।।
तनिक तुलसि दल कें दिये तेहि बहु करि मानै ।
सेवा लघु निज दास की परबत सी जानै ।।

अजामेल सुत आपनो तुव नाम पुकार्यौ।
ताके अघ सब दूर कै तुम तुरत उबार्यौ ॥
कहा ब्याध गजराज सों करनी बनि आई।
कहा गीध गनिका कियो तार्यो तुम धाई ॥
कहा कपिन को रूप है का गुन बड़िआई।
तिन सो बोले बन्धु से ऐसी करुनाई ॥
कहाँ सुदामा बापुरो कहँ त्रिभुवन स्वामी।
ताकी अग्रज सारखी किय चरन-गुलामी ॥
कहाँ ग्वाल और ग्वालिनी करनी की पूरी।
जिनके सँग बन मैं फिरे हरि करत मजूरी ॥
ब्रज के मृग पसु भीलनी तृन बीरुध जेते।
बंधु सरिस माने सबै करुनानिधि तेते ॥
कहाँ अधम अघ सों भर्यौ 'हरिचंद' भिखारी।
जेहि माधो सहजहि लियो गहि बाँह उबारी ॥३३॥

मेरी तुमरी प्रीति पिया अब जानि गए सब लोगवा।
लाख छिपाए छिपे नहि नैना इन प्रगट्यो संजोगवा ॥
हँसत सबै मारत मिलि ताना सुनि सुनि बाढ़त सोगवा।
ताहू पर 'हरिचंद' मिलत नहि कठिन भयो यह रोगवा ॥३४॥

प्राननाथ मन-मोहन प्यारे बेगहि मुख दिखराओ।
तलफत प्रान मिले बिनु तुमसो क्यो न अबहि उठि धाओ॥
केहि बिधि कहौं कहत नहि आवै जिय के भाव पियारे।
अपनो नेह हमहि पहिचानत हे ब्रजराज-दुलारे ॥
जग मैं जा कहँ प्रीति-रीति सब भाषत हैं नर-नारी।
तासों अधिक बिलच्छन हमरी प्रेम-चाल कछु न्यारी ॥

मोह कहत कोउ भक्ति वखानत नेह प्रेम कोउ भाखै ।
तिन सब सों वढ़ि प्रीति हमारी कहो नाम कह राखैं ।।
समुझत कोउ न वात हमारी पागल सवहि वखानै ।
तुमरे नेह अलौकिक की गति कहौ कोऊ किमि जानै ।।
जाके कहे-सुने जग रीझत सो कछु और कहानी ।
हम जिमि पागल वकत सुनत नहि तासों कोउ मम वानी ।।
जानत नहि परिनाम आपनो केवल रोअन जानै ।
अति विचित्र मेरी गति प्यारे कैसे कहो वखानै ।।
छूटत जग न धरम कछु निवहत रहत जीअ अकुलाई ।
होत न कछु निरनै का ह्वैहै तुम विन कुँअर कन्हाई ।।
कहा करैं कित जायँ पियारे कछुक उपाव वताओ ।
'हरीचंद' ऐसे नेहिन को क्यौ न धाइ गर लाओ ।।३५।।

तुम विन प्यारे कहूँ सुख नाहीं ।
भटक्यौ वहुत स्वाद-रस-लंपट ठौर-ठौर जग माँहीं ।।
प्रथम चाव करि वहुत पियारे जाइ जहाँ ललचाने ।
तहँ ते फिर ऐसो जिय उचटत आवत उलटि ठिकाने ।।
जित देखो तित स्वारथ ही की निरस पुरानी वातैं ।
अतिहि मलिन व्यवहार देखि कै घिन आवत है तातैं ।।
हीरा जेहि समझत सो निकरत काँचो काँच पियारे ।
या व्यवहार नफा पाछे पछतानो कहत पुकारे ।।
सुंदर चतुर रसिक अरु नेही जानि प्रीति जित कीनो ।
तित स्वारथ अरु कारो चित हम भले सवहि लख लीनो ।।
सव गुन होईं जुपै तुम नाहीं तौ विनु लोन रसोई ।
ताही सों जहाज-पच्छी-सम गयो अहो मन होई ।।

अपने और पराए सब ही जदपि नेह-अति लावैं।
पै तिन सों संतोख होत नहिं बहु अचरज जिय आवैं ॥
जानत भलें तुम्हारे बिनु सब बादहि बीतत साँसैं।
'हरीचंद' नहि छुटत तऊ यह कठिन मोह की फाँसैं ॥ ३६ ॥

भूलि भव-भोगन झूमत फिर्यौ।
खर कूकर सूकर लौ इत उत डोलत रमत फिर्यौ।
जहँ जहँ छुद्र लह्यौ इंद्री-सुख तहँ तहँ भ्रमत फिर्यौ ॥
छन भर सुख नित दुखमय जे रस तिन मैं जमत फिर्यौ ॥
कबहुँ न दुष्ट मनहि करि निज बस कामहि दमत फिर्यौ।
'हरीचंद' हरि-पद-पंकज गहि कबहुँ न नमत फिर्यौ ॥ ३७ ॥

जो पै ऐसिहि करन रही।
तो क्यो इतनी प्रीत बढ़ाई जो न अंत निबही ॥
मीठे मीठे बचन बोलि कै दीनी क्यों परतीति।
अब क्यौ छाँड़ि पराए ह्वै गए कहो कौन यह नीति ॥
जौ मधुपुरी गमन तुम पहिलेहि बदि राखी मन माही।
क्यों बृन्दाबन सरद-चाँदनी बिहरे दै गल-बाही ॥
कहाँ गई वह बात तुम्हारी कहाँ गयो वह प्यार।
कित गई प्रेम भरी वह चितवनि जिहि लखि लाजत मार ॥
पहिले कहि देते हम सो नहि निबहैगो यह प्रेम।
'हरीचंद' यह दगा दई क्यों ठानि प्रीति को नेम ॥३८॥

प्राननाथ ब्रजनाथ भई सब भाँति तिहारी।
बिगरी सबही भाँति कोऊ नाहिन रखवारी ॥
कहा करै कित जायँ ठौर नहि कतहुँ लखाई।
सब भाँतिन सों दीन भई दोउ लोक गँवाई ॥

मानै धरम न एक रही तुव पद अनुरागी।
कठिन करम अरु ज्ञान लखत दूरहि ते भागी ॥
तुव पद-बल अभिमान न कोउ कहँ तृन सम जान्यो।
हित अनहित नहि लख्यौ जगत काहुवै न मान्यो ॥
काहू की नहि होइ रही कोउ कियो न अपनो।
ऐसी बेसुध जगत बसी मनु देखत सपनो ॥
भली बात जेहि जगत कहत सो एक न कीनी।
रही कुचालन सनी सदा गति अपजस पीनी ॥
काहू सों नहि डरी रही बहु बैर बढ़ाई।
अनहित जगहि बनायो नहि सीखी चतुराई ॥
महामोह मैं बही सदा दुख ही दुख पायो।
रोअत ही करि हाय हाय सब जनम गँवायो ॥
सुख केहि कहत न हाय कबौ सपनेहूँ जान्यौ।
जग के स्वादन हूँ कहँ नहि कबहूँ पहिचान्यौ ॥
उमगि उमगि कै सदा रहीं रोअत दुख मानी।
कोउ सो मरम न कह्यो रही मन फिरत दिवानी ॥
'हरीचंद' कोउ भाँति निवाही प्रीति तुम्हारी।
पै अब सो नहि चलत हहा प्यारे बनवारी ॥३९॥

खोजहू न लीनो फेरि नैन-बान मारि कै।
तड़पत ही छोड़ि गयो घायल करि डारि कै ॥
भौंह की कमान तान गुन अंजन छाकि कै।
काम जहर सो बुझाइ मारयौ मोहि ताकि कै ॥
व्याकुल हौं तलपत तेहि दया नाहि आवई।
पानिप पानिप पिआइ मोहि ना जिआवई ॥
प्रानहु अवसाने तन व्याकुल भई भारी।
'हरीचंद' निरदै मन-मोहना सिकारी ॥४०॥

जहाँ तहाँ सुनियत अति प्यारो
प्यारे हरि को सुखद बिसद जस।
करन रंध्र मैं स्रवत सुधा सम
सीतल होत हियो सुनि अति रस ॥
अजामेल गज सों जो कीनी
दीन सुदामा कों जु कियो हित।
सबरी कपि गनिका की करनी
नाथ-कृपा गावत सब जित तित ॥
बधिक बिराध ब्याध जवनादिक
तारे छिनक बार लागी नहिं।
पावन कियो पुलिन्दी-गन को दै
कुच–कुंकुम–जुत–पद–रज महिं ॥
भाँति अनेक बिबिध विधि वरनित
अगिनित गुनगन गथित मथित श्रुति।
जहाँ तहाँ सुनियत सबके मुख
श्रवन सुखद संतत हिय हित अति ॥
कोउ जस कोउ गरीब-नेवाजी
कोऊ पतित-पावनता गावत।
दीन - बंधु - ताई हितकारी
सरस सुभाव नेह बरसावत ॥
नृप नारी द्रौपदी आदि सम
गावत ग्राम नगर नारी-नर।
हियो भर्‌यौ आवत सुनि सुनि कै
गोविद नामांकित जस सुंदर ॥
कहँ लौ कहौ कहत नहि आवत
जो हरि करत पतित-हित कारन।

'हरीचंद' सरनागत - वत्सल
दीन–दयानिधि पतित - उधारन ।।४१।।

मनवत मनवत ह्वै गयो भोर ।
खसित निसा-नायक पच्छिम दिसि सोर करत तमचोर ।।
पियहि सबै निसि जागत बीती खरे खरे कर जोर ।
आलस बस अब लरखरात पग निरखत तुव दृग कोर ।।
क्यौं सखि प्रेमहि लाज लगावति करिकै बृथा मरोर ।
'हरीचंद' गर लगु उठि पिय के हौ तोहिं कहत निहोर ।।४२।।

आजु मेरे भोरहि जागे भाग ।
आए पिया तिया-रस-भीने खेलत दृग जुग फाग ।।
भलौ हमैं भूले तौ नाही राख्यौ जिय अनुराग ।
साँझ भोर एक ही हमारे तुव आवन की लाग ।।
मंगल भयो भोर मुख निरखत मिटे सकल निसि दाग ।
'हरीचंद' आओ गर लागो साँचो करौ सोहाग ।।४३।।

हम तुम पिया एक से दोऊ ।
मानौ बिलग न नेक साँवरे घट बढ़िकै नहि कोऊ ।।
तुम जागे हमहूँ निसि जागे तिय सँग जोहत वाट ।
खरे बिताई निसि हम दोउन मनवत पकरि कपाट ।।
सिथिल वसन तुमरे औ हमरे भोगत पछरा खात ।
थाकी गति दोउन की आलस इत उत आवत जात ।।
अरुनारे दृग अंजन फैल्यौ बिलसत होइ हरास ।
टूटे बन्द कहा कंचुकि के लपटत लेत उसास ।।
हम तुम एक प्रान मन दोऊ यामैं कछू न भेद ।
'हरीचंद' देखहु बिन श्रम सों दोऊ के मुख स्त्रेद ।।४४।।

ईमन

गोरी-गोरी गुजरिया भोरी कान्हर नट के संग
ललित जमुन-तट नव बसंत करि होरी।
सोभा सिन्धु बहार अंग प्रति दिपति देह
दीपक सी छबि अति मुख सुदेस ससि सों री॥
आसा करि लागी पिय सो रट पंचम सुर गावत ईमन
हट मेघ बरन 'हरिचंद' बदन अभिराम करी बरजोरी।
सारँगनैनि पहिरि सुहा सारी भयो कल्यान
मिले श्री गिरिधारी छबि पर जन तृन तोरी॥४५॥

प्यारे की छबि मनमानी सिर मोर मुकुट
नट भेख धरे मेरे घर आए दिलजानी।
चतुर खिलारी गिरिधारी हँसि हँसि गर लाए
मन भाए 'हरिचंद' न सुरत भुलानी॥४६॥

प्यारी जू के तिल पर बलि बलिहारी।
जा मिस बसत कपोल न अनुछिन लघु बनि पिय गिरधारी॥
पिय की दीठ चीन्ह मनु सोहत लागत अति ही प्यारी।
'हरीचंद' सिगार तत्व सी लखि मोहन मनवारी॥४७॥

कहु रे श्रीवल्लभ-राजकुमार।
दीन-उधारन आरति-नासन प्रगट कृष्ण अवतार॥
काहे तू भरमायो डोलत साधन करत हजार।
यह भव-रुज क्यौंहू नहि जैहै विना चरन-उपचार॥
कौन पतित सो प्रेम निबहिहै जो बहु अघ-आगार।
श्रुति-पुरान कछु काम न ऐहै यह तोहि कहत पुकार॥
बुरे दिनन को साथी नहि कोउ मात-पिता-परिवार।
'हरीचंद' तासो विट्ठल भजु अरे यहै श्रुति-सार॥४८॥

जौ पैं श्रीवल्लभ-सुतहिं न जान्यौ ।
कहाँ भयो साधन अनेक मैं परिकै बृथा भुलान्यौ ।।
वादि रसिकता अरु चतुराई जौ यह जीअ न आन्यौ ।
मर्‌यौ बृथा विषया रस लंपट कठिन करम मैं सान्यौ ।।
सोई पुनीत प्रीत जेहि इनसो बृथा वेद मथि छान्यौ ।
'हरीचंद' श्रीविट्ठल विनु सब जगत झूठ करि मान्यौ ।।४९।।

पतित-उधारन नाम सही ।
श्रीवल्लभ-विट्ठल विनु दूजो नेह निवाहन-हार नहीं ।।
साधन बृथा न करु मन लंपट भूलि वुद्धि क्यो जात वही ।
कोऊ कछू काम नहि ऐहै क्यो डोलत करि मही-मही ।।
दीनन को हित नाहिन दूजो यहै वात करि सपथ कही ।
'हरीचंद' से अधम-उधारन अरे यही इक यही-यही ।।५०।।

चिर जीयो मेरो श्रीवल्लभ-कुल ।
माया मत खर तिमिर दिवाकर
प्रेम अमृत पय रस सागर-पुल ।।
कलि खल-गन-उद्धरन रसिक-जन
सरन-करन विरहिन विरहाकुल ।
'हरीचंद' दैवी जन प्रियतम
पतित-उद्धरन महिमा अन-तुल ।।५१।।

श्रीवल्लभ प्रभु मेरे सरवस ।
पचौ बृथा करि जोग जाय कोउ
हमको तो इक यहै परम रस ।।
हमरे मात पिता पति बंधू
हरि गुरु मित्र धरम धन कुल जस ।

'हरीचंद' एकहि श्रीवल्लभ
तजि सब साधन भए इनके बस ॥५२॥

गीत

बना मेरा ब्याहन आया बे ।
बना मेरा सब मन-भाया बे ॥
बना मेरा छैल छबीला बे ।
बना मेरा रंग-रँगीला बे ॥

बनरा रँगीला रँगन मेरा सबन के दृग छावना ।
सुंदर सलोना परम लोना श्याम रंग सुहावना ॥
अति चतुर चंचल चारु चितवन जुवति-चित्त-चुरावना ।
ब्याहन चला रँग-रस-रला जसुमति-लला मन-भावना ॥

बना के मुख मरवट सोहै बे ।
बना देखन मन मोहै बे ॥
बना केसरिया जामा बे ।
बना लखि मोहत कामा बे ॥

लखि कान मोहै स्याम छबि पर लखत सुंदर जेहरा ।
सिर जरकसी चीरा झुकाए खुला तिस पर सेहरा ॥
कटि ललित पटुका बँधा सूहा सुभग दोहरा तेहरा ।
जियमे हमारी नवल दुलहिन-हेत धरे सनेहरा ॥

बना के नैना बाँके बे ।
बने दोनो मद छाके बे ॥
बना की भौह कमानै बे ।
बनी का हिअरा छानै बे ॥

छाने बना का नवल हिअरा भौह बाँकी प्यार की ।
जुलफैं बनी उलफैं जिया की हिलत मोहन मार की ॥

कर सुरख मेंहदी पग महावर लपट अतर अपार की ।
जिय बस गई सूरत निवानी दूलहे दिलदार की ॥

बना मेरा सब रस जानै वे ।
बना प्रीतहि पहिचानै वे ॥
बना चतुरा रस-बादी वे ।
बनी-रस-अधर-सवादी वे ॥

रस अधर स्वादी बनी का अँग-अंग रस कस के भरा ।
जिय प्रेम मानै नेह जानै सकल गुन-आगर खरा ॥
विधि मदन मानी छवि गुमानी नवल नेही नागरा ।
निधि रसिक की 'हरिचंद' सरवस नंद-बंस उजागरा॥५३॥

लावनी

सखी चलो साँवला दूलह देखन जावैं ।
मधुरी मूरत लखि अँखियाँ आज सिरावैं ॥
नीली घोड़ी चढ़ि बना मेरा बन आया ।
भोले मुख मरवट सुंदर लगत सुहाया ॥
जामा चीरा जरकसी चमक मन भाया ।
सूहा पटुका कटि कसे भला छबि छाया ॥
हाथो मेहदी मन हाथो हाथ चुरावैं ।
मधुरी मूरत लखि अँखियाँ आज सिरावैं ॥
सिर मौर रँगीला तुर्रो की छवि न्यारी ।
मोती लर गूथा सेहरा मुख मन-हारी ॥
फूलो की वेनी झबिया लटकै प्यारी ।
सिर-पेच सीस कानन कुंडल छवि भारी ॥
घुँघराली अलकै नैनन को अति भावैं ।
मधुरी मूरत लखि अँखियाँ आज सिरावैं ॥

तैसी दुलहिन सँग श्रीवृषभानु-कुमारी।
मौरी सिर सोहत अंग केसरी सारी॥
मुख वरवट कर मैं चूरी सरस सँवारी।
नकबेसर सोभित चितहि चुरावनवारी॥
सिर सेंदुर मुख मैं पान अधिक छबि पावैं।
मधुरी मूरत लखि अँखियाँ आज सिरावैं॥

सखियन मिलि रस सों नेह गाँठ लै जोरी।
रहिं वारि-फेरि तन मन धन सब तृन तोरी॥
गावत नाचत आनँद सों मिलि कै गोरी।
मिलि हँसत हँसावत सकत न कंकन छोरी॥
'हरिचंद' जुगल छबि देखि बधाई गावै।
मधुरी मूरत लखि अँखियाँ आज सिरावै॥५४॥

ईमन, ताल नाम गर्भित

जै आदि ब्रह्म औतारी इक अलख अगोचर-चारी।
लक्ष्मीपति घन जलद बरन तन रुद्र तीन
दृग चार बदन पति सुन्दर गरुड़ सवारी।
कहा कहों री रूपक हरि को चलत कबहुँ
धीमे कहुँ द्रुत गति बृंदाबन बनवारी॥
सुफल कतल कर जुलुफ बनी सिर भक्त जनन के आड़े आवत
'हरीचंद' यह सृष्टि रची रचि अचिर चरचरी सारी॥५५॥

लावनी

तुम बिनु ब्याकुल बिलपत बन-बन बनमाली।
मति करु बिलंब उठि चलु बेगहि सुनु आली॥
तुव ध्यान धारि धरि बंसी अधर बजावै।
भरि बिरह नाम लै राधा राधा गावैं॥

तुव आगम सुमिरत छन-छन सेज सजावैं ।
मग लखत द्वार पर बार बार उठि धावै ।।
मुरछात देखि तुव बिना सेज कहँ खाली ।
मति करु बिलंब उठि चलु बेगहि सुनु आली ।।

सजोग साज सिंगार न तुव बिनु भावैं ।
तन चंद चाँदनी औरहु बिरह जरावै ।।
जल चंदन माला फूल न कछू सुहावैं ।
तुम आगम बिनु कर मीजि मीजि पछतावै ।।
भई रैन चैन बिनु डसन मदन विख व्याली ।
मति करु बिलंव उठि चलु बेगहि सुनु आली ।।

अपने अपराधन कबहूँ बैठि बिचारै ।
तुव मिलन मनोरथ अल-बल बैन उचारै ।।
कबहूँ संगम-सुख सुमिरत हियरो हारै ।
कबहूँ तेरे गुन कहि कहि धीरज धारै ।।
भई रात ऊजरी दुख वियोग सों काली ।
मति करु बिलंब उठि चलु बेगहि सुनु आली ।।

सुमिरत तोहि दृग भरि रहत श्याम सुखदाई ।
गद्‌गद गल बचनहु बोलि न सकत कन्हाई ।।
पिय दुखित दसा देखी नहि अब तो जाई ।
कर जोरत मिलु अब मोहन सों सखि धाई ।।
'हरिचंद' मनावत पूरब छाई लाली ।
मति करु बिलंब उठि चलु बेगहि सुनु आली ।।५६।।

अष्टपदी

रासे रमयति कृष्णं राधा ।
हृदि निधाय गाढ़ालिंगन कृत हृत विरहातप-बाधा ।।

आश्लिष्यति चुम्वति परिरम्भति पुनः पुनः प्राणेशं ।
सात्विकभावोदयशिथिलायित मुक्ताऽकुञ्चितकेशं ॥
भुजलतिकाबन्धनमावद्धं कामकल्पतरुरूपं ।
सीमन्तिनी कोटिशतमोहनसुन्दरगोकुलभूपं ॥
स्वालिंगनकण्टकित-तनु-स्पर्शोदितमदनविकारं ।
स्खलित वचनरचन श्रवण स्खलितीकृतरतरति-मारं ॥
रतिविपरीतलालसालसरस लसित मोहिनीवेशं ।
निज सीत्कारमोहितप्रमदादत्तमाधवावेशं ॥
हुंकृतिद्विगुणसुरतपणश्रमलोलित नागाभूपं ।
निजासेचनकसिंचित शशधार-मुख-स्वेदपीयूषं ॥
वात्स्यायनविधिविहितपडङ्ग विलक्षण रक्षण दक्षं ।
चतुराशीति चतुर तरता धृत कामकलाकलपक्षं ॥
स्वेद-सुगंधविमूर्च्छितालिकुल सहकिङ्किणिकलरावं ।
नखदानाधरखण्डनजनितोद्भटसहचारीभावं ॥
कठिनकुचामर्दन शिथिलीकृतकरकङ्कणभुजबन्धं ।
प्रतिमुद्रितसिंदूरकज्जलादिक मुख हृदय स्कन्धं ॥
निशावसानाजागर जनित सखीजनमोहित तन्द्रे ।
गायति गोकुलचन्द्राग्रज कवि हरिश्चन्द्र कुलचन्द्रे ॥५७॥

गरबो

थारे मुख पर सुंदर श्याम, लहरी लट लटके छे ।
जे ने जोईने म्हारो मन लाल, जाइ-जाइ अटके छे ॥
थारा सुन्दर नैन विशाल, प्यारा अति रूडा छे ।
जेने जोईने जग ना रूप, लागे भूंडा छे ॥
थारा सुन्दर गोल कपोल, गुलाब जेवा फूल्या छे ।
जेने जोईने मन-भ्रमर, जुवतिओ ना भूल्या छे ॥

तारे कंठे वे बघनखा, मनोहर सोहे छे।
जेवा नव ससिना वे कटकां, लखतॉ मोहे छे॥
तारा बोली अमृत सनी, करण-सुखदाई छे।
जेने सांम्हड़तॉ मन जाय, एह्वी मिठाई छे॥
तारो नख सिख रूप अनूप, सोभा प्यारी छे।
जेनी सोभा लखीने 'हरीचन्द' वलिहारी छे॥५८॥

वाला वल्लभ सुमिरण करतॉ सहु दुख भागे छे।
जेनो मङ्गलमय सुभ नाम अमृत जेवो लागे छे॥
जेनो सुन्दर श्याम सरूप कृष्ण जेवो सोहे छे।
जेने कंकुम तिलक ललाटे म्हारूँ मन मोहे छे॥
जेने नैणा जुगल विशाल कृपा-रस भरी रह्या छे।
जेमा राधा कृष्णना रूप शोभा करी रह्या छे॥
जेनी लॉवी लॉबी बॉहो शोभा पाए छे।
जेथी तार्‌या पतित हजार म्हारो मन भाए छे॥
जेना चरणे जन ना शरण तीर्थमय उभये छे।
जेने जॉतॉ जनना चित्त भिया थाय निभये छे॥
म्हारा लछमन-नन्दन प्यारा गुरु केह्वाये छे।
जेना पद-रज पर 'हरिचंद' वलि वलि थाए छे॥५९॥

कवित्त

जानि विन पीतम सहाय लै वसंत काम,
इनहीं कबहुँ महा प्रलय प्रचारे हैं।
आयो जानि आज प्रान-प्यारो 'हरिचंद' है कै,
सीतल सुगंध मंद मंद पग धारे हैं।
मूँदि दै झरोखन को डारि परदान जामै,
आवै नाहि क्योहूँ पौन अति वजमारे है।

'हरीचंद' हेतु हरि कलप तरोवर में,
लपटि रही कीरति की बेलि हरियारी है ॥६३॥

दीपावली का पद

कुंज-महल रतन-खचित जगमग प्रतिबिम्बन अति
सोभित ब्रज-बाल-रचित दीप-मालिका।
इक-इक सत-सत लखात सो छबि बरनी न जात
जोतिमई सोहति सुंदर अरालिका ॥
मानहु सिसुमार चक्र उडुगन सह लसत गगन
उदित मुदित पसरित दस दिसि उजालिका।
मेट यौ तम तोम तमकि बहु रबि इक साथ चमकि,
अगनित इमि दीप करै कौन तालिका ॥
सोरह सिंगार किए पीतम को ध्यान हिए,
हाथ लिए मंगलमय कनक थालिका।
गावत मिलि सरस गीत झलकत मुख परम प्रीत,
आई मिलि पूजन प्रिय गोप-बालिका ॥
राधा-हरि संग लसत प्रमुदित मन हेरि हँसत,
जुग मुख छबि छूट परत गोख-जालिका।
'हरीचन्द' छबि निहार मान्यौ त्यौहार चार,
धनि-धनि दीपावलि सब ब्रज-रसालिका ॥६४॥

जीव का दैन्य

कहिए अब लौ ठहर्‌यौ कौन।
सोई भाग्यो तुव साम्हे सो गयो परिछ्यौ जौन ॥
नारद विश्वामित्र पराशर महा-महा तप-खानि।
असन बसन तजि बन मे निबसे जन कहँ कंटक जानि ॥

तिनहूँ की जब भई परिच्छा तब न नेक ठहराए ।
माया-नटी पकरि तिनहूँ कहँ पुतरी से नचवाए ।।
तो जे जग मैं बसत विषय के कीट पाप मैं पागे ।
तिनको तुम परखन का चाहत हम तो अघ अनुरागे ।।
अपुनो बिरुद समुझि करुनानिधि निज गुन-गनहि विचारी ।
सब बिधि दीन हीन 'हरीचंदहि' लीजै तुरत उधारी ।।६५।।

प्यारे मोहिं परखिए नाहीं ।
हम न परिच्छा जोग तुम्हारे यह समुझहु मन माही ।
पापहि सो उपज्यौ पापहि मे सगरो जनम सिरान्यो ।।
तुव सनमुख सो न्याव-तुला पै कैसे कै ठहरान्यौ ।
कीटहु ते अति तुच्छ मंद मति अधम सबहि बिधि हीना।।
सो ठहरै किमि जाँच-समय में जो सबही बिधि दीना ।।
दयानिधान भक्त-वत्सल करुनामय भव-भयहारी ।
देखि दुखी 'हरीचंदहि' कर गहि बेगहि लेहु उबारी ।।६६।।

साँझ सबेरे पंछी सब क्या कहते है कुछ तेरा है ।
हम सब इक दिन उड़ जाएँगे यह दिन चार बसेरा है ।।
आठ बेर नौबत बज-बजकर तुझको याद दिलाती है ।
जाग-जाग तू देख घड़ी यह कैसी दौड़ी जाती है ।।
आँधी चलकर इधर उधर से तुझको यह समझाती है ।
चेत चेत जिदगी हवा सी उड़ी तुम्हारी जाती है ।।
पत्ते सब हिल-हिल कर पानी हर-हर करके बहता है ।
हर के सिवा कौन तू है वे यह परदे मे कहता है ।।
दिया सामने खड़ा तुम्हारी करनी पर सिर धुनता है ।
इक दिन मेरी तरह बुझोगे कहता तू नहि सुनता है ।।

रोकर गाकर हँसकर लड़ कर जो मुँहसे कह चलता है ।
मौत-मौत फिर मौत सच्च है येही शब्द निकलता है ॥
तेरी आँख के आगे से यह नदी बही जो जाती है ।
योंही जीवन बह जायेगा यह तुझको समझाती है ॥
खिल-खिलकर सब फूल बाग में कुम्हला-कुम्हला जाते हैं ।
तेरी भी गत यही है गाफिल यह तुझको दिखलाते है ॥
इतने पर भी देख औ सुनकर क्या गाफिल हो फूला है ।
'हरीचंद' हरि सच्चा साहब उसको बिलकुल भूला है ॥६७॥

कवित्त

वह द्विजवर हम अधम महान वह अति ही
संतोषी मै तो लोभ ही को जामा हौं ।
वह श्रुति पढ्यो महामूढ़ बुद्धि मेरी उन
तंदुल दियो हौं मनहूँ सो निहकामा हौं ।
'हरीचंद' आइ बनी एकै बात दीनानाथ
यासो मोहि राखि लेहु जो पै अघ-धामा हौं ।
बालपने ही सों सखा मान्यौ है तुमहि एक
दीन हीन छीन हौ मै याही सों सुदामा हौं ॥६८॥*

होइ कुल-नारी ऐसी बात क्यौ विचारी यामे
प्रति अघ भारी यह कहत पुकारी हौं ।
यही करनी है जो तौ खोजौ कोऊ धनी वली
हौं तो निज नारि के वियोग मे दुखारी हौं ।

---

* नवोदिता हरिश्चंद्र चन्द्रिका खं० ११ सं० २-३ (नवं० और दिसं० सन् १८८४ ई०) मे प्रेम-प्रलाप नाम से ५० पद पूरे छपे थे, जिनमे से केवल नौ अन्य संग्रहों मे नही आए हैं, अतः वे इसी संग्रह के अंत मे दे दिए गए हैं। —संपादक।

'हरीचंद' याही सों सुदामा बतरात इमि
छाँड़ौ मेरो हाथ ना तो दैहो शाप भारी हौं ।
द्वारिका मै जाइ कै पुकारिहौ हरिहि मोहिं
काहे दुख देत मै तौ बाम्हन भिखारी हौं ।।६९।।

कितै गई हाय मेरी कुटिया परन छाई
साढ़े तीन पादहू की खटियौ कहा भई ।
कितै गए जनम के जोरे माटी-भाँड़ मेरे
सहसन टूक की कथरिया कितै गई ।
'हरीचंद' कहत सुदामा बिलखाइ इत
लाई किन राशि मनि-कंचन महामई ।
और जो गयो तो सहि जैहौ कोऊ भाँति पै
बताओ कोऊ हाय मेरी बाम्हनी कहाँ गई ।।७०।।

परन-कुटीर मेरी कहाँ बहि गयी इत
कंचन महल ऊँचे ठाढ़े है महा विचित्र ।
मृत्तिका के भाँड़हू बिलाने मेरे कंथा सह
टूटी पटरी मै धरी पोथी हू गई पवित्र ।
'हरिचंद' नारिहू को खोज ना मिलत कहूँ
रोअत सुदामा हाय कैसो भयो है चरित्र ।
मिलन सो रह्यौ-सह्यौ घरहू उजार्‌यो वाह
द्वारिका के नाथ भली मित्रता निवाही मित्र ।।७१।।

फल दियो भीलनी अजामिल उचार्‌यो नाम
गिद्ध कियो जुद्ध, गज कलिका चढ़ाई है ।
गोपी-गोप नेह कीनो केवट चरन धोयो
सेवा करी भील कपि रिपु सो लराई है ।

'हरीचंद' पद को परस मुनि-नारि लह्यौ
गनिका पढ़ावत सुवा को नाम गाई है।
इनके न एकौ गुन औगुन सबै के मोमै
एतेहू पै तारौ तबै आपु की बड़ाई है ॥७२॥

देखि कै काली कराली महा डरि बुद्धि न ता पद माँहि धँसी है।
लक्ष्मी के बहु वैभव चाहि न लालच मे मति मेरी फँसी है।
त्यो 'हरीचंद' सरस्वति सेइ न ज्ञान के ध्यानन मै हुलसी है।
चाकर है ब्रज साँवरे के जिन टेंटिन ऊपर फेंट कसी है ॥७३॥

जो बिनु नासिका कान को ब्रह्म है ता दिसि बुद्धि न नेकु धँसी है।
निर्गुन जौन निरंजन है छबि ताकी न या जिय माहि धँसी है।
त्यों 'हरिचंद जू' सीस सहस्र के देव मै इच्छा न नेकु गँसी है।
चाकर है ब्रज साँवरे के जिन टेटिन ऊपर फेट कसी है ॥७४॥

छोटे है छोटिहि बात रुचै मोहि यासों न जाल में बुद्धि फँसी है।
गुंज हरा परे देखि नरामधि दृष्टि तही मम जाय धँसी है।
त्यो 'हरिचंद जू' मोर-पखौअन गौअन देखि महा हुलसी है।
चाकर है ब्रज साँवरे के जिन टेटिन ऊपर फेंट कसी है ॥७५॥

लोचन चारु चकोरन कों सुख-दायक नायक गोप ससी है।
होत हियो हरियारो बिलोकत कंठ हरा हरि के तुलसी है।
पालक है 'हरिचंद' को तौन जो नंद को बालक लोक जसी है।
चाकर है ब्रज साँवरे के जिन टेंटिन ऊपर फेट कसी है ॥७६॥

गीत-गोविंदानंद

हरिश्चंद्र चंद्रिका खं० ५–६

नवं० सन् १८७७ ई० से अक्तू०

सन् १८७८ ई० तक

गीत-गोविंदानंद

दोहा
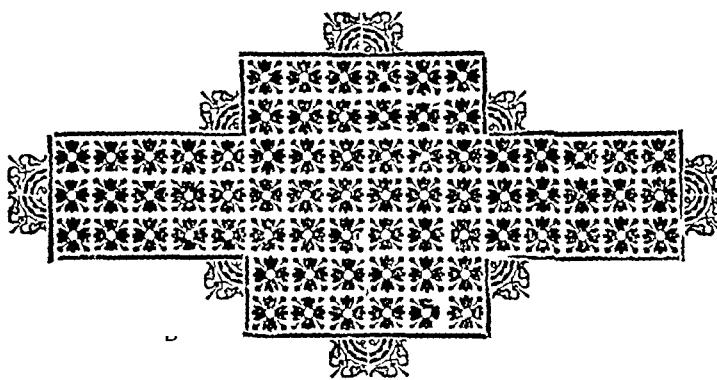
भरित नेह नव नीर नित बरसत सुरस अथोर ।
जयति अलौकिक घन कोऊ लखि नाचत मन मोर ॥ १ ॥
रसिक-राज बुध-वर विदित प्रेमी प्रिय-पद-सेव ।
राधा-गुन-गायक सदा मधु-बच जय जयदेव ॥ २ ॥
कहँ कविवर जयदेव-बच कहँ मम मति अति हीन ।
पै दोउ हरि-गुन-गामिनी एहि हित यह स्रम कीन ॥ ३ ॥
रसिकराज जयदेव की कविता को अनुवाद ।
कियो सबन पै नहि लह्यौ तिनमै तौन सवाद ॥ ४ ॥
मेटन को निज जिय खटक उर धरि पिय नँदनन्द ।
तिनही के पद-बल रच्यो यह प्रबंध हरिचंद ॥ ५ ॥
जिमि बनिता के चित्र मैं नहिं कछु हास-बिलास ।
पै जेहि सो प्रिय सो लहत वाहू मै सुखरास ॥ ६ ॥
तैसहि गीत-गुविंद अति सरस निरस मम गीत ।
पै जिन कहँ प्रिय तौन ते करिहै यासो प्रीत ॥ ७ ॥

मंगलाचरण

मेघन तें नभ छाय रहे, बन-भूमि तमालन सों भई कारी।
साँझ समै डरिहै, घर याहि कृपा करिकै पहुँचावहु प्यारी।
यों सुनि नंद - निदेश चले दोउ कुंजन में वृषभानु-दुलारी।
सोइ कलिंदी के कूल इकंत की, केलि हरै भव-भीति हमारी ॥ ८ ॥

दोहा

वाणी चारु चरित्र सों, चित्रित जो पिय भीति।
पद्मावति पद दास जो, जानत कविता - रीति ॥ ९ ॥
सोई कवि जयदेव यह, गीत - गोविंद रसाल।
रच्यो कृष्ण कल केलिमय, नव प्रबंध रस-जाल ॥१०॥
जौ हरि सुमिरन होइ मन, जौ सिंगार सों हेत।
तौ बानी जयदेव की, सुनु सब सुगुन-निकेत ॥११॥

सवैया

बेद-उधारन मंदर-धारन भूमि-उबारन ह्वै बनचारी।
दैत विनासी बलि के छलि छय-कारक छत्रिन के असुरारी ॥
रावन-मारन त्यौं हल-धारन वेद-निवारन म्लेच्छ-सुदारी।
यो दस रूप-विधायक कृष्णहि कोटिन्ह कोटि प्रनाम हमारी ॥१२॥

राग सोरठ

जय जय हरि-राधा-रस-केलि।*
तरनि तनूजा - तट इकंत मैं बाहु बाहु पर मेलि ॥ध्रुव०॥
एक समै हरि नंदराय सँग रहे बाट मैं जात।
तितही श्री राधा सुख-साधा आइ कढ़ी हरखात ॥

---

*इस मंगलाचरण में बारहो रस हैं। इसमें यथाक्रम शृंगार, अद्भुत, वीर, रौद्र, भयानक, हास्य, वात्सल्य, करुणा, वीभत्स, सख्य, माधुर्य और शांत है। (चंद्रिका)

हरि - माया करि मेघ बुलाए छाए घेरि अकास ।
साँझ समय भुव लहि तमाल तरु भई स्याम सुखरास ॥
देखि नंद भय करि स्यामा सो बोले बैन रसाल ।
यह डरपत लखि कै अँधियारी बारो मेरो लाल ॥
आगे हौ लै जाइ सकत नहि भई भयानक साँझ ।
राधे करिकै दया याहि तुम पहुँचाओ घर माँझ ॥
इमि सुनि नंद-निदेस चले दोउ विहरत जमुना-तीर ।
'हरीचंद' सो निरखि जुगल-छवि हरी दृगन की पीर* ॥१३॥

राग मालव

जय जय जय जगदीश हरे ।
प्रलय भयानक जलनिधि जल धँसि प्रभु तुम वेद उधारे ।
करि पतवार पुच्छ निज बिहरे मीन सरीरहि धारे ॥ ध्रु० ॥
कठिन पीठ मंदर मंथन किन छिति भर तिल सम राजै ।
गिरि घूमनि सुहरानि नींद-बस कमठ रूप अति छाजै ॥जय० ॥
कनक-नयन-वध रुधिर छींट मिलि कनक बरन छवि छायो ।
रद आगे धर ससि कलंक मनु रूप वराह सुहायो ॥जय० ॥
कर-नख-केतकिपत्र अग्र अलि-कनककसिपु तन फार्‌यौ ।
खंभ फारि निज जन-रच्छन-हित हरि नरहरि-वपु धार्‌यौ ॥जय० ॥
अद्भुत बामन बनि बलि छलिकै तीन पैड़ जग नाप्यौ ।
दरसन मज्जन पान समन अघ निज नख जल थिर थाप्यौ ॥जय० ॥
अभिमानी छत्रीगन वधि तिन रुधिर सींचि धर सारी ।
इकइस वार निछत्र करी भुव हरि भृगुपति-वपु-धारी ॥जय० ॥
दस दिसि दस सिरमौलि दियो वलि सव सुरगन भय हारे ।
सिय लछमन सह सोभित सुंदर रामरूप हरि धारे ॥ जय० ॥

---

* ब्रह्मवैवर्त पुराण के श्रीकृष्ण-जन्म खंड की यह कथा है । (चंद्रिका)

सुंदर गौर सरीर नील पट ससि मैं घन लपटायो।
करसन कर हल सों जमुना जल हलधर रूप सुहायो ॥ जय० ॥
अति करुना करि दीन पसुन पैं निंदे निज मुख वेदा।
कलिजुग धरम कहे हरि ह्वै कै बुद्ध रूप हर खेदा ॥ जय० ॥
म्लेच्छ बधन हित कठिन धार तरवार धारि कर भारी।
नासे जवन सत्ययुग थाप्यौ कलकि रूप हरि धारी ॥ जय० ॥
नंद-नँदन जग-वंदन दस बपु धरि लीला विस्तारी।
गाई कवि जयदेव सोई 'हरिचंद' भक्त-भय हारी ॥ जय०॥१४॥

झिंझौटी या खमाच

कमला-उर धरि बाहु बिहारी।
कुंडल कनक गंड जुग-धारी ॥
ललित कलित बनमाल सँवारी।
जय जय जय हरि देव मुरारी ॥
जय जय दिनमनि तेज-प्रकासन।
जय जय जय जय भव-भय-नासन ॥
मुनि-मन-मानस-जलज-विकासन।
जय जय हरि केसव गरुड़ासन ॥
जय कालिय विषधर वल-गंजन।
जय जय ब्रज-जुवती मन-रंजन ॥
जदु-कुल-कमल-सूर दृग खंजन।
जय जय हरि केसव भव-भंजन ॥
जय जय सुर-मधु-नरक-विदारन।
पन्नगपति-गामी जग-तारन ॥
जय जय सुर-कुल-सुख-विस्तारन।
जय हरिदेव भक्त-भय-हारन ॥

जय जय अमल कमल-दल लोचन ।
जय जय भवपति भव-दव-मोचन ।।
त्रिभुवन-गति व्रज-तिय-मन-रोचन ।
जय जय हरि सिर वर गोरोचन ।।
जय जय जनक-सुता कृत भूषण ।
समर विजित त्रिसिरा खर-दूषण ।।
जय दसकंठ - वनज-वन-भूपण ।
जय दृग-छटा कमल छवि भूपण ।।
जय जय अभिनव जलधर सुन्दर ।
जय धृत-पृष्ठ कठिन गिरि मंदर ।।
जय विहरन गोबर्धन - कंदर ।
श्रीमुख ससि रत गोप पुरंदर ।।
हम सब तुव पद-पंकज-दासा ।
पूरहु निज भक्तन की आसा ।।
तिनको तुम दुख नित नित नासा ।
जिन कहँ तुव चरनन बिस्वासा ।।
श्री जयदेव रचित मन-भाई ।
मंगल उज्जल गीति सुहाई ।।
'हरीचन्द' गावत मन लाई ।
ताकी हरि नित करत सहाई ।।१५।।

इति मंगलाचरण ।

प्रथम सर्ग

(सामोद दामोदरः)

बसन्त

हरि बिहरत लखि रसमय बसन्त ।
जो बिरही जन कहँ अति दुरंत ॥
बृन्दाबन-कुंजनि सुख समंत ।
नाचत गावत कामिनी-कंत ॥
लै ललित लवंगलता - सुवास ।
डोलत कोमल मलयज बतास ॥
अलि-पिक-कलरव लहि आस-पास ।
रह्यौ गूँजि कुंज गह्वर अवास ॥
उनमादित ह्वै तपि मदन-ताप ।
मिलि पथिक बधू ठानहिं बिलाप ॥
अलि-कुल कल कुसुम-समूह-दाप ।
बन सोभित मौलसिरी कलाप ॥
मृगमद - सौरभ के आलबाल ।
सोभित बहु नव चलदल तमाल ॥
जुव-हृदय - विदारन नख कराल ।
फूले पलास बन लाल लाल ॥
बन प्रफुलित केसर कुसुम आन ।
मनु कनक छरी लिए मदन रान ॥
अलि सह गुलाब लागे सुहान ।
विष बुझे मैन के मनहुँ बान ॥
नव नीबू फूलन करि बिकास ।
जग निलज निरखि मनु करत हास ॥

तिमि बिरही हिय-छेदन हलास ।
बरछी से केतकि-पत्र पास ॥
लपटत इव माधविका सुबास ।
फूली मल्ली मिलि करि उजास ॥
मोहे मुनिजन करि काम-आस ।
लखि तरुन सहायक रितु-प्रकास ॥
पुसपित लतिका नव संग पाय ।
पुलकित बौराने आम आय ॥
लहि सीतल जमुना लहर बाय ।
पावन बृंदाबन रह्यौ सुहाय ॥
जयदेव रचित यह सरस गीत ।
रितु-पति विहरन हरि-जस पुनीत ॥
गावत जे करि 'हरिचंद' प्रीत ।
ते लहत प्रेम तजि काम-भीत ॥१६॥

मालकोस

सखि हरि गोप-बधू सँग लीने ।
बिलसत बिबिध बिलास हास मिलि केलि-कला रसभीने ॥ध्रुव०॥
स्याम सरीर खौर चंदन की पीत बसन बनमाला ।
रमनि हँसनि झलकत मनि कुंडल लोल कपोल रसाला ॥
पीन उरोज भार झुकि हरि को प्रेम सहित गर लाई ।
गोप-बधू कोउ पंचम रागहि ऊँचे सुर रहि गाई ॥
चपल कटाच्छन जुवती-जन-उर काम बढ़ावनहारे ।
मुग्ध बधू कोउ आइ रही मन मैं मनमोहन प्यारे ॥
कोउ हरि के कपोल ढिग अपनो नवल कपोलहि लाई ।
बात करन मिस चूमति पिय-मुख तन पुलकावलि छाई ॥

जमुना-तीर निकुंज पुंज मैं मदनाकुल कोउ नारी।
खैंचत गहि हरि को पीतांबर हँसत खरे बनवारी॥
ताल देत कंकन धुनि मिलि कल बंसी बजत सुहाई।
ता अनुसार सरस कोउ नाचति लखि हरि करत बड़ाई॥
बिहरत कोउ सँग कोउ मुख चूमत काहू को गर रहे लगाई।
काहू को सुंदर मुख देखत चलत कोऊ सँग लाई॥
जो जयदेव कथित यह अद्भुत हरि-बन-बिहरनि गावै।
बल्लभ-बल 'हरिचंद' सदा सो मंगल फल नव पावै॥१७॥

इति सामोद दामोदरो नाम प्रथम सर्ग।

बिहाग

जिय तें सो छबि टरत न टारी।
रास-बिलास रमत लखि मो तन हँसे जौन गिरिधारी॥ ध्रु०॥
अधर मधुर मधु-पान छकी बंसी-धुनि देति छकाई।
ग्रीव-डुलनि चंचल कटाच्छ मिलि कुंडल-हिलनि सुहाई॥
घुँघुरारी अलकन पै प्यारी मोर-चंद्रिका राजै।
नवल सजल घन पै मनु सुंदर इंद्रधनुष-छबि छाजै॥
गोप-बधू-मुख चूम अधर अमृत रस लाल लुभाए।
बंधुजीव-निंदक ओठन पै मंद हँसनि मन भाए॥
भरत भुजन मैं गोप-बधूटिन प्रेम पुलक तन पूरे।
कर-पद-गल-मनिगन आभूखन मेटत हिय तम रूरे॥
स्याम सुभग सिर केसर-रेखा घन नव ससि छबि पावै।
जुवती-जूथ कठिन कुच मींजत जेहि जिय दया न आवै॥
गंडन पर मनि-मंडित कुंडल झलकत सब मन मोहै।
सुर-नर-मुनिगन बंदित कटि-तट लपटि पीत पट सोहै॥

विसद कदंब तरे ठाढ़े जन-भव-भय-मेटनवारे।
काम-भरी चितवन लखि मम उर काम-बढ़ावनहारे॥
श्री जयदेव कथित यह हरि को रूप ध्यान मन भायो।
बसै सदा रसिकन के हिय 'हरिचंद' अनूप सुहायो॥१८॥

अरी सखि मोहि मिलाउ मुरारी।
मेटौ काम-कसक तन की गर लाइ रमन गिरिधारी॥ध्रु०॥
इक दिन गहवर कुंज गई हौ तहाँ छिपे रहे प्यारे।
चितवत चकित चहूँ दिसि मोहि लखि हँसे सुरति-सुख-धारे॥
प्रथम समागम लाजि रही बहु बातन तब बिलमाई।
बोलत ही हँसिकै कछु मो तन नीवी सिथिल कराई॥
कोमल सेज सुवाइ मोहि उर पर भर दै रहे सोई।
हरि आलिगत चुंबत ही पियो अधर लपटि तिन दोई॥
आलस-बस दृग मूँदत ही तिन तन पुलकावलि छाई।
स्वेद सिथिल तब होत मोहि भए काम बिवस ब्रजराई॥
बोलत ही मम प्राननाथ बहु कोक-कला बिसतारी।
कुंतल कुसुम खसित लखि मम कुच जुग नख रेख पसारी॥
नूपुर बोलत ही पिय प्यारे सुरत वितानहि तान्यौ।
रमत गिरत किंकिनि सिर गहि मुख चूमत अति सुख मान्यौ॥
रति-सुख-समुद-मगन मोहि लखि दृग मूँदि रहे मद थाके।
बिथकित सेज परी लखि पियहू काम-कलोलन छाके॥
गोप-वधू सखि सो इमि भाखत स्याम काम-रस पूरी।
गायो सो जयदेव सुकवि 'हरिचंद' भक्ति-रति-मूरी॥१९॥

हाहा गई कुपित ही प्यारी।
निज अपमान मानि मन भारी॥ध्रु०॥
मोहि घिर्‌यौ लखि बधुन मँझारी।
रिस करि गई उदास बिचारी॥

निज अपराध जानि भय धारी ।
हौंहू ताहि न सक्यौ निवारी ॥
किमि ह्वैहै करिहै कहा वारी ।
का कहिहै मम बिरह-दुखारी ॥
धन जन जीवन घर परिवारी ।
ता बिनु वृथा जगत-निधि सारी ॥
सो मुख-चंद-जोति उँजियारी ।
कोप कुटिल भौंहैं कजरारी ॥
मनहुँ कँवल पर भँवर-कतारी ।
बिसरति हिय ते नाहि बिसारी ॥
बन बन फिरौं ताहि अनुसारी ।
बिलपौं वृथा पुकारि पुकारी ॥
अब हौ हिय सों ताहि निकारी ।
रमिहौं तासों गल भुज डारी ॥
मम अपराधन हिये बिचारी ।
अतिहि दुखित तेहि जात निहारी ॥
पै नहिं जानौं कितै सिधारी ।
तासों सकत मनाइ न हारी ॥
दृग सों छिनहूँ होत न न्यारी ।
आवत जात लखात सदा री ॥
पै यह अचरज अतिहि हहा री ।
धाइ लगत गर क्यौं न पियारी ॥
अबकें करु अपराध छमा री ।
करिहौ फेर न चूक तिहारी ॥
सुंदरि दरसन दै बलिहारी ।
दहत मदन तो बिनु तन जारी ॥

किधु बिल्व वारिधि तमहारी।
गाई कवि जयदेव सँवारी ॥
बिरहातुर हरि कहनि कथा री।
जो 'हरिचंद' भक्त-सुखकारी ॥२०॥

प्यारे तुम बिनु व्याकुल प्यारी।
काम-बान-भय ध्यान धरत तुव लीजै ताहि उबारी ॥
चंदन चंद न भावत पावत अति दुख धीर न धारै।
अहिगन-गरल बगारि सरल तन मलयानिल तेहि जारै ॥
अबिरल बरसत मदन-बान लखि उर महँ तुमहि दुराई।
सजल कमल-दल कवच बनाइ छिपावत हियहि डराई ॥
कुसुम सेज कंटक सों लागत सुख-साजन दुख पावै।
व्रत सम सुख तजि तुव रति मनवत कोउ बिधि समय बितावै ॥
अबिरल नीर ढरकि नैननि ते रहत कपोलन छाई।
मनहुँ राहु-बिदलित ससि ते जुग अमृत-धार बहि आई ॥
मृगमद लै तुव चित्र बनावति व्याकुल बैठि अकेली।
काम जानि तेहि लिखति मकर-सर पुनि प्रनवत अलबेली ॥
पुनि पुनि कहति अहो पिय प्यारे पायँ परति अपनाओ।
तुम बिनु दहत सुधानिधि प्रीतम गर लगि मरत जिआओ ॥
बिलपति हँसति बिखाद करति रोअति कबहूँ अकुलाई।
कबहुँ ध्यान महँ तुमहिं निरखि गर लागति ताप मिटाई ॥
ऐसहि जो हरि-बिरह-जलधि महँ मगन होइ रस चाहै।
सखी-बचन जयदेव कथित 'हरिचंद' गीत अवगाहै ॥२१॥

तुव बियोग अति व्याकुल राधा।
मिलि हरि हरहु मदन-मद-बाधा ॥ध्रु०॥
कृश तन प्रानहु भर सम जानै।
हार पहार सरिस उर मानै ॥

कोमल चंदन विष सम लागै ।
सुख सामा लखि संकित भागै ॥
लेत स्वाँस गुरु व्याकुल भारी ।
दहति तनहि मदनागि प्रजारी ॥
चौंकि चौंकि चितवत चहुँ ओरी ।
स्रवत नीर नलिनी मनु तोरी ॥
तुव विनु सुमन परस तन जारी ।
सूनी सेज न सकत निहारी ॥
निज कर सों न कपोल उठावै ।
नव ससि साँझ गहे मनु भावै ॥
पुनि पुनि हरि तुव नाम उचारै ।
विरह मरत कोउ विधि जिय धारै ॥
कवि जयदेव कथित यह वानी ।
'हरीचंद' हरि-जन-सुखदानी ॥२२॥

राग झिंझौटी

विरह-बिथा तें व्याकुल आली ।
तुव विनु वहुत विकल वनमाली ॥ध्रु०॥
मलय-समीर झकोरत आवत ।
तन परसत अति काम जगावत ॥
फूले विविध कुसुम तरु डारन ।
विरही जन हिय नखन विदारन ॥
चंद चाँदनी सों तन जारत ।
तुव विछुरे पिय प्रान न धारत ॥
मदन-बान विधि व्याकुल भारी ।
तलपि तलपि विलपत वनवारी ॥

मधुर भँवर धुनि सहि नहि जाई।
मूँदे रहत श्रवन हरिराई ॥
जब निसि बढ़त मदन-रुज भारी।
मोहत बिकल अधीन मुरारी ॥
छोड़ि देह-सुख गेह बिसारी।
गिरि-बन-वास करत गिरिधारी ॥
मुरछि धरनि लोटत बिलखाई।
चौंकि रहत राधे रट लाई ॥
हरि को बिरह-बिलास सुहायो।
श्री जयदेव सुकवि यह गायो ॥
'हरीचंद' जेहि यह रस भावत।
तेहि हरि अनुभव प्रगट लखावत ॥२३॥

बिलम मत करु पिय सो मिलु प्यारी।
बैठे कुंज अकेले तुव हित मदन-मथन गिरिधारी ॥ध्रु०॥
धीर समीर घाट जमुना-तट बन राजत बनमाली।
कठिन पीन कुच परसन चंचल कर जुग सोभा-साली ॥
लै तुव नाम बदत संकेतहि मधुरी वेनु बजाई।
तुव दिसि ते जु रेनु उड़ि आवत रहत ताहि हिय लाई ॥
उड़त पखेरुन गिरत पतौअन तुव आगवन बिचारी।
सेज सँवारत इत उत चितवत चकित पंथ बनवारी ॥
चंचल मुखर नूपुरहि तजि मुख अंचल ओट दुराई।
तिमिर-पुंज चल कुंज सखी मिलि हियरो लै न सिराई ॥
रति-बिपरीत पिया-उर ऊपर मुक्तमाल ढिग सोही।
घन पै चपल बलाका सह चपला सी रह मन मोही ॥
किंकिनि तजिकै वसन उतारि निरंतर अंतर त्यागी।
चढ़ु पिय कोमल किसलय सेज पिया के उर रहु लागी ॥

हरि बहु-नायक मानी रैनहु जात चली सब बीती।
बेगहि चलु करु पीय मनोरथ पालि प्रीति की रीती ॥
श्री जयदेव-कथित दूती-बच हरि-राधा गुन गाई।
लही प्रेम-फल सब 'हरिचंद' जुगल छबि जीअ बसाई ॥२४॥

तुम बिनु दुखित राधिका प्यारी।
तुव-मय भइ तन सुरति बिसारी ॥
अधर मधुर मधु पियत कन्हाई।
तुमहिं सबै दिसि परत दिखाई ॥
मिलत चलत उठि तुम कहँ धाई।
गिरि गिरि परत बिरह दुबराई ॥
किसलय वलय बिरचि कर धारी।
तुव रति ध्यान जिअति सुकुमारी ॥
कबहुँ रचति रस-रास सँवारी।
जानति हमहीं मदन-मुरारी ॥
बदति सखिन सों पुनि पुनि आली।
अजहुँ न क्यों आए बनमाली ॥
लखि घन सम अँधियार भुलाई।
तुव धोखे चूमति गर लाई ॥
तुव बिलंब अति ही अकुलाई।
ब्याकुल रोअति सेज सजाई ॥
श्री जयदेव रचित जो गावै।
'हरीचंद' हरि-पद-रति पावै ॥२५॥

(नागर नारायण नाम ७म सर्ग)

हा हरि अजहूँ बन नहिं आए।
बैठे बाट बिलोकत बीती औधहु कित बिलमाए ॥ ध्रु० ॥

सखियन झूठ बोलि बहरायो, हा, अब कौन उपाई।
प्राननाथ बिनु बिफल सबै मन नव जोबन सुँदराई॥
जाके मिलन हेत कारी निसि बन बन डोलत धाई।
मदन-बान बेदना देत मोहि सोई निठुर कन्हाई॥
घरहू छुट्यौ हरिहु नहि आए तौ अब मरनहिं नीको।
कहा लाभ बिरहागि दाहि तन रखिबो जीवन फीको॥
इत मधु मधुर जामिनी मो हिय बेदन देत प्रजारी।
उत कोउ बड़भागिनि कामिनि सँग ह्वैहै रमत मुरारी॥
कर कंचन कंकन बाजूबँद बिरहानल तपि जारैं।
बिप से बिषय साज सब लागत उलटे दुखहि प्रचारैं॥
कुसुम - सरिस मम कोमल तन पैं फूल-माल हू भारी।
तीछन काम - बान सी बेधति बिनु प्यारे गिरिधारी॥
हम जाके हित बेत कुंज मै बैठी त्यागि हवेली।
सो हरि भूलेहु सुमिरत नहि मोहिं छाँड़ी हाय अकेली॥
इमि बिलपति वृषभानु - लली हरि-बिरह-बिथा अकुलाई।
श्री जयदेव सुकवि मधुरी 'हरिचंद' कथा सोइ गाई॥२६॥

हरि सँग बिहरति ह्वैहै कोऊ।

बड़भागिनि जुवती गुनवारी दै गल मै भुज दोऊ॥ ध्रु०॥
मदन-समर-हित उचित भेस लै कंचुकि कुच कसि बाँधे।
कच-बिगलित कुसुमन सो मानहुँ बीर सुमन-सर साधे॥
हरि - गल लागत स्वेदादिक तन मदन - बिकारहु जागे।
कुच - कलसन पर मुक्तहार बहु हिलत सुरत रस पागे॥
मुख-ससि-निकट ललित अलकावलि उमरि घुमरि रहि छाई।
पिय-अधरासव-पान छकी तिमि झमत तिय अलसाई॥

परसत उझकि कपोलन चंचल कुंडल जुगल सुहाए।
किंकिनि कलरव करति हिलत जब जुगल जंघ मन भाए ॥
पिय तिय दिसि निरखत चितवति कछु हँसि करि नैन लजीले।
बिबिध भाव रस भरी दिखावति लहि रति रसिक रसीले ॥
रोम पाँति उलहित तन बेपथु होत गरो भरि आएँ।
मूँदि मूँदि दृग खोलति लै लै स्वास सुरति सुख पाएँ ॥
झलकत मुक्त-जाल से तन पर स्रम-सीकर अति नीके।
रति-रन अभिरत थाकि परी गल लगिकै हिय पर पी के ॥
श्री जयदेव सुकवि भाखित यह हरि-विहार रस गावै।
काम-बिमुख ह्वै 'हरीचंद' सो प्रेम रुचिर* फल पावै ॥२७॥

माधव नव रमनी सँग लीने।
बंसी-बट यमुना-तट बिहरत रति - रन जय रस-भीने ॥ ध्रु० ॥
मदन पुलक तन चूमत पिय मुख फरकत अधर लसाही।
मृगमद तिलक देत ता मुख मैं मनु ससि मैं मृग-छाही ॥
जुवजन मनहर रतिपति मृग बन सघन सुघन सम कारे।
चिकुर निकर कर लिए सँवारत गूँथि कुसुम बहु प्यारे ॥
नभमंडल सम कुच जुग मैं घन-मृगमद लपटि सुहावैं।
नख-छत-ससि लखि नखत-माल सी मुक्तमाल पहिरावैं ॥
नवल नलिन भुज कोमल करतल सुकमल दल से राजैं।
मरकत कंकन तहँ पहिरावत मधुप-माल सम भ्राजैं ॥
सघन जघन मनु मदन–हेम-सिंहासन सुरुचि सोहायो।
सुरँग बसन पर तोरन–सम पिय किंकिनि-जाल बँधायो ॥
कमलालय नख-मनिगन–भूखित पद-पल्लव हिय लाई।
निज मन हित मनु मेंड़ बनावत जावक-रेख सुहाई ॥

*पाठा० अनुपम।

इमि बलबीर निठुर बन बिहरत सँग लै दूजी नारी ।
ता हित तरु - तर बैठि बिलोकत बाट बृथा हम हारी ।।
यों हरि रसमय होय कहति सखियन्न सो व्याकुल प्यारी ।
सो कविवर जयदेव कह्यौ 'हरिचंद' कलुख कलि हारी ।।२८।।

कमल-लोचन पिया जाहि गर लाइहै ।
सो न सजनी कबहुँ बिरह--दुख पाइहै ।।
देखि किसलय सेज सो न दुख मानिहै ।
प्रान-प्रीतमहि निज निकट करि जानिहै ।।
अमल कोमल कमल-बदन हिय धारिहै ।
तेहि न सर कुटिल कामहुँ कबहुँ मारिहै ।।
अमृत मधु मधुर पिय बचन स्रवन पारिहै ।
ताहि अति मलिन मलयानिल न जारिहै ।।
थल-कमल सम चरन करन हिय चाहिहै ।
ताहि चंदहु न निज किरन-सर दाहिहै ।।
श्याम सुंदर सजल जलद तन लागिहै ।
तासु हिय कबहुँ नहि बिरह दुख पागिहै ।।
कनक सम पीत पट लपटि सुख सानिहै ।
सो न गुरुजन हँसन संक जिय मानिहै ।।
तरुन-मनि कृष्ण सो सुरत सुख ठानिहै ।
सो न सपनेहुँ कबौ बिरह दुख जानिहै ।।
सुकवि जयदेव कृत गीत जो गाइहै ।
सो न 'हरिचंद' भव-दुखन घबराइहै ।।२९।।

भैरव

हम सो झूठ न बोलहु माधव जाहु जू केशव जाओ ।
जो जिय बसी रैन निवसे जहँ ताही को गर लाओ ।। ध्रु० ।।

अनियारे दृग आलस-भीने पलकैं घुरि घुरि जाहीं।
जागि तिया–रस पागि न प्रगटत निज अनुराग लजाहीं॥
बार बार चूमन सो रस भरि तिय-जुग-दृग कजरारे।
लाल रहे तुव अधर लाल पै भए अंग सब कारे॥

रति-रन अभिरत स्याम सुभग तन नख-छत लखत सुहायो।
मदन नील पट कनक-लेखनी मनु जयपत्र लिखायो॥
पिय तुव हिय तिय-पद को जावक लखहु न कैसो सोहै।
मनु जिय काम-लता उलही है पल्लव पसरि रह्यौ है॥

तुम अति निठुर तदपि हम तुम सो तनिकहु बिलग न प्यारे।
तुव अधरन रद-छद पै ताकी पिय उर पीर हमारे॥
तन जिमि कारो तिमि मनहू तुव कुटिल कपट सों कारो।
अपनी जानि औरहू हम कहँ बदि मदनानल जारो॥

बन बन बधुन-बधन–हित डोलत निरदय बने सिकारी।
या मै अचरज नहि तुम प्रथमहि नारि पूतना मारी॥
सुनि तिय-बचन सरोस पिया हठि लीनी कठ लगाई।
श्री जयदेव सुकवि 'हरिचंद' बिलास-कथा सोइ गाई॥३०॥

मानी माधव पिय सों मानिनि मान न करु मम मान कही।
बहत पवन लखि हरि उठि आए तू केहि सुख घर बैठि रही॥
कुच जुग कलस ताल-फल से गुरु सरस तिनहिं कित बिफल करै।
बार बार सखि तोहि समुझावति किन सुंदर हरि सो बिहरै॥
बिलपति बिकल तोहि लखि सखिगन हँसहि तऊ नहिं लाज धरै।
बैठे सजल नलिन-दल से जन हरि लखि किन दृग पीर हरै॥
किन जिय खेद करति सुनु मम बच हरि सों मिलि मृदु बोलि अरी।
सुनि जयदेव सखी 'हरिचंद'-कथन निज उर-दुख दूर दरी॥३१॥

मान तजि मानु सुनु प्रान-प्यारी ।
दहत मोहि मदन तुव बिरह जर जाल सों,
अधर मधु पान दै लै उबारी ॥ ध्रु० ॥

मधुर कछु बोलि मुख खोलि जासों निरखि
दसन-दुति बिरहतम दूर नाऊँ ।
अधर मधु मधुर सुंदर सुधा-सिधु, मुख-
ससिहि लखि दृग-चकोरहि जुड़ाऊँ ॥

साँचही होइ रूठी जुपै कोप करि,
तौ न क्यौं नयन-सर मोहि मारै ।
बाँधि भुज-पास सों अधर-दंतन सुदसि,
क्यो न अपराध - बदलो निवारै ॥

तुही मम प्रानधन भव-जलधि-रतन तू,
तोहि लगि जगत हौं जीव धारौं ।
तनिक जौ तू कृपा कोर मो दिसि लखै,
तौ जगहि तोहि परि वारि डारौं ॥

नील नलिनी सुदल सरिस तुव नयन जुग,
कोप सों कोकनद रूप धारे ।
तौ न किन जानि मोहि कृष्ण हति काम-सर,
अरुन करु तरुन अनुराग भारे ॥

क्यों न सोभित करति कुंभ-कुच हार सों,
हीय जासो दुगुन होइ राजै ।
सघन निज जघन पै बाँधि किंकिनि कलित,
मदन नौबति सरिस सुरत बाजै ॥

थल-कमल-मान - हर मम हृदय प्रानकर,
सरस रतिरंभ तुव चरन प्यारे ।

कहै तो लाइ हिय मैं महावर भरौं,
हरौं जिय-ताप आनंदवारे ॥
सदन संताप को मदन मोहिं कदन हित,
दहत अति अगिनि तन मैं बढ़ाई।
चरन पल्लव जुगल-गरल-हर सीस मम,
धारि किन तेहि तुरत दै बुझाई ॥
भाखि इमि चतुर हरि पगन परि तियहि,
रिझयो लियो संक तजि अंक लाई।
सोइ पदमावति - प्रान - जयदेव कवि,
कही 'हरिचंद' लीला बनाई ॥३२॥

उठि चलु मोहन-ढिग प्यारी।
मंजुल वंजुल कुंज बिलोकत तुव मग गिरिधारी।
मनावत तो कहँ जे हारे,
कियो बिनय बहु तुव पद पैं निज सीस रहे धारे ॥
सुरत करि उनकी तू नारी,
मंजुल बंजुल कुंज बिलोकत तुव मग गिरिधारी ॥
पहिरि पग मनि नूपुर सीरे,
पीन पयोधर सघन जघन भर चलु धीरे धीरे।
चाल सो हंसहि लजवाई,
चलु सुनु तरुनी जन-मोहन मन-मोहन बच धाई ॥
सफल करूँ श्रवनहि मैं वारी। मंजुल वंजुल० ॥
कुंज में सुनु कोइल बोलै,
काम नृपति के बंदीजन से मदन-विरद खोलै।
चलत मलयानिल मद-माती,
नव पल्लव हिलि तोहि बुलावत निकट बिरिछि पाँती ॥

बिलँब न करु गज-गति वारी। मंजुल वंजुल० ॥
देखु फरकत जोबन दोऊ,
मदन रंग सों उमड़ि अलिंगन चहत पियहि सोऊ।
गवन हित सगुन मनहुँ कीने,
हीर-हार जलधार भरे जुग घट सनमुख लीने ॥
चूक मति समयहि बलिहारी। मंजुल वंजुल० ॥

सखिन तोहि रति-रन-हित साज्यौ,
तौ किन अब लौ मदन-भेरि तुव किंकिन-रव बाज्यौ।
द्रवत तजि लाजन क्यो रूठी,
चलति न क्यो सखि कर गहि बैठो मानिनि ह्वै झूठी ॥
बिना तुव व्याकुल बनवारी। मंजुल वंजुल० ॥

कह्यौ लै मानिनि मम मानी,
सूचन रति अभिसार बजावत चलु कंकन रानी।
मिलत लखि तोहि हम सुख पावै,
जुगल रूप जयदेव सुकवि लखि हिय महँ पधरावै ॥
होइ 'हरिचंदहु' बलिहारी। मंजुल वंजुल० ॥३३॥

माधव ढिग चल राधा प्यारी।
बिलस पिया-गल मै भुज धारी ॥ ध्रु० ॥
मंजु कुज मधि सेज बिछाई।
बिहर तहाँ हँसि हँसि सुख पाई ॥ माधव० ॥
कुच-कलसन पर तरलित माला।
बिहर असोक सेज पर बाला ॥ माधव० ॥
बिविध कुसुम लै कुंजन बाँधे।
बिलस कुसुम कोमल तन राधे ॥ माधव० ॥

बहत सीत मलयानिल आई।
बिहर सुरत-रत हरि-गुन गाई॥ माधव०॥
सघन जघन बरु सफल सुहाए।
लखु पल्लव वल्लिन लपटाए॥ माधव०॥
गूँजत मधुप मदन मद-माती।
बिहर कृष्ण सँग रति-रस-राती॥ माधव०॥
सुनु गावत पिक काम-बधाई।
चलु लै निज पिय कों हिय लाई॥ माधव०॥
कवि जयदेव केलि - रस गावै।
'हरिचंदहु' सुनि जनम सिरावै॥ माधव०॥३४॥

राधा केलि कुंज महँ जाई।
बैठे बाट बिलोकत निरखे रस उमगे हरिराई॥ध्रुव०॥
राधा-ससि-मुख निरखि हरखि तन रस-समुद्र लहराने।
रमन मनोरथ करत मदन-बस बिबिध भाव प्रगटाने॥
स्याम सुभग हिय पर इमि सोहत सुंदर मोतिन माला।
जमुना-जल मनु सेत कमल कै सोभित फेन रसाला॥
मृगमद मोचक मेचक तन पैं पीत बसन लपटायो।
मानहुँ नील कमल पै पसर्‌यौ पीत पराग सुहायो॥
रसमय तन मैं सुंदर बदन बिलोचन जुग मतवारे।
सरद सरोवर कमलनि खेलत जुग खंजन अनियारे॥
कमल बदन मे दुहुँ दिसि कुंडल रबि से सुभग लखाहीं।
हिलत अधर मुसुकात मनहुँ पिय मुख चूमन ललचाहीं॥
बारन कुसुम गुथे मनु घन महँ कहुँ कहुँ चाँदनि राजै।
नव ससि अरुन किरिन सम सिर पै कुंकुम तिलक बिराजै॥

मनिगन भूखन भूखित सब अँग सुंदर सुभग सरीरा।
पुलकित तन रति-आतुर बैठे मोहन पिय बलबीरा॥
श्री जयदेव कथित हरि को बपु जा जिय मे छिन आवै।
सो 'हरिचंद' धन्य जग मे निज जीवन को फल पावै॥३५॥

राधे मेरी आस पुजाओ।
प्रानपिया हरि को कहनो करि मिलि पिय सो सुख पाओ॥ध्रु०॥
नव किसलय सो सेज सँवारी कोमल पद तहँ धारी।
हरु पल्लव अभिमानहि अरुन चरन दरसाइ पियारी॥
अति श्रम भयो प्रानप्यारी तोहि चरन पलोटौ तेरे।
नूपुर धरौ उतारि सेज पर बैठु आइ ढिग मेरे॥
बोलि मधुर कछु किन निज पिय को व्याकुल हियो जुड़ावै।
कहु तौ उर सो अंचल कृष्ण उतारि अधिक सुख पावै॥
पिय गर लगन हेत फरकौहै जुगल कलस कुच प्यारी।
पिय पुलकित हिय लाइ हरत किन मदन-ताप सुकुमारी॥
निज बिरहानल तपत देखि मोहि क्यो न दया उर लावै।
अधर मधुर रस सुधा स्वाद दै किन मोहि मरत जियावै॥
तुव बिन कोकिल नाद सुनत रहे स्रवन सदा दुख पाई।
दै तिन कहँ सुख भाखि मधुर कछु किंकिनि कलित बजाई॥
नाहक मान ठानि दुख दीनो अब मो दिस लखु प्यारी।
नीचे नैन न लाज भरी करु दै रति-सुख बलिहारी॥
श्री जयदेव सुकवि हरि भाखित सरस गीत जो गावै।
ता जिय मे 'हरिचंद' प्रेम-बल काम-बिकार न आवै॥३६॥

यह सुनि राधा पिय सो बोली।
मान छाँड़ि निज प्राननाथ सो गाँठ हृदय की खोली॥ध्रु०॥

मंगल कलस सरिस सम जुग कुच मृगमद चित्र बनाओ।
चंदन से सीतल कर हिय धरि जिय को ताप मिटाओ॥
काम—बान अलि-कुल—मद—गंजन नैननि अंजन प्यारे।
तुव चूमन सों फैलि रह्यो तेहि देहु सँवारि दुलारे॥
दृग कुरंग-गति मेंड़ सरिस मम स्रवन न पिय गिरधारी।
काम-फाँस से कुंडल प्यारे निज कर देहु सँवारी॥
मेरे मुख पर पीतम सुंदर निज कर बिरचि सँवारौ।
नवल कमल पर अलि-कुल सरिस अलक निरुवारि बगारौ॥
स्रम-सीकरहि पोंछि मम सिर पिय निज कर रुचिर बनाओ।
पूरन ससि पै मृग-छाया सो मृगमद-तिलक लगाओ॥
मदन-चौंर धुज से मम सुंदर केस-पास निरुवारौ।
केकि-पच्छ से बारन गूथहु सुंदर कुसुम सँवारौ॥
सरस सघन मम जघनन पर कल किंकिनि कलित सजाओ।
सुंदर बसन अभूषन रचि रचि मम अंगनि पहिनाओ॥
इमि राधा-बच सुनत कृष्ण-गर लगि विहरे सुख पायो।
सो जयदेव सुकवि 'हरिचंद' बिहार कुतूहल गायो॥२७॥

दोहा

अष्ट-पदी चौबीस इमि गाई कवि जयदेव।
भाषा करि हरिचंद सोइ कही प्रेम-रस भेव॥१॥
गुप्त मंत्र सम पद सबै प्रगटे भाषा माहि।
यह अपराध महा कियो यामें संसय नाहि॥२॥
छमिहै निज जन जानि सो जुगल दास तकसीर।
हरिहै अपनो समुझि जिय कठिन मोह-भव-पीर॥३॥

इति

——⁂——

सतसई-सिंगार

सं० १९३५

हरिश्चंद्र चंद्रिका खं० २ सं० ८ से
खं० ६ सं० ५ सन् १८७५ ई०
सन् १८७८ ई० तक मे
क्रमशः प्रकाशित
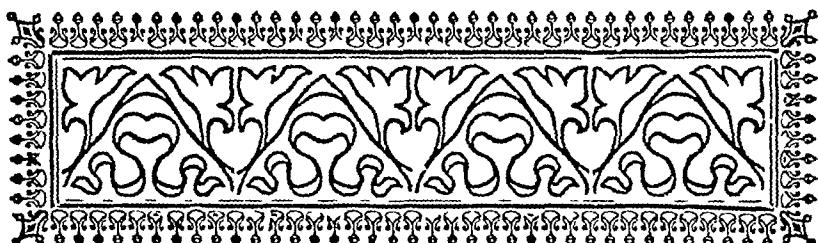
सतसई-सिंगार

मेरी भव-बाधा हरो राधा नागरि सोइ।
जा तन की झाईं परैं स्याम हरित दुति होइ ॥ १* ॥
स्याम हरित द्युति होइ परै जा तन की झाँई।
पाय पलोटत लाल लखत साँवरे कन्हाई॥
श्री 'हरिचंद' वियोग पीत पट मिलि दुति टेरी।
नित हरि जा रँग रँगे हरौ बाधा सोइ मेरी ॥ १ ॥

सीस मुकुट, कटि काछनी कर मुरली उर माल।
इहि बानिक मो मन बसौ सदा बिहारी-लाल ॥२०१॥
सदा बिहारी-लाल बसौ बाँके उर मेरे।
कानन कुण्डल लटकि निकट अलकावलि घेरे॥
श्री 'हरिचंद' त्रिभंग ललित मूरत नटवर सी।
टरौ न उर तैं नैकु आज कुंजनि जो दरसी ॥ २ ॥

---

* दोहों के आगे की ये संख्याएँ बिहारी रत्नाकर से मिलान करने के लिये दी गई है।

मोहन मूरति श्याम की अति अद्भुत गति जोइ।
बसत सुचि अन्तर तऊ प्रतिबिम्बित जग होइ ॥१६१॥
प्रतिबिम्बित जग होइ कृष्णमय ही सब सूझै।
एक सँयोग वियोग भेद कछु प्रगट न बूझै।
श्री 'हरिचंद' न रहत फेर बाकी कछु जोहन।
होत नैन-मन एक जगत दरसत तब मोहन ॥ ३ ॥

तजि तीरथ हरि-राधिका-तन-दुति कर अनुराग।
जिहि ब्रज-केलि-निकुंज-मग पग पग होत प्रयाग ॥२०१॥
पग पग होत प्रयाग सरस्वति पद की छाया।
नख की आभा गंग छाँह सम दिनकर-जाया ॥
छन छबि लखि 'हरिचंद' कलप कोटिन लव सम लजि।
भजु मकरध्वज मनमोहन मोहन तीरथ तजि ॥ ४ ॥

सघन कुंज छाया सुखद सीतल मन्द समीर।
मन ह्वै जात अजौ वहै वा जमुना के तीर ॥६८१॥
वा जमुना के तीर सोई धुनि आँखिन आवै।
कान बेनु-धुनि आनि कोऊ औचक जिमि नावै ॥
सुधि भूलति 'हरिचन्द' लखत अजहूँ वृन्दावन।
आवन चाहत अबहि निकसि मनु स्याम सरस घन ॥ ५ ॥

सखि सोहत गोपाल के उर गुंजनि की माल।
बाहर लसति मनौ पिये दावानल की ज्वाल ॥३१२॥
दावानल की ज्वाल धूम सह मनहुँ बिराजै।
प्रिया-विरह दरसाइ मनहुँ संगम सुख साजै ॥
सोई 'श्री हरिचन्द' बिहँसि कर लेत कबहुँ लखि।
मानिक मुक्ता-नील बनत गुंजा सो लखु सखि ॥ ६ ॥

कर लै, चूमि, चढ़ाइ सिर, उर लगाइ भुज भेटि।
लहि पाती पिय की लखति, बाँचति, धरति समेटि ॥६३५॥
बाँचति, धरति समेटि, खोलि पुनि पुनि तिहि बाँचै।
बरन बरन पर प्रान वारि आनँद जिय राचै ॥
प्रेम-औंधि 'हरिचंद' जानि उलही उर अन्तर।
नैन नीर जुग भरे लिये ही रहत सदा कर ॥ ७ ॥

नित प्रति एकत ही रहत ब्वयस - बरन - मन एक।
चहियत जुगल-किसोर लखि लोचन - जुगल अनेक ॥२३८॥
लोचन - जुगल अनेक होयँ तौ कछु सुख पावै।
जग की जीवन - मूरि प्रिया - प्रिय निरखि सिरावै ॥
गौर-स्याम 'हरिचंद' कोटि मोहन मनमथ-रति।
एक वरन इक रूप लखौ इक ही टक नित प्रति ॥८॥

लोचन-जुगल अनेक पलटि यह अबिधि पलक किय।
सुधा-श्रवन-सम बैन-श्रवन-हित श्रवनहु जुग दिय ॥
सेवन-हित 'हरिचंद' किये द्वै ही कर अनुचित।
बिधि सव करी अनीति जुगल छवि किमि लखिये नित ॥ ८ ॥
मोर मुकुट की चन्द्रिकन यों राजत नँद-नन्द।
मनु ससि-सेखर की अकस किय सेखर सत-चन्द ॥४१९॥
किय सेखर सत-चन्द सुरँग केसरी कुलह पर।
गंगधार सी लटकि रही दुहुँ दिसि मोती लर ॥
कहा कहौ 'हरिचन्द' आजु छवि नागर नट की।
सव जिय उपजत काम लटक लखि मोर मुकुट की ॥ ९ ॥

किय सेखर सत-चन्द जटित नगपेच विम्व परि।
स्याम सचिक्कन चिकुर आभ सों स्याम भये घिरि ॥

जमुना-तट 'हरिचन्द' सरद निसि रास लटक की।
छबि लखि मोही आज पीत पट मोर मुकुट की ॥ ९ ॥

जहाँ जहाँ ठाढ़ौ लख्यौ स्याम सुभग सिर और।
उनहूँ बिन छन गहि रहत दृगन अजौं वह ठौर ॥१८२॥
दृगन अजौं वहि ठौर खरे ही परत लखाई।
क्यौंहू सुधि नहि जात सोई छबि नैननि छाई ॥
सुमिरत सोइ 'हरिचन्द' पीर कसकत अति उर महँ।
अँसुवनि सींचत तहाँ खरे निरखे हरि जहँ जहँ ॥१०॥

सोहत ओढ़े पीत पट स्याम सलोने गात।
मनौ नीलमनि-सैल पर आतप पर्‍यौ प्रभात ॥६८९॥
आतप पर्‍यौ प्रभात किधौं बिजुरी घन लपटी।
जरद चमेली तरु तमाल मै सोभित सपटी ॥
प्रिया–रूप–अनुरूप जानि 'हरिचन्द' बिमोहत।
स्याम सलोने गात पीत पट ओढ़े सोहत ॥११॥

किती न गोकुल कुलबधू, काहि न किहि सिख दीन।
कौनै तजी न कुल-गली ह्वै मुरली-सुर-लीन ॥६५२॥
ह्वै मुरली–सुर–लीन कौन ब्रज पतिव्रत राख्यौ।
किन प्रन पार्‍यौ, लोक–सील किन दूरि न नाख्यो ॥
धुनि सुनिकै 'हरिचन्द' न उठि धाई तजि को कुल।
हरि सो जल-पय-सरिस मिली अस किती न गोकुल ॥१२॥

मिलि परछाँही जोन्ह सों रहे दुहुँन के गात।
हरि राधा इक संग ही चले गलिन मै जात ॥६५३॥
चले गलिन मै जात जुगल नहि देत लखाई।
राधा मिलि रहि जोन्ह छाँह मिलि रहे कन्हाई ॥

गौर-स्याम 'हरिचंद' अबहि दोउ देखो झिलि-मिलि।
दिए हाथ पै हाथ साथ ही जाते हिलि मिलि ।।१३।।

गोपिन सँग निसि सरद की रमत रसिक रस-रास।
लहाछेह अति गतिन की सबनि लखे सब पास ।।२९१।।
सबनि लखे सब पास दिए नाचत गल-बाही।
उरप तिरप गति लेत एक बहु गोपिन माही ।।
लाग डॉट 'हरिचंद' तत्तथेइ संगीतक रँग।
तान मान बन्धान रह्यौ निसि व्रज-गोपिन सँग ।।१४।।

मोर चंद्रिका स्याम - सिर चढ़ि कत करति गुमान।
लखिबी पाइनि तर लुठति सुनियत राधा-मान ।।६७६।।
सुनियत राधा मान कियो हरि जात मनावन।
ह्वैहै तोसी और दसेक नख-बिम्बित चावन ।।
धूरि भरी 'हरिचंद' होइहै बिगत तंद्रिका।
जावक - रँग सो लाल लाल की मोर-चंद्रिका ।।१५।।

इन दुखिया अँखियान को सुख सिरजौई नाँहि।
देखे बनै न देखते बिन देखे अकुलाहि ।।६६३।।
बिनु देखे अकुलाहि विकल अँसुवन झर लावै।
सनमुख गुरुजन - लाज भरी ये लखन न पावै ।।
चित्रहु लखि 'हरिचंद' नैन भरि आवत छिन छिन।
सुपन नीद तजि जात चैन कबहुँ न पायो इन ।।१६।।

बिनु देखे अकुलाहि बिरह-दुख भरि भरि रोवै।
खुली रहै दिन रैन कबहुँ सपनेहु नहि सोवै ।।
'हरीचंद' संजोग बिरह सम दुखित सदाही।
हाय निगोरी आँखिन सुख सिरजौई नाही ।।१६।।

बिनु देखे अकुलाहि बावरी ह्वै ह्वै रोवै।
उघरी उघरी फिरै लाज तजि सब सुख खोवैं॥
देखै 'श्रीहरिचंद' नैन भरि लखै न सखियाँ।
कठिन प्रेम-गति रहत सदा दुखिया ये अँखियाँ॥१६॥

नाचि अचानक ही उठे बिनु पावस बन मोर।
जानति हौं नन्दित करी इहि कित नन्दकिसोर॥४६९॥
इहि कित नन्दकिसोर स्याम घन अबही आए।
प्रफुलित लखियत लता बेलि सर जलज मुँदाये॥
पद-रेखा 'हरिचंद' चमकि प्रकटत नट-बानक।
स्वेत सुगन्धित पवन अचल इत नाचि अचानक॥१७॥

प्रलय-करन बरखन लगे जुरि जलधर इक साथ।
सुरपति गरब हर्यौ हरखि गिरधर गिरि धरि हाथ॥५४१॥
गिरधर गिरि धर हाथ सकल ब्रज लोग बचाये।
बरसि सुधा-रस सात दिवस नर-नारि जिवाये॥
मिले नयन 'हरिचंद' तहाँ तजि गुरजन की भय।
इत तैं रस बरसात करी उत घन जन-परलय॥१८॥
डिगत पानि डिगलात गिरि लखि सब ब्रज बेहाल।
कम्प किसोरी-दरस कें खरे लजाने लाल॥६०१॥
खरे लजाने लाल जबै तैं भौंह मरोरी।
सजग होइ गिरि धर्यौ कोर करुना करि जोरी॥
लकुट लाय 'हरिचंद' रहे तब गोपहु हरि-ढिग।
अरी खरी तू बाल नेक चितये हरि गे डिग॥१९॥

लोपे कोपे इंद्र लौं रोपे प्रलय अकाल।
गिरिधारी राखे सकल गो - गोपी - गोपाल॥५२१॥

गो - गोपी - गोपाल अबै सब गोवरधन तर।
हरि गिरि लीन्हे हाथ तकत इक टक तुव मुख पर ॥
'हरिचंद' गहि दया उतै ही लखु कर चोपे।
नाही तौ हरि चौंकि गिरैहै गिरि ब्रज लोपे ॥२०॥

गो-गोपी-गोपाल जदपि गोपाल बचाये।
पै तिन कौं 'निज बदन-सुधा दै तहीं जिवाये ॥
नाही तो 'हरिचंद' सात दिन इक कर रोपे।
किमि हरि गिरि कर लिये रहत सगरो ब्रज लोपे ॥२०॥

गो-गोपी-गोपाल राखि गिरिधर कहवाये।
हाथन ही तू सदा तिन्है लै रहत लगाये ॥
चढ़े रहत 'हरिचन्द' बैन दृग जिय हरि चोपे।
गिरिधर-धारिनि क्यौं न होत तू रति-रस-लोपे ॥२०॥

लाज गहौ, बेकाज कत घेरि रहै, घर जाँहि।
गो-रस चाहत फिरत हौ, गो-रस चाहत नाँहि ॥१२६॥
गो-रस चाहत नाहि रूप लखि लाल लुभाने।
सो रस पैहौ नाहि फिरत काहे मँडराने ॥
साँझ भई 'हरिचंद' जान घर देहु दुहाई।
लखिहै कोऊ आइ लाज कछु गहौ कन्हाई ॥२१॥

मकराकृति गोपाल के कुंडल सोहत कान।
धँस्यौ मनौ हिय-घर समर, ड्यौढ़ी लसत निसान ॥२०३॥
ड्यौढ़ी लसत निसान मनौ तुव गुन प्रगटावत।
जेहि सुनि हरि अति विकल कुंज तोहिं तुरत बुलावत ॥
चलति न क्यौं 'हरिचंद' बृथा लावत बिलम्ब इत।
छोड़ु मकर तुव बिना स्याम जल-बिनु मकराकृत ॥२२॥

अधर धरत हरि के परत ओठ-दीठि-पट-जोति ।
हरित बाँस की बाँसुरी इन्द्र-धनुष रँग होति ॥४२०॥
इन्द्र-धनुष रँग होति स्याम घन लहि छवि पावत ।
याही तें हरि सुधा-सार सम रस बरसावत ॥
मुक्त-माल बक-पाँति साँझ फूली माला मध ।
बिजुरी सम 'हरिचंद' पीत पट रह्यौ लपटि अध ॥२३॥

इन्द्र-धनुष सी होति बधन बिरही अबलागन ।
बिनु बलमी तैं भये इतो बिष होइ कहाँ तन ॥
हम वंचित ही रहत सदा 'हरिचंद' लोक-डर ।
हाय निगोरी यह बंसी पीवत अधराधर ॥२३॥

छुटी न सिसुता की झलक, झलक्यौ जोबन अंग ।
दीपति देहु दुहून मिलि दिपति ताफता रंग ॥७०॥
दिपति ताफता रंग बसन बिरची गुड़िया सी ।
चतुराई नहि चढ़ी तऊ कछु लाज प्रकासी ॥
देइ नितम्बनि भार अजौं कटि भले लुटी नहि ।
जोबन आयो जऊ तऊ मुगधता छुटी नहि ॥२४॥

दिपति ताफना रंग मिलित बय सोभा बाढ़ी ।
कछु तरुनाई चढ़ी जीय कछु लाजहु गाढ़ी ॥
आइ चली 'हरिचंद' जदपि जिय मै कछु रसता ।
बलिहारी चलि लखौ तऊ तन छुटी न सिसुता ॥२४॥

तिय-तिथि तरुनि-किसोर-बय पुन्य-काल सम दोन ।
काहू पुन्यनि पाइयत बैस-सन्धि-संक्रोन ॥२७४॥
बैस-संधि-संक्रोन समय सब दिन नहि आवत ।
दूती बनि दैवज्ञ मिलन को समय बतावत ॥

श्री 'हरिचंद' सुकुंज-सेज तीरथ जानहु जिय।
देहु अधर-रस-दान लाल भागन पाई तिय ॥२५॥

बैस-संधि-संक्रौन सात बितु चार सौति कहँ।
द्वै की षट भौं नव सालत जिय अठ द्दग बारह ॥
अजौं न ग्यारह कुच सु पाँच कटि दस धुन नहिं जिय।
करहु न एक न देर होहु त्रय भाग मिली तिय ॥२५॥

ललन अकौकिक लरिकई लखि लखि सखी सिहाति।
आजु काल्हि मै देखियत उर उकसौंही भाँति ॥
उर उकसौंही भाँति बनक कछु कहत न आवै।
देखे ही सुख होइ तिहारे मनहि रिझावै ॥
चलि निरखौ 'हरिचंद' जुगल वय मिलन अलौकिक।
नैन बैन कछु भये औरही ललन अलौकिक ॥२६॥

भावक उभरौंहौं भयौ, कछुक पर्यौ भरुआय।
सीपहरा के मिस हियौ निसि-दिन हेरति जाय ॥२५२॥
निसि-दिन हेरति जाय कछू हँसि हँसि कै बोलै।
ऑख-मिचौनी के मिस सखि-द्दग नापति डोलै ॥
हिय हरखै 'हरिचंद' पियहि लखि होत लजौंही।
कटि सूछमता प्रगट करत भावक उभरौंही ॥२७॥

अपने अँग के जानि कै जोबन-नृपति प्रवीन।
स्तन-मन-नयन-नितम्ब कौ बड़ौ इजाफा कीन ॥२॥
बड़ौ इजाफा कीन सवनि जागीर बढ़ाई।
कंचुकि चाहत अंजन सारी खिलत दिवाई ॥
मदन चक्कवै जानि करन कारज ता मन के।
जोबन नृप अधिकार बढ़ाए अपने तन के ॥२८॥

इक भीजै, चहले परैं, बूड़ैं, बहैं हजार।
किते न औगुन जग करत बै नै चढ़ती बार ॥४६१॥
बै नै चढ़ती बार कूल-मरजादा तोरत।
भंजत धीरज-मेड़ लाज-सामाँ सब बोरत॥
वेग कठिन 'हरिचंद' भेद यह तदपि दुहूँ दिक।
चतुर होत इक पार जानि कै बूड़त लहि इक ॥२९॥

देह दुलहिया की बढ़ै ज्यो ज्यों जोबन-जोति।
त्यौं त्यौं लखि सौतैं सबै बदन मलिन दुति होति ॥४०॥
बदन मलिन दुति होति सौत गुरुजन सुख पावत।
लाल हजारन भाँति मनोरथ उर उपजावत॥
तजत गरब 'हरिचन्द' जिती जुवती जग माँहियाँ।
ज्यौ ज्यौं उलहति चलति सलोने देह दुलहिया ॥३०॥

नव नागरि-तन-मुलुक लहि जोबन-आमिल जोर।
घटि बढ़ि ते बढ़ि घटि रकम करीं और की और ॥२२०॥
करी और की और लखत सिसुता बलि छूटी।
दियो नितम्बनि भार लखौ बीचहि कटि लूटी।
कुच उमगे 'हरिचन्द' भई बुधिहू गुन-आगरि।
चपल नैन बढ़ि चले मदन परसत नव नागरि ॥३१॥

लहलहाति तन तरुनई लचि लग लौं लफि जाइ।
लगै लाँक लोइन-भरी लोइन लेति लगाइ ॥५३२॥
लोइन लेति लगाइ फेरि छूटैं न छुड़ाए।
बनत चहँटुआ नैन लगे डोलत सँग धाए॥
लाल लटू 'हरिचंद' लटू सम देखत छाती।
भटू फिरत सँग लगे तरुनई लखि उलहाती ॥३२॥

सहज सचिक्कन, स्याम रुचि, सुचि, सुगन्ध, सुकुमार।
गनत न मन पथ अपथ, लखि बिथुरे सुथरे बार ॥९५॥
बिथुरे सुथरे बार देखि उरझ्यौही चाहत।
मानत नहि कुल-कानि लाज नहिं तनिक निवाहत ॥
जूरा मैं बँधि लटकि रहत अलकन के छीकन।
चोटिन मे गुँथि जात केस लखि सहज सचीकन ॥३३॥

वेई कर ब्यौरौ वहै, ब्यौरौ क्यौ न विचार।
जिनही उरझ्यौ मो हियौ तिनही सुरझे बार ॥४३६॥
तिनही सुरझे बार बार जिनपै मैं वारी।
कहे देत कर-परसनि सखि यह तौ गिरधारी ॥
उन बिन को 'हरिचंद' परसि प्रगटै मनमथ-जर।
रोम-पाँति उकसाति पीठ लागैं वेई कर ॥३४॥

कच समेटि, भुज कर उलटि खरी सीस-पट डारि।
काको मन बाँधै न यह जूरो बाँधनिहारि ॥
जूरो बाँधनिहारि बाँधि मन छोड़ि न जानै।
सींचति सरस सनेह सुगन्धनहूँ लै सानै ॥
तजति नाहि 'हरिचंद' मोहि बोलति मुखहु न वच।
जुलुफ जँजीरन सीस फूल को कुलुफ देत कच ॥३५॥

छुटे छुटावैं जगत ते सटकारे सुकुमार।
मन बाँधत वेनी बँधे नील छबीले बार ॥५७३॥
नील छबीले बार हरत मन सब ही भाँतिन।
बँधे, छुटे, सटकारे गूँथे मोती पाँतिन ॥
अहि सिवार अलि आद सबन को गरब मिटावै।
अँखियन अरुझे रहत न सुरझैं छुटे छुटावैं ॥३६॥

कुटिल अलक छुटि परत मुख बढ़िगो इतो उदोत।
बंक बँकारी देत ज्यौं दाम रुपैया होत ॥४४२॥
दाम रुपैया होत उलैया तें व्यवहारन।
सोलह सै गुन बढ़त बदन - सोभा तिमि बारन॥
अमल कमल अलि पाँति रहत जिमि जमल ओर जुटि।
ससि पैं अहि सम ससि-बदनी के कुटिल अलक छुटि ॥३७॥

ताहि देखि मन तीरथनि बिकटनि जाइ बलाय।
जा मृगनैनी के सदा बेनी परसत पाय॥
बेनी परसत पाय जमुन सो लोल कलोलै।
मोतिन मिस तिमि गंग संग लागी ही डोलै।
चरन महावर सरिस सरस्वति मिलति जौन छन।
तिय तीरथपति होत लहत फल जाहि देखि मन ॥३८॥

नीकौ लसत लिलार पर टीकौ जटित जराय।
छबिहि बढ़ावत रवि मनौ ससि - मंडल मैं आय ॥१०५॥
ससि - मंडल मैं आइ सूर सोभाहि बढ़ावत।
मोती - लर तारागन सी तिमि अति छबि पावत॥
तिय-सोभा 'हरिचंद' कियौ सौतिन मुख फीको।
लखौ लाल चलि कुंज आजु प्यारी-मुख नीको ॥३९॥

सबै सुहाए ही लसै बसत सुहाई ठाम।
गोरे मुख बेंदी लसैं अरुन, पीत, सित, स्याम ॥२७१॥
अरुन, पीत, सित, स्याम, खुलै सबही मन मोहैं।
साँच कहत जग लोग सबै सुंदर कहँ सोहैं॥
बिनु सिगार ही लेत जौन मन सहज लुभाए।
क्यौं न लगैं सिगार ललन तेहि सबै सुहाए ॥४०॥

कहत सबै, बेंदी दियें आँक दस-गुनो होत।
तिय-लिलार बेंदी दियें अगनित बढ़त उदोत ॥३२७॥
अगनित बढ़त उदोत तीस, अस्सी, नब्बे-गुन।
तीन, आठ, नव, सत, सहस्र 'हरिचंद' बढ़त पुन ॥
बंदी बेना बैंदी भौ लहि बनत रुपा जब।
मोती-लर ते होत मुहर लखि थकित रहत सब ॥४१॥

अगनित बढ़त उदोत न सो कबि पैं गिनि आवै।
निरखत मन हर लेत तिहारे मन अति भावै ॥
सो सोभा 'हरिचंद' बरनि नहि जात कछू अब।
बलि निरखौ चलि स्याम सहज छबि जाहि कहत सब ॥४१॥

भाल लाल बैंदी छए छुटे बार छबि देत।
गह्यो राहु अति आहु करि मनु ससि सूर-समेत ॥३५५॥
मनु ससि सूर-समेत इकत गहि राहु दबावत।
स्वेद-कना मिस अमृत निकसि तब ससि ते आवत ॥
बारिध औ पिय नाते तब गहि जुगल कमल बर।
निरुवारत तकि तमहिं परसि तिय भाल लाल कर ॥४२॥

पायल पाय लगी रहै लगे अमोलक लाल।
भोडरहू की बेंदुली चढ़ति तिया के भाल ॥४४१॥
चढ़ति तिया के भाल तिमिहि सो तिय गरबानी।
हम सब कुल की होय फिरत दूरहि मॅडरानी ॥
कामी हरि 'हरिचंद' करी बेबस करि घायल।
भोडर राख्यौ सीस जर्‌यौ रतनन लै पायल ॥४३॥

चढ़ति तिया के भाल पिया-मन सुख उपजावति।
कोटि रतन रवि-ससिहूँ सो बढ़ि सोभा पावति ॥

मूरतमान सुहाग-बिंदु लखि कवि-मति कायल ।
यातें यह अनमोल जदपि नवलख की पायल ।।४३।।

चढ़ति तिया के भाल तैसही तू गरबानी ।
सुनत सखिन की बात न पीतम को पतियानी ।।
रहति मान करि बृथा कोप मैं करि मति मायल ।
पियहि लुठावति चरन तरे परसावति पायल ।।४३।।

चढ़ति तिया के भाल सबैं सुंदर कहँ सोहत ।
तासों करु न सिंगार बेंदुली ही मन मोहत ।।
चलु 'हरिचंद' निकुंज दूर तजि माल हिमायल ।
उत पिय तुव बिन ब्याकुल इत तू पहिरति पायल ।।४३।।

चढ़ति तिया के भाल सदा निज मान बढ़ावत ।
तैसहि नूपुर बोलन सो आदर नहि पावत ।।
सूचति रति अभिसार सबन कहँ बाजि उतायल ।
याही सों मनि-जटितहु राखति पद तर पायल ।।४३।।

भाल लाल बेंदी ललन आखत रहे बिराजि ।
इंदु-कला कुज मैं बसी मनौ राहु-भय भाजि ।।६९०।।
मनौ राहु-भय भाजि इंदु कुज-मंडल आयो ।
ताहू पै तिन बाहर ही निज जोर जमायो ।।
पूजि देव-तिय न्हाइ खरी बाढ़ी अति सोभा ।
बिथुरे केसनि तिलक अखत लखि पिय मन लोभा ।।४४।।

पिय-मुख लखि पन्ना जरी बेंदी बढ़ै विनोद ।
सुत-सनेह मानौ लियो बिधु पूरन बुध गोद ।।७०७।।
बिधु पूरन बुध गोद मोद भरि कैं बैठार्यौ ।
होइ उच्च के जिन सोहाग को चौचँद पार्यौ ।।

सेंदुर केसर पान दिठौना बेसर कच सुख।
औरहु ग्रह मिलि बसे इकत लखि सुंदर तिय मुख ॥४५॥

गढ़-रचना बरुनी अलक चितवनि भौंह कमान।
आघ बँकाई ही बढ़ै तरुनि तुरंगम तान ॥३१६॥
तरुनि तुरंगम तान बँकाइहि ते छवि पावत।
ताही ते तू सदा मान की मति उपजावत ॥
वेहू ललित तृभंग सदा बाँके सब सो वढ़।
यह जोरी 'हरिचंद' भली विधि रची आपु गढ़ ॥४६॥

नासा मोरि नचाइ दृग करी कका की सौंह।
काँटे लौं कसकति हिये गरी कँटीली भौंह ॥४०६॥
गरो कँटीली भौंह न भूलति कबहुँ भुलाये।
वह चितवनि वह मुरनि चलनि चख चपल नचाये ॥
प्रान रहे 'हरिचंद' एक सौंहन को आसा।
उन तौ बिछुरत ही बुधि-बल मन-धीरज नासा ॥४७॥

गरी कँटीली भौंह जीय सो चुभत सदाही।
अब उनके बिनु मिले सखी जिय मानत नाहीं ॥
लाउ बेगि 'हरिचंद' पूरि मम कोटिन आसा।
नाही तो यह तन बियोग मनमथ अब नासा ॥४७॥

गरी कँटीली भौंह कोप करि प्रगट बँकाई।
मम भुज छूटन हेत सरस रिसि जौन दिखाई ॥
वह छलि भाजी हाय रह्यौ मै लखत तमासा।
मिलन-मनोरथ-पुंज पलक मूँदत सब नासा ॥४७॥

गरी कँटीली भौंह सोइ कसकत जिय भारी।
गुरुजन को भय-देनि खानि हा हा वह प्यारी ॥

मिलन औध 'हरिचंद' वदनि वह राखनि आसा।
भूलति क्यौहूँ नाहि नचावनि भौ दृग नासा ॥४७॥

गरी कँटीली भौह बिरह व्याकुल अति भारी।
कोउ विधि वेगि मिलाउ मोहि सुंदर सोइ प्यारी॥
कहियो तुम करि सौह न पूरत क्यौं अब आसा।
ताकी जाको बुधि बल सब देखत तुम नासा ॥४७॥

खौरि-पनच, भृकुटी-धनुष, बधिक-समर, तजि कानि।
हनत तरुन-दृग तिलक-सर, सुरक-भाल भरि तानि ॥१०४॥
सुरक-भाल भरि तानि खोजि चतुरन ही मारत।
बधि फिर खोज न लेत चवाइन चौचँद पारत॥
जिय व्याकुल 'हरिचंद' होत गति मति सब बौरी।
गोरे गोरे भाल बिलोकत केसरि खौरी ॥४८॥

रस सिंगार मंजन किए, कंजन भंजन-दैन।
अंजन रंजनहूँ विना, खंजन-गंजन नैन ॥४६॥
खंजन-गंजन नैन लुकंजन मनहुँ लगाये।
पैठि हिये मन लयो तबहुँ नहिं परत लखाये॥
वारौं कोटिक मीन, मैन-सर, मृग-छबि सरवस।
कहँ ये जड़ पसु निरस कहाँ वे भरे मदन-रस ॥४९॥

खेलन सिखए अलि भलैं चतुर अहेरी मार।
कानन-चारी नैन-मृग नागर नरन सिकार ॥४५॥
नागर नरन सिकार करत ये जुलुम मचावत।
अंजन गुनहूँ बँधे उड़न झपटत गहि लावत॥
चोन्हि चीन्हि 'हरिचन्द' रसिक ये मारत सेलन।
बधि फिर सुधि नहिं लेत भले सिखये यह खेलन ॥५०॥

सायक-सम घायक नयन, रँगे त्रिविध रँग गात ।
झखौ विलखि दुरि जात जल, लखि जलजात लजात ॥५५॥
लखि जलजात लजात, हरिन बन बसत निरन्तर ।
खंजन निज मद-गंजन करि निवसत तरुवर पर ॥
सो मोहत 'हरिचन्द' जौन त्रिभुवन के नायक ।
बुझे त्रिबेनी-नीर जोय-घायक दृग-सायक ॥५१॥

अर तै टरत न वर परे, दई मरक मनु मैन ।
होड़ा-होड़ी वढ़ि चले चित, चतुराई, नैन ॥ ३ ॥
चित, चतुराई, नैन मधुरता बच-रस-साने ।
जोबन कुच पिय प्रेम सबै साथहि उमगाने ॥
जीतन हरि 'हरिचन्द' कुमक नृप मदन सुघर ते ।
आवत सब ही वढ़े बढ़ेई टरत न अर ते ॥५२॥

जोग-जुगुति सिखये सबै मनौ महा मुनि मैन ।
चाहत पिय अद्वैतता, कानन सेवत नैन ॥१३॥
कानन सेवत नैन रहत नितही लौ लाए ।
हरि-मद-रस सो छके छबीले उमग बढ़ाए ।
सेली डोरे लाल लखत गुदरी पल अनमिख ।
क्यो न लहै अद्वैत सिद्धि प्रिय जोग जुगुति सिख ॥५३॥

बर जीते सर मैन के, ऐसे देखे मै न ।
हरिनी के नैनान तै हरि नीके ए नैन ॥६७॥
हरिनी के ए नैन अनी के घन बरुनी के ।
फीके कमलन करत भावते जी के ती के ॥
ही के हर 'हरिचन्द' रंग चीते प्रिय प्रीते ।
नीते मानत नाहिं चपल चीते वर जीते ॥५४॥

संगति दोष लगै सबै, कहे जु साँचे बैन।
कुटिल बंक भ्रुव संग तें भए कुटिल-गति नैन ॥३०३॥
भए कुटिल-गति नैन कुटिलई पिय सो ठानत।
सोधे जित अरि रहत कान सिख नेक न मानत॥
अरुझि परत 'हरिचन्द' सैन सजि बरुनिन-पंगति।
घायहु बाँको करत खरे बिगरे लहि संगति ॥५५॥

दृगनि लगत, बेधत हियौ, बिकल करत अँग आन।
ए तेरे सब तें विषम ईछन तीछन बान ॥३४९॥
ईछन तीछन बान आज अति अचरज पारैं।
मिलत करेजे घाय करैं बिछुरे तिय मारैं॥
काढ़े औरहु धँसत बढ़त उपचार निरखि ढिग।
जेहिं लागत तेहि लगन देत नहिं लगन लाय दृग ॥५६॥

झूठे जानि न संग्रहे मनु मुँह-निकसे बैन।
याही ते मानो किये, बातनि कौ विधि नैन ॥३४५॥
बातनि कौ बिधि नैन किये सब त्रिधि विधि जानी।
बिनु बोलेहू जासु मधुर बोलनि रस-सानी।
हाव भाव 'हरिचन्द' छिपे रस धरे अनूठे।
कहे देत जिय बात करत मुख के छल झूठे ॥५७॥

फिरि फिरि दौरत देखियत, निचले नैंकु रहै न।
ये कजरारे कौन पै करत कजाकी नैन ॥६७०॥
करत कजाकी नैन कजा की सैन सैन गति।
बटपारे बरजोर बिचारे पथिक देत हति॥
कावा सम 'हरिचंद' फिरत कावा धावा धरि।
पै निज ठौरहि रहत करत अचरज अति फिरि फिरि ॥५८॥

खरी भीरहूँ भेदि कै कितहूँ तै इत आय।
फिरै दीठि जुरि दुहुँनि की सबकी दीठि बचाय ॥
सब की दीठि बचाय नीठि मिलिही ये जाही।
कोटि उपाइ न करौ ठौरही ये ठहराही ॥
कठिन प्रीति 'हरिचन्द' भीत गुरुजन हरि सगरी।
करत आपनो काज लाज तजि यह गति निखरी ॥५९॥

सब ही तन समुहाति छिन, चलति सबन दै पीठि।
वाही तन ठहराति यह, किबिलनुमा लौं दीठि ॥३०॥
किबिलनुमा लौं दीठि एक हरि दिसि ही हेरै।
कोटि जतन कोउ करो अनत कहुँ रुखहु न फेरै ॥
पीतम बिनु 'हरिचन्द' कहौ क्यौं अनत लगै मन।
सरल भाव यो भले लखौ किन छिन सबही तन ॥६०॥

किबिलनुमा लौं दीठि न कबहूँ प्रन करि फेरै।
छवि-सागर डूब्यो निज मन-ससि फिरि फिरि हेरै ॥
हरि-चुम्बक 'हरिचन्द' करत दृग-लोहहि करसन।
तितही ठहरति जदपि करत कावा सब ही तन ॥६०॥

किबिलनुमा लौं दीठि भई सब तजि पिय अनुसर।
ताहि देखि 'हरिचन्द' प्रेम गति सुदृढ़ करी अर ॥
बिन देखे हरि-धाम लखन को तजति न वह प्रन।
तौ परतछ हरि पाइ कहा यह चितवै सब तन ॥६०॥

कहत, नटत, रीझत, खिझत, मिलत, खिलत, लजि जात।
भरे भौन मे करत है नैनन ही सो बात ॥३२॥
नैनन ही सो बात करत दोऊ अरुझाने।
अलख जुगल के खेल न काहू लखत लखाने ॥

इन्हैं काम सों काम होइ किन लाखन जन महँ ।
ये अपने रस-मगन भीर करिहै इनको कहँ ॥६१॥

कंज-नयनि मंजन किये बैठी ब्यौरति बार ।
कच-अँगुरिनि बिच दीठि दै निरखति नन्दकुमार ॥७८॥
निरखति नन्दकुमार सखिन की दीठि बचाए ।
एक पंथ द्वै काज करति मुख अलक छिपाए ॥
छिप्यौ चन्द 'हरिचंद' सघन घन देइ लुकंजन ।
तहँ सों द्वै उडुगन निरखत करि ढिग जुग कंजन ॥६२॥

सब अँग करि राखी सुघर नागर-नेह सिखाइ ।
रस जुत लेति अनन्त गति पुतरी पातुर राइ ॥२७४॥
पुतरी पातुर-राइ नचति मन हरति सुहावति ।
अतिहि चतुर गुन भरी अनेकन भाव दिखावति ॥
मनहि हरति 'हरिचंद' हठनि नित रँगी मदन-रँग ।
को जोहत नहि मोहत यह छबि-पूरित सब अँग ॥६३॥

दीठि-बरत बाँधी अटनि, चढ़ि धावत न डरात ।
इत उत तें चित दुहुँन के नट लौं आवत जात ॥१९३॥
नट लौं आवत जात संक बिनु इत उत मिलि भल ।
करत कला बहु भाँति मैन-गुरु मंत्र-जोग-बल ॥
दृष्टिबन्ध 'हरिचंद' होत जग लखत न नीठी ।
खेलि लहत रस-केलि रीझ चित-नट चढ़ि दीठी ॥६४॥

लीनेहूँ साहस सहस, कीने जतन हजार ।
लोइन लोइन सिन्धु तन, पैरि न पावत पार ॥२१३॥
पैरि न पावत पार रहत त्रिवली-तरंग फँसि ।
कुच-गिर सों टकराइ नाभि-भँवरन घूमत धँसि ॥

अरुझत बारहि बार रूप-चादर परि भीने।
नैन कहर दरियाव पाइ बूड़त मन लीने ॥६५॥

पहुँचति डटि रन सुभट लौं, रोकि सकैं सब नाहिं।
लाखनहूँ की भीर मैं आँखि उतै चलि जाहिं ॥१७८॥
आँखि उतै चलि जाहिं रुकत नेकहु नहिं रोके।
करैं आपुनो काज संक विनु गिनत न टोके॥
छकी प्रेम 'हरिचंद' परस्पर लगी दरस ठटि।
मिलत धाइ अकुलाइ हेरि उतही पहुँचति डटि ॥६६॥

गरी कुटुम्बिनि-भीर मैं रहो बैठि दै पीठि।
तऊ पलक करि जात उत सलज हँसौंही दीठि ॥९७॥
सहज हँसौंही दीठि झपकि उत फिरही जाँही।
गुरु-जन-नजरि बचाए दुरि सनमुख समुहाँही॥
कछु देखन मिस सहज इतहि उत दुरि दुरि अगरी।
पीतम दिसि लखि लेत लालचिन चपल अचगरी ॥६७॥

भौंह उँचै, आँचर उलटि, मौर मोरि, मुँह मोरि।
नीठि नीठि भीतर गई, दीठि दीठि सो जोरि ॥२४२॥
दीठि दीठि सो जोरि काज परबस अकुलानी।
गुरुजन आयसु बँधी सलोनी ओट दुरानी॥
प्रेम-भरी 'हरिचन्द' चलत दृग चपल लजौंहैं।
बेबस चितवनि चितै गई मोरत निज भौंहैं ॥६८॥

लागत कुटिल कटाच्छ-सर क्यो न होय बेहाल।
लगत जु हिये दुसार करि, तऊ रहत नटसाल ॥३७५॥
तऊ रहत नटसाल सदा सालत जिय माँही।
वेधि पार ह्वै जाँहि तदपि ये निसरत नाँही॥

सुधि न टरत 'हरिचन्द' छिनकहू सोअत जागत।
बारेकहू के लगे सदा लागत से लागत ॥६९॥

अनियारे, दीरघ दृगिनि किती न तरुनि समान।
वह चितवनि औरै कछू, जेहि बस होत सुजान ॥५८८॥
जेहि बस होत सुजान भावते है कछु न्यारे।
सहज प्रीति रस-रीति बिबस निज पिय बस पारे॥
कहा भयो 'हरिचंद' जु पै लाखन तिय पिय-ढिग।
प्रेमी रीझत प्रेम न अनियारे दीरघ दृग ॥७०॥

जदपि चवाइनि चीकिनी चलति चहूँ दिसि सैन।
तऊ न छाँड़त दुहुँन के हँसी रसीले नैन ॥३३६॥
हँसी रसीले नैन करत बत-रस अरुझाने।
भाव भरे रस भरे मैन के मनहुँ खजाने॥
जग रीझो खीझो बरजौ घटिहै नहिं चाइनि।
ये अपने रस-पगे चाव किन करहि चवाइनि ॥७१॥

फूले फदकत लै फरी, पल कटाच्छ-करवार।
करत बचावत विय-नयन-पाइक घाइ हजार ॥२४७॥
पाइक घाइ हजार करत जुरि जुरि दुरि जाहीं।
फिर डँटि सनमुख लरहि बचहि अभिरहि मुरि जाहीं॥
जुगल चतुर 'हरिचंद' भीर भुलवत नहि भूले।
भिरे प्रेम-रन-रंग सुभट-दृग गुन-बल फूले ॥७२॥

चमचमात चंचल नयन बिच घूँघट-पट झीन।
मानहु सुर-सरिता बिमल जल उछलत जुग मीन ॥३७६॥
जल उछलत जुग मीन रूप-चारा ललचाने।
झलकत मुख तिमि निरखि न पिय मन रहत ठिकाने॥

सेत बसन 'हरिचंद' कहिय तन उपमा केहि सम।
प्रगटत बाहर प्रभा चारु मुख चमकत चमचम ॥७३॥

नावक-सर से लाइकै तिलक तरुनि गइ ताकि।
पावस-झर सी झमकि कै गई झरोखे झाँकि ॥५७०॥
गई झरोखे झाँकि पिया - उर बिरह बढ़ाई।
नीके मुख नहि लख्यो रह्यौ तासो अकुलाई॥
मीन उछरि जल दुरै लुकै बन जिमि भजि सावक।
तिमि सों नैन नवाइ दुरी हति पिय-उर नावक ॥७४॥

सटपटाति सी ससि-मुखी मुख घूँघट-पट ढाँकि।
पावस-झर सी झमकि कै गई झरोखे झाँकि ॥६४६॥
गई झरोखे झाँकि लाज-बस ठहरि सकी नहि।
इत पिय-मुख नहि लख्यौ भले तासो व्याकुल महि॥
परे लाज-बस जुगल बिकल वह घर-मधि ये बट।
मिलि न सकत 'हरिचन्द' प्रेम की हिय-मधि सटपट ॥७५॥

छुटत न लाज, न लालचौ प्यौ लखि नैहर-गेह।
सटपटात लोचन खरे, भरे सकोच-सनेह ॥५२४॥
भरे सकोच-सनेह निरखि ढिग पिय ललचाही।
दुरि दुरि देखहि कबहुँ कबहुँ लखि लोग लजाही॥
रोकेहू नहि रहत न घूँघट तजि सुख लूटत।
बिचि चुम्बक के लोह-सरिस कोउ बिधि नहि छूटत ॥७६॥

दूरौ खरे समीप को मानि लेत मन मोद।
होत दुहुन के दृगन ही बत-रस हँसी-विनोद ॥६३९॥
बत-रस हँसी-बिनोद मान अरु मान-मनावनि।
रिझनि-खिझनि-संकेत-बदनि पुनि कंठ-लगावनि॥

नैननही 'हरिचन्द' करत सुख-अनुभव पूरो ।
नैन मिले जिय निकट जदपि ठाढ़े दोउ दूरो ॥७७॥

तिय, कित कमनैती पढ़ी, बिन जिहि भौह-कमान ।
चित बेधै चूकति नहीं बंक बिलोकनि-बान ॥३५६॥
बंक बिलोकनि-बान सबै बिधि अजगुत पारत ।
बिनु देखी जो बस्तु ताहि तकि कै किमि मारत ॥
काढ़े औरहु चुभत अनोखे चोखे सर हिय ।
बधिन बेझ लै जात सिकारिनि अति बिचित्र तिय ॥७८॥

नीचे ही नीचे निपट दीठि कुही लौ दौरि ।
उठि ऊँचे, नीचे दियो मन-कुलिग झकझोरि ॥२५७॥
मन कुलिंग झकझोरि कियो परबस मोहि प्यारी ।
कहाँ जाउँ, का करौं, भयो जिय अतिहि दुखारी ॥
अब नहि आन उपाय सुधाधर-रस-बिनु सींचे ।
सब बिधि कियो निकाम निरखि दृग ऊँचे नीचे ॥७९॥

नैन-तुरंगम अलक-छबि-छरी लगी जेहि आइ ।
तिहि चढ़ि मन चंचल भयो मति दीनी बिसराइ ॥
मति दीनी बिसराइ बिबस इत सो उत डोलै ।
छुटी धीरता-डोर न मुखहू सों कछु बोलै ॥
सुपथ-कुपथ नहि लखत भयो बुधि-बिनु उनमद सम ।
सब बिधि ब्याकुल भयो चेत चढ़ि नैन-तुरंगम ॥८०॥

ऐंचति सी चितवनि चितै भई ओट अलसाइ ।
फिर उझकनि को मृग-नयनि दृगनि लगनिया लाइ ॥३२०॥
दृगनि लगनिया लाइ इहाँ सो कितै दुरानी ।
कल न परत बिनु लखे बिकल गति मति बौरानी ॥

छाँड़ि विवस 'हरिचंद' गई बुधि धीरज सैंचति।
दृग-वंसी मन-मीन रूप निज गुन-बिझ ऐंचति ॥८१॥

करे चाह सों चुटुकि कै खरें उड़ौहैं मैन।
लाज नवाए तरफरत करत खूँद सी नैन ॥५४२॥

करत खूँद सी नैन मेड़ गुरुजन की तोरत।
लोक-लीक नहि गिनत उतैही हठि मुख जोरत ॥
मन-सहीस 'हरिचन्द' थक्यौ बुधि-बागहि पकरे।
खरे विवस भे रहत न लाज-लगामन जकरे ॥८२॥

नेकु न झुरसी बिरह-झर नेह-लता कुम्हिलाति।
नित नित होति हरी हरी, खरी झालरति जाति ॥९८॥

खरी झालरति जाति मनोरथ करि उमगाई।
सींचि सींचि अँसुवानि अवधि-तरु लाइ चढ़ाई ॥
वनमाली 'हरिचंद' चलहु लावहु लै उर सी।
लखहु आपनी नेह-लता वलि नेकु न झुरसी ॥८३॥

कर उठाइ घूँघट करत उसरत पट-गुझरौट।
सुख-मोटैं लूटी ललन लखि ललना की लौट ॥४२४॥

लखि ललना की लौट ललन-दृग टरत न टारे।
लोट-पोट ह्वै रहे छके सुधि सकल विसारे ॥
दुरि दुरि साम्हे होत रसिक 'हरिचन्द' चतुर तर।
अरुझे वारहि वार लखत त्रिवली-मुख-दृग-कर ॥८४॥

नभ लाली आली भई चटकाली धुनि कीन।
रतिपाली, आली, अनत, आए वनमाली न ॥११५॥

आए बनमाली न करी सखि बहुत कुचाली ।
काली ब्याली रैन बिरह घाली जिय माली ॥
बाली दीपक जोति मन्द भइ प्रीति न पाली ।
टाली हाली औध भई खाली नभ-लाली ॥८५॥

होली
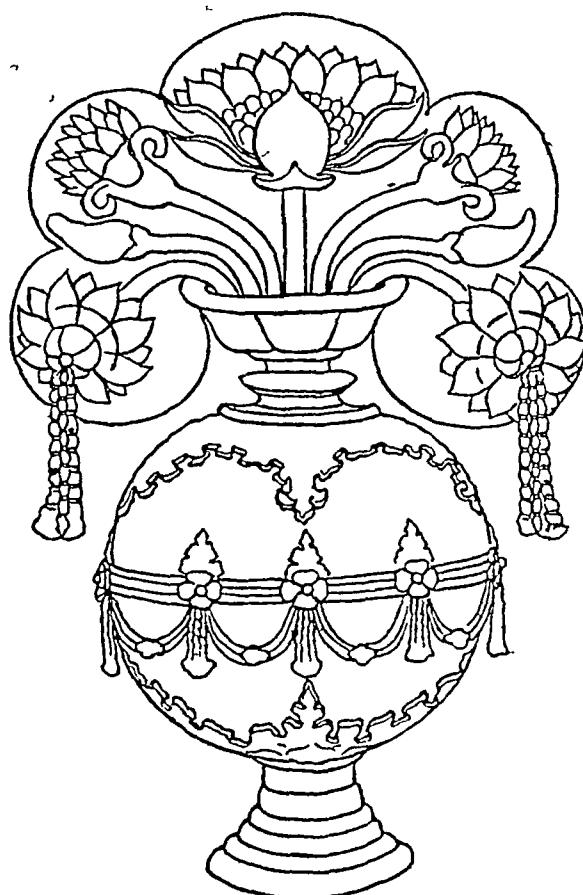
सं० १९३६

हरिप्रकाश यंत्रालय मे
सं० १९३६ मे
मुद्रित

प्यारे,

कहाँ चले ? इधर आओ, त्योहार घर का करो। देखो, हमने होली के कुछ खेल इन पत्रो मे लिखे है, इनसे जी बहलाओ।

तुम्हारा

हरिश्चंद्र।

होली

दोहा
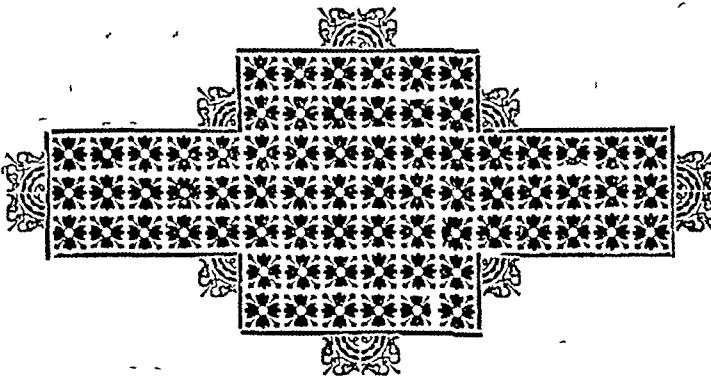
भरित नेह नव नीर नित, बरसत सुरस अथोर ।
जयति अपूरब घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर ॥

झपताल सहाना

सखी बनि ठनि तू चली आज कितकौ न जानत है मग श्याम खड़ो री ।
चंद सो बदन ढाँकि नीले पट देखु न आगे ही छैल अड़ो री ॥
वा मारग कोउ जान न पावत होरी को खंभ सों ह्वै कै गड़ो री ।
'हरीचंद' वासों भली दूर ही की बिहारी खिलारी फफंदी बड़ो री ॥१॥

बिहाग

रे निठुर मोहि मिल जा तू काहे दुख देत ।
दीन हीन सब भाँति तिहारी क्यों सुधि धाइ न लेत ॥
सही न जात होत जिय व्याकुल बिसरत सब ही चेत ।
'हरीचंद' सखि सरन राखि कै भल्यो निवाह्यो हेत ॥२॥

सिंदूरा

कान्ह तुम बहुत लगावत अपुने कों होरी-खिलार।
निकसि आव मैदान दुरत क्यौं लै चौगान निवार॥
तू नँद-गैयाँ तौ हैं हमहूँ बरसाने की नार।
अब को दाँव जो जीतै तोपैं 'हरीचंद' बलिहार॥ ३॥

एरी या ब्रज मैं बसिकै तरह दिये ही बनै काज।
वह तो निलज बिचार करत नहि तू कत खोवत लाज॥
तू कुलबधू सुलच्छनि गोरी क्यो डरवावति गाज।
'हरीचंद' के मुख नहि लगनो होरी के दिन आज॥ ४॥

सखी री कासों ठानत सरवर तू बे-काम।
वह तो धूत फफंदी ब्रज को तू है कुल की बाम॥
कौन जीतिहै ढीठ निलज सों तू कित नाहक करत कलाम।
'हरीचंद' निज बाट चली चल याको उपाधी नाम॥ ५॥

धनाश्री

मनमोहन चतुर सुजान, छबीले हो प्यारे।
तुम बिनु अति ब्याकुल रहैं सब ब्रज के जीवन प्रान॥
तुमरे हित नँद-लाडिले हो छोड़ि सकल धन-धाम।
बन बन मैं ब्याकुल फिरै हो सुंदर ब्रज की बाम॥
तनक बाँस की बाँसुरी हो लेत जबै तुम हाथ।
ब्याकुल धावैं देव-बधू तजि अपने पति को साथ॥
सुर-नर-मुनि-मन-मोहिनी हो मोहन तुमरी तान।
जमुना जू बहिबो तजैं थकि टरत न देव-विमान॥
जड़ चैतन होइ जात है चैतन जड़ होइ जात।
जौ इन सब की यह दसा तौ अबलन की का बात॥

उठि धावैं ब्रज-नागरी हो सुनि मुरली की टेर।
लाज संक मानै नहीं हो रहत श्याम को घेर ॥
मगन भई सब रूप मैं हो गोकुल गाँव बिसारि।
'हरीचंद'जन बारने हो धन्य धन्य ब्रज-नारि ॥ ६ ॥

इकताला

झूलत पिय नंदलाल झुलवत सब ब्रज की बाल
बृंदाबन नवल कुंज लोल दोलिका।
संग राधिका सुजान गावत सारंग तान
बजत बाँसुरी मृदंग बीन ढोलिका ॥
ऊधम अति होत जात घूँघट मैं नहि लखात
छूटत बहुरंग उड़त अबिर झोलिका।
'हरीचंद' दै असीस कहत जियौ लख बरीस
दिन दिन यह आवै तेहवार होलिका ॥ ७ ॥

काफी

अरे जोगिया हो कौन देस तें आयो।
हाँ हाँ रे जोगी मीठे तेरे बोल ॥ टेक ॥
आँखैं लाल बनी मद-माती कुसुम फूल के रंग।
मानो शिव बरसाने आयो चेला न कोऊ संग ॥
हाँ हाँ रे जोगी पहिरे बघंबर चोल ॥
हाँ हाँ रे जोगी तू तो चेला काम को यह झूठो साध्यौ ध्यान।
जैसे बकुला गंगा-जल में बैठत आइ सुजान ॥
हाँ हाँ रे जोगी खोलि आपुने नैन ॥
हाँ हाँ रे जोगी अबलन को ऐसे देखै जैसे ब्रज को रसिया कोय॥
जोग लियो कैसो रे जोगी यह तो जोग न होय ॥
हाँ हाँ रे जोगी नारी बिन कैसो चैन ॥

हाँ हाँ रे जोगी कुंज कुटी एकांत थली मैं जौ तू निकसै आय।
तौ इक मोहन मन्त्र कों हम दैहैं तोहि सिखाय ॥
हाँ हाँ रे जोगी होयगो परम अनंद ॥
हाँ हाँ रे जोगी तोसों मंतर लेहिगी हो भेंट धरैं धन-धाम।
जोगी तेरे कारने सब जोगिन ब्रज की बाम ॥
हाँ हाँ रे जोगी चेला तेरो 'हरिचंद' ॥
हो कौन देस तें आयो अरे जोगिया ॥८॥

होरी काफी

तुही कहा ब्रज मे अनोखी भई।
कान नहिं काहू की करत दई ॥
जानत नहि कछु चाल यहाँ की आई अबहिं नई।
मोहन मिलतहि जानि परैगी भूलैगी सबई ॥
छैल खिलार रसिक होरी को लीने सखा कई।
गाय कबीर अबीर उड़ावत आवत हैहै सई ॥
देखत ही तोहि दौरि परैगो जानि नबेली नई।
हार तोरि रँग डारि चूमि मुख चूरी करिदै रई ॥
तब तोसों कछु बनि नहि ऐहै जब तेरी लाज गई।
'हरीचंद' सो को ऐसी जौ नै कै नाहि गई ॥९॥

होरी

जो मैं डरपत ही सो भई।
छैल छबीलो खिलारन लीने आगे ठाढ़ो दई ॥
फेट गुलाल धरे डफ कर लै गावत तान नई।
वाकी तान सुनत सो को नहि जाकी लाज गई ॥
एक प्रीत मेरी वासो पुनि दूजे होरी छई।
'हरीचंद' छिपिहै नाही अब जानैंगे लो कई ॥१०॥

डफ की

हम चाकर राधा रानी के।
ठाकुर श्री नँदनंदन के वृषभानु लली ठकुरानी के ॥
निरभय रहत बदत नहिं काहू डर नहि डरत भवानी के।
'हरीचंद' नित रहत दिवाने सूरत अजब निवानी के ॥११॥

अब तेरे भए पिया बदि कै।
दगे नाम सो यार तिहारे छाप तेरी सिर ऊपर लै ॥
कहाँ जाहि अब छोड़ि पियारे रहे तोहि निज सरबस दै।
'हरीचंद' ब्रज की कुंजन मे डोलैगे कहि राधे जै ॥१२॥

चिर जीओ फागुन को रसिया।
जब लौ सूरज चंद उँजेरी तब लौ ब्रज मै फिर बसिया ॥
नित नित आओ होरी खेलन नित गारी नित ही हँसिया।
'हरीचंद' इन नैन सदा रहौ पीत पिछौरी कटि कसिया ॥१३॥

कोऊ नाहिनै जो बरजै निडर छैल।
अररानो ही परत डरत नहिं रोकि रहत मग बनि अरैल ॥
वाके डर सो कोऊ कुल की नारि निकसत नहि जमुना की गैल।
'हरीचंद' कैसे निबहैगी फागुन में वाके फंद फैल ॥१४॥

धमार धनाश्री

मन-मोहन की लगवारि गोरी गूजरी।
मगन भई हरि-रूप मै सब कुल की लाज बिसारो ॥
नंद-सुवन को नाम हो कोऊ वाके आगे लेइ।
सुनतहि तन थरथर कँपै मुख उत्तर कछू न देइ ॥
श्याम सुँदर को चित्र हो वाहि जो कोऊ देत देखाइ।
नैनन सों अँसुवा बहै मुख बचन कह्यौ नहि जाइ ॥

जो कोऊ वासो पूछई मुख बोलत आन की आन।
जिय को भेद न खोलई वह नागरि चतुर सुजान॥
दृग को जल सूखै नहीं हो मनु जमुना बहि जाइ।
गोरो मुख पीरो पर्यो मनु दिन मैं चंद लखाइ॥
नित गुरुजन खीझन रहैं हो लरत ससुर अरु सास।
तिनकी सब बातें सहै नहि छोड़ै प्रेम की फाँस॥
तन अति ही दुबरो भयो मनु फूल-छरी की चाल।
भोरो मुख नित नित घटै अरु सूखे अधर रसाल॥
जो कोऊ कहि देइ हो मन-मोहन निकसे आइ।
सुनतहि उठि धावै अरी गृह-काज सबै बिसराइ॥
मग मैं जो मोहन मिलैं हो नहिं देखत भरि नैन।
घूँघट पट की ओट मैं हो करत कछू इक सैन॥
जहँ मन-मोहन पग धरैं तहँ की रज सीस चढ़ाइ।
सखियन को सँग छोड़िकै वह पीछे लागी जाइ॥
या बृज की सब ग्वालिनी हो ज्यौं ज्यौं करत चवाव।
त्यौं त्यौं वाके चित्त मे हो बढ़त चौगुनो चाव॥
जो बैठे एकांत मे हो जपत उनहि को नाम।
ध्यान करै नँदलाल को नहि भावै कछु धन-धाम॥
खान-पान सब छोड़िकै हो पति को सुख बिसराइ।
कोउ मिस सों ब्रजराज के वह घर के मारग जाइ॥
बातन मैं बहराइकै हो पूछत उनकी बात।
जौ हमहूँ कछु पूछही तौ बातन मैं फिरि जात॥
नैन नींद आवै नही वाके लगे स्याम सों नैन।
भावै नहिं कोउ भोग हो वाने त्याग्यो सब सुख चैन॥
जो कोऊ समुझावही तौ औरहु व्याकुल होइ।
'हरीचंद' हरि मैं मिलिहै हो जल पय सम सब खोइ॥१५॥

राग देश

सखी हमरे पिया परदेश होरी मैं कासो खेलौं ।
जिनके पीतम घर है सजनी तिनहि की है होरी ॥
हम अपने मोहन सो बिछुरी बिरह-सिंधु मे बोरी ॥
चोआ चंदन अबिर अरगजा औरहु सुख के साज ।
'हरीचंद' पिय बिनु सब हमको बिख से लागत आज ॥१६॥

सिंदूरा

आज कहि कौन रुठायो मेरो मोहन यार ।
बिनु बोले वह चलो गयो क्यो बिना किये कछु प्यार ॥
कहा करौं कछु न बनत है कर मीड़त सौ बार ।
'हरीचंद' पछितात रहि गई खोइ गले को हार ॥१७॥

असावरी

तुम मम प्रानन ते प्यारे हो, तुम मेरे आँखिन के तारे हो ।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो आयो फागुन मास ।
अब तुम बिनु कैसे रहौगी तासों जीय उदास ॥
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो यह होरी त्यौहार ।
हिलि मिलि झुरमुट खेलिये हो यह बिनती सौ बार ॥
प्राननाथ हो . प्यारे लाल हो अब तो छोड़ौ लाज ।
निधरक बिहरौ मो सँग प्यारे अब याको कहा काज ॥
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो जौ रहिहौ सकुचाय ।
तौ कैसे कै जीवन बचिहै यह मोहि देहु बताय ॥
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो जग मै जीवन थोर ।
तो क्यो भुज भरिकै नहि बिहरौ प्यारे नंदकिशोर ॥
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो तुम बिनु जिय अकुलाय ।
ता पैं सिर पैं फागुन आयो अब तो रह्यो न जाय ॥

प्राननाथ हो प्यारे लाल हो तुम बिनु तलफै प्रान।
मिलि जैये हौं कहत पुकारे एहो मीत सुजान॥
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो यह अति सीतल छाँह।
जमुना-कूल कदंब तरे किन बिहरौ दै गलबाँह॥
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो मन कछु ह्वै गयो और।
देखि देखि या मधु रितु मैं इन फूलन को बे-तौर॥
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो लेहु अरज यह मान।
छोड़हु मोहि न इकली प्यारे मति तरसाओ प्रान॥
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो देखि अकेली सेज।
मुरछि मुरछि परिहौं पाटी पैं कर सो पकरि करेज॥
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो नींद न ऐहै रैन।
अति ब्याकुल करवट बदलौंगी ह्वैहै जिय बेचैन॥
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो करि करि तुम्हरी याद।
चौंकि चौंकि चहुँ दिसि चितओंगी सुनै न कोउ फरियाद॥
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो दुख सुनिहै नहि कोय।
जग अपने स्वारथ को लोभी बादन मरिहौं रोय॥
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो सुनतहि आरत बैन।
उठि धाओ मति बिलम लगाओ सुनो हो कमल-दल-नैन॥
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो सब छोड्यौ जा काज।
सोऊ छोड़ि जाइ तौ कैसे जीवै फिर ब्रजराज॥
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो मति कहुँ अनतै जाहु।
मिलि कै जिय भरि लेन देहु मोहि अपनो जीवन-लाहु॥
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो इनको कौन प्रमान।
ये तो तुम बिनु गौन-करन को रहत तयारहि प्रान॥
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो जिय मे नहि रहि जाय।
तासों भुज भरि मिलि कै भेंटहु सुंदर बदन दिखाय॥

प्राननाथ हो प्यारे लाल हो पल की ओट न जाव ।
बिना तुम्हारे काहि देखिहै अँखियाँ हमैं बताव ।।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो साथिन लेहु बुलाय ।
गाओ मेरो नामहि लै लै डफ अरु बेनु बजाय ।।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो आइ भरौ मोहि अंक ।
यह तो मास अहै फागुन को या मैं काकी संक ।।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो देहु अधर-रस-दान ।
मुख चूमहु किन बार बार दै अपने मुख को पान ।।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो कब कब होरी होय ।
तासों संक छोड़ि कै बिहरौ दै गल मै भुज दोय ।।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो रहौ सदा रस एक ।
दूर करौ या फागुन मै सब कुल अरु बेद-बिवेक ।।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो थिर करि थापौ प्रेम ।
दूर करौ जग के सबै यह ज्ञान-करम-कुल-नेम ।।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो सदा बसौ ब्रज देस ।
जमुना निरमल जल बहौ अरु दुख को होउ न लेस ।।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो फलनि फलौ गिरिराज ।
लहौ अखंड सोहाग सबै ब्रज-बधू पिया के काज ।।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो जाइ पछारौ कंस ।
फेरौ सब थल अपनि दुहाई करि दुष्टन को धंस ।।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो दिन दिन रहो बसंत ।
यही खेल ब्रज मै रहौ हो सब बिधि अति सुखद समंत।।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो बाढ़ौ अविचल प्रीति ।
नेह निसान सदा बजै जग चलौ प्रेम की रीति ।।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो यह बिनती सुनि लेहु ।
'हरीचंद' की बाँह पकरि दृढ़ पाछे छोड़ न देहु ।।१८।।

देश

रंग मति डारो मोपै सुनो मोरी बात ।
बड़ी जुगति हौं तोहि बताऊँ क्यौं इतने अकुलात ।।
श्री बृषभानु-नंदिनी ललिता दोऊ वा मग जात ।
तुमहुँ जाइ माधुरी कुंज मैं पहिले हि क्यौं न दुरात ।।
वे उत औचक आइ परै तब कीजौ अपनी घात ।
'हरीचंद' क्यौं इतहि खरे तुम बिना बात इठलात ।।१९।।

पूरबी

तुमहि अनोखे बिदेस चले पिय आयो फागुन मास रे ।
फूले फूल फिरे सब पंथी बहि रही बिपत बतास रे ।।
या रितु मैं कोउ जात न बाहर भयो काम परकास रे ।
'हरीचंद' तुम बिनु कैसे बचिहै बिरहिन बिकल उदास रे ।।२०।।

काफी

लाल फिर होरी खेलन आओ ।
फेर वहै लीला को अनुभव हमको प्रगट दिखाओ ।।
फेर संग लै सखा अनेकन राग धमारहि गाओ ।
फेर वही बंसी धुनि उचरौ फिर वा डफहि बजाओ ।।
फिर वही कुंज वहै बन बेली फिर ब्रज-बास बसाओ ।
'हरीचंद' अब सही जात नहि खबर पाइ उठि धाओ ।।२१।।

सिंदूरा

एरी कैसी भीर है होरी के दिन भारी ।
जाइ मनाइ कोऊ लै आओ प्रानपिया गिरधारी ।।
खेलनवारे बहुत मिलैंगे राग रंग पिचकारी ।
'हरीचंद' इक सो न मिलैगौ जो कहिहै मोहिं प्यारी ।।२२।।

विहाग

बिनु पिय आजु अकेली सजनी होरी खेलौं।
बिरह-उसास उड़ाइ गुलालहि दृग-पिचकारी मेलौं॥
गाओ बिरह-धमार लाल तजि हो हो बोलि नवेली।
'हरीचंद' चित माहि गलाऊँ होरी सुनो हो सहेली॥२३॥

गौरी

एरी बिरह बढ़ावन आयो फागुन मास री।
हौं कैसी अब करूँ कठिन परी गाँस री॥
औरै रितु ह्वै गयी बयारहु और री।
औरै फूले फूल और बन ठौर री॥
औरै मन ह्वै गयो और तन पीय को।
और चटपटी लगी काम की जीय को॥
बन के फूलन देखि होत जिय सूल री।
बिनु पिय मेटै कौन बिरह की हूल री॥
बिसर्यौ भोजन पान-खान सुख-चैन री।
वही खुमारी चढ़ी रहत दिन-रैन री॥
रजनी नींद न आवै जिय अकुलाय री।
चौंकि चौंकि हौं परौ चित्त घबराय री॥
अटा अटा चढ़ि डोलौं पिय के हेत री।
कहूँ नहीं मेरे लाल दिखाई देत री॥
सपने मैं जो कहुँ पिय-रूप दिखात री।
तौ यह बैरिन नींद चौंकि तजि जात री॥
जौ कहुँ बाजन बाजै गोकुल-गैल री।
तौ उठि धाऊँ आवत जानूँ छैल री॥
या घर मैं सखि क्यौं नहि लागत आग री।
जाके डर हौं खेलन जात न फाग री॥

बैरिन मेरी सास जिठानी हैं सबै ।
देखन देत न मोहन को मुख री अबै ॥
जरौ लाज यह ऐहै कौने काम री ।
जो नहि देखन देत पिया घनश्याम री ॥
मोहिं अकेली निरबल अबला जान री ।
तानि कान लौ खींच्यौ मदन कमान री ॥
कहा करौ कहँ जाउँ बताओ मोहि री ।
कहै किन और उपाय सपथ है तोहि री ॥
जदपि कलंकिन कहत सबै ब्रज-लोग री ।
तऊ मिटत नहि मुख लखिबे को सोग री ॥
रोअनहूँ नहि देत प्रगट मोहि हाय री ।
क्यौं ऐसो दुख मिटै बताव उपाय री ॥
फिरि डफ बाजत सुनि सखि आए श्याम री ।
होरी खेलत प्राननाथ सुखधाम री ॥
अब कैसे रहि जाय मिलौगी धाइ कै ।
लाज छाँड़ि जग नेह-निसान बजाइ कै ॥
'हरीचंद' उठि दौरी भामिनि प्रीति सो ।
बरजेहू नहि रही मिली मन-मीत सो ॥२४॥

ईमन कल्याण

तैंडा होरी खेल मैडे जीउ नूँ भाँवदा ।
तू वारो कोई दी सरमन करदा बुरी वे गालियाँ गाँवदा ॥
पाय अबीर नैण बिच साडे वंसी निलज बजाँवदा ।
'हरीचंद' मैनूँ लगी लड़ तैंडी तूँ नहि आस पुराँवदा ॥२५॥

अहीरी

वह नटवर घन साँवरो मेरो मन ले गयो री ।
जब सो देखि लियो है वाको, तब सो भोजन-पान न भावै,
बैरिन लाज ह्वै गई मेरी बिरह दै गयो री ॥
घर अँगना मोहिं नाँहि सुहावै, बैठत ही घुमरी सी आवै,
लोग कहै मोहि देखि-देखि याको कहा ह्वै गयो री ॥
'हरीचंद' ग्वालिन रसमाती, सास ननद की डर न डेराती,
लोकलाज तजि सँग मैं डोलै, कहा जानै का नंदलाल टोना सो
कै गयो री ॥
वह नटवर घन साँवरो मेरो मन लै गयो री ॥२६॥

गौरी

मै अरी कहा करौ कित जाऊँ, सखी री मन लै गयो वह छैल ।
मेरी गलियन आइकै बंसी मधुर बजाय ।
जादू सो कछु करि गयो वह मेरो नाम सुनाय ॥ अरी मै० ॥
तब सो कछु भावै नही हौ बन-बन फिरूँ उदास ।
कहुँ मोहि कल आवै नही हौ व्याकुल लेहुँ उसास ॥ अरी मै० ॥
तरु तर खग मृगन सो हौ पूछत डोलौ धाय ।
मेरे प्यारे लाल को हो देत न कोउ बताय ॥ अरी मै० ॥
सखी संग आवै नही जानि कलंकिन मोहि ।
सोई हम दूजी भई हौ कहा कहौ री तोहि ॥ अरी मै० ॥
और कछू भावै नही बिसर्यौ भोजन-पान ।
रुचि औरै कछु ह्वै गइ मेरी कहँ लौ करौ बखान ॥ अरी मै० ॥
सोई बन घरहूँ सोई हो सोई सबै समाज ।
विष सो मोहिं लागै अरी सब मिले बिना ब्रजराज ॥ अरी मै० ॥

कोऊ नाहिं सुनावई हो खबर लाल की आय।
तन मन वापै वारिये हो भेद जो देहि बताय ।। अरी मैं० ।।
प्रेम प्रगट जग मैं भयो हो बाज्यौ नेह-निसान।
तऊ आस पुरई नही हो कैसे चतुर सुजान ।। अरी मैं० ।।
तोरि सिंखला गेह की हो लोक-लाज-भय खोय।
'हरीचंद' हरि सों मिलौ होनी होय सो होय ।। अरी मैं० ।।२७।।

पूरवी

एक बेर भरि नैन लखन दै फिर पिया जैयो बिदेसवा रे।
तुम बिन प्रान रहै वा नाहीं यह जिय मोहि अँदेसवा रे।
'हरीचंद' फिर कठिन परैगी कहिहै कोउ न सँदेसवा रे ।।२८।।

कहाँ बिलमे कौन देसवा में छाये मोरे अबहुँ न आये पियवा रे।
राह देखत मोरि अँखियाँ थकि गईं निसि बीति भयो भोरवा रे ।।
पाटी कर पटकत भई ब्याकुल लागत हार पहरवा रे।
'हरीचंद' पिय बिनु कैसी परिहै कौन लगै मोरे गरवा रे ।।२९।।

ईमन कल्यान

सुनौ चित दै सब सखियाँ बरनि सुनाऊँ श्याम सुँदर के खेल।
कल हौं निकसी मारग याही रोकी मेरी गैल ।।
अबिर उड़ाइ गाइ गारी बहु (डफ बजाइ कै) करी रँग की रेल ।।
'हरीचंद' तबतें नहि भूलत नैनन तें वह केलि ।।३०।।

डफ की

ऐसो उधम न करि अबै कंस जियै।
यह ऊधम तेरो सुन पावै जो तो पकर मँगावै तोहिं लिये दियै ।।
नै कै चलि अठलानि बुरी है सदा रहत अभिमान किये।
'हरीचंद' या फागुन मै क्यों निबहैगी हम लाज लिये ।।३१।।

राग होरी विभास

आए कहाँ सों आज प्रात रस-भीने हो।
अति जँभात अलसात लाल रस-भीने हो ॥
कित खेले तुम रैन फाग रस-भीने हो।
कौन को दियो सोहाग लाल रस-भीने हो ॥
आज अहो विनही गुलाल रस-भीने हो।
नैन दोउ लाल लाल रस-भीने हो ॥
गाँव न मिली गुलाल प्यार रस-भीने हो।
जावक लग्यो लिलार लाल रस-भीने हो ॥
मिलत न चोआ वाके देस रस-भीने हो।
अंजन अधर सुवेस लाल रस-भीने हो ॥
कुमकुमा मोर ह्वै चलाय रस-भीने हो।
ताको चिन्ह दिखाय लाल रस-भीने हो ॥
बाँध्यौ अँग-अँग भुज मृनाल रस-भीने हो।
दइ उर विनु गुन माल लाल रस-भीने हो ॥
रँग के बदले पीक लाय रस-भीने हो।
नीलो बसन उढ़ाय लाल रस-भीने हो ॥
को ऐसी माती खेलार रस-भीने हो।
जिन रिझयो रिझवार लाल रस-भीने हो ॥
नैन मिलाओ करौ बात रस-भीने हो।
काहे को सकुचात लाल रस-भीने हो ॥
कौन सो आसव कियो पान रस-भीने हो।
मत्त भये हौ सुजान लाल रस-भीने हो ॥
'हरीचंद' इमि कहत बाल रस-भीने हो।
भुज भरि लई गोपाल लाल रस-भीने हो ॥३२॥

राग पीलू

रिझैया मान को कर जोरे ठाढ़ो द्वार ।
तू तो मानिनि बात न मानै करत न कछू बिचार ।।
वह तो रसिया या दरसन को मानहि को रिझवार ।
वाके नैनन आछे लागैं बिथुरे सुथरे बार ।।
बिन भूषन तन कछुक बसन बिन बिन चोली बिन हार ।
मोहि कहत छबि निरखि लैन दै तू मति करि मनुहार ।।
ठाढ़ो इक टक मुख निरखत है मनवत नाहि बिचार ।
'हरीचंद' तू धन्य मानिनी धनि या छबि को प्यार ।।३३।।

सोरठ

दिन दिन होरी बृज मे आओ ।
चिरजीओ जुग-जुग यह जोरी नित कर जोरि मनाओ ।।
नित बरसो रँग नितहि कुतूहल नित-नित खेल मचाओ ।
'हरीचंद' यह केलि-बधाई नित आनँद सो गाओ ।।३४।।

धमार सिंदूरा

एरी डफ धुँकार सुनि घर न रहौंगी मिलौंगी मीत को धाय ।।ध्रु०।।
फागुन लहि उमग्यो जो मदन जिय सो अब रोकि न जाय ।।
प्राननाथ आवन सुनि फिर पग घर मे क्यों ठहराय ।
'हरीचंद', गर लगोंगी पिया के जाने जगत बलाय ।।३५।।

ठेका या ब्रज को तेरे माथे कौन दयो ।
जो तू लँगर ढीठ उपाधी ऊधम रूप भयो ।।
काहु न डरत करत मन की नित ठानत रंग नयो ।
'हरीचंद' ब्रज डगर-डगर बदनामी बीज बयो ।।३६।।

होली काफी

पिय मनमोहन के सँग राधा खेलत फाग ।। ध्रु० ।।
दोउ दिसि उड़त गुलाल अरगजा दोउन उर अनुराग ।।
रँग-रेलनि झोरी झेलनि मे होत दृगन की लाग ।
'हरीचंद' लखि सो मुख शोभा-अयन सराहत भाग ।।३७।।

धमार देश

साह्रूला म्हारा भीजै न डारौ रंग ।। ध्रु० ।।
मति नाखौ गुलाल ऑखिन मे सीखा छौ कनि रौढ़ ।।
नाम लेइ म्हारो मति गावो गारी संग बजाइ कै चंग ।।
'हरीचंद' मद-मात्यो मोहन मति लागो म्हारे संग ।।३८।।

धमार काफी

सुंदर श्याम शिरोमणि प्यारो खेलत रस-भरि होरी जू ।
इत सब सखा लसत रँग-भीने उत वृषभानु-किशोरी जू ।।
नाचत गावत रंग बढ़ावत करन बजावत तारी जू ।
हँसत हँसावत रंग बढ़ावत गावत मीठी गारी जू ।।
श्री राधा हँसि मोहन पकरे अपने वश करि लीन्हे जू ।
रंग मचाइ नचाइ गवायो मन भाये सुख कीन्हे जू ।।
कहत लाल छूटन नहि पैहौ बिनु फगुआ बहु दीन्हे जू ।
मों वश परे भागि कित जैहौ बादि चतुरई कीन्हें जू ।।
राधा जू के पाय पलोटौ अरज करो कर जोरी जू ।
तब चाहौ छोखो तो छोरै नृप वृषभान-किशोरी जू ।।
हा हा खात लाल कर जोरे करत बहुत अनुहारी जू ।
यह गति लखत देवगन व्याकुल ग्वाल हँसत दै तारी जू ।।
तीन लोक जाकी चरन छाँह बल जियत बसत सुख पाई जू ।
ताकी गोपीजन के आगे चलत न कछु ठकुराई जू ।।

शिव-ब्रह्मा-इंद्रादिक जाको परसत चरन डराहीं जू।
ताको मुकुट उतारत गोपी तनिक शंक जिय नाहीं जू॥
जा दासी माया इक फेरे जग पर-बस ह्वै नाचै जू।
ताहि नचावत पकरि गोपिका लखि जिय अचरज राचै जू॥
अस्तुति करत अधर सूखत है नेति कहत तउ वेदा जू।
गारी ताहि निसंक देत गोपी जन करत न खेदा जू॥
ध्यान धरत पूजत बहु भाँतिन तदपि ध्यान नहि आवै जू।
ताहि गुलाल लगाइ हँसत सब करत जोई मन भावै जू॥
शिव समाधि-श्रम साधि करत नित तऊ झलक नहि देखै जू।
फेंट पकरि तेहि जान देत नहिं ब्रज-जुवती सुख लेखै जू॥
जाको रुख चाहत त्रिभुवन में सुर मुनि नर भय पागे जू।
हाथ जोरि सो अरज करत है राधा जू के आगे जू॥
वेद-मंत्र पढ़ि साधि करम-विधि यज्ञ करत जेहि लागी जू।
ताको मुख माँडत केशरि सों ब्रज-युवती रस-पागी जू॥
यह अवगति गति लखि न परत कछु देव बिमानन भूले जू।
मोहे फिरत सार नहिं जानत तऊ केलि-सुख फूले जू॥
रमा पलोटत चरन सरस्वति गुन-गन गाइ सुनावै जू।
ताके पद नूपुर दै गोपी निज सुख नाच नचावै जू॥
बरनौं कहा बरनि नहिं आवै को समुझै जो गावै जू।
बल्लभ-बल 'हरिचंद' कछुक सो बल्लभि-जन-उर आवै जू॥३९॥

सिधूरा धमार

हमैं लखि आवत क्यो कतराये।
साफ कहत किन जिय की चलत जो
छाँह सो छाँह मिलाये॥
होरी मे का बरजोरी करोगे क्यो इतने इतराये।
रूप गरब फागुन मदमाते ताहू पै अति रसिकाये॥

जो तुम चाहत सो न इतै कछु चलो रहौ न लगाये ।
'हरीचंद' तुम्हरे व्यवहारन दूरहि से फल पाये ॥४०॥

होरी के पूजन को पद

आजु हरि खेलत रस-भरि सँग बृषभान-किसोरी ।
पूनो निसि डहडह उँजियारी बाँह बाँह मे जोरी ॥
चाँदनि मे गुलाल की चमकनि अरु बुक्कन की झोरी ।
जमुना तीर श्वेत बारू मधि अति शोभित भइ होरी ॥
इत सब सखा खेल बौराने उत मदमाती गोरी ।
अद्भुत छबि 'हरिचंद' देखि कै रह्यो हरषि तृन तोरी ॥४१॥

रेखता

बचे रहो जरा यह बदनाम फाग है ।
आँखो की भी हमसे तुमसे लाग है ॥
इस ब्रज का तो सभी चवाई लोग है ।
आँख लगाना यहाँ बड़ा एक भोग है ॥
मेरी तुमरी प्रीति बहुत मशहूर है ।
तिसमे भी होरी रँग चकनाचूर है ॥
लगी आँख भी छुटी आज तक है कभी ।
करो लाख तदबीर यहाँ क्यो नहि सभी ॥
उतरे जी के साथ यह अजब खुमार है ।
'हरीचंद' बचना इससे दुशवार है ॥४२॥

समधिन मधुमास

होरी मे समधिन आई ।
अहो फागुन त्योहार मनाई ॥
यथाशक्ति कीन्हो सबही ने समधिन को उपचार ॥
समधिन जू ने बहुत करायो आदर शिष्टाचार ॥

समधिन की तो चुपरी चपरी चोटी सोंधो लाय।
समधिन को लखि रपटि परत है समधी को मन धाय॥
समधिन की तो अतिही चिकनी फिसिल फिसिल सब जात।
देहरिया रँग भीनि रही जहँ प्रविसत सबै बरात॥
सबै जुड़ावत समधिन कों लखि बुक्का रँग मुख मींजि।
तब समधिन की चुवन लगत है सारी रँग मुख भीजि॥
छाती मींड़त सब समधिन कर रूप-छटा सब देखि।
डारत अतर लगाइ अरगजा रँगिली समधिन तेखि॥
समधिन जू लगवावत डोलत सब सों चोवा रंग।
फटी दरार परी समधिन की चोली उमिर उमंग॥
समधिन जू बिपरीत करत तुम इतो नवन नहिं योग।
मानत तुम्हरी नृपहू सों बढ़ि थाप सबै ब्रज लोग॥
फैलि रही चहुँ दिशि समधिन की कीरति की नव बेलि।
तुमहिं देखि सब करत रंग सों होरी रसिक सिरेलि॥
ठाढ़ो होत तुमहिं देखत ही आदर हित दरबार।
गाँव भरे की नारि तुमहिं इक आदर देत अपार॥
यहि बिधि समधिन रंग बढ़त ब्रज कौन सकै सो गाय।
नित दूलह नित दुलहिन पै जन 'हरीचंद' बलि जाय॥४३॥

जोबन कैसे छिपाऊँ री रसिया परो पाछे।

झलकत तन द्युति सारी सों कढ़ि लगत तमासो गाऊँ री॥
मुखससि चमक नील घूँघट में ज्यों त्यों सकुचि चुराऊँ री।
ये उकसौहैं अंचल बाहर इन कहँ कहाँ दुराऊँ री॥
बजमारे बिधि क्यों सिरजे ये कहा करूँ कित जाऊँ री।
'हरीचंद' गोकुल में बसिकै पतिव्रत कैसे निभाऊँ री॥४४॥

यहि विधि सिरजे नाहि री तेरे जोवन दोऊ ।
रहे दुरे कित ये सिसुता मे जो अब प्रगट दिखाहि री ।
उमगे परत हरत मन हरि को कंचुकि मे न समाहि री ।
'हरीचंद' निधि मदन धरी निज इनहि संपुटनि माहि री ॥४५॥

राग काफी

गिरिधर लाल रँगीले के सँग आजु फाग हौ खेलोगी ।
सास ननद अरु गुरुजन की भय लाजहि पाँयन ठेलोगी ॥
चोवा चंदन अविर अरगजा पिचकारिन रँग झेलोगी ।
'हरीचंद' बृज-चंद पिया के कंठ भुजा गहि मेलोगी ॥४६॥

रामकली ठेका धमार

कहत हौ बार करोरन होहु चिरंजी नित नित प्यारे देखि सिरावै हियो ।
एक एक आसिख सो मेरे अरब खरब जुग जियो ॥
जब लौ रवि ससि भूमि समुद ध्रुव तारागन थिर कियो ।
'हरीचंद' तब लौ तुम पीतम अमृत पान नित पियो ॥४७॥

होली डफ की

मै तो रँगोगी अवीरी रे पिया की पगिया ।
केसर सो सब बागो रँगिहौ लै जैहौ बाबा की बगिया ॥
रँग उड़ाइ के गारी गैहौ भागि कहाँ जैहै ठगिया ।
'हरीचंद' मनमानी करिहौ प्रान पिया के गर लगिया ॥४८॥

कैसे आऊँ मेरी पायल झुनक बजै कैसे आऊँ रे ।
जागत है सब सास ननदिया ऐसी लाज कहौ कौन तजै ॥४९॥

सोरठा

जीती सब बरसाने-वारी ।
आँख अँजाइ पहिरि कर चूरी हारे मोहन गिरिधारी ॥

फगुआ दै हा हा करि छूटे अरु अनेक खाई गारी।
'हरीचंद' कोउ बिधि घर आए तन मन धन सरबस हारी ॥५०॥

ईमन कल्यान

मोहिं मति बरजे री चतुर ननदिया होरी खेलन जाऊँ।
फिर ये दिन सपने से ह्वैहैं पाऊँ कै ना पाऊँ॥
ऐसो सगुन बताउ जो पिय को द्वारहि पै गर लाऊँ।
'हरीचंद' जनमन की प्यासी कछु तौ प्यास बुझाऊँ ॥५१॥

होरी खेलन दै मोहिं पिय सों ननदिया नाहक रोकै री।
सब जग तौ बरजहि तुहू क्यो बरबस टोकै री॥
एक नारि दूजे मरमिन ह्वै कित दुख मै झोंकै री।
'हरीचंद' कहवाइ सुघर क्यो बढ़वति सोकै री ॥५२॥

सिंदूरा

अब मैं घर न रहूँगी काहू के रोके, मोहि मति बरजौ कोय।
ऐसो पिय लहि या फागुन को मरै अभागिन रोय॥
जाऊँगी जहँ पिय होरी खेलत मिलूँगी जगत-भय खोय।
निधरक पिय के अधर पिऊँगी भेंटूँगी भरि भुज दोय॥
मेटूँगी सब साध उघर कै लोक - लाज - भय धोय।
'हरीचंद' पाऊँगी जनम-फल होनी होय सो होय ॥५३॥

लाल गुलाल लाल गालन मैं अति ही मन को मोहै।
सुंदर मुख भयो औरहु सुंदर भूलि जात जिय जो है॥
सबहि भले कों भलो लगत है सोहै को सब सोहै।
'हरीचंद' तजि प्यारी को मुख मलन जोग अरु को है ॥५४॥

नहिं मानूँगी काहू की बात मै पिय सँग आजु खेलौंगी फाग।
मोहि घर के बरजौ जिन कोऊ परी आनि अब लाग॥

मिल्यौ आइ मोहि दाँव निकालूँगी अंतर को अनुराग।
'हरीचंद' बनमालिहि सौंपूँगी निधरक जोबन-बाग ॥५५॥

ठुमरी

झूम-झूम के मोरे आए पियरवा।
दौरि-दौरि लागे मोरे गरवा॥
'हरीचंद' लटकीली चाल चलि गर डोर मोतियन को हरवा ॥५६॥

चूम-चूम के मुख भागै सँवलिया।
घूम-घाम के आवै मेरी ही गलिया।
'हरीचंद' मोहिं गरवा लगावै मन भावै मेरे छल-बलिया ॥५७॥

दूर दूर चला जा तू भँवरवा।
आउ छली मत मेरे निअरवा।
'हरीचंद' नाहक तू डारत प्रेम-फाँस अबलन के गरवा ॥५८॥

कूकि-कूकि रही कारी कोइरिया।
फूँकि-फूँकि हिय बिरह-दवरिया।
'हरीचन्द' पिय ऐसी समै मैं दूर बसे हनि बिरह-कटरिया ॥५९॥

झूम-झूम रहे राते नयनवाँ।
आओ करो अब प्यारे सयनवाँ॥
'हरीचंद' सब रात जगे तुम निकसत नहि मुख पूरे बयनवाँ ॥६०॥

उड़ि जा पंछी खबर ला पी की।
जाय बिदेस मिलो पीतम से कहो बिथा बिरहिन के जी की॥
सोने की चोंच मढ़ाऊँ मै पंछी जो तुम बात करो मेरे ही की।
"माधवी' लाओ पिय को सँदेसवा जरनि बुझाओ बियोगिन ती की॥६१॥

होली

मेरे जिय की आस पुजाउ पियरवा होरी खेलन आओ।
फिर दुरलभ ह्वैहै फागुन दिन आउ गरे लगि जाओ॥
गाइ बजाइ रिझाइ रंग करि अबिर गुलाल उड़ाओ।
'हरीचंद' दुख मेटि काम को घर तेहवार मनाओ॥६२॥

होरी नाहक खेलूँ मै बन मे, पिया बिनु होरी लगी मेरे मन मै।
सूनो जगत दिखात श्याम बिनु बिरह-बिथा बढ़ी तन मै॥
पिया बिनु होरी लगी मेरे मन मै।
काम कठोर दवारि लगाई जिय दहकत छिन-छिन मै।
'हरीचन्द' बिनु बिकल बिरहिनी बिलपति बालेपन मै॥
पिया बिनु होरी लगी मेरे मन मै॥६३॥

बन मै आगि लगी है फूले देखु पलास।
कैसे बचिहै बाल बियोगिन देखि बसंत-बिलास॥
चलत पौन लै फूल-बास तन होत काम परकास।
'हरीचंद' बिनु श्याम मनोहर बिरहिन लेत उसास॥६४॥

चहूँ दिसि धूम मची है हो हो होरी सुनाय।
जित देखो तित एक यहै धुनि जगत गयो बौराय॥
उड़त गुलाल चलत पिचकारी बाजत डफ घहराय।
'हरीचन्द' माते नर नारी गावत लाज गँवाय॥६५॥

मोहन गोहन मेरे लग्योई डोलै छोड़ै छिनहुँ न साथ।
घर अँगना करि डाखो मो घर सब छिन जोरें हाथ॥
झाँकत द्वार चलत पाछे लगि गावत मम गुन-गाथ।
'हरीचन्द' मै कैसी करूँ मेरे चरन छुआवत माथ॥६६॥

इक-ताला

पिया प्यारे मै तेरे पर वारी भई ।
सहज सलोनी सुंदर सूरत निरखत ही बलिहारी भई ॥
अब ना रहौं घर लाख कहो कोऊ सबही भाँति तुम्हारी भई ।
'हरीचन्द' सँग लागी डोलौ सुंदर रूप-भिखारी भई ॥६७॥

काफी पीलू

बीती जात बहार री पिय अबहुँ न आए ।
कैसे कै मैं दिन बितवौ आली जोवन करत उभार री,
पिय अबहुँ न आए ॥
कहा करौं कित जाओ बताओ यह समयो दिन चार री ।
अली 'माधवी' पिय-बिनु व्याकुल कोउ न सुनत पुकार री ॥
पिय अबहुँ न आए ॥६८॥

होली खेमटा

खेलन मै झुकि झूलै झुलनियाँ ।
अँगिया लाल लाल रँग सारी कारी लट लटकाए नगिनियाँ ॥
गावै हँसै बजाइ रिझावै गाल छुआवै अपनी छिगुनियाँ ।
'हरीचंद' रँग मस्त पिया के फिरै प्रेम-माती मतलिनियाँ ॥६९॥

होली डफ की

पीरी परि गई रसिया के बोलन सो ।
याद परी सब रस की बातै बढ़ि गयो बिरह ठठोलन सो ॥
चलि न सकी जकि रही ठौरही डोली नेक न डोलन सो ।
'हरीचंद' सुधि परी फेर पिय प्यारे के घूँघट खोलन सो ॥७०॥

पीरी परि गई रसिया के बोलन सो ।
आयो जानि छैल होरी को डरी लाज के खेलन सो ॥

एक प्रीति दूजे होरी सिर पर कैसे बचिहौ ठठोलन सों।
'हरीचंद' सब कोउ जानैंगे मेरी गलियन डोलन सों ॥७१॥

डफ की

अरे गुदना रे—गोरी तेरे गोरे मुख पैं बहुत खुल्यौ गुदना रे।
अरे रसिया रे—गोरी वापैं घायल मायल होय रह्यौ ॥
अरे दुपटा रे—गोरी तापैं सुरख अबीरी और फब्यौ।
अरे मोहना रे—गोरी तेरे संग फिरै घर-बार तज्यो ॥७२॥

गोरी कौन रसिक सँग रात बसी।
भरी खुमारी नैन खुलत नहि सिर ते सारी जात खसी ॥
बेनी सिथिल खसित तेरे अभरन चलत डगमगी अधिक लसी।
'हरीचंद' पिय सँग निसि जागी चोली ढीली भई कसी ॥७३॥

तेरी बेसर को मोती थहरै।
या लटकन मे मेरो मन लटकै खटकै धीरज नहि ठहरै।
'हरीचंद' तेरी सुरुख लहरिया देखत मेरो मन लहरै ॥७४॥

तेरे श्याम बिदुलिया बहुत खुली।
गोरे-गोरे मुख पर श्याम बिदुलिया नैनन में प्यारे की घुली ॥
ताहू पै साँवरो गुदना सोहै भँवर रह्यौ मनो कमल कली।
'हरीचंद' पिय रीझ्यौ तेरो सँग न छाँड़ै गलिय गली ॥७५॥

मै तो चौंक उठी डफ बाजन सों।
सोवत रही अपने आँगन मैं जागी गारी गाजन सों ॥
देख्यौ तो द्वारे मोहन ठाढ़े सजे छैल सब साजन सों।
'हरीचंद' मेरो नाम लयो नित गारी दई बिन लाजन सों ॥७६॥

बस करु अब ऊधम बहुत भयो।
भींजि गई रँग सो मेरी सारी अबीर गुलालन बसन छयो ॥

झकझोरन मै कर मेरो मुरक्यौ कंकन बाजू टूट गयो ।
'हरीचंद' तेरे पाँव परत गारी मति दै अपजस बहुत दयो ।।७७।।

आजु मै करूँगी निबेरो जो तू ठाढ़ो रहैगो रँग मै ।
अबही निकासूँगी सगरी कसर जो तू रोकत टोकत रह्यौ नित मग मै ।।
बाँधि भुजन सो निज बस करि कै मुख चूमौगी प्रेम-उमग मै ।
'हरीचंद' अपनो करि छाँडूँगी मीर कहाऊँगी सगरे जग मै ।।७८।।

नित नित होरी ब्रज में रहौ ।
बिहरत हरि-सँग ब्रज-जुवतीगन सदा अनन्द लहौ ।।
प्रफुलित फलित रहौ वृंदावन मधुप कृष्ण-गुन कहौ ।
'हरीचंद' नित सरस सुधामय प्रेम-प्रवाह बहौ ।।७९।।
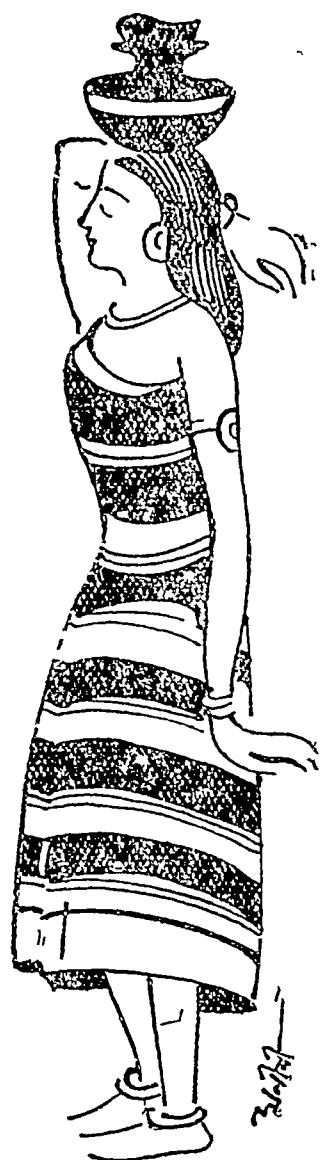
मधु-मुकुल

मधुरिपु मधुर चरित्र मधु-पूरित मृदु मुद-रास ।
हरिजन मधुकर सुखद यह नव मधु-मुकुल-प्रकास ॥
हृदय बगीचा अस्रु जल बनमाली सुखबास ।
प्रेम-लता मैं यह भयौ नव मधु-मुकुल-बिकास ॥

बनारस लाइट यंत्रालय मे
सन् १८८१ ई० मे
मुद्रित

समर्पण

हृदयवल्लभ !

यह मधु मुकुल तुम्हारे चरण कमल मे समर्पित है, अङ्गीकार करो। इसमे अनेक प्रकार की कलियाँ है, कोई स्फुटित कोई अस्फुटित, कोई अत्यन्त सुगन्धमय कोई छिपी हुई सुगन्ध लिए, किन्तु प्रेम सुवास के अतिरिक्त और किसी गन्ध का लेश नही। तुम्हारे कोमल चरणो मे ये कलियाँ कही गड न जायँ, यही सन्देह है। तथापि तुम्हारे बाग के फूल तुम्हे छोड और कौन अङ्गीकार कर सकता है, इससे तुम्ही को समर्पित है।

फागुन कृष्ण १
सं० १९३७

तुम्हारा
हरिश्चन्द्र।

मधु-मुकुल

राग बसन्त
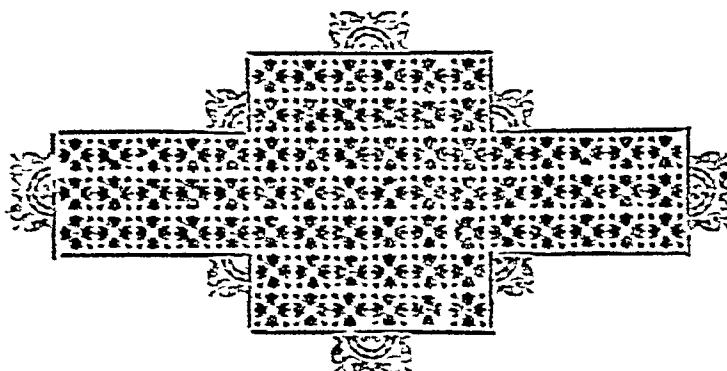
जै वृषभानु-नन्दिनी राधे मोहन प्रानपियारी ।
जै श्री रसिक कुँवर नँदनन्दन सुन्दर गिरिवरधारी ॥
जै श्री कुंज-नायिका जै जै कीरति-कुल-उँजियारी ।
जै वृन्दावन-चारु-चन्द्रमा कोटि मदन-मद-हारी ॥
जै व्रज-तरुन-तरुनि-चूड़ामनि सखियन मैं सुकुमारी ।
जयति गोप-कुल-सीस-मुकुट-मनि नित्य-बिहार-बिहारी ॥
जयति बसन्त जयति वृन्दावन जयति खेल सुखकारी ।
जय अद्भुत जस गावत शुक मुनि 'हरीचंद' बलिहारी ॥१॥

ऋतु सिसिर सुखद अति ही सुदेस ।
सूचित बसंत भावी प्रवेस ॥
मुकुलित कचनार सुठौर ठौर ।
बन दरसाए नव बौर बौर ॥
कहुँ कहुँ पिक बोलै बैठि डार ।
मनु रितुपति नव चोबदार ॥

चलि पवन सुखद छबि कहि न जाय।
रहे जल लहराय अनन्द बढ़ाय ॥
फूली अतिसी सरसों सुहात ।
मानों मिलि मदन बसन्त गात ॥
गेंदा फूले सब डार डार ।
मनु पाग पहिरि ठाढ़ी कतार ॥
गूँजे भँवरा सब झोर झोर ।
आवेस भयो तन मदन-जोर ॥
लखि बिहरत जुगल लजाय मार ।
'हरिचन्द' हरषि गाई बहार ॥२॥

खेलत बसन्त राधा गोपाल ।
इत ब्रज-बाला उत ग्वाल-बाल ॥
गावत बहार दै बिबिध ताल ।
बाजत मृदंग आवज रसाल ॥
तहँ उड़त बिबिध बुक्का गुलाल ।
गारी दै दै बहु करत ख्याल ॥
बाढ़ी सोभा अति त न काल ।
'हरिचंद' निरखि हरषित बिसाल ॥३॥

श्याम सरस मुख पर अति सोभित तनिक अबीर सुहाई ।
नील कंज पर अरुन किरिन की मनहुँ परी परछाँई ॥
मनु अंकुर अनुराग सरस सिंगार माँझ छबि देई ।
किधौं नीलमनि मधि इक मानिक निरखत मन हरि लेई ॥
चन्द-बदन मैं मंगल को मनु अंग निरखि मन मोहै ।
'हरीचंद' छबि बरनि सकै सो ऐसो कवि जग को है ॥४॥

यह रितु बसन्त प्यारी सुजान।
नहि ऐसी समय में कीजै मान ॥
लखि सोभा यह रितुराज की।
सब सुंदर सुखद समाज की ॥
फूले नव कुसुम अनेक भाँति।
मनु नव-रतनन की नवल पाँति ॥
हरि बैठे है तो बिनु उदास।
चलि वेगहि प्यारी पिय के पास ॥
चलिये बनि ठनि रितुराज जान।
'हरिचंद' कहै सो लीजै मान ॥५॥

प्यारी पौढ़ि रहौ अब समै नाहि।
सब सखियाँ अपने घरन जाहि ॥
सब दिन बीत्यौ खेलत बसन्त।
अति आनन्दित सब सुख समन्त ॥
चोवा चंदन बुक्का गुलाल।
रँग भीनि बसन ह्वै गयो लाल ॥
भरि रह्यो अंग-अंगनि अबीर।
सो पोछि पहिन कै नवल चीर ॥
इमि सुनि हरि की बतियाँ ललाम।
श्रीराधा आई कुंज - धाम ॥
पौढ़े दोउ सुख सो एक पास।
तन मन वार्यौ 'हरिचंद' दास ॥६॥

बिहाग धमार

अरी वह अबहि गयो मुख मोँड़ि।
करि वेसुध भरि रूप ठगौरी तलफत ही मोहि छाँड़ि ।

हौं आई जल भरन अकेली नाहक जमुना-घाट।
मारग ही में आइ कढ़यौ वह साजे होरी ठाट॥
औचक पाछो सों मेरी गागरि दीनी सिर तैं ढोरि।
नैन मूँदि मेरो मीजि कपोलन कंचुकि डारी तोरि॥
गाढ़े भुज कसि हिये लगायो चुंबन दै ब्रजराज।
औरहु कछु करि गयो ढिठाई मैं रहि गई करि लाज॥
अबही चल्यौ जात कछु मुरिकै चितवत मन हरि लेत।
सैनन हा हा खात छबीलो ऊपर गारी देत॥
कहाँ गयो री कोउ बताओ रूप चटपटी लाय।
हौं इत रही कराहत ही सखि बेसुध करि करि हाय॥
'हरीचंद' तजि लाज काज सब नेह-निसान बजाय।
अब नहिं रहिहौं बरजौ कोऊ मिलिहौं हरि सों धाय॥७॥

डफ की

मैं तो मलौंगी अबीर तेरे गालन मैं।
मलि गुलाल आँखैं आँजौंगी चोटी गुहौंगी बालन मैं॥
आज कसक सब दिन की निकसै बेंदी दै तेरे भालन मैं।
'हरीचंद' तोहिं पकरि नचाऊँ मीर बनूँ ब्रज-बालन मैं॥८॥

काफी

जुरि आए फाँके-मस्त होली होय रही।
घर मे भूँजी भाँग नहीं है तौ भी न हिम्मत पस्त॥
होली होय रहो॥
महँगी परी न पानी बरसा बजरौ नाहीं सस्त।
धन सब गवा अकिल नहिं आई तो भी मङ्गल-कस्त॥
होली होय रही॥

परवस कायर क्रूर आलसी अंधे पेट-परस्त ।
सूझत कुछ न वसन्त माँहि ये भे खराब औ खस्त ॥९॥

आजु भोरहि भोर खरी निखरी ।
गोरी काहू गाढ़े छैल के पाले परी ॥
चोली-बँद खुले केस तेरे छूटे रैन सुरत-संग्राम लरी ॥
आँख लाल अधर रँग फीको चोटी सिथिल तेरी फूल झरी ।
'हरीचंद' सगरी निसि जागी अंग सिथिल अलसान भरी ॥१०॥

ब्रज की होरी

अरे गोरी जोबन मद इठलाती,
चलै गज मस्त सी चाल ।
अरे गोरी गिनै न काहू वै मदमाती,
फिरत उतानी बाल ॥
अरे गोरी मत इतनो गरबावै,
यह ब्रज टेढ़ो गाँव ।
अरे गोरी अबहि छैल वह आवै,
मोहन जाको है नाँव ॥
अरे गोरी गर लावै मनमानो करि,
मद तेरो देइ उतार ।
अरे गोरी 'हरिचंद' सँग लीने,
लँगर छैल लगवार ॥११॥

डफ बाजै मेरो यार निकट आयो ।
सुन री सखी मेरो नाम लेइ कै मधुरे सुर गारी गायो ।
मेरे घर के द्वार खरो है अबिरन सो मारग छायो ।
'हरीचन्द' अब घर न रहौगी मिलि करिहै पिय मन-भायो॥१२॥

सिंदूरा काफी

मेरी आँखिन भरि न गुलाल लाल मुख निरखन दै।
होरीहू मैं काहे करत यह मुख-दरसन जंजाल।
प्रीति रीति नहिं जानत प्यारी मदमातो रस-ख्याल।
'हरीचंद' हिय हौस मिटै क्यों जब यह ऐड़ी चाल॥१३॥

सिंदूरा

रे रसिया तेरे कारन ब्रज में भई बदनाम।
ऐसी होरी कोऊ खेलत बैंड़ो जैसी तू खेलत श्याम।
करत न लाज बकत मनमानी गर लावत पर-बाम।
'हरीचंद' कछु काम और नहिं एक यहै सब जाम॥१४॥

भीमपलासी

फिर गाई रस की सोइ गारी।
मदन बसीकर सिद्ध मन्त्र सी स्रवन परी धुनि आजि हहा री॥
फेर ओट डफ की करि चितई चितवनि प्रेम भरी सोइ प्यारी।
'हरीचंद' हिय लगी चटपटी व्याकुल भई लाज की मारी॥१५॥

सोरठ का मेल

ब्रज के नगर तैंने कान्हा, ऊधम बहुत मचायो रे।
होरी के मिस कुल-नारिन को गेह छुड़ायो रे॥
करत फिरत निज मनमानी गढ़ लाज ढहायो रे।
'हरीचंद' पिय बाट चलत हठि कंठ लगायो रे॥१६॥

मेरे निकट तू आउ हौस तेरी सबै पुजाऊँ रे।
निज बस कै रस लै अधरन को गर लपटाऊँ रे॥
काम-उमंग निकासि भुजन कसि हियो सिराऊँ रे।
'हरीचन्द' अपनो करि छाँड़ूँ तब घर जाऊँ रे॥१७॥

काफी

प्यारे होरी है कै जोरी ।
जो तुम निधरक झुकेई परत हौ मानत नाहि निहोरी ॥
कहा कहैगी देखनवारी जो मेरी ढुलरी तोरी ।
'हरीचन्द' मुख चूमि भजन की वदी कौन नै होरी ॥१८॥

विहाग या काफी

अरे कोउ लाइ मिलाओ रे, प्रान-पिया मेरे साथ ।
कैसे भरो जोवन मेरो उमग्यौ मरत जिआओ रे ॥
इन दुखिया अँखियन को सुन्दर रूप दिखाओ रे ।
'हरीचन्द' दुख-अगिन दहकि रही धाइ वुझाओ रे ॥१९॥

श्याम विनु होरी न भावै हो ।
फाग खेल तेहवार रंग सव जियहि जरावै हो ॥
को दुख मेटै करि कै दया उन्है जाइ लै आवै हो ।
'हरीचंद' पिय लाइ इतै मोहिं मरत जिआवै हो ॥२०॥

पीलू काफी

अपुने रंग रँगी अँखियन मै प्रानपियारे अवीर न मेलौ ।
देखन देहु मधुर मूरति मोहिं अटपट खेल पिया जनि खेलौ ।
आओ गर लगि तपन वुझाऊँ काहे करत हौ रँग को रेलौ ।
'हरीचन्द' गर लगि प्यारी के क्यो न सुरति-सुख-सिन्धु सकेलौ॥२१॥

जोगिया काफी

और रंग जिन डारौ रँगी मै तो रंग तुम्हारे ।
कोऊ वात सो होऊँ जौ वाहर तौ तुम गारी उचारौ ॥
काहे को वरवस लोग हँसावत निलज खेल निरवारौ ।
'हरीचंद' गर लगि कै मेरे जिय की हौस निकारौ ॥२२॥

काफी

फेर वाही चितवन सों चितयो ।
लगी काम-चाबुक सी हिय पर तन मन बिकल भयो ।
भले लाज धीरज बुधि-बल सब गुरु-जन-भयहु गयो ।
'हरीचंद' निधरक उर मै फिर काम को राज ठयो ॥२३॥

काफी

होरी है कै राम-राज रे ।
जो तू गिनत न कछू काहुवै करत आपुनेइ मन के काज रे ।
निधरक अँग परसत नारिन के गारी बकि-बकि लेत लाज रे ।
'हरीचंद' भयो छैल अनोखो बरजेहूँ नहि रहत बाज रे ॥२४॥

पीलू काफी

यह दिन चार बहार, री पिय सों मिलु गोरी ।
फिर कित तू कित पिय कित फागुन यह जिय माँझ बिचार ।
जोबन-रूप-नदी बहती यह लै किन पायँ पखार ।
'हरीचंद' मति चूक समै तू करु सुख सौ तेहवार ॥२५॥

सिंदूरिया

ए री जोबन उमग्यौ फागुन लखिकै कोउ बिधि रह्यौ न जात।
मानत अब न मनाए मेरे जिय अति ही अकुलात ।
कहा करौ कित जाउँ सहेली कठिन काम की घात ।
'हरीचंद' पिय बिनु मेरी कोउ पूछत हाय न बात ॥२६॥

देस

पिया बिनु कटत न दुख की रात ।
तारे गिनत लेत करवट बहु होत न कठिन प्रभात ।
नैनन नींद न आवत क्यौंहू जियरा अति अकुलात ।
'हरीचंद' पिय बिनु अति व्याकुल मुरि-मुरि पछरा खात ॥२७॥

सिंदूरा

भले मिलि नाँव धरौ सवरे ब्रज के अब तोहिं न छाड़ूँ छैल ।
गोहन लगी फिरौ निसु-बासर कुंज घाट वन गैल ॥
सुख सो लाज सिधारौ सुरग को काहू की हौं न दवैल ।
'हरीचंद' तजि जाऊँ कहाँ जब सवहिं कहत बिगरैल ॥२८॥

विहाग या काफ़ी

आजु सखि होरी खेलन प्यारे पीतम आवैंगे मेरे धाम ।
रँग सो भरौंगी कछु न डरौंगी पुजवौंगी मन काम ॥
गाल गुलाल लगाइ माल गल दैकै करूँगी प्रनाम ।
'हरीचन्द' मुख चूमि भुजा भरि मेटूँगी दुख को नाम ॥२९॥

विहाग या सिंदूरा

आजु सखि होरी खेलन पीतम ऐहैं फरकत बायो नैन ।
पुजवौंगी सकल मनोरथ जिय के सुख सों बिताऊँगी रैन ॥
दोउ भुज गल दै मुख चूमौंगी करूँगी उमगि सुख-सैन ।
'हरीचन्द' हिय सफल करूँगी सुनि वा मुख के बैन ॥३०॥

काफी

आजु मै करूँगी निवेरो खेल को जो तू ठाढ़ो रहैगो रँग मै ।
अवही निकासूँगी सगरी कसर जो तू रोकत टोकत रह्यौ नित मग मैं ॥
बाँधि भुजन सो निज वस करिकै मुख चूमौगी प्रेम-उमग मै ।
'हरीचन्द' अपनो करि छाड़ूँगी मीर कहाऊँगी सगरे जग मै ॥३१॥

पीलू

वन-वन फिरत उदास री, मैं पिय प्यारे विन ।
कहुँ न लगत जिय घाट वाट घर फिर-फिर लेत उसास री,
मै पिय प्यारे विन ।
कछु न सुहात धाम धन के सुख जियत मिलन की आस ।
'हरीचन्द' उमगेई आवत दोउ दृग होइ हरास ॥३२॥

उमग्यौ जोबन जोर री, पिय बिनु नहिं मानै ।
देखि फाग-रितु बन द्रुम फूले कियो मदन घनघोर री ॥
बाढ़ी अँग-अँग काम-कसक अति सुनि-सुनि कोइल सोर री ।
'हरीचन्द' प्यारे बिन मारत छिन-छिन मदन मरोर री ॥३३॥

पीलू खेमटा

सलोनी तेरी सूरत मेरे जिय भाई ।
तन में मन मे नैनन मे छबि तेरी रही समाई ॥
इन आँखिन कों और रुचत नहिं करौ अनेक उपाई ।
'हरीचन्द' तू ही इक सरबस जीवन-धन सुखदाई ॥३४॥

निवानी तेरी सूरत मेरे मन बसी ।
नैन उदास अलक अरुझानी मेरे जिय सों फँसी ॥
कोटि बनावट वारौं इन पैं सहजहि सोभा लसी ।
'हरीचन्द' फाँसी गर डारत तनक मन्द मृदु हँसी ॥३५॥

भैरवी या काफी

पिया मैं पल ना तजौं तेरो साथ ।
एक ओर अब जगत होउ किन अब कलंक लियो माथ ॥
जनम-जनम की दासी मैं तेरी तुम ही मेरे नाथ ।
'हरीचन्द' अब तो तेरो दामन पकड्यो गाढ़े हाथ ॥३६॥

काफी

सखी री अब मैं कैसी करौं ।
बिनु पीतम गर लगे कौन बिधि जीवन के दिन भरौं ॥
बिनु पीतम हिय मैं हिय मेले कठिन ताप किमि हरौं ।
'हरीचन्द' पूछै किन उन सौं कब लौं या दुख जरौं ॥३७॥

धनाश्री

फेर अब आई रैन बसन्त की ।
बदलि चली पौनहु सुगन्ध भरि तजि कै सीत हिमन्त की ॥
फिर आई दुखदाइन पिय बिनु घरी बियोगिन अन्त की ।
'हरीचन्द' पाती लै आओ अबहूँ तो कोउ कन्त की ॥३८॥

यथा-रुचि

घर मैं छिनहूँ थिर न रहै ।
दौरि-दौरि झाँकति दुआर लगि पिय को दरस चहै ॥
रूप-सुधा पीअति अघाति नहिं पिय के गुनहि कहै ।
'हरीचन्द' रस-माती पलहू दृग अन्तर न सहै ॥३९॥

सिंदूरा

वे-परवाही के सँग मन फँसि गयो कुदावँ ।
वह न गिनत त्रिनहू सो जा हित धरत सबै ब्रज नावँ ॥
वेढब फँसी करौं का सजनी कहा करूँ कित जावँ ।
'हरीचन्द' नहि पूछत कोऊ मारि फिरौ सब गावँ ॥४०॥

इकताला

पिया प्यारे मैं तेरे पर वारी भई ।
सहज सलोनी सुन्दर सूरत निरखत ही बलिहारी भई ॥
अब ना रहौं घर लाख कहो कोऊ सब ही भाँति तुम्हारी भई ।
'हरीचन्द' सँग लागी डोलौ सुन्दर रूप-भिखारी भई ॥४१॥

बिहाग

सोई पिय के गर लपटाई ।
सीस भुजा दै पिय के हिय सो कसि कै हियो लगाई ॥
निधरक पियत अधर-रस उमगी तऊ न नेकु अघाई ।
'हरीचन्द' रस-सिन्धु-तरंगन अवगाहत सुख पाई ॥४२॥

भीमपलासी

फेर चलाई रँग पिचकारी।
गाई फेर वहै मीठे सुर प्रेम-भरी सोई गारी॥
फेर वहै चितवन चितई जो तन-मन-बेधन-वारी।
'हरीचन्द' फिर मदन बिबस भई मैं कुल-नारि बिचारी॥४३॥

काफ़ी सिंदूरा

इतरानो फिरि तू भले अपने मन मैं न गिनौ कछु तोहि माल।
चार दिना को छैल छोहरा सोऊ भयो चहै रसिक लाल॥
गारी गावत डफहि बजावत ऐंड़ानो चलै मस्त चाल।
'हरीचन्द' छिन मैं सो भुलाऊँ पकरि नचाऊँ दै दै ताल॥४४॥

बिहाग

सोई सुख फिर चाहै पिय प्यारो।
एक बेर चलि फेर निकुंजन जहँ ब्रजराज दुलारो॥
जहँ रस-रंग बिलास किए बहु तुम सँग मिलि कै प्यारी।
तहीं बैठि सुख सोचि सकल सोइ बेबस होत मुरारी॥
तुव गुन-गन दृग भरि-भरि भाखत पिय व्याकुल ह्वै जाई।
राधा-नाम-अधार जिअत है प्यारो कुँअर कन्हाई॥
फेर-फेर सखियन सों पूछत चरित तिहारे आली।
तुव बैठनि बतरानि हँसनि सुधि करि उमगत बनमाली॥
चलु कित बेग कुंज-मन्दिर मैं लै पिय कों गर लाई।
'हरीचन्द' दै अधर-अमृत पिय-प्रानहि राखु बचाई॥४५॥

ईमन

गोरी-गोरी गुजरिया भोरी संग लै कान्हा
नट ललित जमुन-तट नव बसन्त करि होरी।
सोभा-सिन्धु बहार अंग प्रति दिपति देह दीपक-
सी छबि अति मुख सुदेस ससि सो री॥

आसा करि लागी पिय सों रट पंचम सुर गावत ईमन हट
मेघ बरन 'हरीचन्द' बदन अभिराम करी बरजोरी।
सारॅग-नैनि पहिरि सुहा सारी भयो कल्यान मिले
श्री गिरिधारी छबि पर जन तृन तोरी ॥४६॥

होली

भारत मैं मची है होरी ॥
इक ओर भाग अभाग एक दिसि होय रही झकझोरी।
अपनी-अपनी जय सब चाहत होड़ परी दुहुँ ओरी ॥
दुन्द सखि बहुत बढ़ो री ॥
धूर उड़त सोइ अबिर उड़ावत सब को नयन भरो री।
दीन दसा अँसुअन पिचकारिन सब खिलार भिजयो री ॥
भीजि रहे भूमि लटोरी ॥
भइ पतझार तत्व कहुँ नाहीं सोइ बसन्त प्रगटो री।
पीरे मुख भई प्रजा दीन ह्वै सोइ फूली सरसो री ॥
सिसिर को अन्त भयो री ॥
बौराने सब लोग न सूझत आम सोई बौरयौ री।
कुहू कहत कोकिल ताही तें महा अँधार छयो री ॥
रूप नहि काहू लख्यो री ॥
हार्यौ भाग अभाग जीत लखि विजय निसान हयो री।
तब स्वाधीनपनो धन-बुधि-बल फगुआ माहि लयो री ॥
शेष कछु रहि न गयो री ॥
नारी वकत कुफार जीति दल तासु न सोच लयो री।
मूरख कारो काफिर आधो सिच्छित सबहि भयो री ॥
उत्तर काहू न दयो री ॥
उठौ उठौ भैया क्यौं हारौ अपुन रूप सुमिरो री।

राम युधिष्ठिर विक्रम की तुम झटपट सुरत करो री ॥
दीनता दूर धरो री ॥
कहाँ गए छत्री किन उनके पुरुषारथहि हरो री ।
चूड़ी पहिरि स्वाँग बनि आए धिक धिक सबन कह्यो री ॥
भेस यह क्यों पकरो री ॥
धिक वह मात-पिता जिन तुमसों कायर पुत्र जन्यो री ।
धिक वह घरी जनम भयो जामैं यह कलंक प्रगटो री ॥
जनमतहि क्यों न मरो री ॥
खान-पियन अरु लिखन-पढ़न सों काम न कछू चलो री ।
आलस छोड़ि एक मत ह्वैकै साँची बृद्धि करो री ॥
समय नहि नेकु बचो री ॥
उठौ उठौ सब कमरन बाँधौ शस्त्रन सान धरो री ।
बिजय-निसान बजाइ बावरे आगेइ पाँव धरो री ॥
छबीलिन रँगन रँगो री ॥
आलस मैं कछु काम न चलिहै सब कछु तो बिनसो री ।
कित गयो धन-बल राज-पाट सब कोरो नाम बचो री ॥
तऊ नहि सुरत करो री ॥
कोकिल एहि बिधि बहु बकि हार्‌यौ काहू नाहि सुनो री ।
मेटी सकल कुमेटी थोथी पोथी पढ़त मरो री ॥
काज नहिं तनिक सरो री ॥
चालिस दिन इमि खेलत बीते खेल नही निपटो री ।
भयो पंक अति रँग को तामैं गज को जूथ फँसो री ॥
न कोउ बिधि निकसि सको री ॥
खेलत खेलत पूनम आई भारी खेल मचो री ।
चलत कुमकुमा रँग पिचकारी अरु गुलाल की झोरी ॥
बजत डफ राग जमो री ॥

होरी सब ठॉवन लै राखी पूजत लै लै रोरी ।
घर के काठ डारि सब दीने गावत गीत न गोरी ॥
झूमका झूमि रह्यो री ॥
तेज बुद्धि-बल धन अरु साहस ऊधम सूरपनो री ।
होरी मे सब स्वाहा कीनो पूजन होत भलो री ॥
करत फेरी तब कोरी ॥
फेर धुरहरी भई दूसरे दिन जब अगिन बुझो री ।
सब कछु जरि गयो होरी मे तब धूरहि धूर बचो री ॥
नाम जमघंट परो री ॥
फूॅक्यौ सब कछु भारत नै कछु हाथ न हाय रह्यो री ।
तब रोअन मिस चैती गाई भली भई यह होरी ॥
भलो तेहवार भयो री ॥४७॥

होली लीला

राग मधुमात सारंग वा गौरी

रॅगीली मचि रही दुहुॅ दिसि होरी,इत हरि उत वृषभानु-किसोरी ।
चलत कुमकुमा रॅग पिचकारी, अरुन अबीर की झोरी ॥
इत जमुना निरमल जल लहरति तरल तरंगनि राजै ।
उत गिरिराज फलित चिन्तित फल चितामनिमय भ्राजै ॥
ता मधि विपुल विमल वृन्दावन जुगल केलि-थल सोहै ।
षटरितु रहत जहॉ कर जोरे वैकुंठहु को मोहै ॥
जाही जुही केतकी कुरवक बकुल गुलाब निवारी ।
फूले फूल अनेकन लपटत लहरत केसर क्यारी ॥
लपटी लता तरोवर सो बहु फूलि फूलि मन भाई ।
मनु मण्डप मे दुलहा दुलहिन रहे सेहरन लाई ॥

कहुँ कहुँ सघन तरोवर सों मिलि मण्डल सुन्दर छायो।
पत्ररंध्र सों धूप चाँदनी मिलिकै लगत सुहायो॥
कहूँ कुटी कहुँ सघन कुटी कहुँ कदम खण्डिका छाई।
कहुँ वितान कहुँ कुँज-मंडप कहुँ छई छाँह मन-भाई॥
कहुँ कन्दरा सिलामनि वेदी विविध रतन सोपाना।
झरना झरत विमल जल के जहँ करत हंस कल गाना॥
फले सकल फल अमृत सरिस कहुँ कहूँ मौर विस्तारा।
कहुँ फूलन पै मत्त भँवरगन उड़त करत झंकारा॥
कहूँ घाट छतरी कहुँ राजै सीतल सुभग तिबारी।
कहुँ वालुका विछी अति कोमल स्वच्छ स्वेत सुखकारी॥
कहुँ कहुँ झुके तरोवर जल मैं मनु निज प्रिय को भेटैं।
मुकुर माँहि सोभा लखि अपनी कै जिय को दुख मेटैं॥
कहुँ कहुँ कुण्ड तलाव बावरी भरे फटिक से नीरा।
कहूँ झील लहरत अपने रँग देखि दुरत दृग-पीरा॥
त्रिविध पौन जब लै पराग मधु चहुँ दिसि आनि झकोरे।
विह्वल ह्वै मद-अंध करत तब गंध लिए जब दौरे॥
फूले जलनि कमल अरु कोई कहुँ सैवाल सुहाई।
कारण्डव जल-कुक्कुट सारस बिहरत तहँ मन लाई॥
मोर चकोर सारिका सुकगन मिलि कल कलह मचाई।
डार डार प्रति बैठि कोकिलन काम-बधाई-गाई॥
सरसो अतिसी खेतन सोहै कुसुम फूल बहु फूले।
नव पलास कचनार देत बिरहीजन के हिय हूले॥
सखिन जानि होरी को आगम पथ गुलाब छिरकायो।
कियो ढेर केसर गुलाल को रंगन हौज भरायो॥
तोरि गुलाब पाँखुरिन मारग सोहत है अति छायो।
अगर धूप ठौरहि ठौरन दै बगर सुबास बसायो॥

पानदान झारी पिकदानी मुरछल चँवर अड़ानी।
फूल चँगेर माल बहु बिंजन लै मृगमद घन सानी॥
लिये सकल सुख-साज सहेली सरस कतारन ठाढ़ी।
मानहुँ मदन-सदन बिसुकरमा चित्र पूतरी काढ़ी॥
कोउ गावत कोउ नाचत आवै कोऊ भाव बतावै।
कोउ मृदंग बीना सुर-मण्डल ताल उपङ्ग बजावै॥
खेलत गेंद कहूँ कोउ नट सी कला अनेकन साजै।
आँख-मिचौनी होत तहाँ इक परसि और को भाजै॥
छड़ी लिए इक खड़ी अदब सो सबइ तमाम जनावै।
एक भँवर निरवारनवारी एक निरखि बलि लावै॥
आवत तहँ दोउ होरी खेलन परम प्रेम-रँग भीने।
कछु अलसात छके मद लोचन बाँह बाँह मैं दीने॥
अपुनो अपुनो जूथ अलग करि खेलत सब मिलि गोरी।
जान न देहु प्रान-प्यारे को यह कह्यौ ललित किसोरी॥
रोपि मध्य डाँड़ो जै कहिकै बिजय-निसान बजाई।
कियो खेल आरंभ सखी प्यारी की आज्ञा पाई॥
धरन लगी मनमोहन पिय को घेरि घेरि ब्रज-नारी।
लाल कियो गोपाल लाल को दै केसर पिचकारी॥
चोआ चन्दन बुका बन्दन केसर मृगमद रोरी।
अबिर गुलाल कुमकुमा कुमकुम अरु घनसार झकोरी॥
मीजि कपोल कोउ भाजत है धाइ फेट कोउ खोलै।
कोउ मुख चूमि रहत ठोड़ो गहि इक गारी दै बोलै॥
इतनेहि उत सो सखा-जूथ सब सजि सजि खेलन आए।
बाँधे पाग सुरंग फेट मैं रँग रँग बसन बनाए॥
फेटन पै तुर्रा की मलकनि मोर-पँखोआ सोहै।
बेनु सीग दल झाँझ ढोल डफ बाजन सुनि मन मोहै॥

गावत गारी अबिर उड़ावत धूम मचावत डोलैं।
पकरि लेत तेहि जान देत नहिं हो हो होरी बोलैं ॥
तिनसों कहि ब्रजराज लाड़िले सखियन धोखा दीन्हो।
मैं प्यारी के सँग आवत हो इन बीचहि गहि लीन्हो ॥
धाइ धरौ इनकों इक इक करि रँग मै सबन भिजाओ।
गारी दै मन-भायो करि कै बहु बिधि नाच नचाओ ॥
ये अबला सबला भईं भारी इनको सब मद गारौ।
आजु हराइ इन्हैं होरी मै रँग के पिचुका मारौ ॥
धाए सुनत ग्वाल मदमाते गहिरो खेल मचायो।
धूँधर करि गुलाल की चहुँ दिसि रंग-नीर बरसायो ॥
एक घोरि कै मृगमद डारत इक लावत घनसारा।
चोआ तेल फुलेल एक लै अतर भिंजावत बारा ॥
हरित अरुन पंडुर श्यामल रँग रंग गुलाल उड़ाई।
बिच बिच बिबिध सुगन्ध सनित बुक्का बगरत मन-भाई ॥
कबहुँ बादले रंग रंग के कतरि मिहीन उड़ावै।
तरनि किरिन मिलि अति छबि पावत चमकि सबन मन भावै ॥
परिमल अम्बर मृगमद पीसे सने कपूर सुहाए।
मेलि मेलि केवरा धूर मे झोरिन पूरि उड़ाए ॥
चोआ चोटि चोंटि के अंगन तापर बिदुली लावै।
केसर छींटि चरचि रोरी सो लै रँग सों नहवावैं ॥
गारी देत निलज डफ बाजत ऊँचे राग जमायो।
गूँजि रह्यौ सुर बर वृन्दाबन हों हो शब्द सुनायो ॥
एकन कों गहि रहत एक एकन को इक मुख मॉड़ैं।
करत निपट पट-रहित एक को हा हा करि करि छॉड़ैं ॥
नारि नरन कों नारि बनावत नर नारिन नर साजैं।
गॉठ जोरि बर बदन चीति कै चूमि चूमि मुख भाजैं ॥

फूल-छड़ी की मारि परत तब लाल उठत अकुलाई।
पुनि हो हो करि रेलि पेलि तिय-दलहि भजावत आई॥
अवनि अकास एक रँग देखियत तरुन अरुनई छाई।
लता पत्र प्रति रँगे रंग सो इक रँग परत लखाई॥
पटे अटारी अटा झरोखा मोखा छाजन छातै।
मारग सहित सुरँग गुलाल सो लाल सबै दरसातैं॥
भीजे बसन सबै तिन मधि कोउ सीत-भीत अति काँपै।
काहू के पट छुटे लाज सों अपुनो तन कोइ ढाँपै॥
एकन को इक पकरि नचावत एक बजावत तारी।
आपुन हँसत हँसावत औरन देत कुफारी गारी॥
रंग जम्यो होरी को भारी मद-माते नर-नारी।
सबके नैनन मे देखियत इक होरी-खेल-खुमारी॥
तिन मधि धूँधर मै गुलाल के लसत जुगल लपटाने।
भीगे रंग सगबगे बागे रस-बस आलस साने॥
श्याम सरूप मनोहर मोहन कोटि काम लखि लाजै।
उमगत अंग अंग तें जोबन बय किसोर नव भ्राजै॥
मनु मानिक नीलम मिलाइ दोउ सरस पूतरी ढारो।
उलहत रोम रोम ते सोभा कवि-रसना-मति हारी॥
अंग अनंग भर्‍यो आगम के दिन सहजहि सुँदराई।
लखतहि मन मोहत जुवतिन को चढ़त तरल तरुनाई॥
पद-तल लाल प्रवाल चिन्ह धुज अंकुस मंडित सोहै।
नव पल्लव पर सरस ओस-कन से नख लखि मन मोहै॥
चरन मंजु मंजीर विविध नग-जटित न परत बखानै।
मनु मनिगन मिस मुनिजन को मन रहत चरन लपटाने॥
जुगल पींडुरी गुलफन की छबि लगत दृगन अति नीकी।
मनु बैदूर्य्य डार जुग सुंदर करत जगत छबि फीकी॥

कदलि-खंभ सम जंघ जुगल जेहि रमा पलोटन चाहै ।
तापै लपटि रह्यौ पीतांबर सोभा सुख अवगाहै ॥
मनु घन मै घिरि दामिनि लपटी नीलहि कंचन-बेली ।
रस सिंगार मैं बिरह-लता सु-तमालहि पीत चमेली ॥
तापै कलित किंकिनी कूजति मनु रसना कविगन की ।
वंदनवार काम-मंदिर की विजय-घोस रति-रन की ॥
तापैं फेंटा ललित लपेटा पँचरँग सोभित ऐसे ।
सावन साँझ बिबिध रँग बादर दामिनि चूमत जैसे ॥
उदर उदार सचिक्कन कोमल भर्यौ सकल रस सोहै ।
लेत लपेट चितै चितवत नहि भरत पेट दृग जोहै ॥
सब जग-मूल नाभिसर सोहत रूप-गाँठ मनु बाँधी ।
ता पर रमत रसिक रोमावलि रस-सरिता सर साधी ॥
जुवति गाढ़ रति निरदय समुदय सदय दीन हित साजै ।
सोभित उर जहँ अनुदिन नवल प्रिया-प्रतिबिम्ब बिराजै ॥
ता पर हार अपार परे मनिगन की अनगन माला ।
ओतप्रोत मनु जुवति मनोरथ सोत पोत मनि ख्याला ॥
सब पर सोहत गुंजमाल बनमाल सहित आलम्बी ।
मनु अनुराग सहित सगरे रस रहे हरि-गल अवलम्बी ॥
मुक्तपाँति सोभित अति सुन्दर कौस्तुभ-पदिक बिराजै ।
प्यारी मन को सरस सिंहासन छत्र मनहुँ छवि छाजै ॥
मुक्त भएहूँ रस के लोभी-जन हरि-गर लपटाने ।
पुन्य गोप-पद पाइ ओप-जुत चोप भरे सरसाने ॥
प्रियाबरोधन चतुर बाहु जुग देखत ही मन मोहै ।
अति आतुर तिय गर लगिबे कों नील बेलि सी सोहै ॥
मनिनपूर केयूर जुगल पर नौ-रतनी कसि बाँधी ।
नभ भसुंड के सुंड-दंड ध्रुव सह ग्रह पंगति नाँधी ॥

मनिवन्धन मनिबन्ध कलित कंगन पहुँची मन-भाई ।
जुगल नवल पल्लव मैं मानहुँ कुसुम-लता लपटाई ।।
जुवती-उर परसन अति चंचल कर जुग अति रँग माँड़ै ।
हाथहि हाथ लेत ये चित को फेर कवहुँ नहि छाँड़ै ।।
ऊरधरेख चक्र-चिन्हन सों चिन्हित कर-तल देखे ।
मनु गुलाल पाटी पै अंकित किए मदन निज लेखे ।।
पोर पोर अँगुरी मैं मुँदरी ऊपर नख दुति भारी ।
विद्रुम कली अग्र मुक्ताफल मीना मध्य सँवारी ।।
कदलिपत्र सी पीठ दीठ परि नीठ नीठ नहि चालै ।
ता पर पीत उपरना सोभित लपटी धूप तमालै ।।
काजर पीकादिक छापित वर रंग भर्यौ मन मोहै ।
सोना और सुगन्ध दोऊ मिलि नगन जर्यौ अति सोहै ।।
कलकल कंठ कुंठ कर सोभित कंठ पीक-छवि छाजै ।
मनहुँ नीलमनि सरस सुराही अमृत भरी अति राजै ।।
चिवुक चारु मोहत मन जोहत करन करन छवि भारी ।
जुगल कपोल गोल दरपन सम प्रतिविम्वित जहँ प्यारी ।।
सकल स्वाद रस-मूल अधर जुग कोमल अति अनियारे ।
मनु द्वै लाल अँगूर लिए सुक लखि मुनि-मन मतवारे ।।
कुन्द-कली सी दन्त-पाँति मैं वीरा रंग सुहायो ।
मनु दरक्यौ दारिम लखि प्रमुदित नासा सुक उड़ि आयो ।।
आगम सूचित रेख लेख तल अधर आभ अरुनायो ।
हलकत वेसर मोती सुन्दर अति जिय लगत सुहायो ।।
वरुनी नैन चपल पल भौहन सोभा के मनु भौना ।
धनुप जाल करि मनहुँ फँसाए खंजन के जुग छौना ।।
प्रिया-रंग-माते अलसाने सरसाने रस-साने ।
प्रिया-भाव के भरे अघट मनु सोहत जुगल खजाने ।।

प्रिया-ध्यान मैं मुँदे रहन की खुले रहन की देखैं।
भुकित रहन की याद परे नित जिनकी बान बिसेखैं॥
खंजन मीन कमल नरगिस मृग सीप भौंर सर साधे।
मनु इनके गुन एकति करिकै अंजन-गुन दै बाँधे॥
जहँ जहँ परत दृष्टि इनकी बन गलियाँ अलियाँ मोहैं।
मानिक नील हीर से बरसत खिलत कंज से सोहैं॥
मनु इन म्रन बदि राख्यौ ब्रज मैं कहर चहूँ दिसि डारी।
जहाँ परैं कतलाम करैं तित सब नव जोबनवारी॥
प्रिया-रूप लखि रीझि मनहुँ श्रवनन सो कहन गुन धाए।
तिनही के प्रतिबिंब मकर जुग कुंडल करन सोहाए॥
मानिनि-मान पतिव्रत तिय को मुनि-मन ज्ञान-गरूरैं।
सोभा सब उपमानन की यह बदि बदिकै नित चूरैं॥
चंचल चपल चारु अनियारे फरकत सुथिर रहैं ना।
प्रिया-बिंब प्रतिबिंबित पुतरिन प्रिया-रूप के ऐना॥
मान तजत कोउ परी कराहत कोउ अति व्याकुल भारी।
चली निकट आवत कोउ धाई जित तित इनकी मारी॥
कारी झपकारी अनियारी बरुनी सघन सुहाई।
चुभत नोक जाकी नित मम उर रस छाजन सी छाई॥
केसर आड़ रेख पर सोभित लाल तिलक छबि भेखा।
मान महावर के जुग पद की सोभित मनु जुग रेखा॥
ललित लटपटी लाल पाग बिच अलक अधिक छबि देई।
मनु अनुराग सिंगार लपटि रहे निरखत जिय हरि लेई॥
चिक्कन चिलकदार चुनवारी कारी सोंधे भीनी।
नव घूँघरवाली अलकावलि लटकत तिय-मन छीनी॥
पाग-पेच पर ललित हीर सिरपेंच भल्यौ रँग दमकै।
गरब भख्यौ छबि छीनि जगत की ओप-चोप करि चमकै॥

तापर मोर-पखौआ सुन्दर हलत अतिहि छवि पाई ।
जगत जीति सिंगार-सिखर पर धुजा मनहुँ फहराई ॥
सहज तियागन को मन लोभा लखि नख-सिख की सोभा ।
गोभा उठत प्रेम के जिय मे देत मदन मन चोभा ॥
कोमल तासु गंध सोभा प्रति अंगन सरस सँवारी ।
मनहुँ नीलमनि अतर मेलि कै पुतरी साँचे ढारी ॥
तैसिहि श्रीवृषभानु-नन्दिनी रंग-भरी सँग राजै ।
रूपगर्विता जुवति-जूथ सत जा पद-नख लखि लाजै ॥
केहि अधिकार कहन सोभा को को पुनि सुनिबे लायक ।
बिनु ब्रजनाथ सदा जो तिनके अंतरंग पद-पायक ॥
हरि-अनुराग प्रगटि पद-तल जुग अरुन लखत मन मोहै ।
पिय हिय अधर नैन लागनि की जासु बानि नित जोहै ॥
पद-नख दिव्य फटिक से सुन्दर कवि पै नहिं कहि जाहीं ।
मानस मै हरि होत रुद्र-बपु लहि जिनकी परछाहीं ॥
मेहदी सुरँग महावर आभा मिलिकै अति दुति दमकै ।
प्रिया-अनय पर प्रीतम की अनुराग-मेंड़ मनु चमकै ॥
अनवट बिछिया पग पातन सो सोभित अति पद-पीठी ।
मनहुँ कमल पर कलित ओस-कन चन्द्र चन्द्रिका दीठी ॥
पायजेब गूजरी छड़े दोउ पग मै पड़े सुहाए ।
पिय के उज्जल बिबिध मनोरथ मनु तिय-पद लपटाए ॥
चरनन की छबि किमि भाखैं ये जग के सब कवि छोटे ।
बारम्बार प्रिया सोए पर जे हरि आप पलोटे ॥
मानस मै इनकी परछाहीं जब प्रगटै रँग भीने ।
पाग-पेच चन्द्रिकन श्याम घन इन्द्र-धनुष छबि छीने ॥
बिनु श्रीहरि कै सखि समाज के जा पद-पंकज-धूरी ।
नहि पाई शिव-अज अजहूँ लौ जद्यपि करत मजूरी ॥

सारी नील लपटि रही कटि लौं रँग अनुरूप सोहाई।
मनु हरि आप वसन-मिस निस-दिन रहत अंग लपटाई॥
अंचल हार माल मोतिन सों हिय अति सोभा पावै।
उमगि उमगि जेहि श्याम मनोहर बार बार उर लावै॥
निज जन अभय करन को दोऊ करन मेंहदी राजे।
कल पल तामैं मनु प्रवाल को पल्लव सोभा साजै॥
मुँदरी छल्ले बाँक आरसी कंकन पहुँची सोहै।
कड़े पड़े हथफूल अनूपम देखत पिय मन मोहै॥
इन हाथन ही हाथन-हाथन पिय को मन लै लीनो।
निज जन कों नित भक्ति-दान बिनही प्रयास इन दीनो॥
इनही पै धरि हाथ पिया डोलत निरतत मद-माते।
धाय मिलत आगे पिय कों ये याही ते रँग-राते॥
पीठि परम सोभित चुटिला सों दीठि टरत नहि टारी।
मानस मैं पिय प्रानन की जो एकहि राखनवारी॥
मुख-सोभा कापैं कहि आवै जहँ बानी मति हारी।
पिया-प्रान अवलम्ब एक सब उपमहि दीजै वारी॥
पिय के जीवन-मूरि अधर दोउ कोमल पतरे सोभैं।
पिय की रसना सजल करत लखि अमृत-स्वाद के लोभैं॥
ठोड़ी नासा बेसर के बिच छोटो सो मुख राजे।
अति भोरो रंजित रँग पानन दन्तावलि मिलि छाजे॥
जुगल कपोलन झलकत लखियत करनफूल परछाहीं।
रूप-सरोवर चलित कमल मनु कविजन कहत लजाहीं॥
प्रतिबिंबित ताटंक नगन मैं जुगल कपोल सुहाए।
मनु द्वै आरसि मध्य चन्द्र प्रतिबिम्बन बढ़त लखाए॥
तनिक तरकुली कानन सोहत केस-पास ढुरि आए।
पास प्रगट परिवेप किनारिन मिलिकै अति छबि छाए॥

करन पिया-सुख-करन मनोहर सोभित परम लखाही ।
पीतम-वचन मुरलिका धुनि-सुनि प्रमुदित रहहि सदाहीं ॥
नैन सकल रस-ऐन ध्यान के द्वार छके रँग भारी ।
पुतरिन के मिस सदा बिराजत जिनमें श्याम-बिहारी ॥
सुन्दरता श्यामता बड़ाई चंचलता अरुनाई ।
लाज सहित ये सिमिटि-सिमिटि सब इनही मैं मनु आई ॥
सहजहि कजरा फैलि रह्यो लखतहि पिय-मन ललचाई ।
अति भोरी चितवन चमकति सो पिय के मन बहु भाई ॥
पलक पिया छबि ओट छबीली दया भरी अनियारी ।
घनसारी कारी बरुनी राजत प्यारी झपकारी ॥
भौह जुगल छबि भरी धनुष सी किमि कबि पै कहि आवै ।
मानहु मै जिनपै कबहूँ नहि कुटिलपनो दरसावै ॥
रस सोहाग की आलवाल सों भाल ललित छवि छायो ।
तनिक बेंदुली सह जापैं अति सेंदुर-बिन्दु सुहायो ॥
केस सुदेस चमक चिकनारे कारे अति सटकारे ।
खुले बँधे सबही विधि सोहत सघन सुघूँघरवारे ॥
सारी मुख परिवेप किनारी मै सुन्दर मुख दमकै ।
मण्डल किरिनावलि तारावलि मै ससि मानहुँ चमकै ॥
सोभा सुंदरता सुबास कोमलता ललित लुनाई ।
होड़ा-होड़ी उमड़ि रहे सब कवि पै नहि कहि जाई ॥
सोभा फैलत रस बरसत सो उमगत सी तरुनाई ।
पसरत तेज लुनाई लहकति उपजति सी छबिताई ॥
जितो जगत मै रूप होत सब जाके तनिक बिलोके ।
ताकी सोभा को कहि पावै रहत रसन कवि रोके ॥
प्रानपिया रिझवार पास मुख चितवत ही रहि जाहीं ।
ह्वै बलिहार प्रान मन वारत छिन-छिन अति ललचाही ॥

लिए रहत रुख भौंर निवारत इक टक बदन निहारैं।
तनिक हँसनि बोलनि चितवनि पैं अपुनो सरबस वारैं॥
सखी सहस तजि नित-नित जाके गोहन लागे डोलैं।
हँसत प्रिया के हँसे प्रान-प्यारी के बोले बोलैं॥
गुन गावत लै पान खवावत दावन रहत उठाएँ।
मुख चूमत माला सुरझावत दोउ कर लेत बलाएँ॥
चुटकि देत बलिहार कहत हैं बोलनि चलनि सराहैं।
अपने कों धन-धन करि मानत प्यारी-प्रेम उमाहैं॥
जुगल परस्पर रँगे प्रेम-रँग होरी खेलि न जानैं।
रहत दृगनही मै अरुझाने यहि कों सरबस मानैं॥
प्रिया श्रमित लखि चलत कुंज को मन्थर गति अति मोहैं।
मरगजे बसन माल कुम्हिलानी बिथुरे कच मन मोहैं॥
हाथ-हाथ पै दिये एक रँग अरुन भए दोउ राजैं।
लखि बलिहार होत सखिजन सब सरस आरती साजैं॥
इक गावत इक तार बजावत इक कुसुमन झरि लाईं।
इक तृन तोरत इक पद परसत इक लखि रहत लुभाईं॥
बाजत वेनु मन्द मधुरे सुर गावत कछु-कछु प्यारी।
आवत चले कुंज रस-भीने श्यामा श्री गिरधारी॥
एहि बिधि खेल होत नितहो नित बृन्दाबन छबि छायो।
सदा बसन्त रहत जहँ हाजिर कुसुमित फलित सोहायो॥
जदपि सकल दिन अति छबि बरसत वृंदा-बिपिन अपारा।
तऊ सुखद सब सो निरभय यह होरी रंग बिहारा॥
नित-नित होरी रहै मनावत याही ते ब्रज-नारी।
बिहरत कुल की संक छाँड़िकै जामैं गिरिवरधारी॥
सो होरी-रस परम गुप्त है अनुभवहू नहि आवै।
शिव शुक सों बिरलो कोउ-कोऊ कछु पावै तो पावै॥

पै श्रीवल्लभ-चरन-सरन जो होय सोई कछु जानै ।
जो यह जानै सो फिर जग मैं और नहीं उर आनै ॥
विनु श्रीवल्लभ-कृपा-कोर यह निरखेहू नहि सूझै ।
जिमि गँवार मनि हाथ लेइ पै ताको मोल न बूझै ॥
श्रीवल्लभ-पद-रज-प्रताप सो यह लीला कहि गाई ।
मनि-सम पोहि-पोहि अति रुचि सों माला रुचिर बनाई ॥
रसिकन की सरवस्व परम निधि वल्लभियन की जानौ ।
जुगल अनन्य जनन की तौ यह मूरि सजीवन मानौ ॥
एहि कुरसिक-जन हाथ न दीजौ रहियौ सीस चढ़ाई ।
पुनि पुनि पढ़ि पुनि सुनि अनुभव करि लहियो रस अधिकाई ॥
विषय-विदूषित ज्ञान-करम मैं परे स्वर्ग सुख लोभे ।
ते या रसहि परसिहै नाहिन निज अभिमान न सोभे ॥
केवल श्रीवल्लभ-पद-किंकर 'हरीचंद' से दासा ।
रहिहै यह रस-सने सदा माँगत बरसाने वासा ॥४८॥

होली

फागुन के दिन चार, री गोरी खेल लै होरी ।
फिर कित तू औ कहाँ यह औसर क्यौं ठानत यह आर ॥
जोबन रूप नदी बहती सम यह जिय माँझ बिचार ।
'हरीचंद' गर लगु पीतम के करु होरी त्यौहार ॥४९॥

स्याम पिया विनु होरी के दिनन मे,
जिय की साध मेरी कौन पुजावै ।
गाइ वजाइ रिझाइ सबहि विधि,
कौन भुजन भरि कंठ लगावै ॥
गाल गुलाल लगाइ लपटि गर,
कौन काम की कसक मिटावै ।

'हरीचन्द' मुख चूमि बार बहु,
फिर चूमन कों को ललचावै ॥५०॥

प्रान-पिया बिनु प्रान लेन कों,
फिर होरी सिर पर घहरानी।
गावन लोग लगे इत उत सब
सुनि सुनि फिर हो चली मै दिवानी ॥
फिर फूले टेसू सरसों मिलि
फिर कोइल कुहकत बौरानी।
'हरीचन्द' फिर मदन-जोर भयो
का मै करों बिरहिन अकुलानी ॥५१॥

झिंझौटी

रसमसी सरस रँगीली अँखियाँ मद सों भरी।
मुँदि मुँदि खुलत छकीं आलस सो ढुरि ढुरि जात ढरीं ॥
झूमत झुकत रंग निचुरत मनु मीन मँजीठ परीं।
'हरीचन्द' पिय छकत लखत ही सबहि भाँति निखरीं ॥५२॥

प्यारी तेरी भौहैं जात चढ़ी।
आलस बस ह्वै चंचलता तजि बाँकेपनहि मढ़ी ॥
झुकि झूमत सरसानी अँखियाँ मनु रस-सिन्धु कढ़ीं।
'हरीचन्द' अधखुली रसीली कानन जात बढ़ी ॥५३॥

पूरबी

नैन फकीरिनि हो रामा अपने सैंयाँ के कारनवाँ।
रूप-भीख माँगन के कारन छानि फिरत वन-वनवाँ ॥
रूप-दिवानी कल न परत कहुँ बाहर कबहुँ अँगनवाँ।
'हरीचन्द' पिय-प्रेम-उपासी छोड़ि धाम धन जनवाँ ॥५४॥

काफी

तुम बने सौदाई, जगत मे हँसी कराई ।
जाव प्यारे तुम हमसे न बोलो जिय न जलाओ सदाई ।
सूनी सेज बरु मैं सो रहूँगी तुम मत आओ यहाँई ।।
तुम बने सौदाई, जगत में हँसी कराई ।
समझावत मानत नहि नेकहु करि अपने मन-भाई ।
रहो खुसी से वहीं जाय के जहँ मुख अबिर मलाई ।।
तुम बने सौदाई, जगत मे हँसी कराई ।
प्यारे कियो और को प्यारी इत उत प्रीति लगाई ।
अपने मन के भले भए हौ झूठी बात बनाई ।।
तुम बने सौदाई, जगत में हँसी कराई ।
हमहिं लजावत मिलत और से जियरा जरावत आई ।
'माधवी' फाग प्रान-सँग खेलि रहौंगी मैं बिष खाई ।।
तुम बने सौदाई, जगत मे हँसी कराई ।।५५।।

होली की लावनी

इत मोहन प्यारे उत श्री राधा प्यारी ।
बृन्दाबन खेलत फाग बढ़ी छबि भारी ।।ध्रु०।।
सब ग्वाल बाल मिलि डफ कर लिए बजावै ।
इत सखियाँ हरि को मीठी गारी गावैं ।।
पचरंग अबीर गुलाल कपूर उड़ावैं ।
पिचकारिन सों रँग की बरसा बरसावैं ।।
लखि हँसत परस्पर राधा-गिरिवरधारी ।
बृन्दाबन खेलत फाग बढ़ी छबि भारी ।।
इक ग्वालिन बनि बलदेव श्याम ढिग आई ।
कर पकरन मिस पकर्‌यो हरि करि चतुराई ।।

यह लखत सखी सब घेरि घेरि कै धाई।
गहि लिए श्याम रहि बहु बिधि नाच नचाई॥
फगुवा दै छूटे कोऊ बिधि बनवारी।
बृन्दाबन खेलत फाग बढ़ी छबि भारी॥
बंसी लै भागति हरि की कोऊ नारी।
तब मोहन हा हा खात करत मनुहारी॥
सो लखि कै कोऊ हँसत खरी दै तारी।
भागत कोउ गाल गुलाल लाइ दै गारी॥
सो छबि लखि कै कोउ तन मन डारत वारी।
बृन्दाबन खेलत फाग बढ़ी छबि भारी॥
चहुँ ओर कहत सब हो हो हो हो होरी।
पिचकारी छूटत उड़त रंग की झोरी॥
मध ठाढ़े सुन्दर स्याम साथ लै गोरी।
बाढ़ी छबि देखत रंग रँगीली जोरी॥
गुन गाइ होत 'हरिचन्द' दास बलिहारी।
बृन्दाबन खेलत फाग बढ़ी छबि भारी॥५६॥

होली की ग़ज़ल

गले मुझको लगा लो ए मेरे दिलदार होली मे।
बुझे दिल की लगी मेरी भी तो ऐ यार होली मे॥
नही यह है गुलाले सुर्ख उड़ता हर जगह प्यारे।
य आशिक की है उमड़ी आहे आतिशबार होली मे॥
जबाँ के सदके गाली ही भला आशिक को तुम दे दो।
निकल जाए य अरमाँ जी का ऐ दिलदार होली मे॥
गुलाबी गाल पर कुछ रंग मुझको भी जमाने दो।
मनाने दो मुझे भी जाने-मन त्यौहार होली मे॥

अवीरी रंग अवरू पर नहीं उसके नुमायाँ है।
अवीरी म्यान मे है सगरवी तलवार होली मे ॥
है रंगत जाफरानी रुख अवीरी कुमकुमे कुच है।
बने हो खुद ही होली तुम तो ऐ दिलदार होली मे ॥
'रसा' गर जामे मै गैरो को देते हो तो मुझको भी।
नशीली आँख दिखला कर करो सरशार होली मे ॥५७॥

विहाग

बिनु पिय आजु अकेली सजनी होरी खेलौं।
बिरह उसाँस उड़ाइ गुलालहि दृग-पिचकारी मेलौं ॥
गावौं बिरह धमार लाज तजि हो हो बोलि नवेली।
'हरीचन्द' चित माहि लगाऊँ होरी सुनो सहेली ॥५८॥

धमार

आज है होरी लाल बिहारी।
आज तोहि हम देहैं नई गारी ॥
तोहि गारी कहा कहि दीजै।
अगिनित गुन क्यौं गनि लीजै ॥
तेरो चन्द वंस को धारी।
जाने भोगी गुरु की नारी ॥
तासो बुध भयो संकर जाती।
जासो तेरे कुल की पाँती ॥
तेरी कुल—जननी इला रानी।
तामै दोऊ सुख मुद-दानी ॥
तेरी बेस्या सी कुल-माता।
जाको नाम उरबसी ख्याता ॥

जदुराज बड़े हैं ज्ञानी ।
जिन दीनी अपनी जवानी ॥
तेरो कंसराय सो मामा ।
तेरी माय करी बे-कामा ॥
तेरी रोहिनी तजि घर-बारा ।
अब ब्रज मैं करत बिहारा ॥
तेरो नन्द बहुत जस पायो ।
जिन बिरधापन सुत जायो ॥
तुम सकल गुनन मै पूरे ।
नट बिट सब ही बिधि रूरे ॥
इमि कहत हँसत ब्रज-नारी ।
'हरिचन्द' मुदित गिरिधारी ॥५९॥

राग देस

बिहारी जी मति लागौ म्हारे अंक ।
या गोकुल रा लोक चवाई तुम तौ परम निसंक ॥
म्हारी गलिअन मति आओ प्यारा रूप भीख रा रंक ।
'हरीचन्द' थारे कारन म्हाने लाग्यौ छै जगरो कलंक ॥६०॥

बिहारी जी काँई छे तम्हारो यहाँ काज ।
तुम सौतिन रे मद रा मात्या रंग रँगीला साज ॥
रैन बसे जहाँ वही सिधारो म्हाने तो लागै छे घणी लाज ।
'हरीचंद' थारे चरनन लागूँ छिमा करौ महाराज ॥६१॥

राग कलिंगड़ा

बिहारी जी घूमै छो थारा नैणा ।
कौन खिलार संग निसि जाग्या कहा करो छो सैणा ॥

कौन रो यह लाया छौ रे प्यारे रंगन रँग्यौ उपरैणा।
'हरिचन्द' थैं जनम रा कपटी कौन सुनै थारे बैणा ॥६२॥

राग धनाश्री

लाल मेरो अँचरा खोलै री।
गुरजन की नहि मानै लाज मेरो अँचरा खोलै री।
पनियाँ लेन हौ निकसी मोसों हँसि हँसि बोलै री।
मीठी मीठी बात सो प्यारो अमृत घोलै री।
'हरीचंद' पिय साँवरो संग लागोई डोलै री ॥६३॥

राग सहाना

तैंड़े मुखड़े पर घोल घुमाइयाँ।
साँवलिये साजन छल-बलिये तुझ पर बल बल जाइयाँ॥
हुई दिवाणी मोहन दा जो इशक जाल गल पाइयाँ।
'हरीचन्द' हँस हँस दिल लोता अब यह बे-परवाइयाँ ॥६४॥

बिहाग

रे निठुर मोहि मिल जा तू काहे दुख देत।
दीन हीन सब भाँति तिहारी क्यो सुधि धाइ न लेत॥
सही न जात होत जिय व्याकुल बिसरत सब ही चेत।
'हरीचन्द' सखि सरन राखि कै भल्यो निवाह्यो हेत ॥६५॥

काफी

अब तेरे भए पिया बदि कै।
दगे नाम सो यार तिहारे छाप तेरी सिर ऊपर लै॥
कहाँ जाहि अब छोड़ि पियारे रहे तोहि निज सरवस दै।
'हरीचंद' ब्रज की कुंजन मे डोलेंगे कहि राधे जै ॥६६॥

सिंदूरा

आज कहि कौन रुठायो मेरो मोहन यार।
बिनु बोले वह चलो गयो क्यों बिना किए कछु प्यार॥
कहा करौं हौं कछु न बनत है कर मीड़त सौ बार।
'हरीचंद' पछितात रहि गई खोइ गले को हार॥६७॥

असावरी

तुम मम प्रानन ते प्यारे हो तुम मेरे आँखिन के तारे हो।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो आयो फागुन मास।
अब तुम बिनु कैसे रहोगी तासो जीव उदास॥
प्रान-प्यारे यह होरी त्यौहार।
हिलि-मिलि झुरमट खेलिये हो यह बिनती सौ बार।
प्रान-प्यारे अब तौ छोड़ौ लाज।
निधरक बिहरौ मो सँग प्यारे अब याको कहा काज॥
प्रान-प्यारे जौ रहिहौ सकुचाय।
तौ कैसे कै जीवन बचिहै यह मोहि देहु बताय॥
प्रान-प्यारे जग मे जीवन थोर।
तो क्यों भुज भरिकै नहि बिहरौ प्यारे नंदकिशोर॥
प्रान-प्यारे तुम बिनु जिय अकुलाय।
तापैं सिर पै फागुन आयो अब तो रह्यो न जाय॥
प्रान-प्यारे तुम बिनु तलफै प्रान।
मिलि जैयै हौं कहत पुकारे एहो मीत सुजान॥
प्रान-प्यारे यह अति सीतल छाँह।
जमुना-कूल कदम्ब तरे किन बिहरौ दै गल-बाँह॥
प्रान-प्यारे मन कछु ह्वै गयो और।
देखि देखि या मधु रितु मैं इन फूलन को बे-तौर॥
प्रान-प्यारे लेहु अरज यह मान।

छोड़हु मोहि न अकेली प्यारे मति तरसाओ प्रान ॥

प्रान-प्यारे देखि अकेली सेज ।
मुरछि मुरछि परिहौ पाटी पै कर सो पकरि करेज ॥
प्रान-प्यारे नीद न ऐहै रैन ।
अति व्याकुल करवट बदलौगी ह्वैहै जिय बेचैन ॥
प्रान-प्यारे करि करि तुम्हरी याद ।
चौंकि चौंकि चहुँ दिसि चितओगी सुनै न कोउ फरियाद ॥
प्रान-प्यारे दुख सुनिहै नहि कोय ।
जग अपने स्वारथ को लोभी बादन मरिहौ रोय ॥
प्रान-प्यारे सुनतहि आरत बैन ।
उठि धाओ मति बिलम लगाओ सुनो हो कमलदल नैन ॥
प्रान-प्यारे सब छोड़यौ जा काज ।
सोउ छोड़ि जाइ तौ कैसे जीवै फिर ब्रजराज ॥
प्रान-प्यारे मति कहुँ अनतै जाहु ।
मिलि कै जिय भरि लेन देहु मोहि अपनो जीवन-लाहु ॥
प्रान-प्यारे इनको कौन प्रमान ।
ये तो तुम बिनु गौन करन को रहत तयारहि प्रान ॥
प्रान-प्यारे पल की ओट न जाव ।
बिना तुम्हारे काहि देखिहै अँखियाँ हमै बताव ॥
प्रान-प्यारे साथिन लेहु बुलाय ।
गाओ मेरे नामहि लै लै डफ अरु वेनु बजाय ॥
प्रान-प्यारे आइ भरौ मोहिं अंक ।
यह तो मास अहै फागुन को यामै काकी संक ॥
प्रानप्यारे देहु अधर रस दान ।
मुख चूमहु किन बार बार दै अपने मुख को पान ॥
प्रान-प्यारे कब कब होरी होय ।

तासों संक छोड़ि कै बिहरौ दै गल मैं भुज दोय ॥
प्रान-प्यारे रहौ सदा रस एक ।
दूर करौ या फागुन मै सब कुल अरु बेद-बिबेक ॥
प्रान-प्यारे थिर करि थापौ प्रेम ।
दूर करौ जग के सबै यह ज्ञान-करम-कुल-नेम ॥
प्रान-प्यारे सदा बसौ ब्रज देस ।
जमुना निरमल जल बहौ अरु दुख को होउ न लेस ॥
प्रान-प्यारे फलनि फलौ गिरिराज ।
लहौ अखण्ड सोहाग सबै ब्रज-बधू पिया के काज ॥
प्रान-प्यारे जाइ पछारौ कंस ।
फेरौ सब थल अपुन दुहाई करि दुष्टन को धंस ॥
प्रान-प्यारे दिन दिन रहौ बसंत ।
यही खेल ब्रज मै रहौ हो सब बिधि सुखद समन्त ॥
प्रान-प्यारे बाढ़ौ अबिचल प्रीति ।
नेह-निसान सदा बजै जग चलौ प्रेम की रीति ॥
प्रान-प्यारे यह बिनती सुनि लेहु ।
'हरीचंद' की बाँह पकरि दृढ़ पाछे छोड़ि न देहु ॥६८॥

होली बन्दर सभा

(होली जबानी सुतुर्मुर्ग परी के)

इत उत नेह लगाइ भये पिय तुम हरजाई ।
जूठी पातर चाटत घूमत घर घर पूँछ डुलाई ॥
सौत भई अब सगी तुम्हारी हम तो भई है पराई ।
पड़ी टुकड़े पर आई ॥
मिल जा तू प्यारे क्यो नाहक फिरत मनो बौराई ।
बिनती करत उस्ताद खयानत गलियन गलियन धाई ॥
रात सब लोग जगाई ॥६९॥

पिय मूरख इत आइ देहु मोहि बोल सुनाई ।
वह दिन भूल गये जु घाट पर तुमने दही गिराई ।।
पोंछ उठाय रही पछताय न बोली हम सकुचाई ।
तुम्हे कछु लाज न आई ।।
दुख धोवन अरु रोग-हरन तुम आप-सरूप कहाई ।
हम तो करि सन्तोष है बैठी बिरहा-बोझ उठाई ।
करो सीतल हिय आई ।।
आसन सो बसन्त मे गावत हम तो मलार सदाई ।
भई उस्ताद न घाट न घर की खरी बात यह गाई ।
रही आखिर मुँह बाई ।।७०।।

होली

कुंजविहारी हरि सँग खेलत कुंज-विहारिनि राधा ।
आनँद भरी सखी सँग लीने मेटि बिरह की बाधा ।।
अविर गुलाल मेलि उमगावत रसमय सिन्धु अगाधा ।
घूँघट मै झुकि चूमि अंक भरि भेटति सब जिय साधा ।।
कूजति कल मुरली मृदंग सँग बाजत धुम किट ता धा ।
वृन्दावन-सोभा-सुख निरखत सुरपुर लागत आधा ।।
मच्यौ खेल बढ़ि रंग परस्पर इत गोपी उत कॉधा ।
'हरीचन्द' राधा-माधव-कृत जुगल खेल अवराधा ।।७१।।

तुम भौरा मधु के लोभी रस चाखत इत उत डोलौ ।
कलिन कलिन पर माते माते मधुरे मधुरे बोलौ ।।
कहुँ गुंजरत कहूँ रस चाखत कहुँ नाचत मद-माते ।
बिलमि रहत कहुँ कलियन फूलन रस लालच रस-राते ।।
कहुँ मधु पिअत अंक कहुँ लागत करत फिरत कहुँ फेरा ।
कहुँ कलियन वस परि दल मै मुँदि रजनी करत बसेरा ।।

तुमरो का परमान लाड़िले सबै बात मन-मानो।
तुम सों प्रीति करै सो बावरि 'हरीचन्द' हम जानी ॥७२॥

शिवरात्रि का पद

आजु शिव पूजहु हे बनमाली।
छोड़ि कुटी बाहर ह्वै बैठे ए दोउ शोभाशाली॥
नहि गंगा मृग-चरम नही कटि नहि बिभूति सिर राजै।
नाहि चन्द केवल कछु नागिन लटकत सिर पर छाजै॥
तुम बड़भागी भक्त लाल चलि सेवन बहु बिधि कीजै।
'हरीचन्द' ऐसी भामिनि को काहे रूसन दीजै ॥७३॥

संस्कृत राग बसन्त

हरिरिह विलसति सखि ऋतुराजे।
मदनमहोत्सव वेषविभूषित वल्लवरमणिसमाजे॥
प्रकटित वर्षावधि हृदयाहित युवतिसहस्रविकारे।
स्वावेशावृतसत्तीकृत नरलोक - भयापहमारे॥
मुकुलितार्द्धमुकुलितपाटलगण शोभितोपवनदेशे।
शकुनपंडुरीकृत सुविवाहार्थित सिद्धार्थकवेशे॥
त्रिविधपवन-पूरित पराग पटलान्धमधुपझङ्कारे।
आम्र-मञ्जरीवेष-विभूषित रतिसहचरी-विहारे॥
कूजित केकावलि कलकण्ठप्रतिध्वनिपूरित तीरे।
प्रकटित हृदयगतानुराग कमलच्छलयमुनानीरे॥
पथिकबधूबधप्रायश्चित्तानलतनु - दग्धपलाशे।
कान्तविरहपीतिमापीत वासन्ती कुसुमविकाशे॥
रूपगर्व्वभरहसितमालतीदर्शितदन्तकदम्बे।
कामविकाराञ्चितेलतिका-कृत वरसहकारालम्बे॥

मृगमदकश्मीरागुरुचन्दन-चर्चित युवति-समूहे ।
सुरललनावांछितविहारलोकत्रयसुकृतदुरूहे ॥
श्री वृषभानु - नन्दिनीमोदविनोदामोदविताने ।
कविवर गिरिधरदास-तनूभव 'हरिश्चन्द्र'-कृत गाने ॥७४॥

वसन्त

श्री वल्लभ प्रभु वल्लभिअन-विन तुम्हैं कहा कोउ जानै हो ।
निज निज रुचि अनुसारहि सब ही कछु को कछु अनुमानै हो ॥
करमठ श्रुतिरत कर्म-प्रवर्तक जज्ञ-पुरुप कहि भाखै हो ।
ज्ञानी भाष्यकार आतम-रत विपय-विरत अभिलाखै हो ॥
मरजादा-रत मानि, अचारज हरि-पद-रत सिर नावै हो ।
पण्डितगन वादी-कुल-मंडन जानि सनेह वढ़ावैं हो ॥
गुप्त परम रस अमृत प्रेम वपु नित्य विहार विहारी हो ।
गो-गोपी-गोकुल-प्रिय सुन्दर रास रमत गिरिधारी हो ॥
प्रगटत निज जन मैं निज लीला आपुहि द्विज वपु लीन्हो हो ।
'हरीचन्द' विनु निज पद-सेवक औरन नाही चीन्हो हो ॥७५॥

वसन्त

देखहु लहि रितुराजहि उपवन फूली चारु चमेली ।
लपटि रही सहकारन सो वहु मधुर माधवी-वेली ॥
फूले वर वसन्त वन वन मैं कहुँ मालती नवेली ।
ता पै मदमाते से मधुकर गूँजत मधु-रस-रेली ॥
मदन महोत्सव आजु चलौ पिय मदन-मोहन सों भेटैं ।
चोआ चन्दन अगर अरगजा पिय के अंग लपेटैं ॥
वहुत दिनन की साध पुजावैं सुख की रास समेटैं ।
'हरीचन्द' हिय लाइ प्रानप्रिय काम-कसक सब मेटैं ॥७६॥

होली

मेरे जिय की आस पुजाउ पियरवा होरी खेलन आओ ।
फिर दुरलभ ह्वैहैं फागुन दिन आउ गरे लगि जाओ ॥
गाइ बजाइ रिझाइ रंग करि अबिर गुलाल उड़ाओ ।
'हरीचन्द' दुख मेटि काम को घर तेहवार मनाओ ॥७७॥

होरी नाहक खेलूँ मैं बन मे पिया बिनु होरी लगी मेरे मन मे ।
सूनो जगत दिखात श्याम-बिनु बिरह-बिथा बढ़ी तन मे ।
होरी नाहक खेलूँ मैं बन मे पिया बिनु होरी लगी मेरे मन मे ॥
काम कठोर दवारि लगाई जिय दहकत छन छन मे ।
'हरीचन्द' बिनु बिकल बिरहिनी बिलपति बालेपन मे ॥
होरी नाहक खेलूँ मैं बन में पिया बिनु होरी लगी मेरे मन मे ॥७८॥

बन मै आगि लगी है फूले देखु पलासु ।
कैसे बचिहै बाल बियोगिनि देखि बसन्त-बिलास ॥
चलत पौन लै फूल-बास तन होत काम परकास ।
'हरीचन्द' बिनु श्याम मनोहर बिरहिन लेत उसास ॥७९॥

चहूँ दिसि धूम मची है हो हो होरी सुनाय ।
जित देखो तित एक यहै धुनि जगत गयो बौराय ॥
उड़त गुलाल चलत पिचकारी बाजत डफ घहराय ।
'हरीचंद' माते नर नारी गावत लाज गँवाय ॥८०॥

नित नित होरी ब्रज मे रहौ ।
बिहरत हरि सँग ब्रज-जुवती-गन सदा अनँद लहौ ॥
प्रफुलित फलित रहौ वृन्दावन मधुप कृष्ण-गुन कहौ ।
'हरीचन्द' नित सरस सुधामय प्रेम-प्रवाह वहौ ॥८१॥

राग-संग्रह

हरिश्चंद्र-चंद्रिका मोहन-चंद्रिका मे

सं० १९३७ में

कुछ अंश प्रकाशित
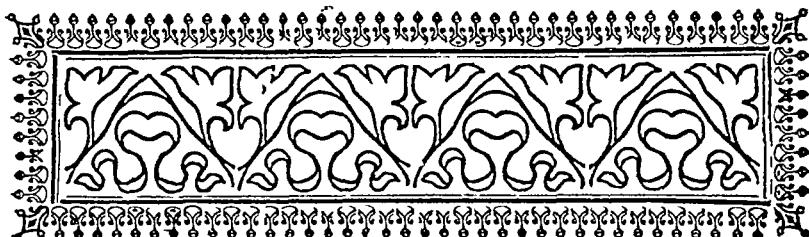
राग-संग्रह

जल-बिहार, सारंग

आजु हरि बिहरत जमुना-तीर ॥ ध्रु० ॥
श्यामा संग रंग भरि सोहत पहिने झीने चीर ॥
प्रथम समागम सकुचत प्यारी जब परसत बलबीर ।
उघरत अंग भीनि जल बसनन लाजि भजत तब तीर ॥
धीर समीर सोहायो लागत लै सोइ धीर समीर ।
'हरीचंद' संगम-गुन गावत छबि लखि धरत न धीर॥ १॥

ठुमरी

अठिलात सँवरिया, मद ते भरी ॥ ध्रु० ॥
कटि काछनि सिर मुकुट विराजत
काँधे पर सोहै पटुका लहरिया ॥
पहुँची बाजू बनमाला अरु
अँगुरिन अँगुरिन सोहै मुँदरिया ।
'हरीचंद' मेरे मन बसो सोइ
हरि-राधा सोहै जाकी नगरिया ॥ २ ॥

गोवर्धन-पूजा, बिलावल

आजु बन उमगे फिरत अहीर ।
हेरी देन बदत नहिं काहू देखियत जित तित भीर ॥
इक गावत इक ताल बजावत एक बनावत चीर ।
इक नाचत इक गाइ खिलावत एक उड़ावत छीर ॥
हमरो देव गोबर्द्धन पर्वत सुंदर श्याम शरीर ।
कहा करैगो इन्द्र बापुरो जा बस केवल नीर ॥
सात दिवस गिरि कर धरि राख्यो बाम भुजा बलबीर ।
'हरीचंद' जीत्यो मेरे मोहन हार्‌यो इंद्र अधीर ॥ ३ ॥

ग्रीष्म ऋतु, सारंग

एरी फुहारन के दोउ कौतुक में उरझाने ।
धरत फूल फल नीर धार पर देखत रहत लुभाने ॥
कबहुँक चकई चलत चपल अध-ऊरध बहु गति ठाने ।
'हरीचंद' रिझवत सब सखि मिलि नवजल-केलि बहाने ॥ ४ ॥

ये युगल दोउ बैठे हो शीतल छाँह ।
सखी ठाढ़ीं चारों ओर फूलीं मन माँह ।
तिन बिच प्यारी पिया दिये गल बाँह ॥ ५ ॥

बिहार, बिहाग

आजु दोउ बिहरत कुंजर कन्त ।
श्यामा-श्याम सरस रँग बाढ़े सुख को लहत न अन्त ॥
ज्यों ज्यों निसि भीनत रँग बाढ़त होत सुरत की कन्त ।
हारत कोउ न अभिरे दोऊ मदन-समर-सामन्त ॥
तहाँ न जाय सकत सखि-गनहूँ जहाँ कामिनी-कंत ।
'हरीचन्द' श्री बल्लभ-पद-बल ताहि अनुभवत सन्त ॥ ६ ॥

श्री नृसिंह चतुर्दशी बधाई, सारंग

आजु अपमान अति ही निरखि भक्त को
बैकुंठ बन सिंह बहुत कोप्यो ।
पटकि कर भूमि पै झटकि सिर केश रद
चाभि ओंठन तेज गगन लोप्यो ।।
खंभ को फारि चिकारि केहरि-नाद
गर्भिनी—गर्भ गरजन गिरायो ।
सटा फटकारि कै नछत्रगन नभहि
फेकि ईत सी उतहि क्रोध छायो ।।
कोटि मनु विज्जु इक साथ ही गिरि परी
भयो अति घोर भुव सोर भारी ।
सिन्धु-जल उच्छल्यौ गिरे पर्वत-शिखर
बृक्ष जड़ सों सबै दिये उजारी ।।
देव-दानव-मनुज गिरे भय भागि
वस्त्र फटि गये कान सुधि तनक नाही ।
आजु असमय प्रलय देखि शिव चौंकि कै
शूल धरि भ्रमत इत उत लखाही ।।
सृष्टि को क्रम भंग जानि बिधि बावरो
मूंड़ पै हाथ धरि बहुत रोयो ।
दिसा दहिवो लगी भयो उल्का-पात
रुदित मूरति तेज अगिन खोयो ।।
त्रस्त मधुकर पिवत नाहि मधु वृक्ष को
गऊ निज बत्स-गन नाहि चाटैं ।
हवि अग्नि नहि हरत डरत तहँ पौन नहि
गौन करि सकत नभ धूरि पाटै ।।

चकित माया नटी भूलि निज नट-कला
जगत-गति जीव जड़ रोकि लीनी ।
रमा शृंगार निज करत ही रहि गई
मनों सब चातुरी हारि दीनी ।।
जगत जाको खेल बनत बिगरत तनिक
भौंह के इत सों उत हलन माँहीं ।
सोई त्रैलोक्यपति आजु कोप्यो जबै
तबै अब सबै कहँ सरन नाँहीं ।।
मारि हरिनाच्छ उर फार कर नखन सों
भार हर भूमि अति शोक टार्यो ।
गोद प्रहलाद अहलाद-पूरब लियो
चाटि मुख चूमि जल नयन ढार्यो ।।
राज्य दै अभय पद आप पद्मा सहित
गये बैकुंठ जय जगत छायो ।
प्रेम परधान परिनाम प्रेमिन उर
भक्त-वत्सल नाम साँच पायो ।।
सदा संकटहरन अकर कारन-करन
कृपा-कर नाम जिय जौन धारै ।
सत्रु-संताप—जम-जातना-तापहर अचल
बर धाम निज सो बिहारै ।।
सदा प्रभु सर्बदा गर्वहर अभय-कर
जनन-उर सौख्य-कर दुःखहारी ।
पीर 'हरिचन्द' की हरहु करुनायतन
त्रसित कलि काल तव सरनधारी ।। ७ ।।

बिरह, ठुमरी

अकुलात गुजरिया, दुख तें भरी ।
तनिकौ सुधि तन को नहिं जब ते
लागी हरि की तिरछी नजरिया ॥
तलफत रहत बिरह-दुख भारी
देत कोउ नहि पिय की खबरिया ।
'हरीचन्द' पिय बिन अति व्याकुल
रोवत सूनी देखि सेजरिया ॥ ८ ॥

बिहाग

आजु रस कुंज-महल मे बतियन रैन सिरानी जात ।
जाल रन्ध्र ते भरित चाँदनी चलत मंद कछु सीतल बात ॥
सनसनात निसि झिलमिल दीपक पात खरक बिच-बीच सुनात ।
रगमगे दोऊ भुज दिये सिरान्हे आलस-बस मुसकात जँभात ॥
मधुर बिहाग सुनात दूर सों लपटि रहे बिथकित सब गात ।
'हरीचन्द' दोउ रूप-लालची सिथिल तऊ जागे न अघात ॥ ९ ॥

ग्रीष्म ऋतु, फूल के शृंगार को पद

आजु सखी फूले हरि फूल कुंज माँही ।
प्यारी को सँग लिये दीन्हे गल-बाँही ॥
फूलन के अंगन सब अभरन अति सोहै ।
देखि देखि ब्रज-जन के मन को अति मोहै ॥
बिछिया पग राई बेलि चित की गति हरती ।
पंकज को पायजेब पायजेब करती ॥
मदनबान फूलन की कटि किंकिनी राजै ।
कलियन की चोली मधि यौवन अति भ्राजै ॥

चंपक की कली बनी चंपाकली भारी ।
फूलन के हार कंठ सोहत रुचिकारी ॥
झबिया कर फूलन के बाजूबंद दोऊ ॥
फूलन की पहुँची कर राजत अति सोऊ ।
फूलन की चूरी इमि दोऊ कर साजैं ॥
चंदन के हार मनहुँ लपटि लता राजैं ॥
पल्लव बसी अँगुरिन में मुँदरी छबि देहीं ।
देखत ही मोहन मन हाथन सो लेहीं ॥
करना के करनफूल करन बीच धारे ।
झुमका दोऊ झूमत लखि मानों मतवारे ॥
फूलन की झुलनी नक-बेसर विच धारी ।
प्यारे को चित्त मनों पोहि धर्‍यो प्यारी ॥
मदनबान फूलन की बंदी अनुरागै ।
देखत ही लालन हिय मदन-बान लागै ॥
बेना सिर फूलहि को देखत मन भूल्यो ।
रूप की लता में मनों एक फूल फूल्यो ॥
बेनी सिर फूलन की सोहत छबि छाई ।
अपने कर नंदलाल गूँथि कै बनाई ॥
नख-सिख तें फूलन के अभरन भव भारी ।
फूलन के लहँगा अरु फूलन की सारी ॥
फूली छबि देखि देखि नन्दलाल फूल्यो ।
भ्रमर होइ मेरो मन 'हरीचन्द' भूल्यो ॥१०॥

आजु सखी ब्रजराज लाडिलो नव दूलह बनि आयो ।
फूल सेहरो सीस बिराजै, फूलन साज सजायो ॥

फूलन के आभरन विराजत फूलन माल बनाई ।
फूलन चँवर ढुरत दोऊ दिसि फूल-छत्र सुखदाई ॥
घोड़ी सजी फूल के गहिने फूल लगाम बनाई ।
फूले फूले सकल बराती तन-धन देत लुटाई ॥
फूले देव विमानन फूले फूलन की झरि लाई ।
'हरीचन्द' ऐसी जोरी पै फूलि फूलि बलि जाई ॥११॥

ग्रीष्म, सारंग

आजु नंदलाल पिय कुंज ठाढ़े भये
स्रवन शुभ सीस पै कलित कुसुमावली ।
मनहुँ निज नाथ मुखचंद सखि देखिकै
खसित आकाश तें तरल तारावली ॥
बहत सौरभ मिलत सुभग त्रय-विधि पवन
गुंजरत महारस मत्त मधुपावली ।
दास 'हरिचन्द' बृज-चन्द ठाढ़े मध्य
राधिका बाम दक्षिन सुचन्द्रावली ॥१२॥

मकर संक्रांति

अहो हरि नीको मकर मनाये ।
चित्र चमन धरि भले लाडिले पुन्य-समय घर आये ॥
कहा परब कियो दियो दान रस तिल तन प्रगट लखाये ।
'हरीचन्द' खिचरी से मिलि क्यों कित तिरबेनी न्हाये ॥१३॥

श्री महाप्रभु जी की बधाई, सारंग

आजु भयो साँचो मंगल भुव प्रगटे श्री बल्लभ सुखधाम ।
करुना-सिन्धु सकल रस-पोषक पतित-उधारन जाको नाम ॥
दैवी जीवन अभयदान दै रसिक जनन के पूरै काम ।
'हरीचन्द' प्रभु मंगल-मूरति गौर-श्याम तन एक ललाम ॥१४॥

प्रबोधिनी, बिहाग

आजु सुहाग की राति रसीली ।
गावो नाचो करो बधाई कुंजन माँझ छबीली ॥
गावत घोड़ी देव मनावत रस बरषत भरपूर ।
'हरीचन्द' को टेरि टेरि कै देत सखी सब भूर ॥१५॥

श्री ठाकुरजी की बधाई, बिहाग

आयो समय महा सुखकारी ।
सब गुन-गन-संयुत मन-रंजित अतिसय परम सुशोभा-धारी ॥
रोहिनि नखत सात सुभ ग्रह सब कह कहिये उपमा मति हारी ।
दिसा प्रसन्न हँसत नभ निर्मल तारन की बाढ़ी छबि भारी ॥
मंगलमय धरनी सब राजत पुर आकर बृज गाँव सुखारी ।
नदी प्रसन्न सलिल तालन की कमलन सों भइ शोभा भारी ॥
द्विज-अलिकुल सन्नाद करन लगे बन-राजी फूलनि फुलवारी ।
पुन्य-गंध लै बह्यो महासुभ वायु सबिधि सुचि त्रिबिधि बयारी ॥
द्विज जाचन की सांति-अगिनि सब प्रगट भई कुंडन तें न्यारी ।
असुर-द्रोह सब साधू-जन के मन सुप्रसन्न भये ता बारी ॥
अजन जनम को समय जानि कै बजति लजति सब दुन्दुभि भारी ।
गाइ उठे गन्धर्बरु किन्नर चारन साधु तुष्टि मन धारी ॥
नाचन लगी देवि अप्सरा सह अति प्यारी सब घर की नारी ।
मुनि-देवता महा आनन्दित बरसत फूल भरि भरि थारी ॥
सागर के गरजन के पीछे मन्द मन्द गरजे जल-धारी ।
आधी राति उदित भयो चन्दा आनँद करत हरत अँधियारी ॥
देवि-रूपिनी देवी जू तें प्रगट भये श्री गिरवरधारी ।
निरखि नयन आनन्द सिथिल भे 'हरीचन्द' बलिहारी ॥१६॥

बाल-लीला, असावरी

आजु लख्यौ आँगन मे खेलत जसुदा जी को बारो री ।
पीत झँगुलिया तनक चौतनी मन हरि लेत दुलारो री ।।
अति सुकुमार चन्द्र से मुख पै तनक डिठौना दीनो री ।
मानहुँ श्याम कमल पै इक अलि वैठो है रँग-भीनो री ।।
उर बघनहा बिराजत सखि री उपमा नहि कहि आवै री ।
मनु फूली अगस्त की कलिका सोभा अतिहि बढ़ावै री ।।
छोटी छोटी सीस लुटुरिया भ्रमरावलि जनु आई री ।
तैसी तनक कुल्हइया ता पै देखत अति सुखदाई री ।।
छुद्रघंटिका कटि मे सोहत सोभा परम रसाला री ।
मनहुँ भवन सुन्दरता को लखि बाँधी बन्दन-माला री ।।
पीत झँगा अति तन पै राजत उपमा यह बनि आई री ।
मनु घन में दामिनि लपटानी छबि कछु बरनि न जाई री।।
कोटि काम अभिराम रूप लखि अपनो तन मन वारै री ।
'हरीचन्द' बृजचन्द-चरन-रज लेत बलैया हारै री ।।१७।।

दान-लीला, टोड़ी

ऐसी नहि कीजै लाल, देखत सब बृज की बाल,
काहे हरि गये आज बहुतहिं इतराई ।
सूधे क्यो न दान लेव, अँचरा मेरो छाँड़ि देव,
जामे मेरी लाज रहै करो सो उपाई ।।
जानत बृज प्रीत सबै, औरहू हँसैगे अबै,
गोकुल के लोग होत बड़ेई चवाई ।
'हरीचन्द' गुप्त प्रीति, बरसत अति रस की रीति
नेकहू जो जानै कोउ प्रकटत रस जाई ।।१८।।

मकर संक्रान्ति, टोड़ी

करत दोउ यहि हित खिचरी दान।
जामें सदा मिले रहैं ऐसेहि गौर-श्याम सुख-खान।
चित्र वस्त्र धरि परम नेह सों जोरि पान सों पान।
'हरीचन्द' त्योहार मनावत सखि-जन वारत प्रान ॥१९॥

ग्रीषम ऋतु, सारंग

केसर-खौर श्याम-सुन्दर-तन निरखत सब मन मोहै।
मनु तमाल मे चम्पक बेली लपटि रही अति सोहै॥
मनु घन मे दामिनि लपटानी उपमा को कवि को है।
"हरीचंद' बन तें बनि आवत बृज-तिय मुख-छबि जोहै ॥२०॥

प्रबोधिनी, यथा

कुंजन मंगलचार सखी री।
थापे दीने कलस बधाये तोरन बाँधी द्वार॥
गावत सबै सोहाग छबीली मिलि सब बृज की बाम।
बन्ना बनि आयो नँद-नन्दन मोहन कोटिक काम॥
रंग-रँगीली घोड़ी चढ़ि कै सिहरो सोहत सीस।
देत असीस सासुरे की सब जीवो कोटि बरीस॥
बन्ना बहू पास बैठारी जोरि गाँठ इक साथ।
'हरीचन्द' को देत बधाई दुलहिन अपने हाथ ॥२१॥

दीनता, यथा रुचि

गुन-गन विट्ठलनाथ के कहँ लगि कोउ गावै।
अमित महिम लघु बुद्धि सों कछु कहत न आवै॥
दैवी-जन अपने किये कलि जीव उबारै।
माया-तिमिर मिटाय कै खल कोटि उधारै॥

अंगीकृत जाको कियो ताको नहि त्याग्यो।
अपराधहि मान्यो नहीं भक्तन अनुराग्यो ॥
सरन पर्‌यो त्रय ताप को मेट्यो छन माही।
'हरीचन्द' की गहि भुजा यामे सक नाही ॥२२॥

बिहाग

गावन गोपी कोकिल-बानी।
श्रीबृषभानुराय से राजा कीरति सी जाकी पटरानी ॥
गावत सारद नारद सुक मुनि सनकादिक ऋषि जानी।
गावत चारिउ बेद शास्त्र षट् कहि कहि अकथ कहानी ॥
गावत गुन अज ब्यासादिक शिव गीत परम रस-सानी।
मन क्रम वचन दास चरनन को गावत 'हरीचंद' सुखदानी ॥२३॥

दान-लीला, सारंग

ग्वालिन दै किन गोरस दान।
करु न पुन्य यह गोवर्द्धन गिरि तीरथ सो वढ़ि मान ॥
गहन चिकुर मुख पूरन बिधु पै छाया सम लखु आन।
बड़ो परब तुव भाग मिल्यो है करु न बिलम्ब सुजान ॥
सिसुता पूरि प्रकट प्रति पद नव जोवन संधि-समान।
'हरीचंद' कंचन-अंगन दै हरि सुपात्र पहिचान ॥२४॥

अशीष, यथा-रुचि

चिरजीवो यह जोरी जुग-जुग चिरजीवो यह जोरी।
श्रीजसुदानन्दन मनमोहन श्रीबृषभानु-किशोरी ॥
नित-नित ब्याह नित्य ही मंगल नित-नित सुख अति होई।
श्री बृन्दावन-सुख-सागर को पार न पावै कोई ॥
एक रूप दोउ एक वयस दोउ दोऊ चन्द्र-चकोरि।
'हरीचंद' जब लौ ससि-सूरज तब लौ जीयो जोरि ॥२५॥

ब्याहुला, यथा-रुचि

चलो सखी मिलि देखन जैये दुलहिन राधा गोरी जू ।
कोटि रमा मुख- छबि पै वारौं, मेरी नवल किशोरी जू ॥
घँघरी लाल जरकसी सारी सोंधे भीनी चोली जू ।
मरवट मुख में शिर पै भौंरी मेरी दुलहिया भोली जू ॥
नकबेसर कनफूल बन्यो है छबि कापै कहि आवै जू ।
अनवट बिछिया मुँदरी पहुँची दूलह के मन भावै जू ॥
ऐसी बना-बनी पै री सखि अपनो तन-मन वारी जू ।
सब सखियाँ मिलि मंगल गावत 'हरीचंद' बलिहारी जू ॥२६॥

श्रीस्वामिनी जी की बधाई

चली बधाई गावन के हित सुन्दर बृज की नारी ।
अंचल उड़त हंस गति चंचल कर लै मंगल थारी ॥
पीत बसन कटि कसन रसन छबि रसनि कहौं किमि गाई ।
दामिनि पै सन्ध्या-घन तापै फिरि दामिनि लपटाई ॥
नूपुर रुनित झुनित कंकन कर हार चुरी मिलि बाजै ।
मनु अनंद भरि सब तन भूषन गाजत साजत राजै ॥
चौमुख चारु दीप थालन पर मंगल साज सजाई ।
मनहुँ सनाल कमल पर कमला कनक-लता चढ़ि धाई ॥
धावत खसत सुमन बेनी तें उपमा कह कवि हारैं ।
मनु कोमल पग गौनि चुकरगन फूल पाँवड़े डारैं ॥
ऊँचे सुर गावत छबि छावत बरसावत रस भाई ।
इक सों इक बढ़ि अतिहि उतायल कीरति-मंदिर आई ॥
निरखत मुख सुख अति हिय बाढ़्यो वारि सुनत मन दीनों ।
आज सखी नँद के घर को सुख साँच बिधाता कीनों ॥

नाचत मुदित करत कौतूहल गावत दै कर-तारी ।
'हरीचंद' आनँदमय आनँद जुगल इकत्र निहारी ।।२७।।

बिहार, केदार

चले दोउ हिलि मिलि दै गल-बाहीं ।
फैली घटा चहूँ दिसि सुंदर कुंजन की परछाहीं ।।
अपने कर पिय श्रम-जल पोछत प्यारी कह नहिं नाही ।
'हरिचँद' बिजन डोलावत श्रम लखि बिधि हरि आदि सिहाही ।।२८।।

रथ-यात्रा, सारंग

चारु चल चक्र चित्रित बिचित्रित परम
जगत-विजयी जयति कृष्ण को जैत्र रथ ।
अति तरलतर बलाहक शैव्य सुग्रीव मनिपुष्प
तुरँग योजित चलत पथ सुपथ ।।
फहरत ध्वज उड़त नव पताका परम कलस
कल इन्द्र सम सकल चमकत अकथ ।
चक्र ता पर रह्यो तासु तल वायु सुत बिनत
बिनता-सुअन गरजि अरि करत हथ ।।
खंभ कूबर छत्र चारु डाँड़ी चारु बिबिध
मनि-जटित उघरित वेद शब्द कथ ।
झाँझ झनकत करत घोर घंटा घहटि घने
घुँघरू थिरत फिरत मिलि एक जथ ।।
भुखी सूरज-मुखी सुखी लखि जन दुखी
दैत्य-दल झलमलत झालरन मुक्त तथ ।
बैठि दारुक तदारुक करत अश्व को चलत
मन बेग-सम बेगति शब्द नथ ।।

देव-ऋषि करत जय-शब्द मुरछल दुरत
सूत बंदी बिरद कहत बहु भाँति गथ।
थकित 'हरिचंद' दृग सरस सोभा निरख
हरषि सुमनन वरषि लह्यो चारों अरथ ॥२९॥

बाल लीला, यथा-रुचि

छोटो सो मोहन लाल छोटे-छोटे ग्वाल बाल
छोटी-छोटी चौतनी सिरन पर सोहैं।
छोटे-छोटे भँवरा चकई छोटी-छोटी लिये
छोटे-छोटे हाथन सों खेलैं मन मोहैं॥
छोटे-छोटे चरन सों चलत घुटुरुवन
चढ़ीं ब्रज-बाल छोटी-छोटी छबि जोहैं।
'हरीचंद' छोटे-छोटे कर पै माखन लिये
उपमा बरनि सकैं ऐसे कवि को हैं ॥३०॥

आशिष, बिहाग

जुग जुग जीवो मेरी प्रान-प्यारी राधा।
जब लौ जमुन-जल रवि ससि नभ थल
तब लौं सुहाग लहौ सुजस अगाधा॥
नित नित रूप बाढ़ो परस्पर प्रेम गाढ़ो
नवल विहार करि हरौ जन-बाधा।
'हरीचन्द' दै असीस कहत जीओ लख बरीस
तुम्हरे प्रगट भये पूरी सब साधा ॥३१॥

गणेश चतुर्थी को पद, राग यथा-रुचि

जय जय गोपी गणेश वृन्दावन चिन्तामनि
ऋद्धि-सिद्धि दायक ब्रजनाथ प्रान-प्यारे।

बनिता कुच-मोदक गहि बार-बार केलि-करन
प्रिया-बेनिका-भुजंग हस्त-कंज धारे ॥
मान-समय पद परसत अंकुसादि चिन्ह लसत
हँसत अभय बरद परम प्रान के रखवारे।
शुंड दंड बाहु मेलि करनि सँग सुगज केलि
करत हैं 'हरिचंद' निरखि हरषि प्रानप्यारे ॥३२॥

नित्य, बिहाग

जय श्री मोहन-प्रान-प्रिये ॥ ध्रु० ॥
श्री वृष-भानु-नन्दिनी राधे ब्रज-कुल-तिलक त्रिये ॥
जा पद-रज सिव अज वंदत नित ललचत रहत हिये।
तिन हरि सँग विहरत निसंक निसि-दिन गलबाँह दिये ॥
जा मुख-चन्द-मरीच देखि सब ब्रज-नर-नारि जिये।
तिनकी जीवन-मूरि होइकै सहजहि स्ववस किये ॥
इन्द्रादिक दिगपति जाके डर बरतत रुखहि लिये।
'हरीचन्द' सो मान जासु लखि सहजहि बहुत भिये ॥३३॥

स्फुट, यथा-रुचि

जुरे हैं झूठे ही सब लोग।
जैसे स्वामी परिकर तैसे तैसो ही संयोग ॥ ध्रु० ॥
वे तो दीनानाथ कहाये करि इत उत कछु काज।
एक एक की लाख इन्होंने गाईं तजि कै लाज ॥
जुरे सिद्ध साधक ठगिया से बड़ो जाल फैलायो।
मूँड्यो जिन्हैं मिटायो तिनको जग सों नाम धरायो ॥
आजु नाहि तो कल या आसा ही मे दीनहि राख्यो।
'हरीचन्द' मन लै निरमोहित श्वेत-कृष्ण नहि भाख्यो ॥३४॥

दीनता, देवगन्धार

जो पै श्री बल्लभ-सुत नहि जान्यो ।
कहा भयो साधन अनेक मै करिकै वृथा भुलान्यो ॥
बादि रसिकता अरु चतुराई जो यह जीवन जान्यो ।
मस्यो बृथा विषयारस लम्पट कठिन कर्म मे सान्यो ॥
सोइ पुनीत प्रीति जेहि इनसो बृथा बेद मथि छान्यो ।
'हरीचन्द' श्रीबिट्ठल बिन सब जगत झूठ करि मान्यो॥३५॥

तथा, आसावरी

जे जन अन्य आसरो तजि श्री बिट्ठलनाथहि गावैं ।
ते बिन श्रम थोरेहि साधन मे भव-सागर तरि जावैं ॥
जिनके मात-पिता-गुरु बिट्ठल और कहूँ कोउ नही ।
ते जन यह संसार-समुद्रहि बत्स-खुरन करि जाही ॥
जिनके श्रवन कीरतन सुमिरन बिट्ठल ही को भावै ।
ते जन जीवन-मुक्त कहावहि मुख देखे अघ जावै ॥
जिनके इष्ट सखा श्री बिट्ठल और बात नहिं प्यारी ।
तिनके बस में सदा सर्वदा रहत गोवर्द्धन-धारी ॥
जिन मन-काय-करम-बच सब बिधि श्रीबिट्ठल-पद पूजो ।
ते कृत-कृत्य धन्य ते कलि में तिन सम और न दूजो ॥
जो निसि-दिन श्री बिट्ठल बिट्ठल बिट्ठल ही मुख भाखैं ।
'हरीचन्द' तिनके पद की रज हम अपने सिर राखै ॥३६॥

बधाई, राग कान्हरा

जो पै श्री राधा रूप न धरतीं ।
प्रेम-पंथ जग प्रगट न होतो ब्रज-बनिता कहा करती ॥
पुष्टिमार्ग थापित को करतो ब्रज रहतो सब सूनो ।
हरि-लीला काके सँग करते मंडल होतो ऊनो ॥

रास-मध्य को रमतो हरि सँग रसिक सुकबि कह गाते ।
'हरीचन्द' भव के भय सों भजि किहिके सरनहि जाते ॥३७॥

जय जय जय जय जय श्री राधा ।
जब तें प्रगट भई बरसाने नासी जन के तन की बाधा ।
सब सखि आनन्दित मन में अति चरन-कमल अवराधा ।
'हरीचन्द' बृजचन्द पिया को प्रेम-पंथ जिन साधा ॥३८॥

श्री रामनौमी व दशहरा का कीर्तन, सारंग

जयति राम अभिराम छबि-धाम
पूरन-काम श्याम-बपु बाम सीता-बिहारी ।
चंड कोदंड-बल खंड-कृत दनुज-बल
अनुज-सह सहज सुभ रूपधारी ॥
रक्ष-कुल अनल बल प्रबल पर्जन्य सम
धन्य निज जन-पक्ष रक्ष-कारी ।
अवध-भूषन समर बिजित दूषन
दुष्ट बिगत दूषन चतुर धर्मचारी ॥
खर प्रखर खर अगिन लंक दृढ़ दुर्ग
दल दलमलन बाहु मारीच-मारी ।
वैश्रवन अनुज घट-श्रवन रावन-शमन
शमन भय-दमन 'हरिचन्द' वारी ॥३९॥

जगाने के पद

जागो मेरे प्रान-पियारे ।
बलि बलि गई दिखावो ससि-मुख उठो जगत-उँजियारे ॥
मेटहु बिरह-ताप दरसन दै बोलहु मधुरे बैन ।
आलस भरे रैनि रँगराते खोलहु पंकज-नैन ॥

मेरे सरबस जीवन माधव प्रात भयो वलि जागो।
कछु अलसाय जँभाइ मंद हँसि 'हरीचन्द' गर लागो ॥४०॥

प्रबोधनी के पद, यथा-रुचि

जागो मंगल-मूरति गोविन्द बिनय करत सब देव।
तुव सोये सबही जग सोयो लखहु न अपनो भेव॥
बन्दी वेद खरे जस गावत अस्तुति करत जुहारी।
नारद सारद बीन बजावत जय जय बचन उचारी॥
किन्नर अरु गंधर्व अप्सरा तुम्हरो ही जस गावै।
बाजन बिबिध बजाइ तुम्हैं सब करि मनुहारि जगावैं॥
जग के मंगल काज होत नहि बिनु तुव उठे कृपाल।
तुव जागे सवही जग जागत तासों उठहु दयाल॥
निद्रा तजहु रमापति केशव चहुँ दिसि मंगल माचै।
पंकज-नयन बिलोकि विमल जस'हरीचन्दहू' बाँचै ॥४१॥

ग्रीष्म ऋतु

झीनो पिछौरा सोहै आजु अति झीनो पिछौरा सोहै।
चन्दन लेप नंदनंदन-तन देखत ही मन मोहै॥
पारिजात मंदार रही लसि फूल-छरी कर लीन्हे।
साँझ समय बन ते वनि आवत गोधन आगे कीन्हें॥
गोरज छुरित अलक सब सुन्दर ब्रज-बालन दरसायो।
'हरीचन्द' मुख-चन्द देखिकै वासर-ताप नसायो ॥४२॥

दीनता, यथा-रुचि

तुम सम नाथ और को करिहै।
हमसे हीन दीन जनहू पै कौन कृपा विसतरिहै॥
को निज विरद सम्हारन कारन दौरि दीन दुख हरिहै।
जानि क्षुधित 'हरिचन्द' असन को भेजि क्षुधा परिहरिहै॥४३॥

अशीष, कान्हरा

तिहारो घर सुबस बसो महरानी ।
कीरति जू तुम्हरे घर प्रगटी बृज-जननी ठकुरानी ॥
जाके भये सकल सुख बरसै जिमि सावन को पानी ।
अति आनंद भयो गोधन मे हम यह आगम जानी ॥
कोउ गावै कोउ देत बधाई वेद पढ़त मुनि ज्ञानी ।
'हरीचन्द' प्रगटी श्री राधा मोहन के मन-मानी ॥४४॥

दीनता, यथा-रुचि

तेई धनि धनि या कलियुग मे जिन जाने श्री विट्ठलनाथ ।
जीवन जगत सुफल तिनही को जौन विकाने इनके हाथ ॥
धरम-मूल इक इनकी पद-रज इनके दासहि सदा सनाथ ।
भक्ति-सार इनको आराधन इनही को गावत श्रुति गाथ ॥
इनके बिनु जे जीवत जग मे ते सब श्वास लेत जिमि भाथ ।
'हरीचन्द' चलु सरन इनहि के धरिकै चरनन पर निज माथ ॥४५॥

सेहरा, यथा रुचि

दूलह श्री बृजराज फूलि बैठे कुंजन आज ।
फूलन को सेहरो फूलन के अभरन फूलन के सब साज ॥
फूलि सखि गीत गावै देव फूल बरसावै फूल्यो सकल समाज ।
फूली श्रीराधाप्यारी देखि फूली बृजनारी'हरीचन्द'फूल्यो अति आज॥४६

दान-एकादशी और बावन-द्वादशी

दान लेन द्वै ही जन जान्यो ।
कै तुम नन्दराय के ढोटा कै वामन जिन बलि छल ठान्यो ॥
तीन पैर कहि छोटे पग सो उन छल करि कै देह बढ़ाई ।
तुम गोरस के मिस कछु औरे रस लीनो छलिकै बृजराई ॥

वे छोटे कपटी तुम खोटे एकहि से बिधि रचे सँवारी।
'हरीचंद' वे तो बावन रहे तुम छप्पन निकसे गिरधारी ॥४७॥

दान एकादशी

देखे आजु अनोखे दानी।
जाचक-पन में इती ढिठाई लाल कौन यह बानी ॥
रार करत कै गोरस माँगत सो कछु बात न जानी।
'हरीचंद' कुल-दीपक ढोटा कौन रीति यह ठानी ॥४८॥

नित्य, टोड़ी

देखौ जू नागर नट, ठाढ़ो जमुना के तट,
पर मग कोउ चलन न पावै।
काहू को हरत चीर, काहू को गिरावै नीर,
काहू की ईडुरी दुरावै ॥
श्याम बरन तन सीस टिपारो
सोभा कहि नहि आवै।
'हरीचंद' हँसि हँसि नयनन आवत
तन-मन सबहि चोरावै ॥४९॥

मकर संक्रांति का और संक्रान्ति के दिन गायबे को पद.
राग यथा-रुचि

दुतिय नृप भानु छठी तजु मान।
करन चतुर्थ सदा सौतिन हिय कटि पंचमी सुजान ॥
तो सम माती नाय और कोउ नव मन दस तू बाल।
तुव बिन आठ बेदना पावत ब्याकुल पिय नँदलाल ॥
दसम केतु पीड़त पिय कों अति निज दुख अगिनि बढ़ाय।
करु अभिषेक अमृत एकादस कुच पिय के हिय लाय ॥

द्वादश बिनु जल तिमि हरि तुव बिन लग तनि प्रथम न नेक ।
'हरीचन्द' ह्वै तृतिय पिया सँग करु संक्रमन विवेक ॥५०॥

नित्य, यथा रुचि

दोउ मिलि पौढ़े सुख सों सेज ।
करत भावती रस की बतियाँ बाढ़े मदन मजेज ॥
बतियन ही कछु अनरस ह्वै गयो प्रिया रही करि मान ।
बोलत नहि कछु मौन ह्वै रही भौंह जुगल-धनु तान ॥५१॥

ब्याहुला, यथा रुचि

दोउ जन गाँठि जोरि बैठारे ।
बिहँसत दोउ मुख देखि परस्पर चितवत होत सुखारे ॥
दूलह दुलहिन को आनँद लखि बढ़्यो अनंद अपार ।
'हरीचन्द' को पकरि नचावत गारि देत ब्रज-नार ॥५२॥

ग्रीष्म ऋतु, यथा-रुचि

दोउ मिलि विहरत जमुना-तीर मैं ।
करि कर के जलयंत्र चलावत भींजि रही लट नीर मैं ॥
इत उत तरत सखी जन सोहत मनहुँ कमल जल भीर की ।
छींट उड़ावत हँसत हँसावत बोलनि मनु पिक कीर की ॥
साँवरे अंग गौर तन सोहत लपटनि भीजे चीर की ।
'हरीचन्द' लखि तन मन वारत छवि राधा-बलबीर की ॥५३॥

बिरह

न जानी ऐसी हरि करिहैं ।
हमरे ह्वै द्विजन के ह्वै है दया न जिय धरिहैं ॥
होत सामनो जिनि हँसि चितवत भाव अनेक कियो ।
तिन अब मिलतहि सकुचि इतै सों मुखहू फेरि लियो ॥

मान्यो तिन्हैं काम नहिं हमसों तासों निठुर भये।
'हरीचन्द' ब्रजनाथ नाम की लाजहि क्यों मिटये ॥५४॥

नित्य, यथा-रुचि

नागरी रूप-लता सी सोहै।
कमल सो बदन पल्लव से कर पद देखत ही मन मोहै॥
अतसी-कुसुम सी बनी नासिका जलज-पत्र से नयन।
बिम्ब से अधर कुन्द दन्तावलि मदन-बान सी सयन॥
गाल गुलाब कान झुमका मनु करनफूल के फूल।
बेनी मानों फूल की माला लखि कै मन रह्यो भूल॥
बाहु सुढार मृनाल-नाल सम फूल सरिस सब अंग।
फूलन ओट लगे हैं द्वै फल बाढ़त देखि अनंग॥
जानु बनी रम्भा की खम्भा सोभा होत अपार।
गूलरि-फूल-सरिस कटि राजत कविजन लेहु बिचार॥
नारंगी सी एँड़ी राजत पद-तन मनहुँ प्रवाल।
और आभरन बिबिध फूल बहु कर पहुँची उर माल॥
चम्पै सी देह दमक दवना सी चमक चमेली रंग।
मालति महक लपट अति आवत कोमल सब अँग अंग॥
रसिक सिरोमनि नंदलाल सोई भँवर भये हैं आइ।
देखि देखि छबि राधा जू की 'हरीचंद' बलि जाइ ॥५५॥

जल-बिहार

नाव चढ़ि दोऊ इत उत डोलैं।
छिरकत कर सों जल जंत्रित करि गावत हँसत कलोलैं॥
करनधार ललिता अति सुंदर सखि सब खेवत नावैं।
नाव-हलनि मैं पिया-बाहु मै प्यारी डरि लपटावैं॥

जेहि दिसि करि परिहास झुकावहिं सबही मिलि जल-यानै।
तेहि दिसि जुगुल सिमिटि झुकि परही सो छबि कौन बखानै॥
ललिता कहत दाँव अब मेरी तू मो हाथन प्यारी॥
मान करन की सौंह खाइ तौ हम पहुँचावै पारी।
हँसत हँसावत छींट उड़ावत बिहरत दोऊ सोहैं॥
'हरीचंद' जमुना-जल फूले जलज सरिस मन मोहैं॥५६॥

बधाई, यथा-रुचि

प्रगटे रसिक जनन के सरबस।
जसुमति-उदर अलौकिक वारिधि श्याम कला-निधि निधि-रस॥
पसरित चन्द्रकला सो पूरब उज्ज्वल बिमल बिसद जस।
'हरीचंद' ब्रज-बधू चकोरी सहजहि कीन्ही निज बस॥५७॥

प्रगटे प्राननहूँ तें प्यारे।
नंद-भवन आनंद-कलानिधि जसुमति मात दुलारे॥
आजु भयो साँचो आनँद भुव फले मनोरथ सारे।
'हरीचंद' गोपिन के सरबस सब ब्रज के रखवारे॥५८॥

वियोग

पिया बिनु बीत गये बहु मास।
दिन दिन मदन सतावत अति ही बाढ़त बिरह-हरास।
छन छन छीजत छकत छबीली छलकत छाँड़ि अवास।
बेगि कृपा करि आवहु माधव 'हरीचन्द' गुन-रास॥५९॥

दूती, यथा-रुचि

प्यारी मो सो कौन दुराव।
कहि किन अरी अनमनी सी क्यों काहे को जिय चाव॥

काहे को अँसुवन सों मुख धोवत बारी नेक बताव।
'हरीचंद' क्यों कहत न मोसो प्यारी लाइ मिलाव ॥६०॥

नित्य बिहार, बिहाग चौताला

प्यारी के कुंज पिय प्यारो आवत
हरिहि धाय भुजन भरि लीनो।
उमँगि मिले छतियन सों लपटे दोऊ
चलत न मारग रुक्यो रँग-भीनो ॥
जित की तित रहि खरी सखियाँ
सब छूटत भुजन अलिगन दीनो।
'हरीचंद' जब बहुत सँभराये तब
क्योंहूँ गमन महलन में कीनो ॥६१॥

बिहाग तथा

प्यारी लाजन सकुची जात।
ज्यों ज्यों रति प्रतिबिंब सामुहे आरसि माँह लखात ॥
कहत लाख यहि दूर राखिये बल करि कर्षत गात।
'हरीचंद' रस बढ़त अधिक अति ज्यों-ज्यों तीय लजात ॥६२॥

संक्रांति, यथा-रुचि

प्यारे इतही मकर मनावहु।
ताती खिचरी सुखद अरोगौ हम कहँ सुख उपजावहु ॥
बड़ो परब है आजु श्याम घन कहूँ न चित्त चलावहु।
'हरीचंद' मिलि देहु महा सुख मेरी लगन पुजावहु ॥६३॥

प्यारे जान न दैहौं आज।
कोटिन मकर करो नहि छाँड़ौ प्राणनाथ ब्रजराज ॥

मीन मेख बिनु बात करत तुम कहूँ मिथुन ललचाने।
धनि धनि पिय तुम तुल नहि दूजो सब के घटन समाने॥
करकत हिय बीछी सी बातैं सौतिन सँग जो कीनी।
तासो राखौ लाय हिये अब करि करि अधिक अधीनी॥
तौ वृषभानु राय की कन्या जौ अब तुमहि न छाँड़ौ।
बड़ो परब यह पुन्य उदय मोहि मिलि तुमसों रँग माँड़ौ॥
दच्छिन होन देउँ नहि कबहूँ करौ लाख चतुराई।
'हरीचंद' मेरे अयन बिराजौ सदा अबै बृजराई॥६४॥

पिया सो खिचरी क्यो तू राखत।
कहा मान करि बैठि रही है कछुक बचन नहि भाखत॥
यह संक्रम खिचरी को आली मानहि दूरि न राखत।
'हरीचंद' पिय सों खिचरी सी मिलि क्यो रस नहि चाखत॥६५॥

प्यारी जू के तिल पर हौ बलिहारी।
सब सखियन की डीठि डिठौना रति-रतिपति मद-हारी॥
श्याम सरूप बसत बनि सूछम सोइ दरसावत प्यारी।
'हरीचंद' हरि पीर-मिटावन एक यहै गुनकारी॥६६॥

परम्परा, छप्पै

प्रथम नौमि गोपी पति–पद–पंकज अरुनारे।
पुनि शिव-नारद-व्यास बहुरि सुक मुनि मतवारे॥
विष्णु स्वामि पुनि वन्दि विल्वमंगल–पद वंदत।
श्री वल्लभ–चरनारबिन्द जुग नौमि अनन्दत।
श्री बिट्ठल तिनकी दोऊ बिधि संतति जो अबलौ प्रगट।
तेहि बंदत नित 'हरीचंद' यह परम्परा मत की उघट॥६७॥

जाड़े में सैन समय गाइबे के पद

प्यारी को खोजत है पिय प्यारो ।
मिलि रहि दीपावलि मैं झिलिमिलि फैलो बदन उजारो ॥
नूपुर-धुनि सुनि जानि नवेली गहि ल्यायो पिय न्यारो ।
'हरीचंद' गर लाइ मनायो दीप-दान त्योहारो ॥६८॥

बधाई

प्रगटी सुन्दरता की खान ।
श्री बृषभानु राय के मंदिर राधा परम सुजान ॥
गावत गोपी गीत बधाई बाजत तूर निसान ।
अम्बर देव फूल बरसावत चढ़ि चढ़ि दिव्य बिमान ॥
जाचक भये अजाचक सिगरे पाइ सबिधि सनमान ।
'हरीचंद' ब्रजचंद पिया की जोरी अति सुखदान ॥६९॥

ग्रीष्म ऋतु मे, राग वृन्दावनी सारंग

प्यारी मति डोलै ऐसी धूप मे ।
तेरे मैं तो वारी गई री ।
जाके हेतु फिरत तू बन बन सो तोहिं आपुहिं बोलै ॥
तेरे मैं तो वारी गई री ।
चलि किन कुंज उसीर-महल तू करु पिय संग कलोलै ॥
तेरे मै तो वारी गई री ।
'हरीचंद' मिलि ठीक दुपहरी सुरति अमृत रस घोलै ॥
तेरे मै तो वारी गई री ॥७०॥

पिय मेरे अंकन सुरथ बिराजौ ।
सुरँग चूनरि झालरि झूमत मोती-लर बहु साजौ ॥
किंकिनि कलहु घंटिका बाजनि चँवर चिकुर चल सोहै ।
अंचर ब्यजन चलनि मनमोहन सबही विधि जिय मोहै ॥

कोक-कला कल चक्र चपलबर तुरंग उछाह लगाये।
नेह-डोर-बल सेज-भूमि पै करि मनुहार चलाये ॥
अधर-सुधा-मधु भेट करौगी स्वेद कुसुम बरसाई।
'हरीचंद' बलि बेगि पधारौ जानि सिरोमनि राई ॥७१॥

नित्य, राग षट

प्रात समय उठतहि श्रीवल्लभ यह मंगलमय लीजै नाम।
कोटि बिघन-वारन पंचानन सब विधि समरथ पूरन काम ॥
अघ-नासन करुनानिधि दीनानाथ पतितपावन सुखधाम।
सुमिरन मात्र हरन जन-आरति मोहन कोटि कोटि रति-काम ॥
रहिये इनकी सरन सदा चलि विकि जैये इन कर विनु दाम।
'हरीचंद' निरभय इन चरननि छत्र-छाँह कीजै विश्राम ॥७२॥

गरमी में सेहरे को पद, राग यथा-रुचि

फूल्यो सो दूलह आजु फूल ही को साजै साज
फूल सी दुलही पाइ फूल्यो फूल्यो डोलै।
केसरी बन्यो है बागो मोतिन की कोर लगो
फूल झरै जब वह मुख बोलै ॥
फूल को सिहरो सीस फूलन की माल कंठ
फूले फूले नयन दोऊ लगे अनमोलै।
'हरीचंद' बलिहारी निज कर गिरिधारी
कली सी दुलहिया को घूँघट खोलै ॥७३॥

फूलहु को कँगना नहीं छूटत कैसे हो बलवीर जू।
जानि परी सब आजु तुम्हारी नामहि के रनधीर जू ॥
दूध पिवायो जसुदा मैया जा दिन कों सो आयो।
चोरि चोरि कै माखन खायो सो बल कहाँ गँवायो ॥

तारी दै दै हँसी सखी सब आजु परी मोहि जानी।
सुनि कै तिनकी बात दुलहिया घूँघट मे मुसक्यानी॥
कोटि जतन कोऊ करि हारौ लगी लगन नहि टूटै।
'हरीचंद' यह प्रेम-डोरना को कैसे करि छूटै॥७४॥

फूल को सिंगार करत अपने हाथ प्यारो।
फूलन की कलियन को आभरन सँवारो॥
पाटी पारि अपने हाथ बेनी गुथि बनावै।
सीसफूल करनफूल लै लै पहिरावै॥
कंचुकि पहिरावत मै चपलई कछु कीनी।
प्यारो मुसकाय आँखि नीची करि लीनी॥
किंकिनि पहिराय झबा लहँगा पहिरायो।
देखि देखि मुदित होत प्यारो मन-भायो॥
पायल पहिरावन को चित्त जबै कीनो।
प्रान-प्यारी सोचि चरन तब छिपाय लीनो॥
प्यारी को सँकोच जानि प्यारे इमि भाख्यो।
मान समय कोटि बार इनहि सीस राख्यो॥
पायल मग बाँधि फूल-माला पहिराई।
अपने कर नंदलाल आरसी दिखाई॥
प्यारी तब धाइ पिया-कंठहि लपटाई।
'हरीचंद' बार बार लखिकै बलि जाई॥७५॥

रास के पद

फिरि लीजै वह तान अहो पिय फिरि लीजै वह तान।
नि नि ध ध प प म म ग ग रि रि सा सा मोहन चतुर सुजान॥
उदित चन्द्र निर्मल नभ-मंडल थकि गये देव-विमान।
कुनित किंकिनी नूपुर बाजत झनझन शब्द महान॥

मोहे शिव ब्रह्मादिक वहि निसि नाचत लखि भगवान।
'हरीचंद' राधा-मुख निरखत छूट्यो सुर-तिय मान ॥७६॥

विहार, बिहाग

बैठे दोउ अपने सुख मिलि।
ऊँचे महलन के चौवारे
सरद-चाँदनी चहुँ दिसि रही खिलि॥
प्रिया करत कछु बिनय लाल सुनि
सहि न सकत जिय बिबस जात हिलि।
कहि बस बल 'हरिचंद' अंश पर
ढुरत अधर मे अमर रहत रिलि॥७७॥

अगहन में राजभोग समय, सारंग

चारो असि मेरो लाल सोइ उठत प्रातकाल
कहा तीर कैसो चीर झूठही अँगराती।
चोरी लाइ छिनारो लावत
तुम ग्वालिन मद-माती॥
इहि मिस नित उठि देखन आवत
अपनो मन क्यो नहिं समुझावति।
यौवन के रस चूर फिरत
तुम घर घर मे इतराती॥
'हरीचंद' घरन जाहु, लालहि मति दोष लाहु,
कहत बात क्यो बनाइ कापै इठलाती॥७८॥

विहार, केदारा

बैठे लाल जमुना जू के तट पर।
ग्रीष्म ऋतु जान अति सुख मान
मान संग सब गोपी चतुरतर॥

व्यजन चँवर ढुरत चहुँ दिसि तें
सोभित सुभग नवल बर।
'हरीचंद' चंद-बदन हरि की छबि लखि
कोटि काम वारि गयो एक एक पद-नख पर ॥७९॥

तथा, कलिंगड़ा

बीती निसि तिय सोवन दीजै यह ललिता लै बीन बजायो।
चौंकि परे दोउ भोर जानि तब रसमसे नैननि आलस आयो॥
सीरे जानि हार उर के पिय करि मनुहार तियाहि सुनायो।
'हरीचंद' संगम-सुख-शोभा सो कैसे कहि जात सुनायो ॥८०॥

रास को पद, भैरव

बृन्दाबन उज्जल बर जमुना-तट नंदलाल
गोपिन सँग रहस रच्यो सरद जामिनी।
निरतत गोपाललाल सँग में बृज-बाल बनी
अद्भुत गति लेत कोक-कलित कामिनी॥
लाग डाँट सुर-बँधान गावत अचूक तान
ततथेइ ततथेइ थेई गति अभिरामिनी।
गोपिन सँग श्याम सुँदर मंडल-मधि सोभित अति
बिहरत बहु रूप मानों मेघ दामिनी॥
थाक्यो नभ चंद देखि रैनि गति सिथिल भई
लखि हरि गजपति संग गज-गामिनी।
'हरीचंद' सोभा लखि देव-मुनि नभ बिथकित
मानी हरि साथ सबै ब्रज-भामिनी ॥८१॥

वामन द्वादशी की बधाई, सारंग

बलि कीनो सो कौन करै ।
सरवस हरिहि समर्पि प्रेम सों जगत-सीख हित को निदरै ।।
द्विज-सनमान-दान बच-पालन दृढ़ व्रत को हठि नाहि टरै ।
आत्म-समर्पन दास्य भाव निज करि आग्रह को जीय धरै ।।
हरि जग स्वामि प्रगटि दिखरायो जामे संका सकल जरै ।
प्रभु-प्रतिकूल गुरुहि निज छाँड्यो यह अनन्य मति को बिचरै ।।
राजहु गये साप गुरु दीनों आपु बँधे पै कौन डरै ।
'हरीचंद' दृढ़ता की दुन्दुभि जग बजाइ इमि कौन तरै ।।८२।।

वेदन में निज महिमा थापन गये त्रिबिक्रम आजु मुरारी ।
सब सग व्यापकता दिखराई सबन प्रत्यक्ष दीन-हितकारी ।।
औरहु एक भेद है यामे जो प्रगट्यो या भेष खरारी ।
बामनहूँ बपु सब सो ऊँचे त्रिभुवन-दायक जदपि भिखारी ।।
जग-दाता बिराट बपु की फिरि कहौ महिम को कहै बिचारी ।
'हरीचंद' छोटे-पनहूँ मे जय सब ही सों बढ़ि बनवारी ।।८३।।

बलिहि छलन गये आपु छलाये ।
माँगत दान दियो अपुने को बाँधि एक छन जनम बँधाये ।।
प्रनतारतिहर भगत-बछल प्रभु साँच नाम निज करि दिखराये ।
'हरीचंद' सुर-काज करन गये असुरराज थिर करि हरि आये ।।८४।।

बलि की मति पर बलि बलिहारी ।
सिखयो जगहि समर्पन जिन निज गुरु की आयसु टारी ।।
हरि सो बढ़ि सुपात्र जग नाहीं बलि सों बढ़ि कै दाता ।
भूमि-दान सम दान नही यह थापी तीनहुँ बाता ।।
दृढ़ बिस्वास अचल निज मत हठ कबहुँ न डिगत डिगाये ।
याही तें पहरू करि हरि को रहत द्वार बैठाये ।।

सेवक-स्वामि अनन्य भये मिलि गति नहि परत लखाई।
इनमें को बढ़ि को घटि यह किमि 'हरीचंद' कहि गाई ॥८५॥

भोजन के पद, राग यथा रुचि

भोजन करत किशोर-किशोरी।
कुंज महल में परि गै परदा सखि ठाढ़ी चहुँ ओरी ॥
ललिता लै आई भरि थारी ताती खिचरी कोरी।
तामे घृत डार्यो बहुतै करि रुचि बाढ़ी नहि थोरी ॥
हँसत परसपर खात खवावत बँधे प्रेम की डोरी।
'हरीचंद' बलि बलि जोरी पर बरनि सकै सो को री ॥८६॥

संक्रान्ति के पद, राग यथा-रुचि

भागन पाइये जू लालन बैस-संधि-संक्रौन।
तिय तिथि पाइ व्यापि गई तन मे चलौ किन राधा-रौन ॥
बाल-तरुनई-मिलन पुन्य-छन अति थोड़े ही बेर।
ललिता बनि ज्योतिषी बतावत समय न पैहौ फेर ॥
कुंज-कुटी तीरथ मे चलि कै करहु स्वेद-अस्नान।
'हरीचंद' अलि याचक को मिलि देहु दोऊ सुखदान ॥८७॥

मकर संक्रोन सखी सुखदाई।
मकर कुंडल सों मकर बिलोचनि क्यों न मिलत तू धाई ॥
मकरकेतु को भय नहि मानत घर में रही छिपाई।
वे तुव बिनु भे मकर बिना जल ब्याकुल मुकरन पाई ॥
मान मान तजु मान धरम कर कर धरि लै गर लाई।
'हरीचंद' तजु मकर राधिके रहु त्यौहार मनाई ॥८८॥

स्फुट, यथा-रुचि

मन तुहिं कौन जतन बस कीजै।
काहू सों जिय भरत न तेरो कहाँ कहाँ चित दीजै ॥

ज्ञान कर्म कुल नेम धर्म सो होत न तोहिं संतोष ।
घर घर भटकत डोलत धायो किये अनेक भरोस ॥
कामादिक नित काम तिहारे सो नहि क्योंहूँ मानै ।
सहस सहस नित करत मनोरथ ताहि कौन बिधि जानै ॥
कछु पूरो नहि परत पतन नित तौहू चाह बढ़ावै ।
'हरीचंद' क्यों छाँड़ि न सब को पिय-पद में चित लावै ॥८९॥

बाल-लीला, बिलावल

मनिमय आँगन प्यारी खेलै ।
किलकि किलकि हुलसत मनही मन गहि अँगुरी मुख मेलै ॥
बड़भागिनि कीरति सी मैया गोहन लागी डोलै ।
कबहुँक लै झुनझुना बजावति मीठी बतियन बोलै ॥
अष्ट सिद्धि नव निधि जेहि दासी सो ब्रज सिसु-बपुधारी ।
जोरी अविचल सदा विराजो 'हरीचंद' बलिहारी ॥९०॥

तथा, आसावरी

मेरो लाड़िलो गोपाल माई साँवरो सलोना ।
जाके हित लाई मैं सुरँग खिलौना ॥
छाँड़ो हठ वारने हों बार बार जाऊँ ।
मुख देखि लालन को नैनन सिराऊँ ॥
ब्रज को उँजियारो मेरो छोटो सो लाला ।
मानै मेरोई कह्यो ऐसो सुभ चाला ॥
तुम्हरे हित खोजूँ लाल दुलही इक छोटी ।
मिलि खेलै लालन के रहै संग जोटी ॥
माखन मिसरी हौं दैहौ चाखो मेरे प्यारे ।
छाँड़ो मचलाई लाल नन्द के दुलारे ॥

हौं तो सँग लागी फिरौ पलकहू न त्यागों।
पालने झुलाऊँ गीत गाऊँ अनुरागो ॥
हौं तो माता हूँ तेरो मेरी बात मानो।
'हरीचंद' बलिहारी आर नाहि ठानो ॥९१॥

रथ-यात्रा, सारंग

मेरे मन-रथ चढ़ि पिय तुम आवो।
चारु चक्र बुधि बल छल साहस लगन की डोर लगावो।
चपल तुरंग मनोरथ बहु बिधि निर्भय छत्र छवावो।
'हरीचंद' गर लागि हमारे प्रेम-ध्वजा फहरावो ॥९२॥

बधाई, यथा-रुचि

मंगल सब ब्रज-बासी लोग।
मंगलमय हरि जिन घर प्रकटे मिटे अमंगल भव के सोग॥
मंगल ब्रज बृन्दाबन गोकुल मंगल माखन दधि घृत भोग।
'हरीचंद' बल्लभ-पद मंगल गोपी-कृष्ण-संयोग ॥९३॥

मान को पद, बिहाग

मेरी री मत कोउ होउ बसीठि।
मैं उनकी वे मेरे रहिहैं सदा दिए मैं पीठि॥
मै मानिन वे मनावनहारे मेरी उनकी मिलि दीठि।
'हरीचन्द' मिलिहौं मैं उनसों लै मनुहार न नीठि ॥९४॥

नित्य, यथा-रुचि

मेरेई पौरि रहत ठाढ़ो टरत न टारे नन्दराय जू को ढोटा।
पाग रही भुव ढरकि छबीली यामें बाँधो है मंजुल चोटा॥

चितवत हँसि फिरि मों तन हेरत कर लै वेनु बजावत।
धरि अधरन वह ललन छबीलो नाम हमारोइ गावत ॥
कर लै कमल फिरावत चहुँ दिसि मों तन दृष्टि न टारै।
'हरीचंद' मन हरि लै हमरो हँसि हँसि पाग सँवारे ॥९५॥

मारग रोकि भयो ठाढ़ो जान
न देत मोहि पूछत है तू को री।
कौन गाँव कह नाम तिहारो
ठाढ़ी रह नेक गोरी ॥
कित चलि जात तू बदन दुराए
एरी मति की भोरी।
साँझ भई अब कहाँ जायगी
नीकी है यह साँकरी खोरी ॥
बहुत जतन करि हारि ग्वालिनी
जान दियो नहि तेहि घर ओरी।
'हरीचन्द' मिलि विहरत दोऊ
रैननि नन्दकुँवर श्री वृषभानुकिसोरी ॥९६॥

ग्रीष्म को पद, यथा रुचि

मौज भरे दोउ हौज किनारे
बैठे करत प्रेम की बतियाँ।
ग्रीषम ऋतु लखि सखिन बनायो
मंजु कुंज रचि पुहपन-पतियाँ ॥
शीतल पवन परसि जल-कन मिलि
सीतल भई सरससी रतियाँ।
'हरीचंद' अलसाने दोऊ मुरि मुरि
बिहँसि रहत लगि छतियाँ ॥९७॥

राग, यथा-रुचि

मोहन लाल के रस सानी।
तन की सुधि न भवन की बुधि कछु डोलत फिरत दिवानी ॥
उघरि कहत पिय गुन सब ही से गावत कोकिल-बानी।
बिथुरी अलक सरकि रह्यो अंचल चंचल चखन लखानी ॥
पिय - रस - मत्त छकी आसव सी पिय के रूप लुभानी।
पिय के ध्यान मूँदि रही लोचन अन्तरगति प्रकटानी ॥
उझकि ललकि चौंकति भुज भरि भरि इमि सुख रहत भुलानी।
निज मन हँसत मौन ह्वै बैठति रोवति कहत कहानी ॥
'हरीचन्द' इक रस हरि के रँग दिन-निसि जात न जानी।
प्रेम-समुद तन - नाव डुबोयेहु प्रेम - ध्वजा फहरानी ॥९८॥

विजय दशमी, मारू

मान गढ़-लंक पर बिजय को मानिनी
आज ब्रजराज रघुराज बनि कै चढ़े।
भृकुटि-धनु नयन-शर बिकट संधानि कै
मुकुट की ढाल करबाल अलकन कढ़े ॥
कोकिला कड़कि उघरत कड़खैत ही
बदत बन्दी बिरद भँवर आगे बढ़े।
कोक की कारिका बानरी सैन लै
दास 'हरिचंद' रति-बिजय आनँद मढ़े ॥९९॥

आशीष, कान्हरा

माई तेरो चिरजीवो गोबिन्द।
दिन दिन बढ़ो तेज बल धन जन ज्यो दूइज को चंद।
पालो गोकुल गोपी गो सुत गाय गोप सानंद।
हरो सकल भय निज भक्तन को नासौ सब दुख-दुन्द ॥

हर्षित देखि गोद में अनुदिन रोहिनि जसुदानंद।
लगौ बलाय प्रान-प्यारे की मम बैननि 'हरिचंद' ॥१००॥

जाड़े मे पौढिबे को पद, बिहाग

रजाई करत रजाई माँहीं।
राजा कृष्ण राधिका रानी दिये बाँह मे बाँही॥
सुखद सेज सोइ राजसिंहासन छत्र ओढ़ना सोहै।
चँवर चिकुर डोलत चहुँ दिसि तें को वह जो नहि मोहै॥
बजत निसान जीति जग कंकन किंकिन को बहु भाँती।
झरत बादला मोती दीनी सोइ दीनन मनि - पाँती॥
बँधुआ मदनहि बाँधि मँगायो लै पाइन तर पेल्यो।
कियो खिराज सकल सुख संपति आनँद-सिंधु सकेल्यो॥
तब बंदीजन बेद श्वास कढ़ि पढ़्यो बिरद अकुलाई।
कियो स्वेद अभिषेक रीझि कच-खसित कुसुम झर लाई॥
राजतिलक सिर दियो महावर अधर-सुधा नजरानो।
तिहि लहि सर्वस दियो सरोपा साथ नील पट बानो॥
नाची बेसर वारिमुखी तहँ परमानँद रह्यो छाई।
'हरीचंद' अवसर तब लखि कै प्रेम-जगीर लिखाई॥१०१॥

रास, यथा-रुचि

राधिकानाथ के साथ ब्रज-बाल सब
नवल जमुना-पुलिन रास राच्यो आज।
लेत संगीत गत शव्द उघटत बिबिध
एक गावत राग सुरन साँच्यो आज॥
तत्तथेई तत्तथेई प्रकट धुनि होत तहँ
बजत किंकिनि चुरी आनंद माच्यो आज।

थकित सुर गगन 'हरिचंद' निज तियन सह
देखि जब मुदित नंदनंदन नाच्यो आज॥१०२॥

नित्य, बधाई

राधिका मंगल को नव बेलि।
जा दिन प्रकटी बरसाने मे सब सुख धरेउ सकेलि॥
नित नव आनँद नित नव मंगल नित नव नौतन केलि।
'हरीचंद' बिहरति प्रीतम सों कंठ भुजा उर मेलि॥१०३॥

बिहार, बिहाग

रसिक गिरिधर सँग सेज सोई भली।
रीझि पिय देत सुखदान कीरति - लली॥
उझकि झुक चूमि मुख लूटि रस अधर-सुख
मेटि जिय दुसह दुख करत नव रँग-रली।
भुजन सों भुज बँधे अंग प्रति अँग सधे
कसमसक कुम्हिलात सेज कुसुमन - कली॥
अंग उमगे रंग पिया प्यारी संग प्रेम - रति
जंग पद मदन - मद दलमली।
सखी 'हरिचंद' रही रीझि तन-मन वारि
करत गुन - गान रसमत्त चहुँ दिसि अली॥१०४॥

रसबस में निसि जात न जानी।
कहत सुनत कछु हँसत हँसावत दृग जोरत छन-सरिस बिहानी।
आलस बिबस जम्हात परस्पर कहि बलिहार मधुर सुर बानी॥
रूप लालची दृग नहि झपकत जागत ही निसि सकल सिरानी॥
अरुझे प्रेम-फंद नहिं सुरझत मुख चूमत हरि राधा रानी।
'हरीचंद' सखि-गन सोइ गावत जुगल-प्रेम की अकथ कहानी॥१०५॥

नित्य

लालन पौढ़े हौं बलि जाऊँ ।
चाँपौ चरन कहानी भाषौ करि मनुहार सोवाऊँ ॥
सीत-भीत परदा बहु डारौ नवल अँगीठी लाऊँ ।
सरस रंग परिमल कोमल अति चारु रजाई उढ़ाऊँ ॥
मधुरे गुन गाऊँ प्यारे को करि मनुहार मनाऊँ ।
'हरीचंद' पौढ़ो प्रिय लालन हौं तेरे बलि जाऊँ ॥१०६॥

स्फुट

लाल यह तौ तुरकन की चाल ।
दुख देनो गल रेति रेति कै करनो ताहि हलाल ॥
जो बध करनो होइ बधो तौ क्यो खेलत यह ख्याल ।
एक हाथ मे काम बनैगो छूटैगे भव-जाल ॥
कै मारो कै तारो मोहन कै मोहि करौ निहाल ।
'हरीचंद' मति यो तरसावो बहुत भई नँदलाल ॥१०७॥

रथ, सारंग

लाल नहि नेकौ रथहि चलावै ।
गली साँकरी अटकि रह्यौ रथ नहि कहुँ इत उत जावै ।
उत वृषभानु-कुमारि अटा पै ठाढ़ी दृष्टि न टारै ।
इत नँदलाल रसिकबर सुन्दर इक टक उतहि निहारै ॥
ये हँसि हँसि के कमल फिरावत वै दोउ नैन नचावै ।
ये पीताम्बर लै जु उड़ावै वे मधुरे सुर गावैं ॥
रीझे रसिक परस्पर दोऊ 'हरीचंद' मन माही ।
ये इत अपनो रथ न चलावत वे न अटा सों जाही ॥१०८॥

स्फुट, यथा-रुचि

लाल लाल कर पद लाल अधर रस
लाल लाल नयन तासों साँचे लाल भये हो।
लाल माल बिनु गुन लाल पीक छाप तन
लाल लाल ही महावर सिर पै दये हो॥
पीरो पट छोरि लाल पट भलो ओढ़ि आये
अनुराग प्रगट दिखावत नये हो।
'हरीचंद' अरुन सिखा-धुनि सुनि चौंकि
अरुन उदय से आज अरुन भेष लये हो॥१०९॥

राग, यथा-रुचि

लखि सखि आजु राधिका रास।
जमुना-पुलिन सरल कोमल कल जहँ मल्लिका बिकास॥
उदित चन्द्र पूरन नभ-मंडल पूरन, ब्रज-तिय आस।
मंद सुरन पिय पास बने सजि निकर चिकुर भल पास॥
प्रचलित पवन रवन हित महकत मह मह दवन-सुबास।
दवन मदन मद मंद गवन सुख भवन जहाँ हरि-बास॥
बजत मृदंग उपंग चंग मिलि भजनन जति तति जास।
बढ़्यो रंग रति रंग दंग लखि अंग उमंग प्रकास॥
मुरली रली भली बाजत मिलि बीन लीन सुर खास।
ताल देत उत्ताल बजावत ताल ताल करि हास॥
उघटत श्री राधे राधे मधुर धुनि बन सब आस।
हरि राधा की बचन-रचन लखि बलिहारी हरि-दास॥११०॥

स्फुट, देश

बेग आवो प्यारे बनवारी हमारी ओर।
दीन बचन सुनतै उठि धावो नेकु न करहु अबारी॥

कृपा-सिन्धु छाँड़ौ निठुराई अपनो बिरद सम्हारी ।
थानै जग दीनदयाल कहै क्यो हमरी सुरत बिसारी ॥
प्रान दान दीजै मोहि प्यारा हौ छू दासी प्यारी ।
क्यो नहि दीन बचन सुनो लालन कौन चूक छे म्हारी ॥
तलफैं प्रान रहै नहिं तन मा बिरह व्यथा बढ़ी भारी ।
'हरीचंद' गहि बाँह उबारौ तुम तो चतुर बिहारी ॥१११॥

बिहार

वे देखो पौढ़े ऊँचे महल दोऊ
झलकत रूप झरोखन आई ।
हँसनि मुरनि बतरानि परस्पर
कछुक दूर ते परत लखाई ॥
फैली अंग-प्रभा दीपक मे जाल-
रंध्र सो घिरि घिरि आई ।
'हरीचन्द' कंकन-किंकिनि-रव निसि के
उछीर भरो मधुर कछु सुनाई ॥११२॥

रथ-यात्रा

वह देखो सखि सेन-ध्वजा फहरात ।
ज्यो ज्यो रथ नियरे आवत है त्यो त्यो मन अकुलात ॥
खंजन से भये नैन सखी के चक्रित इत उत डोलै ।
आवत प्राननाथ रथ चढ़ि कै सजनी यहु मुख बोलै ॥
जहँ लगि दृष्टि जात प्यारी की यह छबि होत रसालै ।
मानहुँ आदर सो पिय के हित कमल पाँवड़े डालै ॥
अति अनुराग संग वैठन को प्यारी मन की जानी ।
'हरीचंद' लै रथ बैठाये तिया अतिहि सुख मानी ॥११३॥

पालना

वारी वारी हौं तेरे मुख पै वारी मैं तेरे लटकन पै वारी।
पालना झूलो हो हठ छाँड़ो बलि बलि गइ महतारी ॥
छोटी सी दुलहिनि तोहि ब्याहौं अपने बाबा की दुलारी।
तुम झूलो हौ हरखि भुलावों 'हरीचंद' बलिहारी ॥११४॥

वारो मेरे लालन झूलो पलना।
हौं बलि जाउँ बदन की मोहन मानहु बात हमारी।
माखन लेहु ललन बृज-जीवन वारने गै महतारी।
अँचरा छोरहु तुमहि भुलाऊँ 'हरीचंद' बलिहारी ॥११५॥

स्फुट, यथा-रुचि

सखी मेरे नयना भये चकोर।
अनुदिन निरखत श्याम चन्द्रमा सुन्दर नन्द-किशोर।
तनिक बियोग भये उर बाढ़त बहु बिधि नयन मरोर ॥
होत न पल की ओट छिनकहूँ रहत सदा दृग जोर।
कोउ न इन्हैं छुड़ावनहारो अरुझे रूप झकोर ॥
'हरीचंद' नित छके प्रेम-रस जानत साँझ न भोर ॥११६॥

गरमी को पद

सखी मोहि ग्रीषम अति सुखदाई।
जामें शोभा श्याम अंग की प्रति छन परत लखाई ॥
बिनु अंतरपट मिलत पियारो अंग अंग सों लाई।
'हरीचंद' लखि कै सुख पावत गावत केलि बधाई ॥११७॥

फूल-सिंगार

सखियन आज नवल दुलहिन को फूल-सिंगार बनायो हो।
फूलन के आभरन मनोहर रचि रचि कै पहिरायो हो ॥

फूलनि वेनी गुही मनोहर फूलन मौर सुहायो हो।
फूलन के कँगना कर बाँधे फूलनि मंडप छायो हो॥
फूलनि चोली फूलनि सारी फूलनि लहँगा भायो हो।
दुलहिन दुलहा गाँठि जोरि कै एक पास बैठायो हो॥
फूली फूली सब सखियन मिलि फूल्यो मंगल गायो हो।
फूली जोरी देखि नयन सो 'हरीचंद' सुख पायो हो॥११८॥

मकर संक्रान्ति, टोड़ी

सुखद अति खिचरी को त्योहार।
मिलि बैठे दोउ कुंज सखी री नीके नयन निहार॥
पहिरि छींट बागो अति सुंदर ओढ़े सुखद रजाई।
सिसिर प्रवेस दिखावत गावत तान गान सुखदाई॥
सखी सबै मिलि नेम पुजावत करत जुगल की सेवा।
ताती खिचरी भोग लगावत भेट करत बहु मेवा॥
करत दान तिल गौर श्याम दोउ हँसि-हँसि पीतम प्यारी।
'हरीचंद' निज रीझि प्रान-धन डारत छिन-छिन वारी॥११९॥

श्री गिरिधरजी की बधाई

सदा तुम मायावाद निवारेउ।
जब जब प्रबल भयो मिथ्या मत तब तब प्रकटि विदारेउ॥
प्रथमहि होय विष्णु स्वामी प्रभु यह मारग विस्तारेउ।
फिरि श्री वल्लभ ह्वै अगिनि काठ कटु माया मत छिन जारेउ॥
अब के कासी लखि असुरासी उधरन तासु विचारेउ।
कृष्णावति ते श्री गोपाल-गृह जदु-कुल द्विज अवतारेउ॥
नाम जगतगुरु सुनत श्रवन-पुट पावन अमृत पारेउ।
कियो ग्रंथ बहु घर थिर थाप्यो माया-वाद विदारेउ॥

श्री गिरिधर गिरिधर ह्वै प्रकटे पुष्प-पंथ-गिरि धारेउ ।
प्रबल प्रवाह इन्द्र-धारा सों निज ब्रज लोग उबारेउ ॥
काशी में गोकुल करि दीन्हो श्रुति-रहस्य उच्चारेउ ।
'हरीचन्द' को जानि आपनो करुना करि निसतारेउ ॥१२०॥

अशिष, यथा-रुचि

सदा ब्रज सुबस बसो बरसानो ।
जहँ प्रगटी रस की निधि राधे बाजत प्रगट निसानो ॥
जुग जुग अबिचल राज रजो दोउ रावलि अरु महारानो ।
'हरीचन्द' के सीस रहौ नित नील पीत को बानो ॥१२१॥

बिहार, बिहाग

सुंदर सेजन बैठे प्रीतम-प्यारी ।
झिलमिलात दीप - ज्योति रँग-भरे
सँग दोऊ सोवत ऊँची अटारी ॥
रिझवत हिलि-मिलि करि रस-बतियाँ
फैली बदन उँजियारी ।
दीप सों परस्पर मुख अवलोकत
'हरीचन्द' बलिहारी ॥१२२॥

दीनता

श्री बल्लभ की सरि करै कौन ।
प्रगटे प्रभु गुविन्द-मन-चाहक भक्त कारनै जौन ॥
परम पतित तारन करुनामय रसनिधि बुधता-भौन ।
'हरीचन्द' जो इनहि भजत नहि महा अभागे तौन ॥१२३॥

श्री वल्लभ प्रभु मेरे सरवस ।
पचौ वृथा करि जोग जज्ञ कोउ
हम को तो इक इहै परम रस ॥
हमरे मात पिता पति बंधू
हरि गुरु मित्र धरम धन कुल जस ।
'हरीचन्द' एकहि श्री वल्लभ
तजि सब ध्यान भये इनके बस ॥१२४॥

श्री बड़े गिरिधर जी को पद

श्री विट्ठल-सुत गुननिधान श्री रुक्मिनि जीवन-प्रान
बन्दे श्री गिरधर प्रभु षटगुन सम्पन्न धीर ।
अति ही रिझवार रसिक सकल कलागुन-प्रवीन
बंधुन सिर छत्रछाँह मेटत जन-पीर ॥
सेवा-रस परस पात्र पंडित-जन मंडित कर
खंडित कृत मायामति छंडित भव-पीर ।
श्री रानी प्राननाथ गावत श्रुति बिसद गाथ
'हरीचन्द' हाथ माथ धरत बलबीर ॥१२५॥

श्रीरघुनाथजी को पद

श्रीविट्ठल-नंदन जग-बन्दन जय जय श्री रघुनाथ ।
जानकि-रमन समन जन अघ सत पितु-पद रजगुन गाथ ॥
सेवा रोचक मोचक भव-रुज कृत वल्लभी सनाथ ।
'हरीचन्द' अनुभव वियोग कृत सदा सहायक साथ ॥१२६॥

श्रीगोपीनाथजी को पद

श्री वल्लभ-सुत प्रथम प्रगट लीला रस भाव
गुप्त जय जय श्री गोपीनाथ भक्तन सुखदाई ।

गावत गुन बेद चार तऊ नहीं पावैं पार
महिमा कोउ कहि न सकत गोप-वंश-राई ।।
पुष्टि पथ करन - काज प्रगटे हैं भूमि आज
गावत सब ब्रज-जन मिलि आनँद-बधाई ।
'हरीचन्द' जस गावै बहुत बधाई पावै
देखत त्रैलोक सब बलि बलि जाई ।।१२७।।

श्रीबल्लभ गृह महामंगल भयो प्रकट भये श्री गोपीनाथ ।
मर्यादा श्रुति रूप रमन हित संकर्षन जन कियो सनाथ ।।
अक्षर ब्रह्म रूप सुभ सोहत अनुज धाम जगधाम स्वरूप ।
जोग ज्ञान कर्म्मादिक मारग थापन हित प्रगटे द्विज भूप ।।
संवत पंद्रह सौ सुभ सरसठि आश्विन कृष्ण द्वादशी जानि ।
श्री महालक्ष्मी जी के उदर तें प्रगटे है सब सुख की खानि ।।
पुष्टि प्रवेस हेतु अधिकारी करन कियो लीला-बिस्तार ।
कहि जय जय बल्लभ-सुत दोऊ 'हरीचंद' जन भयो बलिहार ।।१२८।

श्री घनश्याम जी को पद

श्री बिट्ठल घर अतिहि उछाह ।
रानी पद्मावति सुत जायो
पूरी अपने जन की चाह ।।
आश्विन बदी तेरसि रविबासर
बाढ़्यो गोकुल प्रेम प्रवाह ।
'हरीचंद' बैराग प्रकट गुन
जय जय जय श्री कृष्णावति-नाह ।।१२९।।

श्री गोविन्द राय जी को पद

श्री गुबिन्द राय जयति सुन्दर सुखधाम ।
देवि देव मेटि सकल कृष्ण-रूप थापन नित
सुंदर बरन निज भक्तन अभिराम ॥
सुंदर मर्याद रूप लोक-रीति स्ववस भूप
श्री भागवत थापन सुखमय सुआद जाम ।
'हरीचंद' विट्ठलसुत भक्ति भाव भूरि संयुत
राज-भाव बिनसे हरि सुजन पूरन काम ॥१३०॥

श्री बालकृष्ण जी को पद

श्री रुक्मिनि-नन्दन, जय जग-वन्दन,
बाल कृष्ण सुख—धाम ।
सुन्दर रूप नयन रतनारे
भक्तन पूरन काम ॥
रस वात्सल्य-करन अनुभव नित
बिरह विधूनन हरि मुख नाम ।
'हरीचंद' बिठ्ठल सुखदायक प्रिय
उनहारि रूप अभिराम ॥१३१॥

श्री गोकुलनाथ जी को पद

श्री बल्लभ निज मत राखि लियो ।
जीति सभावादी कठोर बहु माला तिलक दियो ॥
अद्भुत अचरज बहुत दिखाये खल नृप निरखि भियो ।
'हरीचंद' मर्याद राखि निज जग जस प्रगट कियो ॥१३२॥

श्री यदुनाथ जी को पद

श्रीजदुपति जय जय महराज ।
बिरह गुप्त अनुभवत प्रगटि जग महँ बिराग को साज ।
निवसत रह लघु कहत सुनत लहु छाँड़ि जगत के काज ।
'हरीचंद' परमारथ-पूरन गोविंद भक्ति जहाज ॥ १३३॥

साँझी को पद

आजु दोउ खेलत साँझी साँझ ।
नंदकिशोर राधा गोरी जोरी सखियन माँझ ॥
कुसुम चुनन मे रुनझुन बाजत कर-चूरी पग-झाँझ ।
'हरीचंद' बिधि गरब गरूरी भई रूप लखि बाँझ ॥ १३४॥

महारानी तिहारो घर सुफल फलो ।
सुन री कीरति तैं कन्या जनि सब ब्रज-जन को कियो भलो ।
कोउ गावत कोउ हँसत मोद भरि कोउ अति आनँद रलो ।
देखि चंद्र-मुख कुँवरि लली को वारि-फेरि तन-मन सकलो ॥
आनँद-मगन सबै ब्रज-बासी सब जिय को दुख पगनि दलो ।
'हरीचंद' जुग-जुग चिरजीवो जुगल कहानी जुगुल चलो ॥ १३५॥

दीनता, यथा रुचि

हमरे निर्धन की धन राधा ।
साधन कोटि छोड़ि इनही को चरन-कमल अवराधा ॥
इनके बल हम गिनत न काहू करत न जिय कोउ साधा ।
'हरीचंद' इन नख-सिख मेरी हरी तिमिर भव-बाधा ॥ १३६॥

श्री महाप्रभु जी की बधाई

आजु ब्रज साँची बजत बधाई ।
रति-पथ प्रगट करन को द्विज-बपु वल्लभ प्रगटे आई ॥

दैवीजन-हित कारन भूतल लीला फेरि दिखाई ।
'हरीचंद' भूले लखि निज जन लियो बाँह गहि धाई ॥१३७॥

आजु प्रेम-पथ प्रगट भयो भुव जनमे श्रीवल्लभ पूरन-काम ।
कठिन काल कलि देखि दया करि आपुहि चलि आये द्विजधाम ॥
बहे जात अपने जन लखि कै धर्‌यो बाँह गहि कहि हरि-नाम ।
'हरीचंद' रसमय वपु सुन्दर एकै राधा सुंदर श्याम ॥१३८॥

निज पथ प्रगट करन को द्विज ह्वै आपुहि प्रगट भये हरि आज ।
माधव कृष्ण एकादशि गुरु दिन लक्ष्मण भट-गृह पूरन काज ॥
दैवीजन मन अति हुलसाने फूल्यो व्रज को सकल समाज ।
'हरीचंद' मिलि नाचत गावत मिले भक्त-जन तजि जग-लाज ॥१३९॥

आजु व्रज घर घर बजत बधाई ।
द्विज-वपु लै नँदनंदन प्रगटे लक्ष्मण भट घर आई ॥
फेर वहै लीला सोई रस निज जन हेत दिखाई ।
'हरीचंद' से अधम जानि निज तारे भुज गहि धाई ॥१४०॥

मान को पद, यथा-रुचि

नेकु निहारु नागरी हौं बलि ।
इती रुखाई प्रान-पिया पै मान न करु सिख मान री उठि चलि ।
फूलत लय बिरचत उत प्यारो बिरह-हुतासन जात चलो गलि ।
तू इत बैठी भौंह तनेनत नहि सोहात मोहि यह रूखो कलि ॥
खसित निसानायक पश्चिम दिसि आधी सो बढ़ि रैन चली ढलि ।
अरुनसिखा-धुनि सुनियत कहुँ कहुँ सीरी पवन चली सुगंध रलि ॥
चलि किन कुंजभवन तू भामिनि अपनी सौतिन को छलबल छलि ।
प्रथम मान पुनि सहजहि मिलिबो सुनि बैरिनि रहि जैहैं जलि जलि ॥

भारतेन्दु जी
(किशोरावस्था)
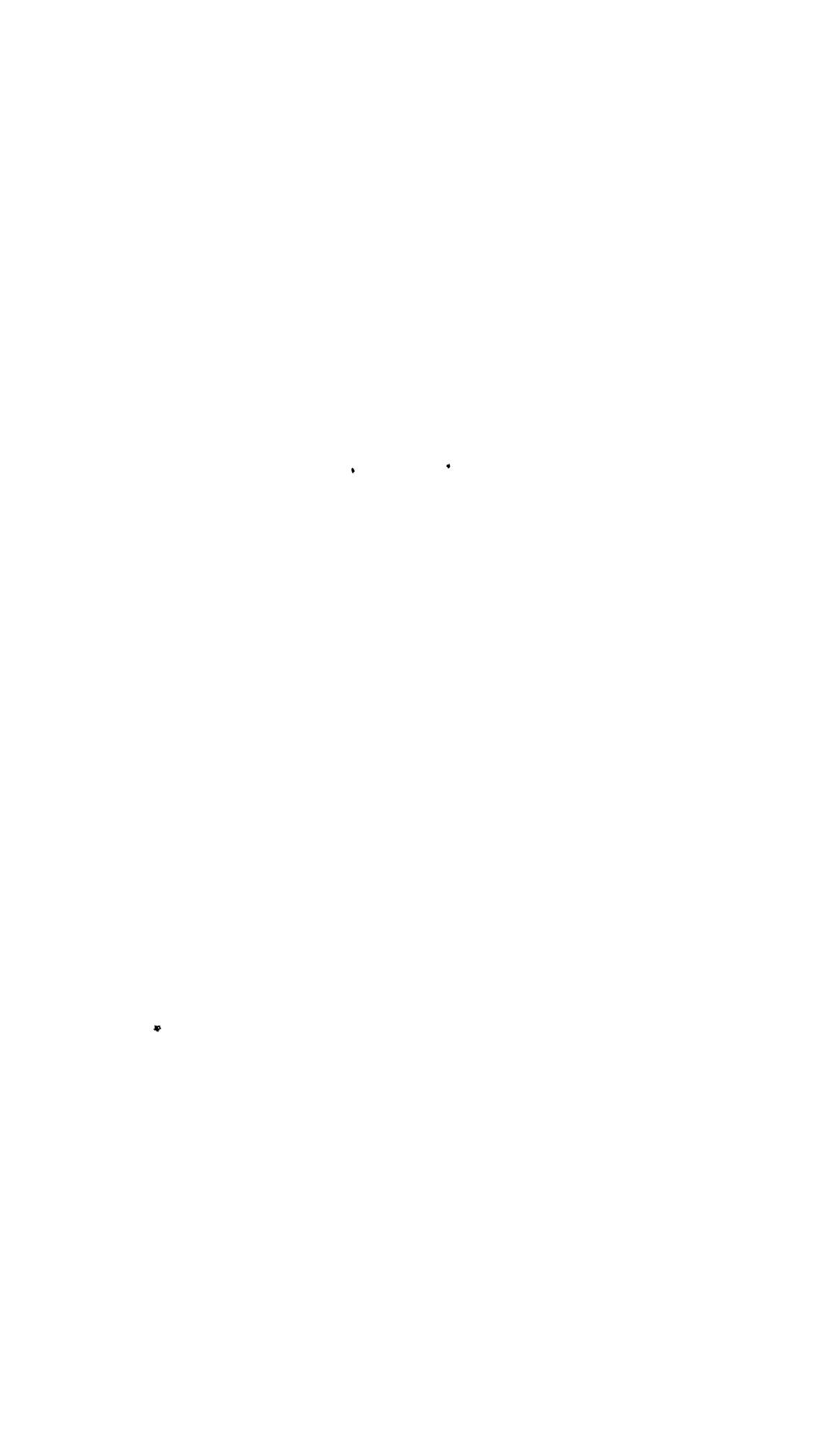
वर्षा-विनोद

हरिश्चंद्र-चंद्रिका और मोहन चंद्रिका
खं २ सं० २-६ मे
सं० १९३७ में प्रकाशित
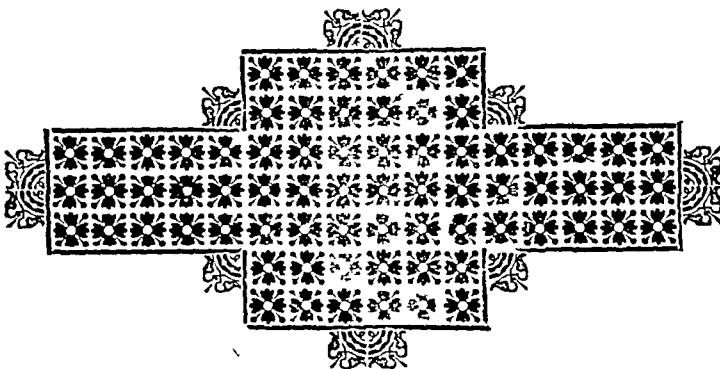
वर्षा-विनोद

कजली

प्यारी झूलन पधारो झुकि आए बदरा।
ओढ़ौ सुरुख चूनरि तापै श्याम चदरा॥
देखो बिजुरी चमक्के बरसै अदरा।
'हरीचंद' तुम बिन पिय अति कदरा॥ १॥

अगगग अगगग अगगग घन गरजै
सुनि सुनि मोरा जिय लरजै।
जुगनूं चमकै बादल रमकै
बिजुरी दमकै झमकै तरजै॥
ऐसी समय चले परदेसवाँ
पिय नहि मानत मोरी अरजै।
ऐसन नहि कोइ पटुका गहि कै
पिय 'हरिचंदहि' जो बरजै॥ २॥

घिर घिर आए बादर छाए रिमझिम जल बरसै।
चम चम चपला चमकै घन झमकै झुकि झुकि बिरछन परसै॥
सूनी सेज परी मै व्याकुल पिय की सूरत नहिं दरसै।
बिनु 'हरिचंद' पियरवा सावन मे हाय मोरा जियरा तरसै॥ ३॥

मन-मोहना हो झूलैं झमकि हिंडोर।
एक तो सावन ए दूजे घन उनए
तीजे फूल नए छए फूले चहुँ ओर॥
चलु लाज तजु री देखु चमकै बिजुरी
बग-पाँति जुरी मोरा करि रहे सोर।
सोभा कहौ कस री मै तो देखत हारी
भई बलिहारी 'हरिचंद' तृन तोर॥ ४॥

दोउ मिलि झूलैं फूलैं हो कुंज हिंडोरे री सखी।
वृन्दाबन चहुँ ओर सों हो फूल्यौ शोभा देत हो॥
जमुना नीर तीर पर सुन्दर झलमल लहरा लेत हो।

दोहा

बिजुरी चमकै जोर से नभ छाए घनघोर हो।
मोर सोर चहुँ ओर करैं दादुर बन कीनी रोर हो॥
सखी झुलावैं प्रेम सों हो पहिरे रँग रँग चीर हो।
झूलैं प्यारी राधिका सँग पीतम श्याम सरीर हो॥
सोभा नहि कहि जात हो तहँ बढ़्यो सखी आनन्द हो।
लखि गलबाहीं दोऊ को दीने बलिहारी 'हरिचन्द' हो॥
दोउ मिलि झूलैं फूलैं हो कुंज हिंडोरे री सखी॥ ५॥

लावनी

बीत चली सब रात न आए अब तक दिल-जानी।
खड़ी अकेली राह देखती बरस रहा पानी॥

अँधेरी छाय रही भारी ।
सूझत कहूँ न पंथ सोच करै मन मन मे नारी ।।
न कोई समझावनवारी ।
चौंकि चौंकि के उझकि झरोखा झाँक रही प्यारी ।।
बिरह से व्याकुल अकुलानी ।
खड़ी अकेली राह देखती बरस रहा पानी ।।
सूझै पंथ न कही हाथ से हाथ न दिखलाता ।
एक रंग धरती अकास का कहा नही जाता ।।
किसी का बोल नहीं सुनाता ।
बूँद बजैं टपटप मारग कोई नहिं जाता आता ।
सोए घर घर सब पट तानी ।। खड़ी अकेली० ।।
सन सन करके रात खनकती झींगुर झनकारैं ।
कभी कभी दादुर रट कर जिय व्याकुल कर डारै ।।
साँप खँडहर पर ठनकारैं ।
गिरैं करारे टूट टूट के नदी छलक मारै ।।
पिया बिन सब ही दुखदानी ।। खड़ी अकेली० ।।
ठंढी पवन झकोरे आँचल उड़ उड़ फहरावै ।
बिरहिन इत सो उत डोलै कोइ नाहीं जो समुझावै ।
पिय बिन को जो गर लावै ।
'हरीचन्द' बिनु बरसा मे को कसक मिटा जावै ।।
कहाँ बिलमै, को मनमानी ।। खड़ी अकेली० ।।६।।

गजल

न आया वो दिलवर औ आई घटा ।
तो हसरत की बस दिल पै छाई घटा ।।

चढ़ा शाम को बाम पर गर वो माह ।
शफ़क़ का नया रंग लाई घटा ॥
तहे जुल्फ तेरी ये बिजली नहीं ।
चमकती है बिजली है छाई घटा ॥
बहाने से बिजली के छेड़ा मुझे ।
नया राग परदे मे लाई घटा ॥
मुझे तेरी जुल्फो का ध्यान आ गया ।
जो देखी सियह सिर पै छाई घटा ॥
जमीं है 'हरी चन्द' गजले पढ़ो ।
'रसा' देखो कैसी है छाई घटा ॥७॥

मलार

हरि बिनु बरसत आयो पानी ।
चपला चमकि चमकि डरवावत मोहि अकेली जानी ॥
रात अँधेरी हाथ न सूझै मै बिरहिनी बिलखानी ।
'हरीचन्द' पिय-बिनु बरसा मै हाथ मीजि पछतानी ॥८॥

ऊधो हरि जू सों कहियो जाइ हो जाइ ।
बिनु तुव प्रान परे संकट मैं घट सो निकसत आइ हो आइ ॥
बढ़त बिरह दुख छिन छिन मोहन रोअत पछरा खाइ हो खाई ।
'हरीचन्द' व्याकुल व्रज देखत बेगहि आओ धाइ हो धाइ ॥९॥

पिय-बिनु सूनी सेजिया साँपिन सी मोरा जियरा डसि डसि लेत ।
रैन डरारी कारी भारी व्याकुल पिय-बिनु चेत ॥
तड़पत करवट लेत अकेली धीर कोऊ नहि देत ।
पिय 'हरिचन्द' बिना को गरवाँ लगि कै हाय निवाहै हेत ॥१०॥

ठुमरी हिंडोले की

लचकि मचकि दोउ झूलि रहे जमुना-तट सुरँग हिंडोरे में ।

ब्रज-नारी सब आई मिलि झूलन को पहिरे चुनरी रँग बोरे में ।।
बरसत घन बूँद परैं छतियाँ बहै सीतल पवन झकोरे मे ।
'हरीचन्द' कहा छवि बरनि सकै सुख बाढ्यो प्रेम-हलोरे मे ।।११।।

खेमटा

कहनवा मानो हो दिल-जानी ।
निसि अँधियारी कारी बिजुरी चमकै रुम झुम बरसत पानी ।।
हाथ जोर ठाढ़ी अरज करत हौ सुनत नही मेरी बानी ।
तुम ही अनोखे बिदेस-जवैया 'हरीचन्द' सैलानी ।।१२।।

न जाय मो सो ऐसो झोका सहीलो न जाय ।
झुलाओ धीरे डर लागै भारी बलिहारी हो
बिहारी मो सो ऐसो झोका सहीलो न जाय ।
देखो कर धर मेरी छाती धर धर करै
पग दोउ रहे थहराय हाय ।
'हरीचन्द' निपट मै तो डरि गई प्यारे
मोहि लेहु झट गरवाँ लगाय ।। न जाय० ।।१३।।

सोरठ

मेरे नैनों का तारा है, मेरा गोबिन्द प्यारा है ।
वो सूरत उसकी भोली सी वो सिर पगिया मठोली सी,
वो बोली मै ठठोली सी बोलि दृग बान मारा है ।।
व घूँघरवालियाँ अलकै व झोकेवालियाँ पलकैं,
मेरे दिल बीच हलकै छुटा घर-बार सारा है ।
दरस सुख रैन दिन लूटै न छिन भर तार यह टूटै,
लगी अब तो नही छूटै प्रान 'हरिचन्द' वारा है ।
मेरे नैनों का तारा है, मेरा गोबिन्द प्यारा है ।।१४।।

मेरी हरि जी सों कहियो बात हो बात ।
तुम बिन ब्रज सूनो मेरे प्यारे अब देख्यौ नहि जात हो जात ॥
सूखी लता पेड़ मुरझाने गउ भई दुबरे गात हो गात ।
जमुना जरित बृन्दाबन उजर्यौ पीरे भए सब पात हो पात ॥
जसुदा-नन्द बिकल रोअत हैं कहि कहि के हा तात हो तात ।
सो दुख देख्यौ जात न नैनन देखि दुखी तुव मात हो मात ॥
ब्रज-नारिन की दसा कहा कहौं रोअत बीतत रात हो रात ।
'हरीचन्द' मिलि जाओ पियारे करौ न हम सों घात हो घात ॥१५॥

एतो हरि जी सों कहियो रोय हो रोय ।
तुम बिन रहत सदा ब्रज - सुन्दरि
अँसुअन सों पट धोय हो धोय ॥
निस-दिन बिरह सतावत ब्याकुल
रही हैं सब सुख खोय हो खोय ।
'हरीचन्द' अब सहि न सकत दुख
होनी होय सो होय हो होय ॥१६॥

संस्कृत की कजली

हरि हरि हरिरिह विहरत कुंजे मन्मथ मोहन बनमाली ।
श्री राधाय समेतो शिखिशेखर शोभाशाली ॥
गोपीजन-बिधुबदन-व्रनज-बन मोहन मत्तालो ।
गायति निज दासे 'हरिचन्दे' गल-जालक माया-जाली ॥१७॥

हरि हरि धीर समीरे विहरति राधा कालिंदी-तीरे ।
कूजति कल कलरव केकावलि-कारंडव-कीरे ॥
वर्षति चपला चारु चमत्कृत सघन सुघन नीरे ।
गायति निज पद-पद्मरेणु-रत कविवर 'हरिश्चन्द्र' धीरे ॥१८॥

मलार

मेरे गल सों लग जाओ प्यारे घिरि आई बदरिया घोर ।
बड़ी बड़ी बूँदन बरसन लागी बोलत दादुर मोर ।।
बिजुरी चमक देखि जिय डरपै पवन चलत झकझोर ।
'हरीचंद' पिय कंठ लगाओ राखो अपनी कोर ।।१९।।

आज घन अगगग गरजै हो सुनि सुनि कै जिय लरजै ।
बड़ी बड़ी बूँद घिरि घिरि बरसै बिजुरी तरजै ।।
ऐसी समय पिय कंठ न लागत मानत नहिं मेरी अरजै ।
'हरीचन्द' पिय जात बिदेसवाँ कोइ नहीं बरजै ।।२०।।

सावन आयो मन-भावन पिय बिनु रह्यो न जाय ।
घन की गरज सुन लरजौं मिलन को जिय ललचाय ।।
खबर न आई पिय प्यारे की करौं मै कौन उपाय ।
'हरीचंद' पिया को जो पाऊँ लेहुँ मै गरवाँ लाय ।।२१।।

ऊधो जी मिलाओ पियारे को हमहिं सुनाओ न जोग ।
हम नारी जोग का जानै हो हमरे लेखे सो रोग ।।
बरसा आई बन हरे भए घर फिरे पंथी लोग ।
'हरीचंद' लाओ मेरे श्यामहि मिटै बिरह-दुख-सोग ।।२२।।

ऐसे सावन मे सँवलिया मोरा जोबन लूटे जाय ।
नैन-बान घायल करि दीनो जुलुफन बीच फँसाय ।।
मुख मोरा चूमि करै मन-मानी गरवा लेत लगाय ।
सरबस रस लेके 'हरिचन्द' बेदरदी खड़ा खड़ा मुसकाय ।।२३।।

मलार की ठुमरी

कुंजन में मोहिं पकरी री।
ए माई री ढीठ मोहन पिया गरे लागे
जो जो जिय आई सोई सोई करी री॥
मैं निकसी दधि बेंचन कारन,
औचकि आइ गही गिरधारन बरजि रही री।
मेरो बरज्यौ न मान्यो
बरजोरी कर बहियाँ धरो री॥
'हरीचंद' अति लँगर कन्हाई,
करत फिरत ब्रज मे मन-भाई,
ना जानौ कैसे ऐसे ढीठ लँगर के धोखे फन्द परी री॥२४॥

तरजीह-बंद

चमक से बर्क़ के उस बर्क़-वश की याद आई है।
घुटा है दम घटी है जाँ घटा जब से ये छाई है॥
कौन सुनै कासो कहो सुरति बिसारी नाह।
बदाबदी जिय लेत हैं ए बदरा बदराह॥
बहुत इन जालिमों ने आह अब आफत उठाई है।
अहो पथिक कहियो इती गिरधारी सों टेर।
दृग झर लाई राधिका अब बूड़त ब्रज फेर॥
बचाओ जल्द इस सैलाब से प्यारे दुहाई है॥
बिहरत बीतत स्याम सँग जो पावस की रात।
सो अब बीतत दुख करत रोअत पछरा खात॥
कहाँ तो वह करम था अब कहाँ इतनी रुखाई है।
बिरह जरी लखि जोगनिनि कहै न उहि कइ बार।
अरी आव भजि भीतरैं बरसत आजु अँगार॥

नहीं जुगनूँ हैं यह बस आग पानी ने लगाई है ॥
लाल तिहारे बिरह की लागी अगिन अपार।
सरसैं बरसैं नीरहूँ मिटै न झर झंझार ॥
बुझाने से है बढ़ती आग यह कैसी लगाई है।
बन बागन पिक बटपरा तकि बिरहिन मन मैन।
कुहौ कुहौ कहि कहि उठै करि करि राते नैन ॥
गजब आवाज ने इन जालिमो के जान खाई है ॥
पावस घन अँधियार मैं रह्यौ भेद नहि आन।
राति द्योस जान्यो परै लखि चकई चकवान ॥
नहीं बरसात है यह इक क़यामत सिर पर आई है।
पावक-झर ते मेह-झर दावक दुसह बिसेखि।
दहै देह वाके परस याहि दृगनही देखि ॥
लगी है जिनकी लौ तुमसे बस उनकी मौत आई है ॥
धुरवा होहि न अलि यहै धुआँ धरनि चहुँ कोद।
जारत आवत जगत कों पावस प्रथम पयोद ॥
नहीं बिजली है यह इक आग बादल ने लगाई है।
वेई चिरजीवी अमर निधरक फिरौ कहाइ।
छिन बिछुरे जिन के न इहि पावस आयु सिराइ ॥
यहाँ तो जाँ-ब्लब है जबसे सावन की चढ़ाई है ॥
बामा भामा कामिनी कहि बोलौ प्रानेस।
प्यारी कहत लजात नहिं पावस चलत बिदेस ॥
भला शरमाओ कुछ तो जी में यह कैसी ढिठाई है।
रटत रटत रसना लटी तृषा सूखिगे अंग।
तुलसी चातक प्रेम को नित नूतन रुचि रंग ॥
दिलो पर खाक उड़ती है मगर मुँह पर सफाई है ॥
बरखि परुख पाहन पयद पंख करो टुक टूक।

तुलसी परो न चाहिए चतुर चातकहि चूक ॥
जबाँ पर तेरे आशिक के भला कब आह आई है ।
दुखित धरनि लखि बरसि जल घनउ पसीजे आय ।
द्रवत न तुम घनस्याम क्यौं नामे दयानिधि पाय ॥
खुदा ने बुत तेरी पत्थर की बस छाती बनाई है ॥
जौ घन बरसै समय सिर जो भरि जनम उदास ।
तुलसी जाचक चातकहि तऊ तिहारी आस ॥
सिवा खंजर यहाँ कब प्यास पानी से बुझाई है ।
चातक तुलसी के मते स्वातिहु पियै न पानि ।
प्रेम-तृषा बाढ़त भली घटे घटैगी कानि ॥
शहीदों ने तेरे बस जान प्यासे ही गँवाई है ॥
ऐसो पावस पाइहू दूर बसे ब्रजराइ ।
आइ धाइ 'हरिचन्द' क्यौ लेहु न कंठ लगाइ ॥
'रसा' मंजूर मुझको तेरे कदमों तक रसाई है ॥२५॥

राग मलार

वृन्दाबन करो दोउ सुख-राज ।
फिरौ निसंक दिए गल-बहियाँ लीने सखी-समाज ॥
बिहरो कुंज कुंज तरु तरु तर पुलिन पुलिन तजि लाज ।
प्रति छन नए सिगार बनाओ सजौ सकल सुख-साज ॥
छिन छिन बढ़ौ प्रेम प्रेमिन को पुरवहु सगरो काज ।
'हरीचंद' की रानी (श्री) राधे गोपराज महराज ॥२६॥

भीजत साँवरे सँग गोरी ।
अरस परस बातन रस भूली बाँह बाँह मै जोरी ॥
कदम तरे ठाढ़े दोउ ओढ़े एकहि अरुन पिछोरी ।
चुअत रंग अँग बसन लपटि रहे भीजि भींजि दुहुँ ओरी ॥

जल-कन स्रवत सगवगी अलकन करत जुगुल चित-चोरी ।
गावत हँसत रिझावत हिलि-मिलि पुनि पुनि भरत अँकोरी ॥
बरसत घेरि घेरि घन उमँगे चपला चमक मचो री ।
बोलत मोर कोकिला तरु पर पवन चलत झकझोरी ॥
अति रस रहस बढ़्यो बृन्दावन हरित भूमि तरु खोरी ।
'हरीचन्द' छवि टरत न दृग तें निरखि भीजती जोरी ॥२७॥

बरषा मे कोउ मान करत है
तू कित होत सखी री अयानी ।
यह रितु पीतम-गर लागन की
तू रूसत कित होइ सयानी ॥
देखु न कैसी छइ अँधियारी
बरसि रह्यो रिमझिम लखु पानी ।
'हरीचन्द' चलि मिलु पीतम सो
लूट न रति-सुख पिय-मन-मानी ॥२८॥

डरपावत मोरवा कूकि कूकि ।
पावस रितु बरसत कछु बादर पवन चलत है झूकि झूकि ॥
पिय बिनु जानि अकेली मो कहँ देत मदन तन फूँकि फूँकि ।
'हरीचन्द' बिनु हरि कामिनि के उठत बिरह की हूकि हूकि ॥२९॥

पछितात गुजरिया, घर मे खरी ।
अब लगि श्याम सुँदर नहि आए दुखदाइनि भइ रात अँधरिया ॥
बैठत उठत सेज पर भामिनि पिय बिन मोरी सूनी अटरिया ।
'हरीचन्द' हरि के आवतही बसि गई मोरी उजरी नगरिया ॥३०॥

दियो पिय प्यारी को चौंकाय ।
सुख सोये मिलि जुगल अटारिन अंग अंग लपटाय ॥

इन घन गरजि बरसि बूँदन दिये कॉची नींद जगाय।
अलसाने नहि उठत सेज ते भीजि रहे अरुझाय।
'हरीचन्द' छतना लै कीनों क्योंहूँ बचन उपाय ॥३१॥

डरत नहि घन सों रति-रस-माते।
हार्यौ बरसि गरजि बहु भाँतिन टरै न बीर तहाँ ते ॥
गिरवर अटा सुहावनि लागत बन दरसात जहाँ ते।
तहँई जुगल लपटि रस सोए नींद भरे अलसाते ॥
रस-भीने आलस सों भीने भोने जल बरसाते।
औरहु गाढ़ अलिगन करि कै सोए सुखद सुहाते ॥
भोर भयो नहि गिनत सखी-गन लखि कै कछु सकुचाते।
'हरीचन्द' घन दामिनि हारी जीति जुगल इतराते ॥३२॥

प्रीत तुव प्रीतम कौ प्रगटैयै।
कैसे कै नाम प्रगट तुव लीजे कैसे कै बिथा सुनैयै ॥
को जानै समुझै जग जिन सों खुलि कै भरम गँवैयै।
प्रगट हाय करि नैनन जल भरि कैसे जगहि दिखैयै ॥
कबहुँ न जानै प्रेम-रीति कोउ सुख सो बुरे कहैयै।
'हरीचन्द' पै भेद न कहियै भले ही मौन मरि जैयै ॥३३॥

आजु झलक प्यारे की लखि कै मो घर महा मंगल भयो आली।
जद्यपि हौं गुरुजन के भय सो नीके नहि चितए बनमाली।
उठे कुंज सो मरगजे बागे जागे आवत रति-रन-साली।
हौं भय सों सखियन के चितई लोचन भरि नहि रोचन लाली।
उनहूँ नैन कोर हँसि चितई मन लै गए ठगौरी घाली।
'हरीचन्द' भयो भोरहि मंगल कारज ह्वैहै सिद्ध सुखाली ॥३४॥

हमारी श्री राधा महारानी ।
तीन लोक को ठाकुर जो है ताहू की ठकुरानी ॥
सब ब्रज की सिरताज लाडिली सखियन की सुखदानी ।
"हरीचन्द' स्वामिनि पिय कामिनि परम कृपा की खानी ॥३५॥

मलार खेमटा

पथिक की प्रीति को का परमान ।
रैन बसे इत ओर चले उठि मारि नैन को बान ॥
ये काहू के भये न होयँगे स्वारथ लोभी जान ।
'हरीचन्द' इनकै फन्दन परि बृथा गँवैये प्रान ॥३६॥

हिंडोरना आजु झकोरवा लेत ।
झूलत श्यामा-श्याम रँग-भरे लपटि बढ़ावत हेत ॥
बरसत घन तन काम जगावत गावत तारी देत ।
'हरीचंद' अरुझे पिय प्यारी बीर सुरत-रन-खेत ॥३७॥

परज

घेरि घेरि घन आए कुंज कुंज छाइ धाए
ऐसी या समय कोउ मान करै बाउरी ।
देखि तो कुंज की सोभा बोलि रहे मोर
कीर हरी भूमि भई संग चलि आउ री ॥
पावस रितु सबै नारी मिलैं पीतम सों
तू ही अनोखी एतो करत चवाउ री ।
'हरीचंद' बलिहारी मग देखै गिरधारी
उठु चलु प्यारी मति बात बहराउ री ॥३८॥

दोउ मिलि आजु हिंडोले झूलैं ।
कंचन खंभ फूल सो बाँधे सोभित सुभग कलिंदी-कूलैं ॥

झुलवत चहुँ दिसि नवल नागरी सोभा को रतिहूँ नहिं तूलैं ।
गावत हँसत हँसाइ रिझावत पिय-छबि लखि मन ही मन फूलैं ॥
चलत चपल दृग कोर परसपर मेटत कठिन मदन की सूलैं ।
'हरीचन्द' छबि-रासि पिया-पिय दरसत ही जिय दुख उनमूलैं ॥३९॥

राग देश

हिंडोरा कौन झूलै थारे लार ।
तुम अटपटे थारी झूलन अटपटी हूँ तो घणी सुकुमार ॥
तुम झूलौ थाने हूँ जू झुलाऊँ थारो चरित अपार ।
'हरीचंद' ऐसी कहै छे राधिका मोहन-प्रान-अधार ॥४०॥

कजली

दोउ झूलै आजु ललित हिंडोरे सखियाँ ।
लखि सोभा मेरी सुनो री सिरानी अँखियाँ ॥
फूले फूल बहु कुंज झुकि रही डलियाँ ।
तहाँ बोलै मोर कोकिला गावत अलियाँ ॥
परै मंद मंद फुही दीने गल-बहियाँ ।
श्याम भीजत बचावै प्यारी करि छहियाँ ॥
छबि बाढ़ो अनूप तहाँ तीन घरियाँ ।
तन मन 'हरिचन्द' बलिहारी करियाँ ॥४१॥

भारत में एहि समय भई है सब कुछ
बिनहि प्रमान हो दुइ-रंगी ।
आधे पुराने पुरानहि मानें
आधे भए किरिस्तान हो दुइ-रंगी ॥
क्या तो गदहा को चना चढ़ावैं
कि होइ दयानँद जायँ हो दुइ-रंगी ।

क्या तो पढ़ैं कैथी कोठिवलियै
कि होइ बरिस्टर धाय हो दुइ-रंगी ॥
एही से भारत नास भया सब
जहाँ तहाँ यही हाल हो दुइ-रंगी ।
होउ एक मत भाई सबै अब
छोड़हु चाल कुचाल हो दुइ-रंगी ॥४२॥

सखी चलो री कदम्ब तरे छोड़ि काम धाम ।
झूलैं रमकि हिंडोरे जहाँ राधा-घनश्याम ॥
सोभा देखिकै सिराने नयन पूरे मन-काम ।
'हरिचंद' देखो उरझी गरे मे बन - दाम ॥४३॥

एरी सखी झूलत हिंडोरे श्यामा-श्याम विलोको वा कदम के तरे।
एरी सोभा देखत ही बनि आवे बिरिछ सोहैं हरे हरे ॥
एरी तहाँ रमकत प्यारी झूलैं दिये बाँह पिय के गरे ।
एरी छबि देखत ही 'हरिचन्द' नैन मेरे आवत भरे ॥४४॥

देखो भारत ऊपर कैसी छाई कजरी ।
मिटि धूर मे सपेदी सब आई कजरी ॥
दुज बेद की रिचन छोड़ि गाई कजरी ।
नृप-गन लाज छोड़ि मुँह लाई कजरी ॥४५॥

तोरे पर भए मतवार रे नयनवाँ ।
लोक-लाज-जस-अजस न मानैं सरस रूप रिझवार रे नयनवाँ ॥
मदिरा प्रेम पिये मतवारे सब से करत बिगार रे नयनवाँ ।
'हरीचंद' पिय रूप दिवाने करत न तनिक विचार रे नयवनाँ ॥४६॥

बिनु साँवरे पियरवा जिय की जरनि न जाय।
जिय नहि बहलत प्रान-प्रिया-बिनु कीने लाख उपाय ॥
काले बादर देखि बिरह की हूक उठत जिय आय।
'हरीचन्द' स्याम बिनु बादर उलटी आग देत दहकाय ॥४७॥

बिजुरी चमकि चमकि डरवावै मोहि अकेली पिय बिनु जानि।
बादर गरजि गरजि अति तरजै पँच-रँग धनुहीं तानि ॥
मोरवा बैरी कड़खा गावैं मनमथ-बिरद बखानि।
पिय 'हरिचंद' गरें लगि मरत जियाओ अरज लेहु यह मानि ॥४८॥

काहे तू चौका लगाय जयचँदवा।
अपने स्वारथ भूलि लुभाए
काहे चोटी-कटवा बुलाए जयचँदवा।
अपने हाथ से अपने कुल कै
काहे तैं जड़वा कटाए जयचँदवा ॥
फूट कै फल सब भारत बोए
बैरी कै राह खुलाए जयचँदवा।
और नासि तैं आपो बिलाने
निज मुँह कजरी पुताय जयचँदवा ॥४९॥

टूटै सोमनाथ कै मंदिर केहू लागै न गोहार।
दौरो दौरो हिंदू हो सब गौरा करे पुकार ॥
की केहू हिंदू कै जनमल नाहीं की जरि भैलैं छार।
की सब आज धरम तजि दिहलैं भैलैं तुरुक सब इक वार ॥
केहू लगल गोहार न गौरा रोवैं जार-बिजार।
अब जग हिंदू केहू नाही झूठै नामै कै बेवहार ॥५०॥

धन धन भारत के सब छत्री जिनकी सुजस-धुजा फहराय।
मारि मारि कै सत्रु दिए हैं लाखन वेर भगाय ॥
महानंद की फौज सुनत ही डरे सिकन्दर राय।
राजा चन्द्रगुप्त ले आए बेटी सिल्यूकस की जाय ॥
मारि वल्ह्चिन विक्रम रहे शकारी पदवी पाय।
बापा कासिम-तनय मुहम्मद जीत्यौ सिन्धु दियो उतराय ॥
आयो मामूँ चढ़ि हिंदुन पै चौबिस बेरा सैन सजाय।
खुम्मानराय तेहि बाप-सार लखि सब विध दियो हराय ॥
लाहौर-राज जयपाल गयो चढ़ि खुरासान पर धाय।
दीनो प्रान अनन्दपाल पर छाँड्यौ देस धरम नहि जाय ॥५१॥

ध्रुवपद मलार

आयो पावस प्रचंड सब जग मैं मचाई धूम
कारे घन घेरि चारो ओर छाय।
गरजि गरजि तरजि तरजि बीजु चमक चहुँ दिसि
सो बरखत जल-धार लेत धरनि छिपाय ॥
मोर रोर दादुर-रव कोकिल कल झींगुर झनकारन
मिलि चारहु दिसि तुम कलह घोर सी मचाय।
'हरीचंद' गिरिधारी राधा प्यारी साथ लिये
ऐसी समै रहे मिलि कंठ लपटाय ॥५२॥

तेरेई पयान-हित पावस प्रबल आयो
उठि चलि प्यारी देखि छाई अँधियारी भारी।
पथ दिखाइ दामिनी रही चमकि तेरे गवन हेत
रवन संग मिलै क्यो न निसि अति कारी कारी ॥
गोप सबै गेह गए ह्वै गयो इकन्त कुंज
सीरी पौन चलि रही देखि प्यारी प्यारी।

'हरीचंद' मान छोड़ि उठि चलु साथ मेरे
बैठे बाट हेरि रहे पिय गिरधारी वारी ॥५३॥

ख्याल मलार तिताला

ए घिरि घिरि कै मेघवा बरसै,
पिय बिनु मोरा जियरा तरसै।
बड़ी बड़ी बूँदन बरसत धायो घेरि घेरि
चहुँ दिसि तें छायो चपला चमकि मेरे प्रान परसै॥
झोंकत पवन जोर पुरवाई अति अँधियारी कहूँ
पंथ न लखाइ इत उत जुगनूँ चमकत दरसै।
'हरीचंद' पिय गरवाँ लगाओ मेरे तन की तपन
बुझाओ तोहि मिलि मेरो तन मन हरसै ॥५४॥

दूसरी चाल की

देखो बूँदन बरसै दामिनि चमकै घिरि
आए बदरा गरे से लग जाओ।
घन की गरज सुन उमगत मेरो जिय
ऐसी समै मोहिं मत तरसाओ॥
भरि गई नदी भूमि भई हरी हरी
मग भए अगम दूर मत जाओ।
'हरीचंद' बलिहारी मिलो प्यारे गिरधारी
पूरो मनोरथ तपत बुझाओ॥ देखो० ॥५५॥

ख्याल मलार ताल झपक

पिया बिनु बिरह-बरसा आई।
सघन घन दामिनि दमकि संग चमकि जुगनूँ
रमकि बदरन झमकि बरसत बूँद अति झर लाई।

रैन कारी डरारी भारी छाई अँधारी बिनु
पिय बिहारी गिरधारी के प्यारी घबराई ।
'हरीचंद' न धीर धरै पीर भई
भारी बनवारी बिना मुरझाई ॥५६॥

।सूरदासी मलार आड़ा वा तिताला

यह रितु रूसन की नहिं प्यारी ।
देखु न छाय रहे घन झुकि झुकि भूमि छई हरियारी ॥
सीरो पवन चलत गरुई ह्वै काम बढ़ावन-हारी ।
बन उपवन सब भए सुहावन औरहि छबि कछु धारी ॥
फूली जुही मालती महँकी सुनि कोकिल किलकारी ।
लहकि लहकि लपटीं सब बेली पीतम-गल भुज डारी ॥
मगन भए जड़ जीव सबै जब तब तूँ रहति क्यो न्यारी ।
'हरीचंद' गर लगु पीतम के गाढ़े भुज भरि नारी ॥५७॥

सावनी

पिय बिनु सखी नींद न आवै साँपिन सी भई रैन ।
व्याकुल तड़पूँ अकेली पीतम बिनु नहिं चैन ॥
कैसे मैं जीऊँ बिनु प्यारे ही बरसत टप टप नैन ।
'हरीचंद' कटत न सावन मारत मोहन मैन ॥५८॥

धुरपत टोडी वा गौड़ मलार चौताला

ताथेई ताथेई ताथेई नाचै री मदन-मोहन रास रंग
बधुन संग लाग डाँट लेत उरप-तिरप महामोद बढ़्यो
ब्रज-जुवतिन-मध्य आनन्द राँचै री ।
ततधा ततधा ततधा बाजै मृदंग सरस तकिटधा
तकिटधा तकिटधा छबि लखि महा मोद माँचै री ॥

अलाग लाग लेत गावत गुनिजन बंधान
तान मान बँध्यौ थिरक्यौ लय बिच बिच
बाजै मुरलि सुख साँचै री।
छबि लखि शिव मोहे आय नाचत डमरू बजाय
डिमि डिमि डिमि डिमिर डिमिर जस तहाँ
'हरीचंद' बिमल बाँचै री ।। ताथेई० ।।५९।।

लावनी

बरसा रितु सखि सिर पर आई पिय बिदेस छाए ।
हमै अकेली छोड़ आप कुबरी सो बिलमाए ।।
सँदेसे भी नहि भेजवाए ।
वादे पर वादा झूठा कर अब तक नहि आए ।
बिथा सो कही नही जाती ।
पिया बिना मैं ब्याकुल तड़पूँ नीद नहीं आती ।।
रात अँधेरी पंथ न सूझै घोर घटा छाई ।
रिमझिम रिमझिम बूँदै बरसैं झोकै पुरवाई ।।
पपीहन पी पी रट लाई ।
सुधि कर पीतम प्यारे की मेरी अँखियाँ भरि आई ।
बिरह से दरकी सखि छाती ।
पिया बिन मै ब्याकुल तड़पूँ नीद नही आती ।
बाग बगीचे हरे भरे सब फूली फुलवारी ।
भरे तलाब नदी नद नारे मिटी राह सारी ।।
बिपति यह पड़ी सखी भारी ।
कैसे आवैं मोहन उन बिन ब्याकुल मै नारी ।
याद कर तबियत घबराती ।
पिया बिन मै ब्याकुल तड़पूँ नीद नही आती ।
जुगनूँ चमकै चार दिसा मे भई बड़ी सोभा ।

हरी भूमि पर बीर-बहूटी देखत मन लोभा ॥
नए नए बिरछन के गोभा ।
देख देख के कामदेव मेरे जिय मारै चोभा ॥
हुई जोवन-मद से माती ।
पिया बिना मैं व्याकुल तड़पूँ नीद नही आती ॥
बरसा रितु मे पीतम के सँग फिरैं सभी नारी ।
झूलैं बागों जाय हिंडोरा गावैं दै तारी ॥
पहिन के रँग रँग की सारी ।
मै किसके सँग सोऊँ सखी री बिपति बढ़ी भारी ॥
करूँ क्या तबियत लहराती ।
पिया बिना मैं व्याकुल तड़पूँ नीद नही आती ॥
दादुर बोलैं नाचै मोरा बरसा रितु जानी ।
बिजुली चमकै बादल गरजै बरस रहा पानी ॥
सेज सूनी लखि पछितानी ।
हाथ पटक पाटी पर रो रो पिय बिन बिलखानी ।
कोई नहिं आकर समझाती ।
पिया बिना मै व्याकुल तड़पूँ नीद नही आती ॥
कहाँ जाऊँ क्या करूँ कोई ततबीर न दिखलाती ।
खड़ी द्वार पर राह देखती मीजत पछताती ॥
न भेजी अब तक भी पाती ।
'हरीचंद' को जाके कोई इतना तो समझाती ।
कटै कैसे दुख की राती ।
पिया बिना मै व्याकुल तड़पूँ नीद नही आती ॥६०॥

बारह मासा

पिय गए बिदेस सँदेस नहिं पाय सखी मन-भावनी ।
लाग्यो असाढ़ बियोग बरसा भई अरम्भ सुहावनी ॥

अदरा लगी बदरा घुमड़ि रहे बिपति यह उनई नई ।
बिनु श्याम सुंदर सेज सूनी देख के ब्याकुल भई ॥

सावन सुहावन दुख-बढ़ावन गरजि घन बन घेरही ।
दामिनि दमकि जुगुनूँ चमकि मोहिं दुखी जान तरेरही ॥
पपिहा पिया को नाम रटि रटि काम-अगिन जगावई ।
बिनु श्याम सुंदर सेज सूनी देख के ब्याकुल भई ॥

भादों अँधेरी रात टपकै पात पर पानी बजै ।
डरि काम के भय सुन्दरी मिलि नाह सों सेजिया सजै ॥
मै भीजि मारग देखि पिय को रोय तजि आसा दई ।
बिनु श्याम सुंदर सेज सूनी देख के ब्याकुल भई ॥

सखि क्वार मास लग्यौ सुहावन सबै साँझी खेलही ।
निसि चन्द पूरन चाँदनी मे नाह गह भुज मेलही ॥
मोहिं चाँदनी भई धूप रोअत रात बीति सबै गई ।
बिनु श्याम सुंदर सेज सूनी देख के ब्याकुल भई ॥

कातिक पुनीत नहाइ सब दै दीप उँजियारी करैं ।
हम प्रान-पिय-बिनु बिकल बिरहागिनि दिवारी सी जरैं ॥
अँधियार पिय बिनु हिए चौपड़ कौन हँसि हँसि खेलई ।
बिनु श्याम सुंदर सेज सूनी देख के ब्याकुल भई ॥

अगहन लग्यौ पाला पड़्यौ सब लपटि पिय सों सोवही ।
बिनु प्रान-प्रियतम मिले हम करि हाय बहु बिधि रोवही ॥
दो भए बिन इक रैन आली लाख जुग सी लागई ।
बिनु श्याम सुंदर सेज सूनी देख के ब्याकुल भई ॥

सखि पूस लाग्यौ रूस बैठे प्रानपिय औरे कहीं ।
यह रात जाड़े की बिना पिय साथ के बीतत नही ॥
उन निठुर सब सुख छीनि हमरो राह मधुबन की लई ।

बिनु श्याम सुन्दर सेज सूनी देख के व्याकुल भई ।।

सखि माघ में कोयल कुहूकी काम को आगम भयो ।
फूली बसन्त सुखेत सरसो आम बन बौर्‍यौ नयो ।।
यह पंचमी तिहवार की भई हाय दुखदाइनि दई ।
बिनु श्याम सुंदर सेज सूनी देख के व्याकुल भई ।।

फागुन महीना मस्त सब मिलि निलज गारी गावही ।
डारैं अबीर गुलाल चोवा रंग संग उड़ावही ।।
बिनु प्रान-पिय मै आप बिरहिनि होय होरी जरि गई ।
बिनु श्याम सुंदर सेज सूनी देख के व्याकुल भई ।।

सखि चैत चाँदनि लगी सुखद बसंत ऋतु बन आइयो ।
चटके गुलाब सुहावने जग काम को बल छाइयो ।।
बिनु प्रानपिय दुख दुगुन भयो मनो आज भइ बिरहिन नई ।
बिनु श्याम सुंदर सेज सूनी देख के व्याकुल भई ।।

बैसाख मास अरम्भ ग्रीषम औरहू दुख बाढ़ही ।
इक तो बियोगिन आप दूजे दुसह ग्रीषम डाढ़ही ।।
बन नयो पल्लव काम-बान समान उर बेधा दई ।
बिनु श्याम सुंदर सेज सूनी देख के व्याकुल भई ।।

सखि जेठ मे दिन भयो दूनो कटत कोऊ विधि नही ।
बन पात पातन ढूँढ़ि हारी नहि मिले प्यारे कही ।।
पाती न पाई श्याम की सखि बयस सब योंही गई ।
बिनु श्याम सुंदर सेज सूनो देख के व्याकुल भई ।।

इमि खोजि बारह मास पिय को हारि भामिनि भौनही ।
धरि रूप जोगिन को रही औलम्ब करि इक मौनही ।।
'हरिचंद' देख्यौ जगत को सब एक पिय मोहन-मई ।
बिनु श्याम सुंदर सेज सूनी देख के व्याकुल भई ।।६१।।

कजली

मोहि नंद के कँधाई बेलमाई रे हरी।
बहे पुरवाई औ बदरिया झुकि आई रामा,
कुंज मे बुलाई बृजराई रे हरी।
बँसिया बजाई सुनि सखी उठि आई रामा,
सब जुरि आई रस बरसाई रे हरी।
माधवी भी जाई जिय अति हुलसाई रामा,
कजरी सुनाई मन भाई रे हरी।
मिलु उर लाई प्यारी पिय को लुभाई रामा,
नाहि 'हरीचंद' पछताई रे हरी ॥६२॥

मलार

हरि बिनु काली बदरिया छाई।
बरसत घेरि घेरि चहुँ दिसि ते दामिनि चमक जनाई ॥
कोइलि कुहुकि कुहुकि हिय मेरे बिरहा-अगिन बढ़ाई।
दादुर बोलत ताल-तलैयन मानहुँ काम-बधाई ॥
कौन देस छाये नँद-नन्दन पातीहू न पठाई।
'हरीचंद'-बिनु बिकल बिरहिनी परी सेज मुरझाई ॥६३॥

सखी फिरि पावस की ऋतु आई।
पिया बिना फिर पी पी करि कै इन पापिन रट लाई ॥
फिर बदरी झुकि झुकि कै आई बिपति-फौज उठि धाई।
देखि अकेली कुटिल काम फिर खीचि कमान चढ़ाई ॥
फिर बरसत वैसी ही बूँदैं चहुँ दिसि सो झरि लाई।
फिर दुख-नदी उमड़ि हियरा सौं नैनन के मग आई ॥
फिर चमकी चपला चहुँधा ते बिरहिन फेरि डराई।
फिर इन मोरन बोलि बोलि कै मोहन-सुधि जु दिवाई ॥

फिर ये कुंज हरे भए देखियत जहँ हरि केलि कराई ।
'हरीचंद' फिर विकल बिरहिनी परी सेज मुरझाई ॥६४॥

फिरि आई बदरी कारी, फिर तलफैंगे पापी प्रान ।
बिनु पिय बची फेर याही दुख देखन के हित नारी ॥
अति व्याकुल तलफत कोउ नाहिन कछु समुझावन-हारी ।
देखि दसा रोवत द्रुम-बेली धीर सकत नहि धारी ॥
कोकिल-कूक सुनत हिय फाटत क्यौं जीवै सुकुमारी ।
'हरीचंद' बिनु को समुझावै कहि कहि प्रान-पियारी ॥६५॥

मो मन श्याम घटा सी छाई ।
बरसत है इन नैनन के मग पिय बिनु बरसा आई ॥
मन-मोहन बिछुरे सो सब जग सूनो परत लखाई ।
'हरीचंद'-बिनु प्रान बचन को नाहि लखात उपाई ॥६६॥

राग मलार, चौताला

श्याम घटा छाई श्याम श्याम कुंज भयो
श्यामा-श्याम ठाढ़े तामैं भीजत सोहै ।
तैसिय श्याम सारी प्यारी तन सोहै भारी
छबि देखि काम-बाम चंचलाहू मोहै ॥
तैसोई मकुट मानों घन दामिनि पर
बग-पंगति तापै मोर नचो है ।
'हरीचंद' बलिहारी राधा अरु गिरधारी
सो छबि कहि सकै ऐसो कवि को है ॥६७॥

राग मलार

अनोखी तुही नई एक नारि ।
पावस रितु मैं मान करै कोउ लखि तो हृदै बिचारि ।
जोगीहू घन घटा देखिकै धावत ध्यान बिसारि ॥

बड़े बड़े ज्ञानी बैरागी करत भोग तप हारि।
तू कामिनि क्यौं धीर धरत है यह अचरज मोहि भारि॥
कर जोरे गिरधर पिअ ठाढ़े करत बहुत मनुहारि।
'हरीचंद' हठ छोड़ि दया करि भुज भरि कोप बिसारि॥६८॥

खंडिता

आजु तौ जँभात प्रात दोऊ दृग अलसात
भीजत भींजत लाल आए मेरे अँगना।
लटपटी पाग ते कुसुँभी रँग बरसि रह्यौ
अकेले कहाँ ते आए सखा कोऊ सँग ना॥
निसि के उनींदे जागे कौन तिया-रस पागे
देखो तौ कपोलन पै रह्यौ कहुँ रँग ना।
'हरीचंद' बलिहारी देखियै जू गिरधारी
नील पट अरुझ्यौ है काहू को कँगना॥६९॥

सारंग

आजु ब्रज बाजत महा बधाई।
परम प्रेमनिधि श्री चन्द्रावलि चद्रभानु नृप-जाई॥
प्रफुलित भई कुंज द्रुम-बेली कीरादिक सुख पाई।
परम रसिक-बर नन्दलाल-हित प्रगट भूमि पै आई॥
चन्द्रभानु नृप दान देत बहु हय गय सकल लुटाई।
चन्द्रकला रानी सुखदानी ताकी कूख सिराई॥
आये नन्दादिक सब मिलिकै महीभान घर धाई।
प्रगटी सखी स्वामिनी की ब्रज सब मिलि नाचत गाई॥
चंपक-लता बहुरि चन्द्रावलि तनया जुगुल सुहाई।
प्रगटे ब्रज सुतहू ते दूनो करत उछाव बनाई॥

गुप्त रूप कोउ लखत नही कछु भेद न जान्यौ जाई ।
'हरीचंद' श्री विट्ठल-पद लखि लख्यो भेद सुखदाई ॥७०॥

आजु व्रज दूनो बढ़्यो अनंद ।
भादौं सुदी पंचमी स्वाती बुध प्रगटे जदु-चन्द ॥
अग्रज श्री गिरिधारन जू के लीला ललित अमंद ।
रोहिनि माता उदर प्रगट भये हरन भक्त के दंद ॥
दान देत हर्षे नँद - जसुमति हय गय रतनन कंद ।
'हरीचंद' अलि आनँद फूले गावत देव सुछंद ॥७१॥

असावरी

आनँद-सागर आजु उमड़ि चल्यो व्रज मे प्रगटे आइ कन्हाई ।
नाचत ग्वाल करत कौतूहल हेरी देत कहि नन्द दुहाई ॥
छिरकत गोपी गोप सबै मिलि गावत मंगलचार बधाई ।
आनँद भरे देत कर-तारी लखि सुरगन कुसुमन झर लाई ॥
देत दान सन्मान नंद जू अति हुलास कछु वरनि न जाई ।
'हरीचंद' जन जानि आपुनो टेरि देत सब बहुत बधाई ॥७२॥

यथा-रुचि

आजु व्रज होत कुलाहल भारी ।
बरसाने बृषभानु गोप के श्री राधा अवतारी ॥
गावत गोपी रस मै ओपी गोप बजावत तारी ।
आनँद-मगन गिनत नहि काहू देत दिवावत गारी ॥
देत दान सम्मान भान जू कनक माल मनि सारी ।
जो जाँचत तासों बढ़ि पावत 'हरीचंद' बलिहारी ॥७३॥

आजु बन ग्वाल कोऊ नहि जाई ।
कहत पुकारि सुनौ री भैया कीरति कन्या जाई ॥

लावहु गाय सिगरि बच्छ सह सुबरन सींग मढ़ाई।
मोर-पंख मखतूल झूल धरि अँग अँग चित्र कराई॥
आजु उदय साँचो सब गावहु मिलिकै गीत बधाई।
'हरीचंद' वृषभानु बवा सो बहुत निछावरि पाई॥७४॥

आनंदे सुख हेरि हेरि।
ब्रज-जन गावत देत बधाये नचत पिछौरी फेरि फेरि॥
उनमत गिनत न ग्वाल कछू ब्रज सुन्दरि राखी घेरि घेरि।
हेरी दै दै बोलत सबही ऊँचे सुर सो टेरि टेरि॥
छिरकत हँसत हँसावत धावत राखत दधि-घृत झेरि झेरि।
'हरीचंद' ऐसो मुख निरखत तन-मन वारत बेरि बेरि॥७५॥

आनँद आजु भयो बरसाने जनमी राधा प्यारी जू।
त्रिभुवन सुखदानी ठकुरानी जननी जनक-दुलारी जू॥
सुर नर मुनि जेहि ध्यान धरत है गावत बेद पुकारी जू।
सो 'हरिचंद' बसत बरसाने मोहन प्रान-अधारी जू॥७६॥

राग बिलावल

आजु भौन बृषभानु के प्रगटी श्रीराधा।
दूरि भई है री सखी त्रिभुवन की बाधा॥
को कबि जो छबि कहि सकै कछु कहि नहि आवै।
आनँद अति परगट भयो दुख दूरि बहावै॥
डारहि सब ब्रज-गोपिका तन-मन-धन वारी।
'हरीचंद' श्री राधिका-पद पै बलिहारी॥७७॥

भैरव

आजु तौ आनन्द भयो का पै कहि जावै।
झूलैं सब गोपि-ग्वाल इत उत बहु डोलैं॥

बाढ़यो अति हिय हुलास जय जय मुख बोलैं।
पहिरि पहिरि सुरँग सारी आई ब्रज-नारी ॥
गावैं हिय मोद भरी दै दै कर-तारी।
दान देत भानु राय जाको जो भावै ॥
'हरीचंद' आनँद भरि राधा-गुन गावै ॥७८॥

कान्हरा

आई भादौं की उँजियारी।
आनँद भयो सकल ब्रज-मंडल प्रगटी श्री वृषभानु-दुलारी ॥
कीरति जू की कोख सिरानी जाके घर प्यारी अवतारी।
'हरीचंद' मोहन जू की जोरी बिधना कुँवरि सँवारी ॥७९॥

आजु बरसाने नौबत बाजैं।
बीन मृदंग ढोल सहनाई गह गह दुंदुभि गाजैं ॥
सब ब्रज-मंडल शोभा बाढ़ी घर घर सब सुख साजै।
'हरीचंद' राधा के प्रगटे देव-बधू सब लाजै ॥८०॥

आजु ब्रज आनँद बरसि रह्यो।
प्रगट भई त्रिभुवन की शोभा सुख नहि जात कह्यो ॥
आनँद-मगन नही सुधि तन की सब दुख दूरि बह्यो।
'हरीचंद' आनन्दित तेहि छन चरन की सरन गह्यो ॥८१॥

आजु कहा नभ भीर भई ?
सजनी कौन फूल बरसावै सुख की बेलि बई ?
बालक से चारहु को आये ? तीन नयन को को है ?
ओढ़ि बघम्बर सरप लपेटे जटा धरे सिर सोहै ?
तीन चार अरु पंच सप्त षटमुख के मिलि क्यो नाचैं ?
बड़ी जटा मुख तेज अनूपम को यह बेदहि बाँचै ?

बीन बजावति कौन लुगाई हंस चढ़ी क्यों डोलै ?
को यह यंत्र बजाय रही है जै जै जै जै बोलै ?
को यह लिये तमूरा ठाढ़ो को नाचै को गावै ?
इत आवै कोउ बात न पूछत पुनि नभ लौं चलि जावै ?
अति आचरज भरीं सब तन मे बात करैं ब्रज-नारी।
प्रगट भई बृषभानु राय घर मोहन-प्रान-पियारी।
आनँद बढ़्यो कहत नहि आवै कवि की मति सकुचाई॥
राधा-श्याम-चरन-पंकज-रज 'हरीचंद' बलि जाई॥८२॥

आजु प्रकट भईं श्री राधा आजु प्रकट भईं।
गोपिका मिलि घर-घरन सो भानु-नगर गईं॥
आइ नन्द-जसोमति मिलि होत अधिक अनन्द।
भानु बरसाने उदय भो प्रगट पूरन चन्द॥
होत जय जयकार वहि पुर देव बरषैं फूल।
'हरीचंद' सब गोपिका के मिटे उर के शूल॥८३॥

सारंग

आजु दधि-काँदौ है बरसाने।
छिरकति गोपी-गोप सबै मिलि काहू को नहि माने॥
आनन्दित घर की सुधि भूली हम को है नहि जाने।
दधि-घृत-दूध उड़ै लै सिर सो फिरहि अतिहि सरसाने॥
वह आनँद कापै कहि आवै भयो जौन महराने।
श्री बल्लभ-पद-पद्म-कृपा सो 'हरीचंद' कछु जाने॥८४॥

कजली

श्याम-बिरह मे सूझत सब जग
हम कों श्यामहि श्याम हो इक-रंगी।

जमुना श्याम गोवरधन श्यामहि
श्याम कुंज वन धाम हो इक-रंगो ।।
श्याम घटा पिक मोर श्याम सब
श्यामहि को है काम हो इक-रंगी ।
'हरीचंद' याही तें भयो है
श्यामा मेरो नाम हो इक-रंगी ।।८५।।

मलार

अनत जाइ बरसत इत गरजत बे-काज ।
तुम रस-लोभी मीत स्वारथ के सुनहु पिया व्रजराज ।।
दामिनि सी कामिनि अनेक लिए करत फिरत हौ राज ।
'हरीचंद' निज प्रेम-पपीहन तरसावत महराज ।।८६।।

पिय सँग चलि री हिंडोरे झूल ।
या सावन के सरस महीने मेटि अरी जिय सूल ।।
देखि हरी भई भूमि रही सब बन-द्रुम-बेली फूल ।
यह रितु मानिनि-मान-पतिव्रत देत सबै उन्मूल ।।
होत सँजोगिनि सुख बिरहिन के हिए उठत है हूल ।
'हरीचंद' चल ऐसी समय तू मिलु गहि पिय भुज-मूल ।।८७।।

राग भैरव

प्रात काल व्रज-बाल पनियाँ भरन चली
गोरे गोरे तन सोहै कुसुंभी को चदरा ।
ताही समै घन आए घेरि घेरि नभ छाए
दामिनि दमक देखि होत जिय कदरा ।।
बोलत चातक मोर सीतल चलै झकोर
जमुना उमड़ि चली बरसत अदरा ।

'हरीचंद' बलिहारी उठि बैठो गिरिधारी
सोभा तौ निहारौ चलि कैसे छाए बदरा ॥८८॥

खंडिता

प्रात क्यौ उमड़ि आए कहा मेरे घर छाए
ए जू घनश्याम कित रात तुम बरसे।
गरजत कहा कोऊ डर नहि जैहै भागि
झुकि झुकि कहा रहे चलौ अटा पर से ॥
सजल लखात मानौ नील पट ओढ़ि आए
कहौ दौरे दौरे तुम आए काके घर से।
'हरीचंद' कौन सी दामिनि सँग रात रहे
हम तौ तुम्हारे बिना सारी रैन तरसे ॥८९॥

सारंग

आये व्रज-जन धाय धाय।
नाचत करत कोलाहल सब मिलि तारी दै दै गाय गाय ॥
जुरे आइ सिगरे व्रज-बासी टीको बहु बिधि लाय लाय।
'हरीचंद' आनँद अति बाढ़्यो कहत नंद सो जाय जाय ॥९०॥

आजु भयो अति आनँद भारी।
प्रगटी श्री वृषभानु-दुलारी ॥
गोपी सब टीको लै आवैं।
मिलि मिलि रहसि बधाई गावैं ॥
नाचत गोप देत सब तारी।
तन मन की कछु सुधि न सम्हारी ॥
दान देति हैं मनि-गन हीरा।
हेम पटम्बर पीअर चीरा ॥

सुख बाढ़्यो तेहि छन अति भारी ।
'हरीचंद' छबि लखि बलिहारी ॥९१॥

आजु श्री वल्लभ के आनंद ।
प्रगट भये ब्रज-जन-सुखदायी पूरन परमानंद ॥
गावत गीत सबै ब्रज-बनिता सोहत है मुख-चंद ।
बेद पढ़त द्विजवर बहु ठाढ़े देत असीस सुछंद ॥
गुप्त रूप कोउ प्रगट न जानत हलधर सब सुखकंद ।
गोपीनाथ अनाथ-नाथ लखि मन वारत 'हरिचंद' ॥९२॥

आजु ब्रज होत कोलाहल भारी ।
नंदराय घर मोहन प्रकटे भक्तन के सुखकारी ॥
जित तित ते धाई टीको लै अति आकुल ब्रज-नारी ।
निरखन कारन श्याम नवल ससि उमँगी सजि सजि सारी ॥
गावत गोप चोप भरि नाचत दै दै कै कर-तारी ।
बाजे बजत उड़त दधि माखन छीर मनहुँ धन वारी ॥
दान देत नँदराय उमँगि रस रतन धेनु बिस्तारी ।
'हरीचंद' सो निरखि परम सुख देत अपनपौ वारी ॥९३॥

परज

एरी आज बाजै छे रंग वधावना ।
कीरति-उदर-उदयगिरि प्रगट्यो अद्भुत चन्द्र सोहावना ॥
आजु सुफल भयो नन्द महोत्सव नर-नारी मिलि गावना ।
'हरीचंद' वृषभानु बवा सो प्रेम वधायो पावना ॥९४॥

सारंग

कुंज कुंज रथ डोलै मदन मोहन जू को
श्वेत ध्वजा तामे उड़ि उड़ि सोहै ।

तैसोई सघन घन छाय रहेउ नभ
बीच देखत ही मनमथ-मन मोहै ॥
दौरत में फरहरत पीताम्बर
मनु दामिनि घन नाचै ।
श्वेत ध्वजा बग-पाँति छबि कछु कहि न
जात निरखत अति मन आनंद राचै ॥
द्रुम द्रुम कुंज कुंज बन बन
तीर तीर घूमत रथ फिरि आवै ।
'हरीचंद' बलि जाय छबि देखि सुख
पाय तन मन धन सब वारिकै लुटावै ॥९५॥

बिहाग

गावत रंग-बधाई सब मिलि गावत रंग-बधाई ।
कीरति के प्रकटी श्री राधा मोहन के मन भाई ॥
नर-नारी सब मिलि के आई गावत गीत सुहाई ।
'हरीचंद' कछु जस बरनन करि वहुत निछावरि पाई ॥९६॥

राइसा

गावो सखि मंगलचार बधायो वृषभानु की ।
सुनि चली गृह गृह ते साजनि सबै सजाय ।
बरनि छबि कछु कहि न आवै चन्द उदय भयो आय ॥
भयो अति आनंद तेहि छन कह्यो कापै जाय ।
ग्वाल नाचैं तारि दै दै देत बहुत बनाय ॥
एक गावत एक नाचत एक परसत पाय ।
गारि देत दिवाय सब को सुख कह्यो नहि जाय ॥
देत सब कोऊ बधाई रतन बसन लुटाय ।
रंक भये कुबेर मानहु दान पाइ अघाय ॥

भयो जौन अनंद तेहि छन कौन पै कहि जाय ।
'हरीचंद' बहुत दीनो दान तहाँ बुलाय ॥९७॥

सारंग

ग्वाल सब हेरि हेरि बोलैं ।
कीरति के कन्या जायी यह सुख सों कहि डोलैं ॥
आनँद-मगन गनत नहि काहू माठ दही के रोलैं ।
'हरीचंद' को देत बधाई भक्ति मन मोलैं ॥९८॥

गावत सबै बधाय धाय ।
आनँद भरे करत कौतूहल बहुधा यंत्र बजाय जाय ॥
गोपी आई मंगल कर लै कुमकुम मुखन लगाय गाय ।
श्री-मुख लखि आनंदत सबही नयनन रही बलाय लाय ॥
रावल-गली सुगन्धिन छिरकी बहु विधि बसन बिछाय छाय ।
'हरीचद' सोभा लखि सुर नभ तिय सब रही लुभाय भाय ॥९९॥

यथा-रुचि

गोकुल प्रकटे गोकुलनाथ ।
प्रमुदित लता गोवर्द्धन जमुना सब ब्रजवासी किये सनाथ ॥
इक गावत इक ताल बजावत इक नाचत गहि गहि कै हाथ ।
एक बसन पट देत बधाई इक लावत घसि चन्दन माथ ॥
आनँद उमगे गनत न काहू बाल बृद्ध सब एकहि साथ ।
'हरीचंद' सुर फूलन बरषत सुक नारद गावत गुन-गाथ ॥१००॥

परज

घर घर आजु बधाई बाजै ।
टीको लै आवति ब्रज-बनिता कीरति को घर राजै ॥
इक गावत इक करत कोलाहल मनु पायो है राजै ।
'हरीचंद' छबि कहि नहि आवै कबि-मति या थल लाजै ॥१०१॥

यथा रुचि

चंद्रभानु घर बजत बधाई।
श्री चंद्रावलि ब्रज प्रकटाई॥
हरित भये तरु पल्लव गोभा।
कुंज-भवन बाढ़ी अति शोभा॥
बोलि उठे कल कोकिल कीरा।
डोली तिहि छन त्रिबिध समीरा॥
उनये घन मनु आनँद छायो।
गरजि मन्द दुन्दुभी बजायो॥
भादौं सित पंचमी सुहाई।
स्वाती सोम पहर निसि आई॥
चंद्रकला की कोख सिरानी।
चंद्रावलि प्रकटी सुखदानी।
गुप्त भेद नहि कछु प्रगटायो।
सो श्री विट्ठल प्रकट लखायो॥
रूप प्रकट छबि नयन निहारी।
'हरीचंद' सर्वस बलिहारी॥१०२॥

ढाढी

चलो आज घर नंद महर के प्रेम-बधाई गावैं।
भादो कृष्ण अष्टमी दिन श्री कृष्णचंद्र-जस गावै॥
तोरन तनी पताका द्वारन भवन भीर भइ भारी।
री ढाढ़िन कर पगन समेटे चलियो भवन मँझारी॥
जहाँ इन्द्र-चन्द्रादि देवता कर बाँधे है ठाढ़े।
कौन सुनैगो आज हमारी प्यारी कर हित गाढ़े॥
प्रेम-पंथ को पग है न्यारो तातें मन यह आवै।
'हरीचंद' लखि लाल लड़इतो नव निधि रिधि सिधि पावै॥१०३॥

जसोदा माई लेहु हमारी बधाई ।
धन्य भाग तेरे सुनु प्यारी जनम्यो कुँवर कन्हाई ॥
चिरजीवो जब लौं जमुना-जल गंगा-जल सब देवा ।
जब लौं धरा अकास और है जब लौं हरि की सेवा ॥
तब लौं चिरजीवो जग भीतर 'हरीचंद' तब लाला ।
मंगल गीत विनोद मोद मति मंगल होइ रसाला ॥१०४॥

हिंडोला रायसा

झूलत राधा रंग भरी कुंज-हिंडोरे आज ।
सँग सब सखी सुहावनी साजे सुन्दर साज ॥
झूलन आये मोहन सुंदर मदन मुरारी ।
गावत ऊँचे सुर भरि सँग मिलि ब्रज की नारी ॥
ताल मुरज डफ आवज साथ पखावज चंग ।
बाजत लय सुर साजत वीना और उपंग ॥
बिच बिच वंसी गूँजत मधुर मधुर घन-घोर ।
धुनि सुनि जासु कोइलियन तरुन मचाई रोर ॥
इक उतरत इक झूलत एक चढ़त तहँ धाय ।
एक रहत गहि डोरी दूजी देत झुलाई ॥
इक नाचत इक गावत एक बजावत तार ।
एक जुगल छवि लखि कै तन-मन डारत वार ॥
रमकनि मै रँग बाढ़्यौ छवि कछु कही न जाइ ।
झोटा लगि रहे डारन विविध बसन फहराइ ॥
सोभा को कहि भाषै झूलत बाढ़ी जौन ।
'हरीचंद' लखि लखि कै कवि-मति रसना मौन ॥१०५॥

बिहाग

नाचति बरसाने की नारी ।
जिनके घर प्रकटी श्री राधा मोहन-प्रान-पियारी ॥

नाचत शिव सनकादि मुनीश्वर नारदादि व्रतधारी ।
नाचत बेद पुरान रूप धरि डारत तन-मन वारी ॥
अति आनंद बढ़्यो बरसाने प्रकटी श्रीवृषभान-कुमारी ।
'हरीचंद' आनन्दित अति मन होत निरखि बलिहारी ॥१०६॥

नन्द बधाई बाँटत ठाढ़े ।
भई सुता बाबा भानुराय के प्रेम-पुलक तन बाढ़े ॥
काहू को सोना काहू को रूपा काहू के मनि-गन दीनो ।
जिन जो माँग्यो तिन सो पायो कह्यो सबनि को कीनो ॥
काहु को धेनु बसन काहू को दियो सबनि मन-भायो ।
आनँद भयो कहत नहिं आवै 'हरीचंद' जस गायो ॥१०७॥

नागरी मंगल रूप-निधान ।
जब ते प्रकट भई बरसाने छायो आनंद महान ॥
दिन दिन सुख उमड़त घर घर मे छन छन होत कल्यान ।
'हरीचंद' मोहन की प्यारी राधा परम सुजान ॥१०८॥

मलार

पिय बिन बरसत आयो पानी ।
चपला चमकि चमकि डरपावत मोहि अकेली जानी ॥
कोयल कूक सुनत जिय फाटत यह बरषा दुखदानी ।
'हरीचंद' पिय श्याम सुँदर बिनु बिरहिनि भई है दिवानी॥१०९॥

सारंग

ब्रज-जन काँवर जोरि जोरि ।
आये मन-भाये लै दधि घृत निज निज गृह ते दौरि दौरि ॥
गोपी आईं गीतन गावत पाईं परत मुर लोरि लोरि ।
करत निछावरि देखि प्रिया-मुख तन के भूषन छोरि छोरि ॥

दधि-काँदो माच्यो आँगन मे देत माठ सब फोरि फोरि ।
लूटत झपटत खात मिठाई वारत छिन मे कोरि कोरि ।।
गिनत न कोऊ काहू को कछु पट भूषन दै तोरि तोरि ।
'हरीचंद' सुख कहत न आवै आनँद वाढ़्यो खोरि खोरि ।।११०।।

राग मलार हिंडोला

गिरधरलाल हिंडोरे झूलै ।
पँच-रंग फूल हिंडोर बनायो निरखि निरखि जिय फूलैं ।।
को कहि सकै भई जो सोभा कालिंदी के कूलै ।
'हरीचंद' यह कौतुक लखिकै देव विमानन भूलै ।।१११।।

राग परज

एजी आज झूलै छे श्याम हिंडोरे ।
वृन्दावन री सघन कुंज मे जमुना जी लेताँ हलोरे ।।
सँग थारे वृषभानु-नन्दिनी सोहै छे रँग गोरे ।
'हरीचंद' जीवन-धन वारी मुख लखताँ चित चोरे ।।११२।।

ईमन

कमल नैन प्यारी झूलै झुलावै पिय प्यारी ।
कवहुँक झोटा देत कवहुँ लगावै कंठ
कवहुँ सँवारत सारी, करत मनुहारी ।।
कवहुँ सँग झूलै सोभा देखि देखि फूलै कवहुँ
उतरि झोटा देत भारी भारी, डरत सुकुमारी ।
'हरीचंद' वलिहारी झुकि आई घटा कारी
वरसत घोर वारी मुकुट, छावत गिरिधारी ।।११३।।

राग अडानो

सावन आवत ही सब द्रुम नए फूले
ता मधि झूलत नवल हिंडोरे ।

तैसिय हरित भूमि तामै बीरबधू सोहै
तैसीयै लता झुकि रही चहुँ कोरे ॥
तैसोई हिंडोरो पँच-रँग बन्यो सोहत
तैसी ही ब्रज-बधू घेरे सब ओरे ।
'हरीचंद' बलिहारी तापै झूलै राधाप्यारी
मोहन झुलावै झोंटा देत थोरे थोरे ॥११४॥

बारह-मासा

मास असाढ़ उमड़ि आए बदरा ऋतु बरसा आई ।
बोले मोर सोर चहुँ दिसि घन-घोर घटा छाई ॥
पपीहन पी पी रट लाई ।
भयो अरम्भ बियोग फिरी जब काम की दुहाई ॥
देखि मेरी तबियत घबराती ।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नींद नही आती ॥
सावन मास सुहावन लागै मन-भावन नाही ।
झूलै काके संग हिंडोरा देकर गळ-बाही ॥
बरसि घन कुंजन के माही ।
कौन बचावै आप भीजि मोहि रखि अपनी छाँही ॥
याद करि दरकत सखि छाती ।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नींद नही आती ॥
भादो मास अँधेरो लखि कै रही धीर खोई ।
ब्याकुल सूने घर मे तड़पूँ पास नहीं कोई ॥
अकेली मै सेजो सोई ।
बूँद झमक दामिनी चमक लखि कै करवट रोई ॥
बिथा सो नहीं सही जाती ।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नीद नही आती ॥

कार मास सब साँझी खेलै सरद बिमल पानी।
मै व्याकुल बिनु प्रान-पिया के कहत न मुख बानी॥
उँजेरी रात न मन मानी।
चन्दा उलटी अगिनि लगावे मोहि बिरहिनी जानी॥
कोई करवट नहि कल पाती।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नीद नही आती॥
कातिक मास पुनीत जानि सब न्हाती बृज-नारी।
मानि दिवाली दीप-दान दे करती उँजियारी॥
पिया बिन मेरे अँधियारी।
भई बियोगिन व्याकुल मै सब रैन चैन हारी॥
बिपति यह सही नही जाती।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नीद नही आती॥
अगहन आया सब मन भाया पड़ा जोर पाला।
लपटि लपटि पीतम से सोई घर घर मे बाला॥
ओढ़ कर शाल औ दुशाला।
मै घर बीच अकेली तड़पूँ बिना नंदलाला॥
भई सौ जुग की इक राती।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नीद नही आती॥
पूस मास मे सीत जोर है दुगुन रात होती।
बिना पियारे प्राननाथ मै किससे लपट सोती॥
सेज सूनी लखि कै रोती।
तड़प तड़प कर बिरह-बोझ मै किसी भाँति ढोती॥
भई मेरी पत्थर की छाती।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नीद नही आती॥
माघ मास मे मदन जोर भयो रितु बसंत आई।

बौरे बौर फूल बन फूले मोरन रट लाई ॥
फिरी जग काम की दुहाई ।
कोकिल कूक सुनत जिय दरकत मुरछित घबराई ॥
न पाई मोहन की पाती ।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नींद नहीं आती ॥
फागुन खेलैं फाग रंग गावैं मीठी बोली ।
चलै रंग की पिचकारी उड़ै अबिर-झोली ॥
देखि मेरे हिय लागी होली ।
भयो काम को जोर दरकि गई जोबन से चोली ॥
जाय यह कोई समझाती ।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नीद नही आती ॥
चैत चाँदनी देख भया दुख सखी मेरा दूना ।
कामदेव ने अंग अंग मेरा जला जला भूना ॥
पिया बिन मै अब जीऊँ ना ।
कहाँ जाऊँ क्या करूँ दिखाता सारा जग सूना ॥
धरनि मे मै समाय जाती ।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नींद नहीं आती ॥
लगा मास बैसाख सखी दिन गर्मी के आए ।
सब सँजोगियों ने खसखाने घर मे लगवाए ॥
फूल के बँगले बनवाए ।
चन्दन लेप फुहारे छूटे गुलाब छिरकाए ॥
करूँ मै क्या वियोग-माती ।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नीद नहीं आती ॥
जेठ मास गरमी सखि पड़ती बढ़ी पीर भारी ।
दिन नहि कटता किसी भाँति घबराती मैं नारी ॥
भई मेरे जोबन की ख्वारी ।

वारी वैस छोड़ के मुझको बिछुड़े बनवारी ॥
हाय करि रोती पछिताती ।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नीद नही आती ॥
बारह मास पिया बिन खोए रोइ रोइ हारे ।
वन वन पात पात करि ढूँढ़ा मिले नही प्यारे ॥
मेरे प्रानो के रखवारे ।
'हरीचंद' मुखड़ा दिखलाओ आँखो के तारे ॥
पीर अब सही नही जाती ।
कैसे रैन कटै बिनु पिया के नीद नही आती ॥११५॥

मलार

ए मै कैसे आऊँ ए दिलजानी हो देखो रिमझिम बरसत पानी ।
जो मेरी भीजे सुरुख चूँदरी तो घर सास रिसानी ।
'हरीचंद' पिय मोहि बचाओ पीत पिछोरी तानी ॥११६॥

सारंग

व्रज जनमत ही आनँद भयो ।
श्री वृषभानु-भवन के भीतर सब सुख आन नयो ॥
गाँव गाँव ते टीको आयो भीतर भवन लयो ।
'हरीचंद' आनंद भयो अति दुख वहि दूरि भयो ॥११७॥

व्रज मे रस-निधि प्रगट भई ।
चन्द्रभानु नृप भाग फले व्रज प्रगटी सुता नई ॥
हरि राधा को प्रेम परम जो सोइ मूरति चितई ।
कहि 'हरिचंद' मान लीला रस करि हित भूमि गई ॥११८॥

यथा रुचि

भट्ट इक बात नई सुनि आई ।
आजु भई कीरति के कन्या बाजत रंग-बधाई ॥

नर-नारी सब हैं मिलि आई कीरति घर छबि छाई।
अति आनंद कहन नहिं आवै 'हरीचंद' बलि जाई ॥११९॥

मलार

मनोरथ करत द्वार पर ठाढ़ी।
करि करि ध्यान श्याम सुंदर को पुलकावलि तन बाढ़ी ॥
ऐहैं री या मारग सो हरि कमल-नयन घनश्याम।
बेनु बजावत कमल फिरावत हँसत गरे बन-दाम ॥
करि करि बहु पकवान मिठाई भरि भरि राखत थार।
अपने हाथन गूँथि बनावत रचि फूलन के हार ॥
द्वारे मेरे रथ ठाढ़ो करि मोकों अति सुख देहै।
जो हम रचि रचि कै राखे हैं सो प्रभु रुचि सो खैहै ॥
दै बीरा आरती करौंगी व्यजनैं हाथ डुलैहै।
तन मन धन न्योछावर करिहैं देखि देखि सुख पैहैं ॥
औ जो कहुँ घन बरसन लागे ताहि निवारन काज।
भीजत उतरि मेरे घर ऐहैं जहँ सुख को सब साज ॥
सुफल काम सब मेरो ह्वैहैं जो कछु चित्त बिचारेउ।
ऐसे ग्वालिनि करति मनोरथ रथ को दूरि निहारेउ ॥
हरि आये बादरहू आये बरषन लाग्यो पानी।
ताके घर प्रभु उतरि पधारे भींजत आपुहि जानी ॥
अति आनंद भयो ताके चित मिलि प्रभु अति सुख दीनो।
'हरीचन्द' प्रभु अन्तरजामी सुफल मनोरथ कीनो ॥१२०॥

कान्हरा

यह निधि धर्महि ते पाई।
कीरति मैया तू बड़-भागिनि जो तेरे घर आई ॥
जाको ध्यान धरत सनकादिक संभु समाधि वड़ाई।

सो निधि तजि बैकुंठ धाम को बरसाने मे आई ॥
जाते व्रज विहरत आनँद भरि श्री गोकुल के राई ।
सो निधि बार बार उर धरि कै 'हरीचन्द' बलि जाई ॥१२१॥

सारंग

रथ चढ़ि नन्दलाल पीय करत हैं बन फेरा ।
आजु सखी लालन सँग विहरिबे की बेरा ॥
रतन-खचित सुन्दर रथ दिव्य बरन सोहै ।
छतरी ध्वज कलस चक्र सुर-नर-गन मोहै ॥
छाई घन घटा चारु आनँद बरसावै ।
प्रमुदित घनश्याम तहाँ राग मलार गावै ॥
और कोऊ संग नाहि हरि अरु व्रज-नारी ।
हाँकत रथ अपने हाथ राधा सुकुमारी ॥
कुंज कुंज केलि करत डोलत हरि राई ।
"हरीचन्द' जुगुल रूप लखि कै बलि जाई ॥१२२॥

यथा रुचि

रास-रस व्रज में प्रगट भयो ।
फूली फिरत सबै व्रज-बनिता तन को ताप गयो ॥
लीला-रूप शील-गुन-सागर व्रज आनंद भयो ।
'हरीचंद' व्रजचंद, पिया को आनँद अतिहि दयो ॥१२३॥

श्याम संग श्यामा रंग भरी राजत ।
अरध ओट घूँघट पट कीन्हे लखि रति मन्मथ लाजत ॥ध्रु०॥
नील निचोल मध्य मुख ससि की फैली घटा सुहाई ।
झिलमिल ज्योति एक मिलि दीखति महलन अलि छबि छाई ॥
श्यामहु बने श्याम रँग बागे अनुरागे पिय प्यारी ।
'हरीचन्द' लखि जुगुल माधुरी सरवस ठान्यो वारी ॥१२४॥

असावरी

सुनत जनम बृषभानु-लली को उठि धाई ब्रज-नारी ।
मंगल साज लिये कर कंजन पहिरे रँग रँग सारी ॥
जो जैसे तैसे उठि धाईं सुनतहि स्वामिनि-नामा ।
भादों नदी सरिस उमगाईं चहुँ दिसि ब्रज की बामा ॥
बेनी सिथिल खसित कच झुमरन लुलित पीठ पर सोहै ।
काजर नयन श्रवन-तल तरवन देखत ही मन मोहै ॥
झुम झुम मंडित मुख ससि सोभित बेदी हीर जगाई ।
अधर तमोल रंग सों भीने गावत सरस बधाई ॥
आनँद उमगे गात गात सब हिय अति अधिक उछाह ।
सब घर पुत्र भयो धन बाढ़्यो सब ही के मनु ब्याह ॥
लोचन तृपित दरस बिनु ब्याकुल पगहू सो बढ़ि धावै ।
चौकि चौकि चितवत चारहु दिसि मग मनु कंज बिछावै ॥
आइ जुरी वृषभानु-भवन मे मुख निरखत सुख पायो ।
पद परि तरवा चूमि निरखि दृग जन्म सुफल करवायो ॥
धनि दिन धनि निसि धनि छिन धनि पल धनि यह घरी सोहाई ।
जामे तीन लोक की स्वामिनि भानु-भवन प्रगटाई ॥
नाचत गावत करत कुलाहल प्रेम उमगि अकुलानी ।
हँसत प्रमोद करत मन फूलत बोलत कोकिल-बानी ॥
अति रस-मत्त बदत नहि काहू उछलित रस आवेसा ।
अंचल खुलत नाहि सुधि तन की भई एक ही भेसा ॥
सब ब्रज को श्रृंगार रूप रस भाग सुहाग सुहायो ।
मोहन की सरबस संपति सँग मिलि बरसाने आयो ॥
को कहि सकै कहा कहि भाषै कवि पै नहि कहि जाई ।
जो सुख सोभा ता छन बाढ़ी अनुभव नयन लखाई ॥

नंद-भवन ते बढ़ि सुख तेहि छन क्योंहू करि प्रगटायो ।
'हरीचंद' वल्लभ-पद-बल से केवल यह लखि पायो ॥१२५॥

हमारे तन पावस बास कर्यो । ध्रु०॥
बरसत नैन-वारि सब ही छन दुख-घन उमड़ि पर्यो ॥
जुगुनूॅ चमकि ॲगार-बिरह की श्वासा बान भर्यो ।
'हरीचंद' हिय करो मिलि सीतल ना-तरु गात जर्यो ॥१२६॥

हमारे भाई श्यामा जू की जीति ।
हारो सदा जहॉ पिय प्यारो यहै प्रीति की रीति ॥
प्रेम होड़ मे वहु नायक बनि खोई श्याम प्रतीति ।
जदपि निरंतर लखत रहत रुख तऊ नाम की भीति ॥
होत अधीन भौह फेरन मे यहै यहॉ की गीति ।
'हरीचन्द' याही सो सब सो सरस जुगल की भीति ॥१२७॥

हम जो मनावत सो दिन आयो ।
कीरति-सुता प्रगट बरसाने गायो गीत बधायो ॥
करि सिगार चली घर घर ते मगल साज सजायो ।
हाथन कंचन-थार बिराजै चौमुख दीप जगायो ॥
आई मिलि वृपभानु गोप के अति आनॅद उर भायो ।
थापे दीने कलस धराये टीको सबन लगायो ॥
गावत गोपी तन मन ओपी द्वार निसान बजायो ।
"हरीचंद' तेहि समय जाइ के बहुत बधाई पायो ॥१२८॥

राव जू आजु बधाई दीजै ।
तुम्हरे प्रकट भई श्री राधा कह्यौ हमारो कीजै ॥
गोपिन को मनि-गन आभूषन दै दै आशिष लीजै ।
ग्वालन पाग पिछौरी दीजै याते सब दुख छीजै ॥

तुम्हरी सुता जगत ठकुरानी जायो मुख लखि लीजै ।
'हरीचंद' बृषभानु-सुता के चरन-कमल-रस पीजै ॥१२९॥

हमारी प्यारी सखियन की सिरताज ।
भोरी गोरी पिय-रस बोरी लाज-सुहाग-जहाज ॥
ब्रज-रानी कीरति सुख-दानी पूरनि जसुमति-काज ।
नंद बबा की नयन-पूतरी मोहन की सुख-साज ॥
भानु राय के घर की दीपक पालनि भक्त-समाज ।
'हरीचंद' पिय-सहित करौ नित अबिचल ब्रज मे राज ॥१३०॥

विनय-प्रेम-पचासा
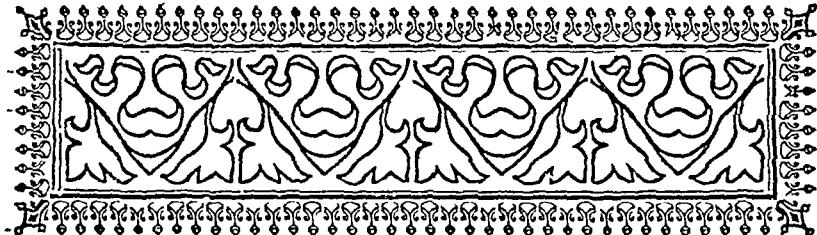
विनय-प्रेम-पचासा

जै जै श्री बृन्दाबन-देवी ।
जो देवन को देव कन्हाई सोऊ जा पद-सेवी ॥
अगम अपार जगत-सागर के जाके गुन-गन खेवी ।
'हरीचन्द' की यहै बीनती कबहूँ तो सुधि लेवी ॥१॥

बचन दीन-जन सो जुगति नई निकारी लाल ।
बहरावन हित हम सबन भए बाल-गोपाल ॥
जनम करम पढ़ि आपु को बहँकि जाइँ से और ।
हम दामन तजिहैं नहीं अहो छली-सिरमौर ॥
जदपि बास तव मैं अहै जीवहि दोसी नाथ ।
पै निरघृन कौतुक लखत तुम क्यो वाके साथ ॥
भयो पाप सो पाप बिनु जग न जियत छन एक ।
ऐसे जीवहि होइ क्यो तुव पद-पदम बिबेक ॥
न्याय-परायन साँच तुम साँचे अहौ दयाल ।
देखै निबहत उभय गुन किमि मेरे अघ-काल ॥
जो हम जैसो कछु करै तुम तैसो फल देहु ।
तौ जग की गति आपहू करी बिसारि सनेहु ॥२॥

राग यथा-रुचि

नैनन मैं निवसौ पुतरी ह्वै हिय मै बसौ ह्वै प्रान।
अंग अंग संचरहु सक्ति ह्वै ए हो मीत सुजान॥
मन में बृत्ति वासना ह्वै कै प्यारे करौ निवास।
ससि सूरज ह्वै रैन-दिना तुम हिय-नभ करहु प्रकास॥
बसन होइ लिपटौ प्रति अंगन भूषन ह्वै तन बाँधो।
सोंधो ह्वै मिलि जाऊ रोम प्रति अहो प्रानपति माधो॥
ह्वै सुहाग-सेंदुर सिर बिलसौ अधर राग ह्वै सोहौ।
फूल-माल ह्वै कंठ लगौ मम निज सुबास मन मोहौ॥
नभ ह्वै पूरौ मम आँगन मै पवन होइ तन लागौ।
ह्वै सुगंध मो घरहि बसावहु रस ह्वैके मन पागौ॥
श्रवनन पूरौ होइ मधुर सुर अंजन ह्वै दोउ नैन।
होइ कामना जागहु हिय मै करहु नींद बनि सैन॥
रहौ ज्ञान मे तुमही प्यारे तुम-मय तन मम होय।
'हरीचंद' यह भाव रहै नहि प्यारे हम तुम दोय॥३॥

राग असावरी

जुगल-केलि-रस बल्लभियन बिनु और कहा कोउ जानै।
बिनु अधिकारी कौन और या गुप्त रसहि पहिचानै॥
तर्क बितर्क महा चतुराई काव्य-कोष-निपुनाई।
कबहूँ याके निकट न आवत लाख कहौ न बनाई॥
कै तौ जगत-विषय की तिन सो गंध भयानक आवै।
कै विज्ञान महा तम बढ़िकै सगरे रसहि सुखावै॥
जौ कोउ कोमल कमल तंतु सो महा मत्त गज बाँधै।
तौ या मरमहिं समुझि सकै कछु पै जौ एकहि साधै॥

साधन जिते जगत मै गाए तिनको फल कछु औरै ।
यह तौ उनकी कृपा साध्य इक साधन करै सो बौरै ॥
जुपै प्रवाह छुट्यौ तौ लागी आइ महा मरजादा ।
जद्यपि यह नीकी प्रवाह सो रंग तऊ है सादा ॥
अतिहि निकट परलोक लोक दोउ जो या मे कछु बोलै ।
तनिकहु पग खिसक्यौ तौ डूब्यौ अमृत मै विष घोलै ॥
रात दिना के सुनै किये जे अति अभ्यासित भाव ।
तिन सो कैसे बचै कहो मन कोटिक करौ उपाव ॥
जिमि बिनु आयसु कठिन दुर्ग मे सकै न कोऊ जाय ।
तैसेहि उनकी कृपा बिना नहि याको और उपाय ॥
पद पद पै अघ धरे करोरन वृत्ति सहज अधगामी ।
काम क्रोध उपजत छिन छिन मै होउ भले कोउ नामी ॥
इन रिपुगन को जीवन को जौ तप आदिक कछु साधै ।
तौ अभिमान जानकारी को आइ सकल अँग बाँधै ॥
सूछमता को परम प्रान जो ताको अतर निकारै ।
तो या रसहि कछुक कछु जानै औरन आन विचारै ॥
कहिए जुपै होइ कहिबे की पुनि भाखे न कहाई ।
'हरीचंद' बिनु वल्लभ-पद-बल यह निधि नहि लहि जाई ॥ ४ ॥

तोसो और न कछु प्रभु जाचौ ।
इतनो ही जाँचत करुना-निधि तुम ही मै इक राचौ ॥
खर कूकुर लौ द्वार द्वार पै अरथ-लोभ नहि नाचौ ।
या पाखान-सरिस हियरे पै नाम तुम्हारोइ खाचौ ॥
विस्फुलिग से जग-दुख तजि तव विरह-अगिन तन ताचौ ।
'हरीचंद' इक-रस तुमसो मिलि अति अनन्द मन माचौ ॥ ५ ॥

प्यारे यह नहि जानि परी ।
नाथ समुझि यह बस्यो तुमहि कै तुम मोहि प्रभो बरी ॥
हम भाजत पै तुम गहि राखत बरबस करत निबाह ।
उलटी गति दिखराति मनों तुमहीं कहँ मेरी चाह ॥
हम अपराध करत नहि चूकत बिचलावत विश्वास ।
तुम तेहि छमा करत गहि गहि भुज औरहु खींचत पास ॥
दास होइ हम अति अभिमानी बंचक निमक-हराम ।
तुम स्वामी समरथ करुनामय क्यौं बनि रहे गुलाम ॥
जो हम कहँ करनी चाहत ही सो तुम उलटी कीन्ही ।
प्रियतम ह्वै प्रेमी समान सब चाल जनन सो लीन्ही ॥
यह उदारता कहँ लौं गाओं बनै तुमहि सो नाथ ।
नाही तौ 'हरिचंद' पतित को कौन निबाहै साथ ॥६॥

याही सों घनश्याम कहावत ।
द्रवत दीन - दुरदसा बिलोकत करुना रस बरसावत ॥
भीगे सदा रहत हिय रस सों जन-मन-ताप जुड़ावत ।
'हरीचंद' से चातक जन के जिय की प्यास बुझावत ॥७॥

हरि-तन करुना-सरिता बाढ़ी ।
दुखी देखि निज जन बिनु साधन उमगि चली अति गाढ़ी ॥
तोरि कूल मरजादा के दोउ न्याव-करार गिराए ।
जित तित परे करम फल-तरुगन जड़ सों तोरि बहाए ॥
अचल बिरुद गंभीर भँवर गहि महा पाप गन बोरे ।
असहन पवन बेग अति बेगहि दीन महान हलोरे ॥
भरि दीने जन हृदय-सरोवर तीनहुँ ताप बुझाई ।
'हरीचंद' हरि-जस-समुद्र मे मिली उमगि हरखाई ॥८॥

प्रभु की कृपा कहाँ लौ गैये ।
करुना मे करुनानिधि ही के इती बड़ाई पैयै ॥
डार डार जौ अघ मेरे तौ पात पात वह बोलै ।
नदी नदी जो पाप चलत तौ बिंदु बिंदु वह डोलै ॥
थल थल मे छिपि रहत जु यह वह रेनु रेनु ह्वै धावै ।
दीप दीप जौ यह समान वह किरिन किरिन बनि जावै ॥
काकी उपमा वाहि दीजिये व्यापक गुन जेहि माँही ।
हिय अन्तर अँधियार दुराने अघहु नाहि बचि जाही ॥
सिधु लहरहू सिधुमयी है मूढ़ करै जो लेखे ।
नाही तो 'हरिचंद' सरीखे तरत पतित कहुँ देखे ॥९॥

प्रभु हो जो करिहौ सोइ न्याव ।
सुगति कुगति सब ही अति समुचित हम पतितन के दाव ॥
जौ तृन-मात्रहु न्याव करौ प्रभु करि शास्त्रन पै नेह ।
तौ हम कठिन नरक के लायक यामै कछु न सँदेह ॥
पै जो ढरौ नाथ करुना-दिसि तौ का मेरे पाप ।
कोटि कोटि बैकुंठ सुलभ तर तनिक कटाक्ष-प्रताप ॥
जौ हमरी दिसि लखहु उचित तौ सब विधि दंड-बिधान ।
'हरीचंद' तौ यही जोग पै तुम प्रभु दयानिधान ॥१०॥

जिन नहि श्री वल्लभ-पद गहे ।
ते भवसिधु-धार मै साधन करत करत-हू वहे ॥
परम तत्व जानत नहि कोऊ जद्यपि शास्त्रन कहे ।
ते इनके किंकर-जन ही के कर-अमलक ह्वै रहे ॥
नवनीत-प्रिय हाथ लगत नहि स्तुति-पय बरबस महे ।
'हरीचंद' बिनु बैश्वानर-बल करम-काठ किन दहे ॥११॥

कहाँ लौं निज नीचता बखानौं।
जब सों तुमसो बिछुरे तब सों अघ ही जनम सिरानौं ॥
दुष्ट सुभाव बियोग खिस्याने संग्रह कियो सहाई।
सूखी लकरी वायु पाइ कै चलौ अगिन उलहाई ॥
जनम जनम को बोझ जमा करि भारी गाँठ बँधाई।
उठि न सकत गर पीठ टूटि गई अब इतनी गरुआई ॥
बूड़त तेहि लैके भव-धारा अब नहि कछुक उपाई।
'हरीचंद' तुम ही चाहौ तौ तारो मोहि कन्हाई ॥१२॥

प्रभु मैं सेवक निमक-हराम।
खाइ खाइ के महा मुटैहों करिहौं कछू न काम ॥
बात बनैहौं लंबी-चौड़ी बैठ्यौ बैठ्यो धाम।
त्रिनहु नाहिं इत उत सरकैहो रहिहौं बन्यौ गुलाम ॥
नाम बेचिहौं तुमरो करि करि उलटो अघ के काम।
'हरीचंद' ऐसन के पालक तुमहि एक घनश्याम ॥१३॥

उमरि सब दुख ही माँहि सिरानी।
अपने इनके उनके कारन रोअत रैन बिहानी ॥
जहँ जहँ सुख की आसा करिकै मन बुधि सह लपटानी।
तहँ तहँ धन संबंध जनित दुख पायो उलटि महानी ॥
सादर पियो उदर भरि विष कहँ धोखे अमृत जानी।
'हरीचंद' माया-मंदिर सों मति सब बिधि बौरानी ॥१४॥

बैस सिरानी रोअत रोअत।
सपनेहुँ चौंकि तनिक नहि जागौ बीती सबही सोअत ॥
गई कमाई दूर सबै छन रहे गाँठ को खोअत।
औरहु कजरी तन लपटानी मन जानी हम धोअत ॥

स्वाद मिलौ न मजूरी को सिर टूट्यौ बोझा ढोअत।
'हरीचंद' नहिं भख्यौ पेट पै हाथ जरे दोउ पोअत ॥१५॥

नाहिनै या आसा को अंत।
बढ़त द्रौपदी-चीर-सरिस सब जुरे तंत में तंत ॥
बरन बरन प्रगटत ही आवत तन विराट अनुहारी।
थक्यौ दुसासन जीव बापुरो खींचत खींचत हारी ॥
जिमि तित बसन बढ़ाइ कहाए भगत-बछल महराज।
तैसहि इतै घटाइ राखिए 'हरीचंद' की लाज ॥१६॥

करनी करुनानिधि केसव की कैसे कहि कहि गाऊँ।
अधम जीव परिमित मति रसना एक पार क्यौं पाऊँ ॥
जग जैसी होत तितोही जगत जीव कहि जानै।
तुम तो सब बिधि करत अलौकिक किमि तेहि नाथ बखानै ॥
मात पिता तिय मुनिहू जो अघ सहि न सकै लखि भारी।
सो तुम तुरत छमत करुनानिधि निज दिसि लखि बनवारी ॥
कहँ लौं कहौं दयानिधि तुम सो जानहु अंतरजामी।
'हरीचंद' से अधिहि चाहिए तुमरेहि ऐसो स्वामी ॥१७॥

लखहु प्रभु जीवन केरि ढिठाई।
निज निंदा मेटन हित तुम महँ प्रेरक शक्ति लगाई ॥
बुरो भलो सब करत बुद्धि-बस मनहू की रुचि पाई।
कहै सबै हरि करत जीव को दोस नहीं कछु भाई ॥
दैव करम संयोग आदि बहु सब्दन लेत सहाई।
अपने दोस और पर थापत लखहु नाथ चतुराई ॥
शास्त्रनहू कछु प्रेरकता कहि उलटो दियो भुलाई।
सब मैं मिल्यौ सबन सों न्यारो कैसे यह न बुझाई ॥
मिल्यौ कहै तो पाप पुन्य दोउ एकहि सम ह्वै जाई।

जुदो कहै किमि तुम बिनु दूजो सत्ता नाहि लखाई ॥
कर्त्ता बुधि-दायक जग-स्वामी करुनासिंधु कन्हाई ।
'हरीचंद' तारहु इन कहँ मति इनकी लखौ खुटाई ॥१८॥

प्रभु हो ! कब लौं नाच नचैहो ।
अपने जन के निलज तमासे कब लौं जगहि दिखैहो ॥
कब लौं इन बिमुखन के मुख सो निज गुन-गनहि लजैहो ।
कब लौं जिन पै सतत हँसत जम तिनसो हमहि हँसैहो ॥
छिन छिन बूड़त जात पंक लखि मोहि कब चित्त द्रवैहो ।
जनम जनम के निज 'हरिचंदहि' कब फिरिकै अपनैहो ॥१९॥

छप्पय

जीव-धर्म सों कुटिल मंद-मति लोक-विनिन्दित ।
काम-क्रोध-मद-मत्त सदा संसार मलिन मति ॥
अथिर अबोध अधीर अधरमी अति अज्ञानी ।
पुरुषारथ सों रहित निबल अति पै अभिमानी ॥
सब भाँति नष्ट लखि दास निज जानि कृपा करि धाइए ।
प्रभु महा हीन 'हरिचंद' को दीन जानि अपनाइए ॥२०॥

कवित्त

भजौ तो गुपाल ही को सेवौ तो गुपालै एक
मेरो मन लाग्यो सब भाँति नंदलाल सो ।
मेरे देव देवी गुरु माता पिता बंधु इष्ट
मित्र सखा हरि नातो एक गोप-बाल सो ॥
'हरीचंद' और सो न मेरो संबंध कछु
आसरो सदैव एक लोचन बिसाल सो ।
माँगौ तो गुपाल सों न माँगौ तो गुपाल ही सो
रीझौ तो गुपाल पै औ खीझौ तो गुपाल सो ॥२१॥

द्वारहि पै लुटि जायगो बाग औ आतिसबाजी छिनै में जरैगी।
ह्वैहै बिदा टका लै हय-हाथिहु खाय-पकाय बरात फिरैगी।
दान दै मातु-पिता छुटिहैं 'हरिचंद' सखीहु न साथ करैगी।
गाय-बजाय जुदा सब ह्वैहैं अकेली पिया के तू पाले परैगी ॥२२॥

पूजिहौं देवी न देव कोऊ किन वेद-पुरानहु ऊँचे पुकारौ।
काहू सों काम कछू नहिं मोहि सबै अपनी अपनी को सम्हारौ।
हौं बनिहौं कै नसाइहौं यासौं यहै प्रन है 'हरिचंद' हमारौ।
मानिहौं एक गुपालहि को नहि और के बाप को यामे इजारौ ॥२३॥

नैनन के तारे दुलारे प्रान-प्यारे मेरे
दुख के दरन सुख-करन बिसाल हैं।
मेरो ध्यान मेरो ज्ञान मेरे वेद औ पुरान
बिबिध प्रमान मेरे एक नंदलाल हैं।
'हरीचंद' और सो न काम सपनेहूँ मोहि
मेरे सरवस धन जसुदा के बाल हैं।
मेरी रति मेरी मति मेरे पति मेरे प्रान
मेरे जग माहि सबै केवल गुपाल हैं ॥२४॥

सकल की मूलमयी वेदन की भेदमयी
ग्रंथन की तत्वमयी वादन के जाल की।
मन-बुद्धि-सीमामयी सृष्टिहु की आदिमयी
देवन की पूजामयी जीवमयी काल की।
ध्यानमयी ज्ञानमयी सोभामयी सुखमयी
गोपी-गोप-गाय-व्रज-भागमयी भाल की।
भक्त-अनुरागमयी राधिका-सुहागमयी
प्राणमयी प्रेममयी मूरति गोपाल की ॥२५॥

पाहि पाहि प्रभु अंतरजामी ।
तुमसों छिपी न कछु करुनानिधि कहा कहौं खग-गामी ॥
तुम्हरो कहत सबै मोहिं मोहन जदपि पतित मैं नामी ।
ताकी लाज राखि 'हरिचंदहिं' बखसौ चरन-गुलामी ॥२६॥

कहा कहौं कछु कहि न रही ।
बिधि तैं अब लौ पंडित कबियन रचि-पचि सबहिं कही ॥
महा अधम हम दीनबंधु तुम सब समरथ अघ-हारी ।
कहनो यहै अनेकन बिधि सों युक्त अनेक बिचारी ॥
नेति नेति जेहि बेद पुकारत तासों बाद बढ़ाई ।
फल कछु नाहि उलटि खीझन-भय यामैं कह चतुराई ॥
सब जानत सब करन जोग तुम नेकु जु पै इत हेरौ ।
लखि सरनागत पतित दीन 'हरिचंद' सीस कर फेरौ ॥२७॥

मिटत नहि या मन के अभिलाख ।
पुजवत एक जबै बिधि तन तैं होत और तन लाख ॥
दिन प्रति एक मनोरथ बाढ़त तृष्णा उठत अपार ।
घृत जिमि अग्नि सिद्धि तिमि जग मै होत एक तैं चार ॥
जोग ज्ञान जप तीरथ आदिक साधन तें नही जात ।
'हरीचंद' बिनु कृष्ण-कृपा-रस पाएँ नहिन अघात ॥२८॥

अहो हरि हम बदि बदि कै अघ कीन्हे ।
लोक बेद निंदत जेहि अनुदिन ते हम हठि सिर लीन्हे ॥
जामै जान्यौ दोष अधिक अति सो कीनो चित लाई ।
तुमसों बिमुख होन की कीन्ही लाखन खोज उपाई ॥
जान्यौ जिन्हे प्रतच्छ भयंकर नरक-गमन को हेतू ।
तेइ आचरन किये नितही नित कहौं कहा खग-केतू ॥

नाम रूप अपराध अनेकन जानि जानि बिस्तारे।
थके बेद जम अघहू थाके पै हम अजहुँ न हारे॥
बहुत कहाँ लौं कहौं प्रानपति सुनत सुनत अकुलैहो।
तुमरो नाम बेच अघ करने यह हमही मैं पैहौ॥
तुम्हरे बिरद-पनो सो मेरो पतित-पनो अधिकाई।
'हरीचंद' तारे इतने पै पावन पतित कन्हाई॥२९॥

नेह हरि सो नीको लागै।
सदा एक-रस रहत निरंतर छिन छिन अति रस पागै॥
नहि बियोग-भय नहि हिंसा जहँ सतत मधुर ह्वै जागै।
'हरीचंद' तेहि तजि मूरख क्यौं जगत-जाल अनुरागै॥३०॥

प्रभु मोहि नाहि नैकहू आस।
सब विधि मै तजिबेही लायक यह जिय दृढ़ विश्वास॥
शास्त्रन के अघ की जु कहानी तिनकी नहि कछु बात।
करुनामय की करनिहु सो मैं दंडहि जोग लखात॥
जिन दोसन सो सकुल दुसासन को तुम कीन्हो नास।
ते तिनहूँ सो बढ़ि मेरे मै करत इकत्रहि बास॥
शूद्र तपी सुनि बध्यो जाहि तुम तपत जदपि सो साँच।
महानीच हम भंड तपस्वी सो रहिहै किमि बाँच॥
मिथ्या अपजस सुनि सुनीच-मुख तजी सिया सी नारि।
सत्य सत्य हम महाकलंकिहि तजिहौ क्यौ न मुरारि॥
जिन कर्मन सो असुर स-कुल बारंबार सँहारे।
ते अघ कौन नही है हम मैं भाखहु नंद-दुलारे॥
हाँ जो पै मरजाद मिटावहु करुना-नदी बढ़ाई।
तौ या महापतित 'हरिचंदहि' सकहु नाथ अपनाई॥३१॥

प्रेम मैं मीन-मेष कछु नाहीं ।
अति ही सरल पंथ यह सूधो छल नहि जाके माहीं ।।
हिंसा द्वेष ईरखा मत्सर मद स्वारथ की बातैं ।
कबहूँ याके निकट न आवै छल-प्रपंच की घातैं ।।
सहज सुभाविक रहनि प्रेम की पीतम सुख सुखकारी ।
अपुनो कोटि कोटि सुख पिय के तनिकहि पर बलिहारी ।।
जहँ न ज्ञान अभिमान नेम व्रत बिषय-बासना आवै ।
रीझ खीझ दोऊ पीतम की मन आनंद बढ़ावै ।।
परमारथ स्वारथ दोउ पीतम और जगत नहि जानै ।
'हरीचंद' यह प्रेम-रीति कोउ बिरले ही पहिचानै ।।३२।।

तुम जो करत दीनन सो मोहन सो को और करै ।
महापतित जन वेद-विनिंदित को तिन कों उधरै ।।
सब विधि हीनन सों करि नेहहि कौन दया वितरै ।
'हरीचंद' की बाँह पकरि कै को भव पार करै ।।३३।।

गोपालहि रुचत सहज ब्योहार ।
निहछल बिनु प्रपंच निरकृत्रिम सब बिधि बिना विकार ।।
सहज प्रेम पुनि नेम सहजही सहज भजन रस-रीति ।
सहज मिलनि बोलनि चलनि सब सहजहि प्रीति प्रतीति ।।
हाव भाव चितवनि कटाक्ष अनुराग सहज जो होय ।
भावै सोई मेरे हरि को करौ कोटि कछु कोय ।।
पूजा दान नेम व्रत के पाखंड न हरि को भावैं ।
बादि रसिकता ज्ञान ध्यान जौ हरि-पद नेह न लावैं ।।
तासो सहज प्रेम-पथ वल्लभ सहजहि प्रगटि चलायो ।
'हरीचंद' को सहजहि निज करि निज जस सहज गँवायो ।।३४।।

प्रभु हो अपुनो बिरुद सम्हारो ।
जथा-जोग फल देन जनन की या थल बानि बिसारो ॥
न्यायी नाम छाँड़ि करुनानिधि दया-निधान कहाओ ।
मेटि परम मरजाद श्रुतिन की कृपा-समुद्र बहाओ ॥
अपुनी ओर निहारि साँवरे बिरदहु राखहु थापी ।
जामै निवहि जाँहि कोऊ बिधि 'हरिचंदहु' से पापी ॥३५॥

महिमा मेरे गोविदजू की कही कौन पैं जाई ।
परम उदार चतुर चितामनि जानि सिरोमनि-राई ॥
सेवा तनिक बहुत करि मानत ऐसे दीनदयाला ।
तुलसी-दलहि मेरु करि समझत ऐसो कौन कृपाला ॥
निज जन के अपराध कोटि सत तृनहूँ सो लघु मानै ।
करनी लखत न कबहुँ भक्त की अपुनो करिकै जानै ॥
दीन सुदामा अजामेल गज गनिका याके साखी ।
बारंबार पुरान बेद कथि सोइ मुनिवर बहु भाखी ॥
कहँ लौ कहौ कहत नहिं आवै करत नाथ जोइ जोई ।
'हरीचंद' से कलि के खल पै कृपा तुमहि सो होई ॥३६॥

ऐसे तुमही सो निबहै ।
ऐसे अधमन को करुनानिधि तुम बिनु कौन चहै ॥
मेटि सकल मरजाद श्रुतिन की पतितन को अपनाओ ।
तिनके दोस कोटि सब भूलो नित नित दया बढ़ाओ ॥
बहुत कहाँ लौ कहौ और सो कबहुँ न यह बनि आई ।
'हरीचंद' तुम सो स्वामी नहि तो बादिहि सब काई ॥३७॥

वह अपनी नाथ दयालुता तुम्हे याद हो कि न याद हो ।
वह जो कौल भक्तो से था किया तुम्हे याद हो कि न याद हो ॥
सुनि गज की जैसे ही आपदा न विलंब छिन का सहा गया ।

वहीं दौड़े उठ के पियादे-पा तुम्हें याद हो कि न याद हो ।।
व जो चाहा लोगों ने द्रौपदी की कि शर्म उसकी सभा मे लें ।
व बढ़ाया वस्त्र को तुमने जा तुम्हें याद हो कि न याद हो ।।
व अजामिल एक जो पापी था लिया नाम मरने पै बेटे का ।
व नरक से उसको बचा दिया तुम्हे याद हो कि न याद हो ।।
व जो गीध था गनिका व थी व जो व्याध था व मलाह था ।
इन्हे तुमने ऊँचों की गति दिया तुम्हे याद हो कि न याद हो ।।
खाना भील के वे जूठे फल कही साग दास के घर पै चल ।
युँही लाख किस्से कहूँ मै क्या तुम्हें याद हो कि न याद हो ।।
जिन बानरों मे न रूप था न तो गुनहि था न तो जात थी ।
उन्हे भाइयों का सा मानना तुम्हें याद हो कि न याद हो ।।
व जो गोपी गोप थे ब्रज के सब उन्हे इतना चाहा कि क्या कहूँ ।
रहे उनके उलटे रिनी सदा तुम्हे याद हो कि न याद हो ।।
कहो गोपियों से कहा था क्या करो याद गीता की भी जरा ।
यानी वादा भक्त-उधार का तुम्हे याद हो कि न याद हो ।।
या तुम्हारा ही 'हरिचंद' है गो फसाद मे जग के बंद है ।
व है दास जन्मों का आपका तुम्हें याद हो कि न याद हो ।।३८।।

मजा कही नहिं पाया जग मे नाहक रहा भुलाया ।
छिन के सुख की लालच जित तित स्वान लार टपकाया ।।
यह जग मे जिसको अपना कर झूठा भरम बढ़ाया ।
तिन स्वारथ फँसि कूकर सूकर सब दुतकार बताया ।।
अपना अपना अपना करकै बहुत बढ़ाई माया ।
अन्त सबै तजि दीनो मल सम जिनको अति अपनाया ।।
साँचे मीत श्यामसुंदर सों छिनहुँ न नेह बढ़ाया ।
'हरीचंद' मल मूत कीट बनि नर-जीवनहि गँवाया ।।३९।।

तुझ पर काल अचानक टूटैगा ।
गाफिल मत हो लवा बाज ज्यौ हँसी-खेल मे लूटैगा ।।
कब आवैगा कौन राह से प्रान कौन विधि छूटैगा ।
यह नहि जानि परैगी बीचहि यह तन-दरपन फूटैगा ।।
तब न बचावैगा कोई जब काल-दंड सिर कूटैगा ।
'हरीचंद' एक वही बचैगा जो हरिपद-रस घूँटैगा ।।४०।।

जीव तू महा अधम निर्लज्ज ।
अब तो लाजु कछुक सिर गरज्यो आइ काल को वज्ज ।।
फूलि न जौ तू ह्वै गयो राजा बाबू अमला जज्ज।
सब बकरी ही से मरि जैहैं लै दिन चार गरज्ज ।।
विष से विषयन कों तजियै तौ डूबन ही के कज्ज ।
'हरीचंद' हरि-चरन-अमृत-सर तजि जग छीलर मज्ज ।।४१।।

हरि-माया भठियारी ने क्या अजब सराय बसाई है ।
जिसमे आकर बसते ही सब जग की मति बौराई है ।
होके मुसाफिर सब ने जिसमे घर सी नेव जमाई है ।
भाँग पड़ी कूएँ मे जिसने पिया बना सौदाई है ।।
सौदा बना भूर का लड्डू देखत मति ललचाई है ।
खाया जिसने वह पछताया यह भी अजब मिठाई है ।।
एक एक कर छोड़ रहे हैं नित नित खेप लदाई है ।
जो बचते सो यही सोचते उनकी सदा रहाई है ।।
अजब भँवर है जिसमे पड़कर सब दुनिया चकराई है ।
'हरीचंद' भगवत-भजन-बिनु इससे नही रिहाई है ।।४२।।

डंका कूच का बज रहा मुसाफिर जागो रे भाई ।
देखो लाद चले सब पंथी तुम क्यो रहे भुलाई ।।

जब चलना ही निहचै है तो ले किन माल लदाई ।
'हरीचंद' हरि-पद बिनु नहि तो रहि जैहो मुँह बाई ।।४३।।

मृत्यु-नगाड़ा बाजि रहा है सुन रे तू गाफिल सब छन ।
गगन भुवन भरि पूरि रहा गंभीर नाद अनहद घन घन ।।
उनपति पहिले से बजता था बजता है औ बाजैगा ।
इसी शब्द मे गुन लै होंगे सदा एक यह राजैगा ।।
यह जग के सामान बीचही भए बीच मिट जावैंगे ।
परस रूप रस गंध अंत मे शब्दहि माहि समावैंगे ।।
काल रूप सच्चिदानंद घन साँचो कृष्ण अकेला है ।
'हरीचंद' जो और है कुछ वह चार दिनों का मेला है ।।४४।।

जग की लात करोरन खाया ।
मन में अब तो लाजु बेहाया ।।
अपना अपना करके पाली देह रहा बौराया ।
इंद्रिन को परितोष करन हित अघ भर-पेट कमाया ।।
स्वारथ लोभी जग आगे दुख रोया लाज गँवाया ।
लाज गई औ धरम डुबाया हाथ कछू नहि आया ।।
साँचे मीत पतित-पावन भरि करन दीन पर दाया ।
अरे मूढ़ 'हरिचंद' भागु चलु अब तौ उनकी छाया ।।४५।।

यारो इक दिन मौत जरूर ।
फिर क्यौ इतने गाफिल होकर बने नशे मे चूर ।।
यही चुड़ैलें तुम्हे खायँगी जिन्हे समझते दूर ।
माया मोह जाल की फाँसी इससे भागो दूर ।।
जान बूझकर धोखा खाना है यह कौन शऊर ।
आम कहाँ से खाओगे जब बोते गये बबूर ।।

राजा रंक सभी दुनियां के छोटे बड़े मजूर ।
जो माँगो बाँधित को मारै वही सूर भर-पूर ॥
झूठा झगड़ा झूठा टंटा झूठा सभी गरूर ।
'हरीचंद' हरि-प्रेम बिना सब अंत धूर का धूर ॥४६॥

यारो यह नहि सच्चा धरम ।
छू छू कर या नाक मूँद कर जो कि बढ़ाया भरम ॥
बंधन ही मे डालैंगे यह बुरे-भले सब करम ।
प्रान नहीं सुधरा तौ कोरा बैठे धोओ धरम ॥
झूठे साधन छोड़ो जी से दीन बनो तुम परम ।
'हरीचंद' हरि-सरन गहो इक यही धरम का मरम ॥४७॥

चेत चेत रे सोवनवाले सिर पर चोर खड़ा है ।
सारी बैस बीत गई अब भी मद मे चूर पड़ा है ॥
सहि अपमान स्वान-सम निरलज जग के द्वार अड़ा है ।
जरा याद उस समय की भी कर सबसे जौन कड़ा है ॥
देखु न पाप नरक मे तेरा जीवन जनम सड़ा है ।
'हरीचंद अब' तौ हरि-पद भजु क्यो जग-कीच गड़ा है ॥४८॥

क्यो बे क्या करने जग मे तू आया था क्या करता है ।
गरभ-बास की भूल गया सुध मरनहार पर मरता है ॥
खाना पीना सोना रोना और विषय मे भूला है ।
यह तो सूअर मे भी है तू मानुस बनि क्या फूला है ॥
एक बात पशुओं मे बढ़कर तुझसे पाई जाती है ।
तू ज्ञानी हो पापी है वहाँ पाप-गंध नहिं आती है ॥
जो विशेष था तुझ मे पशु से उसे भूल तू बैठा है ।
तो क्यों नाहक हम मनुष्य है इस गरूर मे ऐंठा है ॥

जान बूझ अनजान बना है देखो नहिं पतियाता है।
'हरीचंद' अब भी हरि-पद भज क्यों अवसरहि गँवाता है ॥४९॥

अपने को तू समझ जरा क्या भीतर है क्या भूला है।
तेरा असिल रूप क्या है तू जिसके ऊपर फूला है॥
हड्डी चमड़ी लहू मांस चरबी से देह बनाई है।
भीतर देखो तो घिन आवै ऊपर से चिकनाई है॥
लार पीप मल मूत पित्त कफ नकटी खूँट औ पोटा है।
नीली पीली नस कीड़ों से भरा पेट का लोटा है॥
तनिक कहीं खुल जाय तो थू थू कर सब नाक सिकोड़ैगा।
जरा गलै या पचै मरै तो देख सभी मुँह मोड़ैगा॥
भरी पेट में मल की गठरी ऊपर न्हाइ सुधरता है।
तिसको छू कर वायु चलै तो नाक बंद सब करता है॥
मल से उपजा मल में लिपटा मति-मलीन तू घूरा है।
इस शरीर पर इतना फूला रे अन्धे मगरूरा है॥
जिसके छुटते ही तू गंदा मिलने ही से सजता है।
'हरीचंद' उस परमातम को, गदहे क्यों नहि भजता है ॥५०॥

फूलों का गुच्छा

समर्पण

मेरे प्राणप्रिय मित्र !

क्या तुमने यह नही सुना है "रिक्तपाणिंन पश्येद्दै राजानं भेषजं गुरुं" अर्थात् राजा और वैद्य और गुरू को कोरे हाथों नहीं देखना। तो मैं आज अनेक दिन पीछे तुम्हारा दर्शन करने आया हूँ, इससे यह "फूलो का गुच्छा" तुम्हारे जी बहलाने के लिए लाया हूँ जो अंगीकार करो तो परिश्रम सफल हो। यह मत संदेह करना कि मै राजा वा वैद्य वा गुरू इनमे कौन हूँ, क्योंकि मेरे तो तुम्ही राजा और तुम्हीं वैद्य और तुम्हीं गुरू हो।

१४ सितम्बर १८८२
॥१९३९॥

केवल तुम्हारा
हरिश्चंद्र।
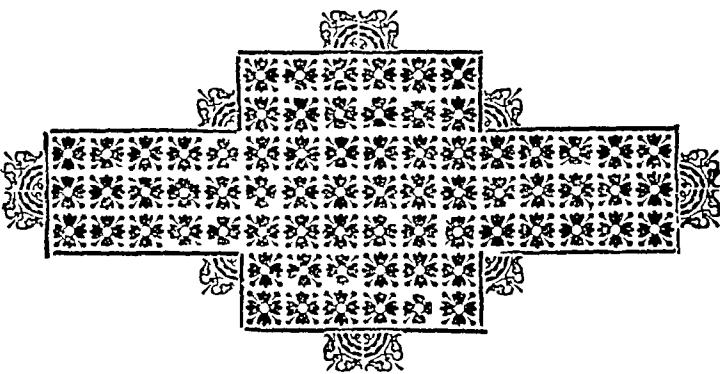
फूलों का गुच्छा

नहीं का वाकी वक्त नहीं है जरा न जी मे शरमाओ।
लब पर जाँ है, भला अब तो प्यारे मिलते जाओ॥
कहाँ गईं वह पिछली बातें कहाँ गया वह था जो प्यार।
किधर छिपाया चाँद-सा मुखड़ा दिखलाता जा यार॥
बेहोशी मे घबड़ा घबड़ा करके यही कहता हूँ पुकार।
मर्ज बढ़ गया बहुत इससे बचना अब है दुश्वार॥
करो आरजू दिल की मेरे पूरी सूरत दिखलाओ।
लब पर जाँ है, भला अब तो प्यारे मिलते जाओ॥
गरचे उम्र भर खराब रुसवा ज़लीलो परेशान रहा।
हमेशा मुझको तुम्हारे मिलने का अरमान रहा॥
जिया बेहयाई से अब तक कितना भी हैरान रहा।
जान न दे दी, हमेशा कौल का तेरे ध्यान रहा॥
पै मरने के सिवा है अब तदबीर-कौन वह बतलाओ।
लब पर जाँ है, भला अब तो प्यारे मिलते जाओ॥

तुम्हें कहे जो झूठा प्यारे उसे ही बनाए झूठा।
मुझको तुमसे नहीं कुछ बाकी है करना शिकवा ।।
इस्में तुम्हारा कसूर क्या है होता है किस्मत का लिखा।
मर जायेंगे पर न इस जबाँ से होगा तेरा गिला ।।
हुई जो होनी थी इस्से तुम जरा न जी मे शरमाओ।
लब पर जॉ है, भला अब तो प्यारे मिलते जाओ ।।
हम तो खैर हसरत लाखो ही जी में अपने ले के चले।
पर य खौफ है तुम्हे बेरहम न प्यारे कोई कहै ।।
हँस के रुखसत करो न जी में तो कुछ भी अरमान रहे।
कोई जुदा गर होय तो मिलते हैं सब जाके गले ।।
'हरीचंद' से भला रस्म इतनी तो अदा करके आओ।
लब पर जॉ है, भला अब तो प्यारे मिलते जाओ ।। १ ।।

तुम्ही निहॉ गर हौ तो जहॉ मे सब य आशकारा क्या है।
तुम्हीं छिपे हौ तो यह सब जुहूर प्यारे किसका है ।।
तेरा रंग गर नही है तो क्या दुनियॉ मे दिखलाता है।
तेरी शक्ल बिन कहॉ से सूरत हर शय पाता है ।।
तुझे हाथ गर नहीं तो खुद क्या यह जहान बन जाता है।
तुझे नहीं है जो मुँह तो किसका सबद सुनाता है ।।
तुममे झलक गर नही तो किससे रोशन यह काशाना है।
तुम्हीं छिपे हौ तो यह सब जुहूर प्यारे किसका है ।।
खयाल के बाहर तुम हौ तो यह खयाल सब है किसका।
तुम तो चुप हौ तो फिर यह शोर जहॉ मे है कैसा ।।
तुम्हें कान गर नही है तो आवाज़ कौन यह है सुनता।
ध्यान के बाहर जो तुम हो तो यह ध्यान कैसे आया ।।
दूर समझ से हौ तो यह फिर कैसे सबने समझा है।

तुम्ही छिपे हौ तो यह सब जुहूर प्यारे किसका है ॥
तुझे न जिसने याद किया वह खुद अपने को है भूला ।
बिगड़ा बस वह न तेरा जोयाँ जो ऐ यार बना ॥
सब कुछ उसने खोया जिसने तुझे न ऐ दिलबर पाया ।
अंधा है वह जिसको यह नूर नही कुछ दिखलाया ॥
हर जा पर गर नही हो तुम तो फिर य तमाशा कैसा है ।
तुम्ही छिपे हौ तो यह सब जुहूर प्यारे किसका है ॥
तुझे कोई काबे मे हाज़िर कोई दैर मे बतलाता ।
भूले है सब अक्ल मे बेशक इनके फर्क पड़ा ॥
अरे नही एक-जाई तू तो हाज़िर रहता है हर जा ।
फिर बकने से भला इन बातो के हासिल है क्या ॥
बेवकूफ है 'हरीचंद' जो इसमे कुछ भी कहता है ।
तुम्ही छिपे हौ तो यह सब जुहूर प्यारे किसका है ॥२॥

छुड़ा के दीनों ईमाँ मुझको जहाँ मे काफिर ठहराया ।
दैरो हरम को इबादत को क्यौ मुझसे छुड़वाया ॥
पिला पिला के शराब क्यो मस्ताना मुझको बनवाया ।
बना के मेरा तमाशा क्यौ आलम को दिखलाया ॥
अपना अपना क्यौ मुझको दुनियाँ मे प्यारे कहलाया ।
था जो छोड़ना तो फिर पहले क्यौ मुझको अपनाया ॥
कहाँ गई वह बातै प्यारी प्यारी तेरी ऐ दिलदार ।
कहाँ गया वो तुम्हारा आगे का सा मुझ पर प्यार ॥
कहाँ गई वह मीठी निगाहै हर दम जो थी दिल के पार ।
कहाँ छिपाया निमानी सूरत तू ने मेरे यार ॥
दिखा के अपना जल्वा फिर क्यों रुख फेरा क्यौ शरमाया ।
था जो छोड़ना तो फिर पहले क्यौ मुझको अपनाया ॥

क्यौं वह मै थी मुझे पिलाई जिसका न उतरै कभी नशा ।
दो आलम में मुझे ऐ प्यारे क्यों बदनाम किया ।।
काफिर क्यौं कहलाया मुझको दैरो हरम दोनो से गँवा ।
हम-चश्मों में किया क्यों मुझे मेरे प्यारे रुसवा ।।
मेरे इश्क का नक्कार: दो आलम मे क्यो बजवाया ।
था जो छोड़ना तो फिर पहले क्यौं मुझको अपनाया ।।
होके तुम्हारा गुलाम अब मैं किसका प्यारे कहलाऊँ ।
आके तुम्हारे दर पै प्यारे किसके घर पर जाऊँ ।।
इसी शर्म में मरता हूँ मै अपना नाम क्या बतलाऊँ ।
अपने दिल को यार किस तरह कहो मैं समझाऊँ ।।
यही चाल थी तो फिर क्यौ तू ग़रीब-परवर कहलाया ।
था जो छोड़ना तो फिर पहले क्यौं मुझको अपनाया ।।
अब तो न छोड़ूँ तेरा क़दम प्यारे जो होनी हो सो हो ।
यार निबाहो तुम भी बाक़ी है जिदगी के दिन दो ।।
कहाँ मै जाऊँ किसको ढूँढूँ किसका होकर रहूँ कहो ।
मै तो प्यारे तुम्हारा हूँ तुम मेरे प्यारे हो ।।
'हरीचंद' मेरा है मैं उसका हूँ यह था क्यों फरमाया ।
था जो छोड़ना तो फिर पहले क्यौ मुझको अपनाया ।। ४ ।।

दिल मे दिलबर ने जल्वा दिखला के बनाया मस्ताना ।
मज़ा न पाया बयाँ जिसका गूँगे का गुड़ खाना ।।
जब से यार ने अपने इश्क की मै से मुझे सरशार किया ।
अपनी नरगिसी निमानी आँखों का बीमार किया ।।
भोली सी उस सूरत पर मुझको निसार सौ बार किया ।
ज़ुल्फ दिखाकर पेच मे लट के झट गिरफ्तार किया ।।
तब से सब कुछ छोड़ हुआ उस मस्ती से मै दीवाना ।

मजा न पाया क्यों जिसका गूँगे का गुड़ खाना ॥
कोई मुझे कहता काफिर बे-ईमाँ कोई बतलाता ।
कोई मुझसे बोलने मे भी जबाँ से शरमाता ॥
हाल देख कर हँसता कोई तर्स कोई मुझपर खाता ।
कोई मुझको आनकर रो रो कर है समझाता ॥
पर मै क्या समझूँ कि रंग मे अपने हूँ खुद मस्ताना ।
मजा न पाया क्यों जिसका गूँगे का गुड़ खाना ॥
यह वह शै है जिसकी खोज मे हर कोई हैरान रहा ।
हर शखसों ने आज तक इसकी बाबत बहुत कहा ॥
कोई मजाजी कहता हकीकी नाम किसी ने है रक्खा ।
कोई मसजिद कोई बुतखाने मे नित है जाता ॥
पै हमने तो सीधा ताका उस साकी का मैखाना ।
मज़ा न पाया क्यों जिसका गूँगे का गुड़ खाना ॥
यह वह रंग है जिसमे रँगा उसपर न दूसरा रंग चढ़ा ।
यह वह मै है न उतरा महशर तक भी जिसका नशा ॥
बगैर इसमे डूबे किसी को जरा न इसका पता लगा ।
बिन मस्ती के इश्क़ के कोई नही हुशियार बना ॥
'हरीचंद' क्या इससे हासिल है व फकत हमने जाना ।
मज़ा न पाया क्यों जिसका गूँगे का गुड़ खाना ॥ ५ ॥

खाक किया सबको तब यह अकसीर है कमाया हमने ।
सबको खोया यार अपने को तब पाया हमने ॥
अपना बेगाना किया दोस्त को दुशमन ठहराया हमने ।
दीन व ईमाँ बिगाड़ा धरम सब डुबाया हमने ॥
काम रंज से रहा चैन दम भर न कही पाया हमने ।
दोनों जहाँ के ऐश को खाक मे मिलाया हमने ॥

जिसका नाम है शरम उसी को जग मे शरमाया हमने ।
सबको खोया यार अपने को तब पाया हमने ॥
जब से दिल मे मेरे वह दिलबर जलवा-अफरोज़ हुआ ।
मिला मज़ा वह नही इस दुनियाँ मे सानी जिसका ॥
जब से आँखो मे उसके मिलने का मेरी छा गया नशा ।
सब कुछ भूला कुछ ऐसा हासिल मुझको हुआ मज़ा ॥
काम किसी से रहा न ऐसा नशा है जमाया हमने ।
सब को खोया यार अपने को तब पाया हमने ॥
छिपा न उसका इश्क-राज़ आखिर को सब कुछ फाश हुआ ।
बे-दीनी का व शुहरा हुआ कि काफिर सब ने कहा ।
हुई यहाँ तक बरबादी घर-बार खाक मे सभी मिला ॥
ली बदनामी हुआ बेशर्मो हया दर-दर रुसवा ।
बे-ईमाँ बे-दी क़ाफिर अपने को कहलाया हमने ॥
सब को खोया यार अपने को तब पाया हमने ॥
मिला मेरा दिलबर मुझको अब किसी बात की चाह नही ।
कोई खफा हो या खुश हो कुछ मुझको परवाह नही ॥
सिवा यार के कूचे जाना दैरो-हरम की राह नही ।
सब कुछ मेरा यार है और कोई अल्लाह नही ॥
'हरीचंद' क्या बयाँ हो गूँगे होकर गुड़ खाया हमने ।
सब को खोया यार अपने को तब पाया हमने ॥६॥

श्री राधा-माधव जुगल-चरन-रस का अपने को मस्त बना ।
पी प्रेम-पियाला भर भर कर कुछ इस मै का भी देख मज़ा ॥
यह वह मै है जिसके पीने से और ध्यान छुट जाता है ।
अपने में औ दिलवर मे फिर कुछ भेद नहीं दिखलाता है ॥
इसके-सुरूर से मस्त हरेक अपने को नज़र बस आता है ।

फिर और हवस रहती न जरा कुछ ऐसा मजा दिखाता है ॥
टुक मान मेरा कहना दिल को इस मैखाने की तर्फ झुका ।
'पी प्रेम-पियाला भर भर कर कुछ इस मै का भी देख मजा ॥
यह वह मै है जिसका कि नशा जब आँखो मे छा जाता है ।
मैखाना काबा बुतखाना सब एकी सा दिखलाता है ॥
हुशियार समझता अपने को जग को अहमक बतलाता है ।
वह काम खुशी से करता जिसके नाम से जग शर्माता है ॥
जिसका कि नाम है शर्म आप वह इस मै से जाती शरमा ।
पी प्रेम-पियाला भर भर कर कुछ इस मै का भी देख मजा ॥
हुशियार वही है आलम मे इस मै से जो सरशार बने ।
हो कार उसी का पूरा जो इस दुनियाँ से बे-कार बने ॥
हो यार वही उसका जो इस जग मे सब से अग़यार बने ।
पहिने कमाल का जामा वह जिसका कि गरेबाँ तार बने ॥
गर लुत्फ उठाना हो इसका तो तू भी मेरा मान कहा ।
पी प्रेम-पियाला भर भर कर कुछ इस मै का भी देख मजा ॥
गो दुनिया मे उस दाना को हर शख्स बड़ा नादान कहे ।
पर उसे मजा वह हासिल है जिससे वह हेच सब को समझे ॥
कभी न उतरै उसका नशा जिसके सिर इसका भूत चढ़ै ।
हँसते-हँसते इस दुनिया से झट उसका बेड़ा पार लगे ॥
इतवार न हो तो देख न ले क्या 'हरीचंद' का हाल हुआ ।
'पी प्रेम-पियाला भर भर कर कुछ इस मै का भी देख मजा ॥७॥

यह वह गोरख-धंधा है जिसका न किसी पर भेद खुला ।
वह झगड़ा है फैसला जिसका कुछ अब तक न हुआ ॥
कहाँ से औ किस तरह से किसने क्यो यह पैदा किया जहाँ ।
किसने सूरत खड़ी की किसने इसमे डाली जाँ ॥

मिली, कहाँ से अक्ल बशर को अक्ल सख्त यह है हैराँ।
क्या है बोलता बयाँ से इसके बस हारी है ज़बाँ॥
फिर अखीर मे कहाँ जायगा इसका नतीजा होगा क्या।
वह झगड़ा है फैसला जिसका कुछ अब तक न हुआ॥

कोई बनानेवाला खुद है या खुद ही यह बनता है॥
बदन है सोई जाँ है या वहाँ दूसरा बैठा है।
बुरी-भली बातों का नतीजा कहीं जाके कुछ मिलता है॥
या मन माने वही करना दुनिया मे अच्छा है।
इसको मुअम्मा कहते हैं मुशकिल है हल करना जिसका।
वह झगड़ा है फैसला जिसका कुछ अब तक न हुआ॥

गरचे खुदा है कोई तो हो फिर उसके मानने से है क्या।
मानै भी तो किस तरह कैसे कोई देवे बता॥
काबे में जाकर के झुका सिर करै उसको डर कर सिजदा।
या कोई बुत बना कर उसकी नित कर ले पूजा॥
होके एक-मत मज़हबवालो कुछ तो इसमे कहो ज़रा॥
वह झगड़ा है फैसला जिसका कुछ अब तक न हुआ।

एक किसी ने माना किसी ने दो व किसी ने तीन कहा॥
मिला बताया किसी ने उसे जहाँ से कहा जुदा।
बुत मे किसी ने पूजा किसी ने उसको पुकारा कह के खुदा॥
अपनी अपनी तौर पर गरज़ कि सब ने है खीचा।
मगर न तै यह हुआ हकीकत मे य माजरा है कैसा॥
वह झगड़ा है फैसला जिसका कुछ अब तक न हुआ॥

मैने तो पहिचाना प्यारे तुमको तै कर सब झगड़े।
बने बनाये तुम ने सब को सब मे मौजूद रहे॥
नाम तुम्हारा दिलबर है है बुत व खुदा दोनो झूठे।
यह सब जलवा तुम्हारा ही है जिधर चाहे देखे॥

'हरीचंद' के सिवा किसी पर ज़रा न तेरा भेद खुला।
वह झगड़ा है फैसला जिसका कुछ अब तक न हुआ ॥८॥

दिलबर के इश्क मे दिल को एक मिलावे।
अपने को खोए तब अपने को पावे॥
दिलबर को एक कर के अपने मे साने।
इस दुनिया को इक अजब तमाशा जाने॥
मै क्या हूँ इसको जी देकर पहिचाने।
अपने को अपना सिरजनहारा माने॥
यह भेद का परदा ऑखो से हट जावे।
अपने को खोए तब अपने को पावे॥
वह मै पी ले उतरै न नशा फिर जिसका।
वह सुरूर हो जिसका वयान क्या करना॥
सब दुनिया को बस जाने एक तमाशा।
इस धारा मे अपने को समझै बहता॥
जब सब आलम यह नजर खेल सा आवे।
अपने को खोए तब अपने को पावे॥
कुछ भले-बुरे मे फर्क न जी से रक्खे।
काले गोरे का एक रंग बस सूझे॥
दुशमन को दोस्त को एक नज़र से देखे।
मैखाना मसजिद मंदिर एकी समझे॥
दो की गिनती भूले न जवॉ पर लावे।
अपने को खोए तब अपने को पावे॥
जब अपना ही अपने को होए सौदा।
अपनी ऑखों से देखे आप तमाशा॥
खुद अपनी करने लगै आप ही पूजा।

अपने ही नशे से आप बने मस्ताना ॥
रग रग से अनलूहक यही सदा बस आवे ।
अपने को खोए तब अपने को पावे ॥
तब 'हरीचंद' मैं क्या कहूँ यह दिखलाता ।
जब चिनगारी से आप आग हो जाता ॥
पत्ते से पेड़ बंदे से खुदा कहलाता ।
जब अपने को हर शै में हाज़िर पाता ॥
जुज़ से कुल क़तरे से दरिया बन जावे ।
अपने को खोए तब अपने को पावै ॥ ९ ॥

मिलै न मुझसे उसका दिल जिस दिल में वह दिलाराम न हो ।
मुँह न दिखावै जिसके मुँह में दिलबर का नाम न हो ॥
लगै आग उस मैखाने में जहाँ न वह साक़ी होवै ।
बरगशतः हो व मजलिस जहाँ दौर उसका न चलै ॥
जिसमें उसका नशा न हो वह ज़हरे हलाहल होए मै ।
बरहम होए वह सुहबत जहाँ न उसका जिक्र रहै ॥
वीरानः वह बाग़ हो जिसमें मेरा वह गुलफाम न हो ।
मुँह न दिखावै जिसके मुँह मे दिलवर का नाम न हो ॥
पुरजे हो वह किताब जिसमें तेरा यार बयान न हो ।
गारत हो वह दीन जिसमे तुझ पर ईमान न हो ॥
ढहै वह काबा जहाँ वक्त सिजदे के तेरा ध्यान न हो ।
टूटै वह बुत तुम्हारी झलक जिसमे ए जान न हो ॥
काफिर हो वह कुफ्र से तेरे यार जो कि बदनाम न हो ।
मुँह न दिखावे जिसके मुँह मे दिलबर का नाम न हो ॥
हम तो पीकर शराब तेरी मस्त हुए ऐसे प्यारे ।
सबको खोकर तुम्हे ऐ यार हमने पाया तारे ॥

मजा मिला वह जिससे हेच दिखलाते है मज़हब सारे।
छोड़के सबको, बैठे मैखाने मे आसन मारे॥
दूर हो वह नाचीज़ हाथ मे जिसके इश्क का जाम न हो।
मुँह न दिखावै जिसके मुँह मे दिलबर का नाम न हो॥
कभी न देखै नजर उठाकर गरचे सामने खड़ा हो शाह।
या फकीर हो, नही कुछ इसकी भी मुझको परवाह॥
यार हो रिश्तेदार हो मुझको खाक नही कुछ उनकी चाह।
फकत मिलो तुम मेरे दिलबर औ मेरा करो निबाह॥
'हरीचंद' तेरे कहलाकर और किसी से काम न हो।
मुँह न दिखावे जिसके मुँह मे दिलबर का नाम न हो॥१०॥

हजार लानत उस दिल पर जिसमे कि इश्के दिलदार न हो।
फूटे ऑखे वे जिनमे बँधा अशक का तार न हो॥
हिज्र की तलखी नही है जिसमे तलख जिन्दगानी वह है।
जीस्त नही है सरासर बस सरगरदानी वह है॥
सुलझे रहना इसके जाल से निरी परेशानी वह है।
जीना क्या है अगर इस जॉ मे नहीं जानी वह है॥
है जिदा दर-गोर व जिसको मरने का आजार न हो।
फूटे ऑखे वे जिनमे बँधा अशक का तार न हो॥
वे महबूब मजेदारी गर हुई तबीअत मे तो क्या।
झूठी है सब शायरी अगर नही दिल कही फिदा॥
नाहक दीदारी है सारी गर न इश्क का तीर लगा।
दुनियादारी भी है इक बोझ सिर्फ उलफत के बिना॥
बेचारा है वही जो जुल्मे दिलबर से लाचार न हो।
फूटे ऑखे वे जिनमे बँधा अश्क का तार न हो॥
मिले जहन्नुम मे वह बातें जिनका कुछ भी उसूल न हो।

क्यों वह काबिल है बनता जिसमे वह मक़बूल न हो ॥
सिजदा है य सर का मारना जिसमें कुछ भी हुसूल न हो ।
फ़ाजिल है वह बना क्यौं दुनियाँ मे जो फुजूल न हो ॥
क्यों माला फेरे है वह गुल जिसके गले का हार न हो ।
फूटें आँखे वे जिनमे बँधा अश्क का तार न हो ॥
क्यों वह दौलतमंद है जिसके पास ज़रे बेकसी नहीं ।
क्या आज़ादी है उसको जिसकी अक्ल कुछ फँसी नहीं ॥
बग़ैर उसके वस्ल के सब रँड़-रोना है यह हँसी नहीं ।
उजड़ा है वह मोहनी छबि जिस दिल मे बसी नहीं ॥
'हरीचंद' सब अभी खाक मे मिलै जिसमे वह यार न हो ।
फूटें आँखें वे जिनमे बँधा अश्क का तार न हो ॥११॥

तुम गर सच्चे हो तो जहाँ को कहते है सब क्यों झूठा ।
तुम निर्गुन हौ तो फिर यह गुन जग मे सब है किस का ।
जो झूठा होता है उसकी बातै होती हैं झूठी ॥
ज्यों सपने की मिली संपत कुछ काम नहीं करती ॥
सच्चों के तो काम है जितने वह सच्चे होते है सभी ।
फिर बकते हैं भला क्यो सब के जहाँ झूठा है अजी ॥
भला कहीं शीशे से हीरा हुआ किसी ने है देखा ।
तुम निर्गुन हौ तो फिर यह गुन जग मे सब है किसका ।
तुम ने बनाया या कि बने खुद तो यह माया है कैसी ॥
एक जो हौ तुम तो फिर यह कौन दूसरी आके घुसी ।
गरचे काम उसका है तो फिर तेरी क्या तारीफ रही ॥
तुम करते हौ तो क्यौं कहते हैं हुई किसमत की लिखी ।
हैं जो तुम्हारे शरीक तो फिर ला-शरीक क्यों नाम पड़ा ।
तुम निर्गुन हौ तो फिर यह गुन जग मे सब है किस का ॥

जहाँ अगर झूठा है तो फिर मतवालों को क्या है काम ।
फिर मजहब मे भला क्यों करता है हर शख्स कलाम ।।
बेद वगैरह भी तो जहाँ में है फिर क्या है इनसे काम ।
इनके सिवा भी कहोगे जो कुछ सब झूठा है मुदाम ।।
खुद झूठा जो होगा उसका कहना भी सब है झूठा ।
तुम निर्गुन हौ तो फिर यह गुन जग में सब है किस का ।।
सभी शोर करते है साँप का रस्सी मे यह धोखा है ।
भूले है वह, जहाँ गर दो हो तो यह बात बनै ।।
यह तो तब हो जब कि साँप रस्सी यह कायम हो दो शै ।
यहाँ तुम्हारे सिवा है कोई दूसरा कौन कहै ।।
'हरीचंद' तू सच है तो जग क्यौ अपने मुँह झूठ बना ।
तुम निर्गुन हौ तो फिर यह गुन जग मे सब है किसका ।।१२।।

ढूँढ़ फिरा मै इस दुनिया में पश्चिम से ले पूरब तक ।
कहीं न पाई मेरे दिलदार प्रेम की तेरे झलक ।।
मसजिद मंदिर गिरजो मे देखा मतवालों का जा दौर ।
अपने अपने रँग मे रँगा दिखाया सब का तौर ।।
सिवा झूठी बातों व बनावट के न नजर आया कुछ और ।
एक एक को टटोला खूब तरह हमने कर गौर ।।
तेरे न दरशन हुए मुझे मै बहुत खोज कर बैठा थक ।
कहीं न पाई मेरे दिलदार प्रेम की तेरे झलक ।।
जो आकिल पंडित शायर हैं उनको भी जाकर देखा ।
झगड़े ही मे उन्हे हमने हर दम लड़ते पाया ।।
जिसे बुरा कहता है एक उसको कहता कोई अच्छा ।
कोई पुरानी लीक पीटै है कोई कहता है नया ।।
जहाँ पै देखा नजर पड़ी ह्वाँ यह झूठी कोरी वक वक ।।

कहीं न पाई मेरे दिलदार प्रेम की तेरे झलक ॥

जिनको आशिक सुनते थे उनके भी जाकर देखे ढंग ।
माशूकों के कहीं कुछ नज़र पड़े हर तरह के रंग ॥
वही बँधी बातें हैं वही सुहबत है वही हैं उनके संग ।
गरज कि इनसे मेरी जाँ आई है अब बहुत ब-तंग ॥
मतलब की बातों को छोड़ कर और नहीं कुछ है बेशक ।
कहीं न पाई मेरे दिलदार प्रेम की तेरे झलक ॥

कोई मान कर सवाब तेरा इश्क जहाँ मे करते हैं ।
कोई गुनह से ख़ौफ़ दोज़ख़ का करके डरते है ॥
कोई मजाज़ी इश्क में अपने मतलब का दम भरते हैं ।
कोई मरके मिलै बैकुंठ इसी पर मरते है ॥
'हरीचंद' पर इनमें से पहुँचा कोई नहि तेरे तलक ।
कहीं न पाई मेरे दिलदार प्रेम की तेरे झलक ॥१३॥

प्रेम-फुलवारी

'इश्क चमन महबूब का वहाँ न जावै कोय।
जावै तो जीवै नहीं जिए तो बौरा होय॥
सीस काट आगे धरौ तापर राखौ पाँव।
इश्क चमन के बीच मे ऐसा हो तो आव॥'

'सीचन की सुधि लीजौ मुरझि न जाय।'

सं० १९४०

मेडिकल हाल प्रेस में
सन् १८८३ में प्रकाशित
कुछ अंश नवोदिता हरिश्चन्द्र-चंद्रिका
मे १८८४ मे प्रकाशित

मेरे प्यारे,

तुम्हें कुंजों मे वा नदियो के तटों पर फिरते प्राय देखा है और इससे निश्चय होता है कि तुम बड़े सैलानी हो। पर यो मन-मानी सैल करने मे तुम्हारे कोमल चरनो में जो कंकरियाँ गड़ती है, वह जी में कसकती है। इससे मैने रच रच कर यह फुलवारी बनाई है, सींचते रहना, यह भला मै किस मुँह से कहूँ। पर जैसे इधर उधर सैल करते फिरते हो, वैसे ही कभी कभी भूले भटके इस "फुलवारी" मे भी आ निकलोगे तो परिश्रम सफल होगा।

केवल तम्हारा
हरिश्चंद्र

प्रेम-फुलवारी

भरति नेह नव नीर नित बरसत सुरस अथोर।
जयति अपूरब घन कोऊ लखि नाचत मन मोर ॥ १ ॥
जेहि लहि फिर कछु लहन की आस न चित मे होय।
जयति जगत-पावन-करन प्रेम बरन यह दोय ॥ २ ॥
चंद मिटै सूरज मिटै मिटैं जगत के नेम।
यह दृढ़ श्री 'हरीचंद' को मिटै न अबिचल प्रेम ॥ ३ ॥

प्रेम-फुलवारी की भूमि

राग बिहाग

श्री राधे मोहि अपनो कब करिहौ।
जुगल-रूप-रस-अमित-माधुरी कब इन नैननि भरिहौ ॥
कब या दीन हीन निज जन पै ब्रज को बास बितरिहौ।
'हरीचंद' कब भव बूड़त तें भुज धरि धाइ उबरिहौ ॥ १ ॥

अहो हरि बस अब बहुत भई।
अपनी दिसि बिलोकि करुना-निधि कीजै नाहि नई ॥
जौ हमरे दोसन को देखौ तौ न निवाह हमारौ।
करिकै सुरत अजामिल-गज की हमरे करम बिसारौ ॥
अब नहिं सही जात कोऊ बिधि धीर सकत नहि धारी।
'हरीचन्द' को वेगि धाइकै भुज भरि लेहु उबारी ॥ २ ॥

पियारे याको नॉव नियाव ।
जो तोहि भजै ताहि नहि भजनो कीनो भलो बनाव ॥
बिनु कछु किये जानि अपुनो जन दूनो दुख तेहि देनो ।
भली नई यह रीति चलाई उलटो अवगुन लेनो ॥
'हरीचंद' यह भलो निबेरयौ ह्वैकै अंतरजामी ।
चोरन छॉड़ि छॉड़ि कै डाँड़ौ उलटो धन को स्वामी ॥ ३ ।

जानते जो हम तुमरी बानि ।
परम अबार करन की जन पैं, हे करुना की खानि ॥
तो हम द्वार देखते दूजो होते जहॉ दयाल ।
करते नहिं बिस्वास बेद पै जिन तोहि कह्यौ कृपाल ॥
अब तो आइ फॅसे सरनन मैं भयो तुम्हारो नाम ।
'हरीचंद' तासों मोहि तारो बान छोड़ि घनश्याम ॥ ४ ॥

प्यारे अब तो सही न जात ।
कहा करै कछु बनि नहि आवत निसि दिन जिय पछितात ॥
जैसे छोटे पिजरा मे कोउ पंछी परि तड़पात ।
त्योंही प्रान परे यह मेरे छूटन को अकुलात ॥
कछु न उपाव चलत अति ब्याकुल मुरि मुरि पछरा खात ।
'हरीचंद' खींचौ अब कोउ बिधि छॉड़ि पॉच अरु सात ॥ ५ ॥

नाहि तो हॅसी तुम्हारी ह्वैहै ।
तुमही पै जग दोस धरैगो मेरो दोस न दैहै ॥
बेद पुरान प्रमान कहो को मोहि तारे बिनु लैहै ।
तासो तारो 'हरीचंद' को नाहीं तो जस जैहै ॥ ६ ॥

फैलिहै अपजस तुम्हरो भारी ।
फिर तुमकों कोऊ नहि कहिहै मोहन पतित-उधारी ॥

वेदादिक सब झूठ होइगे ह्वै जैहै अति ख्वारी।
तासों कोउ बिधि धाइ लीजिए 'हरीचंद' को तारी ॥ ७ ॥

तुम्हरे हित की भाखत बात ।
कोउ बिधि अब की तार देहु मोहि नाही तो प्रन जात ॥
बूँद चूकि फिरि घट ढरकावत रहि जैहौ पछितात ।
बात गए कछु हाथ न ऐहै क्यौ इतनो इतरात ॥
चूक्यौ समय फेर नहि पैहौ यह जिय धरि के तात ।
तारि लीजिए 'हरीचंद' को छाँड़ि पाँच अरु सात ॥ ८ ॥

भरोसो रीझन ही लखि भारी ।
हमहूँ को विश्वास होत है मोहन पतित-उधारी ॥
जो ऐसो सुभाव नहि होतो क्यौ अहीर कुल भायो ।
तजि कै कौस्तुभ सो मनि गल क्यौ गुंजा-हार धरायो ॥
क्रीट मुकुट सिर छोड़ि पखौआ मोरन को क्यों धाख्यौ ।
फेंट कसी टेटिन पै मेवन को क्यौ स्वाद बिसाख्यौ ॥
ऐसी उलटी रीझ देखि कै उपजत है जिय आस ।
जग-निंदित 'हरिचंदहु' को अपनावहिगे करि दास ॥ ९ ॥

सम्हारहु अपुने को गिरिधारी ।
मोर-मुकुट सिर पाग पेच कसि राखहु अलक सँवारी ॥
हिय हलकत बनमाल उठावहु मुरली धरहु उतारी ।
चक्रादिकन सान दै राखौ कंकन फँसन निवारी ॥
नूपुर लेहु चढ़ाइ किंकिनी खींचहु करहु तयारी ।
पियरो पट परिकर कटि कसि कै बाँधौ हो बनवारी ॥
हम नाही उनमे जिनको तुम सहजहि दीने तारी ।
बानो जुगओ नीके अब की 'हरीचंद' की बारी ॥१०॥

हम तो लोक-भेद सब छोड़्यौ ।
जग को सब नाता तिनका सो तुम्हरे कारन तोड़्यौ ॥
छाँड़ि सबै अपुनो अरु दूजेन नेह तुम्हहि सों जोड़्यौ ।
'हरीचंद' पै केहि हित हम सों तुम अपुनो मुख मोड़्यौ ॥११॥'

जो पै सावधान ह्वै सुनिए ।
तौ निज गुन कछु बरनि सुनाऊँ जो उर मैं तेहि गुनिए ॥
हम नाहिन उन मै जिनको तुम तारे गरब बढ़ाई ।
बोलि लेहु प्रथुराजहि तो कछु मो गुन परै सुनाई ॥
चित्रगुप्त जौ बदि हमरे गुन निज खातन लिखि लेहीं ।
तौ हम पाप आपुने तिनको हारि तुरत सब देहीं ॥
एक समै औगुन गिनिबे को नागराज प्रन कीनौ ।
नहिं गिनि गए सेस बहु रहि गयो सोई नाम तब लीनौ ॥
सबै कहत हरि-कृपा बड़ेरी अब हीं परिहि लखाई ।
पै जो मो अघ-भय न भागि कै रहै न हृदय दुराई ॥
बहुत कहाँ लौं कहौं प्रानपति इतने हीं सब मानौ ।
'हरीचंद' सो भयो सामना नीके जुगओ बानौ ॥१२॥

पिया हौं केहि विधि अरज करौं ।
मति कहुँ चूकि होइ बे-अदबी याही डरन डरौं ॥
भोरहि सों मेला सो लागत नर-नारिन को भारी ।
न्हात खात बन जात कुंज मैं केहि विधि लेहुँ पुकारी ॥
महल टहल मै रहत लुभाने साँझहि सो सब राती ।
तहँ को विघन बनै कछु कहि कै एहि डर धरकत छाती ॥
बड़े बड़े मुनि देव ब्रह्म शिव जहँ मुजरा नहि पावैं ।
तहँ हम पामर जीव कहो क्यौं घुसि कै अरज सुनावैं ॥

एक बात बेदन की सुनिकै कछु भरोस जिय आयो।
'हरीचंद' पिय सहस-श्रवन तुम सुनतहि आतुर धायो ॥१३॥

प्रेम फुलवारी के वृक्ष

प्राननाथ तुमसो मिलिबे को कहा जुगति नहि कीनी।
पचि हारी कछु काम न आई उलटि सबै बिधि दीनी॥
हेरि चुकीं बहु दूतिन को मुख थाह सबन की लीनी।
तब अब सोचि-बिचारि निकाली जुगति अचूक नवीनी॥
तन परिहरि मन दै तुव पद मैं लोक तृगुनता छीनी।
'हरीचंद' निधरक बिहरौंगी अधर-सुधा-रस-भीनी ॥१४॥

इन नैनन को यही परेखो।
यह सुख देखि पिया-संगम को फेर बिरह-दुख देखो॥
नहि पाखान भए पिय बिछुरत प्रेम-प्रतीत न लेखो।
'हरीचंद' निरलज ह्वै रोवत यह उलटी गति पेखो ॥१५॥

देख्यौ एक एक को टोय।
प्राननाथ बिनु बिरह सँघाती और नाहिंनै कोय॥
मात-पिता धन-धाम मीत जग निज स्वारथ को होय।
'हरीचंद' जो सोऊ बिछुरै तौ न मरै क्यो रोय ॥१६॥

पियारे क्यों तुम आवत याद।
छूटत सकल काज जग के सब मिटत भोग के स्वाद॥
जब लौ तुम्हरी याद रहै नहिं तब लौ हम सब लायक।
तुमरी याद होत ही चित मैं चुभत मदन के सायक॥
तुम जग के सब कामन के अरि हम यह निहचै जानैं।
'हरीचंद' तो क्यो सब तुमरे प्रेमहि जग मैं सानै ॥१७॥

पियारे ऐसे तो न रहे ।
जैसे भए कठोर अबै तुम तैसे कबहुँ न हे ॥
हम वह नाहि कहा, कै मुरछित लखि तुम भुज न गहे ।
कहाँ गईं वे पिछली बतियाँ जो तुम बचन कहे ॥
जो तुम तनिक मलिन मुख देखत छिनहू नाहि सहे ।
सो 'हरिचंद' प्रान बिछुरत कित बदन छिपाय रहे ॥१८॥

एहि उर हरि-रस पूरि गयो ।
तन मैं मन मैं जिय मैं सब ठाँ कृष्ण हि कृष्ण भयो ॥
भरयौ सकल तन-मन तौहू नहि मान्यौ उमड़ि बह्यौ ।
नैनन सो बैनन सो रोक्यो नाहिन परत रह्यौ ॥
लघु घट तामैं रूप-समुद रह्यो क्यौ न उमगि निकरै ।
तापैं लाए ज्ञान कहो तेहि जिय कित लाइ धरै ॥
कौन कहै रखिबे की उलटो बहि जैहे या धार ।
'हरीचंद' मधुपुरी जाहु तुम ह्याँ नहिं पैहो पार ॥१९॥

रहैं क्यौं एक म्यान असि दोय ।
जिन नैनन में हरि-रस छायो तेहि क्यौं भावै कोय ॥
जा तन-मन मैं रमि रहे मोहन तहाँ ग्यान क्यौं आवै ।
चाहो जितनी बात प्रबोधो ह्याँ को जो पतिआवै ॥
अमृत खाइ अब देखि इनारुन को मूरख जो भूलै ।
'हरीचंद' ब्रज तो कदली-बन काटौ तो फिरि फूलै ॥२०॥

गमन के पहिले ही मिल जाहु ।
नाहीं तो जिय ही रहि जैहै तुव मुख-देखन लाहु ॥
जान देहु सब और चित्त के मिलि रस करन उमाहु ।
'हरीचंद' सूरति तो अपनी बारेक फेर दिखाहु ॥२१॥

नैन भरि देखन हू मैं हानि ।
कैसे प्रान राखिये सजनी नाहिं परत कछु जानि ।।
या ब्रज के सब लोग चवाई त्यौं वैरिन कुल-कानि ।
देखत ही पिय प्यारे को मुख करत चवाव बखानि ।।
मिलिबो दूर रह्यौ बिन बातहिं बैठि करहिं सब छानि ।
'हरीचंद' कैसी अब कीजै या ललचौहीं बानि ।।२२।।

प्राननाथ जौ पै ऐसी ही तुम्हे करन ही हाँसी ।
तौ पहिले ही क्यौं न कह्यौ हम मरती दै गल फाँसी ।।
जिय-जारन क्यौं जोग पठायो तोरि प्रीति तिनुका-सी ।
'हरीचंद' ऐसी नहिं जानी ह्वैहै हरि-बिसुवासी ।।२३।।

हरि सँग भोग कियो जा तन सों तासों कैसे जोग करैं ।
जो सरीर हरि सँग लपटानी वापैं कैसे भसम धरैं ।।
जिन श्रवनन हरि-बचन सुन्यौ है ते मुद्रा कैसे पहिरैं ।
जिन बेनिन हरि निज कर गूँथी जटा होइ ते क्यौं निकरैं ।।
जिन अधरन हरि-अमृत पियो अब ते ज्ञानहिं कैसे उचरैं ।
जिन नैनन हरि-रूप विलोक्यौ तिन्है मूँदि क्यो पलक परैं ।।
जा हिय सो हरि-हियो मिल्यौ है तहाँ ध्यान केहि भाँति धरै ।
'हरीचंद' जा सेज रमे हरि तहाँ बघम्बर क्यौ बितरै ।।२४।।

फेरहू मिलि जैये इक बार ।
इन प्रानन को नाहि भरोसो ए है चलन तयार ।।
जौ छतियन सों लगि नहिं विहरो प्यारे नंद-कुमार ।
तौ दूरहि सो बदन दिखाओ करौ लाल मनुहार ।।
नहिं रहि जाय बात जिय मेरे यह निज चित्त विचार ।
'हरीचंद' न्यौतेहु कै मिस बृज आओ विना अवार ।।२५।।

भईं सखि ये अँखियाँ बिगरैल ।
बिगरि परी मानत नहिं देखे बिना साँवरो छैल ॥
भई मतवार धरत पग डगमग नहिं सूझत कुल-गैल ।
तजिकै लाज साज गुरुजन की हरि की भई रखैल ॥
निज चवाव सुनि औरहु हरखत करत न कछु मन मैल ।
'हरीचंद' सब संक छाँड़ि कै करहिं रूप की सैल ॥२६॥

हौस यह रहि जैहै मन माही ।
चलती बार पियारे पिय को बदन बिलोक्यौ नाही ॥
बैदन के बदले पिय प्यारे धाइ गही नहिं बाही ।
'हरीचंद' प्यासी ही जैहै अधर-सुधा-रस चाही ॥२७॥

कहाँ गए मेरे बाल-सनेही ।
अब लौं फटी नहीं यह छाती रही मिलन अब केही ॥
फेर कबै वह सुख धौं मिलिहै जिअत सोचि जिय एही ।
'हरीचंद' जो खबर सुनावै देहुँ प्रान-धन तेही ॥२८॥

याद परैं वे हरि की बतियाँ ।
जो बन-कुंजन विहरत मधुरी कहीं लाइकै छतियाँ ॥
कहँ वे कुंज कहाँ वे खग-मृग कहँ वे बन की पतियाँ ।
'हरीचंद' जिय सूल होत लखि वही उँजेरी रतियाँ ॥२९॥

जो पैं ऐसिहि करन रही ।
तो क्यो मन-मोहन अपुने मुख सों रस-बात कही ॥
हम जानी सुख सों बीतैगी जैसी बीति रही ।
सो उलटी कीनी विधिना नै कछू नाहिं निवही ॥
हमै बिसारि अनत रहे मोहन औरै चाल गही ।
'हरीचंद' कहा को कहा ह्वै गयो कछु नहि जात कही ॥३०॥

अब वे उर मैं सालत बातैं ।
जो नँद-नंदन ब्रज मै कीनी प्रेम-प्रीति की घातैं ।।
वेई कुंज वही द्रुम पल्लव वही उँजेरी रातैं ।
एक प्रान-प्यारो ढिग नाही बिष सम लागत तातैं ।।
क्रूर अक्रूर प्रान हरि लै गयो आयो दुष्ट कहाँ तैं ।
'हरीचंद' बिदरत नहि छतियाँ भई कुलिस की छातैं ।।३१।।

अब तौ लाजहु छूटि गई री ।
ठोकि-बजाइ नगारौ दै के हौ पिय-बसहि भई री ।।
नहिं छिपाव कछु रह्यौ सखिन सो खुल्यो भेद सबई री।
परतछ ह्वै रोवत पिय के हित ऐसी रीति लई री ।।
बकि बकि उठत नाम प्रीतम को है यह रीति नई री ।
"हरीचंद' जग कहत भले ही यह अब बिगरि गई री ।।३२।।

अरे कोउ कहौ सँदेसो श्याम को ।
हमरे प्रान-पिया प्यारे को अरु भैया बलराम को ।।
बहुत पथिक आवत है या मग नित-प्रति वाही गाम को।
कोऊ न लायो पिय को सँदेसो 'हरीचंद' के नाम को ।।३३।।

तुव मुख देखिबे की चाट ।
प्रान न गए अजहुँ मो तन ते लागी आस कपाट ।।
नैन फेर चाहत है देख्यौ लीने गो-धन ठाट ।
बेनु बजावत सो मुख लालन वाही जमुना-घाट ।।
अटक्यौ जीव फँस्यौ जग मै फिर तुव मिलिबे की बाट ।
'हरीचंद' हिय भयो कुलिस लौं गयो न अब लौं फाट ।।३४।।

निलज इन प्रानन सो नहि कोय ।
सो संगम-सुख छाँड़ि अजहुँ ये जीवत निरलज होय ।।

गए न संग प्रान-प्रीतम के रहे कहा सुख जोय।
'हरीचंद' अब सरम मिटावत बिना बात ही रोय ॥३५॥

अब मैं कैसे चलूँगी क्यौं सुधि मोहिं दिलाई।
पनघट ही पै पिय प्यारे को क्यौं दियो नाम सुनाई॥
दूर रह्यौ घर गति-मति भूली पग न धस्यौ अब जाई।
'हरीचंद' हौ तबहि लौं काज की जब लौं रहूँ भुलाई॥३६॥

हाय हरि बोरि दई मँझ-धार।
कीन्हीं थल की नहिं बेरे की भली लगाई पार॥
नेह की नाव चढ़ाय चाव सों पहिले करि मनुहार।
अब कहो बिन अपराध तजी क्यौं सुनिहै कौन पुकार॥
लोक-लाज घर भूमि छुड़ाई करो घात सों वार।
' रीचंद' तापैं उतराई माँगत हौ बलिहार॥३७॥

नैन ये लगि कै फिर न फिरे।
बिथुरी अलकन मैं फँसि फँसिकै रहि गए तहीं घिरे॥
पचि हारे गुरुजन सिख दैकै नाहिन रहत थिरे।
'हरीचंद' प्रीतम सरूप मैं डूबे फिर न तिरे॥३८॥

पिय सों प्रीति लगी नहि छूटै।
ऊधौ चाहौ सो समझाओ अब तौ नेह न टूटै॥
सुंदर रूप छोड़ि गीता को ज्ञान लेइ को कूटै।
'हरीचंद' ऐसो को मूरख सुधा त्यागि विख लूटै॥३९॥

निठुर सो नाहक कीनी प्रीति।
अब पछिताय हाय करि रहि गई उलटि परो सब रीति॥
हम तन मन धन जा हित खोयो उन मानी न प्रतीति।
'हरीचंद' कहा को कहा कीनों बलि विधना की नीति॥४०॥

पुरानी परी लाल पहिचान ।
अब हमकों काहे को चीन्हौ प्यारे भए सयान ॥
नई प्रीति नए चाहनवारे तुमहूँ नए सुजान ।
'हरीचंद' पै जाइँ कहाँ हम लालन करहु बखान ॥४१॥

सखी री ये उरझौहै नैन ।
उरझि परत सुरझ्यौ नहि जानत सोचत समुझत है न ॥
कोऊ नाहि बरजै जो इनको बने मत्त जिमि गैन ।
'हरीचंद' इन बैरिन पाछे भयो लैन के दैन ॥४२॥

सखी री ये अँखिया रिझवारि ।
देखत ही मोहन सो रीझीं सब कुल-कानि बिसारि ॥
मिलीं जाइ जल दूध मिलै ज्यो नेकु न सकी सम्हारि ।
सुंदर रूप बिलोकत रपटी काँचे घट जिमि बारि ॥
अब बिनु मिले होत है व्याकुल रोअत निलज पुकारि ।
अपुने फल करि हमहिं कनौड़ी और दिवावत गारि ॥
लोक-लाज कुल की मरजादा तृन-सम तजी बिचारि ।
'हरीचंद' इनको को रोकै बिगरी जगहि बिगारि ॥४३॥

सखी री ये बिसुवासी नैन ।
निज सुख मिले जाइ पहिले पै अब लागे दुख दैन ॥
दगा दई ह्वै गए पराए बिसरायो सब चैन ।
'हरीचंद' इनके बेवहारन जानि नफा कछु है न ॥४४॥

मरम की पीर न जानै कोय ।
कासो कहौ कौन पुनि मानै बैठ रही घर रोय ॥
कोऊ जरनि न जाननवारी बे-महरम सब लोय ।
अपुनो कहत सुनत नहि मेरी केहि समुझाऊँ सोय ॥

लोक-लाज कुल की मरजादा बैठि रही सब सोय।
'हरीचंद' ऐसहि निबहैगी होनी होय सो होय ॥४५॥

मोह कित तुमरो सबै गयो।
सोई हम सोई तुम तौ अब ऐसो काह भयो ॥
मान समै जिनको नेकहु दुख तुम कबहूँ न सम्हारे।
तेई नैन रोवत निसि-बासर कैसे सहत पियारे ॥
तनिकहु लखि मम मुख मुरझानो करि मनुहार मनाओ।
सोई परी धरनि पै देखत क्यौं तुरतै नहि धाओ ॥
हाय कहा हौं कहौं प्रान-पिय तुम आछत गति ऐसी।
'हरीचंद' पिय कहाँ दुराये कहो प्रीति यह कैसी ॥४६॥

जो पिय ऐसो मन मोहिं दीनो।
तौ क्यौं एक निरालो जग नहिं मो निवास हित कीनो ॥
इन जग के लोगन सों मो सों बानिक बनि नहि आवै।
उन करोर के मध्य एक क्यौं हम सों निबहन पावै ॥
कै तो जगहि छोड़ाओ हम सों राखौ कै ढिग मोहि।
'हरीचंद' दुख देहु न इतनो बिनय करत हौं तोहि ॥४७॥

खुलि कै दुखहु करन नहि पावैं।
कैसे प्रान रहैं जो सब बिधि हम ही भार उठावैं ॥
नैनन सदा चवाइन के डर दृग भरि पियहि न देख्यौ।
ताको दुख तो सह्यो कोऊ बिधि जानि करम को लेख्यौ ॥
रोवनहू मे हानि भई अब प्रगट हाय नहि होई।
तो केहि बिधि जिय धीरज राखैं सो भाखौ सब कोई ॥
सब बिधि हमहिं बिपति तो ऐसे जीवनहू पै ख्वारी।
'हरीचंद' सोयो बिधिना किन जाग हमारी वारी ॥४८॥

पियारे तजी कौन से दोस ।
इतनी हमहू तो सुनि पावैं फेर करै संतोस ।।
तुमरे हित सब तज्यो आस इक तुम्हरी ही चित धारी ।
एक तुम्हारे ही कहवाए जग मै गिरवरधारी ।।
जो कोउ तुमरो होइ सोई या जग मै बहु दुख पावै ।
यह अपराध होइ तौ भाखौ जासो धीरज आवै ।।
कियो और तो दोस कछू नहिं अपनी जान पियारे ।
तुमरे ही ह्वै रहे जगत मै एक प्रेम-प्रन धारे ।।
जो अपुने ही को दुख देनो यहै आप को बानो ।
तो क्यौ नहिं ताको अपने मुख प्यारे प्रगट बखानो ।।
जासो चतुर होइ जग मै कोउ तुम सो प्रेम न लावै ।
'हरीचंद' हम तौ अब तुमरे करौ जोई मन भावै ।।४९।।

सुरतिहू अब नहिं आवै स्याम की ।
प्राननाथ आरति-नासन मन-मोहन सब सुख-धाम की ।।
वेई नैन वही मन औ तन वही चटपटी काम की ।
भये कुलिस लौ सब पिय बिछुरे निसि बीतत चौ-जाम की ।।
सुनियत लाल कहानिन मै अब जैसे सीता-राम की ।
'हरीचंद' कहा को कहा कीनो बलि या गति बिधि बाम की ।।५०।।

अब मै कब लौ देखूँ बाट ।
भोर भयो हौ ठाढ़ि ही रहि गइ पकरे द्वार-कपाट ।।
हार पहार भए बिछुरे अरु बिख भए सुख के ठाट ।
सूनी सेज पिया बिनु देखत क्यो न गयो हिय फाट ।।
बिरह-सिधु मै डूबी ग्वालिनि कहुँ दिखात नहिं घाट ।
'हरीचंद' गहि बाँह उठाओ जिय मति करहु उचाट ।।५१।।

होय हरि द्वै में ते अब एक।
कै मारो कै तारो मोहन छाँड़ि आपनी टेक।
बहुत भई सहि जात नहीं अब करहु बिलंब न नेक।
'हरीचंद' छाँड़ो हो लालन पावन - पतित-विवेक ।।५२।।

नावरि मोरी झाँझरी हो जाय परी मँझधार।
निसि अँधियारी पानी लागत उलटो बहत बयार ।।
सूझत नहिं उपाय बिनु केवट कोइ न सुनत पुकार।
'हरीचंद' डूबत कु-समय मै धाइ लगाओ पार ।।५३।।

कोऊ ना बटाऊ मेरी पीर को।
सब अपने स्वारथ को कोऊ देनहार नहि धीर को ।।
कसकत सो बन रास बिलसिबो हरि-सँग जमुना-तीर को।
उलहत हियो नैन भरि आवत लखि थल धीर समीर को ।।
कहा करौं कित जाउँ न भूलत हँसि हँसि हरिबो चीर को।
'हरीचंद' कोउ हाल कहत नहि गोपराज बलबीर को ।।५४।।

अबिरल जुगल कमल-दृग बरसत सखि पै खीजत होइ खिस्यानी।
आजु कुंज क्यौं सेज बिछाई तापै दई पिछौरी तानी ।।
मैं धोखे ही गई सयन कों चितत पिय-सँजोग सुखदाई।
द्वारहि ते अभिलाख लाख करि भरि आनँद फूली न समाई ।।
ढकी सेज लखि कै पिय सोए जानो भइ जिय अमित उमाही।
नूपुर खोलि चली हरुए गति पीतम-अधर-सुधा-रस चाही ।।
निकट जाइकै लाइ जुगल भुज जबै गाढ़ आलिंगन कीनो।
तब सुधि आई पिय घर नाही उन तो गौन मधुवन को कीनो ।।
मुरछि परी करि हाय साथ ही मानहुँ लता मूल सों तोरी।
बेसुधि लखि आई बृज-बनिता बैठि रहीं घेरे चहुँ ओरी ।।

छिरकत नीर गुलाब बदन पै ऑंचर पौन करत कोउ नारी ।
व्याकुल सखि-समाज सब रोअत मनु आजुहि बिछुरे गिरिधारी ।।
इतनेहू पै प्रान गए नहि फिरहू सुधि आई अध-राती ।
हौ पापिनि जीवति ही जागी फटी न अजौ कुलिस की छाती ।।
फिर वह घर-व्यवहार वहै सब करन परै नित ही उठि माई ।
'हरीचंद' मेरे ही सिर विधि दीनी काह जगत-अमराई ।।५५।।

रहे यह देखन को दृग दोय ।
गए न प्रान अबौ अँखियॉ ये जीवति निरलज होय ।।
सोई कुंज हरे हरे देखियत सोई सुक पिक कीर ।
सोई सेज परी सूनी ह्वै बिना मिले बलबीर ।।
वही झरोखा वही अटारी वही गली वही सॉझ ।
वहै नाहि जो बेनु बजावत ऐहै गलियन मॉझ ।।
ब्रजहू वही वही गौवे है वही गोप अरु ग्वाल ।
बिडरे सब अनाथ से डोलत व्याकुल बिना गुपाल ।।
नंद-भवन सूनो देखत क्यो गयो नही हिय फाट ।
'हरीचंद' उठि बेगहि धाओ फेरहु ब्रज की बाट ।।५६।।

नंद-भवन हौं आजु गई हो भूले ही उठि भोर ।
जागत समय जानि मंगल-मुख निरखन नंद-किशोर ।।
नहि बंदीजन गोप गोपिका नाहिन गौवें द्वार ।
नहि कोउ मथत दही नहि रोहिनि ठाढ़ी लै उपचार ।।
तब मोहिं सुरत परी घर नाहिन सुंदर श्याम तमाल ।
मुरछित धरनि गिरी द्वारहि पै लखि धाई ब्रज-बाल ।।
लाई गेह उठाइ कोउ बिधि जीवन गए अँदेस ।
'हरीचंद' मधुकर तुव आए जागी सुनत सँदेस ।।५७।।

हठीले पिय हो प्यारिहु को हठ राखौ ।
तुव रूसे सों काम चलै नहि मधुर वचन मुख भाखौ ॥
आओ मधुवन छाँड़ि फेरहू दूर कूवरिहि नाखौ ।
'हरीचंद' को मान राखिकै अधर-सुधा-रस चाखौ ॥५८॥

अथ प्रेम-फुलवारी के फूल

प्रीति की रीत ही अति न्यारी ।
लोग वेद सब सो कछु उलटो केवल प्रेमिन प्यारी ॥
को जानै समुझै को याको विरली जाननहारी ।
'हरीचंद' अनुभव ही लखिये जामै गिरवरधारी ॥५९॥

श्रीराधे सोभा कहा कहिये ।
रसना अधम वहुरि अधिकारी कोऊ नहि लहिये ॥
कासो कहिये को समुझै एहि समुझि चित्त रहिये ।
परम गुप्त रस सब सो कहि कहि कैसे चित दहिये ॥
विनु तुव कृपा अपार सिंधु रस केहि प्रकार बहिये ।
'हरीचंद' एहि सोच छोड़ि सब मौन रह्यो चहिये ॥६०॥

अहो मम प्राननहू तें प्यारे ।
ब्रज के धन प्रेमिन के सरबस इन अँखियन के तारे ॥
गहबर कंठ होत क्यौ सुनतहि गुन-गन परम तिहारे ।
उमगत नैन हियो भरि आवत उलहत रोमहु न्यारे ॥
प्राननाथ श्रीराधा जू के जसुदा-नंद-दुलारे ।
'हरीचंद' जुग जुग चिरजीअहु भक्तन के रखवारे ॥६१॥

पियारे थिर करि थापहु प्रेम ।
परम अमृतमय जब लौं रबि-ससि प्रेमिन पैं करि छेम ॥

दूर करहु जग बंचनहारे ज्ञान करम कुल नेम।
'हरीचंद' यह प्रीत-दुन्दुभी नितही गाजौ एम ॥६२॥

छोड़ि कै ऐसे मीठे नाम।
मित्र प्रानपति पीतम प्यारे जीवितेस सुख-धाम ॥
क्यौ खोजत जग और नाम सब करिकै युक्ति सहेत।
ईश्वर ब्रह्म नाम हौआ सो श्रवन न जो सुख देत ॥
तजि कै तेरे कोमल पंकज पद को दृढ़ बिस्वास।
'हरीचंद' क्यो भटकत डोलत धारि अनेकन आस ॥६३॥

अहो मेरे मोहन प्यारे मीत।
क्यौ न निवाही मम जीवन लौं परम प्रेम की रीत ॥
इतनेहू पै तोहिं न आई मेरी यार प्रतीत।
'हरीचंद' वलिहार रावरे भली करी यह नीत ॥६४॥

बिहरिहैं जग-सिर पै दै पाँव।
एक तुम्हारे ह्वै पिय प्यारे छाँड़ि और सब गाँव ॥
निंदा करौ बताओ बिगरी धरौ सबै मिलि नाँव।
'हरीचंद' नहि कबहुँ चूकिहै हम यह अब को दाँव ॥६५॥

निछावरि तुम पै सो कहा कीजै।
सब कछु थोरो लगत जगत मैं कैसे इनको लीजै ॥
राज-पाट घर-बार देह मन धन संबंधी जात।
नेम-धरम कुल-कानि लाज सब तृनहू से न लखात ॥
प्रेम-भरी तुमरी चितवनि की समता को जग कौन।
'हरीचंद' तासो नहि कहिए कछु रहिए गहि मौन ॥६६॥

न जानों गोविद कासो रीझै।
जप सो तप सो ज्ञान ध्यान सो कासो रिसि करि खीझै ॥

वेद पुरान भेद नहि पायो कह्यो आन की आन।
कह जप तप कीनों गनिका नै गीध कियो कह दान ॥
नेमी ज्ञानी दूर होत हैं नहि पावत कहुँ ठाम।
ढीठ लोक वेदहु ते निंदित घुसि घुसि करत कलाम ॥
कहुँ उलटी कहुँ सीधी चालै कहुँ दोहुन तें न्यारी।
'हरीचंद' काहू नहि जान्यौ मन की रीति निकारी ॥६७॥

प्रेम-फुलवारी के फल

रे मन करु नित नित यह ध्यान।
सुंदर रूप गौर श्यामल छबि जो नहि होत बखान ॥
मुकुट सीस चंद्रिका बनी कनफूल सुकुंडल कान।
कटि काछिनि सारी पग नूपुर बिछिया अनवट पान ॥
कर कंकन चूरी दोउ भुज पै बाजू सोभा देत।
केसर खौर बिंदु सेंदुर को देखत मन हरि लेत ॥
मुख पैं अलक पीठ पैं बेनी नागिनि सी लहरात।
चटकीलो पट निपट मनोहर नील-पीत फहरात ॥
मधुर मधुर अधरन बंसी-धुनि तैसी ही मुसकानि।
दोउ नैनन रस-भीनी चितवनि परम दया की खानि ॥
ऐसो अद्भुत भेष बिलोकत चकित होत सब आय।
'हरीचंद' बिन जुगल-कृपा यह लख्यो कौन पै जाय ॥६८॥

श्री राधे चंद्रमुखी तुव नाम।
तदपि चकोर-मुखी सी ब्याकुल निरखत ससि-घनश्याम ॥
तैसेहि जदपि आप नव घन से मोहन कोटिक काम।
तदपि दरस तुव प्यास नैन जुग चातक रहत मुदाम ॥
कौन कहै कै समुझै यामे जो कुछ करै कलाम।
'हरीचंद' ह्वै मौन निरखिए जुगल-रूप सुखधाम ॥६९॥

आजु महा मंगल भयो भोर ।
प्राननाथ भेंटे मारग मैं चितयो प्रेम-भरी दृग-कोर ।।
करौं निछावरि प्रान जीवनधन तनिकहि निरखत भौंह मरोर ।
श्याम सरूप सुधा-रस सानी बानी बोलत नंदकिशोर ।।
कोटि काम लावन्य मनोहर चितवत प्रेम भरी दृग-कोर ।
नेह भर्‌यौ सब अंग सलोनो आनँद-रस भीज्यो प्रति पोर ।।
सिद्ध होयगो सगरो कारज प्रातहि मिलौ प्रानपिय मोर ।
'हरीचंद' जुग जुग चिरजीओ माँगत ग्वालिनि अंचल छोर ।।७०।।

आजु चलि कुंजन देखहु छाई विमल जुन्हाई ।
पत्र रंध्र मे घिर घिर आवत ता तर सेज बिछाई ।।
समय निसीथ इकंत भयो अति कहुँ कहुँ खग बोलत सुख पाई ।
ललिता दूर बजावत बीना मधुर मृदंगहु परत सुनाई ।।
आलिंगन परिरंभन को सुख लूटत तहाँ जुगल रसदाई ।
'हरीचंद' वारत तन मन सब गावत केलि बधाई ।।७१।।

कहत हौं बार करोरन होहु चिरंजी नित
नित प्यारे देखि सिरावै हियो ।
एक एक आसिख सो मेरे
अरब खरब जुग जियो ।।
जब लौं रवि-ससि-भूमि-समुद-
ध्रुव-तारा-गन थिर कियो ।
'हरीचंद' तब लौं तुम प्रीतम
अमृत पान नित पियो ।।७२।।

लाल के रंग रँगी तू प्यारी ।
याही ते तन धारत मिस कै सदा कसूँभी सारी ।।

लाल अधर कर पद सब तेरे लाल तिलक सिर धारी।
नैननहू मे डोरन के मिस झलकत लाल बिहारी॥
तन-मै भई नही सुध तन की नख-सिख तू गिरधारी।
'हरीचंद' जग बिदित भई यह प्रेम-प्रतीत तिहारी॥७३॥

हमारे ब्रज की रानी राधे।
जिन निज बस करि मोहन सह सब ब्रज-नर-नारी नाधे॥
परम उदार धाइ सुमिरन के पहिलेहि नासत बाधे।
कहि 'हरिचंद' सोच उनकी मोहि जे नहिं इनहि अराधे॥७४॥

सखियो याद दिवावति रहियो।
समय पाइकै दसा हमारिहु कबहुं जुगल सो कहियो॥
केलि कोप अरु काज समय तजि सुख में तुम रुख लहियो।
करि मनुहार जोरि कर दोऊ मेरी बिथा उलहियो॥
जो कछु क्रोध करैं तो ताको बिनती कर कर सहियो।
कहियो कबौ धाइकै बाहें 'हरिचंदहु' की गहियो॥७५॥

पिया मुख चूमत अलकन टारि।
सोई बाल मुँदी पलकन की छबि रहे लाल निहारि॥
कबहुँ अधर हलके कर परसत रहत भँवर निरवारि।
अंजन मिसी सिदूर निरखि रहे टरत न इक पल टारि॥
जागी भरि आलस भुज सो गहि पियतम को भुज नारि।
खीचि चूमि मुख पास सोवायो 'हरीचंद' बलिहारि॥७६॥

पियारे केहि बिधि देहुँ असीस।
नित नित तौ हम कहत जियो तुम मोहन कोटि बरीस॥
तऊ न बोध होत मेरे जिय नित, उठि यहै मनाऊँ।
कबहुँ न बदन पिया प्यारे को मुरझ्यो देखन पाऊँ॥

श्री स्वामिनी जी की स्तुति ※

श्री राधे तुही सुहागिनि साँची।
और कामिनिन को सुख-संपति तुव रस आगे काँची॥
प्रेम सिद्ध तुव द्वार नटी लौं रहत रैन-दिन नाची।
'हरीचंद' याही सों सब तजि हरि-मति तुव रँग राँची॥८१॥

राधे तुही सुहागिनि पूरी।
जाको त्रिभुवन-पति सेवक लौं अनु-छिन करत मजूरी॥
और सबन की सुख-सामाँ तुव आगे परम अधूरी।
'हरीचंद' याही तें सोहत तोही को सेंदुर-चूरी॥८२॥

राधे तुव सोहाग की छाया जग मे भयो सोहाग।
तेरो ही अनुराग-छटा हरि सृष्टि-करन अनुराग॥
सत-चित तुव कृति सों बिलगाने लीला प्रियजन भाग।
पुनि 'हरिचंद' अनंद होत लहि तुव पद-पदुम-पराग॥८३॥

हमारी प्यारी सखियन की सिरताज।
ताहू की महरानी जो सब व्रज - मंडल-महराज॥
सील सनेह सरस सोभा-निधि पूरनि जन-मन-काज।
'हरीचंद' की सरवस जीवनि पालनि भक्त-समाज॥८४॥

श्यामा प्यारी सखियन की सरदार।
अति भोरी गोरी रस-बोरी सहजहि परम उदार॥
लाज-कृपा सों भरे बड़े दृग बड़े छूटे तिमि बार।
'हरीचंद' तनिकहि बस कीनो श्री व्रजराज-कुमार॥८५॥

※ यह अंश मल्लिक चंद्र और कंपनी द्वारा प्रकाशित सन् १८८३ ई० संस्करण में नहीं है। ८१ से ९१ पद तक नवोदिता हरिश्चंद्र-चंद्रिका र सन् १८८४ की संख्या से उद्धृत किये गये हैं। सं०।

राधा प्यारी सखियन की सिरमौर ।
जदपि बहुत जुवती व्रज मैं पै पिय कहँ रुचत न और ।।
जा मुख-पंकज-मधु की लालच बन्यो रहत मनु भौर ।
पान खवावत चरन पलोटत ढोरत बिजन चौंर ।।
मुख चूमत ललचाइ कबहुँ पुनि कबहूँ भरत अँकौर ।
निज सुख जुगल रमत नित नित श्री बृन्दाबन निज ठौर ।।
ऐसी स्वामिनि तजि को बरबस भरमै इत उत दौर ।
'हरीचंद' सब तजि याही तें सेवत इनकी पौर ।।८६।।

हमारी सरवस राधा प्यारी ।
सब ब्रज-स्वामिनि हरि-अभिरामिनि श्री वृषभानु-दुलारी ।।
बृंदावन-देवी सुख-सेवी सहज दीन-हितकारी ।
'हरीचंद' गुन-निधि सोभा-निधि कीरति की सुकुमारी ।।८७।।

प्यारी कीरति-कीरति-बेलि ।
प्रफुलित रूप-रासि - कुसुमावलि गुन-सुगंध-रस रेलि ।।
सिची प्रेम - जीवन हरि बारौ जन-भव-आतप-ठेलि ।
'हरीचंद' हरि कलप-तरोवर लपटी सुखहि सकेलि ।।८८।।

हमारी प्रान-जीवन-धन श्यामा ।
व्रज-जन-तरुनि-चक्र-चूड़ामनि पूरनि हरि-मन-कामा ।।
अति अभिरामा सब सुख-धामा हरि-बामा मनि-दामा ।
'हरीचंद' तजि साधन सबरे रटत एक तुव नामा ।।८९।।

राधे, सब विधि जीति तिहारी ।
अखिल लोक-नायक रस-सरबस तिन की दृग उँजियारी ।।
तजिकै जुवति सहस्र रहत तुव दिसि टक एक निहारी ।
'हरीचंद' आनँदकँद आनँद दान करति बलिहारी ।।९०।।

आजु भुव साँचो भयो अनंद।
जन-हिय-कुमुद बिकासन प्रगट्यौ ब्रज-नभ पूरन चन्द॥
जो आनंद छिप्यो हो अब लौं तोहिं प्रगटि दिखरायो।
मरजादा परवाह दुहुँन सों प्रेम छानि बिलगायो॥
भटकत फिरत श्रुतिन के बन मैं परस पंथ नहिं सूझ्यो।
जो कछु कह्यौ कहूँ कोउ साखन ताको मरम न बूझ्यो॥
भक्ति कही तौ नेह बिना की नेहहु ब्यसन बिना को।
ब्यसनहु कह्यौ जुपै कहुँ कहुँ तौ परवन चार दिना को॥
परम नेह सों एक भाव रस इनहीं प्रीति दिखाई।
'हरीचंद' भक्तन-हिय बाजी जासों प्रेम-बधाई॥९१॥

जय जय भक्त-बछल भगवान।
निज जन पच्छ रच्छ-कर नित प्रति सहजहि दयानिधान॥
अधम-उधारन जन-निस्तारन बिस्तारन जस-गान।
'हरीचन्द' करुनामय केसव सब ब्रज-जन के प्रान॥९२॥

जय जय करुनानिधि पिय प्यारे।
सुंदर स्याम मनोहर मूरति ब्रज-जन लोचन-तारे॥
अगिनित गुन-गन गने न आवत माया नर-बपु धारे।
'हरीचंद' श्रीराधा-वल्लभ जसुदा-नंद-दुलारे॥९३॥
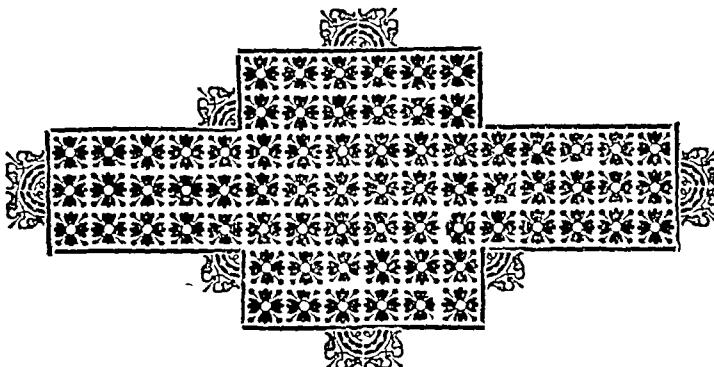
कृष्ण-चरित्र

कृष्ण-चरित्र

आजु हरि छलि कै लाए प्यारी ।
पार उतारन मिस नौका पै रसिक-राज गिरिधारी ॥
औघट घाट लगाइ नाव निज बिहरत करि मनुहारी ।
'हरीचंद' सखि लखत चकित चित देत प्रान-धन वारी ॥ १ ॥

जुगल-छबि नैनन सो लखि लेहु ।
ठाढ़े बाहुँ जोरि कुंजन मैं अवसर जान न देहु ॥
साँझ समय आगम बरसा के फूल्यौ बन चहुँ ओर ।
लहरत कालिन्दी जल झलकत आवत मन्द झकोर ॥
प्रथम फूल फूल्यौ आमोदित रसमय सुखद कदम्ब ।
ता तट ठाढ़े जुगल परसपर किए बाहुँ-अवलम्ब ॥
पसरित महामोद दसहू दिसि मत्त भौंर रहे भूलि ।
'हरीचंद' सखि सरबस वार्यो सो छबि लखि जिय फूलि ॥ २ ॥

आजु ब्रज भई अटारिन भीर ।
आवत जानि सुरथ चढ़िकै पथ सुंदर श्याम-सरीर ॥
अटा झरोखन छज्जन छाजन गोखन द्वारन द्वार ।
मुख ही मुख लखिए जुवतिन के सोभा बढ़ी अपार ॥

फूली मनौ रूप-फुलवारी हरि-हित साधि सनेह ।
कै चंदन की बंदन-माला बाँधी ब्रजप्रति गेह ।।
करत मनोरथ बिबिध भाँति सब साजें मंगल-साज ।
'हरीचंद' तिनको दरसन दै दुख मेट्यौ ब्रजराज ।। ३ ।।

हरि हम कौन भरोसे जीएँ ।
तुमरे रुख फेरे करुनानिधि काल-गुदरिया सीएँ ।।
यों तो सब ही खात उदर भरि अरु सब ही जल पीएँ ।
पै धिक धिक तुम बिन सब माधो बादिहि सासा लीएँ ।।
नाथ बिना सब व्यर्थ धरम अरु अधरम दोऊ कीएँ ।
'हरीचंद' अब तो हरि बनिहै कर-अवलम्बन दीएँ ।। ४ ।।

नाथ बिसारे तें नहिं बनिहै ।
तुम बिनु कोउ जग नाहि मरम की पीर पिया जो जनिहै ।।
हँसिहै सब जग हाल देखि कोउ नाहि दीनता गनिहै ।
उलटी हमहि सिखापनि दैहै मेरी एक न मनिहै ।।
तुम्हरे होइ कहाँ हम जैहै कौन बीच मैं सनिहै ।
'हरीचंद' तुम बिनु दयालता और कोउ नहिं ठनिहै ।। ५ ।।

नवल नील मेघ-बरन दरसत त्रयताप-हरन
परसत सुख-करन भक्त-सरन जमुन-बारी ।
सोभित सुंदर दुकूल प्रफुलित कल कमल फूल
मेटत भव-सूल भक्ति-मूल ताप-हारी ।।
कोमल बर बालु रचित बेदि बिबिध तटनि खचित
नव लता-प्रतान सचित नचित भृंग भारी ।
चंचल चल लोल लहर कलि कल करवाल कहर
जग-जन जम-जाल जहर भक्तन-सुखकारी ।।

जल-कन लै त्रिविध पौन करत जबै कितहुँ गौन
परसत सुख-भौन सीत सोहत संचारी ।
अवगाहत मनुज-देव करत सकल सिद्ध सेव
जानत नहि भेव भेद वेद मौन-धारी ॥
ब्रजवर-मंडल-सिगार गोप-गोपिका अधार
प्राननाथ-कंठहार जुगल बर बिहारी ।
पुष्टि-सुपथ पुष्टि करत सेवा को फल बितरत
'हरीचन्द' जस उचरत जयति तरनि-वारी ॥ ६ ॥

आजु सुर मुनि सकल ब्रजपुराधीश को
रत्न-अभिषेक वर वेद-विधि सो करत ।
सकल तीरथ विमल गंग-जमुनादि नद
चतुर्सागर-मिलित नीर कलसन भरत ॥
रिग-यजुर-साम-अथर्वनिक वेद-ध्वनि
स्तोत्र-पौराण-इतिहास मिलि उच्चरत ।
शंख-भेरी-पणव-मुरज-ढक्का बाद घनित
घंटा-नाद बीच विच गुंजरत ॥
विविध सर्व्वौषधी मलय-मृगमद-मिलित
बारि घनसार-केसर सुगंधित परत ।
कुसुम रत्न तुलसि मिश्रित सुमंत्रित सविध
पूर्व्व अधिवासितोदक घटन तें ढरत ॥
श्याम अभिराम तन पीत पट सुभग अति
बारि सो अंग सटि लखत ही मन हरत ।
झरित कल केस कुंचितन ते नीर-कन
मनहुँ मुक्तावली नवल उज्जल झरत ॥

बदत बंदी बिरद सूत चारन चारु चरित
गावत खरे तान मानन भरत।
देत आसीस द्विज हस्त श्रीफल किए
सुर जुहारत खरे रुख लिए जिअ डरत॥
घोष-सीमन्तिनी गान मंगल शब्द
श्रवन-पुट जात दुख दुरित दारिद दरत।
दास 'हरिचन्द' के हृदय-मधि तौन छबि
खचित वल्लभ-कृपा-बल न टारे टरत॥ ७॥

मेरे प्यारे जी अरज लीजो मान हो मान।
अब तुमरो दुख सहि न सकत हम
मिलि जाओ मीत सुजान हो जान।
एक बेर ब्रज मे फिर आओ
इतनो देहु मोहि दान हो दान॥
'हरीचंद' अब चलन चहत हैं
तुम बिन मेरे प्रान हो प्रान॥ ८॥

प्रात समै प्रीतम प्यारे को मंगल बिमल नवल जस गाऊँ।
सुन्दर स्याम सलोनी मूरति भोरहि निरखत नैन सिराऊँ॥
सेवा करौं हरौं त्रैबिधि-भय तब अपने गृह-कारज जाऊँ।
'हरीचंद' मोहन बिनु देखे नैनन की नहिं तपत बुझाऊँ॥ ९॥

प्रात समै हरि को जस गावत
उठि घर घर सब घोष-कुमारी।
कोउ दधि मथत सिंगार करत कोउ
जमुना न्हान जात कोउ नारी॥

हरि-रस मगन दिवस नहि जानत
मंगलमय ब्रज रहत सदा री।
'हरीचंद' लखि मदन-मोहन-छवि
पुनि पुनि जात सबै बलिहारी ॥१०॥

हरि को मंगलमय मुख देखो।
सुंदर स्याम अंग-छबि निरखत जीवन जनम सुफल करि लेखो ॥
देखि प्रथम पिय प्यारे को मुख तब जग और काज अवरेखो।
'हरीचंद' ब्रजचंद लखे बिनु जगतहि बादि बृथा करि पेखो ॥११॥

आनंद-निधि सुख-निधि सोभा-निधि वल्लभ-बदन बिलोकौ भोर।
मंगल परम भक्त-सुखदायक तृपित-करन जन-नैन-चकोर ॥
सकल कला-पूरन गुन-सागर नागर नेही नवल-किसोर।
'हरीचंद' रसिकन के सर्वस इन पैं वारौ मैन करोर ॥१२॥

हरि मोरी काहे सुधि बिसराई।
हम तो सब बिधि दीन हीन तुम समरथ गोकुल-राई ॥
मो अपराधन लखन लगे जौ तौ कछु नहिं बनि आई।
हम अपुनी करनी के चूके याहू जनम खुटाई ॥
सब बिधि पतित हीन सब दिन के कहँ लौ कहौं सुनाई।
'हरीचंद' तेहि भूलि बिरद निज जानि मिलौ अब धाई ॥१३॥

देखो माई हरि जू के रथ की आवनि।
चलनि चक्र फहरानि धुजा को वह तुरगन की धावनि ॥
जापै जुगल दिए गल-बाँही सोभित नैन मिलावनि।
चीरी खानि चहूँ दिसि चितवनि हँसि मुरि कै बतरावनि ॥

घेरें सखी चारु चारों दिसि नव मलार की गावनि।
'हरीचंद' चित तें न टरति है सो सोभा सुख-पावनि ॥१४॥

धनि वे दृग जिन हरि अवलोके।
रथ चढ़ि कै डोलत ब्रज-बीथिन
ब्रज-तिय द्वार द्वार गति रोके॥
इक कर रास रासपति लीने
झूमत चलत तुरंग नचावत।
दूजे कर साँटी लै दृग की
साँटी ब्रज-तिय-चित्त लगावत॥
इत उत चितवत चलत चपल चख
हँसत हँसावत गावत डोलैं।
छकत रूप लखि निरखनहारे
काहू सों हँसि कै मृदु बोलैं॥
संग भीर आभीर-जनन की
मुरछल चँवर डुलावत धावैं।
'हरीचंद' ते धन धन जग में
जे यह सोभा निरखि सिरावैं ॥१५॥

कछु रथ हाँकनहू मैं भाँति।
यह कछु औरहि चलनि-चलावनि औरे रथ की काँति॥
कहूँ ठिठकि रथ रोकि घरिक लौं ठाढ़े रहत मुरारि।
कहुँ दौरावत अतिहि तेज गति कहुँ काहू सों रारि॥
काहु को अंग परसि रथ चालनि काहु लेनि दौराय।
चाबुक चमकि तनक काहू तन मारनि देनि छुआय॥
काहू के घर की फेरी दै घूमनि करि रथ मंद।
बार बार निकसनि वाही मग मैं जानी 'हरीचंद' ॥१६॥

वह धुज की फहरानि न भूलति ।
उलटि उलटि कै मो दिस चितवनि
रथ हाँकनि हरि की जिय सूलति ।।
लै गए सब सुख साथहि मोहन
अब तो मदन सदा हिय हूलत ।
सो सुख सुमिरि सुमिरि कै सजनी
अजहूँ जिय रस-बेली फूलत ।।
लै आओ कोउ मो ढिग हरि को
बिरह-आगि अब तन उनमूलत ।
'हरीचन्द' पिय - रंग बावरी
ग्वालिनि प्रेम-डोर गहि झूलत ।। १७ ।।

आजु दोउ बैठे मिलि वृंदावन नव निकुंज
सीतल बयार सेवैं मोद भरे मन मैं ।
उड़त अंचल चल चंचल दुकूल कल
स्वेद फूल की सुगंध छाई उपवन मै ।।
रस भरे बातैं करैं हँसि हँसि अंग भरै
बीरी खात जात सरसात सखियन मैं ।
'हरीचन्द' राधा प्यारी देखि रीझे गिरिधारी
आनँद सो उमगे समात नहि तन मै ।। १८ ।।

गंगा पतितन को आधार ।
यह कलि-काल कठिन सागर सो तुमहि लगावत पार ।।
दरस - परस जल-पान किए ते तारे लोक हजार ।
हरि-चरनारबिंद - मकरंदी सोहत सुंदर धार ।।
अवगाहत नर - देव-सिद्ध-मुनि कर अस्तुति बहु बार ।
'हरीचन्द' जन-तारिनि देवी गावत निगम पुकार ।।१९।।

जयति कृष्ण-पद-पद्म - मकरंद रंजित
नीर नृप भगीरथ विमल जस-पताके।
ब्रह्म-द्रवभूत आनन्द मन्दाकिनी
अलकनंदे सुकृति कृति - विपाके॥
शिव-जटा-जूट-गह्वर - सघन-वन - मृगी
विधि - कमंडलु - दलित-नीर - रूपे।
कपिल-हुंकार भस्मीभूत निरयगत
स्पर्श - तारित सगर - तनुज भूपे॥
जन्हुतनया हिमालय - शिखर - निकर
वर भेद भंजित इंद्र हस्ति गर्वे।
असह धारा-प्रवह वारि-निधि मानहृत
मिलित शतधा रचित वेग खर्व्वे॥
विविध मंदिर गलित कुसुम-तुलसी-निचय
भ्रमर - चित्रित नवल विमल धारे।
सिद्ध सीमंतिनी सुकुच-कुंकुम-मिलत
हिलित रंजित सुगंधित अपारे॥
लोल कल्लोल लहरी ललित वलित वल
एक संगत द्वितिय तर तरंगे।
झरति झर झर झिल्लि सरस झंकार
वर वायु गत रव वीन-मान भंगे॥
मकर-कच्छप-नक्र-संकुलित जीवंजय
शीत पानीय तृष्णादि नाशे।
कलित कूजित सुकारंड-कलरव नाद
कोकनद कुमुद कल्हार काशे॥
निज महिम वल प्रवल अर्कसुत नर्क-भय
दूर कृत पतित-जन कृत पवित्रे।

पान मज्जन मरण स्मरण दर्शन मात्र
निखिल अघ-राशि नाशन चरित्रे ॥
मुक्ति - पथ-सोपान विष्णु - सायुज्य-प्रद
परम उज्ज्वल श्वेत नीर जाते।
जयति यमुना - मिलित ललित गंगे
सदा दास 'हरिचन्द' जन पक्षपाते ॥२०॥

सारंग

प्यारे को कोमल तन परसि आवत आज
याही ते बयार अंग सीतल करत है।
सनित सुगंध मंद मंद आइ मेरे ढिग
प्रेम सों हुलसि सखी अंकम भरत है।
हिय की खिलत कली मदन जगत अली
पिय के मिलन को चित चाव वितरत है।
'हरीचंद' चलि कुंज जहाँ करै भौर गुंज
प्यारो सेज साजि मेरे ध्यान को धरत है॥२१॥

श्याम अभिराम रति-काम-मोहन सदा
वाम श्री राधिका संग लीने।
कुंज सुख-पुंज नित गुंजरत भौर जहाँ
गुंज-वन-दाम गल माहि दीने।
कोटि घन विज्जु ससि सूरमनि नील अरु
हीर छवि जुगल प्रिय निरखि छीने।
करत दिन केलि भुज मेलि कुच ठेलि
लखि दास 'हरिचन्द' जयजयति कीने ॥२२॥

आजु मुख चूमत पिय को प्यारी।
भरि गाढ़े भुज दृढ़ करि अँग अँग उमगि उमगि सुकुमारी ॥

लहि इकंत प्रानहु तें प्रियतम करत मनोरथ भारी।
उर अभिलाख लाख करि करि कै पुजवत साध महा री॥
मानत धन धन भाग आपुने देत प्रान-धन वारी।
'हरीचन्द' लूटत सुख-संपति श्री वृषभानु-दुलारी॥२३॥

घन गरजत बरसत लखि दोऊ औरहु लपटि लपटि रहे सोय।
स्यामा-स्याम इकंत कुंज में अरु तीसरो निकट नहि कोय॥
दामिनि दमकत ज्यौं ज्यौं त्यौं त्यौं गाढ़ी भरन भुजा की होय।
'हरीचन्द' बरसत घन उत इत रस बरसत पिय-प्यारी दोय॥२४॥

धन दिन धन मम भाग कुंज धन दोऊ जहाँ पधारे।
राखौंगी बिनती करि दोऊन कों आजु प्रिया पिय प्यारे॥
नैन पाँवरे बिछाइ करौंगी आँचर-बिजन बयारे।
'हरीचन्द' वारौंगी सर्बस गाऊँगी गुन-गन भारे॥२५॥

आज धन भाग हमारे यह घरी धन
मेरे घर आए गिरिराज-धरन।
नाचो गाओंगी करौंगी बधाई वारि
डारौंगी तन-मन-धन-प्रान-अभरन॥
राखौंगी कंठ लाइ जान न देहौं फेर
करि बिनती बहु गहि कै चरन।
'हरीचंद' बल्लभ-बल पीओगी
अधर-रस, छाँड़ौगी अब न सरन॥२६॥

मंगल महा जुगल रस-केलि।
जिन तृन करि जग सकल अमंगल पायन दीने पेलि॥
सुख-समूह आनन्द अखंडित भरि भरि धर्‌यौ सकेलि।
'हरीचंद' जन रीझि भिजायो रस-समुद्र उर झेलि॥२७॥

नाथ मैं केहि बिधि जिय समझाऊँ।
बातन सों यह मानत नाही कैसे कहौ मनाऊँ ॥
जदपि याहि बिस्वास परम दृढ़ वेद-पुरानहु साखी।
कछु अनुभवहू होत कहत है जद्यपि सोइ बहु भाखी ॥
तऊ कोटि ससि कोटि मदन सम तुव मुख बिनु दृग देखें।
धीरज होत न याहि तनिकहू समाधान केहि लेखे ॥
निस-दिन परम अमृत-सम लीला जेहि मानै अरु गावै।
तेहि बिनु अपुने चख सो देखे किमि यह धीरज पावै ॥
दरसन करै रहै लीला मैं जिय भरि आनँद लूटै।
तृप्त होहिं तब मन इंद्रिय को अनुभव भुस लै कूटै ॥
संपति सपने की न काम की मृग-तृष्णा नहि नीकी।
'हरीचंद' बिनु सुधा जिआवै कैसे छछिया फीकी ॥२८॥

आजु दोउ बैठे है जल-भौन।
हौज किनारे भरे मौज सों प्यारी राधा-रौन ॥
सावन-भादो छुटत फुहारे नीरहि नीर दिखाई।
भीज रहे दोउ तहँ रस-भीजे सखि लखि लेत बलाई॥
बूँद बदन पर सोभा पावत कमल ओस लपटाने।
बिथुरे बारन मै मनु मोती पोहे अति सरसाने ॥
झीने बसन श्याम अँग झलकत सोभा नहि कहि जाई।
मनहुँ नीलमनि सीसे-संपुट धर्‌यो अतिहि छबि छाई ॥
धार फुहार सीस पर लैहो लखि कै दृग सुख पावै।
मनु अभिषेक करत सब सुर मिलि छबि सो परम सुहावै ॥
कै जमुना बहु रूप धारि कै जुगल मिलन हित आई।
कै चपला घन देखि और घन मिलि बरसा बरसाई ॥

लोचन ही लखिए सो सोभा कहे कह्यौ नहि आवै ।
'हरीचंद' विनु बल्लभ-पद-बल और लखन को पावै ॥२९॥

मन मेरो कहुँ न लहत विश्राम ।
तृष्णातुर धावत इत ते उत पावत कहुँ नहि ठाम ॥
कबहुँक मोह-फाँस मैं बाँध्यौ धन-कुटुम्ब-मुख जोहै ।
तिनहूँ सों जब लहत अनादर तब व्याकुल ह्वै मोहै ॥
कबहूँ काहू नारि-प्रेम-बस ताहि को सरबस मानै ।
ताहू सों प्रति-प्रेम मिलन बिनु अकुलि और उर आनै ॥
देवी-देव तन्त्र-मन्त्रन मे कबहुँ रहत अरुझाई ।
तिनहूँ सो जब काज सरत नहि तबहि रहत अकुलाई ॥
कबहुँ जगत के रसिक भगत सज्जन लखि तिन सों बोलै ।
कालो हृदय देखि तिनहूँ को उचटत झटकत डोलै ॥
जिन कहँ मित्र सुहृद करि मानत राखत जिनकी आसा ।
तेऊ मुख भंजत तब छोड़त सबही सो बिस्वासा ॥
कबहुँ ब्रह्म बनि रहत आपुही जामैं दुख नहिं व्यापै ।
माया प्रबल तहाँ अभिमानहि नासि जगत मत थापै ॥
सोचत कबहुँ निकसि बन जानो पै जब आपु बिलोकै ।
तृष्णा छुधा साथ तहहूँ लखि ताहू सों चित रोकै ॥
ब्रह्मा सों बढ़ि लै पिपीलिका लौं जग जीव सु जेते ।
कोऊ देत न अचल भरोसो निज स्वारथ के तेते ॥
तृष्णा अमित सुखाए छिछले छीलर सब जग माही ।
'हरीचंद' बिनु कृष्ण बारि-निधि प्यास बुझत कहुँ नाही ॥३०॥

कवित्त

ए री प्रान-प्यारी बिन देखे मुख तेरो मेरे
जिय मै विरह घटा घहरि घहरि उठै ।

त्यौं ही 'हरिचंद' सुधि भूलत न क्यौंहूँ तेरो
लाँबो केस रैन-दिन छहरि छहरि उठै।
गड़ि गड़ि उठत कटीले कुच-कोर तेरी
सारी सो लहरदार लहरि लहरि उठै।
सालि सालि जात आधे आधे नैन-बान तेरे
घूँघट की फहरानि फहरि फहरि उठै ॥३१॥

सवैया

हमै नीति सो काज नही कछु है अपुनो धन आपु जुगाए रहो।
हमरी कुल-कानि गई तो कहा तुम आपनी को तो छिपाये रहो ॥
हमसो सब दूरि रहो 'हरिचंद' न संग मै मोहि लगाए रहो।
हम तो बिरहा मै सदा ही दहै तुम आपुनो अंग बचाए रहो ॥३२॥

पद

जयति जन्हु-तनया सकल लोक की पावनी।
सकल अघ-ओघ हर-नाम उच्चार मै
पतित-जन - उद्धरनि दुक्ख-विद्रावनी।
कलि-काल कठिन गज गर्व्व खर्व्वित-करन
सिंहिनी गिरि गुहागत नाद-श्रावनी।
शिव-जटा-जूट-जालाधिकृत-वासिनी
विधि-कमंडलु विमल रमनि मन-भावनी ॥
चित्रगुप्तादि के पत्र-गत कर्म्म विधि
उलटि निज भक्त आनंद सरसावनी।
दास 'हरिचंद' भागीरथी त्रिपथगा
जयति गंगे कृष्ण-चरन गुन-गावनी ॥३३॥

श्री गंगे पतित जानि मोहि तारौ।
जो जस अब लौं मिल्यौ तुम्है नहि सो जग मे विस्तारौ ॥

जेते तारे हीन छीन तुम अब लौं पतित अपारे।
ते मेरे लेखे तृन ऐसे कहा गरीब बिचारे॥
पाप अनेक प्रकार करन की बिधि कोऊ कहँ जानै।
हौ तो बदि बदि करौं अनेकन जेहि जम-चित्रहु मानै॥
हम कहँ जो पै तारि लेहु जग-तारिनि नाम कहाई।
'हरीचंद' तो जस जग मानै नातरु बादि बड़ाई॥३४॥

जै जै विष्णु-पदी श्री गंगे।
पतित-उधारनि सब जग-तारनि नव उज्जल अंगे॥
शिव-सिर-मालति-माल सरिस वर तरल तर तरंगे।
'हरीचन्द' जन-उधरनि देवी पाप-भोग-भंगे॥३५॥

पतित-उधारनी मैं सुनी।
इक बाजी खेलौ हमहूँ सों देखैं कैसी गुनी॥
कबहुँ न पतित मिले जग गाढ़े ताही सों गायो मुनी।
'हरीचंद' को जौ तुम तारौ तौ तारिनि सुर-धुनी॥३६॥

गंगा तुमरी साँच बड़ाई।
एक सगर-सुत-हित जग आई तार्‌यौ नर-समुदाई॥
इक चातक निज तृषा बुझावन जाचत घन अकुलाई।
सो सरवर नद नदी बारिनिधि पूरत सब भर लाई॥
नाम लेत जल पिअत एक तुम तारत कुल अकुलाई।
'हरीचंद' याही तें तो सिव राखी सीस चढ़ाई॥३७॥

आजु हरि-चंदन हरि-तन सोहै।
तरु तमाल पै साँझ-धूप सम देखत तिह मन मोहै॥
ता पैं फूल-सिगार सुहायो बरनि सकै सो को है।
'हरीचंद' बड़-भाग राधिका अनुदिन पिय-मुख जोहै॥३८॥

आजु जल विहरत पीतम-प्यारी ।
गल भुज दिये करिनि-गज से दोउ अवगाहत सुभ बारी ।।
सखी खरी चहुँ ओर चारु सब लै ग्रीषम उपचारी ।
चन्दन सोंधो फूल-माल बहु झीने वसन सँवारी ।।
कोउ गावत कोउ तार बजावत कोउ करत मनुहारी ।
कोउ कर सो जल-जंत्र चलावत 'हरीचंद' बलिहारी ।।३९।।

मिटत न हौस हाय या मन की ।
होत एक ते लाख लाख नित तृष्णा बुझत न तन की ।।
दैव-कृपा सो जौ तमो-गुनी वृत्ति दूर ह्वै जाई ।
तौ रजोगुनी इच्छा बाढ़त लाखन जिय मे आई ।।
ताहू के मिटे सतोगुन संचय अपुनो लोभ न छोड़ै ।
जस कीरति चिर नाम मान पै चंचल चित कहँ मोड़ै ।।
भए विरागिहु भक्त सिद्ध कहवावन की रुचि बाढ़ै ।
रचि रचि छन्द नाम करिवे को इच्छा तब जिय काढ़ै ।।
तासौं याहि जीतिबो दुरघट जानि जतन यह लीजै ।
'हरीचंद' घनस्याम-मिलन की हौस करोरन कीजै ।।४०।।

वे दिन सपन रहे कै साँचे ।
जे हरि सँग विहरत याही बृज बीति गए रँग-राचे ।।
कहाँ गई वह सरद रैन सब जिन मै हरि-सँग नाचे ।
कहँ वह बोलन-हँसन-मिलन-सुख मिले जौन बिनु जाँचे ।।
हाय दई कैसी कीनी दुख सहत करेजे काँचे ।
'हरीचंद' हरि-विनु सूनो बृज लखनहि हित हम बाँचे ।।४१।।

हरि हो अब मुख वेगि दिखाओ ।
सही न जात कृपानिधि माधो एहि सुनतहि उठि धाओ ।।
लखि निज जन डूबत दुख-सागर क्यौ न दया उर लाओ ।

आरत वचन सुनत चुप ह्वै रहे निठुर बानि बिसराओ ॥
करुनामय कृपाल केसव तुम क्यौं निज प्रनहिं डिगाओ ।
लखि विलखत 'हरिचंद' दुखी जन क्यौं नहिं धीर धराओ ॥४२॥

यह मन पारद हू सों चंचल ।
एक पलक मैं ज्ञान विचारत दूजे मैं तिय-अंचल ॥
ठहरत कतहुँ न डोलत इत उत रहत सदा बौरानो ।
ज्ञान ध्यान की आन न मानत याको लंपट बानो ॥
तासों या कहँ कृष्ण-बिरह-तप जो कोउ ताप तपावै ।
'हरीचंद' सो जीति याहि हरि-भजन-रसायन पावै ॥४३॥

आजु अभिषेकत पिय कों प्यारी ।
धरि दृग ध्यान-नवल आँसुन के भरि भरि उमगे बारी ॥
कज्जल मिलित चारु मृगमद से बिरह-परब लखि भारी ।
बरखत गलित कुसुम बेनी ते सोई फूल-झर डारी ॥
ब्याकुल कल नहिं लहत तनिक सुख हाय मंत्र उच्चारी ।
'हरीचंद' लखि दुखित सखी-जन करि न सकत उपचारी ॥४४॥

जनमतहि क्यौ हम नाहि मरी ।
सखि बिधना बिध ना कछु जानत उलटी सबहि करी ॥
हरि आछत ब्रज चार चवाइन करि निन्दा निदरीं ।
तिन भय मुखहु लखन नहिं पायो हौसहि रहत भरीं ।
अब हरि सो ब्रज छोड़ि अनत रहे बिलपत बिरह जरी ॥
यह दुख देखन ही जनमाई बारेहि बिपत परी ।
सुख केहि कहत न जान्यौ सपनेहु दुख ही रहत दरी ।
'हरीचंद' मोहिं सिरजि बिधिहि नहि जानौ कहा सरी ॥४५॥

मेरो हठ राखो हठीले लाल ।
तुम बिनु मान कौन मेरो रखिहै समुझहु जिय गोपाल ॥

हमको तो तुमरो बल प्यारे तुव अभिमान दयाल।
पै तुमही ऐसी जो करिहौ कहँ जैहैं ब्रज-बाल ॥
एक बेर ब्रज को फिरि आओ लखि गौअन बेहाल।
'हरीचंद' बरु फेर जाइयो मधुपुर कृष्ण कृपाल ॥४६॥

राखिए अपुनेन कों अभिमान।
तुव बल जो जग गिनत न काहू दीजै तेहि सनमान ॥
तुम्हरे होय सहै इतनो दुख यह तो अनय महान।
तुमहि कलंक हमै लज्जा अति कहिहै कहा जहान ॥
एक बेर फिरहू ब्रज आओ देहु जीव को दान।
'हरीचंद' गिरि कर-धारन की करिकै सुरति सुजान ॥४७॥

ऊधो अब वे दिन नहि ऐहै।
जिन मैं श्याम संग निसि-बासर
छिन सम बिलसि बितैहै ॥
वह हँसि दान माँगनो उनको
अब हम लखन न पैहै।
जमुना न्हात कदम चढ़ि छिपि अब
हरि नहिं चीर चुरैहै ॥
वह निसि सरद दिवस बरखा के
फिर विधि नाहि फिरैहै।
वह रस-रास हँसन-बोलन-हित
हम छिन छिन तरसैहै ॥
वह गलबाही दै पिय बतियाँ
अब नहि सरस सुनैहै।
'हरीचंद' तरसत हम मरिहै
तऊ न वे सुधि लैहै ॥४८॥

हरि बिनु बृज बसियत केहि भाएँ।
जीवत अब लौं बिनु पिय प्यारे इन अँखियन दरसाएँ ।।
केहि सुख लागि जियत हम अब लौं यह नहिं परत लखाई ।
बिनु बृजनाथ देखि बृज सूनो प्रान रहत किमि माई ।।
वह बन-बिहरन कुंज कुंज मै सपनेहू नहिं देखैं।
ऊधो जोग सुनन तुव मुख सौं प्रान रहे एहि लेखैं ।।
बिनु प्रिय प्राननाथ मन-मोहन आरत-हरन कन्हाई ।
'हरीचंद' निरलज जग जीवत हम भाथी की नाईं ।।४९।।

सवैया

देत असीस सदा चित सों यह
साहिबी रावरी रोज बनी रहै ।
रूप अनूप महा धन है
'हरिचंद जू' वाकी न नेकु कमी रहै ।
देखहु नेकु दया उर कै
खरी द्वार अरी यह जाचक-भीर है ।
दीजियै भीख उघारि कै घूँघट
प्यारी तिहारी गली को फकीर है ।।५०।।

अब तौ जग मैं खुलि कै चहुँघा
पन प्रेम को पूरो पसारि चुकी ।
कुल-रीति औ लोक की लाज सबै
'हरिचंद जू' नीके बिगारि चुकी ।
वहि साँवरी मूरति देखत ही
अपुने सरवस्वहि हारि चुकी ।
जग मैं कछू कोऊ कहौ किन हौं
तौ मुरारि पै प्रान कों वारि चुकी ।।५१।।

छोटे प्रबंध-काव्य

तथा

मुक्तक कविताएँ

स्वर्गवासी श्री अलवरत* वर्णन अंतर्लापिका

(सं० १९१८)

छप्पय

वस हित सानुस्वार देव - बाणी मधि का है ?
अद्यहि भाषा माहि कहा सब भाखन चाहै ?
को तुव हार्‌यौ सदा ? दान तुम नितहि करत किमि ?
का तुव मीठे सुनत ? कहा सोहत नागिन जिमि ?
महरानी तुम कहँ का कहत ? अरि-सिर पै तुम का धरत ?
का जल की सोभा ? कौन तुव सैन सदा निज भुज करत ॥ १ ॥

तुम स्व-नारि मै कहा ? कौन रच्छा तुव करई ?
का करिकै तुव सैन सत्रु को बल परिहरई ?
कैसो तुव जन हियो ? ततो बाचक का भासा ?
तुव अरि-सिर नित कहा ? कौन जल बरसत खासा ?
तुव पग संगर मे का करत ? कौन प्रथम पाताल कहि ?
आमोदित कासों तुव बसन ? का ह्वै पर दल परत महि ॥ २ ॥

---

* १४ दिसंबर सन् १८६१ ई० को क्वीन विक्टोरिया के पति प्रिंस एल्बर्ट की मृत्यु हुई थी। उक्त अवसर पर यह अंतर्लापिका बनी थी। सं०

तुव धन कासों है बढ़ि ? को पुनि देश जवन को ?
कौन मुखर ? तुम करत कहा अरि देखि भवन को ?
तरु की सोभा कहा ? होत तृन से कह तुव अरि ?
पर सों कायर कहा न ? तुम किमि चलत सैन दरि ?
तोहिं बान चलावन की सदा कहा परी पर फौज लखि ?
कह बाजि उठत घन गाजि जिमि साजत तोहिं रन लखि हरखि ।। ३ ।

कह सितार को सार ? शत्रु के किमि मन तेरे ?
काकी मार प्रहार सीस अरि हनै घनेरे ?
का तुम सैनहि देत सदा उनतिसएँ ही दिन ?
कहा कहत स्वीकार समय कछु अवसर के छिन ?
को महरानी को पति परम सोभित स्वर्गहि ह्वै रह्यो ?
अलवरत एक छत्तीस इन प्रश्नन को उत्तर कह्यो ।। ४ ।।

(यथा = अलं, अव, अर, अत इत्यादि क्रम से छत्तीसो प्रश्नों के उत्तर केवल 'अलवरत' इन पाँच ही अक्षर में निकलते हैं ।)

श्री राजकुमार-सुस्वागत-पत्र*

(सं० १९२६)

जाके दरन-हित सदा नैना मरत पियास ।
सो मुख-चंद बिलोकिहै पूरी सब मन आस ॥ १ ॥
नैन बिछाए आपु हित आवहु या मग होय ।
कमल-पॉवड़े ये किए अति कोमल पद जोय ॥ २ ॥

हे हे लेखनी, आज तुझे मानिनी बनना उचित नहीं है, क्योकि इस भूमि के नायक ने चिर-समय पीछे अपने प्यारी की सुधि ली है ।

आज तू भी आगत-पतिका बन और सोरह शृंगार करके इस पत्र रूपी रंगशाला मे ऐसी मनोहर और मदमाती गति से चल कि सब देखनेवाले मोहित हो होके मतवाले से झूमने लगे और ऐसी फूलो की झड़ी लगा जिससे महाराज-कुमार के कोमल चरनों को यह पत्रिका एक फूल के पॉवड़े सी बन जाय ।

आज क्या कारण है कि उपवनों मे कोकिल ने धूम सी मचा रखी है और भॅवरे मदमाते होकर इधर से उधर दौड़े दौड़े फिरते है ? बृक्षो को ऐसा कौन सा सुख हुवा है कि मतवालो की भॉति

---

* ड्यूक आव एडिनूबरा के सन् १८६९ ई० मे भारत-शुभागमन के अवसर पर लिखा गया था । सं०

झुक झुक के भूमि चूम रहे हैं और लता सब ऐसी क्यों प्रमुदित है कि कुलटा नायिका की भाँति लाज छोड़ छोड़ के अपने नायक से लिपट रही हैं और फलों ने ऐसा क्या सुख पाया है कि अपना स्थान छोड़ छोड़ के उमगे हुए पृथ्वी पर टपके पड़ते हैं और फूलों ने किस के आने का समाचार सुन लिया है कि फूले नहीं समाते हैं। मालिनें शृंगार करके किस के हेतु यह कोमल और अनेक रंग के फूलो की माला गूँथ रही हैं और यह ठंढी पौन किस के अंग को छू के आती है कि सब के मन की कली सी खिली जाती है। नदियों और सरोवरों के पानी क्यौ उछल उछल के अपना आनंद प्रकाश कर रहे हैं और उनमें कँवल की कलियाँ किस की स्तुति के हेतु हाथ बाँधे खड़ी हैं। हंस और चकोर ऐसी कुलेल क्यौ करते है और बर्षा बिना मोर क्यौ नाच रहे है। पक्षी लोग बड़े उत्साह से किस के आने की बधाई गाते हैं और हिरन लोग अपने बड़े बड़े नेत्रो से किस के दर्शन की आशा मे तृण छोड़ छोड़ के खड़े हो रहे है। खिड़कियों मे स्त्री लोग किस के हेतु पुतली सी एकाग्र-चित्त हो रही है और मंगल का सब साज किस के हेतु सजा है। सुना है कि हम लोगो के महाराज-कुमार आज इधर आनेवाले है, फिर क्यौ न इस भारतवर्ष के उद्यान मे ऐसा आनंद-सागर उमगै। भारतवर्ष के निवासी लोगों को अब इससे विशेष और कौन आनंद का दिन होगा और इससे बढ़ के अपने चित्त का उत्साह और आधीनता प्रगट करने का और कौन सा समय मिलेगा। कई सौ बरस से हम लोग चातक की भाँति आसा लगाए थे कि वह भी कोई दिन ईश्वर दिखावैगा, जिस दिन हम अपने पालनेवाले को इन नेत्रो से देखैगे और अपना उत्साह और प्रीति प्रगट करेगे। धन्य उस जगदीश्वर को जिसने आज हमारे मनोर्थ पूर्ण करके हम को

उस अपूर्व निधि का दर्शन कराया जिस का दर्शन स्वप्न मे भी दुर्लभ था। धन्य आज का दिन और धन्य यह घड़ी जिसमे हमारे मनोर्थ के वृक्ष मे फल लगा और अपने राज-कुँवर को हम लोगो ने अपने नेत्रो से देखा। इस समै हम लोग तन मन धन जो कुछ न्योछावर करैं थोड़ा है और जो आनंद करै सो वहुत नही है। ईश्वर करै जब तक फूलो मे सुगंधि और चंद्रमा मे प्रकाश है और पद्मिनी-नायक सूर्य्य जब तक उदयाचल पर उगता है और गंगा-जमुना जव तक अमृत धारा वहती है तव तक इनके रूप-वल-तेज और राज्य की वृद्धि होय, जिसमे हम लोग इनके कर-कल्प-वृक्ष की छाया मे सब मनोर्थ से पूर्ण होकर सुखपूर्वक निवास करे।

कवित्त

जनम लियो है महारानी-कोख-सागर ते
जामे तौ कलंक को न लेसहू लखायो है।
सुभट समूह साथ सोहत है तारागन
कुमुदहि तू न हिए हरख वढ़ायो है॥
चाहि रहे चाह सो चकोर ह्वै प्रजा के पुंज
वैरी तम निकर प्रकास ते नसायो है।
आनँद असेस दीवे हेत हिद वीच आज
कुँवर प्रताती नख-तेज वनि आयो है॥१॥

कोकिल समान वोलि उठे है सुकवि सवै
कामदार भौंर से वधाई लै लै धाए है।
लागि उठी लाय विरहीन की सी वैरिन को
वौरि उठे हाकिम रसाल से सुहाए है॥

फूलि के सफल भे मनोरथ सबन ही के
नाचि उठे मोर से प्रजा के मन भाए हैं।
साजि कै समाज महारानी के कुँवर आजु
दीबे सुख-साज रितुराज बनि आए हैं ॥२॥

दोहा

अरी आज संभ्रम कहा जान परत कछु नाहिं।
बौरे से दौरे फिरत फूले अंगन माहिं ॥३॥
धावत इत उत प्रेम सो गावत हरख बढ़ाय।
आवत राजकुमार यह कहत सुनाय सुनाय ॥४॥
करत मनोरथ की लहर सागर मन समुदाय।
राजकुँवर-मुख-चंद लखि, उमगि चल्यो अकुलाय ॥४॥

अथ षट् ऋतु रूपक

बसंत

आनँद सो बौरी प्रजा, धाये मधुप समाज।
मन-मयूर हरखित भए, राजकुँवर-रितुराज ॥६॥

ग्रीष्म

तपत तरनि तिमि तेज अति, सोखत बैरि अपार।
जीवन मे जीवन करत, ग्रीषम-राजकुमार ॥७॥

वर्षा

प्रजा कृषक हरखित करत, बरसत सुख-जल-धार।
उमगावत मन नदिन कों, पावस-राजकुमार ॥८॥

शरद

फूले सब जन मन-कमल, नभ-सम निरमल देस।
बिकसित जस की कैरवी, आया सरद नरेस ॥९॥

हेमंत

मुरझावत रिपु-बनज वन, अग्नि कँपावत गात।
राजकुँवर हेमंत बनि, आवत आज लखात ॥१०॥

शिशिर

पीरे मुख बैरी परे, पिकन बधाई दीन।
सीरे उर सब जन भए, सिसिर-कुमार नवीन ॥११॥

विनय

विनवत जुग प्रफुलित जलज, करि कलि कैक समान।
धुजा-भुजा की छाँह मैं, देहु अभय-पद दान ॥१२॥
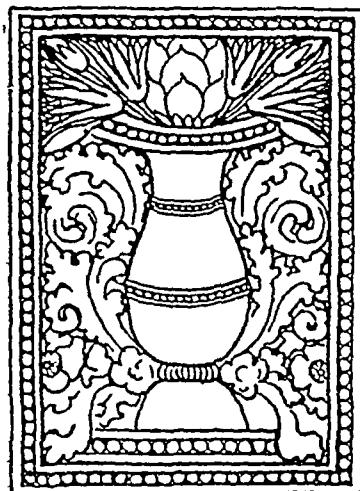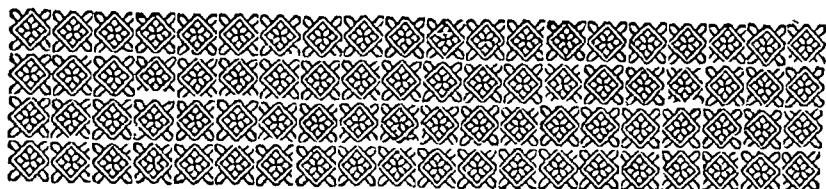
सुमनोऽञ्जलिः *

(सं० १९२७)

PREFACE

The short stay of H. R. H. the Duke of Edinburgh at Benares prevented me from personally presenting him this 'Offering of flowers' on the occasion of his visit to this city. With the co-operation of some of my esteemed friends, I convened a meeting at my house on the 20th January and invited many respectable and learned Pundits and Gentlemen to attend it. The meeting was formally opened by me by reading the biography of the Royal Prince in Hindi, and in conclusion requesting the gentlemen present on the occasion to adopt suitable measures for the address. The Pundits of the city expressed their great satisfaction, and read individually some Shlokas (verses) in Sanskrit expressing their heart-felt joy on the advent of the Royal Prince to this

* इस सुमनोजलि मे सर्व श्री बापूदेव, राजाराम, बेचनराम, बस्तीराम, बालशास्त्री, गोविंद देव, शीतलप्रसाद, ताराचरण, गंगाधर शास्त्री, रमापति, नृसिंह शास्त्री, ढुंढिराज, विश्वनाथ, विनायक शास्त्री और रामकृष्ण शास्त्री आदि के संस्कृत श्लोक है। इनके सिवा नारायण और हनुमान कवि की हिंदी कविताएँ भी है। स०

city. The verses are entered systematically into this book. The meeting then broke. The gentlemen present on the occasion evinced great joy and loyalty to the Royal Prince for which this small book containing the expressions of their sincere loyalty, is most respectfully dedicated to his Gracious feet.

Benares
10th March 1870 } HARISCHANDRA.

Names of the gentle-men present on the occasion of the meeting held for presenting an address to H R H. the Duke of Edinburgh.

Prof. Shri Bapu Deva Shastri F. R. A. S. and Fellow Calcutta University.
Shri Raja Ram Shastri
,, Basti Ram ,,
,, Govind Deva ,,
,, Bal ,,
,, Seetal Prasad.
,, Bechan Ram.
,, Krishna Shastri.
,, Dhundhi Raj Dharmadhikari
,, Ramapati Dube.
,, Ram Krishna Pattburdhana.
,, Shiva Ram Govind Ranade.

Shri Narayan Kavi.
,, Hanuman Kavi.
,, Hari Bajpai.
Rai Narsingh Das
,, Jaya Krishna Das.
,, Lakshmi Chandra.
,, Murari Das.
,, Balkrishna Das.
,, Radha Krishna Das.
Babu Vishweshwar Das.
,, Madho das.
,, Madhusudan Das
, Gokul Chandra.
,, Shama Das.
,, Loke Nath Moitre.
Munshi Sankata Prasad.
Molvi Asharaf Ali Khan.
Babu Balgovinda.

काशी में ग्रहण के हित महाराज-कुमार के आने के हेतु

कवित्त

वाको जन्म जल याको रानी-कूख-सागर तें
वह तो कलंकी यामें छींटहू न आई है।
वह नित घटै यह बाढ़े दिन दिन
वह बिरही-दुखद यह जग-सुखदाई है॥
जानि अधिकाई सब भाँति राजपुत्र ही मै
गहन के मिस यह मति उपजाई है।
देखि आजु उदित प्रकासमान भूमि चंद
नभ ससि लाजि मुख कालिमा लगाई है॥
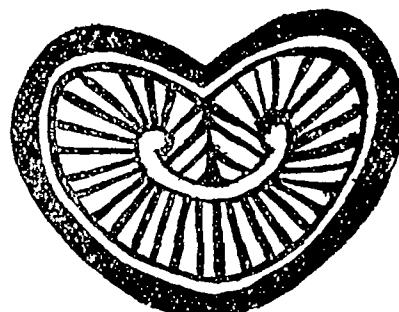
सन् १८७१ में श्रीमान प्रिंस आफ वेल्स के पीड़ित होने पर कविता*

(सं० १९२८)

जय जय जगदाधार प्रभु, जग-व्यापक जगदीस ।
जय जय प्रनताराति-हरन, जय सहस्र-पद-सीस ॥ १ ॥
करुना-वरुनालय जयति, जय जय परम कृपाल ।
सुद्ध सच्चिदानन्द-घन, जय कालहु के काल ॥ २ ॥
सब समर्थ जय जयति प्रभु, पूर्ण ब्रह्म भगवान ।
जयति दयामय दीन-प्रिय, क्षमा-सिन्धु जन-जान ॥ ३ ॥
हम हैं भारत की प्रजा, सब विधि हीन मलीन ।
तुम सो यह बिनती करत, दया करहु लखि दीन ॥ ४ ॥
हाथ जोर सिर नाइ कै, दाँत तरे तृन राखि ।
परम नम्र ह्वै कहत हैं, दीन वचन अति भाखि ॥ ५ ॥
बिनवत हाथ उठाय कै, दीजै श्री भगवान ।
जुबराजहि गत-रुज करौ, देहु अभय को दान ॥ ६ ॥
तिनके दुख सो सब दुखी, नर-नारिन के बृन्द ।
तासो तुरतहि रोग हरि, तिन कहँ करहु अनंद ॥ ७ ॥
जिनकी माता सब प्रजा-गन की जीवन-प्रान ।
तिनहि निरोगी कीजिये, यह बिनवत भगवान ॥ ८ ॥
बेग सुनै हम कान सो, प्रिन्स भए आनन्द ।
परम दीन ह्वै जोरि कर, यह बिनवत हरिचन्द ॥ ९ ॥

---

* सन् १८७१ ई० के नवंबर में टाइफॉयड (विषम) ज्वर के कारण कई दिनों तक प्रिंस की अवस्था कष्टसाध्य हो गई थी। उस समय यह कविता लिखी गई थी। सं०
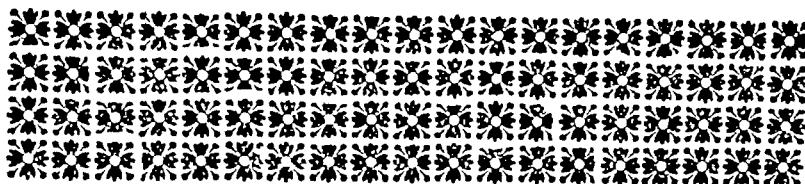
।। श्री जीवन जी महाराज ।।*

(सं० १९२९)

हरि की प्यारी कौन? देह काके बल धावत?
कहा पदन मै परि विशेषता बोध करावत?
कहा नवोढ़ा कहत? ठाकुरन को को स्वामी?
सुरगन को गुरु कौन? वसत केहि थल रिसि नामी?
हरि-वंशी-धुनि सुनि सकल ब्रजवनिता का कहि भजैं?
वह कौन अंक जो गुननहूँ किए रूप निज नहि तजैं ।। १ ।।

अश्व-पीठ कह धरत? कौन रवि के जिय भावत?
राजा के दरबार सभहि सुधि कौन दिआवत?
नवल नारि मैं कहा देखि जुव-जन मन लोभा?
को परिपूरन ब्रह्म? कहा सरवर की शोभा?
धन विद्या मानादिक सुगुन भूषित को जग-गुरु रह्यो?
इन सब प्रश्नन को एक ही उत्तर श्री जीवन कह्यौ ।। २ ।।

---

* जिन श्री जीवन जी महाराज के अशेष गुण इस पत्र मे लिखे गए है उनके नाम की मैने एक अन्तर्लापिका बनाई है, कृपा करके प्रकाश कीजिएगा। इस अन्तर्लापिका में १६ प्रश्न के उत्तर चार ही अक्षर से निकलते है।

अथ क्रम से उत्तर ।। १ श्री २ जी ३ व ४ न ५ श्री जी ६ जीव ७ वन ८ वजी ९ नव १० जीन ११ बनजी १२ नजीव १३ नव श्री १४ श्रीजीव १५ जीवन १६ श्री जीवन।

(सुधा, २ सितम्बर सन् १८७२ ई०)

चतुरंग*

(सं० १९२९)

बीस, तीस, चौबीस, सात, तेरह, उन्निस कहि ।
चारुक, दस, पच्चीस, बयालिस, सत्तावन लहि ॥
इक्कावन, छत्तिस, इक्किस, एकतिस, सोलह, खट ।
बारह, द्वै, सत्रह, सत्ताइस, तैतिस गिन झट ॥
पचास, साठ, तैतालिस, सैतिस, चौवन, चौसठ लहिय ।
सैतालिस, बासठ, छप्पन, उनतालिस, पैतालिस कहिय ॥१॥

पैतिस, एकतालिस, अट्ठावन, बावन को गठ ।
छियालीस, एकसठ, पचपन, चालिस, तेइस, अठ ॥

---

* कविवचन सुधा (३ अगस्त १८७२ ई०) में प्रकाशित। ऊपर लिखे हुए तीनों छप्पय बाबू हरिश्चंद्र के बनाए हैं। इनको कंठ कर लेने से चतुर मनुष्य सभा में चौसठो घर पर घोड़ा दौड़ा सकता है। सुधाकर नामक जो बनारस में समाचार पत्र किसी समय मे छपता था, उसमे एक लेख इसी खेल पर लिखा है और उसमे उक्त पत्र के सम्पादक ने बड़े वाद से स्थापन किया है कि यह प्राचीन समय मे हिंदुस्तान के किसी चतुर मंत्री ने बालक राजा को नीति सिखाने के हेतु बनाया था और यह बात श्री बाबू राजेंद्रलाल के पुस्तक-संग्रह मे संस्कृत प्राचीन ग्रंथों के नाम मे "चतुरंग क्रीड़न" नाम देखने से और भी सिद्ध होती है। जो हो, और बुरे खेलो से तो यह खेल अच्छा ही है।

चौदह, उनतिस, चौवालिस, चौतिस, उनचासो ।
उनसठ, तिरपन, तिरसठ, अड़तालीस प्रकासो ।
अड़तिस, बत्तिस, 'हरिचंद' पंद्रह, सु पाँच, बाईस लहि ।
अट्ठाइस, ग्यारह, छबिस, नव, तीन, अठारह, एक कहि ।।२।।

चतुर जनन को खेल चारु चतुरंग नाम को ।
तामे चपल तुरंग चलत द्वय अर्द्ध धाम को ।।
जिमि कोउ विज्ञ सवार वाजि चढ़ि व्यूह माँह धँसि ।
फेरै तेहि सब ठौर कठिन यद्यपि चाबुक कसि ।।
तिमि चौसठहू घर मै फिरै बाजि अंक सब ये कहहु ।
'हरिचंद' रसिक जन जानि एहि नित चित परमानंद लहहु ।।३।।

देवी छद्म-लीला*

(सं० १९३०)

श्रीराधा अति सोचत मन मे ।
कौन भाँति पाऊँ नँद-नंदन पिया अकेले बृंदावन मे ॥
वे बहु-नायक रस के लोभी उनको चित्त अनेक तियन मे।
घेरे रहति सौति निसि बासर छोड़त नाहि एकहू छन मे॥
हमरे तो इक मोहन प्यारे बसे नैन मे तन मे मन मे ।
'हरीचंद' तिन बिन क्यो जीवैं दिन बीतत याही सोचन मैं॥१॥

तब ललिता इक बुद्धि उपाई ।
सुन री सखी बात इक सोची सो मैं तुम सों कहत सुनाई ॥
हम सब बनत ग्वाल अरु पंडित देवी आपु बनहु सुखदाई।
तिन सो जाय कहत हम अद्भुत बृंदाबन देवी प्रगटाई ॥
अति परतच्छ कला है वाकी ताकों देखन चलहु कन्हाई ।
'हरीचंद' यह छल करिकै हम लावत तिनकों तुरत लिवाई ॥ २ ॥

यहै बात राधा मन भाई ।
आपु बनी बृंदाबन-देवी सखियन को तहँ दियो पठाई ॥

---

* बनारस प्रिंटिंग प्रेस मे सन् १८७२ ई० मे प्रकाशित।

बैठी आसन करि मंदिर में सखियन की द्वै भुजा बनाई।
बेनु शृंग पुनि लकुट कमल लै चार भुजा तहँ प्रगट दिखाई।।
माथे क्रीट मोर-पखवा को सारी लाल लसी सुखदाई।
रतनन के आभरन बने तन जिनपै दृष्टि नाहि ठहराई।।
मौन साधि दोउ नैनन थिर करि मूरति बनी महा छबि छाई।।
'हरीचंद' देविन की देवी आज परम परमा प्रगटाई।। ३।।

तब सखियन निज भेस बनायो।
कोउ बनि ग्वाल बनी कोउ पंडा पुरुषन ही को रूप सुहायो।।
बृंदावन में सब मिलि पहुँची जहँ मन-मोहन धेनु चरावत।
तिन सों जाइ कहन यों लागी सुनहु लाल इक बात सुनावत।।
अचरज एक बड़ो भयो बन मैं बट तर इक देवी प्रगटानी।
अति परतच्छ कला है वाकी महिमा कछू न जात बखानी।।
इक आवत इक जात नगर तें भीर भई लाखन की भारी।
जो जोइ माँगत सो सोइ पावत साँच कहत करि सपथ तिहारी।।
तुम त्रिभुवन के नाथ कहावत तासो ताहि बिलोकहु जाई।
'हरीचंद' सुनि अति अचरज सों तुरत चले उठि त्रिभुवन-राई।। ४।।

मन-मोहन पूजन-साज लिये दरसन कों देवी के आए।
तहाँ भीड़ देखि नर-नारिन की मन में अति ही बिस्मै छाए।।
इक आवत है इक जात चले इक पूजत माला-फूल लिए।
इक अस्तुति दोउ कर जोरि करै इक मुख सो जै-जैकार किए।।
तिन मोहन सों यह बात कही तुमहूँ पूजा को साज करौ।
मुँह-माँगो फल बरदान मिलै जो तनिकहु उर मैं ध्यान धरौ।।
सुनिकै मनमोहन देवी के तब पूजन को सब साज कियो।
'हरिचंद' सुअवसर देखि तहाँ बरदान भक्ति को माँग लियो।। ५।।

न्यौते काहू गाँव जात ही जसुमति हू निकसी तहँ आई।
भीड़ देखि पूछत सखियन सो यहाँ जुटीं क्यौ लोग-लुगाई।।
काहू कह्यौ अजू या वट सो देवी एक नई प्रगटाई।
ताकी जात करन सब आवै नर-नारी इत हरख बढ़ाई।।
सुनि अति अचरज सो जसुदा तब देवी के दरसन को धाई।
'हरीचंद' मालिन सो लै कै फूल बतासा पूजत जाई।। ६ ।।

हरिहु मातु ढिग आइ गए।
कहत सुनत चरचा देवी की सब मिलि भीतर भवन भए।।
दरसन करि देवी को पूज्यौ सब मिलि जै-जैकार दए।
'हरीचंद' जसुदा माता तब अस्तुति ठानी भगति लए।। ७ ।।

चिरजीओ मेरो कुँवर कन्हैया।
इन नैनन हौ नित नित देखो राम कृष्ण दोउ भैया।।
अटल सोहाग लहो राधा मेरी दुलहिन ललित ललैया।
'हरीचंद' देवी सो माँगत आँचर छोरि जसोदा मैया।। ८ ।।

जब राधा को नाम लियो।
तब मूरत कछु मन मुसुकानी पै कछु भेद न प्रगट कियो।।
पूजा को परसाद सखिन तब जसुदा मोहन दुहुँन दियो।
'हरीचंद' घर गई जसोदा कहि जुग-जुग मेरो लाल जियो।। ९ ।।

मोहन जिय सँदेह यह आयो।
जब राधा को नाम लियो तब बाम्हन को मन क्यौ मुसकायो।।
मूरतिहू कछु जिय मुसकानी या मै है कछु भेद सही।
प्यारी-स्वेद-सुगंधहु या परसादी माला बीच लही।।
पूछि न सकत सँकोचन सब सो अति आतुर चित लाल भए।
'हरीचंद' बृजचंद साँवरे मन मे महा सँदेह लए।।१०।।

तब मोहन यह बुद्धि निकासी।
जौ यह राधा तौ नहिं छिपिहै अंत प्रीति ह्वैहै परकासी॥
यह जिय सोचि हाथ बीरा लै देवी के अधरान लगायो।
नख सों अधर छुयो ताही छिन देवी तन पुलकित ह्वै आयो॥
सखियन कह्यौ छुओ मत देविहि पहिने बसनन तुम सुखदाई।
'हरीचंद' हँसि मौन भए तब कह्यौ भेद की गति मैं पाई॥११॥

हाथ जोरि हरि अस्तुति ठानी।
जय जय देवी बृंदाबन की जै जै गोपिन की सुखदानी॥
तुम तो देवी अहौ बोलती आजु मौन गति नई लखानी।
जो अपराध भयो कछु हमसों तो ताको छमिए महरानी॥
रूप-उपासी बिना मोल को दास हमैं लीजै जिय जानी।
'हरीचंद' अब मान न करिये यह बिनती लीजै मन मानी॥१२॥

हे देवी अब बहुत भई।
यह बरदान दीजिए हमको कछु मत कीजै आजु नई॥
अब कबहूँ अपराध न करिहौं तुव चरनन की सपथ करौं।
छमा करौ हौं सरन तिहारी त्राहि त्राहि यह दीन खरौं॥
सह्यौ न जात बिरह यह कहिकै नैनन में हरि नीर भरे।
'हरीचंद' बेबस ह्वै कै श्री राधा जू के चरन परे॥१३॥

देखि चरन पैं पीतम प्यारो।
छुटि गयो मान कपट कछु जिय मैं रह्यौ छद्म को नाहि सँभारो॥
धाइ उठाइ लियो भुज भरिकै नैनन नीर भर्यो नहि ढारो।
तन कंपत गद्‌गद मुख बानी कह्यौ न कछु जो कहन बिचारो॥
रहे लपटाइ गाढ़ भुज भरिकै छूटत नहि तिय हिए पियारो।
'हरीचंद' यह सोभा लखि कै अपनो तन-मन सहजहि वारो॥१४॥

पूछत लाल बोलि किन प्यारी ।
क्यौं इतनो पाखंड बनायो ठग्यौ बड़ो ठगिया बनवारी ।।
प्यारी कह्यौ तुम्हारेहि कारन प्यारे श्रम यह कीन्हो भारी ।
तुम बहु-नायक मिलत कहूँ नहि ताही सो यह बुद्धि निकारी ।।
प्रेम भरे दोउ मिलत परस्पर मुख चूमत है अलकन टारी ।
'हरीचंद' दोउ प्रीति-बिबस लखि आपुन-पौ कीनौ बलिहारी ।।१५।।

सखियनहू निज बेस उतार्‌यौ ।
धाई सबै चारहू दिसि सो कहत बधाई तन मन वार्‌यौ ।।
कोउ लाई सज्जा कोउ बीरी कोउन चॅवर मोरछल ढार्‌यौ ।
कोउन गॅाठि जोरि कै दोउ को एक पास लैके बैठार्‌यौ ।।
दूलह बन्यौ पियारो राधा दुलहिन को सिगार सॅवार्‌यौ ।
'हरीचंद' मिलि केलि बधाई गावत अति जिय आनँद धार्‌यौ ।।१६।।

चिरजीओ यह अविचल जोरी ।
सदा राज राजौ बृंदाबन नॅद-नंदन बृषभानु-किशोरी ।।
देत असीस सबै बृज-जुवती करत निछावरि मनि-गन छोरी ।
आरति बारत धीर न धारत रहत रूप लखि कै तृन तोरी ।।
कुंज-महल पधराइ लाल को हटी सबै बृज-बासिनि गोरी ।
मिलि बिलसत दोऊ अति सुख सो 'हरीचंद' छबि भाखै को री ।।१७।।

यह रस बृज मै रहौ सदाई ।
जो रस आजु रह्यौ कुंजन मैं छद्‌म-केलि-सुख पाई ।।
नित नित गाओ री सब सखियॉ मोहन-केलि-बधाई ।
'हरीचंद' निज बानी पावन करन सुजस यह गाई ।।१८।।

प्रातःस्मरण मंगल-पाठः*

(सं० १९३०)

मंगल राधा - कृष्ण - नाम - गुन-रूप सुहावन ।
मंगल जुगल-विहार रसिक-मन-मोद-बढ़ावन ॥
मंगल गल भुज डारि बदन सो बदन मिलावनि ।
मंगल चुंबन लेनि बिहँसि हँसि कंठ लगावनि ॥
आलिंगन परिरंभन मिलनि मंगल कोक-कलानि कढ़ि।
'हरिचंद' महा मंगलमयी जुगल-केलि रसरेलि बढ़ि ॥१॥

मंगल प्रातहि उठे कछुक आलस रस पागे ।
सिथिल बसन अरु केस नैन घूमत निसि जागे ॥
भुज तोरनि जमुहानि लपटि कै अलस मिटावनि ।
भूखन बसन सँवारि परसपर नैन मिलावनि ॥
कछु हँसनि सीकरनि लाज सो मुरि मुरि अँग पर गिरि परनि।
'हरिचंद' महा मंगलमयी प्रात उठनि पग धरि धरनि ॥२॥

मंगल सखी - समाज जानि जागे उठि धाईं ।
जल-झारी पिकदान वस्त्र दरपन लै आईं ॥

---

* हरिप्रकाश यंत्रालय, नैपाली खपरा, काशी की प्रकाशित प्रति पत्राकार है, पर उसमें समय नहीं दिया है ।

करि मुजरा बलिहार भई लखि नैन सिराई।
प्रगट सुरत के चिन्ह देखि कछु हँसीं-हँसाई।
मुख धोइ पाग कसि आरसी देखत अलक सँवारही।
'हरिचंद' भोग मगल धर्‌यौ आरोगत मन वारही ॥ ३ ॥

मंगल भेरि मृदंग पनव दुंदुभि सहनाई।
चंग मुचंग उपंग झाँझ झालरी सुहाई ॥
गोमुख आनक ढोल नफीरो मिलि कै साजै।
मंगलमयी मुरलिका विच विच अजुगुत वाजै ॥
जै करति हाथ जोरे सबै मुरछल विजन ढारही।
'हरिचंद' महा मंगलमयी मंगल-आरति वारही ॥ ४ ॥

मंगल जुगल नहाइ विविध सिंगार बनावत।
मंगल आरसि देखि फूल-माला पहिरावत ॥
मंगल गोपी गोपी-वल्लभ भोग लगावत।
मंगल ग्वालिन•आइ दूध मथि घैया प्यावत ॥
मंगल भोजन बहु बिधि करत उठि बीरी मुख मै धरत।
मंगल उगार 'हरिचंद' लै राज-भोग आरति करत ॥ ५ ॥

मंगल बन के फल अनेक भीलिनि लै आई।
मंगल जुगल समेत फूल-माला पहिराई ॥
मंगल संध्या भोग अरपि आरति मिलि करही।
मंगलमय सिगार बहुरि निसि हलको धरही ॥
मंगल व्यारू पै पान करि बीरी खात जँभात है।
'हरिचंद' सैन आरति करत सखि सब निरखि सिहात है ॥६॥

मंगल बृंदा-विपिन कुंज मंगलमय सोहै।
मंगल गिरि गिरिराज बृक्ष मंगल मन मोहै ॥

मंगल बन सब ओर झरत झरना सब मंगल।
मंगल पच्छी बोल सुमंगल फूल पत्र फल ॥
मंगल अलि-कुल गावत फिरत मंगल केकी नाचहीं ॥
'हरिचंद' महामंगल सदा नित बृंदाबन माँचहीं ॥ ७ ॥

मंगल जमुना-नीर कमल मंगलमय फूले।
मंगल सुंदर घाट बँधे भँवरे जहँ भूले ॥
मंगलमय नँद-गाँव महाबन मंगल भारी।
मंगल गोकुल सबै ओर उपवन सुखकारी ॥
मंगल बरसानो नित नवल मंगल रावलि सोहई।
'हरिचंद' कुंड तीरथ सबै मंगलमय मन मोहई ॥ ८ ॥

मंगल श्री नँदराय सुमंगल जसुदा माता।
मंगल रोहिनि मंगलमय बलदाऊ भ्राता ॥
मंगल श्री बृषभानु सुमंगल कीरति रानी।
मंगल गोपी ग्वाल गऊ हरि को सुखदानी ॥
मंगल दधि दूध अनेक बिधि मंगल हरि-गुन गावहीं।
'हरिचंद' लकुट अरु मुकुट धरि मंगल बेनु बजावहीं ॥ ९ ॥

मंगल वल्लभ नाम जगत उधर्‌यो जेहि गाए।
विष्णु स्वामि-पथ परम महा मंगल दरसाए ॥
मंगल विट्ठलनाथ प्रेम-पथ प्रगटि दिखायो।
मंगल कृष्ण-बियोग-दुःख-अनुभव प्रगटायो ॥
मंगल दैवी जन दुखी लखि दान चलायो नाम को।
'हरिचंद' महामंगल भयो दुख मेट्यौ सब जाम को ॥१०॥

मंगल गोपीनाथ रूप पुरुषोत्तम धारी।
श्री गिरिधर गोविंद राय भक्तन-दुखहारी ॥

वालकृष्ण श्री गोकुलेस रघुनाथ सुहाए ।
श्री जदुपति घनस्याम सात वपु प्रगट दिखाए ॥
मंगलमय वल्लभ बंस वर अटल प्रेम-मारग रच्यौ ।
'हरिचंद' महा मंगलमयी वेद-सार जिन मथि कढ्यौ ॥११॥

मंगलमय वल्लभी लोग भय-सोग मिटाए ।
मंगल-माला कंठ तिलक अरु छाप लगाए ॥
मंगलमय सत्संग कीरतन कथा सुहानी ।
मंगल तिनकी मिलनि कहनि बोलनि सुखदानी ॥
मंगल अनुराग सुनयन जल हँसनि नचनि गावनि रमनि ।
'हरिचंद' जगत सिर पॉव धरि मंगल लीला मैं गमनि ॥१२॥

मंगल गीता और भागवत सों मथि काढ़ी ।
मंगल-मूरति जुगल-चरित विरुदावलि वाढ़ी ॥
द्वादस द्वादस अर्ध पदी जो प्रातहि गावै ।
मंगल वाढ़ै सदा अमंगल निकट न आवै ॥
मंगल चंद्रावलिनाथ की केलि-कथा मंगल-मई ।
मंगल बानी 'हरिचंद' की सवही को मंगल भई ॥१३॥

सुमिरौ वल्लभ रूप महा मंगल फल पावन ।
गौर गुप्त वपु प्रगट श्याम लोचन मन-भावन ॥
दृग विसाल आजानु-बाहु पद्मासन सोहै ।
गल तुलसी की माल देखि सवको मन मोहै ॥
सिर तिलक बाहु पर छाप वर केस बँध्यौ सिर राजई ।
त्रय ताप जनन को दूर सों देखत ही दुरि भाजई ॥१४॥

जुगल-केलि-रस-मत्त हँसत लखि ज्ञान खलन कहँ ।
दैविन पै अति करुन रौद्र मायावादिन पहँ ॥

वादिन पैं उत्साह भयद असुरन कहँ पग पग।
दीन जीव पैं घृणित अचंभित देखि विमुख जग॥
अति शांत भक्तवत्सल परम सख्य बिबुध-जन सो करत।
जग-हास्य सिखावत मुख मधुर आनँदमय रस बपु धरत॥१५॥

हृदय आरसी माँहि जुगल परतच्छ लखावत।
जग-उधार मैं रसिक माल कर सोभा पावत॥
चरन-कमल-तल सकल बिमल तीरथ दरसावत।
मुख सो श्री भागवत गूढ़ आसय नित गावत॥
घेरे चहुँ दिसि सब संतजन जे हरि-रस भीजे रहत।
कर ज्ञान-मुद्रिका धारि कै तिनसो कृष्ण-कथा कहत॥१६॥

कबहुँ अचल ह्वै रहत मौन कछु मुख नहि भाखत।
कबहुँ बाद झर लाइ खंडि माया-मत्त नाखत॥
जुगल-केलि करि याद हँसत कबहूँ गुन गावत।
कंपादिक परतछ सँचारी भाव जनावत॥
तन रोम-पाँति उघटित सदा गद्‌गद हरि-गुन मुख कहत।
लखि दीन-दसा जग जीय की उमगि निरंतर दृग वहत॥१७॥

तीरथ पावन करन कबहुँ भुव पावन डोलत।
श्री भागवत-सुधा-समुद्र मथि कबहूँ बोलत॥
ग्रंथ रचत एकाग्र चित्त करि बाँचि सुनावत।
कबहुँ बैठि एकांत बिरह अनुभव प्रगटावत॥
सेवा करि पीतम की कबौं सिखवत बिधि सेवन प्रगट।
कबहूँ सिच्छत जन आपुने विबिध वाक्य-रचना उघट॥१८॥

मोर कुटी महँ बैठि खिलावत कबहुँ लाल कहँ।
खेलत धरि त्रैरूप बाल-तन बनि मोहन तहँ॥

हरे कुंज वन छुए बितानन तनी लता सब।
झुके मोर चहुँ ओर सुनन को तहँ किंकिनि-रव ॥
तिन मध्य खिलौना कर लिए चुचकारत बालकन जब।
किलकाइ चलहि आनंद भरि निरखत नैन सिरात तब ॥१९॥

वन उपबन एकांत कुंज प्रति तरु तरु के तर।
तीर तीर प्रति कूल कूल कुंडन पै सर सर ॥
गुफा दरी गिरि घाट सिखर गौवन की गोहर।
गोकुल ब्रज के गाँव गाँव ब्रज-बासिन घर घर ॥
हरि जहँ जहँ जो लीला करी तहँ तहँ सोइ अनुभव करत।
ब्रज-बासिन गौवन ब्रज-पसुन संग ताहि बिधि अनुसरत ॥२०॥

सेवा मैं हरि सों कबहूँ रस भरि बतरावत।
कबहुँ सुतन सो हरि-सेवा की रीति बतावत ॥
ब्रह्मवाद को कबहुँ बहुत बिधि थापन करही।
लोक सिखावन हेतु कबहुँ संध्या अनुसरही ॥
विश्राम करत कबहूँ जबै अमित होइ तब भक्त-जन।
गुन गावत चरन पलोटही करहि कोउ मुरछल बिजन ॥२१॥

राख्यौ श्रुति की मेड़ शास्त्र करि सत्य दिखायो।
द्विज-कुल धन धन कियो भूमि को मान बढ़ायो ॥
दैवी-जन अवलंब दियो पंडित परितोषे।
वैष्णव-मारग उदय कियो विरही-जन पोषे ॥
ब्रज-भूमि लता तरु गिरि नदी पसु पंछी सो नेह करि।
ब्रज-बासी जन अरु गउन सो प्रेम निबाह्यौ रूप धरि ॥२२॥

केसादिक सो वाम श्याम दक्षिन छवि पावत।
शिव बिराग सो प्रगट देवरिषि से गुन गावत ॥

ग्रंथ-रचन सों व्यास मुक्त सुक रूप प्रकासत।
वैष्णव-पथ प्रगटाइ विष्णु स्वामी प्रभु भासत॥
मुख शास्त्र कहन विरहागि कों प्रगटावन सो अगिनि सम।
मनु सकल तत्व पिंडी बन्यौ सोभित श्री बल्लभ परम॥२३॥

मनहुँ वेदगन तत्व काढ़ि यह रूप बनायो।
श्री भागवत-सुधा-समुद्र मथि कै प्रगटायो॥
पिंडभूत बैराग रूप निज प्रगट दिखावत।
ज्ञान मनहुँ घन होइ सिमिटि कै सोभा पावत॥
यह मनहुँ प्रेम की पूतरी इक-रस साँचे से ढरी।
प्रेमीजन- नयनन सुख महा प्रगटावत निज बपु धरी॥२४॥

तिलँग बंस द्विजराज उदित पावन बसुधा-तल।
भारद्वाज सुगोत्र यजुर शाखा तैतिरि वर॥
यज्ञनरायन-कुलमनि लक्ष्मन भट्ट-तनूभव।
इल्लमगारू-गर्भरत्न सम श्री लक्ष्मी धव॥
श्री गोपिनाथ-बिट्ठल-पिता भाष्यादिक बहु ग्रंथ कर।
श्री विष्णुस्वामि-पथ-उद्धरन जै जै बल्लभ रूप वर॥२५॥

इमि श्री बल्लभ रूप प्रात जो सुमिरन करई।
लहै प्रेम-रस-दान जुगल पद मैं अनुसरई॥
द्वादस द्वादस अर्ध-पदी प्रातहि उठि गावै।
दुबिध बासना छाँड़ि केलि-रस को फल पावै॥
यह प्राननाथ की प्रथम ही सुमिरन सब मंगल-मई।
बानी पुनीत 'हरिचंद' की प्रेमिन को मंगल भई॥२६॥
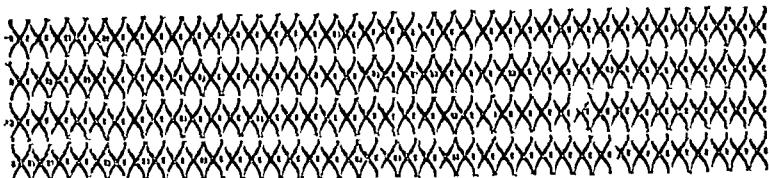
दैन्य-प्रलाप*

(सं० १९३०)

जग मे काको कीजै तोस ।
जासो तनकहु विरति कीजिए सोई धारत रोस ॥
इंद्रिय सव अपुनी दिसि खींचत चाहि चाहि निज भोग ।
मन अलभ्य वस्तुनहू भोगत मानत तनिक न सोग ॥
कहति प्रतिष्टा हमहि वढ़ाओ चहति कामना काम ।
ईर्षा कहति तुमहि इक जीअहु करि औरन वे-काम ॥
जागत सपन काय वाचा सो मन सो भोगत धाय ।
घिसि गईं इन्द्री प्रान सिथिल भे तौहू नाहि अघाय ॥
जौन मिलत कै तन वल नहि तौ दूरहि सो ललचाय ।
जिमि सतृष्ण ह्वै लखत मिठाइन स्वान लार टपकाय ॥
सव सो थकि कै करत स्वर्ग के अमृतादिक मै चाह ।
धिक धिक धिक 'हरिचंद' सतत धिक यह जग काम अथाह ॥ १ ॥

पूरवी

तन-पौरुष सव थाका मन नहि थाका हो माधो ।
केस पके तन पक्यौ रोग सो मनुआँ तवहु न पाका ॥

---

* भक्तिसूत्र वैजयंती के अंत में यह कविता दी गई थी, जो सं० १९३० में प्रकाशित हुई थी ।

अर्जुन-भीम-सरिस चाहत यह करन विषय-रन साका ।
बीती रैन तबौ मतवारा घोर नींद मैं छाका ॥
हारि गयो पै झूठहि गाड़े अबहूँ विजय-पताका ।
'हरीचंद' तुम बिनु को रोकै ऐसे ठग को नाका ॥ २ ॥

नर-तन सब औगुन की खान ।
सहज कुटिल-गति जीवहु तामै यामैं श्रुति परमान ॥
स्वारथ-पन आग्रह मलीनता लोभ काम अरु क्रोध ।
कामादिक सब नित्य धरम है तन मन के निरबोध ॥
तापैं सहधरमिन सो पूर्यौ भो संसार सहाय ।
अन्ध आसरे चल्यौ अन्ध के कहो कहा लौं जाय ॥
करि करुना करुनानिधि केसव जो पै पकरौ हाथ ।
तौ सब विधि 'हरिचंद' बचै न-तु डूबत होइ अनाथ ॥ ३ ॥

नर-तन कहो सुद्धता कैसी ।
कितनहु धोओ पोछौ बाहर भीतर सब छिन पैसी ॥
कारन जाको मूत रही मल ही मैं लिपटि अनैसी ।
ताकों जल सो सुद्ध करत तिनकी ऐसी की तैसी ॥
दैहिक करमन सो न बनै कछु ता गति सहज मलै सी ।
'हरीचंद' हरि-नाम-भजन बिनु सब वैसी की वैसी ॥ ४ ॥

बिरद सब कहाँ भुलाए नाथ ।
पावन पतित दीन - जन रच्छन जो गाई श्रुति गाथ ॥
जानहु सब कुछ अंतरजामी धाइ गहौ अब हाथ ।
'हरीचंद' मेटहु निज जन की विधिहु लिखी जो माथ ॥ ५ ॥

तुमसों कहा छिपी करुनानिधि जानहु सब अंतर-गति ।
सहज मलिन या देह जीव की सहजहि नीच-गामिनी जो मति॥

तन मन सपनहुँ सो लोभी की दीन विपत - गन मे रति ।
निरलज जितने होत पराजित तितनो ही लपटति अति ।।
तापैं जौ तुमहूँ बिसराओ तजि निज सहज बिरद-तति ।
तौ 'हरिचंद' बचै किमि बोलहु अहो दीन-जन की पति ।।

देखहु निज करनी की ओर ।
लखहु न करनी जीवन की कछु एहो नंदकिसोर ।।
अपनाए की लाज करहु प्रभु लखहु न जन के दोस ।
निज बाने को बिरद निवाहो तजहु हीन पर रोस ।।
दीनानाथ दयाल जगतपति पतित - उधारन नाथ ।
सब बिधि हीन अधम 'हरिचंदहि' देहु आपुनो हाथ ।। ७ ।।

करहु उन बातन की प्रभु याद ।
जो अरजुन सो भारत-रन मे कही थापि मरजाद ।।
कैसहु होय दुराचारी पै सेवै मोहि अनन्य ।
ताही कहँ तुम साधु गुनहु या जग मैं सोई धन्य ।।
सीघ्र धरम मति शांति पाइहै जो राखत मम आस ।
अरजुन मम परतिज्ञा जानहु नहि मम भक्त-बिनास ।।
छाँड़ि धरम सब लोक वेद के मम सरनहि इक आउ ।
सब पापन सो तोहि छुड़ैहौ कछु न सोच जिय लाउ ।।
कही बिभीषन सरन समय मैं सोऊ सुमिरहु गाथ ।
लछिमन हनूमान आदिक सब याके साखी नाथ ।।
हम तुमरे है कहै एकहू वार सरन जो आइ ।
ताहि जगत सो अभय करत हम सबहि भाँति अपनाइ ।।
यहू कह्यौ मम जनहि वासना उपजै और न हीय ।
जिमि कूटे चुरए धानन मैं उपजै नाही बीय ।।

यह कह्यौ तुम मो कहँ प्यारे निह-किंचन अरु दीन।
यह कह्यौ तुम हमहि जीव के प्रेरक अंतर-लीन ॥
कहँ लौं कहौं सुनौ इतनी अब सत्यसंध महराज।
'हरीचंद' की बार भुलाई क्यौ वे बातैं आज ॥ ८ ॥

तिनकों रोग सोग नहि व्यापै जे हरि-चरन उपासी।
सपनहु मलिन न होइ सदा जे कलप-तरोवर-वासी ॥
हरि के प्रबल प्रताप सामुहे जगत दीनता नासी।
'हरीचंद' निरभय बिहरहि नित कृष्ण-दास अरु दासी ॥९॥

उरहना*

(सं० १९३०)

प्राननाथ तुम बिनु को और मान राखै।
जिअ सो वा मुख सो को प्यारी कहि भाखै॥
प्रति छन को नयो नयो अनुभव करवावै।
कौन जो खिझाइ कै रोवाइ कै हँसावै॥
संशय सागर महान डूबत लखि धाई।
कौन जो अवलंब देहि तुम बिनु ब्रजराई॥
सुत पितु भव मोह कौन मेटै चित लेई।
मूरख कहवाइ जगत पंडित-गति देई॥
लोक बेद झगरन के जाल मै बँधायो।
कौने तुम बिनु करि निज अनुभव सुरझायो॥
भव अथाह बहे जात लखि कै चित माही।
कौने करि मेड़ धरी निज बिसाल बाही॥
झूठे जग कहत मर्‌यो चित सँदेह आयो।
'हरीचंद' कौन प्रगटि साँचो कहवायो॥ १॥

अघी को पीठ ही चहिए।
पाप बसत तुव पीठ माँहि यह बेदनहू कहिए॥

---

* हरिश्चंद्र मेगजीन के १५ अक्तू० सन् १८७३ ई० के अंक में छपा था। इसके दो तीन पद राग-संग्रह तथा प्रेम-प्रलाप मे भी संगृहीत हो गए है।

वृद्ध होय निन्यो बेदहि तब सों मुख नहि लहिए ।
'हरीचंद' पिय मुख न दिखाओ रूठे ही रहिए ।। २ ।।

अहो मोहि मोहन बहुत खिलायो ।
अब लौं हाय किर्यो नाहीं बध बातन ही बिलमायो ।।
जानि परी अपराध हमारो तोहि सुमिरत ह्वै आयो ।
ताही सों रूठि रूठि कै अब लौं प्रान न पीय नसायो ।।
हमहूँ जानत मो अघ आगे लघु सम सब दुख आयो ।
'हरीचंद' पै बिरह तुम्हारो जात न तनिक सहायो ।। ३ ।।

अहो हरि निरदय चरित तुम्हारे ।
तनिक न द्रवत हृदय कुलिसोपम लखि निज भक्त दुखारे ।।
दयानिधान कृपानिधि करुना-सागर दीन पियारे ।
यह सब नाम झूठही बेदन बकि बकि बृथा पुकारे ।।
गोपीनाथ कहाइ न लाजत निरलज खरे सुधारे ।
'हरीचंद' तुम्हरे कहवाये मरियत लाजन मारे ।। ४ ।।

सुनौ हम चाकर दीनानाथ के ।
कृपा-निधान भक्त-वत्सल के पोपित पालित हाथ के ।।
पिया न पूछत तऊ सुहागिनि बनि सेंदुर दै माथ के ।
दीन दया लखि हँसौ न कोऊ सुनौ सबै रे साथ के ।।
वा घर के सेवक ऐसे ही जीवत स्वासा भाथ के ।
'हरीचंद' निरलज ह्वै गावत निरलज हरि-गुन-गाथ के ।।५।।

साहब रावरे ये आवैं ।
जिन्हे देखि जग के करुना सो नैनन नीर बहावैं ।।
कोऊ हँसै बिपति पै कोऊ दसा बिलोकि लजावैं ।
कोऊ घृणा करै कोउ मूरख कहि कै हाथ बतावैं ।।

देखि लेहु इक बार इनहि तुम नैना निरखि सिरावैं ।
'हरीचंद' आखिर तो तुमरे कोऊ भाँति कहावैं ॥६॥

वीरता याही मैं अटकी ।
हम अबलन पै जोर दिखावत यहै बानि टटकी ॥
याही हित नित कसे रहत कटि कसनि पीत पटुकी ।
'हरीचंद' बलिहार सूरता पिय नागर-नट की ॥७॥

लाल क्यौं चतुर सुजान कहावत ।
करि अनीति निरलज से डोलत क्यौं नहि बदन छिपावत ॥
चतुराई सब धूर मिलाई तौहू गरब बढ़ावत ।
'हरीचद' अबलन को बधि कै कैसे अकरि दिखावत ॥८॥

बेनी हमरे बाँट परी ।
धन धन भाग लाइहै नैनन रहिहै हृदय धरी ॥
लखि मुख चूमि अधर भुज दै भुज करौ सबै मिलि राज ।
हमरे तौ बेनी को दरसन सिद्ध करै सब काज ॥
क्यौं कविगन नागिनि की उपमा मेरी प्यारिहि देत ।
हमको तो इक यहै जिआवत राखत हम सो हेत ॥
क्यौं नहि सुख मानै थोड़े ही जो बिधि बिरच्यौ भाग ।
राज देखि दूजेन को क्यौं हम करैं अकारथ लाग ॥
बेनी हमरी हमरो जीवन बेनी ही के हाथ ।
जब तुम मुख फेरत तब बेनी रहत हमारे साथ ॥
भलहिं रूप-सागर तुम्हरो सो खारो मेरे जान ।
'हरीचंद' मोहि कल्प-तरोवर कामद बेनी-न्हान ॥९॥

तन्मय-लीला*

(सं० १९३०)

राधे-स्याम-प्रेम-रस भीनी ।
नहि मानत कछु गुरुजन की भय लोक-लाज तजि दीनो ॥
मगन रहत हरि-रूप-ध्यान मे जल-पथ की गति लीनी ।
'हरीचंद' बलि प्रेम सराहत तन की सुधि नहि कीनी ॥१॥

राधे भई आपु घनश्याम ।
आपुन को गोविद कहत है छाँड़ि राधिका नाम ॥
वैसेइ झुकि झुकि कै कुंजन मैं कबहुँक बेनु बजावै ।
कबहुँ आपनो नाम लेइ कै राधा राधा गावै ॥
कबहुँ मौन गहि रहत ध्यान करि मूँदि रहत दोउ नैन ।
'हरीचंद' मोहन बिनु ब्याकुल नेकु नहीं चित चैन ॥२॥

प्यारी अपुनो ध्यान बिसाऱ्यौ ।
श्रीराधे श्रीराधे कहि कै कुंजन जाइ पुकाऱ्यौ ॥
कबहुँ कहत बृषभानु-नंदिनी मान न इतनो कीजै ।
प्रान-पियारी सरन आपुके कह्यो मानि मेरो लीजै ॥

---

* हरिश्चंद्र मैगजीन की जनवरी सन् १८७४ ई० की संख्या मे प्रकाशित ।

कबहुँ कहत हे सुबल सिदामा तोक कृष्ण मिलि आवो ।
पनघट चलि रोको ब्रजनारिन दधि को दान चुकावो ।।
कबहुँ कहत मेरो सुरँग खिलौना राधे लियो चुराई ।
कबहुँ कहत मैया यह तोको छोटी दुलहिन भाई ।।
कबहुँ कहत हम सात दिवस गोवरधन कर पै धाखौ ।
अघ बक धेनुक सकट पूतना इनको हमहि सँहाखौ ।।
कबहुँ कहत प्यारी जमुना-तट कुंजन करौ बिहार ।
'हरीचंद' भइ स्याम-रूप सो तन की दसा बिसार ।।३।।

सखी सब राधा के गृह आई ।
प्रेम-मगन तिन ताकहँ देखी जाते अति पछिताई ।।
दोऊ नैन मूँदि कै बैठी नेकहु नाहिन बोलै ।
राधे राधे कहि कै हारी तबहुँ न घूँघट खोलै ।।
बीजन करि बहु भाँति जगायो लै लै वाकौ नाम ।
सुनत नहीं बानी कछु इनकी उर बैठे घन-श्याम ।।
जब गोपाल को नाम लियो तब बोलि उठी अकुलाई ।
'हरीचंद' सखियन आगे लखि कछुक गई सकुचाई ।।४।।

सखिन सो पूछत कित है प्यारी ।
ललिता तू मोहि आनि मिलावै हौ तेरी बलिहारी ।।
दैहौं अपुनो पीत पिछौरा बंसी रतन-जराई ।
'हरीचंद' इमि कहत राधिका ध्यान माँह फिर आई ।।५।।

दसा लखि चकित भईं ब्रज-नारी ।
राधे को कह भयो सखी री अपनी दसा बिसारी ।।
राधा नाम लिये नहि बोलत कृष्ण नाम तें बोलै ।
वैसे ही सब भाव जतावति हँसि हँसि घूँघट खोलै ।।

धन धन प्रेम धन्य श्रीराधा धन श्री नंद-कुमार।
'हरीचंद' हरि के मिलिबे को करो कछू उपचार ॥६॥

तहाँ तब आइ गए घन-श्याम।
मोर-मुकुट कटि पीत पिछौरी गरे गुंज की दाम ॥
दसा देखि प्यारी राधा की अति आनँद जिय मान्यो।
सखियनहूँ सों प्रेम अवस्था को सब हाल बखान्यो ॥
प्रेम-मगन बोले नँद-नंदन सुनि प्यारे मैं आई।
जौ तुम राधा नाम टेरिकै बेनु बजाइ बोलाई ॥
सुनतहि नैन खोलिकै देख्यो स्याम मनोहर ठाढ़े।
कछुक प्रेम कछु सकुच मानिकै प्रेम-बारि दृग बाढ़े ॥
दौरि कंठ मोहन लपटाई बहुत बड़ाई कीनी।
कर्यो बोध प्यारी राधा को हृदय लाइ पुनि लीनी ॥
कर सों कर दै चले कुंज दोउ सखियन अति सुख पायो।
रसना करत पवित्र आपुनी 'हरीचंद' जस गायो ॥७॥

दान-लीला

(सं० १९३०)

पिअ प्यारे चतुर सुजान मोहन जान दै।
प्रेमिन के जीवन-प्रान मोहन जान दै॥
प्यारे गिरिधरिआँ एकांत मै राखी हैं सब घेर।
ऐसी तुम्है न चाहिए हो छाँड़ौ होत अबेर॥
कैसे छाँड़ैं ग्वालिनी हो लागत मेरो दान।
ताहि दिये बिन जाति हौ तुम नागरि चतुर सुजान॥
जो चाहौ सो लाडिले हँसि हँसि गो-रस लेहु।
सखन संग भोजन करौ औ मोहि जान तुम देहु॥
थोरे ही निपटी भले दै गो-रस को दान।
परम चतुर तुम नागरी लियो हम को मूरख जान॥
तुमको मूरख को कहै हो यह का कहत मुरारि।
सकल गुनन की खान हो कहा जानै ग्वारि गँवारि॥
जदपि सकल गुन-खानि है हो नागर नाम कहात।
पै तुम भौंह-मरोर सो मेरे भूलि सकल गुन जात॥
तुम तो कछु भूलै नही हो स्वारथ ही के मीत।
भूली सब ब्रज-गोपिका करिकै तुमसों प्रेम-प्रतीत॥
क्यो भूलीं सब गोपिका हो करिकै हमसो प्रीति।

यह हमकों समुझाइये क्यौं भाखत उलटी रीति ॥
हम उलटी नहि भाखही हो समुझौ तुम चित चाह ।
हम दीनन के प्रेम की हो कहा तुम्हैं परवाह ॥
ऐसी बात न बोलिए झूठेहि दोस लगाय ।
बँधे तुम्हारे प्रेम मे हम सो कैसे छुटि जाय ॥
प्रेम बँधे जौ लाडिले हो तौ यह कैसो हेत ।
हम व्याकुल तुम बिन रहै नहिं भूलेहू सुधि लेत ॥
गुरु-जन की नित त्रास सों हम मिलत तुमहिं नहि धाइ ।
जिय सों बिलग न मानियो हम मधुकर तुव बन-राइ ॥
जा दिन बंसी बजाइकै हो लीनी हमै बुलाय ।
ता दिन गुरुजन-भीति हो कित दीनी सबै बहाय ॥
गुप्त प्रीति आछी लगै हो प्रगट भए रस जाय ।
जामैं या ब्रज को कोऊ नहि देइ कलंक लगाय ॥
प्रगट भई तिहु ँ लोक मैं हौ गोपी-मोहन - प्रीति ।
सब जग मै कुलटा भई तापै तुमको नाहि प्रतीति ॥
गुरु-जन घर मै खीझहीं हो देत अनेकन गारि ।
बाहर के देखत कहैं यह चली कलंकिन नारि ॥
करन देहु जग को हँसी हो चुप ह्वैहैं थकि जाइ ।
त्रिन सो सब जग छाँड़ि कै हो मिलैं निसान बजाइ ॥
प्यारे तुमरे ही लिए सब जग को बेवहार ।
तुम विरुद्ध सब छाँड़िए हो मात पिता परिवार ॥
पै कठिनाई है यहै अरु होत यहै जिय साल ।
तुम तो कछु मानौ नही मेरे बे-परवाही लाल ॥
सब सो तो पहिले करो हो हँसि हँसि कै तुम चाह ।
पै लालन सीखे नहीं तुम प्रेमी प्रेम-निवाह ॥
तुम्है कहा कोउ की परी भलेइ देइ कोउ प्रान ।

तापैं उलटो आइकै हो माँगत हम सो दान ।।
लोक-लाज कुल धर्महू तन मन धन वुधि प्रान ।
सव तो तुम कौ दे चुकी अव माँगत काको दान ।।
वहुत भई पिय लाडिले अव क्यौहू सहि नहिं जाय ।
जानि दासिका आपुनी गहि लीजै भुजा वढ़ाय ।।
परम दीनता सो भरे सुनि प्यारी के बैन ।
पुलकित अँग गद्गद भयो, हो उमगि चले दोउ नैन ।।
धाइ चूमि मुख भुजन सो भरि लीनी कंठ लगाय ।
'हरीचंद' पावन भयो यह अनुपम लीला गाय ।।

रानी छद्म-लीला *

(सं० १९३१)

नौमि राधिका-पद जुगल तिन पद को बल पाइ ।
उलटि छद्म-लीला कहत 'हरीचंद' कछु गाइ ॥

करे कान्ह जिमि छदम सुहाए ।
श्री प्यारी के मन अति भाए ॥
तिमि प्यारीहू जीअ बिचार्यौ ।
पियहि ठगो यह चित निरधार्यौ ॥

निरधारि जिय करि छद्म-लीला सखिन कों आज्ञा दई ।
बनि कछुक ठगिए आजु लालहि रीति यह कीजे नई ॥
नव भेस रानी को मनोहर सबन सँग मिलि कीजिए ।
अति चतुर मोहन तिनहुँ को चलि आजु धोखा दीजिए ॥

यह जिय सोच बिचारि कै गई एक बन माँहि ।
वृंदा को आज्ञा दई सजौ सबै चित चाहि ॥

वृन्दा तब तहँ आज्ञा पाई ।
सब सामग्री सजी सुहाई ॥
नव खंडन के महल बनाए ।
राज-साज तहँ सजे सुहाए ॥

---

* हरिश्चन्द्र मैगजीन (१५ फरवरी सन् १८७४ ई०) में प्रकाशित ।

सजि राज के सब साज बिच मै सुभग सिहासन धर्‍यो।
धरि क्रीट बैठी मध्य राधा भेस रानी को कर्‍यौ ॥
बहु छड़ी मुरछल चॅवर सूरजमुखी पंखा छत्र लै।
भई सखी ठाढ़ी अदब सो चहुॅ ओर सब मिलि नजर दै ॥

परवानो जारी कियो बन - देविन के नाम।
अबहि पकरि कै बिन सखन हाजिर लाओ श्याम ॥

सुनि चहुँ दिसि सखियाॅ धाई।
मिलि वृन्दावन मै आई ॥
तहॅ सखन संग हरि जाई।
रहे आपु चरावत गाई ॥

जहॅ आप चारत गाय हे तहॅ सखि सबै मिलि कै गई।
करि साम दाम सुदंड भेदहि बात यह बरनी नई ॥
जदु-बंश की रानी नई इक कुमुद-बन मे है रही।
जागीर मै तिन कंस नृप सो कुमुद बन की महि लही ॥

तिन हम को आज्ञा दई करि के टेढ़ो डीठ।
कौन श्याम ऊधम करै मेरे बन मे ढीठ ॥

बिन मेरो हुकुम बतायो।
उन क्यो बन गाय चरायो ॥
फल-फूल विपिन के जेते।
उन तोरि लिए क्यो तेते ॥

उन तोरि बन के फूल फल सब घास गउवन को दई।
तेहि पकरि हाजिर करौ यह हम सबन को आज्ञा भई ॥

यह सुनि हुकुम बिन सखा गन चलि तहाँ उत्तर कीजिए।
जो हुकुम रानी देहिं ताकों अदब सों सुनि लीजिए॥

सुनि आज्ञा जिय संक धरि कछु तौ भय हिय लीन।
कछु रानी को नाम सुनि लालचहू मन कीन॥

तब संग सखिन के आए।
मुजरा करि नाम सुनाए॥
पग परि बोली सब आली।
यह हाजिर है बन-माली॥

भयो हाजिर द्वार पै करि कृपा मुजरा लीजिए।
जो हुकुम याके होइ लायक महारानी कीजिए॥
लखि भूमि मे तन प्रान-प्रिय को कछु दया जिय मैं लई।
कछु जानि आयो नारि के ढिग कोप निज मन मे भई॥

उत मोहन श्री राधिका सी रानी को देखि।
कछु जिय मैं संकित भए भौंह तनेनी देखि॥

तब बोले मोहन प्यारे।
कहिए केहि हेत हँकारे॥
हम तो कछु दोष न कीनो।
तो क्यों मोहिं दूषन दीनो॥

क्यो दियो दूषन मोहि सुनि कै राधिका बोलत भई।
कछु क्रोध मैं निज छद्म को नहिं ध्यान करि जिय मे लई॥
जो झूठ बोलै नितहि तासों और अपराधी नहीं।
तेहि दंड देनो उचित राजहि नीति यह जग की कही॥

सुनि रूखे तिय के वचन भरे श्याम जुग नैन ।
हाथ जोड़ि गद्‌गद गिरा बोले मोहन बैन ।।

हम झूठ कही कब बानी ।
मोहि कहि दीजै महरानी ।।
सुनि वचन राधिका बोली ।
जिय गॉठि आपनी खोली ।।

जिय गॉठि आपनी खोलि राधा बात प्रीतम सों कही ।
तुम कहत हम श्री राधिका तजि और तिय देखैं नही ।।
तो आजु सुनि क्यो नाम रानी को यहॉ आए कहौ ।
हौ परम कपटी श्याम तुम अब दरस नहिं मेरो लहौ ।।

यह कहि कै मुख फेरि कै राधा रही रिसाय ।
तब व्याकुल ह्वै धाइ पिय परे तिया के पाय ।।

भरि नैन अरज यह कीनी ।
कर जोरि विनय-विधि लीनी ।।
नित को अपराधी बारी ।
तजि चरन जाय कित प्यारी ।।

कित जाहि तजि कै चरन यह दृग वारि भरि मोहन कह्यौ ।
सुनि दीन बोलन प्रान-पति की धीर नहि कोउ को रह्यौ ।।
हॅसि मिली प्यारी मान तजि निज रूप लै सॅग श्याम के ।
मिलि करी क्रीड़ा विविध विधि नव कुंज सुख रस-धाम के ।।

एहि विधि पीतम सो मिली नव बन छद्‌म बनाइ ।
'हरीचंद' पावन भयो यह रस-लीला गाइ ।।
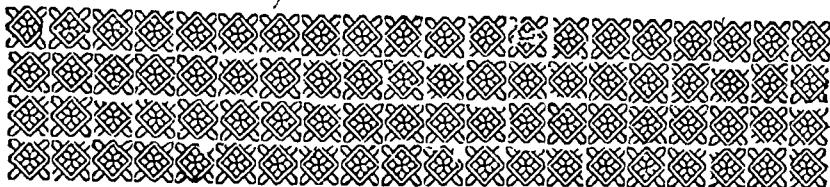
संस्कृत लावनी*

(सं० १९३१)

कुंजं कुंजं सखि सत्वरं।
चल चल दयितः प्रतीक्षते त्वां तनोति बहु आदरं॥
सर्वा अपि संगताः।
नो दृष्ट्वा त्वां तासु प्रियसखिहरिणाऽहं प्रेषिता॥
मानं त्यज वल्लभे।
नास्ति श्री हरिसदृशो दयितो वच्मि इदं ते शुभे॥
गतिर्भिन्ना।
परिधेहि निचोलं लघु।
जायते बिलम्बो बहु।
सुंदरि त्वरां त्वं कुरु॥
श्री हरि मानसे वृणु।
चल चल शीघ्रं नोचेत्सर्वं निष्यन्तिहि सुन्दरं।
अन्यद्व्रज मन्दिरं चल चल दयितः॥
शृणु वेणुनादमागतं।
त्वदर्थमेव श्रीहरिरेषः समानयत्स्त्रीशतं॥
त्वय्येव हरि सद्रतं।
तवैतार्थमिह प्रमदाशतकं प्रियेण विनियोजितं॥

---

* हरिश्चंद्र मैगज़ीन में प्रकाशित।

श्रृण्वन्यमृतां संरुतं ।
आकरायन्ति सर्वे समाप्यहरिणोमधुरं मतं ॥
विभिन्न गति' ।
दिशति ते प्रियतमसंदेशं ॥
गृहीत्वा मदन. पिकवेश ।
जनयति मनसि स्वावेशं ॥
समुत्साहयतेरतिलेशं ।
न कुरु विलम्बं क्षणमपि मत्वा दुर्लभमौल्याकारं ॥
श्रृणु वचनं मे हितभरं ।
चल चल दयितः ॥ २ ॥
सूर्य्योप्यस्तंगत. ।
गोपिगोपयितुमभिसरणं तव अंधकारइहतत. ॥
दृश्यते पश्यनोमुखं ।
कस्यापिहि जीवस्य प्रणयिन्यभिसरणैतत्सुखं ॥
व्रज व्रजेन्द्र कुलनन्दनं ।
करोतियत्स्मृनिरपि सखि सकलव्याधेः सुनिकन्दनं ॥
गति. ॥
चन्द्रमुखि चन्द्रंरवे समुदितं ॥
करैस्त्वामालम्बितुमुद्यतं ।
आलि अवलोक्य तारावृतं ॥
भाति विष्टयं चन्द्रिकायुतं ।
चकोरायितश्चन्द्रस्त्यत्स्वा स्थलमपि रत्नाकरं ॥
मुखं ते द्रष्टुं सखिसुन्दरं ।
चल चल० ॥ ३ ॥
परित्यज चंचलमंजीरं ।
अवगुण्ठ्य चन्द्राननमिह सखि धेहि नील चीरं ॥

रमय रसिकेश्वरमाभीरं ।
युवतीशतसंग्रामसुरतरतमचलमेकवीरं ॥
भयं त्यज हृदि धारय धीरं ।
शोभयस्वमुखकान्तिविराजितरवितनया तीरं ॥
गतिः ॥
मुञ्चमानं मानय वचनं ॥
विलम्बं मा कुरु कुरु गमनं ।
प्रियांके प्रिये रचय शयनं ॥
सुतनुतनु सुखमयमालिंजनं ।
दासौ दामोदर हरिचन्दौ प्रार्थयतस्तेवरं ॥
वरय राधे त्वं राधावरं ।
चल चल दयितः प्रतीक्षते त्वां तनोति बहु आदरं ॥ ४ ॥

वसंत होली*

(सं० १९३१)

जोर भयो तन काम को आयो प्रगट वसंत ॥
वाढ़्यो तन मै अति विरह भो सव सुख को अंत ॥ १ ॥
चैन मिटायो नारि को मैन सैन निज साज ।
याद परी सुख दैन की रैन कठिन भई आज ॥ २ ॥
परम सुहावन से भए सवै विरिछ वन वाग ।
तृविध पवन लहरत चलत दहकावत उर आग ॥ ३ ॥
कोइल अरु पपिहा गगन रटि रटि खायो प्रान ।
सोवन निसि नहि देत है तलपत होत विहान ॥ ४ ॥
है न सरन तृभुवन कहूँ कहु विरहिन कित जाय ।
साथी दुख को जगत मै कोऊ नाहि लखाय ॥ ५ ॥
रहे पथिक तुम कित विलम वेग आइ सुख देहु ।
हम तुम विनु व्याकुल भई धाइ भुजन भरि लेहु ॥ ६ ॥
मारत मैन मरोरि कै दाहत है रितुराज ।
रहि न सकत तुम विन मिलौ कित गहरत विन काज ॥ ७ ॥

---

* इसके सामने एक स्लिप पर छपा है—
पहिलो घरन न वांचियो यह विनवत कर जोर ।
जो पढ़िके मानौ वुरो तौ न दोस कछु मोर ॥
हरिश्चंद्र मैगजीन में प्रकाशित ।

गमन कियो मोहि छोड़ि कै प्रान-पियारे हाय।
दरकत छतिया नाह बिन कीजै कौन उपाय ॥ ८ ॥
हा पिय प्यारे प्रानपति प्राननाथ पिय हाय।
मूरति मोहन मैन के दूर बसे कित जाय ॥ ९ ॥
रहत सदा रोवत परी फिर फिर लेत उसास।
खरी जरी बिनु नाथ के मरी दरस के प्यास ॥१०॥
चूमि चूमि धीरज धरत तुव भूषन अरु चित्र।
तिनही को गर लाइकै सोइ रहत निज मित्र ॥११॥
यार तुम्हारे बिनु कुसुम भए विप-बुझे बान।
चौदिसि टेसू फूलि कै दाहत है मम प्रान ॥१२॥
परी सेज सफरी सरिस करवट लै पछतात।
टप टप टपकत नैन जल मुरि मुरि पछरा खात ॥१३॥
निसि कारी साँपिन भई डसत उलटि फिरि जात।
पटकि पटकि पाटी करन रोइ रोइ अकुलात ॥१४॥
टरै न छाती सो दुसह दुख नहिं आयो कंत।
गमन कियो केहि देस को बीती हाय 'वसंत ॥१५॥
वारों तन मन आपुनो दुहुँ कर लेहुँ बलाय।
रति-रंजन 'हरिचंद' पिय जो मोहिं देहु मिलाय ॥१६॥
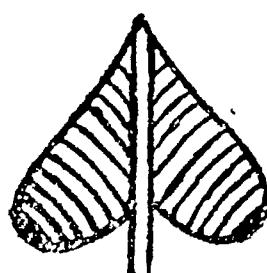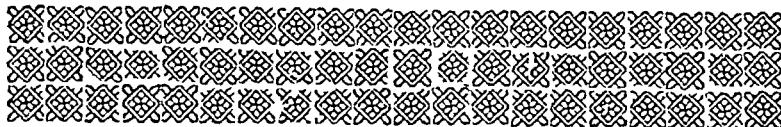
स्फुट समस्या*

(सं० १९३१)

हित दीन सो जे करै धन्य तेई यह बात हिए मैं बिचारिये जू।
सुनिए न कही कछु औरन की अपनी विरुदालि सम्हारिये जू॥
'हरिचंद' जू आपकी होय चुकी एहिको जिय मैं निरधारिये जू।
हम दीन औ हीन जो हैं तो कहा अपुनो दिसि आपु निहारिये जू॥१॥

विधि मैं विधि सो जब व्याह रच्यो नव कुंजन मंगल चाँवर भे।
वृषभानु - किसोरी भई दुलही दिन दूलह सुंदर साँवर भे॥
'हरिचंद' महान अनंद बढ़यौ दोउ मोद भरे जब भाँवर भे।
तिनसो जग मैं कछु नाहि बनी जो न ऐसी बनी पै निछावर भे॥२॥

आँचर खोले लट छिटकाए तन की सुधि नहि ल्यावति हौ।
धूर-धूसरित अंग संक कछु गुरु-जन की नहि पावति हौ॥
'हरीचंद' इत सो उत व्याकुल कबहुँ हँसत कहुँ गावति हौ।
कहा भयो है पागल सी क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥३॥

पहिले तो बिन ही समझे तुम नाहक रोस बढ़ावति हौ।
फिर अपनी करनी पै आपुहि रोइ-रोइ बिलखावति हौ॥
मान समय 'हरिचंद' झिझकि पिय अब काहे पछतावति हौ।
तब तो मुख उनसो फेर्यो अब कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥४॥

बार बार क्यो जानि-बूझि तुम याही गलियन आवति हौ।
रोकि रोकि मग भई बावरी इतसो उत क्यो धावति हौ॥

* हरिश्चन्द्र मैगजीन, १५ मई सन् १८२४ ई०, मे प्रकाशित।

त्यों 'हरिचंद' भली रुजगारिन नाहक तक्र गिरावति हौ।
दही दही सब करौ अरे क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ ॥५॥

कुंज-भवन नहि गहवर बन यह हाँ क्यौ सेज सजावति हौ।
मोहन देखि जानि आए क्यौ आदर को उठि धावति हौ ॥
देखि तमालन दौरि दौरि क्यौ अपने कंठ लगावति हौ।
पात खरक सुनि कै प्यारी क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ ॥६॥

जो तुम जोगिन बनि पी के हित अंग भभूत रमावति हौ।
सेली डारि गले नैनन में छकि कै रंग जमावति हौ ॥
त्यौं 'हरिचंद' जोगिया लैके काँधे बीन बजावति हौ ॥
तो फिर अलख अलख बोलौ क्यौ कान्ह कान्ह गोहरावति हौ ॥७॥

ती को भेख छाँड़ि कै जो तुम मोहन वनिकै आवति हौ।
मोर मुकुट सिर पीत पिछौरी तैसोइ भाव दिखावति हौ ॥
तौ 'हरिचंद' कसर इतनी क्यो बंसी और बजावति हौ।
राधे राधे रट लाओ क्यौ कान्ह कान्ह गोहरावति हौ ॥८॥

मूड़ चढ़ी व्रज चार चवाइन इनपै क्यौं हँसवावति हौ।
धीर धरौ बलि गई प्रेम क्यौ अपुनो प्रगट लखावति हौ ॥
'हरीचंद' या बड़े गोप के बंसहिं क्यौं लजवावति हौ।
सखिन सामुने व्याकुल ह्वै क्यौ कान्ह कान्ह गोहरावति हौ ॥९॥

कौन कहत हरि नाहि कुंज मे सूनो झूठ वतावति हौ।
कौन गयो मधुवन यह हरि को नाहक दोस लगावति हौ ॥
वनि 'हरिचंद' वियोगिनि सी सब वादहि विरह वढ़ावति हो।
जित देखो तित प्राननाथ क्यौ कान्ह कान्ह गोहरावति हौ ॥१०॥

श्री वन नित्य विहार थली इत जोगिन वनि क्यौं आवति हौ।
विना वान ही प्रेम आपुनो माला फेरि दिखावति हौ ॥

नाम लेइ 'हरिचंद' निठुर को नाहक प्रीति लजावति हौ।
राधे राधे कहौ सबै क्यौ कान्ह कान्ह गोहरावति हौ ॥११॥

पिय के कुंज नाहि कोउ दूजी काहे रोस वढ़ावति हौ।
बिना बात निरदोसी पिय पै भौंहै खीचि चढ़ावति हौ।
कहा दिखैहो का तुम चोरी पकरी जो ऐंड़ावति हौ॥
अपुनो ही प्रतिबिम्ब देखि क्यौ कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥१२॥

होइ स्वामिनी दूतीपन को कैसे चित्त चलावति हौ।
हाथ न ऐहै ताहि गहत क्यौ घर के द्वार मुँदावति हौ॥
प्रेम-पगी 'हरिचंद' बादही रचि रचि सेज बिछावति हौ।
अपनो ही प्रतिबिम्ब देखि क्यौ कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥१३॥

चूरी खनकनि मै बंसी को नाहक धोखा लावति हौ।
बिना बात इन मोरन पै जिय मुकुट-संक उपजावति हौ॥
जाहु जाहु 'हरिचंद' बृथा क्यौ जल मै आगि लगावति हौ।
सुनिहै लोग सबै घर के क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥१४॥

बिना बात ही अटा चढ़ी क्यौ आँचर खोले धावति हौ।
सेज साजि अनुराग उमगि क्यौ रचि रचि माल बनावति हौ॥
पावस रितु नहि जानति हौ 'हरिचंद' बृथा भ्रम पावति हौ।
पिया नही ये घन उनये क्यौ कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥१५॥

कबहूँ नारी कबहुँ पुरुष के अजगुत भाव दिखावति हौ।
कबहुँ लाज करि बदन ढकत हौ कबहूँ बेनु बजावति हौ॥
भई एक सो द्वै सजनी 'हरिचंदहि' अलख लखावति हौ।
राधे राधे कबौ कबौ तुम कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥१६॥

श्याम सलोनी मूरति अँग अँग अद्भुत छबि उपजावति हौ।
नारी होय अनारी सी क्यौं बरसाने में आवति हौ॥
जानि गई 'हरिचंद' सबै जब तब क्यौं बात छिपावति हौ।
राधे राधे कहो अहो क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥१७॥

मुँह-दिखावनी*

(सं० १९३१)

राजकुमार श्री ड्यूक आफ एडिम्बरा की नवबधू की ।

आजु अतिहि आनँद भयो बाढ़्यो परम उछाह ।
राज-दुलारी सो सुनत राजकुँवर को ब्याह ॥१॥
बसे राज-घर सुख भयो मिटे सकल दुख-दुंद ।
मेरी बहू सुलच्छिनी प्रजन दियो आनंद ॥२॥
द्वार बँधाई तोरनै मनिगन मुकता-माल ।
धाई धाई फिरत है कहत बधाई बाल ॥३॥
विद्या लक्ष्मी भूमि अरु तुव प्यारी तरवारि ।
राज-कुँवर ये सौत लखि मोही हारि निहारि ॥४॥
"देह दुलहिया के बढ़ै ज्यौ ज्यौ जोबन-जोति ।
त्यौ त्यौ लखि सौतै-बदन अतिहि मलिन दुति होति" ॥५॥
माँगी मुख-दिखरावनी दुलहिन करि अनुराग ।
सास सदन मन ललनहूँ सौतिन दियो सुहाग ॥६॥
महरानो विक्टोरिया ! धन धन तुमरो भाग ।
लख्यौ बधू मुख-चंद तुम पूख्यौ भाग सुहाग ॥७॥

---

* सन् १८७४ ई० मे क्वीन विक्टोरिया के द्वितीय पुत्र ड्यूक ऑव एडिम्बरा का विवाह रूस की राजकुमारी ग्रैंड डचेज़ मेरी के साथ हुआ था, जिसके उपलक्ष मे यह मुँह-दिखावनी लिखी गई थी। यह १५ फरवरी सन् १८७४ ई० की हरिश्चंद्र मैगजीन में प्रकाशित हुई थी। (सं०)

रूस रूस सब के हिये भय अति ही हो जौन ।
बधू ! तुम्हारे ब्याह सो उड़्यौ फूस सो तौन ॥८॥
धन यह संबत मास पख धन तिथि धन यह बार ।
धन्य घरी छन लगन जेहि ब्याहे राजकुमार ॥९॥
आए मिलि सब प्रजा-गन नजर देन तुव धाम ।
ठाढ़े सनमुख देखिए नवत जुहारत नाम ॥१०॥
कोउ मनि मानिक मुकुत कोउ कोऊ गल को हार ।
कनक रौप्य महि फूल फल लै लै करत जुहार ॥११॥
तब हम भारत की प्रजा मिलिकै सहित उछाह ।
लाए "आशा" दासिका लीजै एहि नर-नाह ॥१२॥
सेवा मैं एहि राखियो नवल बधू के नाथ ।
यहू भाग निज मानिकै छनक न तजिहै साथ ॥१३॥
रूस मिले सो रेल के आगम-गमन-प्रचार ।
धन जन बल व्यवहारने छोड़ो यह सुकुमार ॥१४॥
तासों तुम्हरे कर-कमल सौंपत एहि नर-नाह ।
जब लौ जीवै कीजियौ तब लौ कुँवर ! निबाह ॥१५॥
यह पाली सब प्रजन अति करि बहु लाह उमाह ।
अति सुकुमारी लाड़िली सौंपत तोहि नर-नाह ॥१६॥
यह बाहर कहुँ नहि भई सही न गरमी सीत ।
आदर दै कै राखियो करियो नित चित प्रीत ॥१७॥
जौ यासौ जिय नहि रमै वा कछु जिय अकुलाय ।
सौति बधू वा एहि लखै तौ हम कहत उपाय ॥१८॥
जब हम सब मिलि एक-मत ह्वै तोहि करहि प्रनाम ।
फेरि दीजियो तब हमै दै कछु और इनाम ॥१९॥
जब लौ धरनी सेस-सिर जब लौ सूरज-चंद ।
तब लौं जननी-सह जियो राजकुँवर सानंद ॥२०॥

उर्दू का स्यापा*

(सं० १९३१)

अलीगढ़ इंस्टिट्यूट गजट और बनारस अखबार के देखने से ज्ञात हुआ कि बीबी उर्दू मारी गई और परम अहिंसानिष्ठ होकर भी राजा शिवप्रसाद ने यह हिंसा की—हाय हाय ! बड़ा अंधेर हुआ मानो बीबी उर्दू अपने पति के साथ सती हो गई। यद्यपि हम देखते हैं कि अभी साढ़े तीन हाथ की ऊँटनी सी बीबी उर्दू पागुर करती जीती है, पर हमको उर्दू अखबारों की बात का पूरा विश्वास है। हमारी तो वही कहावत है—"एक मियाँ साहेब परदेस मे सरिश्तेदारी पर नौकर थे। कुछ दिन पीछे घर का एक नौकर आया और कहा कि मियाँ साहब, आपकी जोरू रॉड़ हो गई। मियाँ साहब ने सुनते ही सिर पीटा, रोए गाए, बिछौने से अलग बैठे, सोग माना, लोग भी मातम-पुरसी को आए। उनमे उनके चार पॉच मित्रो ने पूछा कि मियाँ साहब आप बुद्धिमान होके ऐसी बात मुँह से निकालते है, भला आपके जीते आपकी जोरू कैसे रॉड़ होगी? मियाँ साहब ने उत्तर दिया—"भाई बात तो सच है, खुदा ने हमे भी अकिल दी है, मै भी समझता हूँ कि मेरे जीते मेरी जोरू कैसे रॉड होगी। पर नौकर पुराना है, झूठ कभी न बोलेगा।" जो हो "बहर हाल हमै उर्दू का गम वाजिब है" तो हम भी यह स्यापे का प्रकर्ण यहाँ सुनाते है।

* हरिश्चंद्र चंद्रिका जून सन् १८७४ ई० में प्रकाशित। सं०

हमारे पाठक लोगों को रुलाई न आवे तो हँसने की भी उन्हें सौगन्द है, क्योंकि हाँसा-तमासा नही बीबी उर्दू तीन दिन की पट्ठी अभी जवान कट्ठी मरी हैं।

अरबी, फारसी, पशतो, पंजाबी इत्यादि कई भाषा खड़ी होकर पीटती हैं

है है उर्दू हाय हाय। कहाँ सिधारी हाय हाय ॥
मेरी प्यारी हाय हाय। मुंशी मुल्ला हाय हाय ॥
बल्ला बिल्ला हाय हाय। रोये पीटैं हाय हाय ॥
टाँग घसीटैं हाय हाय। सब छिन सोचैं हाय हाय ॥
डाढ़ी नोचैं हाय हाय। दुनिया उलटी हाय हाय ॥
रोजी बिलटी हाय हाय। सब मुखतारी हाय हाय ॥
किसने मारी हाय हाय। खबर-नवीसी हाय हाय ॥
दाँता-पीसी हाय हाय। एडिटर-पोशी हाय हाय ॥
बात-फरोशी हाय हाय। वह लस्सानी हाय हाय ॥
चरब-जुबानी हाय हाय। शोख-बयानी हाय हाय ॥
फिर नहि आनी हाय हाय ॥
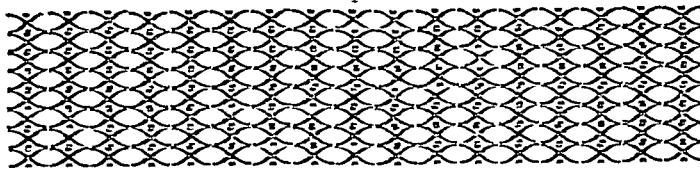
प्रबोधिनी*

(सं० १९३१)

जागो मंगल-रूप सकल ब्रज - जन-रखवारे।
जागो नन्दानन्द-करन जसुदा के बारे॥
जागो बलदेवानुज रोहिनि मात - दुलारे।
जागो श्री राधा जू के प्रानन ते प्यारे॥
जागो कीरति-लोचन-सुखद भानु - मान-वर्द्धित-करन।
जागो गोपी-गो-गोप-प्रिय भक्त-सुखद असरन-सरन॥ १॥

होन चहत अब प्रात चक्रवाकिनि सुख पायो।
उड़े बिहग तजि बास चिरैयन रोर मचायो॥
नव मुकुलित उत्पल पराग लै सीत सुहायो।
मंथर गति अति पावन करत पंडुर बन धायो॥
कलिका उपबन बिकसन लगी भॅवर चले संचार करि।
पूरब पच्छिम दोउ दिसि अरुन तरुन अरुन कृत तेज धरि॥२॥

दीप-जोति भइ मंद पहरुगन लगे जॅभावन।
भई सॅजोगिन दुखी कुमुद मुद मुॅदे सुहावन॥

---

* हरिश्चंद्र चंद्रिका ख० १ सं० ११ (अगस्त सन् १८७४ ई०) में प्रकाशित। सं०

कुम्हिलाने कच-कुसुम बियोगिनि लगि सचुपावन।
भई मरगजी सेज लगे सब भैरव गावन॥
तन अभरन-गन सीरे भए काजर दृग बिकसित सजत।
अधरन रस लाली साथ मुख पान स्वाद तजनो चहत॥ ३

मथत दही ब्रज-नारि दुहत गौअन ब्रज-बासी।
उठि उठि कै निज काज चलत सब घोष-निवासी॥
द्विज-गन लावत ध्यान करत सन्ध्यादि उपासी।
बनत नारि खंडिता क्रोध पिय पेखि प्रकासी॥
गौ-रम्भन-धुनि सुनि बच्छगन आकुल माता ढिग चलत।
पशु-बृंद सबै बन को गवन करन चले सब उच्छलत॥ ४

नारद तुंबरु षट बिभास ललितादि अलापत।
चारहु मुख सो बेद पढ़त बिधि तुव जस थापत॥
इन्द्रादिक सुर नमत जुहारत थर थर काँपत।
व्यासादिक रिषि हाथ जोरि तुव अस्तुति जापत॥
जय बिजय गरुड़ कपि आदि गन खरे खरे मुजरा करत।
शिव डमरू लै गुन गाइ तुव प्रेम-मगन आनँद भरत॥ ५

दुर्गादिक सब खरीं कोर नैनन की जोहत।
गंगादिक आचँवन हेत घट लाई सोहत॥
तीरथ सब तुव चरन परस-हित ठाढ़े मोहत।
तुलसी लीने कुसुम अनेकन माला पोहत॥
ससि सूर पवन घन इंदिरा निज निज सेवा में लगत।
ऋतु काल यथा उपचार मैं खरे भरे भय सगबगत॥ ६

बंदीजन सब द्वार खरे मधुरे गुन गावत।
चंग मृदंग सितार बीन मिलि मंद बजावत॥

द्विज-गन पै नँदराय अनेक असीस पढ़ावत।
निज निज सेवा मै सब सेवक उठि उठि धावत॥
पिकदान वस्त्र दरपन चँवर जल-झारी उवटन मलय।
सोधो सुगंध तंबोल लै खरे दास - दासी-निचय ॥ ७ ॥

मथे सद्य नवनीत लिये रोटी घृत-बोरी।
तनिक सलोनो साक दूध की भरी कटोरी ॥
खरी जसोदा मात जात बलि बलि तृन तोरी।
तुव मुख निरखन-हेत ललक उर किये करोरी ॥
रोहिनि आदिक सब पास ही खरी विलोकत वदन तुव।
उठि मंगलमय दरसाय मुख मंगलमय सब करहु भुव ॥ ८ ॥

करत काज नहि नंद बिना तुव मुख अवरेखे।
दाऊ वन नहि जात वदन सुंदर बिनु देखे॥
ग्वालिन दधि नहि वेचि सकत लालन बिनु पेखे।
गोप न चारत गाय लखे बिनु सुंदर भेखे॥
भइ भीर द्वार भारी खरे सब मुख निरखन आस करि।
वलिहार जागिए देर भइ बन गो-चारन चेत धरि ॥ ९ ॥

करत रोर तम-चोर भोर चकवाक बिगोए।
आलस तजि कै उठौ सुरत सुख-सिंधु भिगोए॥
दरसन हित सब अली खरी आरती सँजोए।
जुगल जागिए वेर भई पिय प्यारी सोए ॥
मुख-चंद हमै दरसाइ कै हरौ विरह को दुख विकट।
वलिहार उठो दोऊ अबै बीती निसि दिन भो प्रगट ॥१०॥

ललिता लीने बीन मधुर सुर सो कछु गावत।
बैठि बिसाखा कोमल करन मृदंग बजावत।

चित्रा रचि रचि बहु कुसुमन की माल बनावत ॥
श्यामा भामा अभरन सारी पाग सजावत ॥
पिकदान चंद्रभागा लिए चम्पक-लतिका जल गहत।
दरपन लै कर में इंद्रलेखा बलि बलि जागौ कहत ॥११॥

कबरी सबरी गूँथि, फेर सों माँग भराओ।
कसिकै रस सो पाग पेच सिरपेंच बँधाओ ॥
अंजन मुख सो सीस महावर-बिंदु छुड़ाओ।
जुग कपोल सों पीक पोछि कै छाप मिटाओ ॥
उर हार चीन्ह परि पीठ पर कंकन उपस्यो देत छबि।
जागौ दुराउ तोहि बाल अब जामे कछु बरनै न कबि ॥१२॥

आलस पूरे नैन अरुन अब हमहिं दिखावहु।
सुरत याद दै प्रिया-दृगन भरि लाज लजावहु ॥
चुटकी दै बलिहार बोलि कछु अलस जँभावहु।
केलि-कहानी बिबिध भाखि कछु हँसहु-हँसावहु ॥
भरि प्रेम परस्पर तन चितै आलस मेटहु लागि हिय।
अँगरानि मुरनि लपटानि लखि सखिगन सर्व सिराहि जिय॥१३॥

जागौ जागौ नाथ कौन तिय-रति रस भोए।
सिगरी निसि कहुँ जागि इतै आवत ही सोए ॥
क्यौं न सामुहे नैन करत क्यों लाज समोए।
आधे आधे बैन कहत रस-रंग भिगोए ॥
बलिहार और के भाग सुख हमै प्रात दरसन मिलन।
ताहू पै सोवत लाल बलि जागौ, कंज चहत खिलन ॥१४॥

जुगल कपोलन पीक छाप अति सोभा पावत।
खंडित अधरन पै अंजन जावक सरसावत ॥

सिर नूपुर घुँघरू अंक छबि दुगुन बढ़ावत।
अंग अंग प्रति अभरन-गन चिन्हित दरसावत ॥
कंकन पायल सो पीठ खचि गाल तरौनन सो चुभित।
कंचुकी छाप सह माल वहु बिनु गुन कोमल हिय खुभित ॥१५॥

रहे नील पट ओढ़ि चूरिकन जहँ लपटाए।
सेंदुर बिंदुली पीक चित्र तहँ विविध बनाए ॥
बिथुरी अलकन मै वेसर क्यौं सरस फँसाए।
खसित पाग मैं गलित कुसुम मिलि पेच बँधाए ॥
बलिहार आरसी जल लिए दासी विनय-वचन कहत।
जागो पीतम अव निसि विगत गर लागो मनमथ दहत ॥१६॥

डूबत भारत नाथ बेगि जागो अब जागो।
आलस-दव एहि दहन हेतु चहुँ दिसि सो लागो ॥
महा मूढ़ता वायु बढ़ावत तेहि अनुरागो।
कृपा-दृष्टि की वृष्टि वुझावहु आलस त्यागो ॥
अपुनो अपुनायो जानिकै करहु कृपा गिरिवर-धरन।
जागो वलि बेगहि नाथ अब देहु दीन हिंदुन सरन ॥१७॥

प्रथम मान धन वुधि कोशल बल देइ बढ़ायो।
क्रम सो विपय-विदूषित जन करि तिनहिं घटायो ॥
आलस मैं पुनि फाँसि परसपर बैर चढ़ायो।
ताही के मिस जवन काल सम को पग आयो ॥
तिनके कर की करवाल बल वाल वृद्ध सव नासि कै।
अब सोवहु होय अचेत तुम दीनन के गल फाँसि कै ॥१८॥

कहँ गए विक्रम भोज राम वलि कर्ण युधिष्ठिर।
चंद्रगुप्त चाणक्य कहाँ नासे करिकै थिर ॥

कहँ क्षत्री सब मरे जरे सब गए कितै गिर।
कहाँ राज को तौन साज जेहि जानत है चिर॥
कहँ दुर्ग-सैन-धन-बल गयो धूरहि धूर दिखात जग।
जागो अब तौ खल-बल-दलन रक्षहु अपुनो आर्य-मग॥१९॥

जहाँ बिसेसर सोमनाथ माधव के मन्दिर।
तहँ महजिद बनि गई होत अब अल्ला अकबर॥
जहँ झूसी उज्जैन अवध कन्नौज रहे बर।
तहँ अब रोवत सिवा चहूँ दिसि लखियत खँडहर॥
जहँ धन-विद्या बरसत रही सदा अबै वाही ठहर।
बरसत सब ही बिधि बे-बसी अब तौ जागौ चक्रधर॥२०॥

गयो राज धन तेज रोष बल ज्ञान नसाई।
बुद्धि वीरता श्री उछाह सूरता बिलाई॥
आलस कायरपनो निरुद्यमता अब छाई।
रही मूढ़ता बैर परस्पर कलह लराई॥
सब बिधि नासी भारत-प्रजा कहुँ न रह्यौ अवलंब अब।
जागो जागो करुनायतन फेर जागिहौ नाथ कब॥२१॥

सीखत कोउ न कला, उदर भरि जीवत केवल।
पसु समान सब अन्न खात पीअत गंगा-जल॥
धन बिदेस चलि जात तऊ जिय होत न चंचल।
जड़ समान ह्वै रहत अकिल हत रचि न सकत कल॥
जीवत बिदेस की वस्तु लै ता बिनु कछु नहि करि सकत।
जागो जागो अब साँवरे सब कोउ रुख तुमरो तकत॥२२॥

पृथीराज जयचंद कलह करि जवन बुलायो।
तिमिरलंग चंगेज आदि बहु नरन कटायो॥

अलादीन औरंगजेब मिलि धरम नसायो।
विषय-वासना दुसह मुहम्मदसह फैलायो॥
तब लौं सोए बहु नाथ तुम जागे नहि कोऊ जतन।
अब तौ जागौ बलि बेर भइ हे मेरे भारत-रतन॥२३॥

जागो हौं बलि गई बिलंब न तनिक लगावहु।
चक्र सुदरसन हाथ धारि रिपु मारि गिरावहु॥
थापहु थिर करि राज छत्र सिर अटल फिरावहु।
मूरखता दीनता कृपा करि बेग नसावहु॥
गुन विद्या धन बल मान बहु सबै प्रजा मिलि कै लहैं।
जय राज राज महराज की आनँद सो सब ही कहैं॥२४॥

सब देसन की कला सिमिटि कै इतही आवै।
कर राजा नहि लेइ प्रजन पै हेत बढ़ावै॥
गाय दूध बहु देहि तिनहि कोऊ न नसावै।
द्विज-गन आस्तिक होइँ मेघ सुभ जल बरसावै॥
तजि छुद्र वासना नर सबै निज उछाह उन्नति करहि।
कहि कृष्ण राधिका-नाथ जय हमहूँ जिय आनँद भरहि॥२५॥
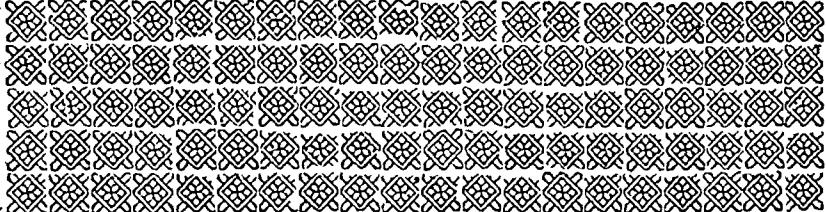
प्रात-समीरन*

(सं० १९३१)

मन्द मन्द आवै देखो प्रात समीरन
करत सुगन्ध चारो ओर विकोरन।
गात सिहरात तन लगत सीतल
रैन निद्रालस जन-सुखद चंचल ॥
नेत्र सीस सीरे होत सुख पावै गात
आवत सुगन्ध लिए पवन प्रभात।
वियोगिनी-बिदारन मन्द मन्द गौन
बन-गुहा बास करै सिंह प्रात-पौन ॥
नाचत आवत पात पात हिहिनात
तुरग चलत चाल पवन प्रभात।
आवै गुंजरत रस फूलन को लेत
प्रात को पवन भौंर सोभा अति देत।
सौरभ सुमद धारा ऊँचो किए मस्त
गज सो आवत चल्यौ पवन प्रसस्त ॥
फुलावत हिय-कंज जीवन सुखद
सज्जन सो प्रात पौन सोहै बिना मद।

---

* हरिश्चंद्र चंद्रिका खं० २ सं० १ (अक्तूबर सन् १८७४ ई०) में प्रकाशित। इसका छंद बँगला का पयार है।

दिसा प्राची लाल करै कुमुदी लजाय
होरी को खिलार सो पवन सुख पाय ॥
भौर-शिष्य मन्त्र पढ़ैं धर्म्म-कर्म्म-वन्त
प्रात को समीर आवै साधु को महन्त ।
सौरभ को दान देत मुदित करत
दाता बन्यो प्रात-पौन देखो री चलत ॥
पातन कँपावै लेत पराग खिराज
आवत गुमान भर्यौ समीरन-राज ।
गावै भौर गूँजि पात खरक मृदंग
गुनी को अखारो लिए प्रात-पौन संग ॥
काम मे चैतन्य करै देत है जगाय
मित्र उपदेस बन्यो भोर पौन आय ।
पराग को मौर दिए पच्छी बोल बाज
ब्याहन आवत प्रात-पौन चल्यौ आज ॥
आप देत थपकी गुलाब चुटकार
बालक खिलावै देखो प्रात की बयार ।
जगावत जीव जग करत चैतन्य
प्रान-तत्व सम प्रात आवे धन्य धन्य ॥
गुटकत पच्छी धुनि उड़े सुख होत
प्रात-पौन आवै बन्यो सुन्दर कपोत ।
नव-मुकुलित पद्म-पराग के बोझ
भारवाही पौन चलि सकत न सोझ ॥
छुअत सीतल सबै होत गात आत
स्नेही के परस सम पवन प्रभात ।
लिए जात्री फूल-गन्ध चलै तेज धाय
रेल रेल आवै लखि रेल प्रात-वाय ॥

विविध उपमा धुनि सौरभ को भौन
उड़त अकास कवि-मन किधौं पौन।
अंग सिहरात छूए उड़त अंचल
कामिनी को पति प्रात-पवन चंचल॥
प्रात समीरन सोभा कही नहिं जाय
जगत उद्योगी करै आलस नसाय।
जागै नारी नर लगै निज निज काम
पंछी चहचह बोलैं ललित ललाम॥
कोई भजै राम राम कोई गंगा न्हाय
कोई सजि वस्त्र अंग काज हेत जाय।
चटकैं गुलाब फूल कमल खिलत
कोई मुख बन्द करैं परन हिलत॥
गावत प्रभाती बाजै मन्द मन्द ढोल
कहूँ करैं द्विजगन जय जय बोल।
वजै सहनाई कहूँ दूर सों सुनाय
भैरवी की तान लेत चित्त कों चुराय॥
उड़त कपोत कहूँ काग करै रोर
चुहू चुहू चिरैयन कीनो अति सोर।
बोलैं तम-चोर कहूँ ऊँचो करि माथ
अल्ला अकबर करैं मुल्ला साथ साथ॥
बुझी लालटेन लिए झुकि रहे माथ
पहरू लटकि रहे लम्बो किए हाथ।
स्वान सोये जहाँ तहाँ छिपि रहे चोर
गऊ पास बच्छन अहीर देत छोर॥
दही फल फूल लिए ऊँचे बोलैं बोल
आवत ग्रामीन-जन चले टोल टोल।

सड़क सफाई होत करि छिड़काव
बग्गी बैठि हवा खाते आवै उमराव ।।
काज व्यग्र लोग धाए कन्धन हिलाय
कसे कटि चुस्त बने पगड़ी सजाय ।
सोई वृत्ति जागी सब नरन के चित्त
बुरी-भली सबै करै लीक जौन नित्त ।।
चले मनसूबा लोक थोकन के जौन
मार-पीट दान-धर्म्म काम-काज भौन ।
व्यास बैठे घाट घाट खोलि कै पुरान
ब्राह्मन पुकारै लगे हाय हाय दान ।।
अरुन किरिन छाई दिसा भई लाल
घाट नीर चमकन लागे तौन काल ।
दीप-जोति उडुगन सह मन्द मन्द
मिलत चकई चका करत अनन्द ।।
प्रलय पीछे सृष्टि सम जगत लखाय
मानो मोह बीत्यौ भयो ज्ञानोदय आय ।
प्रात-पौन लागे जाग्यौ कवि 'हरीचंद'
ताकी स्तुति करि कहौ यह बंग छंद ।।
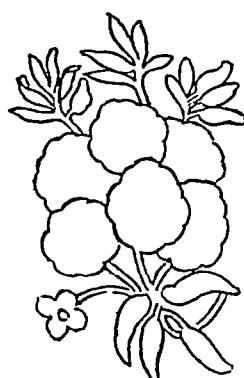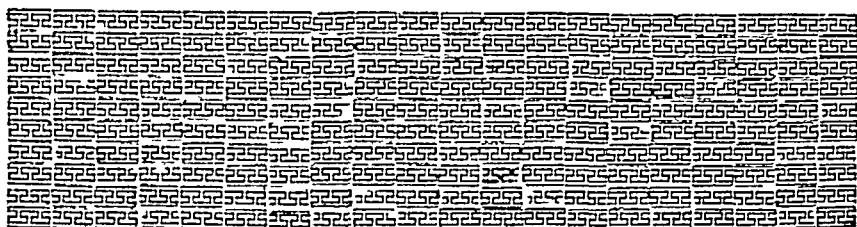
बकरी-विलाप*

(सं० १९३१)

सरद निसा निरमल दिसा गरद रहित नभ स्वच्छ ।
सब के मन आनँद बढ़यौ लखि आगम दिन अच्छ ॥ १ ॥
पितृ पक्ष को जानि कै ब्राह्मन-मन सानंद ।
निरखहिं आश्विन मास सब ज्यो चकोर-गन चंद ॥ २ ॥
लखि आगम नवरात को सब को मन हुलसात ।
लखन राम-लीला ललित सजि सजि सबही जात ॥ ३ ॥
छुट्टी भई अदालतन आफिस सब भए बंद ।
फिरे पथिक सब भवन निज धरि धरि हिए अनंद ॥ ४ ॥
बंगालिन के हूँ भयो घर घर महा उछाह ।
देवी-पूजा की बढ़ी चित्त चौगुनी चाह ॥ ५ ॥
नाच लखन मद-पान को मिल्यो आइ सुभ जोग ।
दुरगा के परसाद सों मिलिहै सब ही भोग ॥ ६ ॥
कोउ गावत कोऊ हँसत मंगल करन बिचारि ।
आगतपतिका बनि रही परदेसिन की नारि ॥ ७ ॥

---

* कवि-वचन-सुधा खं० ६ सं० २ (आश्विन कृ० ११ सं० १९३१) में प्रकाशित ।

ऐसे आनँद के समय बकरी अति अकुलाय।
निज सिसु-गन लै गोद मे करत दीन बनि हाय ॥ ८ ॥
घोर सरद साँपिनि समै मोसो दुखिया कौन।
जाके सुत सब नासिहै बलिदायक अघ-भौन ॥ ९ ॥
माता को सुत सो नहीं प्यारो जग मे कोय।
ताकैं परम वियोग मे क्यो न मरै हम रोय ॥१०॥
जिनके सिसु ह्वै कै मरे ते जानहिं यह पीर।
बाँझ गरभ की वेदना जानै कहा सरीर ॥११॥
अपने बच्चन देखि कै हरो हमारो सोग।
मेरो दुख अनुभव करौ तुमहु कुटुम्बी लोग ॥१२॥
दूध देत नित तृन चरत करत न कछू बिगार।
ताहू पै मम यह दसा रे निर्दय करतार ॥१३॥
पुत्र - सोगिनी ही रच्यौ जो पै करनो मोहि।
तौ रे विधि मम रचन सो कहा सिरान्यौ तोहि ॥१४॥
रे रे विधि सब विधि अविधि आजु अविधि तै कीन।
वधि वधि कै मेरे सुअन महा सोक मोहि दीन ॥१५॥
सुरति करत जिय अति जरत मरत रोय करि हाय।
बलि यह बलिजा नाम सौ हीयो उलटत जाय ॥१६॥
मुख गद्गद तन स्वेद-कन कंठहु रूँध्यो जात।
उलट्यौ परत करेजवा जिय अतिही अकुलात ॥१७॥
कहाँ जायँ कासो कहै कोउ न सुनिवे जोग।
खाँव खाँव करि धाय सब हमहि लगावत भोग ॥१८॥
जदपि नारि दुख जानही मेरो सहित विवेक।
पै ते पति-मति मै रँगी बरजहि तिन्है न नेक ॥१९॥
मानुष-जन सो कठिन कोउ जन्तु नाहिं जग बीच।
विकल छोड़ि मोहि पुत्र लै हनत हाय सब नीच ॥२०॥

वृथा जवन को दूसही करि वैदिक अभिमान ।
जो हत्यारो सोइ जवन मेरे एक समान ॥२१॥
धिक् धिक् ऐसौ धरम जो हिंसा करत विधान ।
धिक् धिक् ऐसो स्वर्ग जौ बध करि मिलत महान ॥२२॥
शास्त्रन को सिद्धांत यह पुण्य सु पर-उपकार ।
पर-पीड़न सो पाप कछु बढ़ि के नहि संसार ॥२३॥
जज्ञन मे जप-जज्ञ बढ़ि अरु सुभ सात्विक धर्म ।
सब धर्मन सों श्रेष्ठ है परम अहिंसा धर्म ॥२४॥
पूजा लै कहँ तुष्ट नहि धूप दीप फल अन्न ।
जौ देवी बकरा बधे केवल होत प्रसन्न ॥२५॥
हे बिस्वंभर ! जगत-पति जग-स्वामी जगदीस ।
हम जग के बाहर कहा जो काटत मम सीस ॥२६॥
जगन्मात ! जगदम्बिके ! जगत-जननि जग-रानि ।
तुव सन्मुख तुव सुतन को सिर काटत क्यौ जानि ॥२७॥
क्यौं न खींचि के खड्ग तुम सिंहासन तें धाइ ।
सिर काटत सुत बधिक कौ क्रोधित बलि ढिग आइ ॥२८॥
त्राहि त्राहि तुमरी सरन मैं दुखिनी अति अम्ब ।
अब लम्बोदर-जननि बिनु मोकों नहि अवलम्ब ॥२९॥
निर-अपराध गरीब हम सब बिधि बिना सहाय ।
हे षटमुख-गजमुख-जननि तुम समझौ मम हाय ॥३०॥
पुत्रवती बिनु जानई को सुत-बिछुरन-पीर ।
यासो मोहि अब दै अभय जननि धरावहु धीर ॥३१॥
एहि बिधि बहु बिलपत परी बकरी अति आधीन ।
हे करुना-वरुनायतन द्रवहु ताहि लखि दीन ॥३२॥
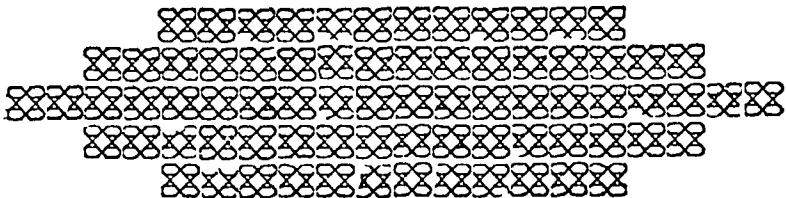
स्वरूप-चिन्तन *

(सं० १९३१)

जय जय गिरवर-धरन जयति श्री नवनीत-प्रिय ।
जयति द्वारिकाधीश जयति मथुरेश माल हिय ।।
जय जय गोकुलनाथ मदनमोहन पिय प्यारे ।
जय गोकुल-चंद्रमा सु विट्ठलनाथ दुलारे ।।
श्री वालकृष्ण नटवर नवल श्री मुकुन्द दुख-द्वंद-हर ।
स्वामिनि सह ललित तृभग गोपाललाल जय जयतिवर ।।१।।

जय जय श्री गिरिराज-धरन श्रीनाथ जयति जय ।
देव-दमन जय नाग-दमन जय शमन भक्त-भय ।।
जय श्री राधा-प्राणनाथ श्री वल्लभ प्यारे ।
श्री विट्ठल के जीव जयति जसुदा के बारे ।।
श्रीवल्लभ कुल के परम निधि भक्तन के वहु दुख-दरन ।
नित नव निकुंज लीला-करन जय जय श्रीगिरिवरधरन ।।२।।

जय जय श्री नवनीत-प्रिय जय जसुदानन्दन ।
जय नंदांगन रिंगन कर जुवती-मन-फन्दन ।।

---

* हरिश्चंद्र चंद्रिका खं० २ सं० ३ (दिसंबर सन् १८७४ ई०) मे प्रकाशित । सं०

जय कृत मृगमद-तिलक भाल जय युक्त माल गल ।
मुख मंडित दधि-लेप घुटुरुवन चलत चपल चल ।।
जय बाल ब्रह्म गोपाल जन-पालक केहरि करज हिय ।
जदुनाथ नाथ गोकुल-बसन जै जै श्री नवनीत-प्रिय ।।३।।

जय जय मथुरानाथ जयति जय भव-भय-भंजन ।
जय प्रनतारति-हरन जयति जय जन-मन-रंजन ।।
भुज बिसाल सुभ चार भक्त-जन के रखवारे ।
शंख चक्र असि गदा पद्म आयुध कर धारे ।।
श्री गिरिधर-प्रिय आनंदनिधि जयति चतुर्विध जूथपति ।
गावत श्रुति गुन-गन-गाथ जय मथुरानाथ अनाथ-गति ।।४।।

जय श्री बिट्ठलनाथ साथ स्वामिनि सुठि सोहत ।
कटि धारे दोउ हाथ रास-श्रम भरि मन मोहत ।।
नृत्य भाव करि बिविध जयति जुवती-मन-फंदन ।
जसुदा-लालित जयति नंद-नंदन आनंदन ।।
श्री गोविंद प्रभु-पालन प्रनत दीन-हीन-जन-उद्धरन ।
जय असुर-दरन भक्तन-भरन श्री बिट्ठल असरन-सरन ।।५।।

जयति द्वारिकाधीस-सीस मनि-मुकुट विराजत ।
जयति चार कर चक्रादिक आयुध छबि छाजत ।।
तिय-दृग द्वै कर मूँदि जुगल कर बेनु बजायो ।
कंठ चरन उपमान कंबु अंबुज मन-भायो ।।
जय प्रिया कंकनाकार कर चक्र गदा वंसी अभय ।
जय बालकृष्ण प्रिय प्रान श्री द्वारिकेस महराज जय ।।६।।

जय श्री गोकुलनाथ जयति गिरिराज-उधारन ।
बिबि कर वंस प्रसंस कंबु गिरि बिबि कर धारन ।।

रास-रसिक नटराज रसिक-मंडल मनि-मंडन ।
हरन इंद्र-मद-मान भक्त भव-भय-भर-खंडन ॥
श्री राधापति चंद्रावली-रमन शमन गजपति गमन ।
श्री वल्लभ प्रिय रसमय जयति गोकुलेस मनमथ-दमन ॥७॥

जय गोकुल-चंद्रमा परम कोमल अँग सोहन ।
रास जूथपति वेनु-बाद-रत तिय-मन-मोहन ॥
मधि नायक बृन्दाबनेस राका ससि पूरन ।
नटवर नर्त्तक करन मत्त मनमथ-मद-चूरन ॥
श्रीरघुपति पति अति ललित गति कति जुवती मति जति हरन ।
रतिरंजन नति प्रिय जयति श्री गोकुल-ससि साँवर वरन ॥८॥

जय जय मोहन मदन मदन-मर्द-कदन ताप-हर ।
सब सुख-सोभा-सदन रदन-छबि कुंद-निंद-कर ॥
मरजादा उल्लंघि पुष्टि-पथ थापन चाहत ।
होइ त्रिभंगी प्रिया बदन मधु रस अवगाहत ॥
वर वंसी कर स्वामिनि सहित करन प्रेम-रँग भक्ति-लय ।
श्री घनश्याम आनँद भरन जय श्री मोहन मदन जय ॥९॥

जय श्री नटवर लाल ललित नटवर बपु राजत ।
निरतत तजि मरजाद देखि रति-पति जिय लाजत ॥
परम रसिक रस रास रास-मंडल की सोभा ।
पग कर सिर की हिलनि देखि ब्रज-तिय मन लोभा ॥
श्री बृंदाबन-नभ-चंद्रमा जन-चकोर आनंद-कर ।
नित प्रेम-सुधा-बरखन-करन जय नटवर त्रय ताप-हर ॥१०॥

जय जय जय श्री बालकृष्ण जसुदा के बारे ।
बलदेवानुज नंदराय के प्रान पियारे ॥

नन्दालय कृत जानु पानि रिंगन बाला-कृत ।
कर मोदक मन-मोद-करन व्रत जुवती-जन-हित ।।
जदुपति प्यारे आनंदनिधि सब गोकुल के प्रान-प्रद ।
झँगुली टोपी मसिबिंदु सिर बालकृष्ण जय जन-सुखद ।।११।।

श्री मुकुंद भव-दुंद-हरन जय कुंद गौर छबि ।
श्याम मिलित मधि जुगल भाव सो किमि बरनै कबि ।।
बाल भाव परतच्छ तरुन अतर छबि छाजै ।
कर मोदक मिस प्रिया अधर मधु स्वाद बिराजै ।।
जदुनाथ मनोरथ-पूर्ण-कर श्रीबल्लभ चिकुरस्थ बर ।
श्री गिरिधर लालित ललित जय श्रीमुकुंद दुख-दुंद-हर ।।१२।।

जय जय श्री गोपाल लाल श्री राधानायक ।
कोटि काम-मद-मथन-भक्तजन सदा सहायक ।।
प्रिया प्रनय भट गौर बदन सुंदर छबि छाजत ।
प्यारी रिझवन हेत मुरलि कर लिये बजावत ।।
दरसन दै मन करसन करत ब्रज-जुवतीजन-मन-हरन ।
काशी में बृंदाबन-करन जय गोपाल असरन-सरन ।।१३।।
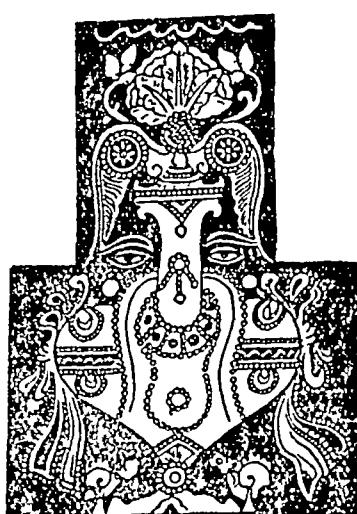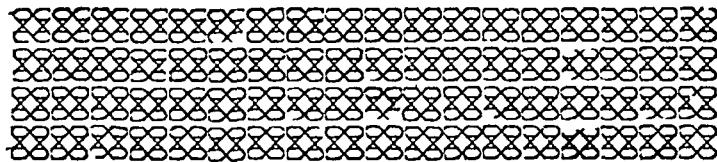
श्री राजकुमार-शुभागमन-वर्णन *

(सं० १९३२)

स्वागत स्वागत धन्य तुम भावी राजधिराज ।
भई सनाथा भूमि यह परसि चरन तुव आज ॥१॥
"राजकुँअर आओ इतै दरसाओ मुख चंद ।
बरसाओ हम पर सुधा बाढ़यौ परम अनंद ॥२॥
नैन बिछाए आपु हित आवहु या मग होय ।
कमल पाँवड़े ये किए अति कोमल पग जोय" ॥३॥
साँचहु भारत मे बढ़यौ अचरज सहित अनंद ।
निरखत पच्छिम सो उदित आज अपूरव चंद ॥४॥
दुष्ट नृपति बल दल दली दीना भारत भूमि ।
लहिहै आजु अनंद अति तुव पद-पंकज चूमि ॥५॥
बिकसित कीरति-कैरवी रिपु विरही अति छीन ।
उडुगन-सम नृप और सब लखियत तेज-बिहीन ॥६॥
स्रवत सुधा-सम बचन-मधु पोखत औषधिराज ।
त्रासत चोर कुमित्र खल नंदत प्रजा-समाज ॥७॥

---

* सन् १८७५ ई० में युवराज प्रिंस आव वेल्स (सम्राट् एडवर्ड सप्तम) भारत आए थे, जिनके शुभागमन पर यह कविता लिखी गई थी। यह कविता बालाबोधिनी खं० ३ सं० ६ (आषाढ़ सं० १९३२) मे छपी थी, जिसमें नं० १९ के बाद के ६ दोहे हरिश्चन्द्र कला खं० से और भी सम्मिलित कर दिए गए है। सं०

चित-चकोर हरखित भए सेवक-कुमुद अनंद ।
मिट्यौ दीनता-तम सबै लखि भूपति मुख-चंद॥ ॥८॥
मन-मयूर हरखित भए गए दुरित दव दूरि ।
राजकुँअर नव घन सरस भारत-जीवन-मूरि ॥९॥
हृदय-कमल प्रफुलित भए दुरे दुखद खल-चोर ।
पसर्‍यौ तेज जहान रबि भूपति-आगम भोर ॥१०॥
नंदन-पति-प्यारी सची दंड वज्र गज जान ।
मंत्रीवर सुर-सह लसत नृप-सुत इंद्र-समान ॥११॥
भये लहलहे नर सबै उलस्यो प्रजा-समाज ।
बंदी-पिक गावत सुजस राजकुँअर रितुराज ॥१२॥
बिदलित रिपु-गज-सीस नित नख-बल बुद्धि-प्रभाव ।
जन बन पथि सम अति प्रबल हरि भावी नर-राव ॥१३॥
मेलाहू सो बढ़ि सबै सज्यौ नगर को साज ।
बुढ़वामंगल तुच्छ कह लखि नव मंगल आज ॥१४॥
ललित अकासी धुज सजे परकासी आनंद ।
राका सी कासीपुरी लखि भूपति मुखचंद ॥१५॥
नौबत-धुनि-मंजीर सजि अंचल-धुज फहराय ।
कासी तुमहि मिनार-मिस टेरति हाथ उठाय ॥१६॥
मरवट सथिये बसन धुज मौरी तोरन लाय ।
दुलही सी कासीपुरी उलही नव बर पाय ॥१७॥
जिमि रघुबर आए अवध जिमि रजनी लहि चंद ।
तिमि आगमन कुमार के कासी लह्यो अनंद ॥१८॥
मधुबन तजि फिर आइ हरि ब्रज निवसे मनु आज ।
ऐसो अनुपम सुख लह्यो तुम कहँ निरखि समाज ॥१९॥

❀ त्रिभिः कुलकम् ।

[षड्भिः कुलकम्]

जदपि न भोज न व्यास नहि बालमीकि नहि राम।
शाक्यसिंह 'हरिचंद' बलि करन जुधिष्ठिर श्याम ॥२०॥
जदपि न विक्रम अकबरहु कालिदासहू नाहि।
जदपि न सो विद्यादि गुन भारतवासी माहि ॥२१॥
प्रतिष्ठान साकेत पुनि दिल्ली मगध कनौज।
जदपि अबै उजरी परी नगर सबै बिनु मौज ॥२२॥
जद्दपि खँडहर सी भरी भारत भुव अति दीन।
खोइ रत्न संतान सब कृस तन दीन मलीन ॥२३॥
तदपि तुमहि लखि कै तुरत आनंदित सब गात।
प्रान लहे तन सी अहो भारत भूमि दिखात ॥२४॥
दाव जरे कहँ वारि जिमि विरही कहँ जिमि मीत।
रोगिहि अमृत-पान जिमि तिमि एहि तोहि लहि प्रीत ॥२५॥
घर घर मे मनु सुत भयो घर घर मै मनु व्याह।
घर घर बाढ़ी संपदा तुव आगम नर-नाह ॥२६॥
जैसे आतप तपित को छाया सुखद गुनात।
जवन-राज के अंत तुव आगम तिमि दरसात ॥२७॥
मसजिद लखि बिसुनाथ ढिग परे हिए जो घाव।
ता कहँ मरहम सरिस यह तुव दरसन नर-राव ॥२८॥
कुँअर कहाँ हम लेहि तोहि ठौर न कहूँ लखाय।
दृग-मग ह्वै हमरे हिए बैठहु प्रिय तुम आय ॥२९॥
कुँअर कहा आदर करै देहि कहा उपहार।
तुव मुख-ससि आगे लसत तृन-सम सब संसार ॥३०॥
पै केवल अति सुद्ध जिय कहि यह देहि असीस।
सानुज-माता-सहित तुम जीओ कोटि बरीस ॥३१॥

जब लौं बानी वेद की जब लौं जग को जाल ।
जब लौं नभ ससि-सूर अरु तारागन की माल ॥३२॥
जब लौं गंगा-जमुन-जल जब लौं भर्यौ नदीस ।
जब लौं कवि कविता सुथित जब लौं भुव अहि-सीस॥३३॥
जब लौं सुमन सुवास पर मत्त भँवर संचार ।
जब लौं कामिनि-नयन पर होहिं रसिक बलिहार॥३४॥
जब लौं तत्व सबै मिले गठे सबै परमानु ।
जब लौं ईश्वर अस्तिता तब लौं तुम नर-भानु ॥३५॥
जिओ अचल लहि राज-सुख नीरुज बिना विवाद ।
उदय अस्त लौं मेदिनी पालहु लहि सुख स्वाद ॥३६॥
पहरू कोउ न लखि परै होय अदालत बंद ।
ऐसो निरुपद्रव करौ राज-कुँअर सुख-कंद ॥३७॥
लोहा गृह के काम मैं कलह दंपती माहिं ।
बाद बुधनही मै सदा तुव राजत रहि जाहि ॥३८॥
जाति एक सब नरन की जदपि बिबिध ब्यौहार ।
तुमरे राजत लखि परै नेही सब संसार ॥३९॥
रसना इक आसा अमित कहँ लौं देहि असीस ।
रहौ सदा तुम छत्र ते होइ हमारे सीस ॥४०॥
भ्रात मात सह सुतन जुत प्रिया सहित जुवराज ।
जिओ जिओ जुग जुग जिओ भोगौ सब सुख-साज ॥४१॥

भारत-भिक्षा*

(सं० १९३२)

अहो आज का सुनि परत भारत भूमि मँझार ।
चहूँ ओर आनंद-धुनि कहा होत बहु वार ॥ १ ॥
बृटिश सुशासित भूमि मैं आनँद उमगे जात ।
सवै कहत जय आज क्यो यह नहिं जान्यो जात ॥ २ ॥
बृटिश-राज-चिन्हन सजी नगरन - अटा अटारि ।
धुजा-पताका फरहरहिं सहसन आज सँवारि ॥ ३ ॥
गंग - जमुन - गोदावरी - पथ ह्वै ह्वै वहु जान ।
क्यौ सव आवत है सजे देव-विमान-समान ॥ ४ ॥
घर वाहर इत उत सवै सजे वसन मनि साज ।
चातक और चकोर से खरे अरे क्यौ आज ॥ ५ ॥

---

* यह श्रीयुत बा० हेमचंद्र बनर्जी की कविता की छाया लेकर कवि की इच्छानुसार लिखी गई है । (चंद्रिका संपादक)

(यह कविता हरिश्चंद्र चंद्रिका खंड २ सं० ८–१२ सन् १८७५ ई० के मई-सितम्बर की सम्मिलित संख्या में प्रकाशित हुई थी । यह बारह पृष्ठों मे छपी है, जिनमे से प्रत्येक मे २४ पंक्तियाँ है। विजयिनी विजय वैजयंती, भारत-वीरत्व और इसके वहुत से पद एक दूसरे मे सम्मिलित कर लिये गए थे । पर सभी को पूरा देने मे कई पृष्ठ पदों की पुनरावृत्ति मात्र होती, इसलिए वैसा नहीं किया गया । सं०)

शाखा

आवत भारत आज कुँअर बृटनहि सुखदानो।
सुनहु न गगनहि भेदि होत जै जै धुनि-बानी ॥ ६ ॥
जै जै जै विजयिनी जयति भारत - महरानी।
जै राजागन-मुकुट-मनी धन - बल - गुन - खानी ॥ ७ ॥
जाकी कृपा-कटाक्ष चहत सिगरे राजा-गन।
जा पद भारत-भुवन लुठत ह्वै बस कंपित मन ॥ ८ ॥
आवत सोई बृटन कुँअर जल-पथ सुनि एहि छन।
ठाढ़ो भारत मग मे निरखत प्रेम पुलक तन ॥ ९ ॥

पूर्न कोरस

मृदंगादि बाजे बजाओ बजाओ।
सितारादि यंत्रै सुनाओ सुनाओ ॥
अरे ताल दै लै बढ़ाओ बढ़ाओ।
बधाई सबै धाइ गाओ सुनाओ ॥
कहाँ हैं रबानी मृदंगी सितारी।
कहाँ हैं गवैये कहाँ नृत्यकारी।
कहाँ आज मौलाबकस बाजपेई।
कहाँ आज है छेत्रमोहन गुसाई ॥
कहाँ भाट नाटकपती स्वाँगधारी।
कहाँ नट गुनी चट करैं सब तयारी।
कहो रागिनी आज भारी जमावैं।
मिले एक लै मे सु-गावैं बजावैं ॥
कहाँ भाँड़ कत्थक छिपे है बुलाओ।
मुबारक कहाओ बधाई गवाओ ॥
कहाँ है सबै सुंदरी बार-नारी।
कहो पेशवाजैं भजैं आज भारी।

लगै दून मे आज आवाज प्यारी ।
सरंगी वजै राग रंगी सँवारी ॥
छिड़ै भैरवी सारँगौ सिंध काफी ।
जमै जोगिया पूरिया औ धनाश्री ।
रहै कान्हरा देस सोरठ विहागा ।
कलिंगा किदारा परज आदि रागा ॥
मिले तान लै राग-रंगै जमाओ ।
मिले मान संगीत भावै दिखाओ ।
रहै लाग-डाँटौ उरप-तिर्प संगा ।
रहै तत्थेई तत्थेई नृत्य - रंगा ॥
दिखाओ कुमारै कला आज धाए ।
वड़े भाग सो पाहुने गेह आए ॥१०॥

आरम्भ

कहाँ सवै राजा कुँवर और अमीर नवाव ।
आज राज-दरबार मे हाजिर होहु सिताव ॥११॥
सिरन झुकाइ सलाम करि मुजरा करहु जुहारि ।
जटितहु जूतन त्यागि कै स्वच्छ बूट पग धारि ॥१२॥
जानु सुपानि नवाइ कै पद पै धरि उस्नीस ।
चूमि चूमि बर अभय-प्रद कर जुग नावहु सीस ॥१३॥
परम मोक्ष फल राज-पद-परसन जीवन माहि ।
बूटन-देवता राज-सुत-पद परसहु चित चाहि ॥१४॥
कित हुलकर कित सेन्धिया कित वेगम भूपाल ।
कित काशीपति कित रहे सिक्ख-राज पटियाल ॥१५॥
कित लायल ईजानगर मानी नृप मेवार ।
कितै जोधपुर जैपुरी त्रावंकोर कछार ॥१६॥

जाट भरतपुर धौलपुर राना कित तुम जाम ।
कित मुहम्मदिन के पती दक्षिन-राज निजाम ॥१७॥
धाओ धाओ बेग सब पहिरि पहिरि पौसाक ।
पगरी मोती-माल गल साजि साजि इक ताक ॥१८॥
गले बाँधि इस्टार सब जटित हीर मनि कोर ।
धावहु धावहु दौरि कै कलकत्ता की ओर ॥१९॥
चढ़ि तुरंत बग्गीन पर धावहु पाछे लागि ।
उडुपति सँग उडुगन-सरिस नृप सुख सोभा पागि ॥२०॥
राज-भेंट सबही करौ अहो अमीर नवाब ।
हाजिर ह्वै झुकि झुकि करौ सबै सलाम अदाब ॥२१॥

शाखा

राजसिंह छूटे सबै करि निज देस उजार ।
सेवत हित नृप बर कुँअर धाये बाँधि कतार ॥२२॥
तजि अफगानिस्तान को धाये पुष्ट पठान ।
हिमगिरि को दै पीठ किय कश्मीरेस पयान ॥२३॥
नाभा पटियाला अमृत-सर जम्बू अस्थान ।
कच्छ सिंधु गुजरात मेवाड़रु राजपुतान ॥२४॥
कोल्हापुर ईजानगर काशी अरु इन्दौर ।
धाए नृप इक साथ सब करि सूनो निज ठौर ॥२५॥
लखि कुल-दीपक राज-सुत धाए भूप-पतंग ।
रुके न गिरिवर नगर नद समुद जमुन जल गंग ॥२६॥
कहाँ पांडु जिन हस्तिनापुर मधि कीनौ जाग ।
राजसूय साँचो लखैं बृटन-रचित बल आग ॥२७॥

पूवर्न कोरस

अति सुन्दर मोहनी सजायो ।
आज लगत कलकता सुहायो ॥

द्वार द्वार पर बन्दन-माला ।
रँग रँग बसन फूल-दल-जाला ॥२८॥
कदली खम्भ पात थरहरहीं ।
पद भय हिलि हिलि मनु मन हरहीं ॥
फर फर फहरत धुजा पताका ।
चम चम चमकत कलस बलाका ॥२९॥
अटा अटारी वाहर मोखन ।
छज्जै छातन गोख झरोखन ॥
दीपहि दीपक परत लखाई ।
मनु नभ ते तारावलि आई ॥३०॥
दिन को रवि अकास लखि लज्जित ।
मनहुँ हीर गिरि खंडव सज्जित ॥
छुटत अतसबाजी रँग-रंगी ।
गगन प्रकट मनु अनल फिरंगी ॥३१॥
नव तारे प्रगटहि नसि जाही ।
उड़त वान इमि गगन लखाही ॥
गंज सितारनि की छवि भारी ।
नभ मनु तेजोमय फुलवारी ॥३२॥
धन कलकत्ता कलि-रजधानी ।
जेहि लखि कै सुरपुरी लजानी ॥
चलत कुँअर चढ़ि चपल तुरंगनि ।
सँग सोभित दल बल चतुरंगनि ॥३३॥
नृप-गन धावत पाछे प्राछे ।
अश्व चढ़े मनि काछे आछे ॥
ताजन पर कलँगी थरहरई ।
नृपगन दल दल सोभा करई ॥३४॥

चलहिं नगर-दरसन हित धाई।
झमक झमक बाजने बजाई॥
बजत बृटिस भेरी घहराई।
कादर मन सुनि-सुनि थहराई॥३५॥
रूल बृटानिय रूल दि बेवस।
ताल तरङ्ग बजत अति रन रस॥

आरम्भ

उठहु उठहु भारत-जननि लेहु कुँअर भरि गोद।
आज जगे तुव भाग फिर मानहुँ मन अति मोद॥३६॥
करि आदर मृदु बैन कहि बहु बिधि देहु असीस।
चिर दिन लौं सिसु-मुख लख्यौ नहिं तुम सोइ अवनीस॥३७॥
सेज छाँड़ि माता उठहु उदित अरुन तुव देस।
मिटे अमंगल तिमिर सब राजकुमार-प्रबेस॥३८॥
मति रोओ रोओ न तुम जननी ब्याकुल होय।
उठहु उठहु धीरज धरहु लेहु कुँअर मुख जोय॥३९॥
तुम दुखिया बहु दिनन की सदा अन्य आधीन।
सदा और के आसरे रहो दीन मन खीन॥४०॥
तुम अबला हत-भागिनी सदा सनाथ दयाल।
जोग भजन भूली रहत सूधे जिय की बाल॥४१॥
सो दुख तुमरो देखि महरानी करुना धारि।
निज प्रानोपम पुत्र तुव ढिग पठयो मनुहारि॥४२॥
रिपु-पद के बहु चिन्ह सब कुँअरहि देहु गिनाय।
काढ़ि करेजो आपनो देहु न सुतहि दिखाय॥४३॥
सदा अनादर जो सह्यो सह्यो कठिन रिपु-लात।
सो छत देहु दिखाय अब करहु कुँअर सों बात॥४४॥

उठहु फेर भारत जननि ह्वै प्रसन्न इक बार।
लेहु गोद करि नृप कुँवर भयो प्रात उँजियार ॥४५॥

शाखा

सुनत सेज तजि भारत माई।
उठी तुरंतहि जिय अकुलाई ॥
निविड़ केस दोउ कर निरुआरी।
पीत बदन की क्रान्ति पसारी ॥४६॥
भरे नेत्र अँसुअन जल-धारा।
लै उसास यह बचन उचारा ॥
क्यो आवत इत नृपति-कुमारा।
भारत मे छायो अँधियारा ॥४७॥
कहा यहाँ अब लखिबे जोगू।
अब नाहिन इत वे सब लोगू ॥
जिन के भय कंपत संसारा।
सब जग जिन को तेज पसारा ॥४८॥
रहे शास्त्र के जब आलोचन।
रहे सबै जब इत षट-दरसन ॥
भारत बिधि विद्या बहु जोगू।
नहि अब इत केवल है सोगू ॥४९॥
सो अमूल्य अब लोग इतै नहि।
कहा कुँअर लखिहै भारत महि ॥
रहै जबै मनि क्रीट सकुंडल।
रह्यो दंड जब प्रबल अखंडल ॥५०॥
रह्यो रुधिर जब आरज-सीसा।
ज्वलित अनल समान अवनीसा ॥

साहस बल इन सम कोउ नाहीं।
जबै रह्यौ महि-मंडल माहीं ॥५१॥
जब मोहि ये कहि जननि पुकारै।
दसहू दिसि धुनि गरज न पारै॥
तब मै रही जगत की माता।
अब मेरी जग मे कह बाता ॥५२॥
लखिहैं का कुमार अब धाई।
गोद बैठि हँसिहैं इत आई॥
जब पुकारिहै कहि मोहि माता।
आनँद सों भरिहौं सब गाता ॥५३॥
युरप अमरिका इहिहि सिहाहीं।
भारत - भाग - सरिस कोउ नाहीं॥
पूर्व सखो मम रोम पिआरी।
मरिकै बाँचि उठी फिरि बारी ॥५४॥
ग्रीसहु पुनि निज प्रानन पायो।
हाय अकेली हमहि बनायो॥
भग्न दंड कंपित कर - धारी।
कब लौ ठाढ़ी रहौ दुखारी ॥५५॥
भग्न सकल भूषन तन साजी।
दास-जननि कहवैहौ लाजी॥
मेरे भागन जो तन हारे।
थाप्यो पद मम सीस उघारे ॥५६॥

आरम्भ

सुनि बोली आरत-जननि आये कहा कुमार।
आये किन आओ निकट पुत्र जननि-अँकवार ॥५७॥

रहत निरंतर अंतरहि कठिन पराजय-पीर ।
आवो सुत मम हृदय लगि सीतल करहु सरीर ॥५८॥
लेहु माय कहि मोहि पुकारी ।
सोइ भावन जिमि निज महतारी ॥
सत संवत लौ रह्यौ अधूरी ।
करौ न आज भाव सोइ पूरी ॥५९॥
अतिहि अकिंचन भारत-वासा ।
अतिहि छीन हिन्दुन की आसा ॥
भूलि बृटिश बल धारि सनेहू ।
भारत-सुतन गोद करि लेहू ॥६०॥
कहि कृष्ण इन्हे मति तुच्छ करौ ।
नहिं कीटहु तुच्छ बिचार धरौ ॥
इनहूँ कहँ जीवन देह दया ।
इनहूँ कहँ ज्ञान सनेह मया ॥६१॥
इनहूँ कहँ लाज तृषा ममता ।
इनहूँ कहँ क्रोध क्षुधा समता ॥
इनुहूँ तन सोनित हाड़ तुचा ।
इनहूँ कहँ आखिर ईस रचा ॥६२॥
कभहुँ कवहुँ अवहूँ सोई उदय होत चित आस ।
इनसो करहु न कुँअर तुम कबहूँ जीय उदास ॥६३॥
सोई परम पवित्र भुव आये अहो कुमार ।
ताहि न समझहु तुच्छ तुम सो संबंध विचार ॥६४॥
पालत पच्छिहु जो कुँअर करि पिंजरन महँ चंद ।
ताहू कहँ सुख देत नर जामे रहै अनन्द ॥६५॥
सोई सुख लहि घरहु मे गावत विविध विहंग ।
जतनहि सो वस होत है वन के मत्त मतंग ॥६६॥

कोकिल-स्वर सब जग सुखी बायस-शब्द उदास।
यह जग को कह देत है वह कह लेत निकास ॥६७॥
केवल यह भाखै मधुर वह कठोर रव नित्त।
तासों जग चाहै सबै मधुर सरल बस चित्त ॥६८॥
हम तुव जननी की निज दासी।
दासी - सुत मम भूमि - निवासी ॥
तिनको सब दुख कुँअर छुड़ावो।
दासी की सब आस पुरावो ॥६९॥
मेटहु भय कर अभय दिखाई।
हरहु बिपति बच मधुर सुनाई ॥
बृटिश - सिंह के बदन कराला।
लखि न सकत भयभीत भुआला ॥७०॥
फाटत हिय जिय थर थर कंपत।
तेज देखिकै दृग जुग झंपत ॥
कहि न सकत मन को दुख भारी।
झरत नैन जुग अबिरल बारी ॥७१॥
सौदागर मेलुआ जहाजी।
गोरा धरमपती जग काजी ॥
सबहि राज सम पूजन करहीं।
सबको मुख देखत ही डरहीं ॥७२॥
तेज चंड सो हरहु कुमारा।
पोंछहु मम दुख को जल-धारा ॥
लै भारत-बासी मम सुत ढिग।
बैठहु छिनक लखहु छबि भरि दृग ॥७३॥
लखहु लखहु सुत आनँद भारी।
कैसो छायो भुवन मँझारी ॥

तुमहिं देखि सब पुलकित गाता।
गद्गद गल कहि सकहि न बाता ॥७४॥
कहहि धन्य यह रैन धन्य दिन।
धन धन घरी आज धन पल छिन ॥
प्रेम-अश्रु-जल बहहि नैन ते।
जिअहु कुँअर सब कहहि बैन तें ॥७५॥
फिरहु कुँअर जब जननी पासा।
कहियो पूरहि मम मन-आसा ॥
मिथ्या नहि कछु याके माही।
राजभक्त भारत-सम नाही ॥७६॥
लेहि प्रात उठिकै तुव नामा।
करहि चित्र तव देखि प्रनामा ॥
तुमरे सुख सों सब सुख पावै।
छल तजि सदा तुवहि गुन गावैं ॥७७॥
यह कहि भारत नैन भरि ऑचर बदन छिपाय।
दै असीस जिय सो नृपहि भई अदृश्य सुहाय ॥७८॥
बजे बृटिश डंका सघन गहगह शब्द अपार।
जय रानी विक्टोरियि जै जुवराज-कुमार ॥७९॥

पूर्ण कोरस

उदयो भानु है आज या देस माही।
रह्यो दुःख को लेसहू सेस नाही ॥
महाराज अलवर्त्त या भूमि आये।
अरे लोग धावो बजावो बधाये ॥८०॥
छुटीं तोप फहरी धुजा गरजे गहकि निसान।
भुव-मंडल खलभल भयो राजकुमार-प्रयान ॥८१॥
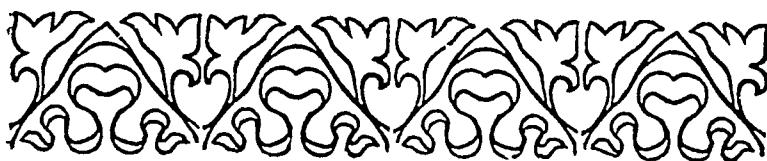
श्री पंचमी*

(सं० १९३२)

श्री पंचमी प्रथम बिहार-दिन मदन महोत्सव भारी।
भरन चलीं सब मिलि पीतम कों घर घर तें ब्रज-नारी ॥
नव-सत साज-सिगार सजे कंचुकि सुदृढ़ सँवारी।
लहकति तन-दुति नवजोबन तें तापै तनसुख सारी ॥
गावत गीत उमगि ,ऊँचे सुर मनहुँ मदन-मतवारी।
गलिन गलिन प्रति पायल झमकति दमकति तन दुति-न्यारी॥
मदन दुहाई फेरति डोलैं बिरद बसंत पुकारी।
सजे सैन सी उमड़ी आवहि जीतन कों गिरधारी ॥
ललिता, चंद्रभगा, चंद्रावलि, ससिरेखा सुकुमारी।
स्यामा, भामा, वाम, बिसाखा, चम्पक-लतिका प्यारी ॥
सब मधि राधा सुछबि अगाधा श्रीवृषभानु-दुलारी।
कर मै लै चम्पक तवला सी सोहत प्रान-पियारी ॥
अंवर उमड़त अविर अरगजा चलत रंग पिचकारी।
डफ बाजत गाजत मनु भेरी जीति जगत-गति सारी ॥
पहुँची नंद-भवन सव मिलि कै नव नव जोवनवारी।
निरख्यौ मुख ससि प्रान-पिया को दीनो तन-मन वारी ॥

---

* कविवचन-सुधा खं० ७ सं० २६ (फाल्गुन शुक्ल ११ सं० १९३२) में प्रकाशित।

किये खेल आरम्भ प्रथमही पिय सो भानु-कुमारी ।
केसर छिरकि चंद मुख माड़्यौ आम-मौर सिर धारी ।।
तिय के भरत खेल माच्यौ मधि नर-नारिन के भारी ।
उड़्यौ रंग केसर चहुँ दिसि ते भइ अबीर अँधियारी ।।
निलज भरत अंकम आपुस मैं देत उचारी गारी ।
हो हो करि धावत गावत मिलि देत परसपर तारी ।।
जसुमति फगुआ देत सबनि को भूषन वसन सँवारी ।
सो सुख सोभा निरखि होत तहँ 'हरीचंद' बलिहारी ।।

अथ श्री सर्वोत्तम-स्तोत्र (भाषा)*

(सं० १९३३)

जयति आनंद रूप परमानंद कृष्णमुख
कृपानिधि दैवि उद्धारकारी।
स्मृति मात्र सकल आरतिहरन गूढ़
गुन भागवत अर्थ लीनो बिचारी ॥१॥
एक साकार परब्रह्म स्थापन-करन
चारहू वेद के पारगामी।
हरन मायावाद बहुवाद नास करि
भक्ति-पथ-कमल को दिवस स्वामी ॥२॥
शूद्र ललना लोक उद्धरन सामर्थ
गोपिकाधीश कृत अंगिकारी।
बल्लभी कृत मनुज अंगिकृत जनन
पै धरन मर्य्याद बहु करुनधारी ॥३॥
जगत-व्यापक दान करत सब वस्तु को
चरित जाके सकल अति उदारा।

---

* इसका एक संस्करण लीथो में पत्राकार छपा है, पर उसमें समय नहीं दिया है। इसके छपने की सूचना कवि वचन-सुधा (वैशाख कृ० ११ सं० १९३४) मे निकली थी।

आसुरी जनन मोहन करन हेत यह
ब्याज सो प्रकृति इव रूप धारा ॥४॥
अगिनि अवतार वल्लभ नाम शुभ रूप
सदा सज्जनन-हित करत जानी।
लोक-शिक्षा-करन कृष्ण की भक्ति करि
निखिल जग इष्ट के आपु दानी ॥५॥
सर्व लक्षननि-सम्पन्न श्रीकृष्ण को
ज्ञान प्रभु देत गुरु रूप धारी।
सदा सानंद तुंदिल पद्मदल-सरिस
नयन जुग जगत संतापहारी ॥६॥
कृपा करि दृष्टि की बृष्टि वर्धित किए
दासिका दास पति परम प्यारे।
रोष दृग करन मुरछित भक्ति द्वेषिगन
भक्तजन चरन सेवित दुलारे ॥७॥
भक्तजन सुख-सेव्य अति दुराराध्य
दुरलभ कुंज पद उग्र तेजधारी।
वाक्य रस-करन पूरन सकल जनन
मन भागवत-पय-सिंधु-मथनकारी ॥८॥
सार ताको जानि रास बनितान के
भाव सो सकल पूरित सुभेसा।
होत सनमुख देत प्रेम श्रीकृष्ण को
अविमुक्ति देत लखि वहत देसा ॥९॥
रास लीलैक तात्पर्य्य-मय रूप मुनि
देत करि कृपा बहु कथा ताकी।
त्यागि सब एक अनुभव करहु बिरह को
यहै उपदेस वानी सु जाकी ॥१०॥

भक्ति आचार उपदेस नित करत पुनि
कर्म मारग प्रवर्त्तन सु कीनो।
सदा यागादि मैं भक्ति मारग एक
करहु साधनहि उपदेस दीनो ॥११॥
पूर्ण आनंद-मय सदा पूरन काम
वाक्य-पति निखिल जग बिबुध भूपा।
कृष्ण के सहस शुभ नाम निज मुख कहे
भक्ति पर एक जाको सरूपा ॥१२॥
भक्ति आचार उपदेस हित शास्त्र के
वाक्य नाना निरूपन सु कीने।
भक्त-जन सदा घेरे रहत जिनन निज
प्रेम-हित प्रान-प्रन त्यागि दीने ॥१३॥
निज दास अर्थ-साधन अनेकन किए
जदपि प्रभु आप सब शक्तिकारी।
एक भुव लोक प्रचलित करन
भक्तिपथ कियो निज वंश पितु रूपधारी ॥१४॥
निज विमल वंस मैं परम माहात्म्य प्रभु
धर्‍यो सब जगत संदेहहारी।
पतिव्रता पति पारलौकिकैहिक दान
करत अधिकार जन को बिचारी ॥१५॥
गूढ़ मति हृदय निज अन्य अनभक्त कों
सकल आशय आपु कहत प्यारे।
जग उपासन आदि मारगादीन मैं
मुग्ध जन-मोह के हरनवारे ॥१६॥
सकल मारगन सो भक्ति मारग बीच
अति विलक्षण सु अनुभवहि मानै।

पृथक कहि शरण को मार्ग उपदेस करि
कृष्ण के हृदय की बात जानै ॥१७॥
प्रति क्षण गुप्त लीला नव निकुंज की
भरि रही चित्त मै सदा जाके।
सोइ कथा स्मरण करि चित्त आक्षिप्त वत
भूलि गइ सकल सुधि आये ताके ॥१८॥
व्रज प्रिय व्रजवास अतिहि प्रिय पुष्टि
लीला-करन सदा एकांत-चारी।
भक्तजन सकल इच्छा सुपूरन-करन
अतिहि अज्ञात लीला विहारी ॥१९॥
अतिहि मोहन निरासक्त जग भक्त
मात्रासक्त पतित पावन कहाई।
जस-गान करत जे भक्त तिनके
हृदय कमल मै वास जाको सदाई ॥२०॥
स्वच्छ पीयूष लहरी सदृस निज जसनि
तुच्छ करि अन्य रस दिये बहाई।
पर रूप कृष्ण-लीला अमृत रस
अखिल जन सीचि प्रेम मै दिए भिजाई ॥२१॥
सदा उत्साह गिरिराज के वास मे
सोई लीला प्रेम-पूर गाता।
यज्ञ हवि हरत पुनि यज्ञ आपुहि करत
अति बिसद चारहू फल के दाता ॥२२॥
शुभ प्रतिज्ञा सत्य जगत उद्धार की
प्रकृति सो दूर वहु नीति-ज्ञाता।
कीर्ति वर्द्धन करी सूत्र को भाष्य करि
कृष्ण इक तत्व के ज्ञान - दाता ॥२३॥

तूल मायावाद दहन-हित अग्नि वपु
ब्रह्म को वाद जग प्रगट कीनो।
निखिल प्राकृत रहित गुनन भूषित सदा
मंद मुसुकानि मन चोरि लीनो ॥२४॥
तीनहूँ लोक भूषन भूमि भाग्य वर
सहज सुंदर रूप वेद - सारं।
सदा सब भक्त प्रार्थित चरन कमल
रज धन रूप नौमि लक्ष्मण-कुमारं ॥२५॥
एक सत आठ ए नाम अभिराम नित
प्रेम सो जे जगत माँहि गावैं।
परम दुरलभ कृष्ण-अधर-अमृत-पान
स्वाद करि सुलभ ते सदा पावैं ॥२६॥
नाम आनंदनिधि वल्लभाधीश को
बिट्ठलेश्वर प्रकट करि दिखायो।
छोड़ि साधन सकल एक यह गाइकै
परम संतोष 'हरिचंद' पायो ॥२७॥

इति श्री मद्विट्ठलनाथ-चरण-पंकज-पराग-लेपनापसारितनिखिल-
कल्मष हरिश्चन्द्रकृत भाषान्तरित कीर्तनस्वरूप
श्री सर्वोत्तम स्तोत्रं समाप्तिमगमत् ॥
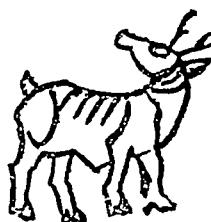
निवेदन-पंचक*

(सं० १९३३)

श्याम घन अब तौ जीवन देहु ।
दुसह दुखद दावानल ग्रीषम सो बचाइ जग लेहु ॥
तृनावर्त नित धूर उड़ावत बरसौ कह ना मेहु ।
'हरीचंद' जिय तपन मिटाओ निज जन पै करि नेहु ॥ १ ॥

श्याम घन निज छवि देहु दिखाय ।
नवल सरस तन साँवल चपल पीताम्बर चमकाय ॥
मुक्तमाल बगजाल मनोहर द्गन देहु दरसाय ।
श्रवन सुखद गरजनि बंसी-धुनि अब तौ देहु सुनाय ॥
ताप पाप सब जग को नासौ नेह-मेह बरसाय ।
'हरीचंद' पिय द्रवहु दया करि करुनानिधि ब्रजराय ॥ २ ॥

श्याम घन अब तौ बरसहु पानी ।
दुखित सबै नर नारी खग मृग कहत दीन सम बानी ॥

---

* यह पंचक कविवचन सुधा (चंद्रवार, असाढ़ शुक्ल १२ संवत् १९३३) मे प्रकाशित हुआ था । उस वर्ष वर्षा की कमी थी और इसी लिए यह लिखा गया था । इस संख्या के बाद की संख्या मे समाचार है कि जिस दिन यह प्रकाशित हुआ था, उसी दिन सायंकाल को वर्षा हुई थी । (सं०)

तपत प्रचण्ड सूर निरदय ह्वै दूबहु हाय झुरानी।
'हरीचंद' जग दुखित देखि कै द्रवहु आपुनो जानी॥

किते बरसाने-वारी राधा।
हरहु न जल बरसाइ जगत की पाप-ताप-मय बाधा॥
कठिन निदाघ लता वीरुध तृन पसु पंछी तन दाधा।
चातक से सब नभ दिसि हेरत जीवन बरसन साधा॥
तुम करुनानिधि जन-हितकारिनि-दया-समुद्र अगाधा।
'हरीचंद' याही तें सब तजि तुव पद-पदुम अराधा॥

जगत की करनी पै मति जैये।
करिकै दया दयानिधि माधो अब तौ जल बरसैये॥
देखि दुखी जग-जीव श्याम घन करि करुना अब ऐये।
'हरीचंद' निज बिरद याद करि सब को जीव बचैये॥५।
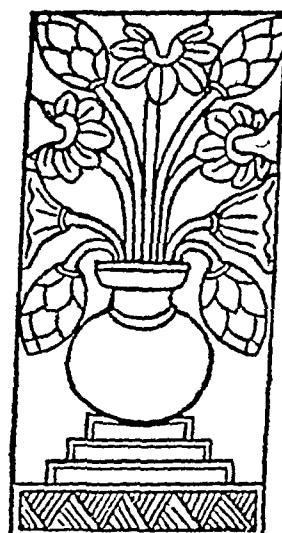
मानसोपायन

अग्रजोपम स्नेह-पूजास्पद प्रिय कुमार,

जब आपसे कुछ भी कहने की इच्छा करते है तो चित्त में कैसे विविध भाव उत्पन्न होते हैं। कभी भारतवर्ष के पुरावृत्त के प्रारंभ काल से आज तक जो बड़े बड़े दृश्य यहाँ बीते हैं और जो महायुद्ध, महा शोभा और महा दुर्दशा भारतवर्ष की हुई है, उनके चित्र नेत्र के सामने लिख जाते हैं। कभी हिंदुओ की दशा पर करुणा उत्पन्न होती है, कभी स्नेह कहता है कि हाँ यही अवसर है खूब जी खोल कर जो कुछ हृदय मे बहुत काल से भाव और उद्गार संचित है, उनको प्रकाश करो। पर साथ ही राजभक्ति और आपका प्रताप कहता है कि खबरदार हद से आगे न बढ़ना; जो कुछ बिनती करना बड़ी नम्रता और प्रमाण के साथ। इधर नई रोशनी के शिक्षित युवक कहते है—'दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा'। सुनते सुनते जी थक गया, कोई मस्तिष्क की बात कहो। उधर प्राचीन लोग कहते हैं हमारे यहाँ तो 'सर्व्वदेवमयो नृप.' लिखा ही है जितना बन सके इनका आदर करो। कितने यहाँ के निवासी ऐसे मूढ़ हैं कि इन बातों को अब तक जानते ही नही। जानें कहाँ से, हजारों बरस से राज-सुख से वंचित है। आज तक ऐसा शुभ संयोग आया ही न था कि आप सा सुखद स्वामी इनके नेत्र-गोचर हो। इसी से तो आपके आगमन से हम लोगो को क्या आनंद हुवा है, वह कौन जान सकता है। प्रिय! हम सब स्वभावसिद्ध राजभक्त है। बिचारे छोटे पद के अंगरेज़ो को हमारे

चित्त की क्या खबर है, ये अपनी ही तीन छटॉक पकाने जानते हैं। अतएव दोनों प्रजा एक-रस नहीं हो जाती; आप दूर बसे, हमारा जी कोई देखनेवाला नही, बस छुट्टी हुई। आपके आगमन के केवल स्मरण से हृदय गद्गद और नेत्र अश्रुपूर्ण हमी लोगो के हो जाते हैं और सहज मे आप पर प्राण न्योछावर करनेवाले हमीं लोग हैं, क्योंकि राजभक्ति भरतखंड की मिट्टी का सहज गुण और कर्त्तव्य धर्म्म है, पर कोई कलेजा खोल कर देखनेवाला नही। जाने दो इन पचड़ों से क्या काम। जब आपका आगमन सुना तभी से आपके यश-रूपी कीर्त्तिस्तंभ को आपके शुभागमन के स्मरणार्थ स्थापन करने की इच्छा थी, पर आधि-व्याधि से वह सुयोग तब न बना। यद्यपि कविता-कलाप तो उसी समय समाचार पत्रो में सूचना देकर एकत्र किया था, परंतु उनका प्रकाश न भया था सो अब जब कि हम दीनों की अवलंब अंब श्रीमती महारानी ने भारत-राजराजेश्वरी का पद ग्रहण किया और इस महत् मान से भारतवर्ष को अपनी अपार कृपा से सहज कृतकृत्य किया तो इसी शुभ मंगल अवसर पर यह पुस्तक प्रकाश करके हम भी आपके कोमल चरणों मे समर्पित करते हैं, कृपा-पूर्वक स्वीकार कीजिये और इसको कविता नहीं वरञ्च अपनी प्रजा के चित्त के पूर्ण उद्गार और समुच्छ्वास समझिए। जिस तरह आप और अनेक कौतुक देखते है, कृपापूर्वक 'इस प्रजा के चित्तरूपी आतशी शीशे से (क्योकि वह आपके वियोग और अपनी दुर्दशा से संतप्त हो रहा है) बनी हुई सैरबीन की भी सैर कीजिए और उस परिश्रम को क्षमा कीजिए जो इसके पढ़ने मे हो, क्योंकि हमने तो चाहा कि थोड़ा ही लिखे और यह बहुत थोड़ा ही है, पर आपको श्रम देने को बहुत है।

१ जनवरी १८७७ ई० } हरिश्चंद्र

आओ आओ हे जुवराज ।
धन-धन भाग हमारे जागे पूरे सब मन-काज ॥
कहँ हम कहँ तुम कहँ यह धन दिन कहँ यह सुभ संयोग ।
कहँ हतभाग भूमि भारत की कहँ तुम-से नृप लोग ॥
बहुत दिनन की सूखी, डाढ़ी, दीना भारत भूमि ।
लहिहै अमृत-वृष्टि सो आनँद तुव पद-पंकज चूमि ॥
जेहि दलमल्यौ प्रबल दल लैकै बहु विधि जवन-नरेस ।
नास्यौ धरम करम सवहिन के मारि उजास्यौ देस ॥
पृथीराज के मरें लख्यौ नहि सो सुख कबहूँ नैन ।
तरसत प्रजा सुनन को नित हीं निज स्वामी के बैन ॥
जदपि जवनगन राज कियो इतही बसिकै सह साज ।
पै तिनको निज करि नहि जान्यौ कबहूँ हिंदु समाज ॥
अकबर करिकै बुद्धिमता कछु सो मेट्यौ संदेह ।
सोउ दारा सिकोह लौं निबही औरंग डारी खेह ॥
औरहु औरंगजेब दियो दुख सब बिधि धरम नसाय ।
निज कुल की मरजाद-मान-बल-बुधिहू साथ घटाय ॥
ता दिन सो दुरलभ राजा-सुख इनहि इकंत निवास ।
राजभक्ति उत्साहादिक को इन कहँ नहि अभ्यास ॥
जदपि राज तुव कुल को इत बहु दिन सो बरसत छेम ।
तदपि राज-दरसन बिनु नहि नृप प्रजा माहिं कछु प्रेम ॥
सो अभाव सब तुव आवन सो मिट्यौ आज महराज ।
पूस्यौ प्रेम देस-देसन मे प्रमुदित प्रजा-समाज ॥
आवहु प्रिय नैनन मग बैठो हिय मै लेहुँ छिपाय ।
जाहु न फिरि तजि भारत को तुम हम सो नेह लगाय ॥

गुजराती भाषा

आवो आवो भारत राज भारत जोवाने ।
दई दरसन दुख एनूं जनम जनमनो खोवाने ॥
ज्यम चन्द्रोदय जोई चकोर जिय राचे रे ।
ज्यम नव घन आतां लखी मोर बन नाचे रे ॥
तेहूँ भारतवासी जनो तवागम चाहे जी ।
लखि सुख-ससि राजकुमार मुदित मन माहे जी ॥
आवो आवो प्यारा राजकुमार नई दऊँ जावाने ।
वाला भारत मां सुख बसो सनेह बधावाने ॥
नई भियूं प्रानप्रिय आजे अरज करूँ बोलीने ।
देऊँ आज लखाड़ी तमने हिरदो खोलीने ॥
म्हारा भारतवासी अनाथ नाथ बने नाथे जी ।
तेथी कोंवर बिराजो अइज अम्हारे साथे जी ॥
ज्यारे जवन-जलधि जले प्रथीराज-रबि नास्यौ रे ।
आजे त्यार थकी नही भारत तेज प्रकास्यौ रे ॥
ते तुव पद-नख-ससि किरिणे बाणो वापो जी ।
फरी फरया भाग्य भारत नां आनंद छायो जी ॥
वाला दीठड्यौ नव मुखचन्द कामणगारा नैणावे ।
वारी श्रवण पड्या श्रवणे तव अमृत बैणावे ॥
आजे उमग्यौ आनंद रस सुख चारे पासे छायो छे ।
तेथी तव जस परम पवित्र कविये गायो छे ॥

[सूचना—मानसोपायन संग्रह है। इसमे निम्नलिखित सज्जनों की कविता प्रकाशित हुई थी—

१.	श्रीबद्रीनारायण चौधरी प्रेमघन	हिंदी	२ सवैया २४ दोहे-सोरठे
२.	श्रीरामराज	,,	१९ ,, ,,
३.	श्रीकल्लू जी	,,	३ ,,
४.	श्रीलालबिहारी शुक्ल	,,	२ कवित्त
५.	श्रीनारायण कवि	,,	१ कुंडलिया ७ दो० सो०
६.	श्रीलोकनाथ शर्मा	,,	१० ,,
७.	श्रीकमलाप्रसाद मुं०	,,	१ दो० ७ कवित्त, छप्पय, सवैया
८.	श्रीसंतलाल	,,	९ छप्पय
९.	श्रीव्रजचंद्र	,,	१० दोहे।
१०.	श्रीसंतोषसिंह शर्मा	पंजाबी	२४ दोहे, ५ कवित्त
११.	श्रीदामोदर शास्त्री	महाराष्ट्री	७ पद

पं० बापूदेव शास्त्री, पं० सखाराम भट्ट, पं० वेंकटेश शास्त्री, पं० विष्णुदत्त पं० राजाराम गोरे, पं० कैलाशचंद्र शिरोमणि, पं० बालकृष्ण भट्ट, पं० गदाधर शर्मा मालवीय, पं० आबा शास्त्री हलदीकर, पं० विहारी शर्मा चतुर्वेदी, पं० गोपाल शर्मा, पं० लक्ष्मीनाथ द्रविड़, पं० रामचंद्र शास्त्री, पं० रामशरण त्रिपाठी, पं० रामचंद्र, पं० अनंतराम भट्ट, पं० चित्रधर मैथिल, पं० गोविंद शर्मा, पं० माधव राम, पं० भवानीप्रसाद, पं० रामप्रसाद मिश्र, पं० रामगोविंद मिश्र, पं० श्रीधर मैथिल, पं० शालिग्राम, पं० हरिनाथ द्विवेदी, गोस्वामी रामगोपाल शर्मा, पं० ईश्वरदत्त, पं० दामोदर शास्त्री, पं० रामकृष्ण पटवर्धन, पं० कान्तानाथ भट्ट, पं० शिवनारायण शर्मा ओझा, पं० विश्वनाथ शर्मा, पं० गोविंद भरद्वाज, पं० राम ब्रह्म शास्त्री, पं० विश्वनाथ शास्त्री, पं० परमेश्वर मैथिल, नारायण पं०, पं० विजयनाथ, पं० नंदकुमार शर्मा, पं० सोहन शर्मा,

पं० भद्दू शास्त्री अष्टपुत्र, पं० विश्वेश्वरनाथ, पं० उदयानंद शर्मा, पं० राजेश्वर द्रविड़, पं० केशव शास्त्री पर्वतीय, पं० काशीनाथ भट्ट, पं० बापू शर्मा, पं० शीतलाप्रसाद, पं० गणेशदत्त, पं० बस्तीराम द्विवेदी, पं० दामोदर भरद्वाज, पं० शिवकुमार मिश्र, पं० गंगाधर शास्त्री तैलंग, पं० रामकृष्ण पटवर्धन, पं० राजाराम, पं० राम मिश्र, पं० सरयूप्रसाद, पं० शीतलप्रसाद त्रिपाठी, श्री मकरध्वज सिंह, पं० कन्हैयालाल पांडेय, पं० बेचनराम त्रिपाठी, पं० राधाकृष्ण, पं० कालीप्रसाद शिरोमणि, पं० लक्ष्मीनाथ कवि, पं० माधोदास और पं० राधाकृष्ण ने संस्कृत मे श्लोक लिखे थे, जो इकतीस पृष्ठो मे छपे थे।

इसके अनंतर सोलह पृष्ठो में तालिब, अह्कर, संतलाल, हसन, नज्म, अमीर और ज़िया की उर्दू, ५२ पृष्ठो मे बॅगला, ४ पृष्ठों में अंग्रेज़ी और ८ पृष्ठो मे तैलगू आदि भाषाओं की कविताएँ उक्त अवसर के लिये लिखी हुई संगृहीत है। सन् १८७६ ई० में प्रिंस ऑव वेल्स ने काशी मे अस्पताल की नीव डाली थी। उस पर तीन तारीखें भी उर्दू में हैं और अमीर ने बा० हरिश्चंद्र की प्रशंसा भी मुसद्दस के अंत मे की है। सं०]
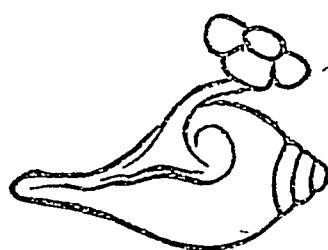
प्रातःस्मरण स्तोत्र*

(सं० १९३४)

सुमिरौ राधाकृष्ण सकल मंगल-मय सुन्दर।
सुमिरौ रोहिनि-नन्दन रेवतिपति कर हलधर॥
जसुदा, कीरति, भानु, नन्द, गोपी-समुदाई।
बृन्दावन गोकुल गिरिवर व्रज-भूमि सुहाई॥
कालिन्दी कलि के कलुष सब हारिनि सुमिरौ प्रेम-बल।
व्रज गाय बच्छ तृन तरु लता पसु पंछी सुमिरौ सकल॥ १॥

श्री गोपीजन-स्मरण

सुमिरौ श्री चंद्रावली मोहन-प्रान पियारी।
श्री ललिता रस-सलिता परम जुगल हितकारी॥
रस-शाखा हरिप्रिया विशाखा पूरन-कामा।
परम सभागा चन्द्रभगा, रस-धामा भामा॥
श्री चंपकलतिका, इंदुलेखा राधा-सहचरि सहित।
श्री स्वामिनि की आठौ सखी नित सुमिरौ करि प्रेम हित॥ २॥

---

* हरिप्रकाश यंत्रालय में पाठ के लिए पत्राकार छपा था, पर उसमे समय नही दिया है। कवि-वचन सुधा (९-४-१८७७ ई०) मे छपने की सूचना निकली थी।

अष्ट सखा—छप्पय

श्रीदामा सुखधाम कृष्ण को परम प्रान-प्रिय।
वसुदामा शुभ नाम दाम मनिमय जाके हिय॥
सुबल प्रबल परिहास-रसिक मंगल मधु मंगल।
लोक-सुखद ब्रज-लोक कृष्ण अनुरूप कृष्ण-फल॥
अरजुन-पालक गोवत्स बहु ऋषभ वृषभ जूथाधिपति।
हरिजू के आठ सखा सदा सुमिरत मंगल होत अति॥ ३॥

द्वारिका की लीला स्मरण

धाम द्वारिका कनक-भवन जादव नर-नारी।
उद्धव, सात्यकि, नारद, गरुड़ सुदर्शनचारी॥
रुक्मिनि, सत्या, भद्रा, शैव्या, नाग्नजिती पुनि।
जाम्बवती, लक्ष्मणा, मित्रबिन्दा, रोहिणि गुनि॥
इन आदि नारि सोलह सहस इनके सुत परिवार सह।
प्रद्युम्न पार्थ अनिरुद्ध जुत सुमिरौ दुख-नासन दुसह॥ ४॥

अथ लीला स्मरण

देवकि के घर जनमि नन्द घर मे चलि आए।
बकी तृनावृत अघ बक बछ बृष केसि नसाए॥
बाल-रूप कालीमर्दन सुरपति मद-भञ्जन।
गोचारक रस रास-रमन गोपी-मन-रञ्जन॥
कंसादि नास-कर सकल भुव-भार-उतारन रूप धरि।
सुमिरौ लीलामय नन्द-सुत अटल नित्य ब्रज-बास करि॥ ५॥

अथ अवतार स्मरण

मत्स कच्छ बाराह प्रगट नरहरि वपु बावन।
परशुराम श्री राम लक्ष्मण भरत शत्रुहन॥

पुनि बलराम सुबुद्ध कल्कि हरि दस बपु धारी।
चौबिस रूप अनेक कोटि लीला विस्तारी॥
अवतारी हरि श्रीकृष्ण बपु शुद्ध सच्चिदानन्दघन।
नित सुमिरत मंगल होत अति सुख पावत सब भक्त-जन॥ ६॥

अथ समुदाय स्मरण

गंगा गीता शङ्ख चक्र कौमोदकि पद्मा।
नंदक सारँग बान पास पद्मा-मुख सद्मा॥
बंशी माला शृंग वेत्र पीताम्बरादि कल।
पुण्यधाम हरि वासर वैष्णव धर्म्म विगत मल॥
हरि-प्रेम दास्य विश्वास दृढ़ तिलक छाप माला सुमिरि।
तुलसी हरि-प्रिय-समुदाय भजि नित सुमिरौ उठि प्रात हरि॥ ७॥

अथ श्री भागवत स्मरण

निखिल निगम को सार दिव्य बहु गुण-गण-भूषित।
आदि अनादि पुरान सरस सब भाँति अदूषित॥
शुक मुख भाखित मुक्त कथा परमारथ सोधक।
ब्रह्म-ज्ञानमय सत्यवती-नन्दन मन-बोधक॥
दस लक्षन लक्षित पाप-हर द्वादस शाखा सहित वर।
सुमिरौ अष्टादस सहस श्री ग्रंथ भागवत मोह-हर॥ ८॥

अथ प्राचीन भक्त स्मरण

सुमिरौ शुक नारद शिव अज नर व्यास परासर।
बालमीक पृथु अम्बरीप प्रह्लाद पुन्य-कर॥
पुण्डरीक भीष्मक शौनक पाण्डव गङ्गा-सुत।
हनूमान सुग्रीव विभीषन अङ्गद कपि जुत॥
शांडिल्य गर्ग मैत्रेय जय बिजय कुमुद कुमुदाक्ष भजि।
हरि-भक्त सुमिरि मन प्रात उठि नित प्रथमहि गृह-काज तजि॥ ९॥

अथ गुरु-परम्परा स्मरण

सुमिरौं श्री गोपीपति पद-पङ्कज अरुनारे।
श्री शिव नारद ब्यास बहुरि शुकदेव पियारे॥
विष्णु स्वामि पुनि गुरु-अवली सत सप्त सुमिरि मन।
बिल्वमंगल पुनि सुमिरौं थापन निज मत धरि तन॥
श्री वल्लभ बिट्ठल भय-हरन पुष्टि-प्रकाशक जग बिमल।
सुमिरौं नित प्रेम-परम्परा गुरुजन की निज भक्ति-बल॥१०॥

अथ गुरु-स्मरण

श्री बल्लभ सुमिरौ अरु श्री गोपीनाथ पियारे।
श्री बिट्ठल पुरुषोत्तम जग-हित नर-बपु धारे॥
श्री गिरिधर गोविन्द राय पुनि बालकृष्ण कहु।
गोकुलपति रघुपति जदुपति घनश्याम-भक्ति लहु॥
लक्ष्मी-रुक्मिणि-पद्मावती-पद-रज नित सिर धारिए।
श्री बल्लभ कुल को ध्यान मन कबहूँ नाहि बिसारिए॥११॥

अथ वैष्णव-स्मरण

श्री निम्बारक रामानुज पुनि मध्व जय ध्वज।
नित्यानंद अद्वैत कृष्ण चैतन्य व्यास भज॥
हित हरिबंश गदाधर श्री हरिदास मनोहर।
सूरदास परमानंद कुंभन कृष्णदास वर॥
गोविन्द चतुर्भुजदास पुनि नन्ददास अरु छीत कल।
नित सुमिरि प्रात मन उठत ही हरि-भक्तन के पद-कमल॥१२॥

दोहा

द्वादस द्वादस अर्द्ध पद प्रात पढ़ै जो कोय।
हरि-पद-बल 'हरिचन्द' नित मंगल ताको होय॥१३॥
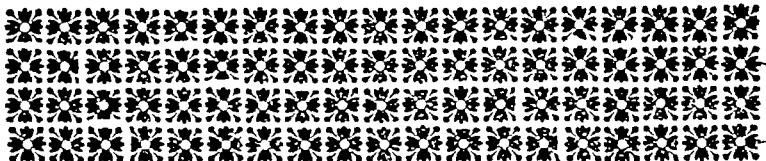
हिंदी की उन्नति पर व्याख्यान*

(सं० १९३४)

अहो अहो मम प्रान प्रिय आर्य भ्रातृ-गन आज ।
धन्य दिवस जो यह जुड़ो हिंदी हेत समाज ॥१॥
तामे आदर अति दिये मोहि तुम निज जन जान ।
जो बुलवायो मोहि इत दर्शन हित सन्मान ॥२॥
जदपि न मैं जानत कछू सब बिधि सों अति दीन ।
तदपि भ्रात निज जानिकै सबन कृपा अति कीन ॥३॥
भारत मे यह देस धनि जहाँ मिलत सब भ्रात ।
निज भाषा हित कटि कसे हम कहँ आज लखात ॥४॥
निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल ।
बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को सूल ॥५॥
पढ़े संस्कृत जनन करि पंडित भे विख्यात ।
पै निज भाषा ज्ञान बिन कहि न सकत एक बात ॥६॥
पढ़े फारसी बहुत विध तौहू भये खराब ।
पानी खटिया तर रहो पूत मरे बकि आब ॥७॥

---

* हिंदी भाषा के परमाचार्य श्रीयुत बाबू हरिश्चंद्र का लेकचर, जिसे बाबू साहब ने जून मास (ज्येष्ठ सं० १९३४) की हिंदीवर्द्धिनी सभा मे पढा था। (हिंदी प्रदीप खं० १ सं० १-२. काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा "हिंदी भाषा" नाम से पुस्तकाकार प्रकाशित।)

अंग्रेजी पढ़ि के जदपि सब गुन होत प्रवीन ।
पै निज भाषा ज्ञान बिन रहत हीन के हीन ॥८॥
यह सब भाषा काम की जब लौं बाहर वास ।
घर भीतर नहि कर सकत इन सों बुद्धि प्रकास ॥९॥
नारि पुत्र नहि समझहीं कछु इन भाषन माहिं ।
तासों इन भाषान सों काम चलत कछु नाहिं ॥१०॥
उन्नति पूरी है तबहि जब घर उन्नति होय ।
निज सरीर उन्नति किए रहत मूढ़ सब लोय ॥११॥
पिता विविध भाषा पढ़े पुत्र न जानत एक ।
तासो दोउन मध्य में रहत प्रेम अविवेक ॥१२॥
अँग्रेजी निज नारि को कोउ न सकत पढ़ाइ ।
नारि पढ़े बिन एक हू काज न चलत लखाइ ॥१३॥
गुरु सिखवत बहु भाँति लौं जदपि बालकन ज्ञान ।
पै माता-शिक्षा सरिस, होत तौन नहि ज्ञान ॥१४॥
जब अति कोमल जिय रहत तब बालक तुतरात ।
भूलत नहि सो बात जो तबै सिखाई जात ॥१५॥
भूलि जात बहु बात जो जोबन सीखत लोय ।
पै भूलत नहि बालकन सीख्यो सुनो जो होय ॥१६॥
जिमि लै काँची मृत्तिका सब कछु सकत बनाय ।
पै न पकाए पर चलत तामे कछू उपाय ॥१७॥
काँचे पर ता सों बनत जो कछु सो रह जात ।
चिन्ह सदा तिमि बाल सिसु शिक्षा नाहि भुलात ॥१८॥
सो सिसु-शिक्षा मातु-बस जो करि पुत्रहि प्यार ।
खान-पान खेलन समय सकत सिखाय बिचार ॥१९॥
लाल पुत्र करि चूमि मुख बिबिध प्रकार खेलाइ ।
माता सब कछु पुत्र को सहजहि सकत सिखाइ ॥२०॥

सो माता हिंदी विना कछु नहि जानत और ।
तासों निज भाषा अहै, सबही की सिरमौर ॥२१॥
पढ़ो लिखो कोउ लाख विध भाषा बहुत प्रकार ।
पै जबही कछु सोचिहो निज भाषा अनुसार ॥२२॥
सुत सो तिय सो मीत सो भृत्यन सो दिन रात ।
जो भाषा मधि कीजिये निज मन की बहु बात ॥२३॥
ता की उन्नति के किये सब विधि मिटत कलेस ।
जामें सहजहि देसकौ इन सब को उपदेश ॥२४॥
जद्यपि बाहर के जनन गुन सो देत रिझाय ।
पै निज घर के लोग कहँ सकत नाहि समझाय ॥२५॥
बाहर तो अति चतुर बनि कीनो जगत प्रबंध ।
पै घर को व्यवहार सब रहत अंध को अंध ॥२६॥
कै पहिने पतलून कै भये मौलवी खास ।
पै तिय सके रिझाय नहि जो गृहस्थ सुख बास ॥२७॥
इनकी सो अति चतुरता तिनको नाहि सुहात ।
ताही सो प्राचीन कवि कही भली यह बात ॥२८॥
खसम जो पूजै देहरा भूत-पूजनी जोय ।
एकै घर मे दो मता कुसल कहाँ से होय ॥२९॥
तासो जब सब होहि घर विद्या-बुद्धि-निधान ।
होइ सकत उन्नति तबै और उपाय न आन ॥३०॥
निज भाषा उन्नति बिना कबहुँ न ह्वैहै सोय ।
लाख अनेक उपाय यो भले करो किन कोय ॥३१॥
इक भाषा, इक जीव इक मति सब घर के लोग ।
तबै बनत है सबन सों मिटत मूढ़ता सोग ॥३२॥
और एक अति लाभ यह यामे प्रगट लखात ।
निज भाषा मे कीजिये जो विद्या की बात ॥३३॥

तेहि सुनि पावैं लाभ सब बात सुनै जो कोय ।
यह गुन भाषा और महँ कबहूँ नाही होय ॥३४॥
लखहु न अँगरेजन करी उन्नति भाषा माँहि ।
सब विद्या के ग्रंथ अंगरेजिन माँह लखाहि ॥३५॥
सब्द बहुत परदेस के उच्चारनहु न ठीक ।
लिखत कछू पढ़ि जात कछु सब बिधि परम अलीक ॥३६॥
पै निज भाषा जानि तेहि तजत नहीं अंग्रेज ।
दिन दिन याही को करत उन्नति पै अति तेज ॥३७॥
विबिध कला शिक्षा अमित ज्ञान अनेक प्रकार ।
सब देसन से लै करहु भाषा माँहि प्रचार ॥३८॥
जहाँ जौन जो गुन लह्यो लियो जहाँ सो तौन ।
ताही सों अंगरेज अब सब बिद्या के भौन ॥३९॥
पढ़ि बिदेस भाषा लहत सकल बुद्धि को स्वाद ।
पै कृतकृत्य न होत ये बिन कछु करि अनुवाद ॥४०॥
तुलसी कृत रामायनहु पढ़त जबै चित लाय ।
तब ताको आसय लिखत भाषा माँहि बनाय ॥४१॥
तासों सबहीं भाँति है इनकी उन्नति आज ।
एकहि भाषा मँह अहै जिनकी सकल समाज ॥४२॥
धर्म जुद्ध विद्या कला गीत काव्य अरु ज्ञान ।
सबके समझन जोग है भाषा माँहि समान ॥४३॥
भारत में सब भिन्न अति ताही सो उत्पात ।
बिबिध देस मतहू बिबिध भाषा बिबिध लखात ॥४४॥
सौंप्यौ ब्राह्मन को धरम तेई जानत वेद ।
तासो निज मत को लह्यो कोऊ कबहुँ न भेद ॥४५॥
तिन जो भाख्यो सोइ कियो अनुचित जदपि लखात ।
सपनहुँ नहि जानी कछू अपने मत की बात ॥४६॥

पढ़े संस्कृत बहुत बिध अंग्रेजी हू आप।
भाषा चतुर नहीं भये हिय को मिट्यो न ताप ॥४७॥
तिमि जग शिष्टाचार सब मौलवियन आधीन।
तिन सो सीखे बिनु रहत भये दीन के दीन ॥४८॥
बैठनि बोलनि उठनि पुनि हँसनि मिलनि बतरान।
बिन पारसी न आवही यह जिय निश्चय जान ॥४९॥
तिमि जग की बिद्या सकल अंगरेजी आधीन।
सबै जानि ताके बिना रहै दीन के दीन ॥५०॥
करत बहुत बिधि चतुरई तऊ न कछू लखात।
नहि कछु जानत तार मे खबर कौन बिधि जात ॥५१॥
रेल चलत केहि भाँति सो कल है काको नाँव।
तोप चलावत किमि सबै जारि सकत जो गाँव ॥५२॥
वस्त्र बनत केहि भाँति सो कागज केहि बिधि होत।
काहि कवाइद कहत है बाँधत किमि जल-सोत ॥५३॥
उतरत फोटोग्राफ किमि छिन मँह छाया रूप।
होय मनुष्यहि क्यो भये हम गुलाम ये भूप ॥५४॥
यह सब अंगरेजी पढ़े बिनु नहि जान्यो जात।
तासो याको भेद नहि साधारनहि लखात ॥५५॥
विना पढ़े अब या समै चलै न कोउ बिधि काज।
दिन दिन छीजत जात है या सो आर्य्य समाज ॥५६॥
कल के कल बल छलन सो छले इते के लोग।
नित नित धन सो घटत हैं बाढ़त है दुख सोग ॥५७॥
मारकीन मलमल बिना चलत कछू नहि काम।
परदेसी जुलहान कै मानहु भये गुलाम ॥५८॥
वस्त्र कॉच कागज कलम चित्र खिलौने आदि।
आवत सब परदेस सो नितहि जहाजन लादि ॥५९॥

इत की रूई सींग अरु चरमहि तित लै जाय।
ताहि स्वच्छ करि वस्तु बहु भेजत इतहि बनाय ॥६०॥
तिनही को हम पाइकै साजत निज आमोद।
तिन बिन छिन तृन सकल सुख, स्वाद विनोद प्रमोद ॥६१॥
कछु तो वेतन मे गयो कछुक राज-कर माँहि।
बाकी सब व्यौहार में गयो रह्यौ कछु नाहिं ॥६२॥
निरधन दिन दिन होत है भारत भुव सब भाँति।
ताहि बचाइ न कोउ सकत निज भुज बुधि-बल कांति ॥६३॥
यह सब कला अधीन है तामें इतै न ग्रन्थ।
तासों सूझत नाहि कछु द्रब्य बचावन पन्थ ॥६४॥
अंगरेजी पहिले पढ़ै पुनि विलायतहि जाय।
या विद्या को भेद सब तौ कछु ताहि लखाय ॥६५॥
सो तो केवल पढ़न में गई जवानी बीति।
तब आगे का करि सकत होइ बिरध गहि नीति ॥६६॥
तैसहि भोगत दण्ड बहु बिनु जानें कानून।
सहत पुलिस की ताड़ना देत एक करि दून ॥६७॥
पै सब विद्या की कहूँ होइ जु पै अनुवाद।
निज भाषा महँ तों सबै याको लहै सवाद ॥६८॥
जानि सकैं सब कछु सबहि बिबिध कला के भेद।
बनै बस्तु कल की इतै मिटै दीनता खेद ॥६९॥
राजनीति समझैं सकल पावहि तत्व बिचार।
पहिचानैं निज धरम को जानैं शिष्टाचार ॥७०॥
दूजे के नहि बस रहैं सीखै बिबिध विवेक।
होइ मुक्त दोउ जगत के भोगै भोग अनेक ॥७१॥
तासों सब मिलि छाँड़ि कै दूजे और उपाय।
उन्नति भाषा की करहु अहो भ्रात गन आय ॥७२॥

बच्यौ तनिकहू समय नहि तासो करहु न देर।
औसर चूके व्यर्थ की सोच करहुगे फेर ॥७३॥
प्रचलित करहु जहान मे निज भाषा करि जत्न।
राज-काज दरवार मे फैलावहु यह रत्न ॥७४॥
भाषा सोधहु आपनी होइ सबै एकत्र।
पढ़हु पढ़ावहु लिखहु मिलि छपवावहु कछु पत्र ॥७५॥
बैर बिरोधहि छोड़ि कै एक जीव सब होय।
करहु जतन उद्धार को मिलि भाई सव कोय ॥७६॥
आल्हा विरहहु को भयो अंगरेजी अनुवाद।
यह लखि लाज न आवई तुमहि न होत बिखाद ॥७७॥
अंगरेजी अरु फारसी अरवी संस्कृत ढेर।
खुले खज़ाने तिनहि क्यो लूटत लावहु देर ॥७८॥
सवको सार निकाल कै पुस्तक रचहु बनाइ।
छोटी वड़ी अनेक विध विविध विपय की लाइ ॥७९॥
मेटहु तम अज्ञान को सुखी होहु सब कोय।
बाल वृद्ध नर नारि सव विद्या संजुत होय ॥८०॥
फूट बैर को दूरि करि बॉधि कमर मजबूत।
भारत माता के बनो भ्राता पूत सपूत ॥८१॥
देव पितर सवही दुखी कष्टित भारत माय।
दीन दसा निज सुतन की तिनसो लखी न जाय ॥८२॥
कब लौ दुख सहिहौ सवै रहिहौ बने गुलाम।
पाइ मूढ़ कालो अरध-सिक्षित काफिर नाम ॥८३॥
विना एक जिय के भये चलिहै अव नहि काम।
तासों कोरो ज्ञान तजि उठहु छोड़ि विसराम ॥८४॥
लखहु काल का जग करत सोवहु अब तुम नाहि।
अव कैसो आयो समय होत कहा जग माहि ॥८५॥

बढ़न चहत आगे सबै जग की जेती जाति।
बल बुधि धन विज्ञान में तुम कहँ अबहूँ राति ॥८६॥
लखहु एक कैसे सबै मुसलमान क्रिस्तान।
हाय फूट इक हमहि में कारन परत न जान ॥८७॥
बैर फूट ही सों भयो सब भारत को नास।
तबहु न छाँड़त याहि सब बँधे मोह के फाँस ॥८८॥
छोड़हु स्वारथ बात सब उठहु एक चित होय।
मिलहु कमर कसि भ्रातगन पावहु सुख दुख खोय ॥८९॥
बीती अब दुख की निसा देखहु भयो प्रभात।
उठहु हाथ मुँह धोइ कै बाँधहु परिकर भ्रात ॥९०॥
या दुख सों मरनो भलो, धिग जीवन बिन मान।
तासो सब मिलि अब करहु बेगहि ज्ञान विधान ॥९१॥
कोरी बातन काम कछु चलिहै नाहिन मीत।
तासों उठि मिलि कै करहु बेग परस्पर प्रीत ॥९२॥
परदेसी की बुद्धि अरु दस्तुन की करि आस।
पर-बस ह्वै कब लौं कहो रहिहौ तुम ह्वै दास ॥९३॥
काम खिताब किताब सों अब नहि सरिहै मीत।
तासों उठहु सिताब अब छाँड़ि सकल भय भीत ॥९४॥
निज भाषा, निज धरम, निज मान करम ब्यौहार।
सबै बढ़ावहु बेगि मिलि कहत पुकार पुकार ॥९५॥
लखहु उदित पूरब भयो भारत-भानु प्रकास।
उठहु खिलावहु हिय-कमल करहु तिमिर दुख नास ॥९६॥
करहु बिलम्ब न भ्रात अब उठहु मिटावहु सूल।
निज भाषा उन्नति करहु प्रथम जो सब को मूल ॥९७॥
लहहु आर्य्य भ्राता सबै विद्या बल बुधि ज्ञान।
मेटि परस्पर द्रोह मिलि होहु सबै गुन-खान ॥९८॥

अपवर्गदाष्टक*

(सं० १९३४)

परब्रह्म परमेश्वर परमातमा परात्पर ।
परम पुरुष पदपूज्य पतित-पावन पद्मावर ।।
परमानन्द प्रसन्नबदन प्रभु पद्म-विलोचन ।
पद्मनाभ पुण्डरीकाक्ष प्रनतारति मोचन ।।
पुरुपोत्तम प्यारे भाखिए संक तजै 'हरिचंद' जिमि ।
तुम नाम पवर्गी पाइ प्रिय अपवर्गीगति देत किमि ।। १ ।।

फनपति फनप्रति फूँकि बाँसुरी नृत्य प्रकासन ।
फनिपति-नाथ फनीश-शयन फनि वैरि कृतासन ।।
फैली फिरि फिरि चन्द्रफेन सी बदन-कांतिवर ।
फलस्वरूप फवि रही फूल-माला गल सुंदर ।।
पुरुषोत्तम प्यारे भाखिए संक तजै 'हरिचद' जिमि ।
तुम नाम पवर्गी पाइ प्रिय अपवर्गी गति देत किमि ।। २ ।।

व्रजपति बृन्दावन-विहार-रत विरह-नसावन ।
बिष्णु ब्रह्म बरदेश वरहवर सीस सुहावन ।।

---

* कवि-वचन सुधा (शनिवार अ० ज्येष्ठ कृष्ण ६ संवत् १९३४) मे प्रकाशित ।

वनमाली बलरामानुज बिधु बिधि-बंदित बर ।
बिबुधाराधित बिधुमुख बुधनत बिदित बेनुधर ॥
पुरुषोत्तम प्यारे भाखिए संक तजै 'हरिचंद' जिमि ।
तुम नाम पवर्गी पाइ प्रिय अपवर्गी गति देत किमि ॥ ३ ॥

भवकर भवहर भवप्रिय भद्राग्रज भद्रावर ।
भक्तिवश्य भगवान भक्तवत्सल भुव-भरहर ॥
भव्य भावनागम्य भामिनीभाव विभावित ।
भाव गतामृतचन्द्र भागवतभय-विद्रावित ॥
पुरुषोत्तम प्यारे भाखिए संक तजै 'हरिचंद' जिमि ।
तुम नाम पवर्गी पाइ प्रिय अपवर्गी गति देव किमि ॥ ४ ॥

माधव मनमथमनमथ मधुर मुकुन्द मनोहर ।
मधुमरदन मुरमथन मानिनी-मान-मंदकर ॥
मरकतमनि-तन मोहन मंजुल नर मुरलीकर ।
माथे मत्त मयूर मुकुट मालती-माल गर ॥
पुरुपोत्तम प्यारे भाखिए संक तजै 'हरिचंद' जिमि ।
तुम नाम पवर्गी पाइ प्रिय अपवर्गी गति देत किमि ॥ ५ ॥

बृंदा बृंदावनी बिदित बृखभानु-दुलारी ।
परा परेशा प्रिया पूजिता भव-भयहारी ॥
व्रजाधीश्वरी भामा मोहन-प्रानपियारी ।
व्रजविहारिनी फलदायिनि वरसाने-वारी ॥
पुरुपोत्तम प्यारे भाखिए संक तजै 'हरिचंद' जिमि ।
तुम नाम पवर्गी पाइ प्रिय अपवर्गी गति देत किमि ॥ ६ ॥

विष्णुस्वामि पथ प्रथित विल्वमंगल मतमण्डन ।
मिथ्यावाद-विनासकरन मायामत - खण्डन ॥

भारद्वाज सुगोत्र विप्रवर वेद बादव्रत ।
भक्तपूज्य भुवि भक्ति-प्रचारक भाष्यरचन-रत ॥
पुरुषोत्तम प्यारे भाखिए संक तजै 'हरिचंद' जिमि ।
तुम नाम पवर्गी पाइ प्रिय अपवर्गी गति देत किमि ॥ ७ ॥

व्रजवल्लभ बल्लभ बल्लभ बल्लभ-बल्लभवर ।
पद्मावतिपति बालकृष्ण पितु भुविस्ववंसधर ॥
मथन भागवत समुद भामिनी भाव विभावित ।
प्रगट पुष्टिपथकरन प्रथित पतितादिक पावित ॥
विट्ठल प्रभु प्यारे भाखिए संक तजै 'हरिचंद' जिमि ।
तुम नाम पवर्गी पाइ प्रिय अपवर्गी गति देत किमि ॥ ८ ॥

मनोमुकुल-माला

अर्थात्

राजराजेश्वरी आर्य्येश्वरी भारताधीश्वरी श्री १०८ विजयिनी देवी के चरण-तामरस में हरिश्चंद्र द्वारा समर्पित वाक्य-पुष्पोहार ।

(सं० १९३४)

अथ इंगलैंडी-पारसीक-वर्ण-चित्रिता
राजराजेश्वरी आशीः ।

Gवहु Eस अCस बल हरहु प्रजन की Pर ।
सरU जमुना गंग मैं जब लौं थिर जग नीर ॥ १ ॥
J Kवल तुव दास हैं नासहु तिनकी R ।
बढै सY तेज नित Tको अचल लिलार ॥ २ ॥
भारत के Aकत्र सब Vर सदा बल Pन ।
Bसहु बिस्वा ते रहैं तुमरे नितहि अधीन ॥ ३ ॥
ح ر ب ح ر सवै ت ر विना कل ।
गलै د नहिं सत्रु को तुव सनमुख गुन-धाम ॥ ४ ॥
अرई कीरति छई रहै अع हराज ।
بर بर बरनत सवै ے कवि यातें आज ॥ ५ ॥
थाے थिर करि राज - गन अपने अपने ठौर ।
तासों तुम سहि भई महरानी जग और ॥ ६ ॥*

---

*जीवहु ईस असीस बल हरहु प्रजन की पीर ।

अथ अङ्कमयी

राजराजेश्वरी-स्तुति

करि वि ४ देख्यौ बहुत जग बिनु २स न१ ।
तुम बिनु हे विक्टोरिये नित ९०० पथ टेक ॥१॥
ह ३ तुम पर सैन लै ८० कहत करि १०० ह ।
पै बिन७ प्रताप-बल सत्रु मरोरे भौह ॥२॥
सो १३ ते लोग सब बिल१७ त सचैन ।
अ ११ ती जागती पै सब ६ न दिन-रैन ॥३॥
लखि तुव मुख २६ सि सबै कै १६ त अनंद ।
निहचै २७ की तुम मै परम अमंद ॥४॥
जिमि ५२ के पद तरें १४ लोक लखात ।
तिमि भुव तुव अधिकार मोहि बिस्वे २० जनात ॥५॥
६१ खल नहि राज मै २५ वन की वाय ।
तासो गायो सुजस तुव कवि ६ पद हरखाय ॥६॥

सरयू जमुना गंग मैं जब लौं थिर जग नीर ॥
जे केवल तुव दास है नासहु तिनकी आर ।
बढे सवाई तेज नित टीको अचल लिलार ॥
भारत के एकत्र सब वीर सदा बल-पीन ।
वीसहु विस्वा ते रहै तुमरे नितहि अधीन ॥
चेरे से हेरे सबै तेरे बिना कलाम ।
गलै दाल नहि सत्रु की तुव सनमुख गुनधाम ॥
अमीमई कीरति छई रहै अजी महराज ।
बेर बेर बरनत सबै ये कवि यातें आज ॥
थापे थिर करि राज-गन अपने अपने ठौर ।
तासो तुम सी नहि भई महरानी जग और ॥

किये १०००००००००००० बल १०००००००००
के तनिकहि भौंह मरोर ।
४० की नहिं अरिन की सैन सैन लखि तोर ॥७॥
तुव पद १०००००००००००००००० प्रताप को
करत सुकवि पि १००००००० ।
करत १००००००० वहु १००००० करि
होत तऊ अति थोर ॥८॥
तुम ३१ व मै बड़ी तातें बिरच्यौ छन्द ।
तुव जस परिमल ।।। लहि अंक-चित्र हरिचंद ॥९॥❀

❀ करि विचार देख्यौ बहुत जग बिनु दोस न एक ।
तुम बिन हे विक्टोरिये नित नव सौ पथ टेक ॥
हती न तुम पर सैन लै असी कहत करि सौंह ।
पै बिनसात प्रताप बल सत्रु मरोरै भौंह ॥
सोते रहते लोग सब विलसत रहत सचैन ।
अग्या रहती जागती पै सब छन दिन रैन ॥
लखि तुव मुख छबि ससि सबै कैसो रहत अनंद ।
निहचै सत्ता ईस की तुम मै परम अमंद ॥
जिमि बावन के पद तरैं चौदह लोक लखात ।
तिमि भुव तुव अधिकार मोहि बिस्वे बीस जनात ॥
इक सठ खल नहिं राज में पची सवन की घाय ।
तासो गायो सुजस तुव कवि षट्-पद हरखाय ॥
किये खरब बल अरब के तनिकहिं भौंह मरोर ।
चालि सकी नहिं अरिन की सैन सैन लखि तोर ॥
तुव पद पद्म प्रताप को करत सुकवि पिक रोर ।
करत कोटि बहु लक्ष करि होत तऊ अति थोर ॥
तुम इक ती सब में बड़ी ताते बिरच्यो छंद ।
तुव जस परिमल पौन लहि अंक-चित्र हरिचंद ॥

भाषा सहज

कविता

धन्य धन्य दिन आजु को धन धन भारत-भाग ।
अतिहि बढ़ायो सहज निज दोऊ दिसि अनुराग ॥ १ ॥
आजु मान अति ही लह्यो आरज भारत देस ।
भारत की राजेस्वरी भए अनंद बिसेस ॥ २ ॥
प्रथम शमीरामा* भई दूजी भई न और ।
सो पूजी तुम विजयिनी महरानी बनि ठौर ॥ ३ ॥
विजय मित्र जय विजयपति अजय कृष्ण भगवान ।
करहि विजयिनी विजय नित दिन दिन सह कल्यान ॥ ४ ॥
नारी दुर्गा रूप सब † राजा कृष्ण समान ‡ ।
शक्ति शक्तिमत तुम दोऊ यासो अतिहि प्रधान ॥ ५ ॥
और देश के नृप सबै कहवावत महराज ।
सो मेटी जिय सत्य तुम है कै राजधिराज ॥ ६ ॥
होइ भारताधीस्वरी आरज-स्वामिन आज ।
तुम द्वै + आरज जाति कहँ मिलयो धन यह राज ॥ ७ ॥

रंग चित्र

——दुति करि बैरि झट ——मुख मसि लाय ।
——पीरजन ——लित ——हि इत पठवाय ॥ १ ॥ ×

---

* पद्म पुराण मे भारत को जीतनेवाली शमीरामा नामक देवी का विजयदशमी के दिन शमी वृक्ष मे पूजन का विधान है, जिसको इतिहास में Queen Semiremis कहते है ।

† स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु—दुर्गा पाठ ।

‡ नराणां च नराधिपः—श्री गीता ।

\+ हिंदू और अंगरेज ।

× (पीरे) दुति करि बैरि झट (कारे) मुख मसि लाय ।
(हरे) पीर जन (नी ल) लित (लाल) हि इत पठवाय ॥

श्री राज-राजेश्वरी-स्तुति

संस्कृत छंद में

श्रीमत्सर्वगुणाम्बुधेर्जनमनो वाणी विदूराकृते-
र्नित्यानंदघनस्य पूर्ण करुणाऽऽसारैर्जनान् सिचतः।
शक्तिः श्रीपरमेश्वरस्य जनताभाग्यैरवाप्तोदया-
साम्राज्यैकनिकेतनं विजयिनी देवी वरी वृध्यते ॥ १ ॥

नानाद्वीप - निवासिनो नृपतयः स्वैरुत्तमाङ्गैर्नतै-
रादेशाक्षरमालिकां यदुदितां मालामिवाबिभ्रति।
यत्कीर्तिः शरदिंदुसुन्दररुचिर्व्याप्नोति कृत्स्नां मही।
सेयं सर्व जनातिगस्वविभवा कासां गिरां गोचरां ॥ २ ॥

एषा यद्यपि सार्वभौमपदवीं प्राप्ता प्रतापैर्निजै-
र्वैरिव्रातमहीधराशनिसमैर्भूपालनैकव्रतैः।
आर्यावर्त जमर्त्य भाग्य निवहैर्भूयोऽधुनोदित्वरैः
स्वीकृत्या जनयन्मुदं मनसिनः साऽऽर्येश्वरीति प्रथाम् ॥ ३ ॥

कर्णाकर्णिकया गते श्रुतिपथं वार्ताऽमृतेऽस्मिन्वयं
विन्दामो यममन्दमात्तपुलका आनंदथुं संततम्।
अप्राप्यातितनौ तनाववसरं तेनेव संचोदिताः
श्रीमत्याः परमेश्वरार्चिरतरं संप्रार्थयामः शिवम् ॥ ४ ॥

दीनानाथ जनावनोद्यतमना मानादिनानाविध-
श्रीमत्सर्वगुणावनिर्नयघना संमोदयित्री बुधान्।
जीयादुज्ज्वल कीर्तिरार्तिशमिनी मूर्तिः परस्ये शितुः
पुत्रैरात्मसमैः समं विजयिनी देवी सहस्रं समाः ॥ ५ ॥

गजल

(सन् १८७६)

मादये तारीख

[विक्टोरिया शाहेशाहान हिन्दोस्तान]

उसको शाहनशही हर बार मुबारक होवे।
कैसरे हिंद का दरवार मुबारक होवे॥
वाद मुद्दत के है देहली के फिरे दिन या रब।
तख्त ताऊस तिलाकार मुबारक होवे॥
वाग़बाँ फूलों से आबाद रहे सहने चमन।
बुलबुलो गुलशने बे-खार मुबारक होवे॥
एक इस्तूद मे है शेखो बिरहमन दोनो।
सिजदः इनको उन्हे जुन्नार मुबारक होवे॥
मुजदए दिल कि फिर आई है गुलिस्ताँ मे बहार।
मैकशो खानये खुम्मार मुबारक होवे॥
दोस्तो के लिए शादी हो अदू को ग़म हो।
खार उनको इन्हे गुलजार मुबारक होवे॥
जमजमो ने तेरे बस कर दिए लब बंद 'रसा'।
यह मुबारक तेरी गुफ्तार - मुबारक होवे॥
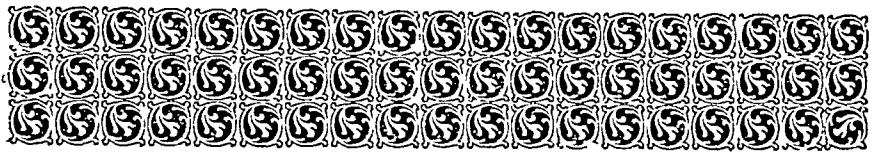
वेणु-गीति

(सं० १९३४)

(श्री चंद्रावली मुख-चकोरी विजयते)

दोहा

जै जै श्री घनश्याम वपु जै श्री राधा बाम।
जै जै सब ब्रज-सुंदरी जै बृंदाबन धाम ॥१॥
मायावाद-मतंग-मद हरत गरजि हरि नाम।
जयति कोऊ सो केसरी, बृंदावन बन धाम ॥२॥
गोपीनाथ अनाथ-गति जग-गुरु विट्ठलनाथ।
जयति जुगल वल्लभ-तनुज गावत श्रुति गुनगाथ ॥३॥
श्री बृंदाबन नित्य हरि गोचारन जब जाहि।
बिरह-बेलि तबही बढ़े गोपी-जन उर माहि ॥४॥
तब हरि-चरित अनेक विधि गावहि तनमय होइ।
करहि भाव उर के प्रगट जे राखे बहु गोइ ॥५॥
जो गावहिं ब्रज भक्त सब मधुरे सुर सुभ छंद।
रसना पावन करन को गावत सोइ 'हरिचंद ॥६॥

राग सोरठ तिताला

सखी फल नैन धरे को एह।
लखिबो श्री ब्रजराज-कुँवर को गौर साँवरी देह ॥
सखन संग वन ते वनि आवत करत वेनु को नाद।
धन्य सोई या रस को जानै पान कियो है स्वाद ॥

यह चितवनि अनुराग भरी सी फेरनि चारहुँ ओर ।
'हरीचंद' सुमिरत ही ताके बाढ़त मैन-मरोर ॥ १ ॥

सखी लखि दोउ भाइन को रूप ।
गोप-सखा-मंडल-मधि राजत मनु द्वै नट के भूप ॥
नवदल मोरपच्छ कमलन की माल बनी अभिराम ।
ता पै सोहत सुरँग उपरना वेप बिचित्र ललाम ॥
नटवर रंगभूमि मे सोभित कबहुँ उठत है गाय ।
'हरीचंद' ऐसी छबि लखि कै बार बार बलि जाय ॥ २ ॥

राग देस होरी का ताल

बंसी कौन सुकृत कियौ ।
गोपिकन को भाग याने आपुही लै पियौ ॥
करत अमृत-पान आपुन औरहू को देत ।
बचत रस सो पिवत हिदिनी बृक्ष लता समेत ॥
प्रगट हिदिनी तटनि तृन पुन श्रवत मधु तरु-डार ।
होत याहि रोमांच वा को वहत आँसू-धार ॥
वेन-पुत्र सुपुत्र लखिकै करत दोउ आनंद ।
आपु हरी न होत अचरज यह बड़ो 'हरिचंद' ॥ ३ ॥

राग मल्लार आडा चौताला

बढ़ी जग कीरति बृंदावन की ।
श्री जसुदानंदन की जापै छाप भई चरनन की ।
बेनु-धुनि सुनि जहाँ नाचत मत्त होइ मयूर ।
सिखर पै गिरिराज के सब संग को करि दूर ॥
सबै मोहत देव नर मुनि नदी खग मृग आन ।
ता समै यह मोर नाचत सुनत बंसी - तान ॥

पच्छ यातें धरत सिर पैं श्याम नटवर-राज।
कहत इमि 'हरिचंद' गोपी बैठि अपुन समाज ॥ ४ ॥

विहाग तिताला

धन्य ये मूढ़ हरिन की नार।
पाइ बिचित्र बेष नँदनंदन नीके लेहि निहारि ॥
मोहित होइ सुनहि बंसी-धुनि श्याम हरिन लै संग।
प्रनय समेत करहि अवलोकन बाढ़त अंग अनंग ॥
जानि देवता बन को मानहुँ पूजहि आदर देहि।
'हरीचंद' धनि धनि ये हरिनी जन्म सुफल करि लेहिं ॥ ५ ॥

राग सोरठ तिताला

बिमानन देव-बधू रहीं भूलि।
बनिताजन मन नैन महोत्सव कृष्ण-रूप लखि फूलि ॥
सुनिकै अति बिचित्र गीतन को बंसी की धुनि घोर।
थकित होत सब अंग अंग मैं बाढ़त मैन मरोर ॥
खुलि खुलि परत फूल की कबरी नीबी की सुधि नाहिं।
'हरीचंद' कोउ चलन न पावत या नभ-पथ के माहि ॥ ६ ॥

देस तिताला

लखो सखि इन गौवन को हाल।
ऐसी दसा पसुन की है जहँ हम तो हैं ब्रज-बाल।
कृष्णचंद्र के मुख सो निकसै जो बंसी की तान।
तो अमृत कों पान करहि ये ऊँचे करि करि कान ॥
बछरा थन मुख लाइ रहे नहि पीवत नहि तृन खात।
थन तें पय की धार बहत है नैनन ते जल जात ॥
इक टक लखत गोविदचंद कों पलक परत नहि नैन।
'हरीचंद' जहाँ पसु की यह गति अवलन कों कित चैन ॥ ७ ॥

सोरठ मल्लार तिताला

धन्य ये मुनि बृंदावन-बासी ।
दरसन हेतु बिहंगम ह्वै रहे मूरति मधुर उपासी ॥
नव कोमल दल पल्लव द्रुम पै मिलि बैठत हैं आई ।
नैननि मूँदि त्यागि कोलाहल सुनहि बेनु-धुनि माई ॥
प्राननाथ के मुख की बानी करहि अमृत-रस-पान ।
'हरीचंद' हम को सोउ दुर्लभ यह बिधि की गति आन ॥८॥

सोरठ तिताला

अहो सखि जमुना की गति ऐसी ।
सुनत मुकुंद-गीत मधु श्रवनन बिह्वल ह्वै गई कैसी ॥
भँवर पड़त सोइ काम-बेग-सो थकित होत गति भूली ।
तटनि घास अंकुरित देखियत सोइ रोमावलि फूली ॥
चुंबन हित धावत लहरन सो कर लै कमल अनेक ।
मानहुँ पूजन-हेत चरन को यह इक कियो बिबेक ॥
चरन-कमल के सदस जानि तेहि निसि-दिन उर पैं राखै ।
'हरीचंद' जहँ जल की यह गति अबलन की कहा भाखै ॥९॥

बिहाग आड़ा चौताला

जहँ जहँ राम-कृष्ण चलि जाही ।
तहँ तहँ आतप जानि देव सब दौरि करहि तन छाँही ॥
खेलहि संग गोप के बालक चरहि गऊ सुख पाई ।
तिन के मध्य बने दोउ राजत मुरली मधुर बजाई ॥
प्रेम मगन ह्वै सुरँग फूल सब गगन आइ बरसावै ।
कठिन भूमि कोमल पद लखि कै मनु पाँवड़े बिछावै ॥
दूर देस सो आइ देवता रूप-सुधा नित पीयै ।
'हरीचंद' बसि एक गाँव बिनु दरसन कैसे जीयै ॥१०॥

कान्हरा आड़ा चौताला

अहो सखी धनि भीलन की नारि ।
हरि-पद-पंकज को श्री कुंकुम लेहि कुचन पै धारि ॥
तन-सिंगार जो ब्रज-जुवतिन को प्रान-पिया पद लायौ ।
सो बन-गवन समै ब्रज तृन के पातन मै लपटायौ ॥
हरि-पद-तल की आभा सों सो अरुन ह्वै रह्यौ मोहै ।
भक्तन को अनुराग मनहुँ यह चरनन लाग्यौ सोहै ॥
ताहि देखि भई बिकल काम-बस कर सों लेहि उठाई ।
निज मुख मै दोउ कुच मै लावहि मनसिज-ताप नसाई ॥
जगबंदन नँदनंदन के पग-चंदन भीलिन पावैं ।
'हरीचंद' हम को सोउ दुर्लभ एकहि जात कहावैं ॥११॥

राग सारंग वा विहाग ताल चर्चरी

हरि-दास-बर्य्य गिरिराज धन धन्य
सखि राम घनश्याम करैं केलि जापै ।
चरन के स्पर्श सों पुलकि रोमांच भयौ
सोई सब बृक्ष अरु लता तापैं ॥
झरत झरना सोई प्रेम-अँसुवा बहत
नवत तरु-डार मनुहार करहीं ।
परम कोमल भयो है यंगवीन (?) सम
जानि जापैं कृष्ण-चरन धरहीं ॥
करत आदर सहित सबन की पहुनई
संग के गोप गो-ब्रच्छ लेहीं ।
पत्र फल मधुर मधु स्वच्छ जल तृन छाँह
आदि सब वस्तु गिरिराज देहीं ॥

करहि बहु केलि हरि खेल खेलहि संग
ग्वालगन परम आनंद पावैं ।
देखि 'हरीचंद' छबि मुदित बिथकित चकित
प्रेम भरि कृष्ण के गुनहि गावैं ॥१२॥

सोरठ तिताला

सखी यह अति अचरज की बात ।
गोप सखा अरु गोधन लै जब राम कृष्ण बन जात ॥
बेनु बजावत मधुरे सुर सों सुनि कै ता धुनि कान ।
भूलि जात जग मैं सब की गति सुनत अपूरब तान ॥
बृक्षन कौ रोमाच होत है यह अचरज अति जान ।
थावर होइ जात है जंगम जंगम थावर मान ॥
गोबंधन कंधन पै धारे फेटा झुकि रह्यो माथ ।
मत्त भृंग-जुत है बन-माला फूल-छरी पुनि हाथ ॥
बेनु बजावत गीतन गावत आवत बालक संग ।
'हरीचंद' ऐसो छबि निरखत बाढ़त अंग अनंग ॥१३॥

दोहा

कृष्णचंद्र के बिरह मैं बैठि सबै ब्रज-बाल ।
एहि बिधि बहु बातै करत तन सुधि बिगत बिहाल ॥ १ ॥
जब लौ प्यारे पीय को दरस होत नहि नैन ।
इक छन सौ जुग लौ कटत परत नही जिय चैन ॥ २ ॥
साँझ समै हरि आइ कै पुरवत सब की आस ।
गावत तिनको बिमल जस 'हरीचंद' हरि-दास ॥ ३ ॥

श्री नाथ-स्तुति

(सं० १९३४)

छप्पै

जय जय नंदानंद-करन बृषभानु - मान्यतर ।
जयति यशोदा-सुअन कीर्त्तिदा कीर्त्तिदानकर ॥
जय श्री राधा-प्राण-नाथ प्रणतारति-भंजन ।
जय बृंदाबन-चन्द्र चन्द्रवदनी—मनरंजन ॥
जय गोपति गोपति गोपपति गोपीपति गोकुल-शरण ।
जय कष्ट-हरण करुनाभरण जय श्री गोवर्द्धन-धरण ॥ १ ॥

जय जय बकी-बिनाशन अघ-बक-बदन—विदारण ।
जय बृंदाबन—सोम व्योम-तमतोम—निवारण ॥
जयति भक्त-अवलम्ब प्रलम्ब प्रलम्ब-विनासन ।
जय कालिय-फन प्रति अति द्रुत गति नृत्य प्रकाशन ॥
श्रीदाम-सखा घनश्याम-वपु वाम-काम-पूरन-करण ।
जय ब्रह्मधाम अभिराम रामानुज श्रीगिरिवर-धरण ॥ २ ॥

जयति वल्लभी-वल्लभ वल्लभ वल्लभ-वल्लभ ।
जय पल्लवद्युति अधर भल्ल वरजित कटाक्ष प्रभ ॥
उर-कृत मल्ली माल जयति ब्रज पल्ली - भूपन ।
ब्रजतरु-वल्ली-कुंज-रचित हल्लीश मुदित मन ॥
जय दुष्ट-काल वनमाल गर भक्तपाल गजचाल-चय ।
कृत ताल नृत्य उत्ताल गति गोप-पाल नँदलाल जय ॥ ३ ॥

श्री नाथ स्तुति

जय धृतवरहापीड़ कुवलयापीड़ पीड़कर ।
चूर करन चानूर मुष्टिवल मुष्टि-दर्पदर ।।
जयति कंस विध्वंस-करन बिधु-वंस-अंसधर ।
परम हंस प्रिय अति प्रशंस अवतंस लसित वर ।।
जय अनिर्वाच्य निर्वाणप्रद नित अर्वाच्यहु प्राच्यतर ।
दुर्वारार्बुदकर्बुरदलन श्रुति-निर्वादित ब्रह्म-वर ।। ४ ।।

जयति पार्वती-पूज्यपूज्य पतिपर्व दत्त सुख ।
पांडवगुर्वीत्रातोर्वीपति सर्वरीश मुख ।।
हृतसुपर्व्व वृषपर्वादिकबर्बरदर्वी हुत ।
जय अथर्वनुत गान्धर्वीयुत गन्धर्व - स्तुत ।।
दुर्वासाभाषित सर्वपति अर्व खर्व जन - उद्धरण ।
जय शक्रगर्वकृत खर्व पर्वत पूजित पर्वतधरण ।। ५ ।।

जय नर्तनप्रिय जय आनर्त्त-नृपति-तनया-पति ।
तृनावर्त्तहर कृपावर्त्त जय जयति आर्तगति ।।
कार्तस्वर-भूषण-भूषित जय धार्तराष्ट्र-दर ।
स्मार्तबृन्द-पूजित जय कार्त्तिक पूज्य पूज्य - तर ।।
जय वर्हविराजित सीसवर गर्हदीनजन-उद्धरण ।
जय अर्ह अहर्निशिदुखदरण जय श्री गोवर्द्धनधरण ।। ६ ।।

दोहा

यह खट सुंदर खटपदी सुमिरि पिया नँदनन्द ।
हरिपद-पंकज-खटपदी बिरची श्री 'हरिचंद' ।।
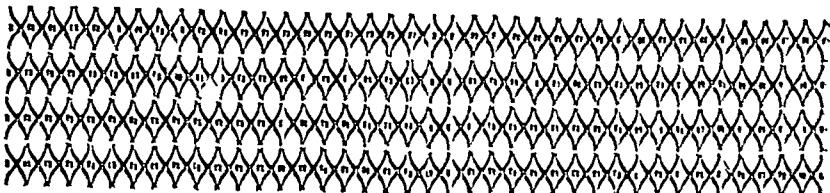
मूक प्रश्न

(सं० १९३४)

छप्पय

जीव एक, द्वै मृतक, वनस्पति तीजो जानो।
धातु चतुर्थी, शून्य पाँच, जल छठयो मानो॥
रस सातों, आठवों पारथिव, नवो बसन कहि।
दस मुद्रा, मणि ग्यारह, बारहमो मिश्रित लहि॥
औषध तेरह, कृत्रिम चतुरदस, पन्द्रह लेखन सकल।
'हरिचंद' जोड़ि दोहान को कहहु प्रश्न-फल अति विमल॥❀

❀ इस छप्पय मे पन्द्रह वस्तु है, यथा—जीव, मृतक, वनस्पति, धातु, शून्य, जल, रस, पार्थिव, वस्त्र, द्रव्य, मणि, मिश्रित, औषध, कृत्रिम और लेख। इन्ही पन्द्रहो मे सारे संसार की वस्तु आ गई। जीव मे जीते हुए प्राणी मात्र, मृतक मे चमड़ा, मांस, लोम, केश, पंख, मल, झाला, इत्यादि जो कुछ जीव से अलग वस्तु हो। वनस्पति मे पत्ता, छाल, लकड़ी, फल, फूल, गोंद, अन्न इत्यादि। धातु मे वनाई हुई धातु की चीज़े और विना वनी धातु। शून्य कुछ नहीं। जल मे पानी से लेकर द्रव्य पदार्थ मात्र। रस मे घी, गुड़, नमक और भोज्य वस्तु मात्र, पार्थिव मे पत्थर, खाक, कंकड़, चूना इत्यादि। वस्त्र में डोरा, रुई, रेशम, इत्यादि।

दोहा

जीव, वनस्पति, शून्य, रस, वस्त्रौपधि, मनि लेख ।
एक कृष्ण को ध्यान धरि, प्रश्न चित्त सों देख ॥
मृतक, वनस्पति, लेख, जल, कृत्रिम, रस, मनि, द्रव्य ।
जुगल चरन सिर नाइ कै, भाषु प्रश्न फल भव्य ॥
धातु, शून्य, जल, लेख, रस, कृत्रिम, औषध, मिस्र ।
चतुर्व्यूह माधो सुमिरि, कह फल स्वच्छ अमिस्र ॥
मिस्रौषध, कृत्रिम, वसन, द्रव्य, लेख, मनि भूमि ।
अष्ट सखी सह श्याम सजि, कहु फल गुरु-पद चूमि ॥

द्रव्य मे रुपया, पैसा, हुंडी, लोट, गहना इत्यादि । मिश्रित जिसमे एक से विशेष वस्तु मिली है । औषध से दवा, सूखी गोली और मद्य इत्यादि । कृत्रिम मनुष्य की बनाई वस्तु । लेख मे काग़ज, पुस्तक, कलम इत्यादि । इन वस्तुओं को ध्यान मे चढ़ा लेना और छप्पय याद कर लेनी । किसी से कहा कि कोई चीज़ हाथ में वा जी मे ले और फिर उसके सामने क्रम से दोहे पढ़ो ।

पूछो किस किस दोहे मे वह वस्तु है जो तुमने ली है। जिन दोहो मे बतावे उन दोहो के दूसरे तुक की गिनती के संकेतो को जोड़ डालो जो फल हो वह छप्पय के उसी अंक मे देखो । जैसा किसी ने रस लिया है तो पहिला दूसरा और तीसरा दोहा बतावेगा उसके अंक एक जुगल चतुर अर्थात् एक दो और चार गिन के सात हुए तो छप्पय मे सातवी वस्तु रस है देख लो और गणित विद्या के प्रभाव से सच्चा और सिद्ध मूक प्रश्न बतला दो ।

[यह मूक प्रश्न सुधा, ३० अप्रैल सन् १८७७ ई० में प्रकाशित हुआ था ।]
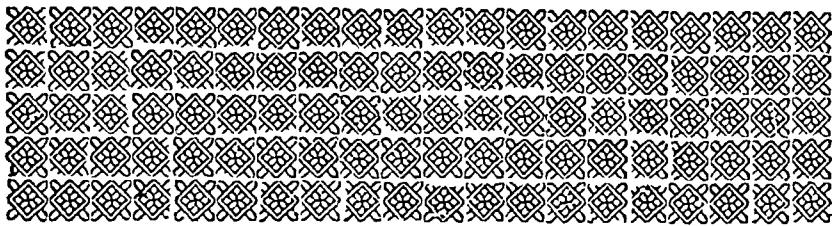
अपर्वग-पंचक

(सं० १९३४)

परम पुरुष परमेश्वर पद्मापति परमाधर ।
पुरुषोत्तम प्रभु प्रनतपाल प्रिय पूज्य परात्पर ॥
पद्म नयन अरु पद्मनाथ पालक पांडव - पति ।
पूर्ण पूतना-घातक प्रेमी प्रेम प्रीति गति ॥
प्यारे यह मुख सों भाखिए संक तजै 'हरिचंद' जिमि ।
तुम नाम पवर्गी पाइ कै अपवर्गी गति देत किमि ॥ १ ॥

फलस्वरूप फनपति - फनप्रतिनिर्त्तन फलदाई ।
बासुदेव बिभु बिष्णु बिश्व ब्रजपति बल - भाई ॥
भरताग्रज भुवभार-हरण भवप्रिय भव-भय - हर ।
मनमोहन मुरमधुसूदन माबर मुरलीधर ॥
माधव मुकुन्द सोई भाखिए संक तजै 'हरिचंद' जिमि ।
तुम नाम पवर्गी पाइ कै अपवर्गी गति देत किमि ॥ २ ॥

प्रिया परा परमानंदा पुरुषोत्तम - प्यारी ।
फलदायिनि ब्रजसुखकारिनि बृषभानु-दुलारी ॥
बरसानेवारी बृन्दा बृन्दावन-स्वामिनि ।
भक्त-जननि भयहरनि मनहरनि भोरी भामिनि ॥

माधव-सुखदाइनि भाखिए संक तजै 'हरिचंद' जिमि ।
तुम नाम पवर्गी पाइ कै अपवर्गी गति देत किमि ।। ३ ।।

बल्लभ बल्लभ बल्लभ पण्डित मंगल मण्डन ।
ब्रह्मवाद-कर भाष्यकार माया-मत-खण्डन ।।
भारद्वाज सुगोत्र भट्टकुल-मनि वेदोद्धर ।
मिथ्या मत-तमतोम-दिवाकर पुष्टि-प्रगट-कर ।।
बल्लभ बल्लभ सोइ भाखिए संक तजै 'हरिचंद' जिमि ।
तुम नाम पवर्गी पाइ कै अपवर्गी गति देत किमि ।। ४ ।।

बल्लभनंदन भक्ति-मार्ग-प्रगटन बुध-बोधक ।
भावाश्रयरसपुष्ट विष्णु-स्वामी पथ-शोधक ।।
बैष्णवजन मन-हरन भक्तकुल-कमल-प्रकासक ।
बिद्वन् मंडन-करन बितण्डावाद-विनासक ।।
बिट्ठल बिट्ठल सोइ भाखिए संक तजै 'हरिचंद' जिमि ।
तुम नाम पवर्गी पाइ कै प्रभु अपवर्गी गति देत किमि ।। ५ ।।

दोहा

यह पवर्ग हरि नाम-जुत पंचक वर अपवर्ग ।
पढ़त सुनत 'हरिचंद' जो लहत तौन सुख स्वर्ग ।।
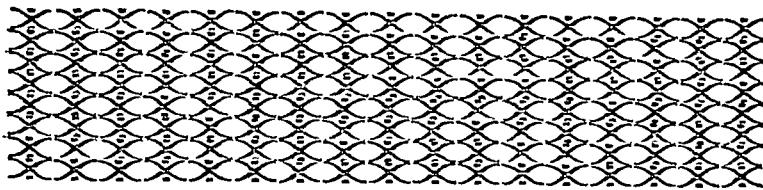
पुरुषोत्तम-पंचक

(सं० १९३४)

सखी पुरुषोत्तम मेरे प्यारे ।
प्राननाथ मेरे मन धन जीवन जसुदानंद-दुलारे ॥
जानत प्रीति-रीति सब भाँतिन नेह निबाहन-हारे ।
'हरीचंद' इनके पद-नख पैं जगत-जाल सब वारे ॥१॥

सखी पुरुषोत्तम मेरे नाथ ।
मोर मुकुट सिर कटि पीतांबर सुंदर मुरली हाथ ॥
गल बनमाल गोप गोपीगन गऊ बच्छ लिये साथ ।
'हरीचंद' पिय करुना-सागर निज-जन-करन सनाथ ॥२॥

पुरुषोत्तम प्रभु मेरे स्वामी ।
पतित-उधारन करुना-कारन तारन खग-पति-गामी ॥
पंकज-लोचन भव-दव-मोचन जन-रोचन अभिरामी ।
'हरीचंद' संतन के सरबस बखसहु चरन-गुलामी ॥३॥

पुरुषोत्तम प्रभु मेरे सरबस ।
सब गुन-निधि करुना-बरुनालय जानत सकल प्रेम-रस ॥
प्रीति-रीति पहिचानत मानत याते रहत भगत-बस ।
'हरीचंद' मेरे प्रान-जीवन-धन मोह्यौ मनहि तनिक हँस ॥४॥

पुरुषोत्तम बिन मोहि नहि कोई ।
मात-पिता-परिवार-बंधु-धन मम हरि-राधा दोई ॥
इन बिनु जगत और जो कीनो आयुस नाहक खोई ।
'हरीचंद' इन चरन सरन रहु मन बिनु साधन होई ॥५॥

भारत-वीरत्व*

(सं० १९३५)

अहो आज का सुनि परत भारत भूमि मँझार।
चहूँ ओर ते घोर धुनि कहा होत बहु बार ॥१॥
बृटिश सुशासित भूमि मैं रन-रस उमगे गात।
सबै कहत जय आज क्यों यह नहि जान्यो जात ॥२॥

---

* यह हरिश्चद्र चद्रिका के सन् १८७८ ई० के अक्तूबर के अक में प्रकाशित हुआ था। इसमे पृष्ठ दस और पंक्तियाँ २५ है। इसमें विजयिनी-विजय-वैजयंती और भारत शिक्षा आदि के पद भी सम्मिलित हैं, जो व्यर्थ पुनरावृत्ति के भय से नही दिए गए है।

यह कविता अफग़ान युद्ध छिडने पर लिखी गई थी। प्रथम अफ़ग़ान युद्ध मे दोस्त मुहम्मद काबुल का अमीर हुआ था, जिसका पुत्र शेर अली उसकी मृत्यु पर अमीर हुआ। इसके दो भाई थे—अज़ीम और अफ़ज़ल जिन्होंने कुछ उपद्रव किया था, पर शांत हो गए। सन् १८७८ ई० मे शेर अली ने रूस के राजदूत का स्वागत किया, पर अग्रेज़ी एलची को काबुल तक पहुँचने की आज्ञा नहीं दी, जिससे द्वितीय युद्ध आरभ हुआ। उसी समय यह भारत वीरत्व लिखकर देशीय वीरो को युद्ध में सम्मिलित होने के लिए उत्साह दिलाया गया था। विजय होने पर गंदमक की संधि मई सन् १८७९ई० मे हुई, पर इसके चार महीने बाद ही अफगानों ने अँगरेज एलची सर कैवगनारी को मार डाला, जिस पर फिर युद्ध हुआ और शेर अली तथा उसके दोनो पुत्र याक़ूब और अयूब पूर्णतया परास्त हुए। अफ़ज़ल का पुत्र अब्दुर्रहमान अमीर हुआ और तब शांति स्थापित हुई। देशीय सेना का एक ब्रिगेड सेनापति मैक्फ़रसन के अधीन था। सं०

शाखा

जितन हेतु अफगान चढ़त भारत महरानी ।
सुनहु न गगनहि भेदि होत जै जै धुनि-बानी ॥३॥
जै जै जै बिजयिनी जयति भारत-सुखदानी ।
जै राजागन-मुकुटमनी धन-बल-गुन-खानी ॥४॥
सोई बृटिश अधीश चढ़त अफगान-जुद्ध-हित ।
देखहु उमड़्यौ सैन-समुद उमड़्यौ सब जित तित॥५॥

पूर्ण कोरस

अरे ताल दै लै बढ़ाओ बढ़ाओ ।
सबै धाइ कै राग मारू सुगाओ ॥६॥

आरंभ

'कहाँ सबै राजा कुँअर और अमीर नवाब ।
कहौ आज मिलि सैन मे हाजिर होहु सिताब ॥७॥
धाओ धाओ बेग सब पकरि पकरि तरवार ।
लरन हेत निज सत्रु सो चलहु सिंधु के पार ॥८॥
चढ़ि तुरंग नव चलहु सब निज पति पाछे लागि ।
"उडुपति सँग उडुगन सरिस नृप सुख सोभा पागि" ॥९॥
याद करहु निज बीरता सुमिरहु कुल-मरजाद ।
रन-कंकन कर बाँधि कै लरहु सुभट रन-स्वाद ॥१०॥
बज्यो बृटिश डंका अबै गहगह गरजि निसान ।
कंपे थरथर भूमि गिरि नदी नगर असमान ॥११॥

शाखा

राज-सिंह छूटे सबै करि निज देश उजार ।
लरन हेत अफगान सो धाए बाँधि कतार ॥१२॥

पूर्ण कोरस

सुन्दर सैना सिबिर सजायो ।
मनहु बीर रस सदन सुहायो ॥
छुटत तोप चहुँ दिसि अति जंगी ।
रूप धरे मनु अनल फिरंगी ॥१३॥
हा हा कोई ऐसो इतै ना दिखावै ।
अबै भूमि के जो कलंकै मिटावै ॥
चलै संग मै युद्ध को स्वाद चाखै ।
अबै देस की लाज को जाइ राखै ॥१४॥
कहाँ हाय ते बीर भारी नसाए ।
कितै दर्प ते हाय मेरे बिलाए ॥
रहे बीर जे सूरता पूर भारे ।
भए हाय तेई अबै कूर कारे ॥१५॥
तब इन ही की जगत बड़ाई ।
रही सबै जग कीरति छाई ।
तित ही अब ऐसो कोउ नाही ।
लरै छिनहुँ जो संगत माही ॥१६॥
प्रगट बीरता देहि दिखाई ।
छन महँ काबुल लेइ छुड़ाई ।
रूस - हृदय - पत्री पर बरबस ।
लिखै-लोह लेखनि भारत-जस ॥१७॥

आरम्भ

परिकर कटि कसि उठौ धनुप पै धरि सर साधौ ।
केसरिया बाना सजि कर रन-कंकन बाँधौ ॥१८॥
जासु राज सुख बस्यौ सदा भारत भय त्यागी ।
जासु बुद्धि नित प्रजा-पुंज-रंजन महँ पागी ॥१९॥

जो न प्रजा-तिय दिसि सपनेहूँ चित्त चलावैं ।
जो न प्रजा के धर्म्महि हठ करि कबहुँ नसावैं ॥२०॥
बाँधि सेतु जिन सुरत किए दुस्तर नद नारे ।
रची सड़क बेधड़क पथिक हित सुख बिस्तारे ॥२१॥
ग्राम ग्राम प्रति प्रबल पाहरू दिए बिठाई ।
जिन के भय सों चोर बृन्द सब रहे दुराई ॥२२॥
नृप-कुल दत्तक-प्रथा कृपा करि निज थिर राखी ।
भूमि कोष को लोभ तज्यौ जिन जग करि साखी ॥२३॥
करि वारड-कानून अनेकन कुलहि बचायो ।
विद्या-दान महान नगर प्रति नगर चलायो ॥२४॥
सब ही बिधि हित कियो बिबिध बिधि नीति सिखाई ।
अभय बाँह की छाँह सबहि सुख दियो सोआई ॥२५॥
जिनके राज अनेक भाँति सुख किए सदाहीं ।
समरभूमि तिन सों छिपनो कछु उत्तम नाहीं ॥२६॥
जिन जवनन तुम धरम नारि धन तीनहुँ लीनो ।
तिनहूँ के हित आरजगन निज असु तजि दीनो ॥२७॥
मानसिंह बङ्गाल लरे परतापसिंह सँग ।
रामसिंह आसाम विजय किए जिय उछाह रँग ॥२८॥
छत्रसाल हाड़ा जूझ्यौ दारा हितकारी ।
नृप भगवान सुदास करी सैना रखवारी ॥२९॥
तो इनके हित क्यौं न उठहि सब वीर बहादुर ।
पकरि पकरि तरवार लरहि बनि युद्ध चक्रधुर ॥३०॥

दोहा

सुनत उठे सब वीरवर कर महँ धारि कृपान ।
सजि सजि सहित उमङ्ग किय पेशावरहि पयान ॥३१॥

चली सैन भूपाल की बेगम - प्रेषित धाइ ।
अलवर सों बहु ऊँट चढ़ि चले बीर चित चाइ ॥३२॥
सैन सस्त्र धन कोष सब अर्पन कियो निजाम ।
दियो बहावलपूर-पति सैन-सहित निज धाम ॥३३॥
बीस सहस्र सिपाह दिय जम्बूपति सह चाह ।
सैन सहित रन-हित चढ़्यौ आपुहि नाभा-नाह ॥३४॥
मण्डी जींद सुकेत पटिआला चम्बाधीस ।
टोंक सेन्धिया बहुरि करपूरथला-अवनीस ॥३५॥
जोधपुराधिप अनुज पुनि टोंक चचा सह साज ।
नाहन मालर-कोटला फरिदकोट के राज ॥३६॥
साजि साजि निज सैन सब जिय मैं भरे उछाह ।
उठि कै रन-हित चलत भे भारत के नर-नाह ॥३७॥
'डिसलायल' हिंदुन कहत कहाँ मूढ़ ते लोग ।
दृग भर निरखहिं आज ते राजभक्ति-संजोग ॥३८॥
निरभय पग आगेहि परत मुख ते भाखत मार ।
चले बीर सब लरन हित पच्छिम दिसि इक बार ॥३९॥

पूर्ण कोरस

छुटी तोप फहरी धुजा गरजे गहकि निसान ।
भुव-मण्डल खलभल भयो भारत सैन पयान ॥४०॥

श्री सीता-वल्लभ स्तोत्र

(सं० १९३६)

तद्वन्दे कनकप्रभं किमपि जानकीधाम ।
मत्प्रसादतस्सार्थतामेति 'राम इति नाम ॥
यो धारितः शिरसि शारदनारदाद्यैः ।
यश्चैक एव भवरोगकृते निदानम् ॥
यो वै रघूत्तमवशीकरसिद्धचूर्णम् ।
तं जानकीचरणरेणुमहं स्मरामि ॥ १ ॥

या ब्रह्मेशैः पूजिता ब्रह्मरूपा
प्रेमानन्दा प्रेमभावैकगम्या ।
रामस्यास्ते याऽपरा गौरमूर्तिः
सा श्रीसीता स्वामिनी मेऽस्तु नित्यम् ॥ २ ॥

नमोस्तु सीतापदपल्लवाभ्याम्
ब्रह्मेशमुख्यैरतिसेविताभ्याम् ।
भक्तेष्ट दाभ्याम्भवभंजनाभ्याम्
रामप्रियाभ्याम्ममजीवनाभ्याम् ॥ ३ ॥

रामप्रिये राममनोऽभिरामे
रामात्मिके पूरितरामकामे ।

---

* हरिश्चंद्र चंद्रिका खं ६ सं० १२ (जूलाई सन् १८७९ ई०) में प्रकाशित ।

रामप्रदे रामजनाभिवन्द्ये
राभे रमे त्वां शरणं प्रपद्ये ॥ ४ ॥

कण्ठे पंकजमालिका भगवतो यष्टिः करे कांचनी
गेहे चित्रपटी कुलेऽमृतमयी क्षेमंकरी देवता ।
शय्यायां मणिर्दापिका रतिकलाखेलाविधौ पुत्रिका
देहे प्राणसमास्ति या रघुपतेस्तां जानकीमाश्रये ॥ ५ ॥

श्री मद्रामभन कुरंगदमने या हेमदामात्मिका
मंजूषाऽसुमणे रघूत्तममणेश्चेतोऽलिनः पद्मिनी ।
या रामाक्षिचकोरपोषणकरी चान्द्रीकला निर्मला
सा श्रीरामवशीकरी जनकजा सीताऽस्तु मे स्वामिनी ॥६॥

प्रायेण सन्ति वहव प्रभव पृथिव्याम्
ये दण्डनिग्रहकरा निजसेवकानाम् ।
किचापराधशतकोटिसहाजनानाम्
एकात्वमेव हि यतोऽसि धरासुपुत्री ॥ ७ ॥

स्त्रस्वास्सपल्यास्सुरनाथ सूनो रक्षः पतेस्त्यागकृतश्च भर्तुः ।
त्वयाऽपराधा क्षमिता अनेके क्षमासुते क्षाम्यममापि चागः ॥८॥

यन्मातास्ति वसुन्धरा भगवती साक्षात् विदेहः पिता
स्वश्रूः कोशलराज जास्व सुरकश्चार्य्यो दशस्यन्दनः ।
दासो वायुसुतो सुतौ कुशलवौ रामानुजा देवराः–
यस्या ब्रह्मपति स्तयातिदयया कि कि न सम्भाव्यते ॥९॥

नात. परं किमपि किंचिदपीह मातः
वाच्यं ममास्ति भवती पदकंजमूले ।
एतावदेव विनिवेद्य सुखं शयेऽहम्
यन्मूढ़धीः शिशुरहं जननी त्वमेव ॥१०॥

वन्दे भरतपत्नी श्री माण्डवी रतिरूपिणीम् ।
तारुण्यरससम्पूर्णा कारुण्यरसपूरिताम् ॥११॥

लक्ष्मणप्रेयसीं श्री मच्छीरध्वजतनूद्भवाम् ।
वन्देहमूर्म्मिलां देवीं पतिप्रेमरसोर्म्मिलाम् ॥१२॥
नृपतिकुशध्वजकन्या धन्या नान्या समास्ति यल्लोके ।
सा श्रुतिविश्रुतकीर्तिः श्रुतिकीर्तिर्मेऽस्तु सुप्रीता ॥१३॥
यस्याः पतिर्निमिकुलाभरणं विदेहो
जामातरः श्रुतिशिरः प्रतिपाद्य रूपाः ।
भाग्यस्य या करपदादिविशिष्टमूर्तिः
तां श्री जगज्जनिजनि प्रणमेसुनेत्राम् ॥१४॥
जामातृत्वे गतं यस्य साक्षाद्‌ब्रह्म परात्परम् ।
तं वंदे ज्ञाननिलयं विदेहं जनकं परम् ॥१५॥
विश्वामित्रं शतानन्दं मैथिलं च कुशध्वजम् ।
भौमं लक्ष्मीनिधिं चापि वंदे प्रीत्या पुनः पुनः ॥१६॥
विदेहस्थान् नरांश्चापि बालान् नारीः गुणोज्वलाः ।
वंदे सर्व्वान् पशूञ्जीवान् भूमिं च तृणावीरुधः ॥१७॥
सर्व्वे ददन्तां कृपया मह्यं श्रीजानकीपदम् ।
भक्तिदानम्प्रकुर्वन्तु यतस्ते स्वामिनीप्रियाः ॥१८॥
आह्लादिनीं चारुशीलामतिशीलां सुशीलकाम् ।
हेमां बन्दे सदा भक्त्या सखीः सेवाविधौ हरेः ॥१९॥
शांता सुभद्रा संतोषा शोभना शुभदा धरा ।
चार्वंगी लोचना क्षेमा सुधात्री चापि सुस्मिता ॥२०॥
क्षेमदात्री सत्यवती धीरा हेमांगिनी तथा ।
वन्दे एता अपि श्रीमज्जानक्याः प्रियकारिणीः ॥२१॥
वयस्यां माधवी विद्यां वागीशां च हरिप्रियां ।
मनोजवां सुविद्यां च नित्यां नित्यं नमाम्यहम् ॥२२॥
कमला विमलाद्याश्च नद्यस्सख्यात्मिकास्तु याः ।
नमोनमः सदा ताभ्यः सर्वास्ताः कृपयान्तु माम् ॥२३॥

परीता स्वगुणैरेवमधीतावेदवादिभिः ।
कान्त्यास्फीता गुणातीता पीतांशुकविलासिनी ॥२४॥
श्रुतिगीतादिभिर्गीता शीतांशुकिरणोज्वला ।
नित्यमस्तु मनोनीता सीता प्रीता ममोपरि ॥२५॥
आशाक्रीता वशं नीता मायया दु:खदायया ।
भवभीता वयं सीतापदपल्लवमाश्रिताः ॥२६॥
खादन् पिवन् स्वापन् गच्छन् श्वसन्स्तिष्ठन् यदा तदा ।
यत्र तत्र सुखे दु:खे सीतैव स्मरणेऽस्तु मे ॥२७॥
रात्रौ सीता दिवा सीता सीता सीता गृहे वने ।
पृष्ठेऽग्रे पार्श्वयोः सीता सीतैवास्तु गतिर्मम ॥२८॥
इदं सीता-प्रियं स्तोत्रं श्रीरामस्यातिवल्लभम् ।
श्री हरिश्चंद्रजिह्वाग्रे स्थित्वा वाण्या विनिर्मिताम् ॥२९॥
यः पठेत् प्रातरुत्थाय सायं वा सुसमाहितः ।
भक्तियुक्तो भावपूर्णः स सीतावल्लभो भवेत् ॥३०॥

इति

श्री राम-लीला

(सं० १९३६)

पद

हरि-लीला सब बिधि सुखदाई ।
कहत सुनत देखत जिय आनत देति भगति अधिकाई ।।
प्रेम बढ़त अघ नसत पुन्य-रति जिय मैं उपजत आई ।
याही सों हरिचंद करत मुनि नित हरि-चरित बड़ाई ।।१।।

गद्य

आहा ! भगवान् की लीला भी कैसी दिव्य और धन्य पदार्थ है कि कलिमलग्रसित जीवो को सहज ही प्रभु की ओर झुका देती है और कैसा भी विषयी जीव क्यो न हो दो घड़ी तो परमेश्वर के रंग मे रँग ही देती है। विशेष कर के धन्य हम लोगो के भाग्य कि श्रीमान् महाराज काशिराज भक्त-शिरोमणि की कृपा से सब लीला बिधि-पूर्वक देखने मे आती है। पहले मङ्गलाचरण होकर रावण का जन्म होता है फिर देवगण की स्तुति और वैकुंठ और क्षीरसागर की झाँकी से नेत्र कृतार्थ होते है। फिर तो आनन्द का समुद्र श्री राम-जन्म का महोत्सव है जो देखने ही से सम्बन्ध रखता है, कहने की बात नही है।

कबित्त

राम के जनम माँहि आनँद उछाह जौन
सोई दरसायो ऐसी लीला परकासी है।

तैसे हो भवन दसरथ राज रानी आदि
तैसो ही अनन्द भयो दुख-निसि नासी है ॥
सोहिलो बधाई द्विज दान गान बाजे बजै
रंग फूल-वृष्टि चाल तैसी ही निकासी है ।
कलिजुग त्रेता कियो नर सब देव कीन्हे
आजु कासीराज जू अजुध्या कीनी कासी है ॥२॥

फिर श्री रामचन्द्र की बाल-लीला, मुण्डन, कर्णवेध, जनेऊ, शिकार खेलना आदि ज्यो का त्यो होता है देखने से मनुष्य भव-दुख मूल से खोता है। फिर विश्वामित्र आते है संग मे श्रीराम जी को सानुज ले जाते है। मार्ग मे ताड़िका सुबाहु का वध और फिर चरण-रेणु से अहिल्या का तारना। अहा! धन्य प्रभु के पद-पद्म जिनके स्पर्श से कही मनुष्य पारस होता है देवता बनता है कही पत्थर तरता है। इस प्रभु की दीन दयाल पर श्रीमन्महाराज की उक्ति।

दोहा

हम जानो तुम देर जौ लावत तारन मॉहि।
पाहनहू ते कठिन गुनि मो हिय आवत नाहि ॥३॥
तारन मै मो दीन के लावत प्रभु कित बार।
कुलिस रेख तुव चरनहू जो मम पाप पहार ॥४॥

कवि की उक्ति

मो ऐसे को तारिबो सहज न दीन-दयाल।
आहन पाहन वज्रहू सो हम कठिन कृपाल ॥५॥
परस मुक्तिहू सो फलद तुअ पद-पद्म मुरारि।
यहै जतावन हेत तुम तारी गौतम-नारि ॥६॥
एहो दीनदयाल यह अति अचरज की बात।
तो पद सरस समुद्र लहि पाहनहू तरि जात ॥७॥

कहा पखानहुँ तें कठिन मो हियरो रघुबीर।
जो मम तारन मैं परी प्रभु पर इतनी भीर ॥८॥
प्रभु उदार पद परसि जड़ पाहनहूँ तरि जाय।
हम चैतन्य कहाइ क्यों तरत न परत लखाय ॥९॥
अति कठोर निज हिय कियो पाहन सो हम हाल।
जामैं कबहूँ मम सिरहु पद-रज देहि दयाल ॥१०॥
हमहूँ कछु लघु सिल न जो सहजहि दीनौ तार।
लगिहै इत कछु बार प्रभु हम तौ पाप-पहार ॥११॥

फिर श्री रामचन्द्र जी सानुज जनक-नगर देखने जाते है पर नारियो के मन नैन देखते ही लुभाते है।

कवित्त

कोऊ कहै यहै रघुराज के कुँवर दोऊ
कोऊ ठाढ़ी एक टक देखै रूप घर मैं।
कोऊ खिरकीन कोऊ हाट बाट धाई फिरै
बावरी ह्वै पूछै गए कौन सी डगर मै ॥
'हरीचंद' झूमै मतवारौ दृग मारौ कोऊ
जकी सीथकी सी कोऊ खरी एकै थर मै।
लहर चढ़ी सी कोऊ जहर मढ़ी सी भई
अहर पड़ी है आजु जनक सहर मैं ॥१२॥

फिर श्रीराम जी फुलवारी मे फूल लेने जाते है। उस समय फुलवारी की रचना, कुञ्जों की बनावट, कल के मोरो का नाचना और चिड़ियो का चहकना यह सब देखने ही के योग्य है।

इतने में एक सखी जो कुञ्जों में गई तो वहाँ राम रूप देख कर बावली हो गई। जब वहाँ से लौट कर आई तो और सखियाँ पूछने लगी।

कवित्त

कहा भयो कैसी है बतावै किन देह दसा
छनही मे काहे बुधि सबही नसानी सी ।
अबही तो हँसति हँसति गई कुञ्जन मैं
कहा तित देख्यौ जासो ह्वै रही हिरानी सी ।।
'हरीचंद' काहू कछु पढ़ि कियो टोना लागी
ऊपरी बलाय कै रही है बिख सानी सी ।
आनँद समानी सी जगत सो भुलानी सी
लुभानी सी दिवानी सी सकानी सी बिकानी सी ।।१३।।

यह सुनकर वह सखी उत्तर देती है ।

सवैया

जाहु न जाहु न कुञ्जन मैं उत
नाँहि तौ नाहक लाजहि खोलिहौ ।
देखि जौ लैहो कुमारन को
अबही झट लोक की लोकहि छोलिहौ ।।
भूलिहै देह-दसा सगरी
'हरिचंद' कछू को कछू मुख बोलिहौ ।
लागिहै लोग तमासे हहा
बलि बावरी सी ह्वै बजारन डोलिहौ ।।१४।।

कवित्त

जाहु न सयानी उत बिरछन माहि कोऊ
कहा जानै कहा दोय झलक अमन्द है ।
देखत ही मोहि मन जात नसै सुधि बुधि
रोम रोम छकै ऐसो रूप सुख-कन्द है ।।
'हरीचन्द' देवता है सिद्ध है छलावा है,
सहावा है कि रत्न है कि कीनी दृष्टि-बन्द है ।

जादू है कि जन्त्र है कि मन्त्र है कि तंत्र है कि
तेज है कि तारा है कि रबि है कि चन्द है ।।१५।।

वहाँ से दूसरे दिन श्रीरामचन्द्र धनुष-यज्ञ में आते हैं और उनका सुन्दर रूप देखकर नर-नारी सब यही मनाते है ।

कवित्त

आए है सबन मन-भाए रघुराज दोऊ
जिन्है देखि धीर नाहि हिअ माँहि धरि जाय ।
जनक-दुलारी जोग दूलह सखी है एई
ईस करै राउ आज प्रनहि बिसरि जाय ।।
'हरीचंद' चाहै जौन होइ एई सीअ बरै
जो जो होइ बाधक बिधाता करै मरि जाय ।
चाटि जाहि घुन याहि अबही निगोरो
बटपारो दईमारो धनु आगि लगै जरि जाय ।।१६।।

जब धनुष के पास श्री रामजी जाते है तब जानकी जी अपने चित्त मे कहती हैं ।

सवैया

मो मन मै निहचै सजनी यह तातहु ते प्रन मेरो महा है ।
सुन्दर स्याम सुजान सिरोमनि मो हिअ मै रमि राम रहा है ।।
रीत पतिव्रत राखि चुकी मुख भाखि चुकी अपुनो दुलहा है ।
चाप निगोड़ो अबै जरि जाहु चढ़ौ तो कहा न चढ़ौ तो कहा है ।।१७।।

लोगों को चिन्तित देख श्री रामचन्द्र जी धनुप के पास जाते है और उठा कर दो टुकड़े कर के पृथ्वी पर डाल देते हैं। बाजे और गीत के साथ जय जय की धुन अकास तक छा जाती है ।

कवित्त

जनक निरासा दुष्ट नृपन की आसा
पुरजन की उदासी सोक रनिवास मनु के।
बीरन के गरब गरूर भरपूर सब
भ्रम मद आदि मुनि कौसिक के तनु के॥
'हरीचंद' भय देव मन के पुहुमि भार
बिकल बिचार सबै पुर-नारी जनु के।
सङ्का मिथिलेस की सिया के उर सूल सबै
तोरि डारे रामचन्द्र साथै हर धनु के॥१८॥

धनुष टूटते ही जगत्-जननी श्री जानकी जी जयमाल लेकर भगवान को पहिनाने चली, उसकी शोभा कैसे कही जाय।

कवित्त

चन्दन की डारन मै कुसुमित लता कैधौं
पोखराज माखन मैं नव-रत्न जाल है।
चन्द्र की मरीचिन मै इन्द्र-धनु सोहै कै
कनक जुग कामी मधि रसन रसाल है॥
'हरीचंद' जुगुल मृनाल मै कुमुद बेलि
मूँगा की छरी मै हार गूथ्यौ हरि लाल है।
कैधौं जुग हंस एकै मुक्त-माल लीने कै
सिया जू करन माँह चारु जयमाल है॥१९॥

सवैया

टूटत ही धनु के मिलि मङ्गल
गाइ उठी सगरी पुर-बाला।
लै चली सीतहि राम के पास
सबै मिलि मन्द मराल की चाला॥

देखत ही पिय कों 'हरिचंद'
महा मुद पूरित गात रसाला।
प्यारी ने आपुने प्रेम के जाल सी
प्यारे के कण्ठ दई जयमाला ॥२०॥

बस चारो ओर आनन्द ही आनन्द हो गया।

फिर अयोध्या से बरात आई। यहाँ जनकपुर में सब व्याह की तयारी हुई। वैसी ही मण्डप की रचना वैसा ही सब सामान।

श्री रामचन्द्र दूलह बन कर चारो भाई बड़ी शोभा से व्याहने चले। मार्ग मे पुर-बनिता उनको देख कर आपुस में कहने लगीं।

कवित्त

एई अहै दसरथ-नन्द सुखकन्द तारी
गौतम की नारी इनही मारि राछसनि।
कौसला के प्यारे अति सुन्दर दुलारे सिया
रूप रिझवारे प्रेमी जनक प्रान धनि॥
सुन्दर सरूप नैन बाँके मद छाके 'हरीचंद'
घुँघुराली लटै लटकै अहो सी बनि।
कहा सबै उझकि बिलोकौ बार बार देखो
नजरि न लागै नैन भरि कै निहारौ जनि॥२१॥

सवैया

एई है गौतम नारि के तारक कौसिक के मख के रखवारे।
कौसलानन्दन नैन-अनन्दन एई है प्रान जुड़ावन-हारे॥
प्रेमिन के सुखदैन महा 'हरिचंद' के प्रानहुँ ते अति प्यारे।
राज-दुलारी सिया जू के दूलह एई है राघव राजदुलारे॥२२॥

मण्डप मे पहुँच कर सब लोग यथास्थान बैठे। महाराज

जनक ने यथाविधि कन्यादान दिया। जैजै की धुनि से पृथ्वी आकाश पूर्ण हो गया।

सवैया

वेदन की विधि सो मिथिलेस करी सब व्याह की रीति सुहाई।
मन्त्र पढ़ै 'हरिचंद' सबै द्विज गावत मङ्गल देव मनाई॥
हाथ मै हाथ के मेलत ही सब बोलि उठे मिलि लोग लुगाई।
जोरी जियो दुलहा दुलही की बधाई बधाई बधाई बधाई॥२३॥
मौर लसै उत मौरी इतै उपमा इकहू नहि जातु लही है।
केसरी बागो बनो दोउ के इत चन्द्रिका चारु उतै कुलही है॥
मेहदी पान महावर सो 'हरिचंद' महा सुखमा उलही है।
लेहु सबै दृग को फल देखहु दूलह राम सिया दुलही है॥२४॥
विधि सो जब व्याह भयो दोउ को मनि मण्डप मङ्गल चॉवर मे।
मिथिलेस कुमारी भई दुलही नव दूलह सुन्दर सॉवर मे।
'हरिचंद' महान अनन्द बढ़्यौ दोउ मोद भरे जब भॉवर भे।
तिनसो जग मै कछु नाहि बनी जे न ऐसी बनी पै निछावर भे॥२५॥

फिर जेवनार हुई। सब लोग भोजन को बैठे स्त्रियॉ ढोल मॅजीरा लेकर गाली गाने लगी।

सुन्दर श्याम राम अभिरामहि गारी का कहि दीजे जू।
अगुन सगुन के अनगन गुनगन कैसे कै गनि लीजे जू॥
मायापति माया प्रगटावन कहत प्रगट श्रुति चारी।
जो पति पितु सिसु दोउ मै व्यापत ताहि लगै का गारी॥
मात पिता को होत न निरनय जात न जानो जाई।
जाके जिय जैसी रुचि उपजै तैसिय कहत बनाई॥
अज के दसरथ सुने रहे किमि दसरथ के अज जाये।
भूमिसुता पति भूमिनाथ सुत दोऊ आप सोहाये॥
धन्य धन्य कौशिल्या रानी जिन तुम सो सुत जायो।

मात पिता सों बरन बिलच्छन श्याम सरूप सोहायो ।।
कैकै की जो सुता कैकई ताको सुकृत अपारा ।
भरतहि पर अति ही रुचि जाकी को कहि पावै पारा ।।
नाम सुमित्रा परम पवित्रा चारु चरित्रा रानी ।
अतिहि विचित्रा एक साथ जेहि द्वै सन्तति प्रगटानी ।।
अति विचित्र तुम चारहु भाई कोउ साँवर कोउ गोरे ।
परी छाँह कै औरहि कारन जिय नहि आवत मोरे ।।
कौसलेस मिथिलेस दुहुन मै कहौ जनक को प्यारे ।
कौसल्या सुत कौसलपति सुत दुहूँ एक को न्यारे ।।
चरु सो प्रगटे कै राजा सो यह मोहि देहु बताई ।
हम जानी नृप वृद्ध जानि कछु द्विज गन करी सहाई ।।
तुमरे कुल को चाल अलौकिक बरनि कछू नहि जाई ।
भागीरथी धाइ सागर सो मिली अनन्द बढ़ाई ।।
सूर बंस गुरु कुलहि चलायो छत्री सबहि कहाहीं ।
असमंजस को बंस तुम्हारो राघव संसय नाही ।।
कहँ लौ कहौं कहत नहि आवै तुमरे गुन-गन भारी ।
चिरजीओ दुलहा अरु दुलहिन 'हरीचंद' बलिहारी ।।२६।।

फिर आनन्द से बारात बिदा होकर घर आई । रानियों ने दुलहा दुलहिन को परछन कर के उतारा । महाराज दशरथ ने सब का यथायोग्य आदर-सत्कार किया । अब हम लोग भी श्री जनक लली नव दुलही की आरती करके बालकाण्ड की लीला पूर्ण करते है ।

आरति कीजै जनक लली की । राम मधुप मन कमल कली की ।।
रामचन्द्र मुख चन्द चकोरी । अन्तर साँवर बाहर गोरी ।
सकल सुमङ्गल सुफल फली की ।।

पिय दृग मृग जुग बन्धन डोरी। पीय प्रेम-रस-रासि किसोरी।
पिय मन गति विश्राम थली की ॥
रूप-रासि गुननिधि जग स्वामिनि। प्रेम प्रवीन राम अभिरामिनि।
सरवस धन 'हरिचंद' अली की ॥२७॥

अब अयोध्या काण्ड की लीला प्रारम्भ हुई। करुणा रस का समुद्र उमड़ चला। श्री रामचन्द्र जी के वनवास का कैकेई ने वर माँगा, भगवान वन सिधारे, राजा दशरथ ने प्राण त्यागा।

दोहा

बिनु प्रीतम तृन सम तज्यौ तन राखी निज टेक।
हारे अरु सब प्रेम-पथ जीते दसरथ एक ॥२८॥

नगर मे चारो ओर श्रीराम जी का विरह छा गया जहाँ सुनिए लोग यही कहते थे।

राम बिनु पुर बसिए केहि हेत।
धिक निकेत करुणा-निकेत बिनु का सुख इत बसि लेत ॥
देत साथ किन चलि हरि को उत जियत बादि बनि प्रेत।
'हरीचंद' उठि चलु अबहूँ बन रे अचेत चित चेत ॥२९॥

रामचन्द्र बिनु अवध अँधेरो।
कछु न सुहात सिया-वर बिनु मोहि राज-पाट घर-घेरो।
अति दुख होत राजमन्दिर लखि सूनो साँझ सवेरो।
डूबत अवध विरह सागर मै को आवै बनि बेरो ॥
पसु पंछी हरि बिनु उदास सब मनु दुख कियो बसेरो।
'हरीचंद' करुनानिधि केसव दै दरसन दिन फेरो ॥३०॥

राम बिनु बादहि बीतत साँसै।
धिक सुत पितु परिवार राम बिनु जे हरि-पद-रति नासै ॥
धिक अब पुर बसिबो गर डारे झूठ मोह की फाँसै।
'हरीचंद' तित चलु जित हरि-मुख-चन्द्र-मरीचि प्रकासै ॥३१॥

राम बिनु अवध जाइ का करिए।
रघुबर बिनु जीवन सों तौ यह भल जौ पहिलेहि मरिए ॥
क्यौ उत नाहक जाइ दुसह बिरहानल मैं नित जरिए।
'हरीचंद' बन बसि नित हरि मुख देखत जगहि बिसरिए ॥३२॥

राम बिन सब जग लागत सूनो।
देखत कनक-भवन बिनु सिय-पिय होत दुसह दुख दूनो।
लागत घोर मसानहुँ सो बढ़ि रघुपुर राम बिहूनो।
कहि 'हरिचंद' जनम जीवन सब धिक धिक सिय-बर ऊनो ॥३३॥

जीवन जो रामहि सँग बीतै।
बिनु हरि-पद-रति और बादि सब जनम गँवावत रीतै ॥
नगर नारि धन धाम काम सब धिक धिक बिमुख जौन सिय पीतै।
'हरीचंद' चलु चित्रकूट भजु भव मृग बाधक चीतै ॥३४॥

फिर भरत जी अयोध्या आए और श्री रामचन्द्र जी को फेर लाने को बन गए। वहाँ उनकी मिलन रहन बोलन सब मानो प्रेम की खराद थी। वास्तव में जो भरत जी ने किया सो करना बहुत कठिन है। जब श्री रामचन्द्र जी न फिरे तब पाँवरी लेकर भरत जी अयोध्या लौट आए। पादुका को राज पर बैठा कर आप नन्दिग्राम मे वनचर्य्या से रहने लगे। यहाँ भरत जी की आरती करके अयोध्या कांड की लीला पूर्ण हुई।

आरति आरति-हरन भरत की। सीय राम पद पङ्कज रत की।
धर्म्म धुरन्धर धीर बीर बर। राम सीय जस सौरभ मधुकर।
सील सनेह निबाह निरत की ॥
परम प्रीति पथ प्रगट लखावन। निज गुन गन जस अघ विद्रावन।
परछत पीय प्रेम मूरत की।
बुद्धि विवेक ज्ञान गुन इक रस। रामानुज सन्तन के सरवस।
'हरीचंद' प्रभु विषय बिरत की ॥३५॥
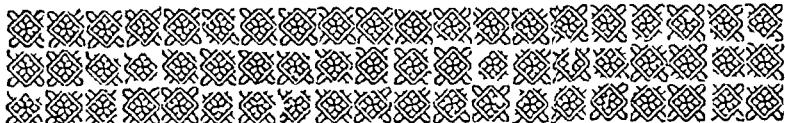
भीष्मस्तवराज*

(सं० १९३६)

मेरी मति कृष्ण-चरन मैं होय ।
जग के तृष्णा-जाल छाँड़ि कै सोक-मोह-भ्रम खोय ॥
जादवपति भगवान लेत जो विहरन हित अवतार ।
परमानंद रूप मायामय पावत कोउ न पार ॥
यह जग होत जासु इच्छा ते जो यहि देत विवेक ।
तिनही श्री हरिचरन-कमल ते मम चित टरै न नेक ॥१॥

मो मन हरि सरूप मैं रहै ।
विजय-सखा-पद-कमल छोड़ि मति छनहुँ न इत उत बहै ॥
तृभुवन-मोहन सुंदर स्याम तमाल सरस तन सोहै ।
कुटिल अलक-अलि मुख-सरोज पर निरखत ही मन मोहै ॥
अरुन किरिन सम सुंदर पीत बसन जुग तन पर धारे ।
एकहु छिन इन नैनन ते मम कबहूँ होहु न न्यारे ॥२॥

बसै जिय कृष्ण-रूप मे मेरो ।
भारत-जुद्ध-समय जो सुंदर अरजुन रथ पर हेरो ॥
सुंदर अलकावलि मैं रन की धूरि रही लपटाई ।
सोहत सीकर-बिंदु बदन पर सो छबि लगति सुहाई ॥

---

* हरिश्चंद्रचंद्रिका खं० ६ सं० १५ (सेप्टेंबर सन् १८७९ ई०) में प्रकाशित ।

मम चोखे बानन सों कहुँ कहुँ खंडित कवचहि धारे ।
अनुदिन बसो नयन जुग मेरे श्री बसुदेव-दुलारे ।।३।।

जिय ते सो छवि बिसरत नाहीं ।
लखी जौन भारत अरंभ मैं अरजुन के रथ माहीं ।।
सखा-बचन सुनि दोउ दल के मधि रथ लै ठाढ़ो कीनो ।
पर-जोधन की आयु-तेज-बल देखत जिन हरि लीनो ।।४।।

तिनकी चरन भक्ति मोहि होई ।
जिन अरजुनहि मोह मैं लखि कै तासु अविद्या खोई ।।
सब बेदन को सार ज्ञानमय जिन हरि गीता गाई ।
निज जन-बध-संकाहि मोह मति पारथ की बिसराई ।।५।।

मेरी गति, होउ सोइ बनवारी ।
जिन मेरी परतिज्ञा राखत निज परतिज्ञा टारी ।।
अरजुन कहँ लखि बिकल बान सो कूदि सुरथ सों धावत ।
कोप भरे मेरी दिसि आवत कर तें चक्र फिरावत ।।
जद्यपि पग गहि बहु भाँतिन सो पारथ रोक्यौ चाहै ।
पै न रुकत जिमि महामत्त गज लखि मृगराज उछाहै ।।
गिनत न मम सर-बरसनि को कछु बध हित धावत आवैं ।
टूटि रह्यौ तन कवच मनोहर सोभा अधिक बढ़ावै ।।
पीतांबर फहरात बात-बस सो छबि लागत प्यारी ।
यहै रूप ते सदा बसौ मन मेरे श्री गिरधारी ।।६।।

मेरे जिय पारथ-सारथि बसिए ।
इक कर मै लगाम दूजे मै चाबुक लीने बसिए ।।
जासु रूप लखि मरे बीर जे तिनहूँ हरि-पद पायो ।
मरन-समय मम जिय मै निबसौ सोई रूप सुहायो ।।७।।

हरि मम आँखिन आगे डोलौ ।
छिनहूँ हिय ते टरहु न माधव सदा श्रवन ढिग बोलौ ।।
जो सरूप लखि कै ब्रज-बनिता देह गहे सब त्यागी ।
होइ बिलग हरि-रूप-उपासी हरि-पद मैं अनुरागी ।।
रास बिलास हास रस बिहरत प्रेम-मगन मन फूली ।
तनमय भई तनिक सुधि नाहीं देह दसा सब भूली ।।
भाव-बिबस भगवान भक्त-प्रिय सबही बिधि सुखदाई ।
सोई बसो सदा इन नैनन सुंदर कुँअर कन्हाई ।।८।।

अहो मम भाग्य कह्यौ नहिं जाई ।
जो देखत त्रिभुवनपति माधव नैनन ते ब्रजराई ।।
धरम-सभा महँ जेहि लखि रिषि-मुनि अपनो भाग सराहैं ।
सब सो पूजित चरन-कमल जो तासु चरन हम चाहैं ।।९।।

तिन हरि मो कहँ अब अपनायो ।
निज नख-चंद्र-प्रकास मोह-तम मेरो सबहि नसायो ।।
सबके हिय मैं अंतर-जामी ह्वै जो ईस समायो ।
सोई अब मम उर अंतर मैं निज प्रकास प्रगटायो ।।
हर्यौ मोह-तम अभय दान दै निज सरूप दरसायो ।
कहि 'हरिचंद' भीष्म हरि-पद-बल परम अमृत-फल पायो ।।१०।।
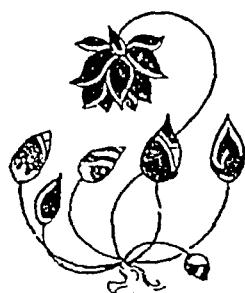
मान लीला फूल-बुझौअल

(सं० १९३६)

अमल कमल-कर-पद-बदन जमल कमल से नैन ।
क्यौं न करत कमला विमल कमल-नाभ-सँग सैन ।।१।।

निसि बीती मनवत सखी तू न नेक मुसकात ।
चटकत कली गुलाब की होन चहत परभात ।।२।।

वह अलबेला कुंज मैं पर्यौ अकेला हाय ।
उठि चलि बहु बेला गई करु दृग-मेला धाय ।।३।।

अरी माधवी-कुंज मे माधव अति बेहाल ।
मधु रितु माधव मास मैं तो बिनु ब्याकुल लाल ।।४।।

पहिरि नवल चंपाकली चंपकली से गात ।
रस-लोभी अनुपम भँवर हरि-ढिग क्यौं नहि जात ।।५।।

रूप रंग ऐसो मिल्यौ तापैं ऐसी मान ।
बिनु सुगंध के फूल तू भई कनैर समान ।।६।।

तुव कुच परसन लालसा गेंदा लै कर श्याम ।
खरे उछारत कुंज मैं क्यों न चलत तू बाम ।।७।।

कह पायन मिहदी लगी जासो चल्यौ न जाय ।
धाय कुंज मे पियहि क्यौ लेत न कंठ लगाय ।।८।।

दाऊ दीठि बचाय हरि गए कुंज के भौन ।
बजवत दाऊदी उतै क्यौ न करत तू गौन ।।९।।

वृथा बकुल-पन कर रही उत ब्याकुल अति लाल।
चलि न मौलि बारन गुथे मौलिसिरी की माल ॥१०॥
खबर न तोहि सँकेत की कही केतकी बार।
चलि पथ कुंज निकेत की कित की ठानत आर ॥११॥
छिरकि केवरा सो पथहि पलन पाँवरे डारि।
कब सो मोहन बैठि कै मारग रहे निहारि ॥१२॥
करत न हरगिस लाड़िले वा बिन सेज न सैन।
नरगिस से कब के खुले तुअ मग जोहत नैन ॥१३॥
बिमल चाँदनी भुव बिछी नभ चाँदनी प्रकास।
तऊ अँधेरो तुव बिना पिय अति रहत उदास ॥१४॥
बैठि रही क्यौ कुंद ह्वै चलु मुकुंद के पास।
कुंद-दमन दरसाइ क्यौं करत मंद नहि हास ॥१५॥
अरी माधुरी कुंज मैं बचन माधुरी भाखि।
मधुर पिया के प्रान को क्यौं न लेत तू राखि ॥१६॥
कह्यौ न मानत मो तिया पहिरि मोतिया-हार।
लाउ गरे मोहन पिया सुंदर नंद-कुमार ॥१७॥
सारी तन सजि बैजनी पग पैजनी उतारि।
मिलु न बैजनी-माल सो सजनी रजनी चारि ॥१८॥
मदन-बान पिय उर हनत तो बिनु अति अकुलात।
तू निरमोहिन इत परी झूठे ही अनखात ॥१९॥
मानिनि वारी वेगि चलि प्यारी मान निवारि।
सहि न सकत अब बेदना तो बिनु मदन मुरारि ॥२०॥
रमन रेवती के अनुज तो बिनु अति अकुलात।
पिय-पद क्यौ नहि सेवती करत मान बिनु बात ॥२१॥
जदपि सबै सामाँ जुही कल न लहत तउ लाल।
सोनजुही सौ भावती चलि उठि याही काल ॥२२॥

अति अनारि हठ नहि करिय सीख सखी की मानि।
पिय सों रोस न कीजिये यामै कोउ दिन हानि ॥२३॥
गुल्लाला फूले लखौ आयो बर रितु-राज।
कहो भला ऐसी समै कहा मान सो काज ॥२४॥
तुव हित कब के चक्रधर ठाढ़े पकरि कपाट।
दै निसु दरसन लाड़िली जोहत हरि तुव बाट ॥२५॥
हरि सिगार सब छाँड़ि कै तुव बिनु होय मलीन।
परे भूमि पै देखु किन बिरह-बिथा तन छीन ॥२६॥
फूली बन नव मालती माल तीय गर डारि।
अब उठि चलु न बिलम्ब करु लै उर लाइ मुरारि ॥२७॥
करन-फूल दोउ करन सजि हरन सकल उर-सूल।
चलु न चरन-आभरन तजि भरन मदन सुखमूल ॥२८॥
रायबेलि महकति सखी अति सुगंध रस झेलि।
क्यौ न रमत तू श्याम सो कंठ भुजा दोउ मेलि ॥२९॥
ठाढ़े पीअ कदंब तर तजिकै जुवति-कदम्ब।
चलु बिलंब तजि राधिके दै निज भुज अवलंब ॥३०॥
पहिरि मल्लिका-माल उर प्रेम-बल्लिका बाल।
लपटी कृष्ण-तमाल सों लखि 'हरिचंद' निहाल ॥३१॥

१

मल्लिका (चमेली)	कमल	रायबेलि	मालती
सुदरसन	अनार	सेवती	मदन बान
मोतिया	कुंद	नरगिस	केतकी
गुलदाऊदी	गेंदा	चंपा	बेला

चन्द्र

२

मल्लिका (चमेली)	गुलाब	कदंब	मालती
हरसिंगार	अनार	जुही	मदनबान
बैजनी	कुन्द	चाँदनी	केतकी
मौलसिरी	गेंदा	कनैर	बेला

नेत्र

४

मल्लिका (चमेली)	कदम	रायबेलि	करनफूल
अनार	माधवी	जूही	सेवती
निवारी	कुंद	चाँदनी	नरगिस
केवडा	गेंदा	कनैर	चंपा

वेद

८

मल्लिका (चमेली)	कदम्ब	रायबेलि	करनफूल
मिंहदी	मालती	हरिसिंगार	सुदरसन
गुललाला	कुंद	चाँदनी	नरगिस
केवड़ा	केतकी	मौलसिरी	गुलदाउदी

वसु

१६

मल्लिका (चमेली)	कदम्ब	रायबेलि	करनफूल
मालती	हरिसिंगार	सुदरसन	गुल्लाला
अनार	जूही	सेवती	निवारी
मदनबान	बैजनी	मोतिया	माधुरी

श्रृंगार

प्रश्न करने की विधि

यह एक बड़ा आश्चर्य प्रश्न का खेल है। पहले मान लीला के जिन दोहों मे जिस फूल का नाम निकलता हो उसको समझ लो और उन दोहो के अंक भी याद कर रक्खो। प्रश्न करने-वाले से कहो कि इन्हीं ३१ फूलों मे एक फूल का नाम अपने जी मे लो फिर इन पांचों ताशों मे से एक एक ताश उसके सामने रख-कर पूछो इसमें वह फूल है, जिसमे वह बतावै उन ताशों को अलग करके उनके ऊपर लिखी गिनती जोड़ लो कि कितने अंक आते हैं। मान लीला के उसी अंक के दोहे में जिस फूल का नाम हो वही उसने जी में लिया है। जैसा चंपा अगर किसी ने लिया है तो वह ४ और १ एक अंक वाला ताश बतावैगा तो उसके जोड़ने से ५ अंक हुए तो मान लीला मे पाँचवें दोहे मे चंपा का वर्णन है इससे चंपा उसने लिया है समझो और जिसमे सबके समझ मे न आवै इसके वास्ते स्पष्ट अंक के बदले छेपे अंक रक्खे है यथा चन्द्र १ नेत्र २ वेद ४ वसु ८ श्रृंगार १६।।

बन्दर सभा*

(सं० १९३६)

(इन्दर सभा उरदू मे एक प्रकार का नाटक है वा नाटका-भास है और यह बन्दर सभा उसका भी आभास है)

[आना राजा बन्दर का बीच सभा के]

सभा मे दोस्तो बन्दर की आमद आमद है।
गधे औ फूलो के अफसर की आमद आमद है ॥
मरे जो घोड़े तो गदहा य बादशाह बना।
उसी मसीह के पैकर की आमद आमद है।
व मोटा तन व थुँदला थुँदला मू व कुची आँख
व मोटे ओठ मुछन्दर की आमद आमद है ॥
है खर्च खर्च तो आमद नही खर-मुहरे की
उसी विचारे नए खर की आमद आमद है ॥१॥

[चौबोले जबानी राजा बन्दर के बीच अहवाल अपने के]

पाजी हूँ मै कौम का बन्दर मेरा नाम।
बिन फुजूल कूदे फिरे मुझे नही आराम ॥

---

* हरिश्चंद्र चन्द्रिका ख० ६ सं० १२ (जुलाई सन् १८७९ ई०) में छपा है। इसके सिवा और भी छपा होगा (पर प्राप्त नहीं है); क्योकि मधु मुकुल में छपे तीन पदों मे से दो पद इसमें नही हैं। (स०)

सुनो रे मेरे देव रे दिल को नहीं करार ।
जल्दी मेरे वास्ते सभा करो तैयार ॥
लाओ जल्दी को मेरे जलदी जाकर ह्याँ ।
सिर मूड़ैं गारत करैं मुजरा करैं यहाँ ॥१॥

[आना शुतुरमुर्ग परी का बीच सभा के]

आज महफिल में शुतुरमुर्ग परी आती है ।
गोया महमिल से व लैली उतरी आती है ॥
तेल औ पानी से पट्टी है सँवारी सिर पर ।
मुँह पै माँझा दिये जल्लादो जरी आती है ॥
झूठे पट्ठे की है मूबाफ पड़ी चोटी में ।
देखते ही जिसे आँखो मे तरी आती है ॥
पान भी खाया है मिस्सी भी जमाई हैगी ।
हाथ में पायँचा लेकर निखरी आती है ॥
मार सकते हैं परिन्दे भी नही पर जिस तक ।
चिड़िया-वाले के यहाँ अब व परी आती है ॥
जाते ही लूट लूँ क्या चीज़ खसोटूँ क्या शै ।
बस इसी फिक्र मे वह सोच भरी आती है ॥३॥

(ग़ज़ल जबानी शुतुरमुर्ग परी हसब हाल अपने के)

गाती हूँ मै औ नाच सदा काम है मेरा ।
ए लोगो शुतुरमुर्ग परी नाम है मेरा ॥
फन्दे से मेरे कोई निकलने नहीं पाता ।
इस गुलशने आलम मे बिछा दाम है मेरा ॥
दो चार टके ही पै कभी रात गँवा दूँ ।
कारूँ का ख़ज़ाना कभी इनआम है मेरा ॥

पहले जो मिले कोई तो जी उसका लुभाना ।
बस ! कार यही तो सहरो शाम है मेरा ॥
शुरफा व रुज़ला एक है दरबार मे मेरे ।
कुछ खास नही फैज़ तो इक आम है मेरा ॥
बन जाएँ चुगत् तब तो उन्हे मूड़ ही लेना ।
खाली हो तो कर देना धता काम है मेरा ॥
जर ,मज़हबो मिल्लत मेरा बन्दी हूँ मै ज़र की ।
ज़र ही मेरा अल्लाह है ज़र राम है मेरा ॥४॥

(छन्द जबानी शुतुरमुर्ग़ परी)

राजा बन्दर देस मै रहे इलाही शाद ।
जो मुझ सी नाचीज़ को किया सभा मे याद ॥
किया सभा मे याद मुझे राजा ने आज ।
दौलत माल खजाने की मै हूँ मुहताज ॥
रुपया मिलना चाहिये तख्त न मुझको ताज ।
जग मे बात उस्ताद की बनी रहे महराज ॥ ५ ॥

[ठुमरी ज़बानी शुतुरमुर्ग़ परी के]

आई हूँ मै सभा मे छोड़ के घर ।
लेना है मुझे इनआम मे ज़र ॥
दुनिया मे है जो कुछ सब ज़र है ।
बिन ज़र के आदमी बन्दर है ॥
बन्दर जर हो तो इन्दर है ।
जर ही के लिये कसबो हुनर है ॥ ६ ॥

[ग़ज़ल शुतुरमुर्ग़ परी की बहार के मौसिम मे]

आमद से बसन्तो के है गुलजार बसंती ।
है फर्श बसंती दरो-दीवार बसंती ॥

आँखों में हिमाकत का कँवल जब से खिला है।
आते हैं नज़र कूचओ बाजार बसन्ती ॥
अफयूँ मदक चरस के व चण्डू के बदौलत।
यारों के सदा रहते है रुखसार बसन्ती ॥
दे जाम मये गुल के मये ज़ाफरान के।
दो चार गुलाबी हों तो दो चार बसंती ॥
तहवील जो खाली हो तो कुछ कर्ज़ मँगा लो।
जोड़ा हो परी जान का तय्यार बसंती ॥ ७ ॥

[होली जबानी शुतुरमुर्ग़ परी के]

पा लागों कर जोरी भली कीनी तुम होरी।
फाग खेलि बहु रंग उड़ायो और धूर भरि झोरी ॥
धूँधर करौ भली हिलि मिलि कै अन्धाधुन्ध मचोरी।
न सूझत कछु चहुँ ओरी ॥
बने दीवारी के बबुआ घर लाइ भली विधि होरी।
लगी सलोनो हाथ चरहु अब दसमी चैन करो री ॥
सबै तेहवार भयो री ॥ ८ ॥

(फिर कभी)
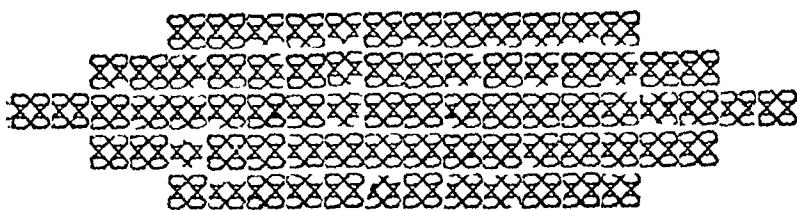
विजय-बल्लरी*

(सं० १९३८)

अहो आज आनंद का भारत भूमि मँझार।
सबकै हिय अति हर्ष क्यौ बाढ़्यो परम अपार ॥ १ ॥
आर्य्य गनन को का मिल्यौ जो अति प्रफुलित गात।
सबै कहत जै आजु क्यौ यह नहिं जान्यौ जात ॥ २ ॥
सबके मन संतोष अति सबके मन आनन्द।
सबही प्रमुदित देखियत ज्यो चकोर लहि चंद ॥ ३ ॥
कहा भूमि-कर उठि गयौ कै टिक्कस भो माफ।
जनसाधारन को भयो किधौं सिविल पथ साफ ॥ ४ ॥
नाटक अरु उपदेश पुनि समाचार के पत्र।
कारामुक्त भए कहा जो अनन्द अति अत्र ॥ ५ ॥
कै प्रतच्छ गो-बधन की जवनन छाँड़ी बानि।
जो सब आर्य्य प्रसन्न अति मन महँ मंगल मानि ॥ ६ ॥
कहा तुम्है नहिं खबर खबर जय की इत आई।
जीति देस गन्धार सत्रु सब दिये भगाई ॥ ७ ॥
सब औगुन की खानि अयूब भज्यौ असु लैकै।
प्रविसी सैना नगर माहि जय डंका दैकै ॥ ८ ॥

---

* अफ़ग़ान युद्ध के समाप्त होने पर यह कविता लिखी गई थी।

मेरट कारागार बस्यौ याकूब अभागो ।
और सबै बर्बर-दल इत उत बल-हत भागो ॥ ९ ॥
गो-भक्षक रक्षक बनि अँगरेजन फल पायो ।
तासों करि अति क्रोध सत्रुगन मारि भगायो ॥१०॥
पंचम पांडव जिमि सकुनी गन्धार पछार्यो ।
बृटिश रिषभ तिमि खरज काबुली मध्यम मार्यौ ॥११॥
रूम रूस उर सूल दियो ईरान दबायो ।
बृटिश सिंह को अटल तेज करि प्रगट दिखायो ॥१२॥
प्रथम जबै काबुलपति कछु अभिमान जनायो ।
तबै बृटिश हरि गरजि कोपि वापै चढ़ि धायो ॥१३॥
शेर अली भजि माँद समाधि प्रवेस कियो तब ।
ठहरि सकत कहुँ अली रंग-नायक उमड़ै जब ॥१४॥
रूस हूँस दै घूस प्रथम तेहि आस बढ़ाई ।
धोखा दैकै अन्त घूस बनि पोछ दबाई ॥१५॥
खैबर दर अरगला, कठिन गिरि सरित करारे ।
शत्रु हृदय सह तोड़ि तोड़ि रिजु कीन्हे सारे ॥१६॥
काबुल का बल करै बृटिश हरि गरजि चढ़ै जब ।
बन गरजें केहरी भजहि झट खर खच्चर सब ॥१७॥
नीति बिरुद्ध सदैव दूत बध के अघ साने ।
रूस कुमति फँसि हूस आप सों आप नसाने ॥१८॥
सिंह-चिन्ह को धुजा चढ़ी बाला-हिसार पर ।
जय देवी बिजयिनी सोर भो काबुल घर घर ॥१९॥
पुनि परतिज्ञा चेति सत्य सो बदन न मोड़्यो ।
खल-दल-बल दलमलि तृन-सम अफगानहि छोड़्यो॥२०॥
नृप अबदुल रहमान कियो आदेश सुनाई ।
सुद्ध, सत्य अरु दान-बीरता तृतिय दिखाई ॥२१॥

तजि कुदेस निज सैन सहित सब सेनापतिगन।
भारत मे फिर आय बसे जय कहत मुदित मन ॥२२॥
ताही को उत्साह बढ़्यौ यह चहुँ दिसि भारी।
जय जय बोलत मुदित फिरत इत उत नर नारी ॥२३॥
नहि नहि यह कारन नही अहै और ही बात।
जो भारतवासी सबै प्रमुदित अतिहिं लखात ॥२४॥
क़ाबुल सो इनको कहा हिये हरख की आस।
ये तो निज धन-नास सो रन सो और उदास ॥२५॥
ये तो समुझत व्यर्थ सब यह रोटी उतपात।
भारत कोष बिनास को हिय अति ही अकुलात ॥२६॥
ईति भीति दुष्काल सो पीड़ित कर को सोग।
ताहू पै धन-नास को यह बिनु काज कुयोग ॥२७॥
स्ट्रेची डिज़रैली लिटन चितय नीति के जाल।
फँसि भारत जरजर भयो काबुल-युद्ध अकाल ॥२८॥
सबहि भाँति नृप-भक्त जे भारतबासी-लोक।
शस्त्र और मुद्रण विषय करी तिनहुँ को लोक ॥२९॥
सुजस मिलै अङ्गरेज को होय रूस की रोक।
बढ़ै बृटिश बाणिज्य पै हम को केवल सोक ॥३०॥
भारत राज मँझार जौ कहुँ काबुल मिलि जाइ।
जज्ज कलक्टर होइहै हिन्दू नहि तित धाइ ॥३१॥
ये तो केवल मरन हित द्रव्य देन हित हीन।
तासो काबुल-युद्ध सो ये जिय सदा मलीन ॥३२॥
इनके जिय के हरख को औरहि कारन कोय।
जो ये सब दुख भूलि कै रहे अनन्दित होय ॥३३॥
अब जानी हम बात जौन अति आनँदकारी।
जासो प्रमुदित भये सबै भारत नर-नारी ॥३४॥

नृप रहमान अयूब दोऊ मिलि कलह मचाई ।
अन्त प्रबल ह्वै लिय अयूब गन्धार छुड़ाई ॥३५॥
आदि वंस नव वंस दोऊ कावुल अधिकारी ।
जाहि जातिगन चहैं करैं निज नृप बलधारी ॥३६॥
यामें हमरो कहा कउन उन सों मम नाता ।
भार पड़ैं मिलि लड़ैं भिड़ैं झगड़ैं सब भ्राता ॥३७॥
दृढ़ करि भारत-सीम बसै अँगरेज सुखारे ।
भारत असु बसु हरित करहिं सब आर्य्य दुखारे ॥३८॥
सत्रु सत्रु लड़वाइ दूर रहि लखिय तमासा ।
प्रबल देखिए जाहि ताहि मिलि दीजै आसा ॥३९॥
लिबरल दल बुधि भौन शान्तिप्रिय अति उदार चित ।
पिछली चूक सुधारि अबै करिहै भारत-हित ॥४०॥
खुलिहै "लोन" न युद्ध बिना लगिहै नहि टिक्स ।
रहिहै प्रजा अनन्द सहित बढ़िहै मंत्री-जस ॥४१॥
यहै सोचि आनन्द भरे भारतबासी जन ।
प्रमुदित इत उत फिरहि आज रच्छित लखि निज धन॥४२॥
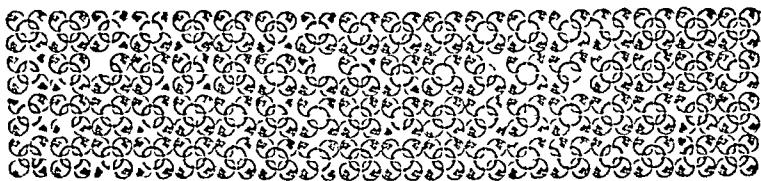
विजयिनी-विजय-पताका या वैजयंती*

(सं० १९३९)

PREFATORY NOTE.

A special meeting of the Benares Institute was held on the 22nd September 1882 at 6 P. M. in the Town Hall to express our joy at the recent success of the Indian army in Egypt. Almost all the raises, Civil, Revenue and Judicial officers, Pandits, Professors, Members of Municipal and District Committees and Scholars were present. The Hall was full and many were obliged to hear the recital from the verandah. The Honorable Raja Siva Prasad C. S. I was unanimously voted to the chair.

Babu Harischandra read an excellent poem in Hindi on the subject The opening stanzas of the poem explain the cause of India's unusual cheerfulness It is the signal success of the Indian army in Egypt

* आश्विन कृ० ६ स० १९३९ की कवि-वचन-सुधा खंड १४ सं० ९ में विजयिनी-विजय पताका छपी थी। अंग्रेजी की यह रिपोर्ट हिंदी में अनूदित होकर वहाँ छपी है। सं०

A vivid contrast is drawn between the past and present conditions of India and the victory of the British nation in Egypt is described.

The gentlemen present expressed their unqualified applause at the recital and the hall resounded with cheers. The Honorable Raja Siva Prasad C S. I. then described the importance of Egypt as a highway to India and said that the British conquest has been extremely rapid. He thanked Babu Harischandra for his excellent poem.

Mr. Bullock, the Collector warmly thanked Raja Siva Prasad and Babu Harischandra for sentiments of loyalty to the British Government, expressed by the people of Benares.

H. H. the Maharaja of Benares was unavoidably detained at Ram Nagar on account of some religious ceremony but he has expressed his full sympathy with the object of the meeting.
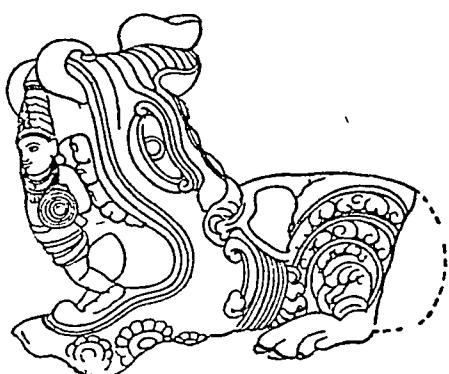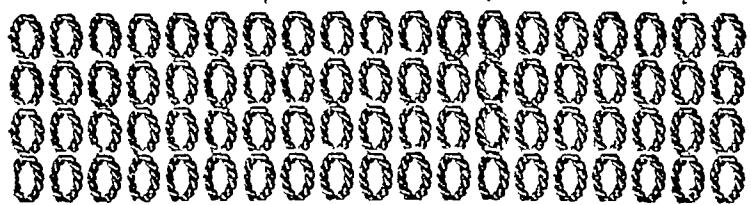
विजयिनी-विजय-पताका या वैजयंती*

कहो कहा यह सुनि परयौ जाको सबहि उछाह ।
हरखित आरज मात्र मे जिय बढ़ाइ अति चाह ॥ १ ॥

---

* मिस्र देश अफ्रीका महाद्वीप मे है । यह तुर्की सुलतानों के अधीन था, पर सन् १७९८ ई० मे नेपोलियन बोनापार्ट ने इसपर अधिकार कर लिया । सन् १८०१ ई० मे बृटेन ने इस पर अधिकार कर लिया और मुहम्मद अली सन् १८०५ ई० में मिस्र का खदीव (राजा, स्वामी) बनाया गया । सन् १८४९ ई० मे इसका पौत्र अब्बास प्रथम और सन् १८५४ में मुहम्मद अली का तृतीय पुत्र सईद खदीव हुआ । इसी के समय स्वेज़ नहर बनाना निश्चित हुआ । सन् १८६३ ई० मे इसमाइल खदीव हुआ और अपव्यय तथा ऋण से इसने सन् १८७५ ई० मे मिस्र का दिवाला निकाल दिया । यह सन् १८७९ ई० मे गद्दी से उतारा गया और इसका पुत्र गद्दी पर बैठाया गया । राज-कोष के निरीक्षण के लिए एक यूरोपियन कमीशन नियत हुआ । मिस्री लोग इससे क्रुद्ध थे और उनका यही क्रोध बाद मे अरबी पाशा के विद्रोह के रूप में परिणत हो गया । अंग्रेजो ने इसकंद्रिया और सईद बंदर पर अधिकार कर लिया और तेलेल-कबीर युद्ध मे विद्रोहियो को परास्त कर कैरो ले लिया । इसी युद्ध में भारतीय सेना भी योग देने को भेजी गई थी और उसने युद्ध मे अपनी क्षमता अच्छी तरह दिखलाई थी । सन् १८८२ ई० में अंग्रेजों का मिस्र पर प्रभुत्व स्थापित हो गया । (सं०)

फरकि उठीं सब की भुजा खरकि उठीं तलवार।
क्यों आपुहि ऊँचे भए आर्य मोंछ के बार ॥ २ ॥
जे आरजगन आजु लौं रहे नवाए माथ।
तेहू सिर ऊँचो किए क्यों दिखात इक साथ ॥ ३ ॥
क्यों पताक लहरन लगी फहरन लगे निसान।
क्यों बाजन बजिबे लगे घहरि घहरि इक तान ॥ ४ ॥
क्यों दुंदुभि हुंकार सों छायो पूरि अकास।
क्यों कंपित करि पवन-गति छई नफीरी-आस ॥ ५ ॥
बृटिश सुशासित भूमि मै रन-रस उमगे गात।
सबै कहत जय आजु क्यों यह नहि जानौ जात ॥ ६ ॥
छुटत तोप गंभीर रव बज्रनाद सम जोर।
गिरि कंपत थर थर खरे सुनि धर धर धर सोर ॥ ७ ॥
विंध्य हिमालय नील गिरि सिखरन चढ़े निसान।
फहरत "रूल ब्रिटानिया" कहि कहि मेघ समान ॥ ८ ॥
अटक कटक लौ आजु क्यौ सगरो आरज देस।
अति आनँद मैं भरि रह्यौ मनु दुख को नहि लेस ॥ ९ ॥
क्यों अ-जीव भारत भयो आजु सजीव लखात।
क्यौ मसान भुव आजु बनि रंगभूमि सरसात ॥१०॥
सहसन बरसन सों सुन्यौ जो सपनेहु नहि कान।
सो जय भारत शव्द क्यो पूर्यौ आजु जहान ॥११॥

शाखा

कहा तुम्है नहि खबर खबर जय की इत आई।
जीति मिसर मै शत्रु-सैन सब दई भगाई ॥१२॥
तड़ित तार के द्वार मिल्यौ सुभ समाचार यह।
भारत-सेना कियो घोर संग्राम मिश्र मह ॥१३॥

जेनरल मकफरसन आदिक जे सेनापति-गन ।
तिन लै भारत सैन कियो भारी अति ही रन ॥१४॥
बोलि भारती-सैन दयी आयसु उठि धाओ ।
अभिमानी अरबी बेगहि बेगहि गहि लाओ ॥१५॥
सुनि कै सबही परम बीरता आजु दिखाई ।
शत्रु-गनन सो सनमुख भारी करी लराई ॥१६॥
छिन मै शत्रु भगाइ गह्यौ अरबी पासा कहँ ।
तीन सहस रन-बीर करे बँधुआ संगर महँ ॥१७॥
आरजगन को नाम आजु सब ही रखि लीनो ।
पुनि भारत को सीस जगत महँ उन्नत कीनो ॥१८॥

आरंभ

कित अरजुन, कित भीम कित करन नकुल सहदेव ।
कित बिराट, अभिमन्यु कित द्रुपद सल्य नरदेव ॥१९॥
कित पुरु, रघु, अज, यदु कितै परशुराम अभिराम ।
कित रावन, सुग्रीव कित हनूमान गुनधाम ॥२०॥
कित भीषम, कित द्रोन कित सात्यकि अति रनधीर ।
कित पोलस, कित चन्द्र, कित पृथ्वीराज, हम्मीर ॥२१॥
कित सकारि विक्रम, कितै समरसिंह नरपाल ।
कित अंतिम नर-वीर रन-जीतसिंह भूपाल ॥२२॥
कहहु लखहि सब आइ निज संतति को उत्साह ।
सजे साज रन को खरे मरन-हेत करि चाह ॥२३॥
स्वामिभक्तिकिरतज्ञता दरसावन-हित आज ।
छाँड़ि प्रान देखहि खरो आरज बंस समाज ॥२४॥
तुमरी कीरति कुल-कथा साँची करबे हेतु ।
लखहु लखहु नृप-गन सबै फहरावत जय-केतु ॥२५॥

मेटहु जिय के सल्य सब सफल करहु निज नैन।
लखहु न अरबी सों लरन ठाढ़ी आरज-सैन ॥२६॥

शाखा

सुनत बीर इक वृद्ध नरन के सन्मुख आयो।
श्वेत सिंह जिमि गुहा छाँड़ि बाहर दरसायो ॥२७॥
सुभ्र मोछ फहरात सुजस की मनहुँ पताका।
सेत केस सिर लसत मनहुँ थिर भई बलाका ॥२८॥
अरुन बदन ढिग सेत केस सुंदर दरसायो।
वीर रसहि मनु घेरि रह्यौ रस सांत सुहायो ॥२९॥
रवि-ससि मिलि इक ठौर उदित सी कांति पसारे।
पीन हृदय आजानु-बाहु स्वेताम्बर धारे ॥३०॥
कटि पै भाथा कंध धनुष कर मै करवाला।
परी पीठ पैं ढाल गुलाबी नैन बिसाला ॥३१॥
सिह ठवनि निरभय चितवनि चितवत समुहाई।
तन दुति फैली छूटि परत धरनी पर आई ॥३२॥
नभ मधि ठाढ़े होइ कही यह घन सम बानी।
अति गँभीर कछु करुना कछुक बीर-रस-सानी ॥३३॥

कोरस

क्यों बहरावत झूठ मोहि और बढ़ावत सोग।
अब भारत मै नाहि वे रहे बीर जे लोग ॥३४॥
जो भारत जग मै रह्यौ सब सो उत्तम देस।
ताही भारत मै रह्यौ अब नहि सुख को लेस ॥३५॥
याही भुव मै होत है हीरक, आम, कपास।
इतही हिमगिरि, गंग-जल, काव्य-गीत-परकास ॥३६॥
याही भारत देस मै रहे कृष्ण मुनि व्यास।
जिनके भारत-गान सों भारत-बदन प्रकास ॥३७॥

जासु काव्य सों जगत-मधि ऊँचो भारत-सीस।
जासु राज-बल-धर्म की तृषा करहिं अवनीस ॥३८॥
सोई व्यास अरु राम के बंस सबै संतान।
अब लौ ये भारत भरे नहि गुन-रूप-समान ॥३९॥
कोटि कोटि ऋषि पुन्य-तन, कोटि कोटि नृप सूर।
कोटि कोटि बुध, मधुर, कवि मिले यहाँ की धूर ॥४०॥

आरंभ

हाय वहै भारत भुव भारी।
सब ही बिधि ते भई दुखारी ॥
रोम, ग्रीस पुनि निज बल पायो।
सब बिधि भारत दुखित बनायो ॥४१॥
अति निरबली स्याम जापाना।
हाय न भारत तिनहुँ समाना ॥
हाय रोम तू अति बड़-भागी।
बरबर तोहि नास्यो जय लागी ॥४२॥
तोड़े कीरति-खंभ अनेकन।
ढाहे गढ़ वहु करि जय-टेकन।
सबै चिन्ह तुव धूर मिलाए।
मंदिर महलनि तोरि गिराए ॥४३॥
कछु न बची तुव भूमि निसानी।
सो बरु मेरे मन अति मानी।
पै भारत-भुव-जीतन-हारे।
थाप्यौ पद या सीस उघारे ॥४४॥
तोरयो दुर्गन, महल ढहायो।
तिनही मैं निज गेह बनायो ॥

ते कलंक सब भारत केरे।
ठाढ़े अजहूँ लखो घनेरे ॥४५॥
हाय पंचनद, हा पानीपत।
अजहुँ रहे तुम धरनि बिराजत।
हाय चितौर निलज तू भारी।
अजहुँ खरो भारतहि मँझारी ॥४६॥
जा दिन तुव अधिकार नसायो।
ताही दिन किन धरनि समायो ॥
रह्यो कलंक न भारत-नामा।
क्यों रे तू बाराणसि धामा ॥४७॥
इनके भय कंपत संसारा।
सब जग इनको तेज पसारा।
इनके तनिकहि भौंह हिलाए।
थर थर कंपत नृप भय पाए ॥४८॥
इनके जय की उज्जल गाथा।
गावत सब जग के रुचि साथा।
भारत-किरिन जगत उँजियारा।
भारत जीव जियत संसारा ॥४९॥
भारत-भुज-बल लहि जग रच्छित।
भारत-विद्या सों जग सिच्छित।
रहे जबै मनि क्रीट सुकुंडल।
रह्यौ दंड जय प्रबल अखण्डल ॥५०॥
रह्यौ रुधिर जब आरज सीसा।
ज्वलित अनल-समान अवनीसा।
साहस बल इन सम कोउ नाहीं।
जबै रह्यौ महि मंडल माहीं ॥५१॥

तब इनही की जगत बड़ाई।
रही सबै जग कीरति छाई।
तितही अब ऐसो कोउ नाहीं।
लरै छिनहुँ जो संगर माहीं ॥५२॥
प्रगट वीरता देइ दिखाई।
छन महँ मिसरहि लेइ छुड़ाई।
निज भुज-बल विक्रम जग माड़ै।
भारत-जस-धुज अविचल गाड़ै ॥५३॥
यवन-हृदय-पत्री पर बरबस।
लिखै लोह-लेखनि भारत-जस।
पुनि भारत-जस करि विस्तारा।
मम मुख फेर करै उँजियारा ॥५४॥

शाखा

हाय !
सोई भारत भूमि भई सब भाँति दुखारी।
रह्यौ न एकहु बीर सहस्रन कोस मँझारी ॥५५॥
होत सिंह को नाद जौन भारत-बन माहीं।
तहँ अब ससक सियार स्वान खर आदि लखाहीं ॥५६॥
जहँ झूसी उज्जैन अवध कन्नौज रहे वर।
तहँ अब रोअत सिवा चहूँ दिसि लखियत खँडहर ॥५७॥
धन विद्या बल मान वीरता कीरति छाई।
रही जहाँ तित केवल अब-दीनता लखाई ॥५८॥

कोरस

अरे वीर इक बेर उठहु सब फिर कित सोए।
लेहु करन करवाल काढ़ि रन-रंग समोए ॥५९॥

चलहु बीर उठि तुरत सबै जय-ध्वजहि उड़ाओ ।
लेहु म्यान सों खड्ग खींचि रन-रंग जमाओ ॥६०॥

परिकर कटि कसि उठौ बँदूकन भरि भरि साधौ ।
सजौ जुद्ध-बानो सब ही रन-कंकन बाँधो ॥६१॥

का अरबी को बेग कहा वाको बल भारी ।
सिंह जगे कहुँ स्वान ठहरिहैं समर मँझारी ॥६२॥

पद-तल इन कहँ दलहु कीट-तृन-सरिस नीच-चय ।
तनिकहु संक न करहु धर्म जित जय तित निश्चय ॥६३॥

जिन बिनही अपराध अनेकन कुल संहारे ।
दूत पादरी बनिक आदि बिन दोसहि मारे ॥६४॥

प्रथम जुद्ध परिहार कियो विश्वास दिवाई ।
पुनि धोखा दै एकाएकी करी लराई ॥६५॥

इनको तुरतहि हतौ मिलैं रन कै घर माहीं ।
इन छलियन सों पाप किएहू पुन्य सदाहीं ॥६६॥

उठहु बीर तरवार खींचि माड़हु घन संगर ।
लोह-लेखनी लिखहु आर्य बल जवन-हृदय पर ॥६७॥

मारू बाजे बजैं कहौ धौंसा घहराहीं ।
उड़हि पताका सत्रु-हृदय लखि लखि थहराहीं ॥६८॥

चारन बोलहि विजय-सुजस बन्दी गुन गावैं ।
छुटहि तोप घनघोर सबै बंदूक चलावैं ॥६९॥

चमकहि असि भाले दमकहि ठनकहिं तन बखतर ।
हींसहिं हय झमकहिं रथ अज चिक्करहि समर थर ॥७०॥

नासहु अरबी शत्रु-गनन कहँ करि छन महँ छय ।
कहहु सबहि विजयिनी-राज महँ भारत की जय ॥७१॥

आरंभ

सुनत उठे सब बीर-बर कर महँ धारि कृपान।
कियो सबन मिलि जुद्ध-हित धारि उमंग पयान ॥७२॥
पहिनि जिरह कटि कसि सबै तौलत चले कृपान।
लै बँदूक साधत चले लच्छ बीर बलवान ॥७३॥
निरभय पग आगहिं परत मुख ते भाखत मार।
चले बीर सब लरन हित मिसरिन सो इकबार ॥७४॥
चंद्र-सूर्य-बंसी जिते प्रमर, अनल, चौहान।
घोड़न चढ़ि आए सबै छत्री बीर सुजान ॥७५॥
सुमिरि सुमिरि छत्री सबै निज पुरुषन की बात।
धाए ऐंठत मोछ निज उमगि वीर रस गात ॥७६॥
उमगी भारत-सैन जब समुद-सरिस घनघोर।
तब मिसरी चीनी कहा का सैंधव को जोर ॥७७॥
बजी बृटिश रन-दुंदुभी गरजे गहकि निसान।
कंपे थर थर भूमि गिरि नदी नगर असमान ॥७८॥

शाखा

दमामा सनाई बजाओ बजाओ।
अरे राग मारू सुनाओ सुनाओ।
सबै फौज आगे बढ़ाओ बढ़ाओ।
अरे जै-पताका उड़ाओ उड़ाओ॥
कहाँ बीर हौ बेग धाओ सु-धाओ।
अरे बीरता को दिखाओ दिखाओ।
अरे म्यान सो शस्त्र खोलो सु-खोलो।
अरे मार मारौ धरौ मार बोलो॥
अरे शत्रु को सीस काटो सु-काटो।
अरे कायरै दौरि डाँटो सु-डाँटो॥

निसाना सबै लै लगाओ लगाओ ।
अरे लै बँदूकैं चलाओ चलाओ ॥
सबै युद्ध भारी मचाओ मचाओ ।
अरे शत्रु-सेनै भगाओ भगाओ ॥७९॥

कोरस

भगी शत्रु की सैन रह्यौ कहुँ नाहिं ठिकाना ।
कै जमपुर कै गिरि बन कबुरन कियो पयाना ॥८०॥
सुख सो बस्यौ खदीव प्रजागन अति सुख पायो ।
ब्रिटिश क्रोध को फल सब कहँ परतच्छ लखायो ॥८१॥
मथ्यौ समुद्रहि जिन ब्रिटानिया निज कटाक्ष-बल ।
जग महँ जिनको निरभय बिचरत कठिन प्रबल दल ॥८२॥
जिन भारत महँ आइ तोप-बल दह्यौ बज्र कहँ ।
अग्नि-बान जय-पत्र लिख्यौ जिन भारत-अँग महँ ॥८३॥
कठिन छत्रियन जीति लए जिन बहु गढ़ सहजहि ।
सिक्खन दीनी हार लियो मुलतान तनिक चहि ॥८४॥
तर्जनि अग्र हिलाइ लखनऊ छिन महँ लीनो ।
तनिक दृष्टि की कोर सकल राजन बस कीनो ॥८५॥
कठिन सिपाही-द्रोह-अनल जा जल-बल नासी ।
जिन भय सिर न हिलाइ सकत कहुँ भारतवासी ॥८६॥
जासु सैन-बल देखि रूस सहजहि जिय हार्‌यौ ।
बरलिन संधिहि मानि कोऊ बिधि समयहि टार्‌यौ ॥८७॥
सहजहि निज बस कीनी जिन सिप्रस को टापू ।
छाइ दियो सब नृपनन पै निज प्रबल प्रतापू ॥८८॥
काबुल अरु कंधार कठिन महँ हलचल पार्‌यौ ।
शेरअली-याकूब-अयूबहि सहज उखार्‌यौ ॥८९॥

खैबर दर्र अरगला कठिन गिरि-सरित करारे।
सत्रु-हृदय सह तोड़ि तोड़ि रिजु कीन्हे सारे ॥९०॥
रूम-रूस-उर सूल दियो ईरान दबायो।
बृटिश सिंह को अटल तेज करि प्रगट दिखायो ॥९१॥
सिंह चिन्ह की धुजा चढ़ी बाला हिसार पर।
जय देवी विजयिनी सोर भो काबुल घर घर ॥९२॥
ताके आगे कहा मिसिर का अरबी को बल।
इन सो सपनहु बैर किए पावे परतछ फल ॥९३॥
बज्यौ बृटिश डंका गहकि धुनि छाई चहुँ ओर।
जयति राजराजेश्वरी कियो सबनि मिलि सोर ॥९४॥
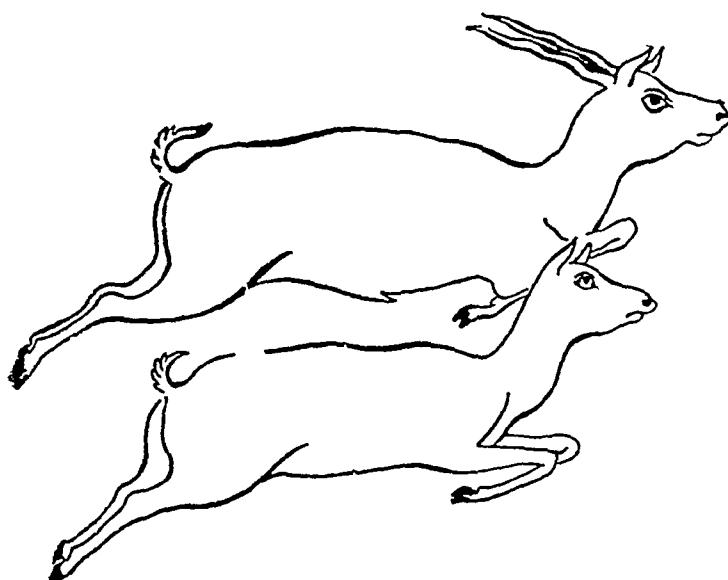
नए जमाने की मुकरी*

(सं० १९४१)

जब सभाविलास संगृहीत हुई थी, तब वैसा ही काल था कि (क्यौं सखि सज्जन ना सखि पंखा) इस चाल की मुकरी लोग पढ़ते पढ़ाते थे किन्तु अब काल बदल गया तो उसके साथ मुकरियाँ भी बदल गईं। बानगी दस पाँच देखिये—

सब गुरुजन को बुरो बतावै।
अपनी खिचड़ी अलग पकावै॥
भीतर तत्व न झूठी तेजी।
क्यो सखि सज्जन नहि अँगरेजी॥ १॥

तीन बुलाए तेरह आवै।
निज निज बिपता रोइ सुनावैं॥
आँखौ फूटे भरा न पेट।
क्यों सखि सज्जन नहि ग्रैजुएट॥ २॥

सुंदर बानी कहि समुझावै।
बिधवागन सों नेह बढ़ावै॥
दयानिधान परम गुन-आगर।
सखि सज्जन नहि विद्यासागर॥ ३॥

---

* नवोदिता हरिश्चंद्र चंद्रिका खं० ११ सं० १ मे प्रकाशित।

सीटी देकर पास बुलावै ।
रुपया ले तो निकट बिठावै ॥
ले भागै मोहि खेलहि खेल ।
क्यों सखि सज्जन नहिं सखि रेल ॥ ४ ॥

धन लेकर कछु काम न आवै ।
ऊँची नीची राह दिखावै ॥
समय पड़े पर साधै गुंगी ।
क्यो सखि सज्जन नहिं सखि चुंगी ॥ ५ ॥

मतलब ही की बोलै बात ।
राखै सदा काम की घात ॥
डोलै पहिने सुंदर समला ।
क्यों सखि सज्जन नहि सखि अमला ॥ ६ ॥

रूप दिखावत सरबस लूटै ।
फंदे मे जो पड़ै न छूटै ॥
कपट कटारी जिय मैं हूलिस ।
क्यो सखि सज्जन नहिं सखि पूलिस ॥ ७ ॥

भीतर भीतर सब रस चूसै ।
हँसि हँसि कै तन मन धन मूसै ॥
जाहिर बातन में अति तेज ।
क्यो सखि सज्जन नहि अँगरेज ॥ ८ ॥

सतएँ अठएँ मो घर आवै ।
तरह तरह की बात सुनावै ॥
घर बैठा ही जोड़ै तार ।
क्यो सखि सज्जन नहि अखबार ॥ ९ ॥

एक गरभ मै सौ सौ पूत ।
जनमावै ऐसा मजबूत ॥

करै खटाखट काम सयाना।
सखि सज्जन नहिं छापाखाना ॥१०॥
नई नई नित तान सुनावै।
अपने जाल में जगत फँसावै ॥
नित नित हमै करै बल-सून।
क्यो सखि सज्जन नहि कानून ॥११॥
इनकी उनकी खिदमत करो।
रुपया देते देते मरो ॥
तब आवै मोहि करन खराब।
क्यों सखि सज्जन नहीं खिताब ॥१२॥
लंगर छोड़ि खड़ा हो झूमै।
उलटी गति प्रतिकूलहि चूमै ॥
देस देस डोलै सजि साज।
क्यो सखि सज्जन नहीं जहाज ॥१३॥
मुँह जब लागै तब नहि छूटै।
जाति मान धन सब कुछ लूटै ॥
पागल करि मोहि करे खराब।
क्यो सखि सज्जन नहीं सराब ॥१४॥
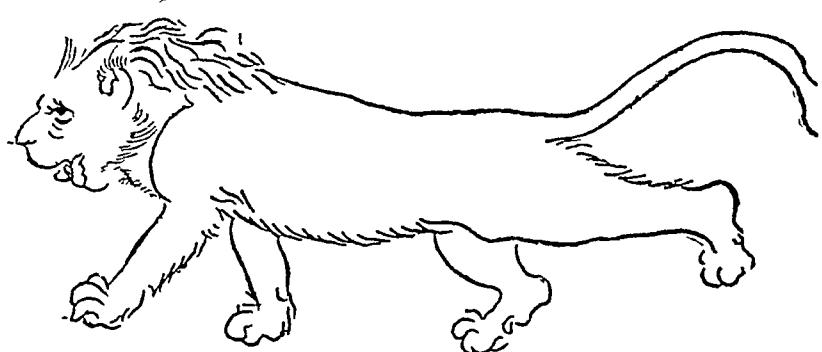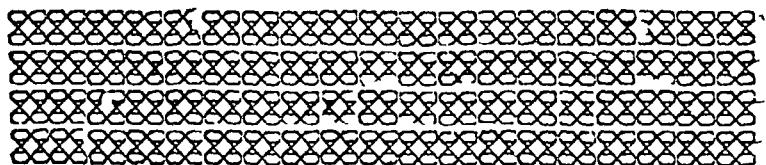
जातीय संगीत

(सं० १९४१)

प्रभु रच्छहु दयाल महरानी।
बहु दिन जिए प्रजा-सुखदानी॥
हे प्रभु रच्छहु श्री महारानी।
सब दिसि मे तिनकी जय होई।
रहै प्रसन्न सकल भय खोई।
राज करै बहु दिन लौ सोई।
हे प्रभु रच्छहु श्री महरानी॥१॥

उठहु उठहु प्रभु त्रिभुवन राई।
तिनके अरिन देहु अकुलाई।
रन महँ तिनहि गिरावहु मारी।
सब दुख दारिद दूर बहाओ।
विद्या और कला फैलाओ।
हमरे घर महँ शांति बसाओ।
देहु असीस हमै सुखकारी॥२॥

प्रभु निज अनगन सुभग असीसा।
बरसहु सदा विजयिनी-सीसा।
देहु निरुजता जस अधिकारा।
कृषक, राजसुत, कै अधिकारी।
करहि राज को संभ्रम भारी।

निकट दूर के सब नर नारी।
करहिं नाम आदर विस्तारा ॥३॥

रच्छहु निज भुज तर सह साजा।
सब समर्थ राजन के राजा।
अलख राज कर सब बल-खानी।
बिनय सुनहु बिनवत सब कोई।
पूरब सों पच्छिम लौं जोई।
राजभक्त-गन इक मन होई।
हे प्रभु रच्छहु श्री महारानी ॥४॥

(युद्ध के समय योधागण के गाने को)

उठहु उठहु प्रभु त्रिभुअन-राई।
तिनके शत्रु देहु छितराई।
रन महँ तिनहिं गिरावहु मारी।
स्वामिनि स्वत्व हेतु जे बीरा।
लड़हिं हरहु तिनकी सब पीरा।
यह बिनवत हम तुव पद तीरा।
हे प्रभु जग-स्वामी सुखकारी ॥५॥

(अकाल और उपद्रव के समय गाने को)

उठहु उठहु प्रभु ! त्रिभुवन-राई।
कठिन काल मे होहु सहाई।
देहु हमहिं अवलंबन भारी।
अभय हाथ मम सीस फिराओ।
मुरझी भुव पर सुख बरसाओ।
पिता विपति सों हमहिं बचाओ।
आइ सरन तुव रहे पुकारी ॥६॥

रिपनाष्टक

(सं० १९४१)

जय जय रिपन* उदार जयति भारत-हितकारी ।
जयति सत्य-पथ-पथिक जयति जन-शोक-बिदारी ॥
जय मुद्रा-स्वाधीन-करन सालम दुख-नाशन ।
भृत्य-वृत्ति-प्रद जय पीड़ित-जन दया-प्रकाशन ॥
जय प्रजा-राज्यस्थापन-करन हरन दीन भारत-विपद ।
जय भारतवासिहि देन नव-महा-न्यायपति प्रथम पद ॥१॥

---

* जार्ज फ्रेडरिक सैमुएल रॉबिन्सन, मारक्विस ऑव रिपन का जन्म सन् १८२७ ई० में लंदन में हुआ था। यह सन् १८६१ ई० से १८६५ ई० तक भारत सचिव रहे और फिर कई पदों पर रहकर सन् १८८० ई० मे भारत के बड़े लाट हुए। इनके समय मे सन् १८८१ ई० मे वर्नाक्युलर प्रेस एक्ट तोड़ दिया गया। सन् १८८१ ई० मे मैसूर राज्य उसके प्राचीन राजवंश को सौंप दिया गया। इलबर्ट बिल भी इन्ही के समय मे प्रस्तावित हुआ था। अफग़ान युद्ध का अंत इन्ही के समय में हुआ और अब्दुर्रहमान काबुल के अमीर हुए। लार्ड रिपन उन शिक्षित भारतीयों को, जो राजकर्मचारी नहीं थे, राज्य प्रबंध के संपर्क में लाने का सदा प्रयत्न करते रहे और इन्होंने स्थानिक-स्वराज्य के लिए कई नये नियम चलाए थे। इन्ही कारणो से यह भारत में विशेष सम्मानित हुए थे। यह सन् १८८४ ई० मे विलायत लौट गए।

जय जय हिंदू-उन्नति-पथ-अवरोध-मुक्त - कर ।
जय कर-बंधन-मंथर-कर जय जयति गुणाकर ॥
जय जन-सिच्छन-हेत समिति-सिच्छा-संस्थापक ।
जय जय सेतासेत बरन सम संमत मापक ॥
जय राज्य धुरंधर धीर जय भारत-शिल्पोन्नति-करन ।
जय परम प्रजावत्सल सदा सत्य-प्रिय जय श्री रिपन ॥२॥

राजतंत्र के पंडित तुम जानत प्रयोग खट ।
स्तंभन कीनो राज-बाक्य करि अटल नीति अट ॥
जन-दुख-मारन उच्चाटन द्वैविद्ध भाव जग ।
बिद्वेषण स्वारथी मिलित दल मद्ध न्याय मग ॥
आकर्षण मन सब जनन को निज उदार गुण प्रगट-कर ।
जय मोहन मंत्र समान निज वाक्य विमोहित देशवर ॥३॥

जय भारत-नव-उदित-रिपन-चंद्रमा मनोहर ।
शुक्ल-कृष्ण-सम तेज तदपि जस अपजस बिधि कर ॥
जस-चंद्रिका विकासि प्रकास्यौ उन्नति मारग ।
वाक्य अमृत बरसाइ किए आल्हादित नर जग ॥
ससअंक बंगाबिल सो लसत जन-मन-कुमुद प्रफुल्लतर ।
सत्ताइस रैन प्रकास सम सत्ताइस शुभ कर्म कर ॥४॥

जय तीरथपति रिपन प्रजा अघ-शोक-बिनाशक ।
गंग-जमुन-सम मिलित तदपि जान्हवि मरजादक ॥
अक्षय बट सम अचल कीर्त्ति थापक मन पावन ।
गुप्त सरस्वति प्रगट कमीशन मिस दरसावन ॥
कलि-कलुष प्रजागत-भीति को सब बिधि मेटन नाम रट ।
जय तारन-तरन प्रयाग-सम जस चहुँ दिसि सब पै प्रगट ॥५॥

जदपि बाहु-बल क्लाइव जीत्यौ सगरो भारत।
जदपि और लाटनहू को जन नाम उचारत॥
जदपि हेसटिंग्ज़ आदि साथ धन लै गए भारी।
जदपि लिटन दरबार कियो सजि बड़ी तयारी॥
पै हम हिंदुन के हीय की भक्ति न काहू सँग गई।
सो केवल तुमरे सँग रिपन छाया सी साथिन भई॥ ६॥

शिवि दधीच हरिचंद कर्ण बलि नृपति युधिष्ठिर।
जिमि हम इनके नाम प्रात उठि सुमिरत हैं चिर॥
तिमि तुमहू कहँ नितहि सुमिरिहैं तुव गुन गाई।
यासो बढ़ि अनुराग कहो का सकत दिखाई॥
हम राजभक्ति को बीज जो अब लौं उर अंतर धर्यौ।
निज न्याय-नीर सो सींचि कै तुम वामैं अंकुर कर्यौ॥ ७॥

निज सुनाम के बरन किए तुम सकल सबहि बिधि।
रिपु सब किए उदास दई हिय राजभक्ति सिधि॥
महरानी को पन राख्यौ निज नवल रीति बल।
परि मध न्याय-तुला के नप राख्यौ सम दुहुँ दल॥
सब प्रजापुंज-सिर आपकौ रिन रहिहै यह सर्व छन।
तुम नाम देव सम नित जपत रहिहैं हम हे श्री रिपन॥ ८॥
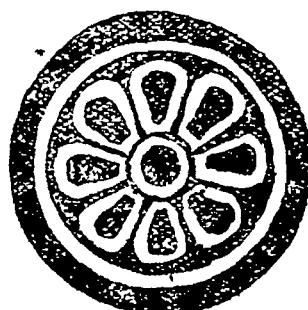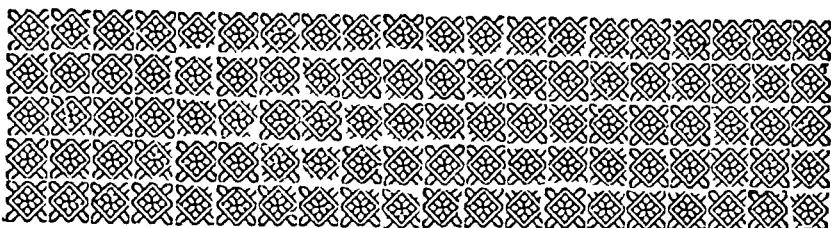
स्फुट कविताएँ

दोहे और सोरठे आदि

है इत लाल कपोल ब्रत कठिन प्रेम की चाल।
मुख सो आह न भाखिहैं निज सुख करो हलाल ॥ १ ॥
प्रेम बनिज कीन्हो हुतो नेह नफा जिय जान।
अब प्यारे जिय की परी प्रान-पुँजी मे हान ॥ २ ॥
तेरोई दरसन चहै निस-दिन लोभी नैन।
श्रवन सुनो चाहत सदा सुन्दर रस-मै बैन ॥ ३ ॥
डर न मरन बिधि बिनय यह भूत मिलैं निज बास।
प्रिय हित वापी मुकुर मग बीजन अँगन अकास ॥ ४ ॥
तन-तरु चढ़ि रस चूसि सब फूली-फली न रीति।
प्रिय अकास-बेली भई तुव निर्मूलक प्रीति ॥ ५ ॥
पिय पिय रटि पियरी भई पिय री मिले न आन।
लाल मिलन की लालसा लखि तन तजत न प्रान ॥ ६ ॥
मधुकर धुन गृह दंपती पन कोने मुकताय।
रमा बिना यक ब्रिन कहै गुन बेगुनी सहाय ॥ ७ ॥
चार चार षट पट दोऊ अस्टादस को सार।
एक सदा द्वै रूप धर जै जै नंदकुमार ॥ ८ ॥

नीलम औ पुखराज दोउ जद्यपि सुख 'हरिचंद' ।
पै जो पन्ना होइ तो बाढ़ै अधिक अनंद ॥ ९ ॥
नीलम नीके रंग को हौ लाई हौ बाल ।
कहुँ न देय तो होयगो अति अद्भुत अहवाल ॥१०॥
जद्यपि है बहु दाम को यह हीरा री माय ।
बनै तबै जब नीलमनि निकट जड़्यो यह जाय ॥११॥
नैन नवल 'हरिचंद' गुन लाल असित सित तीन ।
त्रिविध सक्ति त्रैदेव कै तिरबेनी के मीन ॥१२॥
कहन दीन के बैन देहु बिधाता एक बर ।
नहि लागै ये नैन कोऊ सो जग नरन में ॥१३॥
प्रेम–प्रीति को बिरवा चलेहु लगाय ।
सींचन की सुध लीजो मुरझि न जाय ॥१४॥

सवैया

अब और के प्रेम के फंद परे हमें पूछत कौन, कहाँ तू रहै ।
अहै मेरेइ भाग की बात अहो तुम सो न कछू 'हरिचंद' कहै ॥
यह कौन सी रीत अहै हरिजू तेहि मारत हौ तुमको जो चहै ।
वह भूलि गयो जो कही तुमने हम तेरे अहैं तू हमारी अहै ॥ १ ॥

हम चाहत है तुमको जिउ से तुम नेकहू नाहिंनै बोलती हौ ।
यह मानहु जो 'हरिचंद' कहै केहि हेत महाबिप घोलती हौ ॥
तुम औरन सो नित चाह करौ हमसो हिअ गाँठ न खोलती हौ ।
इन नैन के डोर बँधी पुतरी तुम नाचत औ जग डोलती हौ ॥ २ ॥

जा मुख देखन को नितहीं रुख दूतिन दासिन को अवरेख्यो ।
मानी मनौती हू देवन की 'हरिचंद' अनेकन जोतिस लेख्यो ॥
सो निधि रूप अचानक ही मग मे जमुना जल जात मै देख्यो ।
सोक को थोक मिट्यो सब आजु असोक की छाँह सखी पिय पेख्यो ॥३॥

रैन में ज्यौंही लगी झपकी त्रिजटे सपने सुख कौतुक-देख्यो ।
लै कपि भालु अनेकन साथ मैं तोरि गढ़ै चहुँ ओर परेख्यो ॥
रावन मारि बुलावन मो कहँ सानुज मैं अबही अवरेख्यो ।
सोक नसावत आवत आजु असोक की छाँह सखी पिय पेख्यो ॥ ४ ॥

सदा चार चवाइन के डर सो नहिं नैनहु साम्हे नचायो करैं ।
निरलज्ज भई हम तो पै डरैं तुमरो न चवाव चलायो करैं ॥
'हरिचंद जू' वा बदनामिन के डर तेरी गलीन न आयो करैं ।
अपनी कुल-कानिहुँ सों बढ़ि कै तुम्हरी कुल-कानि बचायो करैं ॥ ५ ॥

तजि कै सब काम को तेरे गलीन मे रोजहि रोज तो फेरो करै ।
तुव बाट बिलोकत ही 'हरिचंद' जू बैठि के साँझ सबेरो करै ॥
पै सही नहि जात भई बहुतै सो कहाँ कह लौं जिय छोरो करै ।
पिय प्यारे तिहारे लिये कब लौं अब दूतिन को मुख हेरो करै ॥ ६ ॥

आइये मो घर प्रान पिया मुखचन्द दया करि कै दरसाइये ।
प्याइये पानिय रूप सुधा को बिलोकि इतै दृग प्यास बुझाइये ॥
छाइये सीतलता हरीचंद जू हा हा लगी हियरे की बुझाइये ।
लाइए मोहि गरे हँसि कै उर ग्रीषमै प्यारे हिमन्त बनाइये ॥ ७ ॥

कोऊ कलंकिनि भाखत है कहि कामिनिहू कोऊ नाम धरैगो ।
त्रासत है घर के सिगरे अब बाहरीहू तो चवाव करैगो ॥
दूतिन की इनकी उनकी 'हरिचंद' सबै सहते ही सरैगो ।
तेरेई हेत सुन्यो न कहा कहा औरहू का सुनिबो न परैगो ॥ ८ ॥

मन लागत जाको जबै जिहिसौ करि दाया तो सोऊ निभावत है ।
यह रीति अनोखी तिहारी नई अपुनो जहाँ दूनो दुखावत है ॥
'हरिचंद जू' बानो न राखत आपुनो दासहू ह्वै दुख पावत है ।
तुम्हरे जन होइ कै भोगै दुखै तुम्हे लाजहू हाय न आवत है ॥ ९ ॥

देखत पीठि तिहारी रहैंगे न प्रान कबौ तन बीच नवारे।
आओ गरे लपटौ मिलि लेहु पिया 'हरिचंद' जू नाथ हमारे॥
कौन कहै कहा होयगो पाछे बनै न बनै कछु मेरे सम्हारे।
जाइयो पाछे बिदेस भले करि लेन दे भेट सखीन सों प्यारे॥१०॥

पीवै सदा अधरामृत स्याम को भागन याको सुजात कहा है।
बाजै जबै बन मे सजनी 'हरिचंद' तबै सुधि मूल वहाँ है॥
छूटै सबै धन-धाम अली हिय व्याकुलता सुनि होत महा है।
बेनु के बंस भई बँसुरी जो अनर्थ करै तो अचर्ज कहा है॥११॥

लै बदनामी कलंकिनि होइ चवाइन को कब लौ मुख चाहिए।
सासु जेठानिन की इनकी उनकी कब लौ सहिकै जिय दाहिए॥
ताहू पै एती रुखाई पिया 'हरिचंद' की हाय न क्यौंहूँ सराहिए।
का करिए मरिए केहि भाँतिन नेह को नातो कहाँ लौ निबाहिए॥१२॥

लखिकै अपने घर को निज सेवक भी सबै हाथ सदा धरिहै।
हल सो सब दूषन खैंचि झटै सब बैरिन मूसल सो मरिहै॥
अनुजै प्रिय जो सो सदा उनको प्रिय कारज ताको न क्यौं सरिहै।
जिनके रछपाल गोपाल धनी तिनको बलभद्र सुखी करिहै॥१३॥

अब प्रीत करी तौ निबाह करौ अपने जन सो मुख मोरिए ना।
तुम तो सब जानत नेह मजा अब प्रीत कहूँ फिर जोरिए ना॥
'हरिचंद' कहै कर जोर यही यह आस लगी तेहि तोरिए ना।
इन नैनन माहँ बसौ नित ही तेहि आँसुन सो अब बोरिए ना॥१४॥

कवित्त

आजु वृषभानुराय पौरी होरी होय रही
दौरी किसोरी सबै जोबन चढ़ाई मै।

खेलत गोपाल 'हरिचंद' राधिका के साथ
बुक्का एक सोहत कपोल की लुनाई मै ॥
कैधौं भयो उदित मयंक नभ बीच कैधों
हीरा जर्‍यो बीच नीलमनि की जराई मैं।
कैधौं पर्‍यो कालिदी के नीर छीर कैधौं
गरक सु-गोरी भई स्याम-सुंदराई मैं ॥ १ ॥

गोपिन की बात कौं बखानौं कहा नंदलाल
तेरो रूप रोम रोम जिनके समाय गो।
बिरह-बिथा से सब व्याकुल रहत सदा
'हरीचंद' हाल वाको कौन पै कहाय गो ॥
ऑसुन को प्रलय-पयोधि बूड़ि जैहै जबै
डूबि डूबि सब ब्रह्मंडहू बिलाय गो।
पौड़त फिरौगे आप नीर बीच होय जब
बिरह–उसासन तैं बट जरि जाय गो ॥ २ ॥

तेरेई बिरह कान्ह रावरे कला-निधान
मार बान मारै सदा गोपिन के घट पै।
व्याकुल रहत ताते रैन दिन आप बिन
धूर छाय रही देखौ नागिन सी लट पै ॥
'हरीचंद' देखे बिनु आज सब ब्रज-बाल
बैठि कै बिसूरतीं कलिंदी जू के तट पै।
होयगी प्रलय आज गोपिन के ऑसुन ते
ताते ब्रज जाय बैठो झट बंसी बट पै ॥ ३ ॥

गोपिन बियोग अब सही नहीं जात मोपै
कब लौ निठुर होय मैन-बान मारौगे।

'हरीचंद' आप सों पुकारे कहौ बार बार
बेगही कृपाल अबै गोकुल सिधारोगे ॥
कहत निहोरि कर जोरि हम पूछैं जौन
राधा-रौन ताको कौन उत्तर बिचारोगे।
आँसुन को नीर जबै बाढ़ैगो समुद्र तबै
कच्छ रूप धारौगे कै मच्छ रूप धारौगे ॥ ४ ॥

राधा-श्याम सेवै सदा बृंदाबन वास करै
रहै निहचित पद आस गुरुवर के।
चाहे धन धाम न अराम सो है काम
'हरिचंद जू' भरोसे रहै नंदराय-घर के ॥
एरे नीच धनी हमे तेज तू दिखावै कहा
गज परवाही नाहि होहि कबौं खर के।
होइ ले रसाल तू भलेई जग-जीव काज
आसी ना तिहारे ये निवासी कल्पतर के ॥ ५ ॥

जदपि उँचाई धीरताई गरुआई आदि
एरे गजराज तेरी सबहि बड़ाई है।
दान धारा दै दै सदा तोपत सवन नित
हिंसा सो विरत तऊ बल अधिकाई है ॥
तासौं 'हरिचंद' मरजाद पै रहन नीको
काक चुगलन की जासो बनि आई है।
विरद बढ़ावे ये न दूर कर इन्है तेरे
कान की चपलताई भौर दुखदाई है ॥ ६ ॥

बात गुरुजन की न आछी लरकाई लागै
भावै खेल कूद मे चपलता असीम की।

छोड़त कसालो होय जदपि नरन तऊ
बान नाहिं नीकी मद भाँग कै अफीम की ॥
अवगुन करी लड्डू पेड़ा सौं गुनद
'हरिचंद' हित होय जग औषधि हकीम की।
जौन गुनदाई सोई बात है सुहाई तासों
नीकी मधुराई हू सौं तिक्तताई नीम की ॥ ७ ॥

जोही एक बार सुनै मोहै सो जनम भरि
ऐसो ना असर देख्यो जादू के तमासा मैं।
अरिहु नवावैं सीस छोटे बड़े रीझैं सब
रहत मगन नित पूर होइ आसा मे ॥
देखी ना कबहुँ मिसरी मै मधुहू मै ना
रसाल, ईख, दाख मै न तनिक बतासा में।
अमृत मै पाई ना अधर मै सुरंगना के
जेती मधुराई भूप सज्जन की भासा मै ॥ ८ ॥

केलि-भौन बैठी प्यारी सरस सिंगार करै
सौतिन के सब अभिमानै दरत सो।
कंठ-हार चूरी कर बाजूबंद चंद आदि
पहिन्यौ अभूपन बियोगहि हरत सो ॥
पगपान चाँदी को चरन पहिरन लागी
सोभा देखि रंभा-रति गर्बहू गरत सो।
छोड़ि अभिमान दास होन काज चंद आज
नवल बधू के मानो पायन परत सो ॥ ९ ॥

वृंदाबन सोभा कछु बरनि न जाय मोपैं
नीर जमुना को जहँ सोहै लहरत सो।

फूले फूल चारों ओर लपटै सुगंध तैसो
मंद गंधवाह जिय तापहि हरत सो ॥
चाँदनी मै कमल-कली के तरे बार बार
'हरिचंद' प्रतिबिंब नीर माहि बगरत सो ।
मान के मनाइवे को दौरि दौरि प्यारो आज
नवल बधू के मानो पायन परत सो ॥१०॥

आजु कुंज-मंदिर बिराजे पिय प्यारी दोऊ
दीने गल-वाही बाढ़े मैन के उमाह मे ।
हँसि हँसि बातें करे परम प्रमोद भरे
रीझे रूप-जाल भीजे गुनन अथाह मे ॥
कान में कहन मिस बात चतुराई करि
मुख ढिग लाई प्रान प्यारे भरि चाह मे ।
चूमि कै कपोलन हँसावत हँसत छबि
छावत छबीलो छैल छल के उछाह मे ॥११॥

रंग-भौन पीतम उमंग भरि बैठ्यो आज
साजे रति-साज पूर्‍यो मदन-उमाह मे ।
'हरीचंद' रीझत रिझावत हँसावत हँसत
रस बाढ़्यौ अति प्रेम के प्रवाह मे ॥
बीरी देन मिस छुए आँगुरी अधर पुनि
चूमै चुपचाप ताहि पान खान चाह मै ।
लाजहि छुड़ावत छकावत छकत छबि
छावत छबीलो छैल छल के उछाह मे ॥१२॥

आजु लौ न आए जो तो कहा भयो प्यारे याको
सोच चित नाहि धारि मति सकुचाइये ।

औधि सों उदास ह्वै कै गमन तयार यह
तातें अब लाज छोड़ि कृपा करि धाइये ॥
'हरीचंद' ये तो दास आपुही के प्रान कछू
और न कियो तो अब एतो ही निभाइये ।
चाहत चलन अकुलाइकै बिसासी इन्हैं
आह प्रान - प्यारे जू बिदा तो करि जाइये ॥१३॥

जोग जग्य जप तप तीरथ तपस्या ब्रत
ध्यान दान साधन समूह कौन काम को ।
वेद औ पुरान पढ़ि ज्ञान को निधान भयो
कूर मगरूर पाइ पंडिताई नाम को ॥
'हरीचंद' बात बिना बात को बनाइ हार्यौ
चेरो रह्यौ जाम दाम काम धन धाम को ।
जानै सब तऊ अनजानै है महान जानै
राम को न जानै ताहि जानिये हराम को ॥१४॥

साँझ समै साजे साज ग्वाल-बाल साथ लिए
मोहन मनहि हरि आवत हरू हरू ।
सीस मोर-मुकुट लकुट कर लीने ओढ़े
पीत उपरैना जामैं टँक्यौ चारु गोखरू ॥
'हरीचंद' बेनु को बजावत है गावत
सु आवत है लिए साथ साथ गाय बाछरू ।
नाचत गुवाल मध्य लाजत मनोज लखि
आवैं सखि बाजत गुपाल पाय घूँघरू ॥१५॥

दासी दरबानन की झिरकी करोर सही
दूतिन नचाये नचीं नौ-नौ पानि नेजे पर ।

दिवस बिताये दौरि इत उत दुरि दुरि
रोइहू सकी न खुलि हाय दुख सेजे पर ॥
'हरीचंद' प्रानन पै आय बनी सबै भाँति
अंग अंग भीनी पोर परी विष रेजे पर ।
हाय प्रान-प्यारे नेक बिछुरे तिहारे दुख
कोटिन अँगेजे याही कोमल करेजे पर ॥१६॥

मेष मायावाद सिह वादी अतुल धर्म
वृख जयति गुण-रासि वल्लभ-सुअन ।
कलि कुवृश्चिक दुष्ट जीव जीवन-मूरि
करम छल मकर निज वाद धनु-सर-समन ॥
गोप-कन्या भाव प्रगटि सेवा बिसद
कृष्ण राधा मिथुन भक्ति-पथ दृढ़-करन ।
हरन जन-हिय-करक मीन-धुज-भय मेटि
दास 'हरिचंद' हिय कुम्भ हरि-रस भरन ॥१७॥

कुंभ-कुच परस दृग-मीन को दरस तजि
तुच्छ सुख मिथुन को हिय बिचारै ।
छल मकर छाँड़ि सब तानि बैराग-धनु
सिंह ह्वै जगत के जाल जारै ॥
कृष्ण वृखभानु-कन्या सहित भजन करि
कलि कुवृश्चिक समुझि दूर टारै ।
छाँड़ि अनआस विस्वास हिय अतुल धरि
करम की रेख पर मेख मारै ॥१८॥

फूलैगे पलास वन आगि सी लगाइ कूर
कोकिल कुहूकि कल सवद सुनावैगो ।

त्यौंही 'हरीचंद' सबै गावैगो धमार धीर
हरन अबीर बीर सबही उड़ावैगो ।।
सावधान होहु रे बियोगिनी सम्हारि तन
अतन तनक ही में तापन तें तावैगो ।
धीरज नसावत बढ़ावत बिरह काम
कहर मचावत बसंत अब आवैगो ।।१९।।

खेलौ मिलि होरी ढोरौ केसर-कमोरी फेंको
भरि भरि झोरी लाज जिअ मैं बिचारौ ना ।
डारौ सबै रंग संग चंगहू बजाओ गाओ
सबन रिझाओ सरसाओ संक धारौ ना ।।
कहत निहोरि कर जोरि 'हरिचंद' प्यारे
मेरी बिनती है एक हाहा ताहि टारौ ना ।
नैन हैं चकोर मुख-चन्द तें परैगी ओट
यातें इन ऑखिन गुलाल लाल डारौ ना ।।२०।।

लोक बेद लाज करि कीजे ना रुखाई एती
द्रवियै पियारे नेकु दया उपजाइ कै ।
बिरह बिपति दुख सहि नहि जाय
कहि जाय ना कछुक रहौ मन बिलखाइ कै ।।
'हरीचंद' अब तो सहारो नहि जाय हाय
भुजन बढ़ाय बेग मेरी ओर आइ कै ।
बिरद निभाय लीजे मरत जिवाइ लीजै
हा हा प्रान-प्यारे धाइ लीजै गर लाइ कै ।।२१।।

पद और गीत

प्रगटे द्विजकुल-सुखकर-चंद ।
भक्ति-सुधा-रस निस-दिन बरषत सब बिधि परम अमंद ।।

मायावाद परम अँधियारी दूरि कियो दुख-द्वंद ।
भक्त-हृदय-कुमुदिनि प्रफुलित भई भयो परम आनंद ।।
काशी नभ महँ किरिन प्रकाशी बुध सव नखत सुछंद ।
'हरीचंद' मन-सिंधु बढ़्यो लखि रसमय मुख सुखकंद ।। १ ।।

हरि-सिर बाँकी बाँक बिराजै ।
बाँको लाल जमुन - तट ठाढ़ो बाँकी मुरली बाजै ।।
बाँकी चपला चमकि रही नव बाँको बादल गाजै ।
'हरीचंद' राधा जू की छबि लखि रति मति गति भाजै ।। २ ।।

सखी री ठाढ़े नन्द-किसोर ।
वृंदाबन मे मेहा बरसत निसि बीती भयो भोर ।।
नील बसन हरि-तन राजत हैं पीत स्वामिनी मोर ।
'हरीचंद' बलि बलि ब्रज-नारी सब ब्रजजन-मनचोर ।। ३ ।।

हरि को धूप - दीप लै कीजै ।
षटरस बीजन बिबिध भाँति के नित नित भोग धरीजै ।।
दही मलाई घी अरु माखन तातो पै लै दीजै ।
'हरीचंद' राधा-माधव-छबि देखि बलैया लीजै ।। ४ ।।

सुदामा तेरी फीकी छाक ।
मेरी छाक रोहिनी पठई मीठी और सु-पाक ।।
बलदाऊ को कोरी रोटी मोको घी की दोनी ।
सो सुनि सुवल तोक उठि बैठे मेरी बहुत सलोनी ।।
जैसी तेरी मैया मोटी तैसी मोटी रोटी ।
मेरी छाक भली रे भैया जामे रोटी छोटी ।।
बोलत राम पतौका लै लै बैठो भोजन कीजै ।
बच्यौ बचायो अपनो जूठन 'हरीचंद' को दीजै ।। ५ ।।

भोजन कीनो भानु-कुमारी ।
ठाढ़े लिए नंद के नंदन भरि कै कंचन झारी ।
ललिता लिए सुभग बीरा कर लौंग कपूर सोपारी ।
जुग जुग राज करो या ब्रज में 'हरीचंद' बलिहारी ॥ ६ ॥

बैठे पिय-प्यारी इक संग ।
परदा परे बनाती चहुँ दिसि बाजत ताल मृदंग ॥
धरी अँगीठी स्वच्छ धूम-बिन गावत अपने रंग ।
'हरीचंद' बलि बलि सो छबि लखि राधा लिए उछंग ॥७॥

अब तौ आय पर्यौ चरनन मैं ।
जैसो हौं तैसो तुमरोई राखोइगे सरनन मैं ॥
गनिका गीध अभीर अजामिल खस जवनादिक तारे ।
औरहु जो पापी बहुतेरे भये पाप ते न्यारे ॥
सुत-बध हेत पूतना आई सब बिधि अघ ते पीनी ।
जो गति जननीहूँ को दुर्लभ सो गति ताको दीनी ॥
औरो पतित अनेक उधारे तिनमें मोहुँ को जान ।
तुमही एक आसरो मेरे यह निह्चै करि मान ॥
बुरो भलो तुमरोइ कहावत याकी राखौ लाज ।
'हरीचंद' ब्रजचंद पियारे मत छोड़हु महराज ॥ ८ ॥

माई री कमल-नैन कमल-वदन बैठे हैं जमुना-तीर ।
कमल से करन कमल लिए फेरत सुंदर स्याम सरीर ॥
कमल की कंठ माल ललित ललाम बनी कमल ही को कटि चीर ।
कमल के महल कमल के खंभा भौंरन की जापै भीर ॥
सुंदर कमल फूले लहलहे सोहत ता मधि झलकत नीर ।
'हरीचंद' पद-कमल जपत नित भंजन-भव-भय-भीर ॥ ९ ॥

मंगल मंगल मंगल रूप ।
मंगल गिरि गोवर्धन धार्‌यौ मंगल गिरिधर ब्रज के भूप ।
मंगल-मय व्रखभानु-नंदिनी श्रीराधा अति रुचिर सुरूप ।।
मंगल वल्लभ-चरन-कृपा से 'हरीचंद' उबर्‌यौ भव कूप ।।१०।।

घर ते मिलि चली ब्रज-नारि ।
खसित कबरी नैन घूमत सजे सकल सिगार ।।
लिए पूजन-साज कर मै कुटिल बिथुरे बार ।
कृष्ण-गुन गावत सुविहसत 'हरीचंद' निहार ।।११।।

जल मै न्हात है ब्रज-बाल ।
मास अगहन जान उत्तम मिलन को गोपाल ।।
हाथ जोरि सुकहत देविहि देउ पति नँदलाल ।
चीर लै 'हरिचंद' भागे सुभग स्याम तमाल ।।१२।।

खोजत बसन ब्रज की बाल ।
निकसि कै सब लेहु छिपि कै कह्यौ स्याम तमाल ।।
सुनत चंचल चित चहूँ दिसि चकित निरखत नारि ।
मधुर बैननि हिओ धरकत जानि कै बनवारि ।।
कदम पर तें दरस दीनो गिरिधरन घनश्याम ।
अंग अंग अनूप शोभा मथन कोटिक काम ।।
सिर मुकुट की लटक चटकत बसन सोभित पीत ।
चरन तक बनमाल सोभित मनहुँ लपटी प्रीत ।।
फैलि रहि सोभा चहूँ दिसि मन लुभावत पास ।
नैन तें 'हरिचंद' के छवि टरत नहि इक साँस ।।१३।।

देखौ सोभित तरु पर नट-वर ।
मोर मुकुट कटि पीत पिछौरी मुरली हाथ सुघर-वर ।।

बोले हरि बाहर ह्वै आओ हे ब्रज-बाल चतुर - तर ।
नाँगी होइ जमुन मैं पैठीं पूजहु आइ दिवाकर ॥
सुनि पिअ-बचन निकसि सब आई दीनो चीर गुंजधर ।
पहिरि चीर ब्रज-नारि नवेली केलि करी कुंजन पर ॥
'हरीचंद' हरि की यह लीला नहि पावत बिधि अरु हर ।
कोमल मंजु साँवरी मूरति नित्य बिराजौ हिअ पर ॥१४॥

राग सारंग

श्री कृष्ण घर घर बाजत सुनिय वधाई ।
श्री राधा रावल मैं जाई ॥
जय जय जय जय जय धुनि माचैं ।
आनँद - मगन तहाँ सब नाचैं ॥
नाचत ब्रह्मा शिव अरु शेषा ।
नाचत वरुन कुबेर सुरेसा ॥
नाचत नारद आदि मुनीसा ।
नाचत देव कोटि तैंतीसा ॥
नाचत वसु अरु मरुत गनेसा ।
नाचत जम रवि ससि सुभकेसा ॥
नाचत परसुराम धनु धारे ।
नचत राज-ऋषि सुर-ऋषि न्यारे ॥
नाचत चारन किन्नर रच्छा ।
नाचत विद्याधर अरु जच्छा ॥
नाचत खग मृग अहिगन मच्छा ।
नाचत गाय भैंस के बच्छा ॥
नाचत सुक प्रह्लाद विभीषन ।
नचत परीक्षित बलि आनँद मन ॥

नचति सरस्वति बीन बजाई।
माया नाचति अति हरषाई॥
नाचति चंपकलता बिसाखा।
चंद्रावलि ललिता रस - साखा॥
नचत श्यामदा जसुदा माई।
ब्याही कॉरी सबै लुगाई॥
नाचत नंद सुनंद सुहाए।
महानंद अति आनँद छाए॥
नचत तोक बल सुख श्रीदामा।
सँग वृषभान गोप सुखधामा॥
नाचत नर-नारिन के बृन्दा।
प्रेम-मत्त नाचत 'हरिचंदा' ॥१५॥

राग सारंग

ग्वाल गावै गोपी नाचै। प्रेम-मगन मन आनँद राचैं॥
भानु राय के राधा जाई। धाये सब सुनि लोग-लुगाई॥
माखन दधि घृत दूध लुटावै। बार बार प्रमुदित उर लावै॥
ताल पखावज आवज बाजै। दुंदुभि ढोल दमामा गाजै॥
कूदत ग्वाल-बाल सब सोहै। देखि देखि सुर नर मुनि मोहैं॥
भये दूध दधि घृत के पंका। इत उत दौरत फिरत निसंका॥
देत निछावर मनिगन वारी। प्रेमानंद मगन नर - नारी॥
थकित भये सब देव विमाना। मुदित करत 'हरिचंद' बखाना॥१६॥

सुनौ सखि बाजत है मुरली।
जाके नेकु सुनत ही हिअ मे उपजत बिरह-कली॥
जड़ सम भए सकल नर-खग-मृग लागत श्रवन भली।
'हरीचंद' की मति रति गति सब धारत अधर छली॥१७॥

बैरिनि बाँसुरी फेरि बजी ।
सुनत श्रवन मन थकित भयो अरु मति-गति जाति भजी ॥
सात सुरन अरु तीन ग्राम सों पिय के हाथ सजी ।
'हरीचंद' औरहु सुधि मोही जबही अधर तजी ॥

बँसुरिआ मेरे बैर परी ।
छिनहूँ रहन देत नहिं घर मे मेरी बुद्धि हरी ॥
बेनु-बंस की यह प्रभुताई बिधि-हर-सुमति छरी ।
'हरीचंद' मोहन बस कीनो बिरहिन-ताप-करी ॥ १९॥

सखी हम बंसी क्यौं न भए ।
अधर सुधा-रस निसु-दिनु पीवत प्रीतम-रंग रए ॥
कबहुँक कर मै कबहुँक कटि मै कबहूँ अधर धरे ।
सब ब्रज-जन-मन हरत रहत नित कुंजन माँझ खरे ॥
देहि बिधाता यह बर माँगौं कीजे ब्रज की धूर ।
'हरीचंद' नैनन में निबसै मोहन-रस भरपूर ॥२०॥

नाचत नवल गिरिधर लाल ।
सकल सुखदाता संग गोपी बाल ॥
बजत झाँझ मृदंग आवज चंग बीना ताल ।
जात बलि 'हरिचंद' छबि लखि सुभग श्याम तमाल॥२१॥

भोजन कीजै प्रान-पियारो ।
भई बड़ी बार हिंडोले झूलत आज भयो श्रम भारी ॥
बिजन मीठो दूध सुहातो कीजै पान दुलारी ।
जूठन माँगत द्वार खड़ो है 'हरीचंद' बलिहारी ॥२२

पनघट बाट घाट रोकत जसुदा जी को बारो।
सॉवरे बरन श्याम स्याम ही सज्यौ
है साज इन अँखियन को तारो ॥
मुरलि बजावत गीतन गावत
करत अचगरी प्यारो।
'हरीचंद' इंडुरी जमुन मैं बहावत मन ललचावत
नैन नचावत मेरो तन परसत सुंदर नंद-दुलारो ॥२३॥

बजन लगी बंसी यार की।
धुनि सुनि ब्रज-तिय चकित होत है सुधि आवत दिलदार की ॥
मीठी तान लेत चित मोह्यो चितवन तीखी यार की।
'हरीचंद' नैनन मे गड़ि गई छबि गुंजन के हार की ॥२४॥

बजन लगी बंसी कान्ह की।
धुनि सुनि चकित भए खग मृग सब सुधि न रही कछु प्रान की ॥
मोहे देव गंधरब रिसि मुनि भूले गति जु बिमान की।
'हरीचंद' को मन मोह्यो 'अस बिसरी सुधिहू अपान की' ॥२५॥

किन चौंकाए पीतम प्यारे।
किन सुख मे दुख दियो जु उठि इत भोरहि भोर पधारे ॥
मेरे जान कूर तमचुर यह तुम कहँ सुरत दिवाइ।
कै द्विज-गन कै चहकि चिरैयन मेरी आस पुजाइ ॥
सीरी पौन अरुन किरिनावलि भए सहाय पियारे।
धन्य भाग जो अबहूँ उठि कै आए भवन हमारे ॥
आओ चरन पलोटो प्यारे सोइ रहौ स्रम भारी।
'हरीचंद' सुनि बचन रचन तिय गर लाई बनवारी ॥२६॥

हम मैं कौन कसर पिय प्यारे।
अजामेल मैं का अवगुन जे नहिं तन माँहि हमारे॥
जानी और पतित के माथे सींग रही द्वै भारी।
ता बिन हमहि देखि नहि तारत बृन्दा-बिपिन-बिहारी॥
जो पापहि करिबै सों जग मैं जीव पतित कहवावै।
तौ हमसो बढ़ि कै कोउ नाहीं को मेरी सरि पावै॥
कछु तौ बात होइहै जासों तारत हम कहँ नाहीं।
नाही तो 'हरिचंद' पतित-पति ह्वै हम कित बचि जाहीं॥२७॥

तरन मै मोहिं लाभ कछु नाही।
तुमरेई हित कहत बात यह गुनि देखहु मन माही॥
तुमरेहू जिअ अब लौ बाकी यहै हौस चलि आई।
कै कोउ कठिन अघी पावैं तो तारि लहैं बड़िआई॥
बहुत दिनन की तुमरी इच्छा तेहि पूरन मैं आयो।
करहु सफल सो हम सों बढ़ि कोउ पापी नहि जग जायो॥
लेहु जोर अजमाइ आपुनो दया - परिच्छा लीजै।
हे बलबीर अघी 'हरिचंदहि' हारि पीठि जिनि दीजै॥२८॥

तुव जस हमहिं बढ़ावन-हारे।
तुव गुन दिव्य तारनादिक के कारन हमहि पियारे॥
छिपी दया तुव मेरेहि अघ मैं यह निहचै जिय जानौ।
हम बिन तुव जग कछु न बड़ाई यह प्रतीत करि मानौ॥
केवल त्रिभुवन-पति फलदायक न्याय करत रहि जैये।
दया-निधान पतित-पावन प्रभु हमरे हेत कहैये॥
हमहीं कियो कृपाल तुमहि अघ-तारन हमहिं बनायौ।
यह गुन मानि हीन 'हरिचंदहि' क्यौं न अबहुँ अपनायो॥२९॥

हमरी स्वारथ ही की प्रीति ।
तुव गुनहू स्वारथ हित गावत मानहु नाथ प्रतीति ॥
बक-धरमी स्वारथ-मूलक सब प्रेम भक्ति की रीति ।
'हरीचंद' ऐसे छलियन कों सकिहौ नाथ न जीति ॥३०॥

अब हम बढ़ि बढ़ि कै अघ करिहैं ।
जब सब पतितन सो बढ़ि जैहैं तब ही भव-जल तरिहैं ॥
हम जानी यह बानि नाथ की पतितन ही सो प्रीति ।
सहजहि कृपा कृपिन-दिसि गामिनि यहै आपु की रीति ॥
ताही सो अघ किये अनेकन करत जात दिन-रात ।
तऊ न तरत परत नहि जानी क्यौं अब लौं हम तात ॥
किए करत अघ फेर करैंगे जब लौं जिअ मैं जीअ ।
जा सो दृष्टि परे तुमरी इत सुंदर साँवर पीअ ॥
दीन-बन्धु प्रनतारति-भंजन आरत - हरन मुरारि ।
दयानिधान कृपन-जन-वत्सल निज गुन नाम सम्हारि ॥
पावन परम पतित हरि हम कहँ हीन जानि उठि धाओ ।
साधन-रहित सहित अघ सत लखि 'हरिचंदहि' अपनाओ॥३१॥

देखहु मेरी नाथ ढिठाई ।
होइ महा अघ-रासि रहन हम चहत भगत कहवाई ।
कबहूँ सुधि तुमरी आवै जो छठे-छमाहे भूले ।
ताही सो मनि मानि प्रेम अति रहत संत बनि फूले ॥
एक नाम सो कोटि पाप को करन पराछित आवै ।
निज अघ बड़वानलहि एक ही आँसू बूँद बुझावै ॥
जो व्यापक सर्वज्ञ न्याय-रत धरम-अधीस मुरारी ।
'हरीचंद' हम छलन चहत तेहि साहस पर बलिहारी ॥३२॥

स्याम घन देखहु गौर घटा।
भरी प्रेम-रस सुधा बरसि रही छाई छूटि छटा॥
आपुहि बादर रूप जल भरी आपुहि बिज्जु लटा।
यह अद्भुत लखि सिखी सखीगन नाचत बैठि अटा॥
हिय हरखावत छबि बरखावत झुकी निकुंज तटा।
'हरीचंद' चातक ह्वै निसि-दिन जाको नाम रटा॥३३॥

आजु बसन्त पंचमी प्यारे आओ हम तुम खेलैं।
चोआ चंदन छिरकि परसपर अरस परस रँग झेलैं॥
और कहूँ जिनि जाहु पियारे हम तुम मिलि रस रेलै।
तुम मोहि देहु आपुनी माला हम निज तुअ उर मेलै॥
प्राननाथ कहँ कंठ लाइ कै आनँद-सिधु सकेलैं।
'हरीचंद' हिय-हौस पुजावै बिरहहि पायन ठेलैं॥३४॥

आई है आजु बसंत पंचमी चलु पिय पूजन जैये।
आम मंजरी काम चिनौती लै पिय सीस बँधैये॥
अति अनुराग गुलाल लाइ कै नव केसर चरचैये।
उद्दीपन सुगन्ध सोधे मृगमद कपूर छिरकैये॥
पुष्प-गेंदुकन परसि पिया कों तन मे काम जगैये।
संचित पंचम ऊँचे सुर सों काम - बधाई गैये॥
आलिगन परिरम्भन चुम्बन भाव अनेक दिखैये।
'हरीचंद' मिलि प्रान-पिया सों सरस वसंत मनैयें॥३५॥

नव दूलह ब्रजराय-लाडिलो नव दुलहिन बृपभानु-किसोरी।
श्री बृन्दावन नवल कुंज मे खेलत दोउ मिलि होरी॥
नव सत साजि सिंगार अभूपन नवल नवल सँग गोरी।
नवल सेहरो सीस बिराजत नवल वसन तन राजैं॥

त्रिभुवन-मोहन जुगल-माधुरी कोटि मदन लखि लाजैं ।
अति कमनीय मनोहर मूरति ब्रज-जन यह रस जानैं ॥
'हरीचंद' ब्रजचन्द-राधिका तजिकै किहि उर आनैं ॥३६॥

कुंज-बिहारी हरि-सँग खेलत कुंज-बिहारिनि राधा ।
आनँद भरी सखी सँग लीन्हे मेटि बिरह की बाधा ॥
अबिर गुलाल मेलि उमगावत रसमय सिंधु अगाधा ।
घूँघर मैं झुकि चूमि अंक भरि मेटति सब जिय साधा ॥
कूजति कल मुरली मृदंग सँग बाजत धुम किट ताधा ।
बृन्दाबन-सोभा-सुख निरखत सुरपुर लागत आधा ॥
मच्यौ खेल बढ़ि रंग परसपर इत गोपी उत काँधा ।
'हरीचंद' राधा-माधव कृत जुगल खेल अवराधा ॥३७॥

सरस साँवरे के कपोल पर बुक्का अधिक बिराजै ।
मनहु जमुन-जल पुंज छीर की छींट अतिहि छबि छाजै ॥
नील कंज पै कलित ओस-कन झलकत तियनि रिझावै ।
प्रिया-दीठि कौ चिन्ह किधौं यह ब्रज-जुवती मन भावै ॥
सूछम रूप सकल ब्रज-तिय को बस्यौ कपोलनि आई ।
'हरीचंद' छबि निरखि हरषि हिय बार बार बलि जाई ॥३८॥

नव बसंत को आगम सजनी हरि को जनम सुहायो ।
गावत कोकिल कीर मोर सी जुवती बजत बधायो ॥
बिबिध दान लहि जाचक जन से कलित कुसुम बहु फूले ।
गुन गावत धावत बन्दीजन से भँवरे बहु भूले ॥
उड़त गुलाल अबीर रंग सो दधि-काँदो झरि लाई ।
नाचत गारी देत निलज से गावत ताल बजाई ॥
टेसू फूलन मिस बृन्दावन प्रगट्यौ जिय अनुरागै ।

केसर-सिंचित सम सरसों-बन नैन सुखद अति लागै ॥
गोप पाग पहिरे सब सोभित गेंदा तरु इक - रासी ।
बौरे आम सरिस डोलत आनँद - बौरे ब्रजरासी ॥
बंस-बेलि लहरानी नँदजू की अति सुख झालरि लाई ।
तरुन तमाल स्याम घन उपजे 'हरीचंद' सुखदाई ॥३९॥

पिया मन-मोहन के सँग राधा खेलत फाग ।
दोउ दिसि उड़त गुलाल अरगजा दोउन उर अनुराग ॥
रँग-रेलनि झोरी झेलनि मैं होत दृगनि की लाग ।
'हरीचंद' लषि सो सुख-सोभा अपुन सराहत भाग ॥४०॥

शोभा कैसी छाई ।
कोइल कुहुकै भँवर गुँजारै सरस बहार
फूलि रही सरसो अँखियन लगत सुहाई, देखो ॥
बीती सिसिर बसन्तहु आई फिर गई काम-दुहाई ।
बौरन आम लग्यो मन बौर्‌यो बिरहिन बिरह सताई, देखो ॥
जान न दैहौ तुहि ऐसी समय मे लैहो लाख बलाई ।
'हरीचंद' मुख चूमि पियरवा गरवाँ रहिहौ लाई, देखो ॥४१॥

रिमझिम बरसै पनियाँ घर नहि जनियाँ कैसे बीतै रात ।
मोर सोर घनघोर करत है सुनि सुनि जीअ डरात ॥
सूनी सेज देखि पीतम बिनु धीरज जिय न धरात ।
पिय 'हरिचंद' बसे परदेसवाँ मोर जोबनवाँ नाहक जात ॥४२॥

देखो साँवरे के सँगवाँ गोरी झूलैलीं हिंडोर ।
जमुना तीर कदम की डरियाँ पहिरे चीर पटोर ॥
बिजुली चमकै पनियाँ बरसै बादर छौले हौ घनघोर ।
हरि-राधा छवि देखि नयनवाँ सखी जुड़ैले मोर ॥४३॥

सखी कैसी छबि छाई देखो आई बरसात ।
मोहि पिया बिना हाय न भाई बरसात ।।
घन गरजत बिरह बढ़ाई बरसात ।
हरि मिलत न भई दुखदाई बरसात ।।४४।।

मथुरा के देसवाँ से भेजलै पियरवाँ रामा ।
हरि हरि ऊधो लाए जोगवा की पाती रे हरी ।।
सब मिलि आओ सखी सुनो नई बतियाँ रामा ।
हरि हरि मोहन भए कुबरी के सँघाती रे हरी ।।
छोड़ि घर-बार अब भसम रमाओ रामा ।
हरि हरि अब नहि ऐहै सुख की राती रे हरी ।।
अपने पियरवाँ अब भए है पराए रामा ।
हरि हरि सुनत जुड़ाओ सब छाती रे हरी ।।४५।।

रिमझिम बरसत मेह भीजति मै तेरे कारन ।
खरी अकेली राह देखि रही सूनो लागत गेह ।।
आइ मिलौ गर लगौ पियारे तपत काम सो देह ।
'हरीचंद' तुम बिनु अति व्याकुल लाग्यौ कठिन सनेह ।।४६।।

मलार चौताला

(समय कुतुबुद्दीन का राज)

छाई अँधियारी भारी सूझत नहि राह कहूँ
गरजि गरजि बादर से जवन सब डरावैं ।
चपला सी हिन्दुन की बुद्धि वीरतादि भई
छिपे वीर-तारागन कहूँ न दिखावै ।।
सुजस-चंद मंद भयो कायरता-घास बढ़ी
दरिद-नदी उमड़ि चली मूरखता पंक चहल पहल पग फँसावैं ।

'हरीचंद' नन्दनन्द गिरिवर धरो आइ फेर
हिन्दुन के नैन नीर निस दिन बरसावैं ॥४७॥

मलारी जलद तिताला
(समय सिकंदर का पंजाब का युद्ध)

पोरस सर जल रन महँ बरसत लखि कै मोरा जियरा हरसत ।
बिजुरी सी चमकत तरवारैं, बादर सी तोपैं ललकारैं,
बीच अचल गिरिवर सो छत्री गज चढ़ि देवराज-सम सरसत ॥
झींगुर से झनकत है बखतर, जवन करत दादुर से टरटर
छर्रा उड़त बहुत जुगनू से एक एक कौ तम सम गरसत ।
बढ़्यौ बीर रस सिन्धु सुहायो, डिग्यौ न राजा सबन डिगायो,
ऐसो वीर बिलोकि सिकन्दर जाइ मिल्यौ कर सो कर परसत ॥४८॥

धनि धनि री सारिस - गमनी ।
गरि मध पसरी साम मनी सारी रेसम सनि सरिस सनी ॥
निस मनि सम निसि धरि धरि मगमधि परी परी पग मगनि गनी ।
निसरी साम साध सानी गनि 'हरीचंद' सरिगम पधनी ॥४९॥

चातक को दुख दूर कियो सुख दीनो सबै जग जीवन भारी ।
पूरे नदी नद ताल तलैया किए सब भाँति किसान सुखारी ॥
सूखेहु रूखन कीने हरे जग पूरो महा मुद दै निज वारी ।
हे घन आसिन लौं इतनो करि रीते भएहू बड़ाई तिहारी ॥५१॥

जय वृषभानु-नंदिनी राधे मोहन-प्रान-पियारी ।
जय श्री रसिक कुँवर नँदनंदन मोहन गिरिवरधारी ॥
जय श्री कुंज-नायिका जय जय कीरति-कुल-उजियारी ।
जय वृंदावन चारु चंद्रमा कोटि-मदन-मद-हारी ॥

जय ब्रज-तरुन-तरुनि-चूड़ामनि सखियन मे सुकुमारी ।
जयति गोप-कुल-सीस-मुकुटमनि नित्यै सत्य बिहारी ।।
जयति बसंत जयति बृंदाबन जयति खेल सुखकारी ।
जय अद्भुत जस गावत सुक मुनि 'हरीचंद' बलिहारी ।।५२।।

प्रगटे हरिजू आनँद-करन्त । मनु आई भुव पर ऋतु बसंत ।।
सब फूले गोपी ग्वाल-बाल । मनु बौरि रहे बन मे रसाल ।।
सब ग्वाल धरे केसरी पाग । मनु डारन पै गेदा सुभाग ।।
फैली चहुँ दिसि हरदी सुरंग । सरसो के खेत फूलन के संग ।।
सब के मन मे अति री हुलास । मनु फूलि रहे सुंदर पलास ।।
देखत सब देव चढ़े बिमान । मनु उड़त बिबिध पक्षी सुजान ।।
नट नाचत गावत करत ख्याल । मनु नाचि रहे बन मे मराल ।।
गावत मागध बंदी प्रवीन । मनु बोलि रही कोकिल नवीन ।।
पहिरे नर-नारी बसन हार । मनु नये पत्र-फल फूल चार ।।
सो सुख लूटत 'हरिचंद' दास । मनु मत्त भँवर पायो सुवास ।।५३।।

महारानी तिहारो घर सुबस बसो ।
आजु सुफल ब्रजबास भयो सब घर घर अति आनन्द रसो ।।
कोउ गावत कोउ करत कोलाहल माखन को कोउ लेत गसो ।
श्री राधा के प्रकट भये ते या बरसानो सुख बरसो ।।
देत असीस सदा चिर जीवो मोहन को सँग लै बिलसो ।
'हरीचंद' आनँद अति बाढ़्यो सब जिय को दुख दरद नसो ।।५४।।

मन की कासो पीर सुनाऊँ ।
बकनो बृथा और पतिखोनो सबै चवाई गाऊँ ।।
कठिन दरद कोऊ नहि धरिहै धरिहै उलटो नाऊँ ।
यह तो जो जानै सोइ जानै क्यो करि प्रकट जनाऊँ ।।

रोम रोम प्रति नयन श्रवन मन केहि धुनि रूप लखाऊँ ।
बिना सुजान सिरोमनि री केहि हियरो काढ़ि दिखाऊँ ॥
मरमिन सखिन बियोग दुखित क्यों कहि निज दसा रोआऊँ ।
'हरीचंद' पिय मिलै तो पग गहि बाट रोकि समझाऊँ ॥५५॥

तू केहि चितवत चकित मृगी सी ।
केहि ढूँढ़त तेरो कह खोयो क्यो अकुलात लखाति ठगी सी ।
तन सुधि करि उघरत ही आँचर कौन व्याध तू रहति खगी सी ।
उत्तर देत न खरी जकी ज्यों मद पीये कै रैनि जगी सी ॥
चौंकि चौंकि चितवति चारिहु दिसि सपने पिय देखति उमँगी सी ।
भूलि बैखरी मृग सावक ज्यों निज दल तजि कहुँ दूरि भगी सी ॥
करति न लाज हाट-बारन की कुल-मर्यादा जाति डगी सी ।
'हरीचंद' ऐसेहि उरभी तो क्यों नहि डोलत संग लगी सी ॥५६॥

श्री गोपीजन-बल्लभ सिर पै विराजमान
अब तोहि कहा डर मूढ़ मन बावरे ।
छोड़िकै कुसंग सबै आसरो अनेक अबै
छिन भर हरि-पद सीस नित नाव रे ॥
कहत पुकार बार बार सुनि यह राम
क्रोध छोड़ि एक हरि गुन गाव रे ।
'हरीचंद' भटकै अनेक ठौर तिन प्रति
टेक तज बल्लभ सरन अब आव रे ॥५७॥

हठोले दे दे मेरी मुँदरी ।
हा हा करत हौं पइआँ परत हौं गुरुजन माँझ खरी ।
'हरीचंद' तुम चतुर रसीले बहियाँ पकरी ॥५८॥

बिनु सैयाँ मोको भावै नहि अँगना ।
चंदा उदय जरावत हमकों बिष सो लागत कँगना ॥५९॥

पिय की मीठी मीठी बतियाँ ।
श्रवन सुहात सुधा-रस सानी कहत लाइ जब छतियाँ ॥
बोलत ही हिय खचित होत मनु मैन लिखत मन पतियाँ ।
'हरीचंद' पूरन हिय करनहि रहत सदा बनि थतियाँ ॥६०॥

तरल तरंगिनि भव-भय-भंगिनि जय जय देवि गंगे ।
जगदघ-हारिनि करुना-कारिनि रमा-रंग-पद रंगे ॥
नवल बिमल जल हरत सकल मल पान करत सुखदाई ।
पापहि नासत पुन्य प्रकासत जलमय रूप लखाई ॥
कच्छप मीन भ्रमरमय सोभित कृपा-कमल-दल फूले ।
देववधू-कुच-कुंकुम रंजित लखि छबि सुर नर भूले ॥
शिव-सिर-बासिनि अज-कमंडलिनि पतित मंडलनि तारो ।
'हरीचंद' इक दास जानि कै करुन कटाच्छ निहारो ॥६१॥

हरिजू की आवनि मो जिय भावै ।
लटकीली रस-भरी रँगीली मेरे दृगन सुहावै ॥
निज जन दिसि निरखनि दृग भरि कै हँसनि मुरनि मन मानै ।
बेनु बजावनि कटि कसि धावनि गावनि करि रस दानै ॥
बंक बिलोचन फेरनि हेरनि सब ही चित्त चुरावै ।
'हरीचंद' भूलत नहि कबहूँ नित सुधि अधिक दिवावै ॥६२॥

जग बौराना मेरे लेखे ।
कोई असाध कोई साधू बनि धाया करि करि भेखे ।

लड़ि लड़ि मरा बादि बादन में बिन अपने चख देखे।
धरम करम कर मोटी कीनी और करम की रेखे॥
होय सयाना मूल गँवाया सभी ब्याज के लेखे।
'हरीचंद' पागल बनि पाया पीतम प्रीति परेखे॥६३॥

हरि जू कों नेह परम फल माई।
मेरे नेम धरम जप संजम बिधि याही में आई॥
यहै लोक परलोक चार फल यहै जगत ठकुराई।
मेरे काम धाम परमारथ स्वारथ यहै सदाई॥
यहै वेद बिधि लाज रीति धन हमरे यहै बड़ाई।
'हरीचंद' बल्लभ की सरबस मैं जिय निधि कर पाई॥६४॥

होली डफ की

तेरी अँगिया में चोर बसैं गोरी।
इन चोरन मेरो सरबस लूट्यौ मन लीनो जोरा-जोरी॥
छोड़ि देइ किन बँद चोलिया पकरैं चोर हम अपनो री।
'हरीचंद' इन दोउन मेरी नाहक कीनी चित चोरी॥६५॥

देखो बहियाँ मुरक गई मोरी ऐसी करी बर-जोरी।
औचक आय दौरि पाछे तें लोक की लाज सब छोरी॥
छीन झपट चटपट मोरी गागर मलि दीनी मुख रोरी॥
नहि मानत कछु बात हमारी कंचुकि को बँद छोरी।
एई रस सदा रसिक रहिओ 'हरीचंद' यह जोरी॥६६॥

ग़ज़ल

फिर आई फ़स्ले गुल फिर ज़ख्मदह रह रह के पकते हैं।
मेरे दाग़े जिगर पर सूरते लाला लहकते हैं॥

नसीहत है अवस नासेह क्यों नाहक है बकते हैं।
जो बहके दुख़्ते रज़ से है वह कब इनसे बहकते है?॥
कोई जाकर कहो यह आखिरी पैग़ाम उस बुत से।
अरे आ जा अभी दम तन में बाकी है सिसकते है॥
न बोसा लेने देते है न लगते है गले मेरे।
अभी कम-उम्र है हर बात पर मुझ से झिझकते है॥
व गैरो को अदा से कत्ल जब सफ्फाक करता है।
तो उसकी तेग़ को हम आह किस हैरत से तकते है॥
उड़ा लाये हो यह तर्जे सखुन किस से बताओ तो।
दमे तक़रीर गोया बाग़ मे बुलबुल चहकते है॥
'रसा' की है तलाशे यार मे यह दश्त-पैमाई।
कि मिस्ले शीशा मेरे पॉव के छाले झलकते है॥१॥

खयाले नावके मिज़गॉ मे बस हम सर पटकते है।
हमारे दिल मे मुद्दत से ये खारे ग़म खटकते है॥
रुखे रौशन पै उसके गेसुए शबगूँ लटकते है।
क़यामत है मुसाफिर रास्ता दिन को भटकते है॥
फ़ुग़ॉ करती है बुलबुल याद मे गर गुल के ऐ गुलची।
सदा इक आह की आती है जब गुंचे चटकते है॥
रिहा करता नही सैयाद हम को मौसिमे गुल मे।
कफस मे दम जो घबराता है सर दे दे पटकते है॥
उड़ा दूँगा 'रसा' मै धज्जियॉ दामाने सहरा की।
अवस खारे बियाबॉ मेरे दामन से अटकते है॥२॥

गज़ब है सुरमः देकर आज वह बाहर निकलते है।
अभी से कुछ दिले मुज़तर पर अपने तीर चलते है॥

ज़रा देखो तो ऐ अहले सखुन ज़ोरे सनाअत को।
नई बंदिश है मज़मूँ नूर के साँचे में ढलते हैं॥
बुरा हो इश्क का यह हाल है अब तेरी फ़ुर्कत मे।
कि चश्मे खूँ चकाँ से लख्ते दिल पैहम निकलते हैं॥
हिला देंगे अभी ऐ संगे दिल तेरे कलेजे को।
हमारी आह आतिश-बार से पत्थर पिघलते है॥
तेरा उभरा हुआ सीना जो हम को याद आता है।
तो ऐ रश्के परी पहरो कफे अफसोस मलते है॥
किसी पहलू नही चैन आता है उश्शाक़ को तेरे।
तड़पते हैं फ़ुगाँ करते है औ करवट वदलते हैं॥
'रसा' हाजत नही कुछ रौशनी की कुंजे मर्कद मे।
बजाये शमा याँ दाग़े जिगर हर वक्त जलते है॥३॥

अजब जोबन है गुल पर आमदे फ़स्ले बहारी है।
शिताब आ साक़िया गुलरू कि तेरी यादगारी है॥
रिहा करता है सैयादे सितमगर मौसिमे गुल मे।
असीराने कफस लो तुमसे अब रुखसत हमारी है॥
किसी पहलू नही आराम आता तेरे आशिक़ को।
दिले मुज़तर तड़पता है निहायत बेंकरारी है॥
सफाई देखते ही दिल फड़क जाता है बिस्मिल का।
अरे जल्लाद तेरे तेग़ की क्या आबदारी है॥
दिला अब तो फिराके यार मे यह हाल है अपना।
कि सर ज़ानू पर है औ खून दह आँखो से जारी है॥
इलाही खैर कीजो कुछ अभी से दिल धड़कता है।
सुना है मंज़िले औवल की पहली रात भारी है॥
'रसा' महवे फ़साहत दोस्त क्या दुश्मन भी हैं सारे।
ज़माने मे तेरे तर्ज़े सखुन की यादगारी है॥४॥

आ गई सर पर कज़ा लो सारा सामाँ रह गया ।
ऐ फ़लक क्या क्या हमारे दिल मे अरमाँ रह गया ॥
बाग़बाँ है चार दिन की बाग़े आलम में बहार ।
फूल सब मुरझा गये खाली बियाबाँ रह गया ॥
इतना एहसाँ और कर लिल्लाह ऐ दस्ते जनूँ ।
बाकी गर्दन मे फकत तारे गिरेबाँ रह गया ॥
याद आई जब तुम्हारे रूए रौशन की चमक ।
मै सरासर सूरते आईना हैराँ रह गया ॥
ले चले दो फूल भी इस बाग़े आलम से न हम ।
वक्त़ रेहलत हैफ है खाली हि दामाँ रह गया ॥
मर गये हम पर न आये तुम खबर को ऐ सनम ।
हौसला सब दिल का दिल ही मे मेरी जाँ रह गया ॥
नातवानी ने दिखाया ज़ोर अपना ऐ 'रसा' ।
सूरते नक्शे कदम मै बस नुमायाँ रह गया ॥ ५ ॥

फिर मुझे लिखना जो वस्फ़े रूए जानाँ हो गया ।
वाजिब इस जा पर कलम को सर झुकाना हो गया ॥
सरकशी इतनी नहीं लाज़िम है ओ ज़ुल्फे सियाह ।
बस के तारीक अपनी आँखो मे जमाना हो गया ॥
ध्यान आया जिस घड़ी उसके दहाने तंग का ।
हो गया दम बंद मुश्किल लब हिलाना हो गया ॥
ऐ अजल जल्दी रिहाई दे न बस ताखीर कर ।
खानए तन भी मुझे अब कैदखाना हो गया ॥
आज तक आईना-वश हैरान है इस फ़िक्र मे ।
कब यहाँ आया सिकंदर कब रवाना हो गया ॥
दौलते दुनिया न काम आएगी कुछ भी बाद मर्ग ।

है ज़मीं में खाक क़ारूँ का खजाना हो गया ॥
बात करने में जो लब उसके हुए ज़ेरो ज़बर ।
एक सायत में तहो बाला ज़माना हो गया ॥
देख ली रफ्तार उस गुल की चमन मे क्या सबा ।
सर्व को मुश्किल कदम आगे बढ़ाना हो गया ॥
जान दी आखिर क़फ़स में अंदलीबे ज़ार ने ।
मुज़्दः है सैयाद वीराँ आशियाना हो गया ॥
ज़िन्दः कर देता है एक दम मे य ईसाए नफ़स ।
खेल उसको गोया मुरदे को जिलाना हो गया ॥
तौसने उम्रे रवाँ दम भर नहीं रुकता 'रसा' ।
हर नफ़स गोया उसे एक ताज़ियाना हो गया ॥ ६ ।

दिल मेरा तीरे सितमगर का निशाना हो गया ।
आफ़ते जाँ मेरे हक़ में दिल लगाना हो गया ॥
हो गया लाग़र जो इस लैली अदा के इश्क में ।
मिस्ले मजनूँ हाल मेरा भी फ़िसाना हो गया ॥
ख़ाकसारी ने दिखाया बाद मुर्दन भी उरूज ।
आसमाँ तुरबत प मेरे शामियाना हो गया ॥
ख्वाबे गफलत से ज़रा देखो तो कब चौंके हैं हम ।
क़ाफ़िला मुल्के अदम को जब रवाना हो गया ॥ ७ ॥

फ़सले गुल में भी रिहाई की न कुछ सूरत हुई ।
कैद मे सैयाद मुझको एक जमाना हो गया ॥
दिल जलाया सूरते परवाना जब से इश्क़ मे ।
फ़र्ज़ तब से शमअ पर आँसू बहाना हो गया ॥
आज तक ऐ दिल जवाबे ख़त न भेजा यार ने ।
नामाबर को भी गये कितना ज़माना हो गया ॥

पासे रुसवाई से देखो पास आ सकते नही।
रात आई नीद का तुमको बहाना हो गया ॥
हो परेशानी सरेमू भी न ज़ुल्फ़े यार को ॥
इसलिये मेरा दिले सद - चाक शाना हो गया ॥
बाद मुर्दन कौन आता है खबर को ऐ 'रसा'।
खत्म बस कुंजे लहद तक दोस्ताना हो गया ॥ ७ ॥

जहाँ देखो वहाँ मौजूद मेरा कृष्ण प्यारा है।
उसी का सब है जलवा जो जहाँ मे आशकारा है ॥
भला मखलूक़ ख़ालिक़ की सिफत समझे कहाँ कुदरत।
इसी से नेति नेति ऐ यार वेदो ने पुकारा है ॥
न कुछ चारा चला लाचार चारो हारकर बैठे।
बिचारे बेद ने प्यारे बहुत तुमको बिचारा है ॥
जो कुछ कहते है हम यह भी तेरा जल्वा है एक वरनः।
किसे ताक़त जो मुँह खोले यहाँ हर शख़्स हारा है ॥
तेरा दम भरते हैं हिन्दू अगर नाक़ूस बजता है।
तुझे ही शेख़ ने प्यारे अज़ाँ देकर पुकारा है ॥
जो बुत पत्थर हैं तो काबे मे क्या जुज़ ख़ाको पत्थर है।
बहुत भूला है वह इस फ़र्क़ मे सर जिसने मारा है ॥
न होते जलवःगर तुम तो यह गिरजा कब का गिर जाता।
निसारा को भी तो आखिर तुम्हारा ही सहारा है ॥
तुम्हारा नूर है हर शै मे कह से कोह तक प्यारे।
इसी से कह के हर हर तुमको हिन्दू ने पुकारा है ॥
गुनह बख़्शो रसाई दो 'रसा' को अपने क़दमों तक।
बुरा है या भला है जैसा है प्यारे तुम्हारा है ॥ ८ ॥

उठा के नाज़ से दामन भला किधर को चले।
इधर तो देखिये बहरे खुदा किधर को चले ॥
मेरी निगाहों में दोनों जहाँ हुए तारीक।
य आप खोल के जुल्फे दोता किधर को चले ॥
अभी तो आए हौ जल्दी कहाँ है जाने की।
उठो न पहलू से ठहरो ज़रा किधर को चले ॥
ख़फ़ा हो किसपै भँवैं क्यो चढ़ी है खैर तो है।
ये आप तेग़ पै धर कर जिला किधर को चले ॥
मुसाफिराने अदम कुछ तो अज़ीज़ों से कहो।
अभी तो बैठे थे है है भला किधर को चले ॥
चढ़ी हैं त्योरियाँ कुछ है मिज़ाह भी जुम्बिश मे।
खुदा ही जाने य तेग़े अदा किधर को चले ॥
गया जो मैं कही भूले से उनके कूचे मे।
तो हँस के कहने लगे है 'रसा' किधर को चले ॥ ९ ॥

असीराने कफस सहने चमन को याद करते हैं।
भला बुलबुल प यों भी ज़ुल्म ऐ सैयाद करते हैं ॥
कमर का तेरे जिस दम नक़श हम ईजाद करते हैं।
तो जाँ कुर्बान आकर मानियो बिहज़ाद करते है ॥
पसे मुर्दन तो रहने दे ज़मी पर ऐ सबा मुझको।
कि मिट्टी ख़ाकसारों की नहीं बरवाद करते हैं ॥
दमे रफ्तार आती है सदा पाज़ेब से तेरी।
लहद के खिस्तगाँ उट्ठो मसीहा याद करते है ॥
कफस में अब तो ऐ सैयाद अपना दिल तड़पता है।
बहार आई है मुरग़ाने-चमन फरियाद करते है ॥
वता दे ऐ नसीमे सुबह शायद मर गया मजनूँ।
ये किसके फूल उठते है जो गुल फ़रयाद करते है ॥

मसल सच है बशर की क़द्रे नेअमत बाद होती है।
सुना है आज तक हमको बहुत वह याद करते है।।
लगाया बागबॉ क्या ज़ख़्म कारी दिल प बुलबुल के।
गरेबॉ चाक गुंचे है तो गुल फरयाद करते है।।
'रसा' आगे न लिख अब हाल अपनी बेक़रारी का।
बरंगे गुंचः लब मजनूॅ तेरे फ़रयाद करते हैं।।१०।।

दिल आतिशे हिजरॉ से जलाना नही अच्छा।
अय शोल-रुखो आग लगाना नही अच्छा।।
किस गुल के तसव्वुर मे है ए लालः जिगर-खूॅ।
यह दाग़ कलेजे प उठाना नही अच्छा।।
आया है अयादत को मसीहा सरे बाली।
ऐ मर्ग, ठहर जा अभी आना नही अच्छा।।
सोने दे शबे वस्ले गरीबॉ है अभी से।
ऐ मुर्गे-सहर शोर मचाना नहीं अच्छा।।
तुम जाते हो क्या जान मेरी जाती है साहब।
अय जाने-जहॉ आपका जाना नही अच्छा।।
आ जा शबे फ़ुर्क़त से क़सम तुझको खुदा की।
ऐ मौत बस अब देर लगाना नही अच्छा।।
पहुॅचा दे सबा कूचए जानॉ मे पसे मर्ग।
जंगल मे मेरी खाक उड़ाना नहीं अच्छा।।
आ जाय न दिल आपका भी और किसी पर।
देखो मेरी जॉ ऑख लड़ाना नही अच्छा।।
कर दूॅगा अभी हश्र बपा देखियो जल्लाद।
धब्बा य मेरे खूॅ का छुड़ाना नही अच्छा।।

ऐ फ़ाख्तः उस सर्वसिही क़द का हूँ शैदा ।
कू कू की सदा मुझको सुनाना नहीं अच्छा ॥
होगा हरेक आह से महशर बपा 'रसा' ।
आशिक़ का तेरे होश में आना नहीं अच्छा ॥११॥
रहै न एक भी बेदादगर सितम बाकी ।
रुके न हाथ अभी तक है दम मे दम बाकी ॥
उठा दुई का जो परदा हमारी आँखों से ।
तो काबे में भी रहा बस वही सनम बाकी ॥
बुला लो बालीं प हसरत न दिल में मेरे रहे ।
अभी तलक तो है तन में हमारे दम बाकी ॥
लहद प आएँगे और फूल भी उठाएँगे ।
ये रंज है कि न उस वक्त होंगे हम बाकी ॥
यह चार दिन के तमाशे हैं आह दुनिया के ।
रहा जहाँ में सिकन्दर न औ न जम बाकी ॥
तुम आओ तार से मरक़द प हम क़दम चूमे ।
फ़क़त यही है तमन्ना तेरी क़सम बाक़ी ॥
'रसा' ये रंज उठाया फ़िराक़ में तेरे ।
रहे जहाँ में न आखिर को आह हम बाकी ॥१२॥
बैठे जो शाम से तेरे दर पर सहर हुई ।
अफसोस अय क़मर कि न मुतलक़ खबर हुई ॥
अरमाने वस्ल यों ही रहा सो गए नसीब ।
जब आँख खुल गई तो यकायक सहर हुई ॥
दिल आशिकों के छिद गए तिरछी निगाह से ।
मिज़गाँ की नोक दुशमने जानी जिगर हुई ॥
पछताता हूँ कि आँख अबस तुम से लड़ गई ।
बरछी हमारे हक़ में तुम्हारी नज़र हुई ॥

छानी कहाँ न खाक, न पाया कहीं तुम्हे ।
मिट्टी मेरी ख़राब अबस दर-बदर हुई ।।
ध्यान आ गया जो शाम को उस ज़ुल्फ का 'रसा' ।
उलझन में सारी रात हमारी बसर हुई ।।१३।।

बाल बिखेरे आज परी तुरबत पर मेरे आएगी ।
मौत भी मेरी एक तमाशा आलम को दिखलाएगी ।।
मह्वे अदा हो जाऊँगा गर वस्ल मे वह शरमाएगी ।
बारे ख़ुदाया दिल की हसरत कैसे फिर बर आएगी ।।
काहीदा ऐसा हूँ मै भी ढूँढ़ा करे न पाएगी ।।
मेरी खातिर मौत भी मेरी बरसों सर टकराएगी ।
इश्के बुताँ मे जब दिल उलझा दीन कहाँ इसलाम कहाँ ।।
वाअज़ काली ज़ुल्फ की उल्फत सब को राम बनाएगी ।
चंगा होगा जब न मरीज़े काकुले शबगूँ हज़रत से ।।
आपकी उलफत ईसा की सब अज़मत आज मिटाएगी ।।
बहे अयादत भी जो आएँगे न हमारे वाली पर ।
बरसो मेरे दिल की हसरत सिर पर खाक उड़ाएगी ।।
देखूँगा मिहराबे हरम याद आएगी अबरूए सनम ।
मेरे जाने से मसजिद भी बुतखाना बन जाएगी ।।
गाफिल इतना हुस्न प गर्रा ध्यान किधर है तौबा कर ।
आखिर इक दिन सूरत यह सब मिट्टी मे मिल जाएगी ।।
आरिफ़ जो हैं उनके है बस रंज व राहत एक 'रसा' ।
जैसे वह गुज़री है यह भी किसी तरह निभ जाएगी ।।१४।।

फसादे दुनिया मिटा चुक है हुसूले हस्ती उठा चुके है ।
खुदाई अपने मे पा चुके है मुझे गले वह लगा चुके है ।।

नहीं नज़ाकत से हम में ताक़त उठाएँ जो नाज़े हूरे जन्नत ।
कि नाज़े शमशीर पुर नज़ाकत हम अपने सर पर उठा चुके हैं ।।
नजात हो या सज़ा हो मेरी मिले जहन्नुम कि पाऊँ जन्नत ।
हम अब तो उनके क़दम प अपना गुनह भरा सिर झुका चुके हैं ।
नही जबाँ मे है इतनी ताक़त जो शुक्र लाएँ बजा हम उनका ।
कि दामे हस्ती से मुझको अपने इक हाथ से वह छुड़ा चुके हैं ।।
वजूद से हम अदम मे आकर मकी हुए ला-मकाँ के जाकर ।
हम अपने को उनकी तेग़ खाकर मिटा मिटाकर बना चुके है ।।
यही हैं अदना सी इक अदा से जिन्होंने बरहम है की खुदाई ।
यही है अकसर क़ज़ा के जिनसे फ़रिश्ते भी ज़क उठा चुके है ।।
य कहदो बस मौत से हो रुखसत क्यो नाहक़ आई है उसकी शामत ।
कि दूर तलक वह मसीह खसलत मेरी अयादत को आ चुके है ।।
जो बात माने तो ऐन शफक़त न माने तो एन हुस्ने खूबी ।
'रसा' भला हमको दखल क्या अब हम अपनी हालत सुना चुके है १८

दश्त-पैमाई का गर क़स्द मुकर्रर होगा ।
हर सरे खार पए आबिला नश्तर होगा ।।
मैकदे से तेरा दीवाना जो बाहर होगा ।
एक मे शीशा और इक हाथ मे साग़र होगा ।।
हलक़ए चश्मे सनम लिख के य कहता है क़लम ।
बस कि मरकज़ से क़दम अपना न बाहर होगा ।।
दिल न देना कभी इन संग-दिलों को यारो ।
चूर होवेगा जो शीशा तहे पत्थर होगा ।।
देख लेगा व अगर रुख की तजल्ली तेरे ।
आइना खानए मायूसी मे शशदर होगा ।।
चाक कर डालूँगा दामाने कफ़न वहशत से ।
आस्ती से न मेरा हाथ जो बाहर होगा ।।

ऐ 'रसा' जैसा है बरगश्ता ज़माना हमसे।
ऐसा बरगश्ता किसी का न मुक़द्दर होगा॥१६॥

नींद आती ही नहीं धड़के की बस आवाज़ से।
तंग आया हूँ मैं इस पुरसोज़ दिल के साज़ से॥
दिल पिसा जाता है उनकी चाल के अनदाज़ से।
हाथ मे दामन लिए आते है वह किस नाज से॥
सैकड़ो मुरदे जिलाए ओ मसीहा नाज़ से।
मौत शरमिन्दा हुई क्या क्या तेरे ऐजाज से॥
बागवॉ कुंजे कफस मे मुद्दतो से हूँ असीर।
अब खुले पर भी तो मैं वाक़िफ़ नही परवाज़ से॥
कब्र मे राहत से सोए थे न था महशर का खौफ।
बाज़ आए ए मसीहा हम तेरे ऐजाज से॥
वाए ग़फलत भी नहीं होती कि दम भर चैन हो।
चौंक पड़ता हूँ शिकस्त. होश की आवाज़ से॥
नाजे माशूक़ाना से खाली नही है कोइ बात।
मेरे लाशे को उठाए है व किस अन्दाज़ से॥
कब्र मे सोए है महशर का नही खटका 'रसा'।
चौंकनेवाले है कब- हम सूर की आवाज से॥१७॥

चाह जिसकी थी वही यूसुफे सानी निकला॥१८॥

बख्त ने फिर मुझे इस साल दिखाई होली।
सोजे फ़ुरक़त जेबस मुझको न भाई होली॥
शोलए इश्क भड़कता है तो कहता हूँ 'रसा'।
दिल जलाने के लिए आह यह आई होली॥१९॥

बुते काफिर जो तू मुझसे खफ़ा है।
नहीं कुछ खौफ़ मेरा भी ख़ुदा है॥
यह दर परद: सितारों की सदा है।
गली कूच: में गर कहिए बजा है॥
रक़ीबों मे वह होगे सुर्खरू आज।
हमारे कत्ल का बीड़ा लिया है॥
यही है तार उस मुतरिब का हर रोज़।
नया इक राग लाकर छेड़ता है॥
शुनीद: कै बुवद मानिद दीद:।
तुझे देखा है हूरों को सुना है॥
पहुँचता हूँ जो मै हर रोज़ जाकर।
तो कहते है गज़ब तू भी 'रसा' है॥२०॥

रहमत का तेरे उम्मीदवार आया हूँ।
मुँह ढाँपे कफन मे शर्मसार आया हूँ॥
आने न दिया बारे गुनह ने पैदल।
ताबूत मे काँधों पै सवार आया हूँ॥२१॥

चंपई गरचे दुपट्टा है तो गुलदार है बेल।
सैरे गुलशन को चले आते हैं गुलशन होकर॥२२॥

क़लक़ की ग़ज़ल 'बाद अज़ फना तो रहने दे इस खाकसार को' पर चार शैर कहे है—

अल्ला रे लुत्फे ज़बह कि कहता हूँ बार बार।
कातिल गले से खीच न खंजर की धार को॥
तड़पा न कर दे ज़बह मुझे बानिए-जफा।
कुरबाँ गले प फेर दे खंजर की धार को॥

दे दो जवाब साफ कि किस्सा तमाम हो।
दौड़ाते किस लिए हो इस उम्मीदवार को ॥
होगी कशिश वहाँ से पस अज़ मर्ग जो 'रसा'।
पाएगी गर हवा मेरे मुश्ते-गुबार को ॥२३॥

[बुलबुल को बाँधिए तो रगे गुल से बाँधिए—तरह]

जुल्फों को लेके हाथ मे कहने लगा वह शोख।
गर दिल को बाँधना हो तो काकुल से बाँधिए ॥२४॥

जब कभी उसकी याद पड़ती है।
सोस आकर जिगर मे पड़ती है ॥
यादे मिज़गाँ जो मुझको है पैहम।
बरछी सी एक जिगर मे गड़ती है ॥
वक्ते तहरीर यह जमीने सखुन।
बात मे आसमाँ पै चढ़ती है ॥
है जो मद्दे नज़र विसाल उसे।
दम बदम मुझ पै आँख पड़ती है ॥
वस्ल मे भी नही है चैन मुझे।
ख्वाहिशे दिल जियाद. बढ़ती है ॥
है अजब उसके सुलहो-जंग मे लुत्फ।
दिल मिला जब तो आँख लड़ती है ॥
देके आँखो मे सुरमा वह बोले।
शान पर आज तेग चढ़ती है ॥
सैरे गुलशन जो करता है वह माह।
बस गुलिस्ताँ पै ओस पड़ती है ॥
वस्ल होगा नसीब आज 'रसा'।
चेहरए गुल पै ओस पड़ती है ॥

सौ करो एक भी नहीं बनती।
आह तकदीर जब बिगड़ती है ॥२५॥

वर्कदम क्यों हाथ मे शमशीर है।
आज किस के कत्ल की तदबीर है ॥
खाक सर पर पाँओ में ज़ंजीर है।
तेरे चलते यह मेरी तौक़ीर है ॥
पूछते हो क्या मेरी जरदी का हाल।
साहबो यह इश्क़ की तासीर है ॥
कूचए लैली में कहते हैं मुझे।
मिन अअन मजनूॅ की बस तस्वीर है ॥
दस्तो-पा सर्द आशिकों के होते है।
घर तेरा क्या खत्तए कश्मीर है ॥
पोसता है माहरूओ को सदा।
कैसी कजफहमी पै चरखे मीर है ॥
पूछा मैने एक दिन उस माह से।
मेह तुझको कुछ भी ऐ बेपीर है ॥
रूठता है दम बदम बेवजह क्यो।
आशिको की क्या यही तौक़ीर है ॥
है कसम तुझ को हमारे सर की जाँ।
क्या खता थी जिसकी यह ताज़ीर है ॥
बोला हँस कर चुपके बस जाओ चले।
क्या तुम्हारी मौत दामनगीर है ॥
फूल झड़ते है ज़ुबाँ से बात मे।
मिस्ले बुलबुल यार की तक़रीर है ॥
फर्शे रह करता हूँ आँख उसके लिए।
खाके-पा हक मे मेरे अकसीर है ॥

ख्वाब मे उस गुल को देखा ऐ 'रसा' ।
वस्ल होगा उसकी ये ताबीर है ।।
ऐ 'रसा' मिटती नही जुज ताब-मर्ग ।
खते किसमत की अजब तहरीर है ।।२६।।

है कमाँ अबरू तो मिजगाँ तीर है ।
आफते जाँ ग़मजए वे पीर है ।।२७।।

बाद मे मिले हुए फुट कर पद

दीपन की वर माला सोभित ।
जगमग जोत जगति चारो दिसि सोभा बढ़ी है विसाला ।।
घृत करपूर पूर करि राखी मेटि तिमिर की जाला ।
'हरीचंद' विहरत आनँद भरि राधा मदन-गोपाल ।। १ ।।

हटरो सजि कै राधा रानी मोहन पिय को लै बैठावत ।
फूल-माल पहिराइ विविध बिधि भाँति भाँति के भोग लगावत ।।
बीरी देत आरती करि कै करत निछावर वसन लुटावत ।
इक टक निरखि प्रान-पिय मुख छवि जीवन जनम सुफल करि पावत ।।
जगमग दीप प्रकास वदन दुति रतन अभूखन मिलि मन भावत ।
हाट लगाइ प्रेम की मोहन मन के बदले सौज दिवावत ।।
पासा खेलत हँसत हँसावत जानि बूझि पिय अपुन हरावत ।
'हरीचंद' पिय प्यारी मिलि कै एहि विधि नित त्यौहार मनावत।।२।।

समस्या—'क्यौं प्यारी फिरत दिवानी सी ।' की पूर्ति

कहा भयो मद है पीयौ कै गहिरी विजया छानी सी ।
लाल लाल दृग केस बिथुरि रहे सूरत भई निवानी सी ।।
झुक झुक झूमत अल-बल बोलत चाल मस्त बौरानी सी ।
काके रंग रंगी ऐसी क्यौ प्यारी फिरत दिवानी सी ।। १ ।।

छूट्यौ केस खुलौ है अंचल पीक-छाप पहिचानी सी।
टूटी माल हार अरु पहुँची कुसुम-माल कुम्हिलानी सी॥
नैन लाल अधरा रस से सूरतिहू अलसानी सी।
जानी जानी नेकु लाजु क्यौ प्यारी फिरत दिवानी सी॥ २॥

बन बन पात पात करि डोलत बोलत कोकिल बानी सी।
मूँदि मूँदि दृग खोलि खोलि कै कहूँ रहत ठहरानी सी॥
उझकति झुकति जकी सी सब छिन मोहन हाथ बिकानी सी।
धीरज धरि बलि गई अरी क्यौं प्यारी फिरत दिवानी सी॥ ३॥

मौन रहत कबहूँ कबहूँ तू बोलत अलबल बानी सी।
ठगी डगी रस पगी श्याम रट लगी कबहुँ अकुलानी सी॥
तन की सुधि गुरु जन की भै बिनु 'हरीचंद' रस सानी सी।
काके मद माती डोलत क्यौं प्यारी फिरत दिवानी सी॥ ४॥

उफनत तक्र चुअत चहुँ दिसि तें सोचत पथ कहँ पानी सी।
बार बार नँद-द्वार जाइ कै ठाढ़ी रहत बिकानी सी॥
तन की सुधि नहि उधरत आँचर डोलत पथहि भुलानी सी।
मुख सो कहत गुपालहि लै क्यौ प्यारी फिरत दिवानी सी॥ ५॥

नैहर सासुर बाहर भीतर सब थल की ह्वै रानी सी।
लाज मेटि अन-कही भई अपवादनहू न डरानी सी॥
कुलहि कलंक लगाय भली विधि होइ गई मन-मानी सी।
अबहूँ तौ कछु सम्हरि अरी क्यौं प्यारी फिरत दिवानी सी॥ ६॥

बिलखि बिलखि मति रोवै प्यारी ह्वै कै दुःख बौरानी सी।
सीस धुनत क्यो अभरन तोरत फारत अंचल तानी सी॥
गहिरी लेत उसास भरी दुख भई मीन बिनु पानी सी।
कहुँ बैठत कहुँ उठि धावत क्यौं प्यारी फिरत दिवानी सी॥ ७॥

आजु कुंज मैं कौन मिल्यौ जिन लूटी सब रस खानी सी ।
चूसे अधर अँगूर दोउ गालन पै प्रगट निसानी सी ॥
विथुरे वार सिगार हार 'हरिचंद' माल कुम्हिलानी सी ।
धर धर छतिया क्यौ धरकत क्यौ प्यारी फिरत दिवानी सी ॥ ८ ॥

बंसी झुकि झुकि कहाँ वजावत झूठहि अंचल तानी सी ।
आपुहि आपु हँसत अरु रीझत यह गति अलख लखानी सी ॥
मेरे गल भुज दै दै लटकत मुख चूमत मन-मानी सी ।
नाम रटत अपुनो राधे क्यौ प्यारी फिरत दिवानी सी ॥ ९ ॥

नन्द-भवन नहि भान-भवन यह इत क्यौ रहत लजानी सी ।
घूँघट तानि विलोकत केहि तू हिय हरषित रस-सानी सी ॥
मैं ही एक अरी तू केहि इत आदर देत बिकानी सी ।
सेज सजत क्यौ आँगन मैं क्यौ प्यारी फिरत दिवानी सी ॥१०॥

समस्या—'रोम मोम रूस फूस है ।' की पूर्ति

जीते है गुराई सो अनेक अरमनी
जरमनी जरमनी मन रहत मसूस है ।
चित्र लिखे चीनी भए पारसी सिपारसी से
संग लगे डोलै अँगरेज से जलूस है ॥
भौंह के हिलाये सो बिलात तेरे चेरे ऐसे
हेरे नित नित फरासीस और प्रूस है ।
जदपि कहावै वल भारी पै तिहारी सौंह
प्यारी तेरे आगे रोम मोम रूस फूस है ॥१॥

हवसी गुलाम भये देखि करि केस तेरे
चीनी लखि गालन को फोरत फनूस है ।

मिसरी सुनत मीठे बोल बिना दाम बिके
तन की सुवास रहे मलय भसूस हैं ॥
फरासीसी मद्य सीसी ढारि मतवारे भए
नैन पेखि काफरी हू होइ रहे हूस है ।
बरमा हिये मे काम घरसा चलायो प्यारी
तेरे रूप आगे रोम मोम रूस फूस है ॥२॥

भाजे से फिरत शत्रु इत उत दौरि दौरि
दवत जमानी जाको जोहत जलूस है ।
ब्रह्म अस्त्र ऐसी तोपै तोपै एकै बार फौज
विमल बन्दूक गोली दारू कारतूस है ॥
ऐसो कौन जग मे बिलोकि सकै जौन इन्है
देखि बल बैरी-दल रहत मसूस है ।
प्रबल प्रताप भारतेश्वरी तिहारै क्रोध
ज्वाल काल आगे रोम मोम रूस फूस है ॥३॥

जनम लियो है जाने मरनो अवस ताहि
राजा है कै रंक है चतुर है कि हूस है ।
'हरीचंद' एक हरी नाम जग साँचो जानौ
बाकी सब झूठो चार दिन को जलूस है ॥
काफरी कपूर चरबी से अरबी हैं अँगरेज
आदि काठ तृन तूल मूस भूस है ।
साकला सी सकल सकल काल ज्वाल आगे
हिन्दू घृत-बिंदू रोम मोम रूस फूस है ॥४॥

समस्या—'राम बिना बे-काम सभी' की पूर्त्ति

राज-पाट हय गज रथ प्यादे बहु बिधि अन धन धाम सभी ।
हीरा मोती पन्ना मानिक कनक मकुट उर दाम सभी ॥

खाना-पीना नाच-तमाशा लाख ऐश-आराम सभी।
जैसे बिजन निमक बिना त्यों राम बिना बे-काम सभी ॥१॥

इक्कीस तोप सलामी की औअल दर्जे का काम सभी।
क्रास बाथ इस्टार हुए महराज बहादुर नाम सभी॥
जग जस पाया मुलक कमाया किया ऐश-आराम सभी।
सार न जाना रहा भुलाना राम बिना बे-काम सभी ॥२॥

यह जग मोह-जाल की फाँसी झूठे सुत धन-धाम सभी।
नाटक इसमें मर पच के करते हैं जीस्त हराम सभी॥
जब तक दम में दम था झगड़े टण्टे रहे तमाम सभी।
आँख मुँदी तब यह सूझा है राम बिना बे-काम सभी ॥३॥

ब्रह्म-ज्ञान विचार ध्यान धारना व प्रानायाम सभी।
षट दरसन की बक बक जप तप साधन आठो जाम सभी॥
योग सिद्धि बैराग भक्ति पूजा पत्री परनाम सभी।
प्रेम बिना सब व्यर्थ कृष्ण बलराम बिना बे-काम सभी ॥४॥

समस्या—'ग्रीष्मै प्यारे हिमन्त बनाइये की पूर्ति

कीजिये राई सुमेर सरीखी सुमेरहि खींझि कै धूर मिलाइये।
राव सो रंक भिखारी सो भूपति सिंह सो स्वान के पाय पुजाइये॥
दीजिए सींग ससै 'हरीचँद जू' सागर-नीर मिठाइ बहाइए।
कीजै हिमन्तहि ग्रीपम भीपम ग्रीषमै प्यारे हिमन्त बनाइये ॥१॥

पूरन ब्रह्म समर्थ सबै जिय मैं जोइ आवै सोई दरसाइये।
फेरिये सूरज चन्द गती छिन मैं जग लाख बनाइ नसाइये॥
होनी न होनी सबै करिये 'हरीचंद जू' सीस की लीक मिटाइये।
कीजै हिमन्तहि ग्रीषम भीपम ग्रीषमै प्यारे हिमन्त बनाइये ॥२॥

प्रेम दै आपुनो मेटि दुखै जुग नैनन आँसू प्रवाह बहाइये।
लोभ पदारथ चारहू को अरु लोक को मोह दया कै छुड़ाइए ॥
आपुनो ही 'हरीचंद जू' रूप दसो दिसि नैनन को दरसाइए।
भारी भवातप ताप तपे हिय ग्रीषमै प्यारे हिमन्त बनाइए ॥३॥

दीनहूँ पै कबौ कीजे कृपा उजरी कुटी मेरिहू आइ बसाइए।
राखिए मान गरीबनीहू को दयानिधि नाम की लाज निभाइये ॥
दै अधरामृत पान पिया 'हरीचंद जू' काम को ताप मिटाइये।
मेरे दुखै सुख कीजिये पीतम ग्रीषमै प्यारे हिमन्त बनाइये ॥४॥

भोज मरे अरु विक्रमहू किनको अब रोई कै काव्य सुनाइये।
भाषा भई उरदू जग की अब तो इन ग्रन्थन नीर डुबाइये ॥
राजा भये सब स्वारथ पीन अमीरहू हीन किन्है दरसाइये।
नाहक देनी समस्या अबै यह "ग्रीषमै प्यारे हिमन्त बनाइये" ॥५॥
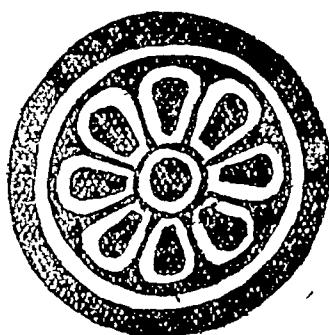
अनुक्रमणिका

पद्यांश | पृष्ठ-संख्या

अ

अंकुस बर्छी सक्ति पवि २१
अकुस वाके अग्र है ३२
अंग्रेजी अरु फारसी ६३७
अंग्रेजी निज नारि को ७३२
अंग्रेजी पढ़िकै जदपि ७३२
अंग्रेजी पहिले पढ़ै ७३६
अकुलात गुजरिया दुख तैं भरी ... , ... ४३९
अकेली फूल बिनन मैं आई १७९
अगगग अगगग अगगग घन गरजै सुनि-सुनि मोरा जिय
लरजै ४८७
अग्या रहती जागती ७४३
अग्र सृंग अंकुस करौ ३१
अगिनि अवतार वल्लभ नाम शम रूप सदा सज्जननि हित
करत जानी ७१५
अगिनि बरत चारिहुँ दिसा २२४
अग्निकुंड सौं वुध भए २३
अग्नि रूप ह्वै जगत कौ २९
अघ निकर सूर कर सूर पथ सूर सूर जग मैं उयौ ... २२३
अघी को पीठ ही चहिए ६५३
अजगुत कीनी रे रामा १८९
अजव जोवन है गुल पर आमदे फसले बहारी है .. ८४८
अटक कटक लौं आजु क्यौं ८००
अटा अटारी वाहर मोखन ७०५
अटा पै मग जोवत है ठाढ़ी ७२
अति अनारि हठ नहिं करिय ७८६

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
अठिलात सँवरिया मद तैं भरी	...	...	४३५
अति कठोर निज हिय कियो	...		७७२
अति कोमल सुकुमार श्री		...	२८
अति चंचल बहु ध्यान सौं	.	...	११
अति निरवली स्याम जापाना	..	.	८०३
अति सुदर मोहनी सजायौ	...	...	७०४
अति सूछम कोमल अतिहि	...	...	७०४
अति सूधौ श्री चरन को	...	...	२८
अतिहि अँकिंचन भारत-बासा	.	.	७०९
अतिहि अघी अति हीन निज	...	...	२२४
अतिहि मोहन निरासक्त जगभक्त मात्रासक्त पतित पावन कहाई	.	...	७१७
अधर धरत हरि के परत	...	...	३२८
अनत जाइ बरसत इत गरजत बेकाज	...	...	५१७
अनियारे दीरघ दृगनि	.		३५२
अनीतैं कहौ कहाँ लौ सहिए	...	.	२७५
अनोखी तुही नई इक नारि	...		५११
अन्य मारगी मित्र इक छत्री सेवक अति विमल		...	२५५
अपने अँग के जानि कै	...	...	३३९
अपने को तू समझ जरा क्या भीतर है क्या भूला है		.	५५४
अपने बचन देखि कै हरो हमारो सोग	...	...	६९१
अपने रंग रँगी अँखियन मै प्रान-पियारे अबीर न मेलौ		...	३९९
अब और के प्रेम के फंद परे	...	...	८१९
अब जानी हम बात जौन अति आनँदकारी		...	७९५
अब तेरे भए पिया बदि कै	...	...	३६५
” ”	..	..	४२५
अब तौ आय पर्यौ चरनन मै	...	...	८३०
अब तौ जग मै खुलि कै चहुँघा पन प्रेम कौ पूरौ पसारि चुकी			६२०
अब तौ बदनाम भई ब्रज मै घरहाई चवाव करौ तौ करौ ...			१७१
अब तौ लाजहु छूटि गई री	...	...	५८५

पद्यांश — पृष्ठ-संख्या

अब ना आओ पिया मोरी सेजरिया २०८
अब प्रीति करी तौ निबाह करौ ८२१
अब मै कब लौ देखूँ बाट ५८९
अब मै कैसे चलूँगी क्यो सुधि मोहिं दिलाई ... ५८६
अब मै घर न रहूँगी काहू के रोके मोहिं मति बरजौ कोय ... ३८२
अब वे उर मै सालत बातै ५८५
अब हम बदि बदि कै अघ करिहै ८३७
अबिरल जुगल कमल दल बरसत सखि पै खीजत होइ खिस्यानी ५९०
अमल कमल कर-पद-बदन ७८४
अमार जे दशा नाथ आसिया हे देख ना २११
अमीचन्द तिनके तनय २२७
अमी-मई कीरति छई ७४२
अम्मा पै नित अनुकूल श्रीबालकृष्ण ठाकुर प्रगट ... २४०
अर तै टरत न बर परे ३४७
अरी आज सभ्रम कहा ६२८
अरी कोऊ करि कै दया नेकु ठॉव मोहिं दीजौ धूप लगै मोहिं भारी ६२
अरी तू हठ नहि छाँड़ति प्यारी ८१
अरी तू हटि चलि प्यारी दीप-मंडल तै क्यौ शोभा हरि लेत ८३
अरी माधवी-कुंज मे ७८४
अरी माधुरी कुज मे ७८५
अरी यह को है सॉवरौ सो लगर ढोटा ऍड़ोई ऍड़ौ डोलै ... ५७
अरी वह अबहि गयौ मुख मॉड़ि ३९५
अरी सखि मोहि मिलाउ मुरारी ३१३
अरी सखी गाज परौ ऐसी लोक लाज पै मदनमोहन
सॅग जान न पाई ४७
अरी सोहागिनि तेरे ही सिर राजतिलक विधि दीनौ ... ११५
अरी हरी या मग निकसे आइ अचानक हौं तो झरोखे रही ठाढ़ी ४७
अरी हौं बरजि रही बरज्यौ नहि मानत दौरि दौरि बार बार
धूप ही मैं जाय ६३
अरी हौं बरजि रही बरज्यौ नहिं मानत ८२

पद्यांश		पृष्ठ-संख्या
अरुन बदन ढिग सित केस सुंदर दरसायौ...	...	८०२
अरे कोऊ कहौ सँदेसौ स्याम को ...	...	५८५
अरे कोऊ लाइ मिलाओ रे प्रान-प्रिया मेरे साथ	...	३९९
अरे क्यो घर घर भटकत डोलौ ...	...	१४०
अरे गुदना रे गोरी तेरे गोरे मुख पै बहुत खुल्यौ	...	३८६
अरे गोरी जोबन-मद इठलाती ...	...	३९७
अरे जोगिया हो कौन देस तैं आयौ ...	...	३६३
अरे ताल दै लै बढ़ाओ बढ़ाओ ...	...	७६२
अरे प्यारे हम तुम व्याकुल आ जा रे प्यारे	...	१९०
अरे बीर इक बेर उठहु सब फिर कित सोए	...	८०५
अरे बृथा क्यौं पचि मरौ ...	...	१०५
अर्द्ध चंद्र त्रैकोण के ...	...	३३
अल्ला रे लुत्फ ज़बह कि कहता हूँ बार बार	...	८५८
अस्व चित्र रँग कौ बन्यौ ...	...	२४
अश्व पीठ कह धरत ...	...	६३४
अष्टपदी चौबीस इमि ...	...	३२८
अष्ट सखिन के संग श्री ...	...	१४
अशा क्रीता वशं नीता ..	...	८५२
असीराने कफस सहने चमने को याद करते है	...	२७५
अहो इन झूठनि मोहिं भुलायौ ...	..	७३१
अहो अहो मम प्रान-प्रिय ...	...	७९३
अहो आज आनंद का ..	...	७६१
अहो आज का सुनि परत ...	...	७०१
अहो तुम बहु बिधि रूप धरौ ...	...	१३२
अहो नाथ ब्रजनाथ जू ...	...	३६
अहो पिय पलकनि पै धरि पाँव .	...	४६
अहो प्रभु अपनी ओर निहारौ .	...	५५
अहो मम प्राननहूँ तैं प्यारे ...	...	५९२
अहो मम भाग्य कह्यौ नहिं जाई ...	...	७८३
अहो मेरे मोहन प्यारे मीत ...	...	५९३

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
अहो मोहि मोहन बहुत खिलायो	...	...	६५४
अहो यह अति अचरज की बात	...	...	१४१
अहो सखि जमुना की गति ऐसी	...	...	७५१
अहो सखि धनि भीलनि की नारि	...	...	७५२
अहो सही नहिं जात अब	...	...	३७
अहो हरि अपने बिरदहि देखौ	...	...	२७७
अहो हरि ऐसी तौ नहिं कीजै	...	...	५०
अहो हरि निरदय चरित तुम्हारे	...	...	६५४
अहो हरि नीको मकर बनाए	...	...	४४१
अहो हरि बस अब बहुत भई	...	...	५७७
अहो हरि वह दिन बेगि दिखावौ	...	...	५६
अहो हरि वेहू दिन कब ऐहै	...	...	५६
अहो हरि हम बदि कै अघ कीन्हे	...	...	५४६

आ

आँखो मे लाल डोरे शराब के बदले	...	...	२०३
आइ कै जगत बीच काहू सौं न करै बैर	...	...	१५७
आई केवल ब्रज बधू	...	...	१०
आई आज कित अकुलाई अलसाई प्रात		...	१६१
आई केलि मंदिर मै प्रथम नवेली बाल	...	...	१७३
आई गुरु लोग संग न्यौते ब्रज गाँव नई		...	१६०
आई प्रात सोवत जगाई मै सखिन साथ		...	१६०
आई भादौ की उजियारी	...	...	५१५
आई है आजु बसंत पचमी चलु पिय पूजन जैये			८३८
आई हूँ सभा मे छोड़ के घर	...	...	७९१
आए कहाँ सों आजु प्रात रस-भीने हो	...	...	३७५
आए ब्रज-जन धाय धाय	...	...	५१८
आए मिलि सब प्रजागन	...	...	६७६
आए है सबन मन-भाए रघुराज दोऊ	...	...	७७४
आओ आओ हे जुवराज	...	...	७२३

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
आओ पिय प्यारे गरे लगि जाओ	...	...	२०८
आओ रे मोरे रूठे पियरवा धाय लगौ प्यारी के गरवा		...	१८४
आओ सबै जुरिकै ब्रज गावँ के देखन को जे रहे अकुलात है...			१५४
आ गई सर पर कज़ा लो सारा सामाँ रह गया		...	८४९
आँचर खोले लट छिटकाए	...	.	६७१
आज महफ़िल मे शुतुरमुर्ग परी आती है ...		...	७९०
आजु अतिहिं आनन्द भयौ	...	...	६७५
आजु अपमान अतिही निरखि भक्त को	...	...	४३७
आजु अभिषेकृति पिय कौ प्यारी	..	...	६१८
आजु आमार होलो सु-प्रभात	...	...	२१७
आजु उठि भोर वृषभानु की नंदिनी	...	...	५०
आजु कछु मंगल घन उनए	...	...	११४
आजु कहा नभ भीर भई	...	...	५१५
आजु कहि कौन रुठायौ मेरौ मोहन यार ...		...	३६७
„ „ „	...	..	४२६
आजु किबा सुखि होलो जीवन	...	...	२१७
आजु की रात न जाओ सैयाँ मोरी बतियाँ मानौ ना		...	१८७
आजु कुंज मंदिर बिराजे पिय प्यारी दोऊ		...	८२५
आजु कुंज मंदिर अनंद भरि बैठे स्याम ...		...	१५०
आजु कुंज मंदिर मे छके रंग दोऊ बैठे ...		...	१५०
आजु केलि मंदिर सौं निकसी नवेली ठाढ़ी		..	१६७
आजु गिरिराज के उच्चतर सिखर पर ...		...	८२
आजु घन अगगय गरजै हो सुनि सुनि कै जिय लरजै		...	४९३
आजु चलि कुंजनि देखहु छाई बिमल जुन्हाई		...	७९५
आजु जल बिहरत प्रीतम प्यारी	...	...	६१७
आजु झलक प्यारे की लखि कै मो घर महामंगल		...	४९८
आजु तन आनँद सरिता बाढ़ी	...	...	११६
आजु तन नीलांबर तनु सोहै	...	...	४५
आजु तन भीजे बसननि सोहै	...	...	११३
आजु तरनि तनया निकट परम परमा प्रगट		...	८२

पद्यांश		पृष्ठ सख्या
आजु तोहि मिल्यौ गोरी कुंजनि पियरवा ...	...	१८२
आजु तौ आनंद भयौ कापै कहि जावै ...	...	५१४
आजु तौ जम्हात प्रात दोउ दृग अलसात ...	..	५१२
आजु दधि-काँदौ है बरसाने ...	...	५१६
आजु दुपहरी मैं स्याम के काम तू बाम छबि-धाम	...	६४
आजु दोउ खेलत साँझी साँझ ...	..	४८२
आजु दोउ बिहरत कुंजर कंत ...	...	४३६
आजु दोउ बैठे मिलि वृंदाबन नव निकुंज	...	६०९
आजु दोउ बैठे हैं जल-भौन ...	...	६१३
आजु धनि भाग हमारे यह घरी धनि मेरे घर आए	...	६१२
आजु नँदलाल पिय कुज ठाढ़े भए स्रवत सुभ सीस पै	...	४४१
आजु नवकुंज बिहरत दोऊ रस भरे	..	५३
आजु प्रगट भईं श्रीराधा आजु प्रगट भईं ...	...	५१६
आजु प्रानप्यारी प्राननाथ सौं मिलन चली	...	११२
आजु प्रेम पथ प्रगट भयौ भुव जनमे श्रीबल्लभ पूरन काम		४८३
आजु फूली साँझ तैसी ही फूली राधा प्यारी	...	१२३
आजु वन उमँगे फिरत अहीर ...	...	४३६
आजु वन ग्वाल कोउ नहिं जाइ ...	...	५१३
आजु बरसाने नौबत बाजै ...	...	५१५
आजु बसंत पचमी प्यारे आओ हम तुम खेलैं	...	८३८
आजु ब्रज आनँद बरसि रह्यौ ...	...	५१५
आजु वृषभानुराय पौरी होरी होय रही ...	...	८२१
आजु ब्रज घर घर बजति बधाई ...	...	४८३
आजु ब्रजचंद तन लेप चंदन किए ठाढ़े अति रस भरे	...	५८
आजु ब्रज छबि की लूटि परै ...	...	८३
आजु ब्रज दून्यौ बढ्यौ अनंद ...	...	५१३
आजु ब्रज बाजति महा बधाई ...	...	५१२
आजु ब्रज भई अटारिनि भीर ..	...	६०३
आजु ब्रज-बधू फूली फूलन के साज सजि ...	...	१२१
आजु ब्रज साँची बजति बधाई ...	...	४८२

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
आजु ब्रज होत कोलाहल भारी (राधा जी)		...	५१९
आजु ब्रज होत कोलाहल भारी (कृष्ण जी)		...	५१३
आजु भयौ अति आनँद भारी	...	...	५१८
आजु भयौ साँचौ मंगल भुव प्रगटे श्रीबल्लभ सुख-धाम		...	४४१
आजु भुव साँचौ भयौ अनंद	...	...	६००
आजु भोरहि भोर खरी निखरी	...	.	३९७
आजु भौन वृषभानु के प्रगटी श्री राधा	...	...	५१४
आजु महामंगल भयौ भोर	...	..	५९५
आजु मान अतिही लह्यौ	...	...	७४५
आजु मुख चूमत पिय कौ प्यारी	...	...	६११
आजु मेरे भोरहिं जागे भाग	...	...	२८७
आजु मै करूँगी निबेरौ जो तू ठाढ़ौ रहैगौ		...	३८७
आजु मैं करूँगी निबेरो खेल को जो तू ठाढ़ो रहैगो		...	४०१
आजु मै देखे री आली दोऊ मिलि पौढ़े ऊँची अटारी		...	६१·
आजु रस कुंज महल मै बतियनि रैनि सिहानी जात		...	४३९
आजु लख्यौ आँगन मै खेलत जसुदा जी को बारौ री		...	४४३
आजु लौं जौ न मिले तो कहा हम तो तुमरे सब भाँति कहावैं			१५८
आजु लौं न आए जो तो कहा भयो प्यारे को		...	८२५
आजु सकेतनि दीपक बारे	..	...	८३
आजु सखि होरी खेलन प्यारे प्रीतम आवैंगे मेरे धाम		...	४०१
आजु सखि होरी खेलन प्रीतम ऐहै फरकत बायौ नैन		...	१४०·
आजु सखी फूले हरि फूल कुंज माही	...	...	४३९
आजु सखी ब्रजराज लाड़िलौ नव दुलहन बनि आयौ		...	४४०·
आजु सिंगार कै केलि के मंदिर बैठी न साथ मै कोऊ सहेली			१४९
आजु सिर चूड़ामनि अति सोहै	...	...	५१
आजु सिव पूजहु हे वनमाली	...	...	४३०
आजु सुर मुनि सकल ब्रज पुराधीश को रत्न अभिषेक		...	६६५
आजु सुहाग की राति रसीली	...	...	४४२
आजु श्री वल्लभ के आनंद	...	...	५१९
आजु श्री राधिका प्रानपति काज निज हाथ सौं		...	६४

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
आजु हम देखत है को हारत	...	...	६९
आजु हरि खेलत रस भरि संग बृषभानु किसोरी		...	३७९
आजु हरिचंदन हरि तन सोहै	...	...	६१६
आजु हरि छलि कै लाए प्यारी	...	...	६०३
आजु हरि बिहरत जमुना तीर	...	...	४३५
आजु है होरी लाल बिहारी	...	...	४२३
आठ अँगुल तजि अग्र सौं	...	...	३२
आठहु दिसि सौं जननि की	...	...	२१
आत पत्र कौ चिन्ह जोइ	...	...	१८
आदरे आदरे भालो तो छिले	...	...	२१३
आदि वंश नव वंश दोऊ काबुल अधिकारी		...	७९६
आनँद आजु भयौ बरसाने जनमी राधा प्यारी जू		...	५१४
आनँद निधि सुख निधि सोभा निधि वल्लभवदन बिलोकों भोर			६०७
आनँदसागर आजु उमड़ि चल्यौ ब्रज मैं प्रगटे आइ कन्हाई			५१३
आनँद सौं बौरी प्रजा	...	...	६२८
आनंदे सुख हेरि हेरि	...	...	५१४
आमद से बसंतो के है गुलजार बसंती	...	...	७९१
आमाय भालो वेशे आर तोमार काज नाई		.	२१६
आमार नाथ बड़ दयामय	...	...	२१२
आयुध वाहन सिद्ध झख	...	...	२१
आये ब्रजजन धाय धाय	...	...	५१८
आयौ पावस प्रचंड सब जग मैं मचाई धूम		...	५०३
आयौ सखी सावन बिदेस मनभावन जू		...	१५९
आयौ समय महा सुखकारी	..	...	४४२
आरजगन कौ नाम आजु सबही रखि लीनौ		...	८०१
आर जातना प्राने सहे ना	...	...	२१०
आरति आरतिहरन भरत की	...		७८०
आरति कीजै जनक लली की	...	...	७७८
आर्य गननि कौ का मिल्यौ	...	...	७९३
आलस पूरे नैन अरुन अब हमहिं दिखावत		...	६८२

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
आल्हादिनी चारुशीला	...	...	७६८
आल्हा बिरहहु को भयो	...	...	७३७
आवत भारत आज	...	...	७०२
आवत सोई छूटन कुँवर	...	...	७०२
आवन की कछु आजु पिया की सुरति लगी मेरी सखियाँ		...	१८९
आवाहन हित वेणु झख	...	...	२१
आशाय आशाय भालो जातना दिले	...	...	२१३
आवो आवो भारत	...	...	७२४
आशा क्रीता वंश नीता	...	...	७६९

इ

इक निपट अकिंचन ब्राह्मनी जिन हरि कहँ निज		...	२४९
इक भाषा इक जीव इक कर लहे	...	...	७३३
इक भीजे चहले परे	...	...	३४०
इक सठ खल नहिं राज मैं	...	...	३४०
इत उत जग मैं दिवानी सी फिरत रही	...	...	१६३
इत उत नेह लगाई भए पिय तुम हरजाई		...	४२८
इत की रूई सीग अरु	...	...	७३६
इतनौ ही तौ फरक रह्यौ	...	...	१३८
इत मोहन प्यारे उत श्री राधा प्यारी	...	...	४२१
इतरानौ फिरत तूं भले अपने मन मैं न गिनौ कछु तोहिं माल			४०४
इद सीता प्रियं स्तोत्रं	...	...	७६९
इन आदिक जग के जिते	...	...	१०५
इनकी उनकी खिदमत करौ	...	...	९१२
इनकी सो अति चतुरता	...	...	७३३
इनके जय कौ उज्वल गाथा	...	...	८०४
इनके जिय के हरप को	...	...	७९५
इनके भय कंपत संसारा	...	...	८०४
इनको तुरतहिं हतो मिले रन के घर माहीं		...	८०६

पद्यांश | पृष्ठ-संख्या

इन चारहु मत मैं रह्यौ ९१
इन चारिहू युगादि मैं ९१
इन दुखियाँ अँखियानि कौं ९२
इन दुखियान को न चैन सपनेहू मिल्यौ १७५
इन नैनन कौ यही परेखौ ५८१
इन नैनन मैं वह साँवरी मूरति देखति आनि अरी सो अरी १७१
इन मुसलमान हरि-जनन पै कोटिक हिंदुन वारियै ... २६३
इनहूँ कहँ लाज तृषा ममता ७०९
इमि श्रीवल्लभ रूप प्रात जो सुमिरन करई ... ६४८
इहाँ स्तब्ध नहिं आवही १२
इहि उर हरि-रस पूरि गयौ ५८२

ई

ईति भीति दुष्काल सौं ७९५
ईश्वर दूबे साँचोर के मुखिया भे श्रीनाथ के ... २४८

उ

उठहु उठहु प्रभु त्रिभुवन-राई ८१३
उठहु उठहु भारत जननि ७०६
उठहु फेर भारत जननि ७०७
उठहु वीर तरवार खींचि माँड़हु घन संगर ... ८०६
उठा के नाज से दामन भला किधर को चले ... ८५१
उठि चलु मोहन ढिग प्यारी ३२४
उठि जा पंछी खबर ला पी की ३८३
उतरत फोटोग्राफ किमि ७३५
उदयौ भानु है आजु या देस माहीं ३११
उधारौ दीनबंधु महराज ५७
उनइस सै तेतीस वर २६९
उमगी भारत सैन जब ८०७
उमग्यौ जोबन जोर रे पिय बिनु नहिं मानै ... ४०२

पद्यांश			पृष्ठ संख्य
उमड़ि उमड़ि दृग रोअत अबीर भए	...	...	१७३
उसको शाहनशही दरबार मुबारक होवे	...	...	७४८

ऊ

ऊधौ अब वे दिन नहिं ऐहै	...	...	६११
ऊधौ जी मिलाओ पियारे को हमहिं सुनाओ न जोग		...	४९३
ऊधौ जू सूधौ गहौ वह मारग ज्ञान की तेरे जहाँ गुदरी है		...	१६५
ऊधौ जो अनेक मन होते	...	...	६५
ऊधौ हरि जी सौं कहियौ जाइ हो जाइ	...	...	४९०
ऊपर सिर सब अंग युत	...	...	३१
ऊरध रेख त्रिकोन धनु	...	...	३२
ऊरध रेखा कमल पुनि	..	...	३१
ऊरध रेखा छत्र चक्र जव कमल ध्वजावर	...	...	३२

ए

एँड़ी पै ताके तले	...	...	३१
ऍड़ी मै पाठीन है	...	...	३२
ऍड़ी मैं सुभ सैल अरु	...	...	३१
ए अष्टादस चिह्न श्री	...	...	३३
एई अहैं दशरथ-नंद सुखकंद तारी	...	...	७७६
एई दिन पुनः हेरि मने वासना	...	...	२१७
एई हैं गौतम नारि के तारक	...	...	७७६
एकंगी विनु कारने	...	...	१०६
एक गरभ मै सौ सौ पूत	...	...	८११
एक चक्र ब्रज भूमि मैं	...	...	२६
एक दिवस मैं यह लिखी	...	...	९७
एक वार भाव ओरे मन	...	...	२१४
एक वेर नैन भरि देखै जाहि मोहै तौन	...	...	१६३
एक वेर भरि नैन लखन दे फिर पिया जैयो विदेसवाँ रे		...	३७४
एक वेर भोजन करै	...	...	९०
एक भक्ति के दान हित	...	...	२२६

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
'एक मास जो नहिं बनै	...	...	९६
एक सत आठ ए नाम अभिराम नित	...	...	७१८
एक साकार परब्रह्म स्थापन करन चारहू वेद के पारगामी		...	७१४
एक ही गाँव मैं वास सदा घर पास रहौ नहिं जानती हैं		...	१५५
एखनि एमन हवे स्वपने छिल ना ज्ञान	...	.	२१४
ए घिरि घिरि कै मेघवा वरसै पिय बिनु मोरा जियरा तरसै		...	५०४
'एजी आजु झूलै छे श्याम हिंडोरे	...	...	५२५
'एतेक जीवने के मरन वासना	...	...	२१४
एतौ हरि जी सौं कहियौ रोइ हो रोइ	...	...	४९२
ए प्रेम राखिते केन करिछ जतनो रे		...	२१६
'ए मैं कैसे आऊँ ए दिलजानी हो देखो रिमझिम वरसत पानी			५२९
'ए री आजु झूलै छे स्याम हिंडोरे	...	...	१२३
ए री आजु वाजै छे रंग वधावना	...	...	५१९
ए री कैसे भरिहै होरी के दिन भारी	...	...	३७०
ए री जोवन उमँग्यौ फागुन लखिकै कोऊ विधि रह्यौ न जात			४००
ए री डफ धुकार सुनि घर न रहौगी	...	...	३७६
ए री प्रान-प्यारी बिन देखे सुख तेरौ मेरे जिय मैं		...	१५३
ए री फुहारनि के दोउ कौतुक मैं अरुझाने		...	४६३
ए री विरह वढ़ावन आयौ फागुन मास री		...	३७१
ए री मेरी प्यारी आजु पौढ़ि तू हिंडोरे		...	११६
ए री या ब्रज मैं वसि कै तरह दिए ही बनै काज		...	३६२
ए री लाज निछावर करिहौं जौ मिलिहै आज		...	१९२
ए री सखी ऐसी मोहि परी है लाचारी रे		...	१९०
ए री सखी झूलत स्यामा स्याम विलोकौ वा कदम के तरे		...	५०१
ए री हरियारी मोहिं नीकी अति लागै तोहि सारी		...	२९७
एषा यद्यपि सार्व भौम पदवी	...	...	७४६
ए सोहाग आर आमार काज नाई	..	...	२१२
एहि उर हरि-रस पूरि गयो	...	...	५८२
एहि विधि बहु विलपत परी वक्री अति आधीन		...	६९२
एहि विधि माधव मैं करै	...	...	९६

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
एहो दीन-दयाल यह ...	...	...	७७१

ऐ

ऐंचति सी चितवनि चितै	...	...	३५४
ऐसी नहि कीजै लाल देखत सब ब्रज की बाल		...	४४३
ऐसे भूले रजपूत कौं जगन्नाथ लीने सरन		...	२४५
ऐसे आनँद के समय ...	...		६९१
ऐसे सावन मे सँवलिया मेरा जोबना लूटे जाय		...	४९३
ऐसो ऊधम न करि अबै कंस जियै	...	...	३७४
ऐसो तुमही सौ निबहै	...	...	५४९

ओ

ओ प्रान नयन-कोने चाईल परे छति कि आछे		...	२१२
ओहे नाथ करुनामय	...	...	२१२
ओहे नाथ दयामय ! ए भव-जंत्रना, आर जे सहे ना		...	२११
ओरे स्याम आछे कि आर आमाय मने	...	...	२१९
ओहे हरि जगतेर पति ...	...	...	२१३

औ

और एक अति लाभ यह	...	...	७३३
और देश के नृप सबै	...	...	७४५
और रंग जिनि डारो रँगी मै तौ रंग तुम्हारे		...	३९९

क

कंज नयन मज्जन किए	...	...	३५०
कठे पंकज मालिका भगवतो यष्टि करे कांचनी		...	७६७
कंत है बहु-रूपिया हमारो	...	...	१३७
कच समेटि भुज कर उलटि	...	...	३४१
कछु गीता मैं भाखि कै	..	...	२२३
कछु तौ वेतन मैं गया	...	..	७३६
कछु न वची तुव भूमि निसानी	...	.	८०३
कछु रथ हाँकनहू मैं भाँति	...	...	६०८

पद्यांश		पृष्ठ संख्या
कटि पै भाथा कंध धनुष कर मैं करवाला	...	८०२
कठिन छत्रियनि जीति लए जिन बहु गढ़ सहजहि	...	८०८
कठिन भई आजु की रतियाँ ...	...	१८०
कठिन सिपाही द्रोह अनल जा जल बलनासी	...	८०८
कदली खंभ पात थरहरहीं ...	...	७०५
कनिष्ठिका अँगुरी तले .	...	३१
कन्हैयालाल छत्री जिन्हैं प्रभुन पढ़ाए ग्रन्थ निज	...	२५७
कबरी सबरी गूँथि फेर सौं माँग भरावौ ...	...	६८२
कब लौं दुख सहिहौ सबै ...		७३७
कबहुँ अचल ह्वै रहत मौन कछु मुख नहिं भाखत	...	६४६
कबहु असंगल होत नहि ...	...	१२
कबहुँ कबहुँ अबहूँ सोई ...	...	७०९
कबहुँक घारिनि मैं कुंजनि निवारिनि मैं ...	...	१७०
कबहु गौर दुति बाल बपु ...	...	२२४
कबहु जुगल आवत चले ...	...	२२४
कबहुँ प्रगट कबहूँ सुपन ...	...	२२४
कबहु सेत पाखान की ...	...	२२४
कबहु होत नहि भ्रम निसा ...	...	१०४
कबहूँ कबहुँ प्रसंग-बस ...	...	२२६
कबहूँ नारी कबहुँ पुरुष फे अजगुत भाव दिखावति हौ	...	६७३
कबहूँ पिय की होइ नहि ...	...	३०
कवि करनपूर हरि गुरु चरित करनपूर सबकौं कियौ	...	२६४
कविन सौं सोचेहि चूक परी ...	...	८३
कविराज भाट श्रीनाथ को नित नव कवित सुनावते	...	२५६
कमल गुलाब अटा सुरथ ...	...	३४
कमल नैन प्यारी झूलै झुलावै पिया प्यारी	...	५२५
कमल पताका गदा चक्र तोरण अति सुंदर	...	३४
कमल रूप वृंदा-विपिन ...	...	२८
कमल-लोचन पिया जाहि गर लाइहै ...	...	३२१
कमल हृदय प्रफुलित करन ...	...	२१

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
कमला उर धरि बाहु बिहारी	...	...	३०८
कमलादिक देवी सदा	...	...	२७
कमला बिमलाद्याश्चा	...	...	७६८
कर उठाइ घूँघट करत	...	...	३५५
करत काज नहिं नंद बिना तुव मुख अवरेखे		...	६८१
करत देखावन हेत सब	...	...	१०५
करत दोउ यहि हित खिचरी दान	...	...	४४४
करत न हरगिस लाडिले	...	...	७८५
करत बहुत विधि चतुरई	...	...	७३५
करत मनोरथ की लहर	...	...	६२८
करत मिलि दीपदान ब्रज-बाला	...	...	८१
करत रोर तमचोर भोर चकवाक बिगोए	...	...	६८१
करनफूल दोऊ कान साजे	...	...	७८६
करनी करुनानिधि केसव की कैसे कहि कहि गाऊँ		...	५४२
करनी करुनासिंधु की कासौं कहि जाई	...	...	२८१
कर पद मुख आनंद-मय	...	...	२२
करपूरादि सुगध सौं	...	...	९३
कर लै चूमि चढ़ाइ सिर	...	...	३३२
करहु उन बातनि की प्रभु याद	...	...	६५१
करहु विलंब न आत अब	...	...	७३८
करि आदर मृदु बैन कहि	...	...	७०६
करि आस्रय श्रीकृष्ण कौ	...	...	२६
करिकै अकेली मोहि जात प्राननाथ अबै	...	...	१४६
करि निठुर स्याम सौं नेह सखी पछिताई	...	...	१९५
करि वारड कानून अनेकनि कुलहि बचायौ		...	७६४
करि बिचार देख्यौ बहुत	...	...	७४३
करुना करि करुनाकर वेगिहिं सुधि लीजिए		...	७७७
करुना वरुनालय जयति	...	...	६३३
कर्णकर्णिक्या गतं श्रुति पथं	...	...	७४६
करे चाह सौं चटुकि कै	...	...	३५५

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
कल के कल बल छलत सो	...	...	७३५
कलेऊ कीजे नंदकुमार	...	...	१२७
कहँ कविवर जयदेव बच	...	...	३०५
कहँ गए बिक्रम भोज राम बलि कर्न जुधिष्टिर		...	६८३
कहत दीन के बैन	...	...	८१९
कहत नटत रीझत खिझत	...	...	३४९
कहत सबै बेंदी दिए	...	...	३४२
कहत हौं बार करोरनि होहु चिरंजी नित नित प्यारे		...	५९५
कह पापिन मिहदी लगी	...	...	७८४
कह सितार को सार सत्रु के किमि मन तेरे		...	६२४
कहहि धन्य यह रैनि धन्य दिन	...	...	७११
कहहु लखहिं सब आइ निज	...	...	८०१
कहाँ गए मेरे बाल-सनेही	...	...	५८४
कहाँ जाँय कासों कहैं कोऊ न सुनिबे जोग		...	६९१
कहाँ तोहिं खोजिए ए राम	...	...	१४१
कहाँ पांडु जिन हस्तिनापुर	...	...	७०४
कहाँ बिलमे कौन देसवा में छाए मोरे अबहुँ न आए		...	३७४
कहाँ लौं निज नीचता बखानौं	...	...	५४२
कहाँ लौं बरिहैं भेद बिचारे	...		१५३
कहाँ सबै राजा कुँवर	...	...	७०३,७६२
कहाँ हाय ते बीर भारी नसाए	...	...	७६३
कहा कहौं कछु कहि न रही	...	...	५४६
कहा कहौं प्यारे जू बियोग मैं तिहारे चित		...	१४८
कहा तुम्हैं नहिं खबर खबर जय की इत आई		...	७९३,८०४
कहा पखानहु तें कठिन	...	...	७७२
कहा भूमि-कर उठि गयौ	...	...	७९३
कहा भयो कैसी है बतावे किन देह दसा	...		७७३
कहा यहाँ अब लखिबे जोगू	...	...	७०७
कहिए अब लौं ठहर्यो कौन	...	...	२९८
कहि कृष्ण इन्हैं मति तुच्छ करौ	...	...	७०९

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
कहु रे श्रीवल्लभ राज-कुमार	...	...	२८८
कहूँ मोर बोले री घन कौ गरज सुनि दामिनी दमक		...	१२३
कहूँ हँसे नहिं दीन लखि	...	...	३६
कहौ अद्वैत कहाँ सौं आयौ	...	...	१३७
कहौ कहा यह सुनि पर्यौ	...	...	७९९
कहौ किमि छूटे नाथ सुभाव	...	...	२७६
कहौ कौन मिलाप की बातैं कहै कहीं औरनि कै तौ		...	१६२
कहौ तुम व्यापक हौ की नाही	...	...	६९
कहौ रे इक मत ह्वै मतवारौ	...	...	१३९
कह्यो न मानत मो तिया	...	...	७८५
काँचे पर ता सो घनत	...	...	
का अरबी को बेग	...	...	८०६
का करौं गोइयाँ अरुझि गईं अँखियाँ	...	...	१८२
काका हरिवंश प्रसंस मति धरम परम के हंस भे		...	२६०
कान्ह तुम बहुत लगावत अपुने कों होरी के खिलार		...	३६२
काबुल अरु कंधार कठिन यहाँ हलचल पर्यौ		...	८०८
काबुल का बल करै बृटिश हरि गरजि चढ़ै जब		...	७५४
काबुल सौ इनकौं कहा	...	..	७९४
काम करत सब आपुही	...	...	१८
काम कलुख कुंजर कदन	...	...	१३
काम क्रोध भय लोभ मद	...	...	१०५
काम खिताब किताब सो	...	...	७३९
कायथ दामोदरदास जिन श्रीकपूररायहिं भज्यौ		...	२५५
काले परे कोस चलि चलि थकि गए पाय सुख के कसाले		...	१७०
का सुर का नर असुर का	...	...	१५
काहू सौं न लागै गोरी काहू के नयनवाँ		...	१८४
काहे तू चौका लगाय जयचँदवा	...	...	५०२
कि आनंदेर दिन आज हेरिनु नयने	...	...	२१७
किए खरब बल अरब के	...	...	७४४
किछु सुख होलो जीवने	...	...	२१४

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
कित अरजुन कित भीम कित	...	...	८०१
कित को दुरिगो वह यार	...	...	१७४
कित पुरु रघु अज जदु किते	...	...	८०१
कित भीपम कित द्रोन कित	...	...	८०१
कित लायल ईजानगर	...	...	७०३
कित सकारि बिक्रम कितै	...	...	८०१
कित हुलकर कित सेंधिया	...	...	७०३
किती न गोकुल कुल-बधू	...	...	३३४
कितै बरसाने-वारी राधा	...	...	७२०
कितै गई हाय मेरी कुटिया परन छाई साढ़े तीन पाद हू		...	३०१
किन चौंकाए पीतम प्यारे	...		८३५
किन बिलमायो मेरो प्रान	...	...	१८६
किन वे रुठाया मेरा यार	...	...	१८६
कीरति मय सौरभ सदा	...	...	२७
कुँवर कहा आदर करै	...	...	६९९
कुँवर कहा हम लेहिं तोहिं	...	...	६९९
कुंजं कुंजं सखि सत्वरं	...	...	६६६
कुंज कुंज रथ डोलै मदन मोहन जू को स्वेत ध्वजा तामै		...	५१९
कुंजनि मंगलचार सखी री	...	...	४४४
कुंजनि मै मोहिं पकरी री	...	...	४९४
कुंज-बिहारी हरि सँग खेलत कुंज–विहारिनी राधा		...	४२९
कुंज भवन नहिं गहवर वन	...	...	२७६
कुंज महल रतन खचित जगमग	...	...	२९८
कुटिल अलक छुटि परत मुख	...	...	३४२
कुढ़त हम देखि देखि तुव रीतैं	...	...	२७६
कुबजा जग के कहा बाहर है नँदलाल ने जा उर हाथ धार्‌यौ			१४९
कुम्भ-कुच परस दृग मीन को दरस तजि ...		...	८२७
कुरु अग्रवाल पावन करन कुंदनलाल प्रगट भए		...	२६५
कूकि कूकि रही कारी कोइरिया	...	...	३८३
कूकैं लगी कोइल कदम्बनि पै बैठि फेरि	...	...	१४५

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
कृष्णचंद्र के बिरह मैं	...	...	७५३
कृष्ण नाम मनि दीप जो	...	...	७८
कृष्ण नाम मुख सौं कढ़ौ	...	...	७८
कृष्ण हेत जो कछु करै	...	...	९३
कृपा करि दृष्टि की बृष्टि वर्धित किए	...	...	७१५
केतु छत्र स्यंदन कमल	...	...	३२
केलि भौन बैठी प्यारी सरस सिंगार करै		...	८२४
केवल जोगी पावही	...	...	१६
केवल पर-उपकार हित	...	...	१६
केवल यह भाखै मधुर	.	...	७१०
केसर खौरि साम सुंदर तन निरखत सब मन मोहै		...	४४४
केसादिक सौं बाम स्याम दक्षिण छबि पावत		...	६४७
केह जाओ गो जाओ मधुपुरिते	...	...	२१९
केहि पाप सौं पापी न प्रान चलैं अटके कितकौ		...	१५७
कै तौ निज परतिज्ञा टारौ	...	...	६९
कै पहिने पतलून कै	...	...	७३३
कै प्रतच्छ गोबर्धन की	...	...	५९३
कैसे आऊँ मेरी पायल झुनक बजै कैसे आऊँ रे		...	३८१
कैसे नैया लागी मोरी पार खिवैया तोरे रूसे हो		...	१८०
कैसे सखी बसिए ससुरार मैं लाज को लेइबौ क्यौं सहि जावै			१६१
को इनकी सरि करि सकै	...	...	२४
कोइल अरु पपिहा गगन रटि रटि खायो प्रान		...	६६९
कोऊ कलंकिनि भाखत है	...	..	८२०
कोऊ कहै यहै रघुराज के कुँवर दोऊ	...	...	७७२
कोऊ गावत कोउ हँसत मंगल करन बिचारि		...	६९०
कोऊ जप सजम करौ	...	...	७८
कोऊ ना बटाऊ मेरी पीर कौ	...	...	५९०
कोऊ नाहिनै जो बरजै निडर छैल	...	...	३६५
कोऊ मनि मानिक मुकुत	...	...	६७६
कोकिल समान बोलि उठे है सुकबि सबै ...		...	६७७

पद्यांश | पृष्ठ-संख्या

कोकिल स्वर सब जग सुखी ७१०
कोटि कोटि रिषि पुन्य तन ८०३
कोथाय आछ ओहे प्रिय अबला-जीवन २१८
कोथाय रहिल सहिल सखि से गुन-मणि २११
कोथाय राहिले प्रान एमन वरखा ते २१३
कोमल पद कहँ गिरि प्रगट २२
कोमल पद लखि कै प्रिया २७
कोरी बात न काम कछु ७२६
कोलापुर ईजानगर ७०४
कौन कहत हरि नाहिं कुञ्ज मे सूनो झूठ बतावति हौ ... ६०२
कौन कहै इत आइए लालन पावस मैं तौ दया उर लीजिए १६६
क्यौं अ जीव भारत भयौ ८००
क्यौं इन कोमल गोल कपोलनि देखि गुलाब कौ फूल लजायौ १५४
क्यौं गले न लगता रसिया के १८६
क्यौं दुंदुभि हुंकार सो ८०७
क्यौ न खैंचि कै खड़ग तुम सिंहासन ते धाय ... ६९२
क्यौं पताक लहरन लगी ८००
क्यौ फकीर बनि आया वे मेरे बारे जोगी १९३
क्यौं बहरावत झूठ मोहिं ८०२
क्यौ वे क्या करने तू जग मे आया था क्या करता है ... ५५३
क्षेमदात्री सत्यवती ७६८

ख

खंडन जग मैं काकौ कीजै १२६
खबर न तोहि सँकेत की ७८५
खयाले नावके मिजगाँ मे ८४७
खरावी देखहु हो भगवान को १४०
खरी भीरहू भेदि कै ३४९
खसम जो पूजे देहरा ७३३
खाक किया सबको तब यह अकसीर है कमाया ... ५६३

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
खादन् पिबन् स्वापन् गच्छन्	...	...	७६९
खुटाई पोरहिं पोर भरी	...	...	२७३
खुलिकै दुखहु करन नहिं पावैं	...	...	५८८
खुलिहै 'लोन' न जुद्ध बिना लगिहै। नहिं टिक्स		...	७९६
खेलत बसंत राधा गोपाल	...	...	३९४
खेलत मैं झुकि झूलै झुलनिय	...	...	३८१
खेलन सिखए अलि भलै	...	..	३४६
खेलो मिलि होरी ढोरौ केसर कमोरी	...	...	८२८
खैबर दर अरगला कठिन गिरि सरित करारे		..	७९४,८०९
खोजत बसन ब्रज की बाल	...	...	८३१
खोजहू न लीनौ फेरि नैन-बान मारिकै	...	...	२८५
खोरि साँकरी मैं आजु छिपि कै बिहारीलाल			१६७
खौरि पनच भृकुटी धनुष	...	...	३४६

ग

गंग जमुन गोदावरी	...	...	७०१
गंगा गीता संख चक्र कौमोदकि पद्मा	...	...	७२९
गंगा तुमरी साँच बड़ाई	...	...	६१६
गंगा पतितनि कौ आधार	...	...	६०९
गंगाबाई श्रीनाथ की अतिहि अंतरंगिनि भई		...	२६१
गंजन धावन छत्री हुते श्री नवनीत-प्रिया सुखद		...	२४०
गंध उदक तिल फल सहित	...	...	९२
गऊ पीठि सुहराइ कै	...	...	९०
गज करुणा रस रूप है	...	...	२२
गज जानौ गज कौ चरम	...	..	२४
ग़ज़ब है सुरमः देकर आज वह बाहर निकलते हैं		...	२५७
गडुस्वामी ब्रह्म सनोडिया प्रभुन सरन मे प्रभु कहे		...	२५७
गढ़ रचना बरुनी अलक	...	...	३४५
गदाधरदास द्विज सारस्वत अतिहि कठिन पन चित रहे		...	२३९
गदा विष्णु कौं जानिए	...	...	२०

पद्यांश			पृष्ठ संख्या
गदा श्याम रँग जानिए	...	...	२५
गमन कियो मोहिं छोड़ि कै	...	...	६७०
गमन के पहिले ही मिलि जाहु	...	...	५८२
गयौ राज धन तेज रोष बल ज्ञान नसाई		...	६८४
गरमी के हित जे करत	...	...	९४
गरजे घन दौरि रहे लपटाइ भुजा भरि कै सुख पागा रहै			१६५
गरी कुटुंबनि भीर मै	...	...	३४१
गले बाँधि इस्दार सब	...	..	७०४
गले मुझको लगाओ ऐ मेरे दिलदार होली मे		...	४२२
गहवर वन कुल बेद कौ	...	.	१०४
गाँठ नही जिनके हृदय	...	...	१०
गाती हूँ मैं औ नाच सदा काम है मेरा	...	...	७९०
गावत गोपी कोकिल बानी	...	...	४४५
गावत रंग बधाई सब मिलि गावत रंग बधाई		...	५२०
गावत सबै बधाय धाय	...	...	५२१
गावौ सखि मंगलचार बधायौ वृषभानु को...		...	५२०
गिरिधरनदास कविकुल कमल वैश्य वंश भूषण प्रगट		..	२६५
गिरिधर लाल रँगीले के सँग आजु फागु हौं खेलौंगी			३८१
गिरिधर लाल हिंडोरे झूलैं	...	...	५२५
गुप्त मंत्र सम पद सबै	...	...	३२८
गुन गन विट्ठलनाथ के कहँ लगि कोउ गावै		...	४४४
गुरु आयसु निज सीस धरि	...	.	८९
गुरु जन वरजि रहे री बहु भाँति मोहि	...	..	१४६
गुल्लाला फूले लखौ	...	...	७८६
गूढ मति हृदय निज अन्य	...		७१६
गृहो जानि मन बुद्धि को	...	...	१७
गोकुलदास टोरा हुते अति आसक्त प्रभून पै		...	२५६
गोकुलदास तिन तनय सुमिरत श्री मोहन मदन		...	२३८
गोकुलदास पै सदन बहु पथिकनि के बिस्राम हित		...	२४५
गोकुलदास रोड़ा दिए नाम दान प्रभु के कहे		...	२६०

पद्यांश पृष्ठ-संख्या

गोकुल प्रगटे गोकुलनाथ ५२१
गोपालदास जटाधारी नाथ खवासी करत हे ... २५१
गोपालहिं रुचत सहज ब्योहार ५४८
गोपिन की बात को बखानों कहा नंदलाल ... ८२२
गोपिन बियोग अब सही नहीं जात मोपै ... ८२२
गोपिन सँग निसि सरद की ३३५
गोपी जब बिरहागि पुनि १२
गोपीनाथ अनाथ गति ७४८
गोपीनाथ अरंभि जै २२५
गोविंददास भल्ला तज्यौ प्रानहु प्रिय निज इष्ट हित ... २४०
गोविद दूबे साँचोर द्विज नवरतहिं नित पाठ किय ... २४७
गोविंद स्वामी श्रीदाम वपु सखा अंतरंगी भए ... २३४
गोभक्षक रक्षक बनि अँगरेजनि फल पायौ ... ७९४
गोरी कौन रसिक सँग रात बसी ३८६
गोरी गोरी गुजरिया भोरी कान्हर नट के संग . २८८
गोरी गोरी गुजरिया भोरी सग लै कान्हा ४०४
गोसाईंदास सारस्वत देह तजी बदरी बनैं .. २४४
गोस्वामी बिठ्ठलनाथ के ये सेवक जग मे प्रगट ... २६१
गोस्वामी बिठ्ठलनाथ के ये सेवक हरिचरन रत . २६१
गौड़िया सुनरहरदास जू प्रभुन कृपा पाए सुपद .. २५७
ग्राम ग्राम प्रति प्रबल पाहरू दिए बिठाई ... ७६५
ग्रीसहु पुनि निज प्राननि पायौ ७०८
ग्वाल गावैं गोपी नाचैं ८३२
ग्वाल सब हेरी हेरी बोलै ५२१
ग्वालिनि दै किन गोरस दान ४४५

घ

घन गरजत बरसत लखि दोऊ औरहु लपटि लपटि रहे सोय ६१२
घर घर आजु बधाई बाजै ५२१
घर घर मै मनु सुत भयौ ६९९
घर तिपुरदास को सेरगढ़ हुते सुकायथ जात के ... २४३

पद्यांश	पृष्ठ-संख्या
घर तें मिलि चलीं ब्रज नारि	८३१
घर वाहर इत उत सवै	७०१
घर-वाहर-केन को काम कछू नहिं को यह रारि निवारि सकै	१५८
घर मैं छिनहूँ थिर न रहै	४०३
घिरि घिरि आए बादर छाए रिमझिम रिमझिम जल वरसै	४८८
घिरि घिरि घोर घमक घन धाए	१२६
घूम घूम घन आए वरसत घूम घूम पिय प्यारी रंग भौन ...	१२७
घेरि घेरि घन आए कुंज कुंज छाइ धाए ऐसी या समय ..	४९९
घेरि घेरि घन आए छाइ रहे चहूँ ओर कौन हेतु प्राननाथ	१५९
घोर सरद साँपिन समै मोसो दुखिया कौन ...	६९१

च

पद्यांश	पृष्ठ-संख्या
चंदन की डारन मैं कुसुमित लता कैधों	७७५
चंदन कौ वागौ करै	९३
चंदन जल घट पुष्प ग्रह	९१
चंदन तन धारन किए	९३
चंद मिटै सूरज मिटै	५७८
चंद्रभानु घर वजत वधाई	५२६
चंद्र सूर्य वंशी जिते	८०८
चंपई गरचे दुपट्टा है	८५९
चक्रमूल में चिन्ह द्वै	३१
चक्रांकुश यव छत्र ध्वज	३२
चढ़ि तुरंग नव चलहु सव	७६२
चढि तुरंग वगीन पर	७०१
चतुर केवटवा लाओ नैया	१९
चतुर जनन को खेल चारु चतुरंग नाम को ...	६२१
चमक से वर्क के उस वर्कवश की याद आई है ...	४९१
चमकहि असि भाले दमकहि ठनकहि तन वखतर ...	८०१
चमचमात चंचल नयन	२५१
चरन चिन्ह निज ग्रंथ मैं --- ..	३१

पद्यांश			पृष्ठ संख्या
चरन-चिन्ह ब्रजनाथ के	...	...	३५
चरन धरत जा भूमि पर	...	...	२७
चरन परस नित जे करत	...	...	११
चरन मध्य ध्वज अब्ज है	...	...	३१
चरित सब निरञ्य नाथ तुम्हारे	...	...	२७३
चलहिं नगर दरसन हित धाई	...	...	७०६
चलहु वीर उठि तुरत सबै जयध्वजहिं उड़ावौ		...	८०६
चली बधाई गावन के हित सुंदर ब्रज की नारी		...	४४६
चली सैन भूपाल की	...	...	७६५
चले दोउ हिलि मिलि दै गल बाहीं	...	...	४४७
चलौ आजु घर नंद महर के प्रेम बधाई गावैं		...	५२२
चलौ सखी मिलि देखन जैये दुलहिनि राधा गोरी जू		...	४४६
चलौ सोय रहौ जानी	...	...	७२
चहिए इन बातनि कौ प्रेम	...	...	१३८
चहुँ दिसि धूम मची है हो हो होरी सुनाय		...	३८४ ४३२
चार चार पट पट दोऊ	...	...	८१८
चातक को दुख दूरि कियो	...	...	८४२
चारन बोलहिं बिजय सुजस बदी गुन गावैं		...	८०६
चारि बरन कौ दीजिए	...	...	९२
चारि युगादिक तिथिन मैं	...	...	९२
चारु चल चक्र चित्रित विचित्रित परम जगत बिजयी जयति		...	४४७
चाहे कुछ हो जाय उम्र भर तुम्हीं को प्यारे चाहैंगे		...	२००
चाह जिसकी थी वही	...	...	८५७
चित चकोर हरषित भए	...	...	६९८
चित लघु पुरुषोत्तमदास के गुरु ठाकुर मैं भेद नहिं		..	२५६
चिरजीवौ फागुन के रसिया	...	...	३६५
चिरजीवौ मेरे कुँवर कन्हैया	...	...	६३९
चिरजीवौ मेरौ श्रीवल्लभ कुल	...	...	२८९
चिरजीवौ यह अविचल जोरी	...	...	६४१
चिरजीवौ यह जोरी जुग जुग चिरजीवौ यह जोरी		...	४४५

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
चूम चूम के मुख भागै सँवलिया	...	...	३८३
चूमि चूमि धीरज धरत तुव	...	...	६७०
चूरी खनकनि मे बंसी को नाहक धोखा लावति हौ		...	६७३
चेत रे चेत सोवनवाले सिर पर चोर खड़ा है		...	५५२
चेरे से हेरे सबै	...	...	७४२
चैत्र कृष्ण एकादशी	...	.	८९
चैन मिटायो नारि को	...	...	६६९
चोरि चीर दधि दूध मन	...	...	७८

छ

छतियाँ लेहु लगाय सजन अब मत तरसाओ रे		...	१८४
छत्र चक्र ध्वज लता पुष्प कंकण,अंबुज पुनि		...	२५
छत्र चिन्ह ताके तले	...	...	३४
छत्रसाल हाड़ा जूझ्यौ दारा हितकारी	...	...	७६४
छत्र सिंहासन बाजि गज	...	...	२०
छत्रानी इक हरि नेह रत वत्सलता की खानि ही		...	२४९
छत्रानी एक अकेलियै सीहनंद मैं बसत ही		...	२५४
छत्रानी एक महाबनहिं सेवत नित नवनीत प्रिय		...	२४१
छत्रानी रजो अडेल की परम भागवत रूप ही		...	२३७
छत्रानी सौं यौं कह्यौ	...	...	२२४
छत्री दोऊ स्त्री पुरुष हे रहे आइ सिंहनंद पै		...	२५५
छत्री प्रभु दास जलोटिया टका मुक्ति दै दधि लई		...	२४१
छवीले आ जा मोरी नगरी हो	...	...	१८१
छमिहै निज जन जानि सो	...	...	३२८
छयल तोरी रे तिरछी नजर मोहिं मारी	...	...	१८७
छाई अँधियारी भारी सूझत नहि राह कहूँ			८४१
छाँड़ि कुल वेद तेरी चेरी भई चाह भरी गुरुजन परिजन		..	१६८
छाँडि कै मोहि गए मथुरा कुबरी तहँ जाय भई पटरानी		...	१४७
छाँड़ो मेरी बहियाँ लाल सीखी यह कौन चाल हा हा तुम		...	४९
छाता जूता आदि सब	...	...	९३

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
छिन मैं शत्रु भगाइ गह्यौ अरबी पासा कहँ		...	८०१
छिपाए छिपत न नैन लगे	...	...	९८
छिरकि केवरा सों पथहि	...	..	७८५
छीपा-कुल पावन भे प्रगट विष्णु दास वादीन्द्रजित		...	२५१
छुटत तोप गम्भीर रव	...	...	८००
छुटत न लाज न लालचौ	...	...	३५३
छुटी न सिसुता की झलक	...	...	३३८
छुटी तोप फहरी धुजा	...	...	७११
छुटै छुटावैं जगत तें	...	...	३४१
छुट्टी भई अदालतन आफिस सब भए बंद		...	६९०
छुड़ा के दीनो ईमाँ मुझको जहाँ मे काफिर ठहराया		...	५६०
छूट नहि तुमकौ कोऊ बिधि प्यारे	...	...	७०
छोटे है छोटिहि बात रुचै मोहिं यासों न जाल में बुद्धि फँसी है			३०२
छोटो सो मोहन लाल छोटे छोटे ग्वाल-बाल		...	४४८
छोड़ि के ऐसे मीठे नाम	...	...	५९३
छोड़हु स्वारथ बात सब	...	...	७३८

ज

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
जग कठिन शृङ्खला सिथिल कर प्रगट प्रेम चैतन्य को		...	२२९
जग के विषय छुड़ाइ सब	...	...	२२३
जग कौ लात करोरन खाया	...	...	५५२
जगत की करनी मे मन जैये	...	...	७२०
जगत-जाल मैं नित बँध्यौ	...	...	२७०
जग बौराना मेरे लेखे	...	...	८४६
जगत व्यापक दान करत सब वस्तु कौ	...	...	७१४
जगतानंद दुज सारस्वत थानेसर निवसत रहे		...	२४९
जगता रहियौ वे सोवनवालियो ऐहैं कारौ चोर		...	११९
जगन्मात जगदम्बिके जगत-जननि जगरानि		...	६९२
जग मै काकौ कीजै तोस	...	...	६४९
जग मै सब कथनीय है	...	...	१०६

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
जगावन ही मनु पावस आयौ	...	...	११२
जग्यपुरुष तजि और को	...	...	१७
जग्यन में जप जग्य बढ़ि अरु शुभ सात्विक धर्म		...	६९२
जग्य रूप श्रीकृष्ण है	..		३
जग्य सुवा कौ चिह्न है	...	...	३३
जदपि ऊँचाई धीरताई गरुआई	...	...	८२३
जदपि चवाइनि चीकनी	...	...	३५२
जदपि न बिक्रम अनवरत	...	...	६९९
जदपि न मैं जानत कछू	...	...	७३१
जदपि नारि दुख जानहीं मेरो सहित बिवेक		...	६९१
जदपि बाहर के जनन	...	...	७३३
जदपि बाहु बल क्लाइव जीत्यौ सगरौ भारत		...	८१७
जदपि मित्र सुत बंधु तिये	...	...	१०६
जदपि सबै सामाँ जुही	...	...	७८५
जदपि है बहु दाम की	...	...	८१९
जदुपति ब्रजपति गोपपति	...	...	२६
जद्दपि खँडहर सी भरी	...	...	६९९
जद्यपि हम सब भाँति ही	...	...	३६
जनक निरासा दुष्ट नृपत की आशा	...	...	७७५
जन जीवन प्रभु की आनि दै मेघनि नहिं बरसन दिए		...	२५२
जनन सौं कबहूँ नाहिं चली	...	...	२८०
जननी नरहर जगनाथ की महाप्रभुन छबि छकि रही		...	२४६
जननी श्लोकोत्तमदास को नाथ सेवकनि मिलि कह्यौ		...	२४७
जनम करम पढ़ि आपु कौं	...	..	५३७
जनमत ही क्यो हम नहिं मरी	...	...	६१८
जनम लियो है महारानी कोख सागर तै जामै तौ कलंक		...	७२७
जनार्दनदास छत्री भए सरन पूर्न विस्वास तै		...	२५७
जब अति कोमल हिय रहते	...	...	७३२
जब कभी उसकी याद पड़ती है	...	...	८५९
जब तक फँसे थे इसमे तब तक दुख पाया औ बहुत रोए		...	२०५

पद्यांश	पृष्ठ-संख्या
जब बैंड़ो अंगुष्ठ मध	३०
जब मोहि ये कहि जननि पुकारै	७०८
जब राधा कौ नाम लियौ	६३९
जब लौं गङ्गा जमुन जल	७००
जब लौं तत्व सबै मिलि	७००
जब लौं धरनी सेस सिर	६७६
जब लौ प्यारे पीय कौ	७५२
जब लौ बानी बेद की	७००
जब लौं सुमन सुबास पर	७००
जब लौं हिय मैं सजलता	११
जब सौं हम नेह कियौ उनसौं तब सौं तुम बातें सुनावती हो	१५६
जब हम सब मिलि एक मत	६७६
जमुन-जल बढ़ी दीप-छबि भारी	८४
जमुना जू की तिबारी चलु सखि, ...	६२
जमुना-तट कुंजनि बीन रही सब सखियाँ फूलों की कलियाँ	१८५
जमुना-तट ठाढ़े नंद-नंदन कोऊ न्हान न पावै हो ...	७१
जय गोकुल चंद्रमा परम कोमल अँग सोहन ...	६९५
जय जय करुनानिधि पिय प्यारे, ...	५००
जय जय कृष्ण,गोविंद हरि	९६
जय जय गिरवर-धरन जयति श्री नवनीत प्रिय ...	६९३
जय जय गोपी, गनेस बृंदाबन, चिंतामनि रिद्धि सिद्धि...	४४८
जय जय गोवर्धन धर देव	८०
जय जय जगदाधार प्रभु	६३३
जय जय जय जगदीश हरे	३०७
जय जय जय ज़य जय श्रीराधा	४५१
जय जय जयति रिषभ भगवान	१२३
जय जय जय विजयिनी जयति भारत महरानी ...	७०२
जय जय जय श्री बालकृष्ण जसुदा के बारे ...	६९५
जय जय नंदानंद करन वृषभानु मान्यतर ...	७५४
जय जय पद्मावति महरानी	१३७

पद्यांश		पृष्ठ-संख्या
जय जय परमानंद ...	...	७८
जय जय वक्री-विनाशन अघ वक-वदन-विदारन	...	७५४
जय जय भक्त-बछल भगवान् ...	...	६००
जय जय विष्णुपदी श्रीगंगे ...	...	६१६
जय जय मथुरानाथ जयति जय भव-भय भंजन	...	६९४
जय जय मोहन मदन मदन-मद-कदन ताप हर	...	६९५
जय जय रिपन उदार जयति भारत-हितकारी	...	८१५
जय जय श्री गिरिराज-धरन श्रीनाथ जयति जय	...	६९३
जय जय श्री गोपाललाल श्रीराधा नायक	...	६९६
जय जय श्री नवनीत-प्रिय जय जसुदा नंदन	...	६९३
जय जय श्री वृंदावन देवी ...	...	८०
जय जय हरिनंदनंद पूर्ण ब्रह्म दुख-निकंद परमानँद जगतबंद		७९
जय जय हरि राधा रस-केलि ...	...	२०६
जय जय हिंदू उन्नति पथ अवरोध मुक्त-कर	...	८१६
जयति आनद रूप परमानंद कृष्ण मुख	...	७१४
जयति कृष्ण पद पद्म मकरंद रंजित नोर नृप भगीरथ विमल		६१०
जयति जह्नुतनया सकल लोक की पावनी ...	...	६१५
जयति द्वारिकाधीश सीस मनि मुकुट विराजत	...	६९४
जयति पार्वती पूज्य पूज्य पति पर्व दत्त सुख	...	७५५
जयति राधिकानाथ चंद्रावली प्रानपति घोष कुल सकल...		५४
जयति राम अभिराम छवि-धाम पूरनकाम स्याम वपु घाम ...		४५१
जयति वल्लभी व्रल्लभ वल्लभ वल्लभ वल्लभ	...	७५४
जयति वेणुधर चक्रधर शंखधर पद्मधर गदाधर शृंगधर वेत्रधारी		५२
जय तीरथ-पति रिपन प्रजा अघ शोक विनाशक	...	८१६
जय धृत वरहापीड कुवलयापीड़ पीड़कर	...	७५५
जय नर्तन-प्रिय जय आनर्तनृपति तनयापति	...	७५५
जय वल्लभ विट्ठल जयति ...	...	२६९
जय वृषभानु नंदिनी राधा ...	...	७९
जय वृषभानु-नंदिनी राधे मोहन प्रान-पियारी	...	८४३
जय भारत नव उदित रिपन चंद्रमा मनोहर	...	८१६

पद्यांश ... पृष्ठ-संख्

जय श्री गोकुलनाथ जयति गिरिराज-उधारन ... ६९
जय श्री नटवर लाल ललित नटवर बपु राजत ... ६९
जय श्री बिट्ठलनाथ साथ स्वामिनि सुठि सोहत . ६९
जय श्री मोहन प्रानप्रिये ४४
जय स्रुति पद वंदिनी ७
जल तरंग बुधि प्रान पुनि ७
जल में न्हात है ब्रज-बाल ८३
जवनियाँ मेरी मुफुत गई बरबाद १८
जवही कौ होमादि करि ९२
जसोदा माई लेहु हमारी बधाई ५२३
जहँ झूसी उज्जैन अवध कन्नौज रहे बर ८०५
जहँ पग धरै निकुंज मैं १६
जहँ जहँ रामकृष्ण चलि जाही ७५१
जहँ पूरन प्रागट्य तहँ ३४
जहाँ जहाँ ठाढ़ौ लख्यौ ३३४
जहाँ जहाँ प्रभु पद धरत १९
जहाँ जौन जो गुन लह्यो ७३४
जहाँ तहाँ सुनियत अति प्यारी प्यारे हरि कौ सुखद विशद जस २८६
जहाँ देखो वहाँ मौजूद मेरा कृष्ण प्यारा है ... ८५१
जहाँ बिसेसर सोमनाथ माधव के मंदिर ६८४
जाई जाई करे नाथ दियौ नाहे जातना २१०
जाई पुरुषोत्तमदास की रुक्मिनि मोहन मदन रत ... २३८
जाओ ओहे गुन-मनि ए कि काज करिले २१५
जाकी कृपा कटाच्छ चहत ७०२
जाकी छटा प्रकाश तैं १३
जाके दरसन हित सदा नैना मरत पियास ... ६२५
जाके देखत ही बढ़ै ११
जागौ जागौ नाथ कौन तिय रति रस भोए ... ६८२
जागौ मंगल मूरति गोबिंद विनय करत सब देव ... ४५२
जागौ मंगल रूप सकल ब्रज जन रखवारे... ... ६७९

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
जागौ मेरे प्रान पियारे	...	...	४५१
जागौ हौं बलि गई बिलंब न तनिक लगावहु		...	६८५
जागे माई सुंदर स्यामा स्याम	...	...	५१
जाट भरतपुर धौलपुर	...	...	७०४
जाति एक सब नरनि की	...	...	७००
जा तीरथ मैं न्हाइए	...	...	९०
जा दिन तुव अधिकार नसायौ	...	...	८०४
जा दिन लाल बजावत बेनु अचानक आइ कढ़े मम द्वारे		...	१५०
जानत कौन है प्रेम-बिथा	...	...	१७४
जानत ही नहि हौ जग मैं किहिं कौं सबरे मिलि भाखत है सुख			१६५
जानत हौ नहिं ऐसी सखी इन-मोहन जैसी करी हमसौं दई			१५१
जानति हौ सब मोहन के गुन-तौ पुनि प्रेम कहा लगि कीनौ			१७१
जानते जो हम तुमरी बानि	...	...	५७८
जान दै री जान दै विचार कुलकानि हूँ कौ		...	१५८
जानि कै मोहन के निरमोहहिं नाहक बैर बिसाहि बरे परी		...	१५१
जानि बिन प्रीतम सहाय लै बसंत काम	...	...	२९५
जानि सकै सब कछु सबहि	...	...	७३६
जानि सुजान मैं प्रीति करी सहि कै जग की बहु भाँति हँसाई			१७१
जानु सु-पानि नवाइ कै	...	...	७०३
जान्यौ वृंदावन रूप हरिदास	...	...	२३०
जान्यौ बेद पुरान भे	...	...	१०५
जामातृत्वे गतं यस्य	...	...	७६८
जा मुख देखन को नितही	...	..	८१९
जामै सम कछु होय नहिं	...	...	२९
जासु काव्य सौं जगत मधि	...	...	८०३
जासु राज सुख बस्यौ सदा भारत भय त्यागी		...	७६३
जासु सैन बल देखि रूस सहजहिं जिय हार्‌यौ		...	८०८
जाहि उधारत आपु हरि	...	...	१०
जाहु जू जाहु जू दूर हटौ सो बकै बिन बातही को अब		...	१६२
जाहु न जाहु न कुँजन मैं उत	...	...	७७२

पद्यांश		पृष्ठ-संख्या
जाहु न सयानी उत बिरछन माहिं कोऊ ...	...	७७३
जितन हेतु अफगान चढ़त भारत महरानी...	...	७६२
जिनकी माता सब प्रजा ...	...	६३३
जिनके देव गुबरधन धारा ते औरहिं क्यौ मानै हो	...	२७८
जिनके राज अनेक भाँति सुख किए सदा ही	...	७६४
जिनके सिसु ह्वै कै मरैं ते जानहिं यह पीर	...	६९१
जिनके हित त्यागि कै लोक की लाज को संगही संग मैं फेरौ कियौ		१५६
जिनको लरिकाई सौं संग कियौ अब सोऊ न साथहिं साजती है		१५५
जिन जवननि तुम धरम नारि धन तीनहु लीनौ	...	७६४
जिन नहिं श्रीवल्लभ पद गहे ...	...	५४१
जिन निज प्रभु कौं जा दिवस ...	...	२४
जिन पायनि सौं चलत तुम ...	...	१०४
जिन बिनहीं अपराध अनेकनि कुल संहारे	...	८०६
जिन भारत महँ आइ तोपबल दह्यौ बज्र कहँ	...	८०८
जिमि निकसे प्रभु खभ तै ...	...	९६
जिमि बनिता के चित्र मैं ...	...	३०५
जिमि बावन के पद तरैं ...	...	७४३
जिमि रघुबर आए अवध ...	...	६९८
जिमि लै काँची मृत्तिका ...	...	७३२
जिमि सब जल मिलि नदिनि मैं ...	...	२०
जिय तैं सो छबि टरत न टारी ...	...	३१२
जिय तै सो छवि बिसरति नाही ...	...	७८२
जियदास भजन रत जाम चहुँ श्री लाड़िले सुजान के	...	२४१
जिय पै जु होइ अधिकार तौ बिचार कीजे लोक-लाज	...	१५२
जिय लेके यार करो मति हाँसी ...	...	१८२
जिय सूधी चितौन की साधै रही ...	...	१७४
जियौ अचल लहि राज-सुख ...	...	७००
जिहि लहि फिर कछु लहन की ...	...	१०३
जीती सब बरसाने-वारी ...	...	३८१
जीव एक द्वै मृतक वनस्पति तीजो जानो...	...	७५६

पद्यांश | पृष्ठ-संख्या

जीव तू महा अधम निरलज्ज ५५१
जीव धर्म सौं कुटिल मंदमति लोक-विनिंदित ... ५४४
जीवन जीवन के यहै १४
जीवन जो रामहिं सँग बीतै ७८०
जीवन तुम बिनु व्यर्थ है ३६
जीव वनस्पति शून्य रस ७५६
जीवहु ईस असीस बल ७४२
जुक्ति सौं हरि सौं का संबंध १३५
जुग जुग जीवौ मेरी प्रान-प्यारी राधा ४४८
जुगल कपोलनि पीक छाप अति सोभा पावत .. ६८२
जुगल केलि रस बल्लभियनि बिनु और कहा कोउ जानै ... ५३८
जुगल केलि रस मत्त हँसत लखि ज्ञान लखन कह ... ६४५
जुगल छबि नैननि सौं लखि लेहु ६०३
जुगल जलद केकी जुगल ७७
जुगल सुवन तिनके तनय २२६
जुरत प्रेम के घन जहाँ १२
जुरत है झूठे ही सब लोग ४४९
जुरि आए फाँके मस्त होली होय रही ३९६
जेवत भीजत हैं पिय प्यारी १२५
जे अति आतप सौं तपे ९४
जे अभक्त कुरसिक कुटिल २८
जे आरज गन आजु लौं ८००
जे आवत याकी सरन २९
जे आवैं याकी सरन २९
जे केवल तुव दास है ७४२
जे जन अन्य आसरौ तजि श्री विट्ठलनाथहि गावैं ... ४५०
जे जन हरि-गुन गावहीं १०
जेनरल मकफरसन आदिक जे सेनापति गन ... ८०१
जे पसु-पच्छिनि देत हैं ९४
जे प्रेमी जन कोउ पथ २२६

पद्यांश	पृष्ठ-संख्या
जे भव-आतप सौं तपे	१६
जे मम कुल मैं होयँगे	९५
जे या चरनहिं सिर धरैं	१३
जे या संबत लौं भए	२६९
जे सींचहिं जल भक्ति सौं	९०
जे हरि के दच्छिन चरन	२५
जेहि लहि फिर कछु लहन की	५७७
जै आदि ब्रह्म औतारी इक अलख-अगोचर चारी ...	२२२
जै जै करुना-निधि पिय प्यारे	६००
जै जै जै विजयिनी जयति भारत सुखदानी ...	६६२—७०२
जै जै श्री घनश्याम बपु	७४८
जै जै श्री वृन्दाबन देवी	५३७
जैन कौं नास्तिक भाखै कौन	१३४
जै वृषभानु-नंदिनी राधे मोहन प्रान-पियारी ...	३९३
जैसे आतप तपित कौं	६९९
जो अनुभव श्री विट्ठल कियौ सोइ दाऊ जी मैं उघट ..	२३२
जोग जुगति सिखए सबै	३४७
जोग जग्य जप तप तीरथ तपस्या व्रत	८२६
जो गावहिं ब्रज-भक्त सब	७४८
जो तुम जोगिन बनि पी के हित	६७२
जोड़ की खोजि लाल लरिए	२७७
जोधपुराधिप अनुज पुनि ...	७६५
जो न प्रजा तिय दिसि सपनेहूँ चित्त चलावैं ..	७६४
जो पिय ऐसौ मन मोहिं दीनौ	५८८
जो पै ईश्वर साँचौ जान	१३९
जो पै ऐसिहि करन रही	५८४
जो पै झगरन मैं हरि होते	१३५
जो पै श्री बल्लभ-सुत नहिं जान्यौ	४५०
जो पै श्री राधा रूप न धरती	४५०
जो पै सबै ब्रह्म ही होय	१३८

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
जो पै सावधान ह्वै सुनिये	...	...	५८०
जोवन कैसे छिपाऊँ री रसिया पर्यौ पाछे ...		..	३८०
जो बालक अरुझाइ खेल मैं जननी-सुधि बिसरावै		...	२७४
जो बिनु नासिका कान को ब्रह्म है ता दिसि बुद्धि न नेकु		...	३०२
जो भारत जग मे रह्यो	...	..	८०२
जो मैं डरपत ही सो भई	...	...	३६४
जो याके सरनहि गए	...	...	१५
जो या पद को नित भजें	..	.	२०
जोर भयो तन काम को	...	..	६६९
जो सब जोग कहूँ मिले	..	...	९५
जो सींचत पीपर तरुहि	...	...	९०
जो हमरे दोसनि लखौ	..	...	३७
जो ही एक बार सुने मोहै सो जनम भर ...		...	८२४
जौन गली कढ़ैं तहाँ मोहैं नर नारी सब भीरन के मारे		...	१६३
जो पै ऐसिहि करन रही	..	...	५८४
जो पै सावधान ह्वै सुनिए	...	...	२८४
जौ पै श्रीवल्लभ सुतहि न जान्यौ	...	...	२८९
जौ यासौ जिय नहि रमै	...	...	६७६
जौ हरि सुमिरन होइ मन	...	...	२०६
ज्वर तापित हिय मैं प्रगट	...	...	२२४
ज्ञान करम सौ औरहू	...	...	१०५

झ

झीनौ पिछौरा सोहै आजु अति झीनौ पिछौरा सोहै		...	४५२
झूठी सब ब्रज की गोरी ये देत उलहनौ जोरी		...	१८४
झूठे जानि न संग्रहे	...	...	३४८
झूम झूम के मोरे आए पियरवा	...	...	३८३
झूम झूम रहे राते नयनवाँ	...	...	३८३
झूलत पिय नँदलाल झुलावत सब ब्रज की बाल		...	२६३
झूलत राधा रंग भरी कुंज हिंडोरे आजु ...		...	५२३

पद्यांश | पृष्ठ संख्या

झूलत हैं राधिका स्याम सँग नव रँग सुखद हिंडोरे ... १२६

ट

टरे न छाती सों दुसह ६७०
टरौ इन आँखिन सो अब नाहिं ५९७
टूटत ही धनु के मिलि मगल गाइ उठी सगरी पुर-बाला ... ७७५
टूटै सोमनाथ के मदिर केहू लागे न गोहार ... ५०२

ठ

ठाढ़े पीय कदंब तर तजिकै जुवति कदंब ... ७८६
ठाढ़े हरि तरनि-तनैया तीर ५९
ठेका या ब्रज को तेरे माथे कौन दयौ ३७६

ड

डंका कूच का बज रहा मुसाफिर जागौ रे भाई ... ५५१
डफ बाजै मेरो यार निकट आयो ३९७
डरत नहिं घन सो रति-रस-माते ४९८
डरपावत मोरवा कूकि कूकि ४९७
डर न मरन बिधि बिनय यह ८१८
डरे सदा चाहै न कछु १०६
डिगत पानि डिगलात गिरि ३३६
डिसलायल हिंदुन कहत ७६५
डूबत भारत नाथ बेगि जागौ अब जागौ ६८३
डूब्यौ पातक-सिंधु मैं ९५

ढ

ढूँढ फिरा मैं इस दुनियाँ में पच्छिम से पूरब तक ... ५७१

त

तजि अफगानिस्तान की ७०४
तजि कुदेस निज सैन सहित सब सैनापति गन ... ७९५
तजि के सब काम को तेरी गलीन मे ८२०
तजि तीरथ हरि राधिका ३३२
तड़ित तार के द्वार मिल्यौ सुभ समाचार यह ... ८००
तदपि तुमहि लखि के तुरत ६९९

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
तदपि सदा निज प्रेम पथ	...	...	७२६
तद्वदे कनक प्रभं	...	...	७६६
तन तरु चढ़ि रस चूसि सब	...	..	८१८
तन पुलकित रोमांच करि	...	...	३७
तन पौरुष सब थाका मन नहिं थाका हो माधौ		...	६४९
तनया पद्मनाभदास की तुलसा वैष्णव रुचि रखी		...	२२७
तन्नमामि निज परम गुरु	...	...	२२५
तपत तरनि तिमि तेज अति	...	...	६२८
तब इनहीं की जगत बडाई	...	...	८०५
तब तौ बखानी निज बीरता प्रमानी कै कै		..	१४९
तब मोहन यह बुद्धि निकासो	...	...	६४०
तब ललिता इक बुद्धि उपाई	...	. .	६३७
तब सखियन निज भेस बनायौ	...		६३८
तब हम भारत की प्रजा	...	.	६७६
तब हरि चरित अनेक बिधि	...	...	७४८
तम पाखण्डहिं हरत करि	...	...	२२५
तरन मैं मोहिं लाभ कछु नाही	...	...	८३६
तरपन करि सुर पित्र नर	...	...	९०
तरल तरगिनि भव भय भगिनि जय जय देवि गंगे			८४५
तरसत स्रौन बिना सुने मीठे बैन तेरे		...	१६८
तरु तन मन अरपन सबै	...	...	२३
तर्जनि अग्र हिलाइ लखनऊ छिन महँ लीनौ		..	८०८
तलवा पाटल रग के	...	...	२५
तल सौं जहँ लौं मध्यमा	...	...	३३
तहाँ तब आइ गए घनश्याम	...	...	६५८
ताकी उन्नति के लिये	...	...	७३३
ताके आगे कहाँ मिसिर का अरबी को वल		...	८०९
ताके ढिग है वलय को	...	...	३१
ताथेई ताथेई ताथेई नाचै री	...	...	५०५
ता पाछे अब लौं भए	...	...	२२६

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
तामें आदर अति दिये	...	...	७३१
तामैं गंगा न्हाइ के	...	...	९४
तारन मैं मो दीन के लावत प्रभु कित वार		...	७७१
तासौं जब सब होहिं घर	...	...	७३३
तासौं तुम्हरे कर-कमल	...	...	६७६
तासौं सब मिलि छाँड़ि के	...	...	७३६
तासौं तबसौं बिपय करि	...	...	२७०
तासौं सब ही भाँति है	...	...	७३४
ताहि देखि मन तीरथनि	...	...	३४२
ताही कौ उत्साह बढ्यौ यह चहुँ दिसि भारी		...	७९५
ताही सौं जब आवही	...	...	२२७
ताही सौं जाह्नवि भई	...	..	९४
ताहू पै निस्तारिए	...	..	३७
तिथि युगादि मैं न्हाइ कै	...	...	९१
तिनकी चरन भक्ति मोहिं होई	...	...	७८२
तिनके दुख सो सब दुखी	...	...	६३३
तिनके सुत गोपाल ससि	...	..	२२७
तिनकों रोग सोक नहिं ब्यापै जे हरि-चरन उपासी		...	६५२
तिन जो भाष्यो सोइ कियो	...	...	७३४
तिन बिनु को इत आवई	...	...	१०५
तिन श्री बल्लभ बर कृपा	...	...	२२७
तिन हरि मो कहँ अब अपनायौ	...	...	७८३
तिनही को हम पाइ कै	...	...	७२६
तिनही भक्त दयाल की	...	.	२२७
तिमि जग की विद्या सकल	...	...	७३५
तिमि जग शिष्टाचार सब	...		७३५
तिय कित कमनैती पढ़ी	...	. .	३५४
तिय तिथि-तरुनि-किसोर-बय	...	...	३३८
तिय-मुख लखि पन्ना जरी	...	...	३४४
तिलँग बंस द्विजराज उदित पावन-बसुधा तल		...	६४८

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
तिहारौ घर सुवस वसौ महरानी	...	...	४५३
ती को भेख छाँड़ि कै जो तुम	...	...	६७२
तीछन विरह दवागि सौं	...	...	१०४
तीन बुलाए तेरह आवै	..	...	८१०
तीनहुँ गुन के भक्त कौं	...	...	१५
तीनहूँ लोक भूपन भूमि भाग्यवर	.	...	७१८
तीनि आठ नव मिलि सवै	..	...	१९
तीरथ पावन करन कबहुँ भुव पावन डोलत		...	६४६
तुझ पर काल अचानक टूटैगा	...		५५१
तुम अवला हत-भागिनी	...	...	७०६
तुम इक तौ सब मैं बड़ी	...	...	७४४
तुमि करके तोमार कारे वल रे मन आपन ...		...	२११
तुम क्यौं नाथ सुनत नहि मेरी	...	..	५६
तुम गर सच्चे हौ तो ज़हाँ को कहते है सब क्यौं झूठा		...	५७०
तुम जो करत दीननि सौं मोहन सो को और करै		...	५४८
तुम दुखिया वहु दिनन की	...	...	७०६
तुम बने सौदाई जगत मे हँसी कराई	...	...	४२१
तुम विनु तलफत हाय विपति वडी भारी हो		...	२८१
तुम विनु दुखित राधिका प्यारी	...	..	३१८
तुम विनु प्यारे कहु सुख नाही	...	...	२८३
तुम विनु व्याकुल विलपत वन वन वनमाली		...	२९२
तुम भौंरा मधु के लोभी रस चाखत इत उत डोलौ		...	४२९
तुम मम प्रानन तें प्यारे हो	...	...	३६७ ४२६
तुमरी कीरति कुल कथा	...	...	८०१
तुमरे तुमरे सब कहे	...	...	३६
तुमरे तुमरे सब कोऊ कहै	...	...	१७४
तुम सम कौन गरीब-निवाज	...	...	२७९
तुम सम नाथ और को करिहे	...	...	४५२
तुम सुनौ सहेली संग की सखी सयानी ...		...	१९६
तुमसौं कहा छिपी करुनानिधि जानहु सब अंतर गति		...	६५०

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
तुम स्व-नारि मैं कहा ? कौन रच्छा तुव करई		...	६२३
तुमहिं अनोखे बिदेस चले पिय आयौ फागुन मास रे		...	३७०
तुमहिं तौ पार्श्वनाथ हौ प्यारे	...	...	१३३
तुमहिं रिझावन हित सज्यौ	...	...	७८
तुम्हरी भक्त-बछलता साँची	...	...	२७९
तुम्हरे हित की भाखत बात	...	...	५७९
तुम्हारौ साँचौ हम मैं नेह	...	...	६७
तुम्हीं निहाँ गर हौ तो जहाँ में सब य आशकारा क्या है		...	५६०
तुम्हे कोउ खोजत है हो राधे	...	...	५९७
तुम्हे तौ पतितन ही सों प्रीति	...		६७
तुलसी कृत रामायनहुँ पढ़त	...	...	७३४
तुलसी दल वैशाख मैं	...	...	९०
तुलसी स्यामा ऊजरी	...	...	९०
तुव जस हमहिं बढ़ावन-हारे	...	...	८३६
तुव धन कासौं है बढ़ि ? को पुनि देस जवन को		...	६२४
तुव कुच परसन लालसा गेंदा लै कर श्याम		...	७८४
तुव घट-पद्म-प्रताप कौ	...	...	७७४
तुव बिनु पिय को घर अँधियारो	...	...	८४
तुव बियोग अति ब्याकुल राधा	...	...	३१५
तुव मुख देखिबे की चाट	...	...	५८५
तुव हित कब के चक्रधर ठाढ़े पकरि कपाट		...	७८६
तू केहि चितवत चकित मृगी सी	...	...	८४४
तू तौ मेरी प्रान प्यारी नैन मै निवास करै		...	६०
तू मिल जा मेरे प्यारे	...	...	४९
तू रँगी रंग पिया के सखी कछू बात	...	...	१६२
तूल मायावाद दहन हित अग्नि-बपु	...	...	७१८
तूही कहा ब्रज मै अनोखी भई	...	...	२६४
तेई धनि धनि या कलिजुग मे	...	...	४५३
तेज चंड सो हरहु कुमारा	...	...	७१०
तेरी अंगिया मे चोर बसै गोरी	...	...	८४६

पद्यांश		पृष्ठ-संख्या
तेरी छवि मन मानी मेरे प्यारे दिल जानी	...	१८७
तेरी बेसर की मोती थहरै ...	...	३८६
तेरी सूरत मुझे भाई मेरा जी जानता है ...	...	२१९
तेरेई पयान हित पावस प्रबल आयौ ...	...	५०३
तेरेई बिरह कान्ह रावरे ...	.	८२२
तेरे श्याम बिंदुलिया बहुत खुली ...		३८६
तेहि सुनि पावै लाभ सब ...	.	७३४
तेरोई दरसन चहै निस दिन लोभी नैन ...	..	८१८
तैड़ा होरी खेल मैडे जोड नू भाँवदा ...	...	३७२
तैंडे मुखड़े पर घोल घुमाइयाँ ...	...	४२५
तैसहि गीत गोबिंद अति ...	...	३०५
तैसहि भोगत दण्ड बहु ...	.	७७६
तोमाय भूलिब के मने ...	...	२१३
तोरे कीरति खंभ अनेकन ...	..	८०३
तोरे पर भए मतवार रे नयनवाँ ...	...	५०१
तोर्यौ दुर्गनि महल ढहायौ ...	...	८०३
तोसों और न कछु प्रभु जाचौ ...	...	५३९
तौ इनके हित क्यौं न उठहिं सब बीर बहादुर	...	७६४
त्रयी सांख्य आराधि कै ...	...	१५
त्राहि त्राहि तुमरी सरन मैं दुखिनी अति अम्ब	...	६९२
त्रिबली पाटल रंग की ...	...	२५
त्रेता मे जो लछिमन करी सो इन कलिजुग माहि किय	...	२६७

थ

थाकिते जीवन मम नाथ ए कि करिले ...	...	२१६
थाकी गति अंगनि की मति परि गई मंद ...	..	१७०
थापे थिर करि राज गन ...	...	८४२
थारे मुख पर सुंदर स्याम लटूरी लट लटके छे	...	२९४

द

दंपति-सुख अरु बिपय रस ...	...	१०६
दच्छिन के ये सब भक्त बर संत मामलेदार सह	...	२६८

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
दच्छिन पद के मध्य मै	...	...	३३
दधि ओदन आदिक सबै	...	...	९२
दमामा सनाई बजाओ बजाओ	...	...	८०७
दश्त पैमाई का गर क़सद मुक़र्रर होगा		...	८५६
दसा लखि चकित भई ब्रज-नारी	...	...	६५७
दहन पाप निज जनन के	...	..	२६
दरस मोहिं दीजै हो पिय प्रान	...	...	२०७
दाऊ दीठि बचाय हरि गए कुंज के भौन	...	...	७८४
दान करै जल-कुंभ कौ	.	..	९२
दान लेन द्वैही जन जान्यौ	...	...	४५२
दामिनि बैर करै बिनु बात	...	...	११२
दामिनि बैरिनि बैर परी	...	...	११२
दामोदरदास कनौज के सँभलवार खत्री रहे		...	२३६
दामोदरदास दयाल भे सूत्र रूप यह माल के		...	२३५
दाव जरे कहँ बारि जिमि	...	...	६९९
दासी कृष्णा मति रुचि भरी गुरु-सेवा मैं अति निरत		...	२५०
दासी दरबानन की झिरकी करोर सही	...	...	८२६
दिन को रवि अकास लखि लज्जित	...	...	७०५
दिन दिन होरी ब्रज मै आओ...	...	...	३७६
दिपति दिव्य दीपावली आजु दिपति दिव्य दीपावली		...	८५
दियो पिय प्यारी को चौंकाय	...	...	४९७
दिल आतिशे हिजराँ से जलाना नहीं अच्छा		...	८५३
दिलदार यार प्यारे गलियों मे मेरे आ जा		...	२०९
दिल मे दिलबर ने जल्वा दिखला के बनाया मस्ताना		...	५६२
दिल मेरा ले गया दगा करके	...	...	२२०
दिल मेरा तीरे सितमगर का निशाना हो गया		...	८५०
दिलबर के इश्क मे दिल को एक मिलावै		...	५६७
दीठि बरत बाँधी अटनि	...	...	३५०
दीन दयाल कहाइ कै धाइ कै दीननि	...	...	१५४
दीन पै काहे लाल खिसाने	...	...	२७५

पद्यांश		पृष्ठ-संख्या
दीनानाथ जनावनोद्यतमना मानादिनानाविध	...	७४६
दीप जोति भइ मंद पहरु गन लगे जँभावन	...	६७९
दीपन की वर माला सोभित ...	..	८६१
दीपनि उलटी करी सहाय ...	...	८४
दीपादिक की मुख्यता ...	..	९३
दुख किससे मैं कहूँ कोई साथ न सखी सहेली	.	११८
दुखी जगत-गति नरक कहँ ...	...	२७०
दुज अच्युतदास सनोडिया चक्रतीर्थ पै रहत हे	...	२५३
दुज गौडदास अच्युत तही प्रभु बिरहानल तन दहे	...	२५३
दुज साँचौरे रावल पदुम श्रीरनछोर कही करी	...	२४५
दुतिय नृप भानु छटी तजु मान ...	.	४५४
दुर्गादिक सब खरी कोर नैनन की जोहत	..	६८०
दुष्ट नृपति-वल दल दली ...	...	६९७
दूजे के नहि वस रहै ...	.	७३६
दूध देत नित तृन चरत करत न कछू बिगार	...	६९१
दूर दूर चला जा तू भँवरवा ...	...	३८३
दूरौ खरे समीप को ...	...	३५३
दूलह श्री ब्रजराज फूलि बैठे कुंजनि आजु	...	४५३
दृगन लगत बेधत हियौ ...	...	३४८
दृढ करि भारत सीम बसै अँगरेज सुखारे	...	७९६
दृढ़ दास्य परम बिश्वास के कृष्णदास मेघन भए	...	२३६
दृढ़ भेद भगति जग मैं करन मध्व अचारज भुव प्रगट	...	२२८
देखत पीठि तिहारी रहेगे ...	...	८३१
देखन देहुँ न आरसी ...	...	१४५
देखहु निज करनी की ओर ...	...	६५१
देखहु मेरी नाथ ढिठाई ...	...	८३७
देखहु लहि रितुराजहि उपवन फूली चारु चमेली	...	४३१
देखि कै काली कराली महा डरि बुद्धि न ता पद माँहि धँसी है		२०२
देखि चरन पै प्रीतम प्यारौ ...	...	६४०
देखि दीन भुव मैं लुठत ...	...	२२४

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
देखि सखि चंदा उदय भयौ	...	...	१२२
देखि सखी देखि आजु कुंजनि मैं नवल केलि		...	६६
देखे आजु अनोखे दानी	...	...	४५४
देखै पावत कौन सोहाग	...	...	१४१
देखो साँवरे के सँगवाँ गोरी झुलेलीं हिंडोर		...	८४०
देखौ जू नागर नट ठाढ़ौ जमुना के तट पर			४५४
देखौ बहियाँ मुरक गई मोरी	...	...	८४६
देखौ बूँदनि बरसै दामिनि चमकै घिरि आए		.	५०४
देखौ भारत ऊपर कैसी छाई कजरी	...	...	५०१
देखौ माई हरि जू के रथ की आवनि	...	...	६०७
देखौ सोभित तरु पर नटवर	...	...	८३१
देख्यौ एक एक कौ टोय	...	...	५८१
देत असीस सदा चित सौं यह	...	...	६२०
देव काज अरु पितर दोउ	...	...	१८
देवकि के जनमि नंद घर मै चलि आए	...	...	७२८
देव देव नरसिंह जू	...	...	९५
देव पितर दोउ रिननि सौं	...	...	१८
देव पितर सब ही दुखी	...	...	७३७
देव होइ सुरपति बनै	...	...	९४
देवी बृंदा बिपिन की	...	...	२६
देह दुलहिया की बढ़ै	...	...	६७५
दोउ कर जोरे ठाढ़ौ बिहारी	...	...	५३
दोउ जन गाँठि जोरि बैठारे	...	...	४५५
दोउ झूलै आजु ललित हिंडोरे सखियाँ	...	...	५००
दोउ मिलि आजु हिंडोरे झूलैं	...	...	४९९
दोउ मिलि झूलत कुंज बितान	...	...	११७
दोउ मिलि झूलै फूलै हो कुंज हिंडोरे री सखी		...	४८८
दोउ मिलि पौढ़े सुख सों सेज	...	=	४५५
दोउ मिलि बिहरत जमुना तीर	...	...	४५५
दोऊ भाई छत्री हुते महाप्रभुन रस रँग रए		...	२४९

पद्यांश | पृष्ठ-संख्या

दोऊ हाथ उठाइ कै ३५
दौरि उठि प्यारी गर लावै गिरधारी किन ... १६९
द्वादस द्वादस अर्द्ध पद ७३०
द्वादसि तिथि मै होइ पुनि ९४
द्वार बँधाई तोरनै ६७५
द्वारहि पै लुटि जायगौ बाग ५४५
द्विज ब्रह्मदत्त सह प्रगट एहि समय भक्त हरि के भए ... २६९
द्विज रामानंद बिछिप्त बनि जगहि सिखाई प्रेम-विधि ... २५१

धनि कलकत्ता कलि-रजधानी ७०५
धन जन हरि निहचिंत करि २२३
धन लेकर कछु काम न आवै ८११
धन विद्या बल मान बीरता कीरति छाई ८०५
धनि दिन धनि मम भाग कुंज धनि ६१२
धनि धनि भारत के सब छत्री ५०३
धनि धनि री सारिस-गमनी ८४२
धनि यह संबत मास पख ६७६
धनि राजनगर-बासी हुते रामदास दुज सारस्वत ... २४७
धनि वे दृग जिन हरि अवलोके ६०८
धनुष पिनाकहि मानिए २४
धन्य ये मुनि बृंदाबन बासी ७५१
धन्य ये मूढ़ हरिन की नारि ७५०
धन्य धन्य दिन आजु कौ ७४५
धरम जुद्ध विद्या कला ७३४
धरम सब अँटक्यौ याही बीच १३६
धाओ धाओ बेगि सब ७०४,७६२
धाइ कै आगे मिली पहिले १७५
धाम द्वारिका कनक-भवन जादव नर-नारी ... ७२८
धावत इत उत प्रेम सों ६२८
धारन दीजिए धीर हिये १७५

पद्यांश		पृष्ठ-संख्या
धिक देह औ गेह सबै सजनी जिहिं के बस नेह कौ	...	१७
धिक धिक ऐसो धरम जो हिंसा करत विधान	...	६९
धोबी-बच सों सिय तजन	... ...	२७०
ध्वजा दंड सों मेरु है	... ...	१८

न

नंददास आनंद घन	... ...	१०६
नंदन-पति प्यारी सची	... ...	६९८
नंद बधाई बाँटत ठाढ़े	... ...	५२४
नंद-भवन नहिं भानु-भवन यह	... ...	८६२
नंद-भवन हौं आजु गई ही भूले ही उठि भोर	...	५९१
न आया वो दिलबर औ आई घटा	... ...	४८९
नई नई नित तान सुनावे	... ...	८१२
नखरा राह राह कौ नीको	... ...	२७३
नजरहा छैला रे नजर लगाए चला जाय	... ...	१८८
न जानी ऐसी हरि करिहैं	... ...	४५५
न जानौं गोविंद कासों रीझैं	... ...	५९३
न जानौं तुम कछु हौ की नाही	... ...	१४१
न जाय मोसो ऐसौ झोंका सहीलो न जाय	...	१९१
न जाय मोसो सेजरिया चढ़िलो न जाय	... ...	१८७,१८९
नटवर रूप निहार सखी री	... ...	५९
नभ मधि ठाढ़े होइ कही यह घन सम बानी	...	८०२
नभ लाली आली भई	... ...	३५५
नमो बिल्वमंगल-चरन	... ...	२२५
नमोस्तु सीता पदपल्लवाभ्याम्	... ...	७६६
नयन की मत मारौ तरवरिया	... ...	१८२
नर-तन कहो सुद्धता कैसी	... ...	६५०
नर-तन सब औगुन की खान	... ...	६५०
नरहरि अच्युत जगत-पति	... ...	९५
नरहरि जोसी जगनाथ के भाई बड़े महान हे	...	२४६
नरायनदास प्रभु-पद-निरत अम्बालय मे बसत हे	...	२५३

पद्यांश | पृष्ठ-संख्या

नरायनदास भाट जाति मथुरा मे निवसत रहे ... २५४
नरिया नरायनदास भे सरन प्रभुन के अनुसरे ... २५४
नरी सुता तिय आदि सब सद्दू मानिकचंद की ... २५८
नर्क स्वर्ग के ब्रह्म पद ७८
नलिनि-नयन अमृत-बयन ७७
नव कुंजनि बैठे पिया नँदलाल जू जानत हैं सब कोक कला... १७१
नव को नव गुन लगि गिनौ १४
नव ग्रह नहि बाधा करत १४
नव जोगेस्वर जगत तजि १४
नव तारे प्रगटहिं नसि जाहीं ७०५
नव बसंत को आगम सजनी हरि को जनम सुहाये ... ८३९
नवधा भक्ति प्रकार करि १४
नव दूलह ब्रजराय लाडिलो नव दुलहिन वृषभानु-किसोरी ८३८
नव नागरि तन मुलुक लहि ३४०
नव प्रेमे प्रेमि होते कर बासना २१४
नव माला हरि गल दई २२६
नवल नील मेघ बरन दरसत त्रय ताप हरन ... ६०४
नवो खंड पति होत हैं १४
नशीली आँखोंवाले सोए रहो अभी है बडी रात ... १८८
नसीहत है अबस नासेह बयाँ नाहक है बकते हैं ... ८४७
नहि नहि यह कारन नह ी ७९५
नहि तो समरथ यह कहा २७०
नहि मानूँगी काहू की बात मैं पिय सँग आजु खेलौंगी फाग ३८३
नहीं का बाकी वक्त नहीं है जरा जी में शरमाओ ... ५५९
नाग चिन्ह मति जानियौ १७
नागरी मंगल रूप-निधान ५२४
नागरी रूप लता सी सोहै ४५६
नाच लगन मट पान को मिल्यो आइ सुभ जोग ... ६९०
नाचत ब्रजराज साजे नटराज साज १२८
नाचत नवल गिरधरलाल ८३४

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
नाचति बरसाने की नारी	...	...	५२३
नाचि अचानक ही उठे	...	...	३३६
नाटक अरु उपदेश पुनि	...	...	७९३
नाटक के ये आठ रस	...	...	२१
नातः परं किमपि किंचिदपहि मातः	...	...	७६७
नाती पद्मनाभदास के रघुनाथदास साखी रहे		...	२३७
नाथ तुम अपनी ओर निहारो	...	...	२७४
नाथ तुम उलटी रीति चलाई	...	...	६८
नाथ तुम प्रीति निबाहत साँची	...	...	६७
नाथ बिसारे ते नहि बनिहै	...	...	६०४
नाथ मैं केहि बिधि जिय समझाऊँ	...	...	६१३
नाना द्वीप निवासिनो कृपतयः स्वैरुत्तमाङ्गैर्नतै		...	७४६
ना बोलो मो सो मीत पियरवा जानि गए सब लोगवा		...	१९०
नाभा जी महराज ने	...	...	२२६
नाभा पटियाला अमृतसर	...	...	७०४
नाम आनंद निधि वल्लभाधीश कौ विट्ठलेश्वर प्रगट करि दिखायो			७१८
नाम धरैं सिगरे ब्रज तौ अब कौन सी बात को सोच रहा है			१७२
नारद तुम्बर षट बिभास ललितादि अलापत		...	६८०
नारद सिव सुक सनक से	...	...	१०४
नारायन शालिग्राम हरि भक्ति प्रगट एहि काल के		...	२६८
नारी दुर्गा रूप सब	...	...	७४५
नारि पुत्र नहिं समझही	...	...	७३२
नावक सर से लाइ कै	...	...	३५३
नाव चढ़ि दोऊ इत उत डोलैं	...	...	४५६
नाव री मोरी झाँझरी हो परी मँझधार	...	...	५९०
नाव हरि अवघट घाट लगाई	...	...	६४
नासहु अरबी सत्रु गननि कहँ करि छन महँ छय		...	८०६
नासा मोरि नचाइ दृग	...	...	३४५
नाहि इन झगरनि मैं कुछ सार	...	...	१४०
नाहि ईस्वरता अँटकी बेद मैं	...	...	१३५

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
नाहिं तो हँसी तुम्हारी ह्वैहै	...	...	५७८
नाहिंनै या आसा को अंत	...	...	५४२
निखिल निगम कौ सार दिव्य बहु गुन-गन भूपित		...	७२९
निछावरि तुम पै सो कहा कीजै	...	...	५९३
निज अंगीकृत जीव को	...	...	३६
निज जन के अघ-पसुन कौं	...	...	१३
निज जन मैं बरसत सुधा	...	...	१२
निज दास अर्थ-साधन अनेकन किए	...	...	७१६
निज पथ प्रगट करन कौं द्विज ह्वै आपहु प्रगट भए हरि आज			४८२
निज चिन्हित तेहि कियौ	..	...	१७
निज प्रेम-पंथ सिद्धांत हरि विट्ठल बपु धरि कै कह्यौ		...	२२९
निज फलित प्रफुल्लित जगत मैं जय वल्लभ कुल कलपतरु...			२२९
निज बिमल बंस मैं परम महात्म्य प्रभु ...		...	७१६
निज भगिनी श्री देखि कै	...	...	१३
निज भाषा उन्नति बिना	...	...	६३३
निज भाषा उन्नति अहै	...	...	७३१
निज सुनाम के बरन किए तुम सकल सबहि बिधि		...	८१७
निज भाषा निज धरम निज मान करम व्यौहार		...	७३८
निठुर सो नाहक़ कीनी प्रीति	...	...	५८६
निठुराई मति कीजिए	...	...	३६
नित नित होरी ब्रज मैं रहौ	...	...	३८७
” ” ”	...	...	४३२
नित प्रति एकत ही रहत	...	...	३३२
नित सिव जू बंदन करत	...	...	१५
नित स्याम सखी सम नेह नव स्याम सखा हरि सुजस कवि			२६८
नित्य उमाधव जेहि नवत	...	...	८९
नित्य चरन सेवन करत	...	...	२८
निभृत निशीथे सई वो वाँशी बाजिल	...	...	२१८
निरधन दिन दिन होत है	...	...	७२६
निरभय पग आगेहि परत	...	...	७६५

पद्यांश	पृष्ठ-संख्या
निर-अपराध गरीब हम सब बिधि बिना सहाय ...	६९२,८०७
निलज इन प्राननि सौं नहिं कोय	५८५
निवानी तेरी मूरति मेरे मन बसी	४०२
निविड़तम पुंज अति स्याम गहवर कुंज	७२
निष्कलंक जग-वंद्य पुनि	२८
निसिचर तूलहिं दहन हित	६७०
निसि कारी साँपिन भई	६७०
निसि बीती बनवत सखी	७८४
नींदड़िया नहिं आवै, मैं कैसी करूँ ए री सखिया ...	११९
नींद आती ही नहीं धड़के की बस आवाज से ...	८५७
नीकौ लसत लिलार पर	३४२
नीचे ही नीचे निपट	३५४
नीति-विरुद्ध सदैव दूत बधके अघ साने	७९४
नीरस यामैं नहिं बसै	१२
नील हीर दुति अति मधुर	७७
नीलम औ पुखराज दोउ	८१९
नीलम नीके रंग को	८१९
नृप-अबदुल रहमान कियौ आदेस सुनाई	७९४
नृप कुल दत्तक प्रथा कृपा करि निज थिर राखी ...	७६४
नृप-गन धावत पाछे पाछे	७०५
नृपति कुशध्वज कन्या	७६८
नृप रहमान अयूब दोऊ मिलि कलह मचाई ...	७९६
नेकु चलि पिय पै बेगहि प्यारी	८५
नेकु न झुरसी बिरह झर	३५५
नेकु निहारि नागरी हौ बलि	४८३
नेत्र रूप वा सूल की	२४
नेह लगाय लुभाय लई पहिले ब्रज की सब सुकुमारियाँ ...	१५१
नेह हरि सो नीको लागै	५४७
नैन तुरंगम अगम छवि	३५४
नैन नवल हरिचंद गुन	८१९

पद्यांश — पृष्ठ-संख्य

नैननि के तारे दुलारे प्रान-प्यारे मेरे ५४५
नैननि मैं निवसौ पूतरी ह्वै हिय में बसौ ह्वै प्रान ... ५२८
नैन फकीरिनि हो रामा अपने सैयाँ के करनवाँ .. ४२०
नैन बिछाए आपु हित ६२५,६९९
नैन भरि देखनहू मैं हानि ५८३
नैन भरि देखि लेहु यह जोरी ४६
नैन भरि देखौ गोकुल-चंद ४८
नैन भरि देखो श्रीराधा बाल ४८
नैन ये लगि कै फिर न फिरे ५८६
नैन लाल कुसुम पलास से रहे है फूलि १५३
नैना मानत नाहीं मेरे नैना मानत नाहीं ४६
नैना वह छबि नाहिंन भूले ६०
नैहर सासुर बाहर भीतर सब थल की है रानी सी ... ८६२
नौबत धुनि मंजीर सजि ६९८
नौमि राधिका पद जुगल तिन पद को बल पाइ ... ६६२
न्याय-परायन साँच तुम ५३७
न्यौते काहू गाँव जात ही जसुमति निकसी तहँ आई ... ६३९

प

पंचम पांडव जिमि सकुनी गंधार पछास्यौ ... ७९४
पछितात गुजरिया घर मैं खरी ४९७
पढ़े फारसी बहुत बिधि ७३१
पढ़ि विदेश भाषा लहत ७३४
पढो लिखो कोउ लाख बिध ७३३
पढ़े सस्कृत जतन करि ७३१
पढे संस्कृत बहुत विध ७३५
पतित उधारन नाम सही ... २८९
पतित-उधारनि मैं सुनी ६१६
पथिक की प्रीति को का परमान ४९९
पद-तल इन कहँ दलहु कीट तृन सरिस नीच चय .. ८०६

पद्यांश		पृष्ठ संख्या
पनघट बाट घाट रोकत जसुदा जी को वारो	...	८३५
पद्मनाभ दास कन्नौज को श्रीमथुरानाथ न तजे	..	२३६
पद्मनाभदास की बहू की ग्लानि गई सब जीय की		२३७
पद्मादिक सब बिधिन को	... ...	२८
पर-ब्रह्म के चरन मै	... ...	१८
परब्रह्म परमेश्वर परमातमा परात्पर	... ...	७३९
परम चतुर पुनि रसिक-बर	... ..	१०५
परन कुटीर मेरी कहाँ वहि गई इत	... ...	३०१
परदेसी की बुद्धि अरु वस्तुन की करि आस	...,	७३८
परम पुरुष परमेश्वर पद्मापति परमाधार ...	...	७५८
परम प्रथित निज जस करन	... ...	२९
परम विजय सब तियन सौं	... ...	२६
परम मुक्तिहू सों फलद तुअ पद-पदुम मुरारि	...	७७१
परम मोच्छ फल राज-पद	... ...	७०३
परम सुहावन से भए सबै बिरिछ बन बाग	...	६६९
परमानंददास उदार अति परमानंद ब्रज बसि लह्यौ	...	२३३
परशुराम को जन्म दिन	... ...	९३
परिकर कटि कसि उठौ धनुष पै धरि सर साधौ	...	७६३
परिकर कटि कसि उठौ बँदूकनि भरि भरि साधौ	...	८०६
परीता स्वगणैरेव	... ...	७६९
परी सेज सफरी सरिस	... ...	६७०
पर्वत से निज जननि के	... ...	११
पर्वत सों बाराह भे	... ...	२३
पहरू कोउ न लखि परै	... ...	७००
पहिरि नवल चंपाकली चंपकली से गात	... ...	७८४
पहिरि मालिका माल उर	... ...	७८६
पहिरि जिरह कटि कसि सबै	... ..	८०७
पहिले तो बिनही समझे तुम नाहक रोस बढ़ावति हो	...	६७१
पहिले बहु भाँति भरोसो दियो अबही हम लाइ मिलावती हैं		१५५
पहिले बिनु जाने पिछाने बिना मिली धाइकै आगे विचारे बिना		१५६

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
पहिले मुसुकाइ लजाइ कछू	...	...	१७५
पहिले ही जाय मिले गुन मैं स्रवन फेर	...	...	१४६
पहुँचति डटि रन सुभट लौं	..	...	३५१
पाग चिन्ह मानहुँ रह्यौ	...	...	२७
पाजी हूँ मै कौम का बंदर मेरा नाम	...	...	७८९
पाय पलोटत मान मैं	...	...	२७
पायल पाय लगी रहै	..	...	३४३
पारबती की कूँख सौं	...	...	२२७
पालत पच्छिहु जो कुँवर	...	...	७०९
पालागौं कर जोरी भली कीनी तुम होरी	...	...	७९२
पाहन मारेहु देत फल	...	...	१६
पाहि पाहि प्रभु अंतरजामी	...	...	५४६
पिता बिबिध भाषा पढ़े	...	...	७३२
पितृ पक्ष को जानि कै ब्राह्मण मन सानंद		...	६९०
पिय कर को निज चरन को	...	...	२७
पिय की मीठी मीठी बतियाँ	...	...	८४५
पिय के अँकोर रच्यौ कै हिंडोर	...	...	११७
पिय के कुंज नाहिं कोउ दूजी	...	...	६७३
पिय गए बिदेस सँदेस नहि पाय सखी मनभावनी		..	५०-७
पिय तोहि राखौंगी हिय मै छिपाय	...	...	२७८
पिय पिय रटत पियरी भई	...	...	८१८
पिय प्राननाथ मनमोहन सुंदर प्यारे	...	...	२०६
पिय प्यारे चतुर सुजान मोहन जान दे	..	...	६५९
पिय प्यारे बिना यह माधुरी	.	..	१७४
पिय बिनु बरसत आया पानी	...	..	५२४
पिय बिनु सखी नींद न आवै साँपिनि सी भई रैन		...	५०५
पिय बिनु सखी सेजिया साँपिन सी मोरा जियरा डसि		.	४९०
पिय बिहार मैं मुखर लखि	...	.	२७
पिय मन बंधन हेत मनु	...	...	२९
पिय मन मोहन के सग राधा खेलत फाग		...	३७१

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
पिय मुख लखि पन्ना जरी बेंदी बढ़ै बिनोद		...	३४४
पिय मेरे अंकन सुरथ बिराजौ	...	...	४६०
पिय भूरख इत आइ देहु मोहिं बोल सुनाई		...	४२९
पियरवा रे मिलि जा मत तरसाओ	...	...	१९०
पिय रूसिबे लायक होय जो रूसनौ वाही सौं चाहिए		...	१५६
पिय सँग चलौ री हिंडोरे झूल	...	...	५१७
पिय सौं प्रीति लगै नहिं छूटै	...	...	५८६
पिया प्यारे तोहिं बिनु रह्यौ नहिं जाय	...	...	२०८
पिया प्यारे मै तेरे पर वारी भई	...	..	३८५,४०२
पिया बिनु कटत न दुख की रात	...	...	४००
पिया बिनु बिरह बरसा आई	...	...	५०४
पिया बिनु बीति गए बहु मास	...	...	४५७
पिया बिनु मोहि जारत हाय सखो देखो कैसी		...	१९३
पिया मनोरथ की लता		. .	२६
पिया मनमोहन राधा के संग खेलत भाग		...	३७७
पिया मुख चूमत अलकनि टारि	...	...	५९६
पिया मैं पल पल ना तजौं तेरो साथ	...	...	४०२
पियारे ऐसे तो न रहे	...	...	५८२
पियारे केहि बिधि देहुँ असीस	...	. .	५९६
पियारे गर लागौ रैनि के जागे हो	...	..	१८८
पियारे तजी कौन से दोस	...	...	५८९
पियारे तुव गति अगम अपार	...	. .	१३५
पियारे थिर करि थापहु प्रेम	...	...	५९२
पियारे दूजौ को अरहंत	...	...	१३१
पियारे पिया कौन देस रहे छाय	...	...	२०८
पियारे बहु बिधि नाच नचायौ	...	...	२७८
पियारे याकौ नावँ नियाव	...	...	५७८
पियारे सैयाँ कौने देस रहे रूसि जोवना कौ सब रंग चूसि...			२०८
पियारे हम तो भक्त इकंगी	...	...	७०
पियारौ पैये केवल प्रेम में	...	...	१३६

पद्यांश			पृष्ठ संख्या
पिया सौं खिचरी क्यौं तू राखत	...	...	४५९
पिया हौं केहि बिधि अरज करौं	...	...	५८०
पीतांबर सुत विद्या निपुन पुरुषोत्तम वादीन्द्रजित		...	२३१
पीरी परिगई रसिया के बोलन सौं	...	...	३८५
पीरे मुख बैरी परे	...	...	६२९
पीवै सदा अधरामृत स्याम को	...	...	८२१
पीरे द्युति करि बैरि झट	...	...	७४५
पीरौ तन परी फूलि सरसों सरस सोई मन मुरझानौ पतझार			१५३
पुनि पताक ताके तले	...	...	३०
पुनि परतिज्ञा चेति सत्य सौं बदन न मोर्‍यौ		..	७९४
पुनि वंदत श्रीव्यास पद	...	...	२२५
पुनि वल्लभ ह्वै सो कही	...	...	२२३
पुन्य मास बैसाख मैं	...	...	९१
पुरानी परी लाल पहिचान	...	...	५८७
पुरुपोत्तम जोसी द्विज हुते कृष्ण भट्ट पै आत मुदित		...	२४५
पुरुपोत्तमदास जू आगरे राजघाट पर रहत हे		...	३४३
पुरुषोत्तमदास सुसेठवर छत्री श्री काशी रहे		...	२३८
पुरुपोत्तम प्रभु मेरे सरवस	...		७६०
पुरुषोत्तम प्रभु मेरे स्वामी	...		७६०
पुरुपोत्तम बिन मोहिं नहिं कोई	...		७६०
पुष्प माल बहु भाँति अरु	...	...	९३
पुष्प लता जव बलय ध्वजा उरध रेखा बर		...	३२
पुत्रवती बिनु जानई को सुत बिछुरन पीर		...	६९२
पुत्र सोगिनी ही रह्यो जो पै करनो मोहि ...			६९१
पूछत लाल बोलि किन प्यारी	...		६४१
पूजा लै कहँ तुष्ट नहि धूप दीप फल अन्न ..		.	६९२
पूजिकै कालिहि शत्रु हतौ कोऊ लक्ष्मी पूजि महाधन पाओ ..			७९
पूजिहौं देवी न देव कोऊ किन वेद पुरानहु ऊँचे पुकारौ		...	५४५
पूरन दस ससि नखन सौं	...	..	२८
पूरन पियूप प्रेम आसव छकी हौ रोम रोम रस भीन्यौ		.	१६८

पद्यांश	पृष्ठ-सं
पूरनमल छत्री प्रभुन के कृपानिधि अतिही रहे ...	२
पूरन ससि कौ चिन्ह है	
पूर्ण आनंदमय सदा पूरन काम वाक्य पति निखिल जग ...	७
पृथीराज जयचंद कलह करि जवन बुलायौ ...	६
पै केवल अति सुद्ध जिय	६
पैतिस, एकतालिस, अट्ठावन, बावन को गढ़ ...	६
पै पर प्रेम न जानही	९
पै निज भाषा जानि तेहि	७
पै सब विद्या की कहूँ	७
पोरस सर जल महँ बरसत लखि	८
पौढ़े दोऊ बातनि के रस भीने	१
प्यारी आपुनो ध्यान बिसास्यो	६
प्यारी कीरति कीरति बोलि	५
प्यारी के कुंज पिय प्यारी आवत हरिहिं धाय भुजनि भरि लीनौ	४
प्यारी कौं खोजत है पिय प्यारौ	४६
प्यारी छबि की रासि बनी	४
प्यारी जू के तिल पर बलिहारी	२८
प्यारी जू के तिल पर हौं बलिहारी	६
प्यारी झूलन पधारौ झुकि आए बदरा	४८
प्यारी तेरी भौंहै जात चढ़ी	४२
प्यारी तोरी बाँकी रे नजरिया बड़े तोरे नैना रे प्यारी ...	१९
प्यारी पग नूपुर मधुर	३
प्यारी पौढि रहो अब समय नाहिं	२९
प्यारी मति डोलै ऐसी धूप मे	४६
प्यारी मोसों कौन दुराव	४५
प्यारी रूप नदी छबि देत	११
प्यारी लाजनि सकुची जात	४५
प्यारे अब तो तारेहि बनिहै	६
प्यारे अब तो सही न जात	५७
प्यारे इतही मकर मनावहु	४५

पद्यांश			पृष्ठ संख्या
प्यारे की छबि मनमानी सिर मोर मुकुट नट भेप धरे		..	२८८
प्यारे कौ कोमल तन परसि आवत आज याहीं तै		...	६११
प्यारे क्यों तुम आवत याद	...	...	५८१
प्यारे जान न देहौं आज	...	.	४५८
प्यारे जू तिहारी प्यारी अतिही गरब हठ की हठीली			६१
प्यारे तुम बिनु व्याकुल प्यारी	...	...	३१५
प्यारे मोहि परखिए नाहीं	...	...	२९९
प्यारे यह नहि जान परी	..	...	५४०
प्यारे होरी है कै जोरी	..	...	३९९
प्रगट न प्रेम प्रभाव नित	...	...	२२६
प्रगट बीरता देह दिखाई	..	..	८०५
प्रगट मत्स्य के चिन्ह सौ	...	...	२३
प्रगटी सुंदरता की खानि	..	...	४६०
प्रगटे द्विज कुल सुखकर चंद	...	...	८२८
प्रगटे प्रानन ते प्यारे		...	४५७
प्रगटे हरि जू आनन्द करन	...	...	५३
प्रगटे रसिक जनन के सरबस	...	...	४५७
प्रचलित करहु जहान मे	...	...	७३७
प्रजा कृषिक हरषित करत	..	...	६२८
प्रति क्षण गुप्त लीला नव निकुंज की भरि रही चित्त मैं सदा जाके			७१७
प्रतिष्ठान साकेत प्रनि	...	...	६९९
प्रथम जबै काबुल-पति कछु अभिमान	...	..	७९४
प्रथम जुद्ध परिहार कियौ विस्वास दिवाई		...	८०६
प्रथम नौमि गोपीपति पद पंकज अरु न्यारे		...	४५९
प्रथम मान धन बुद्धि कुसल बल देह बढ़ायौ		...	६८३
प्रथम शर्मीरामा भई	...	...	७४५
प्रभु उदार पद परसि जड़ पाहनहू तरि जाय		...	७७२
प्रभु की कृपा कहाँ लौं गैऐ	...	...	५४१
प्रभुदास भाट सिहनंद के तीर्थ प्रथोदिक निदियौ		...	२४३
प्रभु निज अनगन सुभग असीसा	...	...	८१३

पद्यांश	पृष्ठ-संख्या
प्रभु मैं सेवक निमक-हराम	५४
प्रभु मोहिं नाहिं नेकहु आस	५४
प्रभु रच्छहु दयाल महरानी	८१
प्रभु हो अपनी बिरद सम्हारौ	५४
प्रभु हो ऐसी तो न बिसारौ	२७
प्रभु हो जो करिहौ सोइ न्याव	५४
प्रभु हो कब लौं नाच नचैहो	५४४
प्रलय करन बरखन लगे	३३६
प्रातकाल ब्रजबाल पनियाँ भरन चली गोरे गोरे तन सोहै ...	५१७
प्रात क्यौं उमड़ि आए कहा मेरे घर छाए ए जू घनश्याम ...	५१८
प्रात समय उठतहिं श्री बिट्ठल यह मंगलमय लीजै नाम ...	४६१
प्रात समय प्रीतम प्यारे कौ मंगल बिमल नवल यश गाउ ...	६०६
प्रात समय हरि कौ यश गावत उठि घर घर सब घोष-कुमारी	६०६
प्रात स्नान यामैं करै	९४
प्राननाथ आरति हरनन	२७०
प्राननाथ कि बले छिले	२१२
प्राननाथ के न्हान हित	१०३
प्राननाथ जो पै ऐसी ही तुम्है करन ही हाँसी ...	५८३
प्राननाथ तुम सौं मिलिबे की कहा कहा जुगति न कीनी ...	५८१
प्राननाथ तुम बिनु को और मान राखे	६५३
प्राननाथ देखा दाओ आसि अबलाय	२११
प्राननाथ निदय हए विदाय चेओ ना तोमा बिन प्रान नाहि	२१०
प्राननाथ बिदेसे ते जेते दिब ना	२१०
प्राननाथ ब्रजनाथ जू	३७
प्राननाथ ब्रजनाथ भई सब भाँति तिहारी ...	२८४
प्राननाथ मन मोहन प्यारे बेगिहि मुख दिखराओ ...	२८२
प्रान पिया के गुन गन सुनौ री सहेली आय ...	२९६
प्रान पिया बिनु प्रान लेन कौ फिर होरी सिर पर ...	४२०
प्रान पियारे तिहारे लिए सखि बैठे है देर सौं मालती ...	१५४
प्रान पियारे प्रेम-निधि	९७

पद्यांश		पृष्ठ-संख्या
आन प्रिये शशि मुखि विदाय दाओ आमारे	...	४९
आनेर बिना की करो रे आमी कोथा जाई	...	१९२
आयेण संति बहवः प्रभवः पृथिव्याम् ...	...	७६७
प्रिया परा परमानंदा पुरुषोत्तम प्यारी ...	...	७५८
प्रिया पुत्र सँग नित्य सिव ...	...	२०
प्रीति तुव प्रीतम कौं प्रगटैऐ ...	...	४९८
प्रीतम बिरहातप समन ...	...	२६
प्रीति की रीति ही अति न्यारी ...	...	५९२
प्रेम नयन जल सौं सिंचे ...	..	१६
प्रेम प्रीति को बिरवा .	...	८१९
प्रेम प्रेम सबही कहत ...	...	१०३
प्रेम बानिज कीन्हो हुतो ...	...	८१८
प्रेम भाव सो जे बिधे ...	...	१०
प्रेम मै मीन मेष कछु नाहीं ...	...	५४८
प्रेम सकल स्रुति सार है ...	...	१०५
प्रेम सरोवर की यहै ...	...	१०४
प्रेम सरोवर की लखी ...	...	१०४
प्रेम सरोवर के लग्यौ ...	...	१०४
प्रेम सरोवर नीर कौ ...	...	१०३
प्रेम सरोवर नीर है ...	...	१०३
प्रेम सरोवर पंथ मैं ...	...	१०४
प्रेम सरोवर मैं कोऊ ...	...	१०३
प्रेम सरोवर यह अगम ...	...	१०३

फ

फन पति फन प्रति फूँकि बाँसुरी नृत्य प्रकासन	...	७३९
फबी छवि थोरेही सिंगार ...	...	५१
फरकि उठी सबकी भुजा	...	८००
फल दियो भीलनी अजामिल उचार्‌यो नाम	...	३०१
फल स्वरूप फनपति फन प्रति निर्त्तन फलदाई	...	७५८

पद्यांश ... पृष्ठ-संख्या

फसले गुल में भी रिहाई की न कुछ सूरत हुई ... ८५०
फसादे दुनिया मिटा चुके है हुसूले हस्ती उठा चुके है ... ८५५
फागुन के दिन चार री गोरी खेल ले होरी ... ४१९
फाटत हिय जिय थर थर कंपत ७१०
फिर आई फस्ले गुल फिर जख्मदह रह रह के पकते हैं ... ८४६
फिर मुझे लिखना जो वस्फे रूए जानाँ हो गया ... ८४९
फिरि आई बदरी कारी फिर तलफैंगे प्रान ... ५११
फिरि गाई रस की सोइ गारी ३९८
फिरि फिरि दौरत देखियत ३४८
फिरि लीजे वह तान अहो पिय फिरि लीजै वह तान ... ४६२
फिरे कुँवर जब जननी पासा ७११
फूट बैर को दूरि करि ७३७
फूल कौ सिंगार करत अपने हाथ प्यारौ ... ४६२
फूलनि के सब साज सजि गोरी कित बदन दुराय जात .. ५८
फूलनि कौ मंदिर रचे ९३
फूलनि कौ कँगना नहिं छूटत कैसे हौ बलबीरजू ... ४६१
फूली बन नव मालती माल तिय गर डार ... ७८६
फूलि रही द्वै बेली श्री बृंदाबन ६३
फूल फद्कत लै फरी पल कटाक्ष कर वार ... ३५२
फूलेंगे बलास वन आगि सी लगाइ कूर ... ८२७
फूले सब जन मन कमल ६२८
फूल्यौ सो दूलह आजु फूल ही कौ साज्यौ साज फूल सी ... ४६१
फेर अब आई रैन बसंत की ४०३
फेर चलाई रँग पिचकारी ४०४
फेर वाही चितवनि सौं चितयौ ४००
फेरहू मिलि जैए इक बार ५८३
फैलिहै अपजस तुम्हरौ भारी ५७८

ब

बंगालिन के हूँ भयो घर घर महा उछाह ... ६९०
बंदत श्री सुकदेव जिन २२५

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
बंदीजन सब द्वार खरे मधुरे गुन गावत	...	...	६८०
बदे भरत पत्नी श्री	...	...	७६७
बंदौं श्रीनारद चरन	...	...	२२५
बँध्यौ सकल जग प्रेम मैं	...	...	१०६
बंस रूप करि कै द्विविध	...		२२३
बंसी कौन सुकृत कियौ	...	...	७४९
बंसी झुकि झुकि कहाँ बजावत	...	...	८६३
बंसी बजा के हमको बुलाना नही अच्छा	...	...	२०९
बँसुरिया मेरे वैर परी	...	...	८३४
बख्त ने फिर मुझे इस साल दिखाई होली		...	८५७
बचन दीन जन सौं जुगति	..	..	५३७
बचे रहौ जरा यह बदनामी फाग है	...	...	३७९
बच्यौ तनिक समय नहिं	...	...	७३८
बजन लागी बसी कान्ह की	...	...	८६५
बजन लागी बंसी यार की	...	...	८३५
बजन लागी बंसी लाल की	...	...	१८१
बजी बृटिश रन-दुंदुभी	...	...	८०७
बज्यौ बृटिश डंका सघन	...	...	७११
बज्यौ बृटिश डंका अबै	...	...	७६२
बज्यौ बृटिश डंका गहकि	...	...	८०९
बज्र इन्द्र बपु अनल है	...	...	२१
बज्र गाभ यासौं प्रगट	...	...	११
बज्र बीजुरी रंग कौ	...	...	२४
बड़े की होत बड़ी सब बात	...	...	२७६
बढ़न चहत आगे सबै	...	...	७३८
बढ़ी जग कीरति बृंदाबन की	...	...	७४९
बन उपबन एकान्त कुंज प्रति तरु तरु के तर		...	६४७
बन बन आगि सी लगाइ के पलास फूले सरसों गुलाब		...	१६४
बन बन पात पात करि डोलत बोलत कोकिल		...	८६२
बन बन फिरत उदास री मै पिय प्यारे बिन		...	४०१

पद्यांश		पृष्ठ-संख्य
बनमाली के माली भए नाभा जी गुन गन गथित	...	२६४
बन मे आगि लगी है फूले देखु पलास	...	३८४
बना मेरा ब्याहन आया वे ...	..	२९०
बनी यह सोभा आजु भली ...	...	५१
बर्क दम क्यो हाथ मे शमशीर है ...	...	८६०
बर जीते सर मैनके ...	...	३४७
बरसा मे कोउ मान करत है तू कित होत सखी री अयानी...		४९७
बरसा रितु सखि सिर पर आई पिय बिदेस छाए	...	५०६
बरुन मच्छ बपु गदा बपु ...	...	२१
बल खात गुजरिया बिरह भरी ...	...	१८७
बलि कीनौ सो कौन करे ...	...	४६५
बलि की मति पर बलि बलिहारी ...	...	४६५
बलिहारी या दरबार की ...	...	६८
बलिहि छलन गए आपु छलाए ...	...	४६५
बल्लभनंदन भक्ति मार्ग प्रगटन बुध बोधक	...	७५९
बल्लभ बल्लभ बल्लभ पंडित मंगल मंडन	...	७५९
बस करु अब ऊधम बहुत भयौ ...	...	३८६
बस हित सानुस्वार देववाणी मधिका है ...	...	६२३
बसे राज घर सुख भयो मिटे सकल दुख दुंद	...	६७५
बसै जिय कृष्ण रूप मैं मेरौ ..	...	७८१
बहियाँ जिनि पकरौ मोरी पिया तुम साँवरे हम गोरी	...	१८४
बही मै ठाम न नेकु रही ...	...	७०
बहु तारन कौ एक पति ...	...	१३
बहु नट वपु ह्वै आपुही ...	...	२२४
बहु नायक पिय मन सु गज ...	...	२८
बाँधि सेतु जिन सुरत किए दुस्तर नद नारे	...	७६१
बाजी करे बंसी धुनि बाजि बाजि स्रवननि जोरा जोरी	...	१४७
बाजी नैननि ही मैं लागी ...	...	८१
बाढ़यौ करे दिनहीं छिनहीं छिन कोटि उपाय करौ	...	१४७
बात कोउ मूरख की यह मानौ ...	...	१३४

पद्यांश		पृष्ठ-संख्या
वात गुरुजन की न आछी लरकाई लागै ...	...	८२३
वात विनु करत पिया वदनाम ...	...	११३
वादा श्रीप्रभु की कृपा तैं दास वादरायन भए	...	२५८
वान चिन्ह सों प्रगट श्री ...	...	२३
वानी चारु चरित्र सौं ...	...	३०६
वावा नानक हरिनाम दै पंच नदहि उद्धार किय	...	२६४
वावा वेनू के अनुजवर कृष्णदास वधरी रहे	...	२४८
वाम चरण अंगुष्ट तल ...	...	३१
वाम चरण मैं अग्र सौं ...	...	३२
वामन जू है छत्र सो ...	...	२३
वार वार क्यो जानि वूझि तुम यहि गलियन आवति हौ	...	६७१
वार वार पिय आरसी ...	...	१४५
वारानसि प्रगट प्रभाव श्री स्यामा वेटी को भयौ	...	२६२
वारौ अति मेरौ लाल सोइ उठत प्रातकाल	...	४६२
वार विखेरे आज परी तुरवत पर मेरे आएगी	...	८५५
वाल वोधिनी तोपिनी ...	...	३४
वाल य दिल के ववाल दिलवर ने मुखड़े पर डाले है	...	२०१
वाला वल्लभ सुमिरण करता सहु दुख भागे छे	...	२९५
वासुदेव जन जन्मस्थली काजी मद मरदन किए	...	२४८
वाहर तो अति चतुर वनि ...	...	७३२
विकसित कीरति कैरवी ...	...	६९७
विछुरे वलवीर पिया सजनी तिहि हेत सबै विछुरावने	...	१७२
विजय मित्र जय विजयपति ...	...	७४५
विजुरी चमकि चमकि डरवावै मोहिं अकेली पिय	...	५०२
विदलित रिपु गज सीस नित ...	...	६९८
विद्या लक्ष्मी भूमि अरु ...	...	६७५
विधि निषेध जग के जिते ...	...	७८
विधि नै विधि सो जव व्याह रच्यौ	...	६७१
विनती सुनि नँदलाल वरजौ क्यौं न अपनौ वाल	...	७१
विधि सौं जव व्याह भयो दौउ को ...	...	७१७

पद्यांश पृष्ठ-संख्या

बिनवत जुग प्रफुलित जलज ६२९
बिनवत हाथ उठाइ कै ६३६
बिना उसके जल्वा के दिखाती कोई परी या हूर नहीं ... १९४
बिना एक जिय के भये ७३७
बिना पढ़े अब या समय ७३५
बिना प्रेम जिय ऊपजै १०५
बिना बात ही अटा चढ़ी क्यों आँचर खोले धावति हो ... ६७३
बिनु गुन जोबन रूप धन १०५
बिनु पिय आजु अकेली सजनी होरी खेलौं ... ३७१,४२३
बिनु प्रीतम तृन सम तज्यौ तन राखी निज टेक ... ४२३
बिनु साँवरे पियरवा जिय की जरनि न जाय ... ५०२
बिनु सैयाँ मोको भावै नहि अँगना ८४५
बिनु हरि राधा पद भजन ७७
बिपुल बृंदा बिपिन चक्रवर्ती चतुर रसिक चूड़ा रतन ... ८०
बिबिध कला शिक्षा अमित ७३४
बिमल चाँदनी भुव बिछी नभ चाँदनी प्रकास ... ७८५
बिमाननि देव-बधू रहीं भूलि ७५०
बिरजो मावजो पटेल दोउ वैष्णव ही हित अवतरे ... २६०
बिरद सब कहाँ भुलाए नाथ ६५०
बिरह की पीर सही नहिं जाय १७९
बिरह बिथा क्यों भाषत मोसो ८६३
बिरह बिथा तैं ब्याकुल आली ३१६
बिल खिल लखि मति रोवैं प्यारी ८६२
बिलम मति करु पिय सौं मिलि प्यारी ३१७
बिहरत रस भरि लाल बिहारी ११३
बिहरिहै जग सिर पै दै पावँ ५९३
बिहारी जी काँई छे तुम्हारो यहाँ काज ४२४
बिहारी जी घूमै छे थारा नैणा ४२४
बिहारी जी मति लागौ म्हारे अंक ४२४
बीत चली सब रात न आए अब तक दिलजानी ... ४८८

पद्यांश		पृष्ठ-संख्या
बीती अब दुख की निसा ...	...	७३८
बीती जात बहार री पिय अबहुँ न आए ...	...	३८५
बीती निशि तिय सोवन दीजै यह ललिता लै बीन	...	४६४
बीरता याही मै अटकी ...	...	६५५
बीस सहस्र सिपाह दिय ...	...	७६५
बीस तीस चौबीस सात तेरह उन्निस कहि	...	६३५
बुते काफ़िर जो तू मुझसे खफ़ा है ...	...	८५८
बृंदावन उज्ज्वल बर जमुना तट नंदलाल गोपिनि सँग	...	४६४
बृंदावन करौ दोउ सुखराज ...	...	४९६
बृंदावन सोभा कछु बरनि न जाय मोपै	...	८२४
बृदावन द्वारावती ...	...	१५
बृंदा बृंदावनी विदित बृषभानुदुलारी ...	...	७४०
बृच्छ रूप सब जग अहै ...	...	१५
बृटन राज चिन्हन सजी ...	...	७०१
बृटिश सुशासित भूमि मैं ...		७०१,७६१,८००
बृथा जवन को दूसही करि वैदिक अभिमान	...	६९२
बृथा बकुल-पन कर रही उत व्याकुल अति लाल	...	७८५
बृथा नेम तीरथ धरम ...	...	१०५
बृषभानु कुमारी लाडिली प्यारी झूलत है संकेत	...	१२७
बेग सुनैं हम कान सौं ...	...	६२३
बेगाँ आओ प्यारा बनवारी हमारी ओर ...	...	५२
बेगि आओ प्यारे बनवारी म्हारी ओर ...	...	४७४
बेणु बढ़ावत स्रवन कौं ...	...	२२
बेणु सरिसहू पातकी ...	...	११
बेद-उधारन मंदर-धारन भूमि-उबारन ह्वै बनचारी	...	२०६
बेद कहत जग बिरचि हरि ...	...	७८
बेदन की बिधि सों मिथिलेस ...	...	७७७
बेदनि उलटी सवनि कही ...	...	२७६
बेदनि मैं निज महिमा थापन भए त्रिविक्रम आजु मुरारी	...	४६५
बेद भेद पायौ नहीं ...	...	३६

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
बेदरदी वे लड़िबे लगी तैंडे नाल	...	...	१९२
बेनीदास माधवदास दोउ श्रीनवनीत प्रिया नित		...	२३९
बेनी सी वखानैं कवि ब्याली काली काली आली		...	१५२
बेनी हमरे बाँट परी	...	...	६५५
बेनु चंद्र गिरि रथ अनल	...	...	२२
बेनु प्रगट श्रृंगार रस	...	...	२२
बे-परवाह मोहन मीत हौ तो पछिताई हो दिल देके		...	१८३
बे-परवाही के सँग मन फँसि गयौ कुदावँ		...	४०३
बैठनि बोलनि उठनि पुनि	...	...	७३५
बैठि रही क्यो कुंद ह्वै चल मुकुंद के पास		...	७८५
बैठी ही वह गुरुजन के ढिग पाती एक तहाँ लै आई		...	७३
बैठे जो शाम से तेरे दर पर सहर हुई	...	...	८५४
बैठे दोऊ अपने सुख मिलि	...	...	४६३
बैठे पिय प्यारी इक संग	...	...	८३०
बैठे लाल जमुना जू के तट पर	...	...	४६३
बैठे लाल नवल निकुंजन माहिं	...	...	६०
बैठे सबै गुरु लोग जहाँ तहाँ आई बधू लखि सास भई खरी			१५४
बैर फूट ही सो भयो	...	...	७३८
बैर बिरोधहि छोड़ि कै	...	...	७३७
बैस सिरानी रोवत रोवत	...	...	५४२
बैरिनि बाँसुरी फेर बजी	...	...	८३४
बोलि भारती सैन दई आयसु उठि धाओ	...	...	८०१
बोले माई गोबर्धन पर मोर	...	...	१२५
बोले हरि बाहर है आओ	...	...	८३२
बोल्यौ करै नूपुर स्रवन के निकट सदा पद तल लाल		...	१४८
ब्याकुल ही तड़पौ बिनु प्रीतम कोउ तौ नैकु दया उर लाओ			१५१
ब्यापक ब्रह्म सबै थल पूरन है हमहूँ पहिचानती है		...	१५५
ब्यास कृष्ण चैतन्य हरि	...	...	२२३
ब्योम चँवर कौ चिन्ह है	...	...	२५
ब्रज के नगर तैने कान्हा, ऊधम बहुत मचायौ रे		...	३९८

पद्यांश	पृष्ठ-सख्या

ब्रज के लता पता मोहिं कीजै	६५
ब्रज के सब नाँव धरैं मिलि ज्यौं ज्यौं बढ़ाइकै त्यौं दोऊ चाव करैं	१५१
ब्रज जन काँवरि जोरि जोरि	५२४
ब्रज जनमत ही आनँद भयौ	५२९
ब्रजपति वृन्दावन विहरत विरह नसावन ...	७३९
ब्रज प्रिय ब्रजवास अतिहि प्रिय पुष्टि लीला करन सदा ...	७१८
ब्रज-वल्लभ वल्लभ वल्लभ वल्लभ वर	७४१
ब्रज-वासी वियोगिनि के घर मै जग छाँड़ि कै क्यौं जनमाई हमे	१४८
ब्रज में अब कौन कला बसिए बिनु बात ही चौगुनौ चाव करैं	१५०
ब्रज में रसनिधि प्रगट भई	५२९
ब्रज-रज में लोटत रहौ	३७
ब्रज राख्यौ सुर कोप तैं	१४
ब्रत समाप्त या दिन करै	९६
ब्रह्मचर्य धरनी शयन	९०
ब्रह्मचारि नरायनदास जू बसत महाबन भजन रत ...	२४१
ब्रह्मज्ञान विचार ध्यान धारना	८६५
ब्रह्म विष्णु शिव रूप यह	९२
ब्रह्मा हरि हर तीनि सुर	५१
ब्राह्मण गन सौं फूलिकै	९९
ब्राह्मण बहुत खवावई	९६

भ

भई सखि ये अँखियाँ बिगरैल	५८४
भई सखि साँझ फूलि रही बन द्रुम बेलि चले किन कुंज कुटीर	१११
भए सब मतवारे मतवारे	१३९
भए हो तुम कैसे ढीठ कन्हाई	१८२
भक्त जनन के मन सदा	१३
भक्त जन सुख सेव्य अति दुराराध्य दुरलभ कंज पद ...	७१५
भक्त नाद मोहि प्रिय अतिहिं	१२
भक्तमाल उत्तर अरध	२२६
भक्तमाल जो ग्रंथ है	२२६

पद्यांश	पृष्ठ-संख्या
भक्ति आचार उपदेस नित करत पुनि कर्म मारग प्रवर्त्तन सुकीनो	७१६
भक्ति आचार उपदेस हित सास्त्र के वाक्य नाना निरूपन सुकीने	७१६
भक्ति ज्ञान वैराग्य है	१५
भगवानदास सारस्वतै दई प्रभुन श्री पाँवरी ...	२५२
भगवानदास श्रीनाथ के हुते भितरिया सुखद अति ...	२५२
भगी शत्रु की सैन रह्यौ कहुँ नाहिं ठिकाना ...	८०८
भग्न सकल भूपन तन साजी	७०८
भजौं तो गोपाल ही को सेवौं तो गुपालै एक ...	५४४
भटक्यौ बहु बिधि जग-बिपिन	३५
भट्ट इक बात नई सुनि आई	५२९
भय दुख आतप सौं तपे	१३
भयौ पाप सौ पाप बिनु	५३७
भये लहलहे नर सबै उलस्यो प्रजा समाज ...	३६१
भरित नेह नवनीर नित	५७७
भरे नेह अँसुवनि जल धारा	७०७
भरोसो रीझन ही लखि भारी	५७९
भले बिधि नावँ धरौ सब रे ब्रज के अब तोहिं न छाँड़ूँ छैल	४०१
भवकर भवहर भवप्रिय भद्राग्रज भद्रावर ...	७४०
भव बंधन तिनके कटै	२९
भस्म सर्प गज छाल विष	२३
भाँति भाँति अनुभव सरस	२२४
भागन पाइए जू लालन बैस संधि संक्रोन ...	४६६
भाजे से फिरत शत्रु इत उत दौरि दौरि	८६४
भारत के एकत्र सब	७४२
भारत भुज-बल जेहि जग रच्छित	८०४
भारत मैं एहि समय भई है सब कछु बिनहिं प्रमान ...	५००
भारत मे मची है होरी	४०५
भारत राज मँझार जौ	७९५
भारत मे यह देस धनि जहाँ मिलत सब भ्रात ...	७३१
भाल लाल बैदी छए	२९२

*

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
भारत में सब भिन्न अति	...	...	७३४
भाल लाल बेंदी ललन	...	...	२४४
भावक उभरौंहीं भयौ	...	...	३३९
भापा सोधहु आपुनी	...	...	७३७
भीजत साँवरे सँग गोरी	...	...	४९६
भीतर भीतर सब रस चूसै	...	...	८११
भीर परत जब भक्त पर	...	...	२३
भूलि जात वहु बात जो	...	...	७३२
भूलि भव भोगन भ्रमत फिर्यौं	...	...	२८४
भूली सी भ्रमी सी चौंकी जकी सी थकी सी गोपी		...	१६०
भोग रूप यव अरचनहिं	...	...	२२
भोजन करत किसोर किसोरी	...	...	४६६
भोजन कीजै प्रान-पियारी	...	...	१२३
भोजन कीनो भानु-दुलारी	...	...	८३०
भोजन कौ मति सोच करु	...	...	२९
भोर भए जागे गिरिधारी	...	...	२३
भौंरा रे रस के लोभी तेरो का परमान	...	...	१११
भौंह उँचे आँचर उलटि	...	...	३५१
भ्रमि मति तू वेदांत वन	...	..	७७
भ्रात मात सह सुतनि युत	...	...	७००

म

मंगल गीता और भागवत सौं मथि काढ़ौ	...	६४५
मंगल गोपीनाथ रूप पुरुपोत्तम धारी ...	...	६४४
मंगल जमुना तीर कमल मंगल मय फूले ...	...	६४४
मंगल जुगल नहाइ विविध सिंगार मनावत	...	६४३
मंगल प्रातहि उठे कछुक आलस रस पागे	...	६४२
मंगल बनके फल अनेक भीलनि लै आई ...	...	६४३
मंगल वल्लभ नाम जगत उधर्यौ जेहि गाए	...	६४४
मंगल वृन्दा विपिन कुंज मंगल मय सोहै...	...	६४२

पद्यांश	पृष्ठ-संख्या
मंगल भेरि मृदंग पनव दुंदुभि सहनाई	६४३
मंगल वल्लभी लोग भय सोग मिटाए	६४५
मंगल मंगल मंगल रूप	८३१
मंगलमय सखि जुगल बिहार ...	११४
मंगल महा जुगल रस-केलि	६१२
मंगल राधाकृष्ण नाम गुण रूप सुहावन	६४२
मंगल सखी समाज जानि जागे उठि धाई	६४२
मंगल सब ब्रजवासी लोग	४६८
मंगल श्री नँदराय सुमंगल जसुदा माता	६४४
मंडी जींद सुकेत	७६५
मंद मंद आवै देखौ प्रात समीरन ...	६८६
मकर संक्रोन सखी सुखदाई	, ८६६
मकराकृत गोपाल के	३३७
मजा कहीं नहिं पाया जग मैं नाहक रहा भुलाया ...	५५०
मतलब ही की बोलै बात	८११
मति डूबौ भव सिंधु मैं	१६
मति रोवौ रोवौ न तुम	
मत्स कच्छ बाराह प्रगट	७२८
मथत दही ब्रजनारि दुहत गौअनि ब्रजवासी ...	६८०
मथि कै वेद पुरान बहु	७७
मथुरा के देसवाँ से भेजलैं पियरवा रामा	८४१
मथे सद्य नवनीत लिए रोटी घृत बोरी	६८१
मथ्यौ समुद्रहिं जिन ब्रिटानिया निज कटाच्छ बल ...	८०८
मदन-बान पिय-उर हनत तो बिनु अति अकुलात .	७८५
मदन-मोहन मधुसूदन दयामय	२१९
मधुकर धुन गृह दंपति	८१८
मधुबन तजि फिर आइ हरि	६९८
मधु रिपु मधुर चरित्र मधु	२८९
मधुसूदन पूजन करै	९१
मध्य चरण त्रैकोण है	३३

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
मन की कासों पीर सुनाऊँ	...	...	८४४
मन केन रे भाव एत	...	...	२१२
मत कौ नाही अर्थ अहै	...	...	१३९
मन चोस्यौ बहु त्रियनि कौ	...	...	१०
मन तपि कै मम चरन मैं	...	...	१७
मन तुहि कौन जतन बस कीजै	...	...	४६६
मन मयूर हरपित भए	...	...	६९८
मन मेरो कहुँ न लहत बिश्राम	...		६१४
मन-मोहन की लगवारि गोरी गूजरी	...		३६५
मन-मोहन चतुर सुजान छबीले हो प्यारे	...	...	३६२
मन-मोहन पूजन साज लिए दरसन कौं देवी के आए		.	६३८
मन मोहन सौं बिछुरी जब सौं तन आँसुनि सौं सदा धोवति है			१७२
मन-मोहना हो झूलैं झमकि हिंडोर	.	...	४८८
मन लागत जाको जबै जिहि सो	...	...	८२०
मनवत मनवत ह्वै गयो भोर	...	...	२८७
मनहुँ घोर तप करति है	...	...	१०
मनहुँ वेद गन तत्व काढ़ि यह रूप बनायौ		...	६४८
मनिमय आँगन प्यारी खेलै	...	.	४६७
मनु हरिहू अघ सौं डरत	...	...	११
मनोरथ करत द्वार पर ठाढी		...	५३०
मरम की पीर न जानै कोय	...	..	५८७
मरवट सथिए बसन धुज	...	...	६९८
मरैं नैन जो नहिं लखै	...	...	३६
मरौ ज्ञान वेदांत कौ	...	...	३७
मसजिद लखि विसनाथ ढिग	..	...	६९९
महरानी तिहारौ घर सुफल फलौ		..	४८२
महरानी विकटोरिया	...	...	६७५
महा कुंज पुंजनि मैं मिलि के बिहार कीने तहाँ		...	१६६
महा प्रलय मैं मीन बनि	...	...	११
महिमा मेरे गोविंद जू की कही कौन पै जाई		...	५४९

पद्यांश		पृष्ठ-संख्या
माँगी मुख-दिखरावनी दुलहिन करि अनुराग	...	६७५
माई री कमल नैन कमल बदन बैठे है जमुना तीर	...	८३०
माई तेरौ चिरजीवौ गोविंद ...	..	४७०
माघी पूनौ भाद्रपद ...	...	९१
माता को सुत सो नहीं प्यारो जग में कोय	...	६९१
माधव कातिक मास की ...	...	९६
माधव ढिग चलु राधा प्यारी ...	...	३२५
माधव थापै पौसरा ...	...	९१
माधव नव रमनी सँग लीने ...	...	३२०
माधव बिधि माधव सुमिरि ...	...	९७
माधव भट कसमीर के मरे बालकहि ज्याइयौ	...	२४४
माधव मनमथ-मनमथ मधुर कुकुन्द मनोहर	...	७४०
माधव मेषग भानु मैं ...	...	९०
माधव मैं जो पित्र हित ...	..	९१
माधव शुक्ल चतुर्दशी ...	...	९५
माधव शुक्ला तीज की ...	...	९२
माधव सुदि सप्तमि कियौ ...	...	९४
माधव हित जे देत घट ...	...	९१
मान गढ़ लंक के विजय को मानिनी आजु ब्रजराज	...	४७०
मान तजि मानु सुनु प्रान-प्यारी ...	...	३२३
मानिनि वारी बेगि चलि प्यारी मान निवारि	...	७८५
मान समै करि कै दया ...	...	३६
मान समै हरि आप ही ...	...	२६
मानसिंह बगाल लरे परताप सिंह सँग ...	...	७६४
मानी माधव पिय सौं मानिनि मान न करु	...	३२२
मानुख-जन सो कठिन कोउ जन्तु नाहिं जग बीच	...	६९१
माया तुमसौं बड़ी अहै ...	...	१४०
मायाबाद मतंग मद ...	...	७४८
मायाबादी घनस्याम मद रामानुज मर्दन कियौ	...	२२८
मारकीन मलमल विना ...	...	७३५

पद्यांश | पृष्ठ-संख्या

मारग प्रेम कौ को समुझै हरिचंद यथारथ होत यथा है ... १५२
मारग रोकि भयौ ठाढ़ौ जान न देत मोहिं पूछत है तू को री ४६९
मारत मैन मरोरि कै दाहत है रितुराज ५९
मारू बाजे बजैं कहूँ धौंसा घहराहीं ८०६
मास अषाढ़ उमड़ि आए बदरा रितु बरसा आई ... ५२६
मिछा केन दिते आश प्रेमेर परिचय २१७
मिटत नहि या मन के अभिलाष ५४६
मिटत न हौस हाय या मन की ६१७
मिलिकै सब नावँ धरैं मिलि ज्यौं ज्यौं बढ़ाइ कै त्यौं दोउ ... ६१७
मिलि गावँ के नावँ धरौ सबही चहुँधा लखि चौगुनौ चाव करौ ६५१
मिलि परछाहीं जोन्ह सौं २३४
मिलै न मुझसे उसका दिल जिस दिल मैं वह दिलाराम न हो ५६८
मीराबाई की प्रोहिती रामदास जू तजि दई ... २५१
मुहँ जब लागै तब नहिं छूटै ८१२
मुकुंददास कायस्थ हे जिन मुकुंद सागर किए ... २४२
मुकुट लटक भौंहनि की मटक मोहन दिखला जा रे ... १८४
मुख गद्‌गद तन स्वेद-कन कंठहु रूँध्यो जात ... ६९१
मुख पर तेरे लटूरी लट लटकी १८०
मुरझावत रिपु बनज बन ... ६२९
मूड चढ़ीं ब्रज चार चवाइन ६७२
मृत्यु नगाड़ा बाजि रहा है सुनि रे तू गाफिल सब छन ... ५५२
मृदंगादि वाजे बजाओ बजाओ ७०२
मेघनि सौं नभ छाइ रहे वन-भूमि तमालनि सौं भई कारी... ३०६
मेटन को निज जिय खटक ३०५
मेटहु जिय के सल्य सब ८०२
मेटहु तुम अज्ञान को ७३७
मेटहु भय करि अभय दिखाई ७१०
मेटि देव देवी सकल २२७
मेरठ कारागार बस्यौ याकूब अभागौ ७९४
मेरी आँखिनि भरि न गुलाल लाल मुख निरखन दै ... ३९८

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
मेरी गति होउ सोइ बनवारी	...	...	७८२
मेरी गति होउ सोई महरानी	...	...	७९
मेरी गलीन न आइए लालन यासों सबै तुमहीं लखि जाइहै			१५२
मेरी तुमरी प्रीति पिया अब जानि गए सब लोगवा		...	२८२
मेरी देखहु नाथ कुचाली	...	...	२७४
मेरी भव-बाधा हरौ	...	..	३३१
मेरी मति कृष्ण-चरन मैं होइ	...	...	७८१
मेरी री मति कोउ होउ बसीठी	...	...	४६८
मेरी हरि जी सौं कहियौ बात हो घात	...	...	४९२
मेरेई पौरि रहत ठाढ़ौ टरत न टारे नंदराय जू कौ ढोटा		...	४६८
मेरे गल सौं लग जाओ प्यारे घिरि आई बदरिया घोर		...	४९३
मेरे जिय की आस पुजाउ पियरवा होरी खेलन आओ		...	३८४,४३२
मेरे जिय पारथ सारथि बसिए	...	..	७८२
मेरे निकट तू आउ हौस तेरी सबै पुजाऊँ रे		...	३९८
मेरे नैनो का तारा है मेरा गोबिंद प्यारा है		...	४९१
मेरे प्यारे जी अरज लीजै मान हो मान	...	..	६०६
मेरे प्यारे सौं सँदेसवा कौन कहै जाय	...	...	१८६
मेरे मन-रथ चढ़ि पिय तुम आओ	...	...	४६८
मेरे माई प्रान जीवन-धन माधौ	...	...	२७९
मेरे रूठे सैयाँ हो अरज मेरी सुनि लीजै	...	...	१८६
मेरो लाड़िलौ गोपाल माई साँवरौ सलोना		..	४६७
मेरौ हठ राखौ हठीले लाल	...	...	६१८
मेलाहू सौं बढ़ि सबै	...	...	६९८
मेष माया वाद सिंह वादी अतुल धर्म	...	...	८२७
मैं अरी कहा करौ कित जाऊँ सखी री	...	...	३७३
मै तो चौंक उठी डफ बाजन सौं	...	...	३८६
मै तो तेरे मुख पर वारी रे	...	...	२७९
मैं तौ मलौंगी अबीर तेरे गालन मैं	...	...	३९६
मै तो रँगोंगी अबीरी रे पिया की पगिया	...	...	३८१
मैं तो राह देखती खड़ी रहि गई हाय बीति गई सब रतियाँ			१९३

पद्यांश	पृष्ठ-संख्या
मैं वृषभानु-पुरा की निवासिनि मेरो रहै व्रज वीथिन भाव री	१५७
मो मन मैं निहचै सजनी यह	७७४
मो मन स्याम घटा सी छाई ...	५११
मो ऐसे को तारिवो सहज न दीन-दयाल	७७१
मो मन हरि स्वरूप मैं रहै	७८१
मोर कुटी महँ बैठी खिलावत कबहुँ ललन कहँ ...	६४६
मोर-चन्द्रिका स्याम सिर	३३५
मोर-मुकुट की चन्द्रिकनि ...	३३३
मोरौ मुख घर ओर सौं	३६
मोह कित तुमरौ सबै गयौ	५५८
मोहन गोहन मेरे लाग्यौई डोलै छोड़ै छिनहु न साथ	२८४
मोहन जिय सँदेह यह आयौ ...	६३९
मोहन दरस दिखा जा व्याकुल अति प्रान ...	२०७
मोहन पिय प्यारे टुक मेरौ ढिग आव	२०८
मोहन प्यारौ हो नँद-गैयाँ	१९३
मोहन बाँकौ हो गोकुलिया	१९४
मोहन मीत हो मधुबनियाँ	१९३
मोहन मूरति स्याम की	३३२
मोहन लाल के रस सानी	४७०
मोहन सौं जबै नैन लगे तब तो मिलि कै	१५६
मोहि छोड़ि प्रान पिय कहूँ अनत अनुरागे... ...	२०४
मोहि नद के कन्हाई बेलमाई रे हरी	५१०
मोहि मति वरजे री चतुर ननदिया	३८२
मौज भरे दोऊ हौज किनारे बैठे करत प्रेम की बतियाँ ...	४३९
मौन रहत कबहूँ कबहूँ तू बोलत ...	८६२
मौर लसै उत मोरी इतै उपमा इकहू नहि जात लही है ...	७७७
म्हारी सेजाँ आओ तू लाल बिहारी ...	५५

य

पद्यांश	पृष्ठ-संख्या
यः पठेत् प्रातरुत्थाय	७६९
यन्मातास्ति वसुंधरा भगवती साक्षात् विदेहः पिता ...	७६७

पद्यांश			पृष्ट संख्या
यवन हृदय पत्री पर बरबस	...	...	८०५
यस्याः पतिर्निमिकुलाभरणं विदेहो	...	...	७६८
यह कहि भारत नैन भरि	...	...	७११
यह कैसी बानि तिहारी मेरे प्यारे गिरिवर-धारी हो		...	१८५
यह चार भक्त पंजाब मैं चार वेद पावन भए		...	२६६
यह जग मोह-जाल की फाँसी	...	...	८६५
यह जग सब रथ रूप है	...	...	२९
यह दिन चार बहार री पिय सौं मिलु गोरी		...	४००
यह निधि धर्महिं तैं पाई	...	...	५३०
यह पढ़ि नदी नहाइ कै	...	...	९५
यह पवर्ग हरि नाम युत	..	...	७५९
यह पहिले ही समझ लियौ	...	...	१३७
यह पाली सब प्रजनि अति	...	...	६७६
यह बाहर कहुँ नहिं भई	...	...	६७६
यह मन पारदहू सौं चंचल	...	...	६१८
यह मारग डूबत निरखि	...	...	२२५
यह माला पद चिन्ह की	...	...	३५
यह रस ब्रज मैं रहौ सदाइ	...	...	६४१
यह रितु वसंत प्यारी सुजान	...	...	३९५
यह रितु रूसन की नहिं प्यारी	...	...	५०५
यह वह गोरखधंधा है जिसका न किसी पर भेद खुला		...	५६५
यह सब कला अधीन है	...	...	७३६
यह षट सुंदर षटपदी	...	...	७५५
यह सब अंग्रेजी पढ़े	...	...	७३५
यह संग मै लागिऐ डोलै सदा बिन देखे न धीरज आनती हैं			१५५
यह सब भाषा काम की जब लौं बाहर वास		...	७३२
यह सावन शोक-नसावन है मन-भावन यामैं न लाजै भरौ		...	१७३
यह सुनि राधा पिय सौं बोली	...	...	३२७
यहाँ कल्पतरु सौं अधिक	...	...	१६
यहि बिधि सिरजे नाहिं री तेरे जोबन दोऊ		...	३८१

पद्यांश | पृष्ठ-संख्या

यहै बात राधा मन भाई ६३७
यहै सोचि आनंद भरे भारतवासी जन ७९६
याकी छाया मैं बसत १४
याकी सरननि दीन जन १७
याके सरन गए बिना १४
याद करहु निज वीरता ७६२
याद परैं वे हरि की बतियाँ ५८४
यादवेन्द्रदास कुम्हार श्री गोस्वामी आयसु निरत ... २४४
या दुख सो मरनो भलो ७३८
या बिधि चौंतिस चिन्ह २५
या विधि सो व्रत जे करैं ९६
या ब्रह्मेशै पूजिता ब्रह्मरूपा ७६६
यामैं तौ रस रहत है १४
यामैं हमरौ कहा कउन उनसौं सम नाता ७९६
यार तुम्हारे बिनु कुसुम भये ६७०
यारौ इक दिन मौत जरूर ५५२
यारौ यह नहिं सच्चा धरम ५५३
या सरवर की हौं कहाँ १०४
याही भारत देश मैं ८०२
याही भुव मैं होत है ८०२
याही सों घनस्याम कहावत ५४०
युरप अमरिका इहिहि सिहाही ७०८
ये चारि भक्त एहि काल के औरहु हरि-पद-कंज-रत .. २६९
ये जो केवल मरन हित ७९५
ये तो समुझत व्यर्थ सब ७९५
ये वल्लभ कुल के रतमनि बालक सब भुव मैं भए ... २३३
ये वृंदावन के संत सब जुगल भाव के रँग रँगे ... २३०
ये भक्तमाल रस-जाल के टीकाकार उदार मति .. २६५
ये मध्व संप्रदाय के परम प्रेमी पंडित जग विदित ... २३०
ये जुगल दोउ बैठे हो शीतल छाँह ४३६

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
यो धारितः शिरसि शारद नारदाद्यैः		...	७६६

र

रँगीले मचि रही दुहुँ दिसि होरी		...	४०७
रँगीले रँगि दे मेरी चुनरी	...	..	१८१
रंग-भौन पीतम उमंग भरि	...		८२५
रंग मति डारौ मोपै सुनो मोरी बात	...	...	३७०
रघुनाथ-सुवन पंडित रतन श्री देवकिनंदन प्रगट		...	२३१
रच्यौ यह तेरेहि हित त्यौहार	...	...	८५
रच्छहु निज भुज तर सह साजा	...	...	८१४
रजाई करत रजाई माही	...	..	४७१
रथ चढ़ि नंदलाल पीय करत हैं फेरा	...	..	५३१
रथ बिनु अस्व लखात है	...	...	१८
रबि ससि मिलि इक ठौर उदित सी कांति पसारे		...	८०२
रमत माधवी-कुंज करि	...	...	८९
रमत रेवती के अनुज तो बिनु अति अकुलात		...	७८५
रसना इक आसा अमित	...	...,	७००
रसने रटु सुंदर हरि नाम	...	...	५७
रस-बस मैं निसि जात न जानी	...	...	४७२
रसमसी सरस रँगाली अँखियाँ मद सौं भरी		...	४२०
रस सिंगार मज्जन किए	...	...	३४६
रसिक गिरिधरन सँग सेज सोई भली	...	...	४७२
रसिकनि के हित ये कहे	...	...	३५
रसिकराज जयदेव की	...	...	३०५
रसिकराज बुधवर विदित	...	...	३०५
रसिकाई दिनकरदास की कथा सुनन मैं अकथ ही		...	२४२
रहत सदा रोवत परी	...	...	६७०
रहत निरंतर अंतरहिं	...	..	७०९
रहमत का तेरे उम्मीदवार आया हूँ	...	...	८५८
रहे न एक भी बेदादगर सितम बाकी	...	...	८५४
रहे नील पट ओढ़ि चूरकिन जहँ लपटाए	...	...	६८३

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
रहे पथिक तुम कित बिलम	...	...	६६९
रहे यह देखन कौं दृग दोय	...	...	५९१
रहे शास्त्र के जब आलोचन	...	...	७०७
रहै क्यौ एक म्यान असि दोय	...	...	५८२
रहौं मैं सदा जुगल भुज छहियाँ	...	...	५९७
रह्यौ रुधिर जब आरज सीसा	...	...	७०७
राखत नैनन मैं हिय मै भरि दूर भए छिन होत अचेत		...	१४५
राखिए अपुनेन कौ अभिमान	...	...	६१९
राखो हे प्रानेश ए प्रेम करिया जतन	...	...	२१६
राख्यौ स्तुति की मेड़ सास्त्र करि सत्य दिखायौ		...	२१६
राजकुँवर आओ इतै	...	...	६९७
राजतंत्र के पडित तुम जानत प्रयोग पट		...	८१६
राजनीति समझैं सकल	...	...	७३६
राज भेंट सब ही करौ	...	...	७०४
राज-पाट हय गज रथ प्यादे	...	...	८६५
राजा बंदर देस मे रहे इलाही शाद	...	...	७९१
राजा माधौ दूबे हुते	...	...	२४७
राति दिवस दोउ सम अहै	...	...	१८
राति पूजि जागरन करि	...	...	९५
रात्रौ सीता दिवा सीता	...	...	७६९
राधा केलि कुंज महँ आई	...	...	३१६
राधा जी हो वृषभानु कुमारी	...	.	१७९
राधा प्यारी सखियनि की सिरमौर	...	..	५९९
राधा वल्लभ वल्लभी	...	...	२२३
राधा श्याम सबै सदा वृंदावन वास करैं	...	...	८२३
राधिका-नाथ के साथ ब्रज-बाल सब नचल जमुना पुलिन		...	४७१
राधिका पौंढ़ी ऊँची अटारी	...	...	६६
राधिका मंगल की नव बेलि	...	...	४७२
राधे तुव सोहाग की छाया जग मै भयौ सोहाग		...	५९८
राधे तुही सोहागिनि पूरी	...	...	५९८

पद्यांश | पृष्ठ संख्या

राधे भई आपु घन श्याम ६५६
राधे मेरी आस पुजाओ ३२७
राधे सब बिधि जीति तिहारी ५९१
राधे-श्याम-प्रेमरस-भीनी ६५६
राम के जनम माहिं आनँद उछाह जौन ७७०
राम को न जाने ताहि जानिये हराम को ८६६
रामचंद्र बिनु अवध अँधेरो ७७९
रामप्रिये राम मनोऽभिरामे ७६६
राम बिनु अवध जाइ का करिए - ... ७८०
राम बिनु पुर बसिए केहि हेत ७७९
रामानुज मत सर्प सौं १९
राम बिनु बादहि बीतत सासै ७७९
राम बिनु सब जग लागत सूनो ७८०
रायबेलि महकति सखी अति सुगंध रस झेलि ... ७८६
राव जू आजु बधाई दीजै ५२३
रावरी रीझ की बलि जैऐ ६७
रास बिलास सिंगार के २१
रास रस ब्रज मैं प्रगट भयौ ५२१
रासलीलैक तात्पर्य मम रूप मुनि ७१५
रासे रमयति कृष्णं राधा २९३
राहु ग्रसै पूरन ससिहिं २८
रिगु यजु साम अथर्व के १९
रिझैया मान कौ कर जोरे ठाढ़ौ द्वार ३७६
रितु फल बहु सब भाँति के ९३
रितु सिसिर सुखद अति ही सुदेस ३९३
रिपु पद के बहु चिन्ह सब ७०६
रिम झिम बरसत मेह भीजति मैं तेरे कारन ... ८४१
रिम झिम बरसै पनियाँ घर नहिं जनियाँ कैसे बीतै रात ... ८४०
रूप दिखाइ कै मोल लियौ मन बाल गुड़ी बहु रंगनि ... १६४
रूप दिखावत सरबस लूटै ८११

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
रूप-रंग ऐसो मिलौ तापैं ऐसो मान	...	...	७८४
रूम रूस उर सूल दियौ ईरान दबायौ	...	...	८०९
रूस मिले सौं रेल के	...	...	६७६
रूस रूस सब के हिए	...	...	६७६
रूस हूस दै घूस प्रथम तेहि आस बढ़ाई		...	७९४
रे निठुर मोहिं मिल जा तू काहे दुख देत	...	...	३६१,४२५
रे मन करु नित नित यह ध्यान	...	...	५९४
रे रसिया तेरे कारन ब्रज मैं भई बदनाम		...	३९८
रे रे बिधि सब बिधि अबिधि			६९१
रेषा पुरुषाकार है	...	...	२५
रेल चलत केहि भाँति सों	...	...	७३५
रैन की हो पिय की खुमारी न टूटै	...	...	१८९
रैन के जागे पिया हो भोरहिं मुख दिखराओ		.	१८८
रैन मैं ज्योही लगी झपकी	...	...	८२०
रोकहि जो तो असंगल होय	...	...	१४९
रोवैं सदा नित की दुखियाँ	...	...	१५८
रोहिणि माधव शुक्ल पख	...	..	९१
ल			
लंगर छोड़ि खड़ा हो झूमै	...	...	८१२
लक्ष्मण प्रेयसी श्री	...	...	७६८
लखहु उदित पूरब भयो	..	...	७३८
लखहु एक कैसे सबै	...	.	७३८
लखहु काल का जग करत	...	.	७३७
लखहु प्रभु जीवन केरि ढिठाई	...	..	५४३
लखहु न अँगरेजन करी	...	...	७३४
लखहु लखहु सुत आनँद भारी	...	..	७१०
लखि आगम नवरात को सब को मन हुलसात		...	६९०
लखि कठिन काल फिरि आपु ही आचारज गिरिधर भए		...	२३२
लखि कुल-दीपक राज-सुत	...	..	७०४
लखि कै अपने घर को निज सेवक	...	...	८२१

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
लखि कै निरनयसिंधु अरु	...	...	९७
लखि तुव मुख छवि ससि सवै	...	...	७४२
लखि सखि आजु राधिका रास	...	...	४७४
लखिहैं का कुमार अब धाई	...	...	७०८
लखौ सखि इन गौवनि कौ हाल	...	..	७५०
लखौ हरि तीन ताग मै लटक्यौ	...	...	१४०
लगत इन फुलवारिन मै चोर	...	..	१८०
लगाओ चसमा सबै सफेद	...	...	१३७
लगाऔ बेदन पै हरताल	...	...	६९
लगौहीं चितवनि औरहिं होति	...	...	६९
लचकि मचकि दोउ झूलि रहे जमुना तट...		...	४९०
लता चिन्ह पद आपु के	...	...	२७
ललन अलौकिक लरिकई	...	...	३३९
ललित अकासी धुज सजे	...	...	६९८
ललिता लीने बीन मधुर सुर सों कछु गावत		...	६८१
लहलहाति तन तरुनई	...	...	३४०
लहिहै भक्त अनंद अति	...	...	२२७
लहहु आर्य भ्राता सबै विद्या बल बुधि ज्ञान		...	७३८
लाँबो प्रभु को श्री चरण	...	...	३३
लाई केलि मंदिर तमासा कौ बताइ छल बाला ससि मूर		...	१६२
लाई लिवाइ तमासौ बताइ भुराइ कै दूतिका कुंजन माही		...	१७१
लागत कुटिल कटाच्छ सर	...	...	३५१
लाज गहौ बेकाज कत	...	...	३३७
लाज समाज निवारी सबै मन प्रेम कौ प्यारे पसारन		...	१६८
लाल के रंग रँगी तू प्यारी	...	..	५९५
लाल क्यो चतुर सुजान कहावत	...	...	६५५
लाऊ गुलाल लाल गालनि मैं अति ही मन को मोहै		...	३८२
लालन पौढ़े हौ बलि जाऊँ	...	...	४७३
लाल नहिं नेकौ रथहि चलावै	...	...	४७३
लाल पुत्र करि चूमि मुख	...	...	७३२

पद्यांश ... पृष्ठ-संख्या

लाल फिर होरी खेलन आओ ३७०
लाल मेरौ अँचरा खोलै री गुरुजन की नहिं माने लाज ... ४२५
लाल यह तौ तुरकन की चाल ४७३
लाल यह नई निराली चाल २७४
लाल यह बोहनियाँ कौ बेरा ५७
लाल यह सुन्दर वीरी लीजे ... १२७
लाल लाल कर पद लाल अधर रस लाल लाल नयन ... ४७४
लाला बाबू बंगाल के वृन्दावन निवसत रहे ... २६५
लिखे कृष्ण हिय मैं सदा २२६
लिबरल दल बुधि भौन शान्ति प्रिय अति उदार चित . ७९६
लीजौ चूक सुधारि कै ९७
लीनेहूँ साहस सहस ३५०
लेहुँ प्रात उठि कै तुव नामा ७५१
लेहु माय कहि मोहि पुकारी ७०९
लै बदनामी कलकिनि होइ ८२१
लै मन फेरिबौ जानौ नहीं वलि नेह निबाह कियौ नहि . १६०
लै मन फेरिबो सीखे नहीं ८२०
लोक नाम है पंक कौ १०४
लोक वेद लाज करि कीजे ना रुखाई एती ८२८
लोक वेद कुल धर्म बल ३५
लोक-लाज की गाँठरी १०४
लोचन चारु चकोरन को सुख-दायक नायक गोप सखी हैं . २०२
लोनी लता लवंग की ३२
लोचन युगल अनेक पलटि यह अविधि पलक किय ... ३३३
लोपे गोपे इन्द्र लौं ३३६
लोहा गृह के काम मैं ७००

व

वसन्त ने फिर मुझे इस साल दिखाई होली ... ८५७
वस्त्र काँच कागज कलम ७२५
वयस्यां माधवीं विद्या ७६८

पद्यांश			पृष्ठ संख्या
वस्त्र बनत केहि भाँति सों	...	...	७३५
वह अपनी नाथ दयालुता तुम्हें याद हो कि न याद हो		...	५४९
वह अलबेला कुंज मैं	...	...	७८४
वह धुज की फहरानि न भूलति	...	...	६०९
वह देखौ सखि सेन-ध्वजा फहरात	...	...	४७५
वह द्विजवर हम अधम महान वह अति ही संतोषी			३००
वह नटवर घन साँवरौ मेरो मन लै गयौ री		...	२७३
वह सुंदर रूप बिलोकि सखी मन हाथ तें मेरे भग्यौ		...	१७२
वही तुम्हें जाने प्यारे जिसको तुम आपही बतलाओ		.	१९९
वाकौ जन्म जल वाकौ रानी कूख सागर तें		.	६३२
वा मृदगोमय आँवलनि	...	..	९५
वायु देवता को व्यंजन	...	.	९२
वारी मेरे लालन झूलै पालना	...	...	४७६
वारी वारी हौं तेरे मुख पै वारी मैं तेरे लटकनि पै वारी		...	४७६
वारौं तन मन आपुनौ दुहुँ कर लेहुँ बलाय...		...	६७०
विंध्य हिमालय नील गिरि	...	...	८००
विदेहस्थान् नरांश्चापि	...	...	७६८
विश्वामित्रं सतानंदं	...	...	७६८
विष्णु स्वामि पद जुगल पुनि	...	...	२२५
विष्णु स्वामि मत कुंड सौं	...	..	१९
विष्णु स्वामि-पथ प्रथित बिल्वमंगल मत मंडन		.	७४०
वेई कर व्यौरै वहै	...	.	३४१
वे दिन सपन रहे के साँचे	...	..	६१७
वे देखौ पौढ़े ऊँचे महल दोऊ झलकत रूप झरोखनि आई ..			४७५
वैद्यक अमृत कुंभ सौं	...	...	१९
वैशाषा-पति नहिं भजहि	...	...	८९
वैश्य अग्रकुल मैं प्रगट	...	...	२२७
श			
शक्ति रूप तहँ शक्ति है	...	...	२०
शांता सुभद्रा संतोषा	...	...	७६८

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
शास्त्र एक गीता परम	...	...	७७
शास्त्रन कौ सिद्धान्त यह पुण्य सु पर-उपकार		...	६९२
शिव जू के मन कौ मनहुँ	...	...	१६
शिव दधीचि हरिचंद कर्न बलि नृपति जुधिष्ठिर		...	८१७
शिवहि पूजि कै तीज दिन	...	..	९२
शिवोहं भाषत सब ही लोग	...	...	१३८
शीतल जल नव घटनि भरि	...	..	९३
शुनिया छि तव कृपा पतित-गामिनी	..	...	२१८
शुभ प्रतिज्ञा सत्य जगत उद्धार की कृति सौं दूरि		...	७१७
शूद्र ललना लोक उद्धरन सामर्थ गोपिकाधीश		...	७१४
शेर अली भजि माँद समाधि प्रवेश कियौ तब		...	७९४
शोभा कैसी छाई	...	...	८४०
श्याम अभिराम रतिकाम मोहन सदा बाम श्रीराधिका संग लीने			६११
श्याम घन निज छबि देहु दिखाय	...	...	७१९
श्याम घटा छाई श्याम कुंज भयौ श्यामा श्याम ठाढ़े तामैं...			५११
श्याम घन अब तौ जीवन देहु	...	...	७१९
श्याम घटा मधि श्याम ही हिंडोरो बन्यौ श्याम जा मै		...	१२६
श्याम घन अब तौ बरसहु पानी	...	...	७१९
श्याम पिया बिनु होरी के दिनन	...	...	४१९
श्याम घन देखहु गौर घटा	...	...	८३८
श्याम पियारे आजु हमारे भोरहिं क्यो पगु धारे		...	६५
श्याम बरन पुनि जबु फल	...	...	२५
श्याम बिनु होरी न भावै हो	...	...	३९९
श्याम विरह मै सूझत सब जग	...	...	५१६
श्याम मृगा के चर्म पै	...	...	९६
श्याम संग श्यामा रंग भरी राजत	...	...	५३१
श्याम सरस मुख पर अति सोभित तनिक अबीर सुहाई ...			३९४
श्याम सलोनी सूरति अंग अंग अदभुत छबि उपजावति हौ			६७४
श्याम सलोने गात मलिनियाँ	...	...	१८०
श्यामा जी देखौ आवे छे थारो रसियौ	...	...	५४

पद्यांश | पृष्ठ-संख्या

श्यामा प्यारी सखियन की सरदार ५९८
श्री कालिंदी कमल सौं १०
श्रीकुंभनदास कृपाल अति मूरति धारें प्रेम मनु ... २३२
श्रीकृष्ण घर घर बाजत सुनिय बधाई ८३२
श्री कृष्णदास अधिकार करि कृष्णदास्य अधिकार लह ... २२४
श्री गंगे पतित जानि मोहिं तारौ ६१५
श्री गिरिधर गुरु सेइ कै २२७
श्री गुबिंदराय जयति सुंदर सुख धाम ४८१
श्री गोपिनि की सौति लखि १०
श्री गोपीजन कौ बिरह १७
श्री गोपीजन पद-जुगल २२५
श्री गोपीजन वल्लभ सिर पै विराजमान ८४४
श्री गोपीजन मन बिहँग १६
श्री गोपीजन वाक्य के १२
श्री गोस्वामी के प्रान प्रिय संतदास क्षत्री रहे ... २५९
श्री छीत स्वामि हरि और गुरु प्रगट एक करिकै लखे ... २३५
श्री जदुपति जय जय महराज ४८२
श्री जमुना-जल पान करु ३७
श्री तनु नवधा भक्ति-मय २४
श्री तुलसीदास प्रताप तैं नीच ऊँच सब हरि भजे ... २६१
श्री दामा सुखधाम कृष्ण को परम प्रान-प्रिय . ७२८
श्री दास चतुर्भुज तोक वपु सख्य दास्य दोऊ निरत ... २३५
श्री द्वारकेश ब्रजपति ब्रजाधीश भए निज कुल-कमल .. २३१
श्री नंददास रस-रास रत प्रान तज्यौ सुधि सो करत ... २२४
श्री नरसिंह रमेश जू ९६
श्री निम्बादित्य सरूप धरि आपु तुंग विद्या दई ... २२८
श्री निबारक रामानुज पुनि मध्व जयध्वज ... ७३०
श्री पंचमी प्रथम बिहार दिन मदन महोत्सव भारी ... ७१२
श्री प्रभुन सरूप सुधान सुभ अच्युतदास द्विज ... २५३
श्री बन नित्य बिहार थली इत ६७२

पद्यांश		पृष्ठ-संख्या
श्री वल्लभ आचारज अनुज राम कृष्ण कवि मुकुट मनि	...	२६२
श्री वल्लभ की सरि करै कौन ...	...	४७८
श्री वल्लभ गृह महा मंगल भयौ प्रगट भए श्री गोपीनाथ	.	४८०
श्री वल्लभ निज मत राखि लियौ ...	.	४८१
श्री वल्लभ प्रभु वल्लभियनि बिनु तुम्है कहा कोउ जानै हो	...	४३१
श्री वल्लभ प्रभु मेरे सरवस ...		२८९
श्री वल्लभ वल्लभ कहौ ...		३७
श्री वल्लभ सुत प्रथम प्रगट लीला रस भाव गुप्त जय जय	.	४७९
श्री वल्लभ सुमिरौ श्री गोपीनाथ पियारे .	..	७३०
श्री वल्लभ हैं अनल वपु ...	.	१७
श्री विट्ठल गृह अतिहि उछाह ...	...	४८०
श्री विट्ठल-नंदन जगवंदन जय जय श्री रघुनाथ	..	४७९
श्री विट्ठल-सुत गुन-निधान श्री रुक्मिनी जीवन-प्रान		४७९
श्री विष्णु स्वामि पथ उद्धरन जै जै वल्लभ राजवर	...	२२९
श्री विष्णु-स्वामि संसार मैं प्रगट राज सेवा करी	.	२२७
श्री वूलामिश्र उदार अति बिनु रितुहूँ बालक दियौ	.	२५०
श्री वृंदावन के सूर ससि उभय नागरीदास जन	.	२६३
श्री वृंदावन नित्य हरि ...	...	७४८
श्री भक्त-रत्न हरिदास जू पावन अमृतसर कियौ		२६६
श्री-भू-लीला तीनहूँ ...	..	१५
श्रीमद्गागमनः कुरंग दमने या हेमदामात्मिका	...	७६७
श्रीयत्सर्वगुणाम्बुधेजनमनो वाणी विदूराकृते	..	७४६
श्री महाप्रभु सूतार घर सम पिछानि पधारे	...	२५५
श्री मुकुंद भव दुद हरन जय कुद गौर छवि	...	६९६
श्रीराधा अति सोचत मन मैं ...	...	६३७
श्रीराधा के वाम पद ...	..	२१
श्रीराधा के विरह मैं ...	..	१७
श्रीराधा पद मोर को ...	...	३३
श्रीराधा माधव जुगल चरन रस का अपने को मस्त बना	...	५६४
श्रीराधा मुख चंद्र लखि ...	...	१२

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
श्रीराधे कहा अजगुत कियौ	...	...	२८१
श्रीराधे चंद्रमुखी तुव नाम	...	...	५९४
श्रीराधे तुही सुहागिनि साँची	...	...	५९८
श्रीराधे वृषभानुजा	...	...	३६
श्रीराधे मोहिं अपनौ कब करिहौ	...	...	५७७
श्रीराधे सबकौ मान हस्यौ	...	..	११५
श्रीराधे सोभा कहा कहिए	...	...	५९२
श्री रुक्मिनि नदन जय जग बंदन बालकृष्ण सुख-धाम		...	४८१
श्रीललित किशोरी भाव सौं नित नव गायो कृष्ण-जस		...	२६२
श्रीललित त्रिभंगीलाल की सेवा देवा सिर रही		...	२४१
श्री शिव जू हरि चरन मैं	...	.	२३
श्रीशिव सौं निज चरन सौं	...	.	१२
श्रीशिव पद निज जानि गुरु	...	...	२२५
श्री श्री हरिराय स्वभक्ति-बल नाथहिं फिरि बोलवाइयौ		..	२३१
श्रुति गीतादिभिर्गीता	...	...	७६९
श्वेत रंग कौ मत्स्य है	...	...	२५

स

सख रह्यौ अंगुष्ठ मैं	...	...	३१
सगति दोष लगै सबै	...	.	३४८
संग मैं निसि बासर ही जिन तैं कछु बातैं न मैंने छिपाईं		...	१५९
संध्या जु आपु रहौ घर नीकी		...	७९
सई मजाले मजाले श्याम मजाले आमाय...		...	२१८
सकल की मूलमयी बेदन की भेदमयी	...	...	५४५
सकल महौषधि गननि की	...	...	२७
सकल मारगनि सौं भक्ति मारग वीच अति विलक्षण		..	७१६
सकल मास बैशाख मैं	...	...	९०
सक्त प्रजापति देवता	...	...	२२
सक्ति जानि गिरिनंदिनी	...	...	२३
सखि आयौ बसंत रितून कौ कंत चहूँ दिसि फूलि रही		...	१६६
सखिन सो पूछत कित है प्यारी	...	...	६५१

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
सखियनि आजु नवल दुलहिन कौ फूल-सिंगार बनायौ हो ...			४७६
सखियनिहूँ निज वेष उतार्यौ	...	...	६४१
सखियाँ री अपने सैयाँ के करनवाँ हरवा गूथि गूथि लाई ..			१९१
सखि ये बदरा बरसन लागे री	...	..	११४
सखियौ याद दिवावत रहियौ	...	...	५९६
सखि री कुंजन बोलत मोर	...	..	१२५
सखि री ठाढ़े नंद-किशोर	...	..	२२९
सखि सोहत गोपाल के	...	...	३३२
सखि हरि गोप-वधू सँग लीने	...	..	३११
सखी अब आनंद कौ रितु ऐहै	...	...	१२२
सखी कैसी छबि छाई देखो आई बरसात ...		...	८४१
सखी चलौ री कदम्ब तरे छोड़ि काम धाम		..	५०१
सखी चलौ साँवला दूलह देखन जावैं	...	...	२९१
सखी पुरुषोत्तम मेरे नाथ	...	...	७६०
सखी पुरुषोत्तम मेरे प्यारे	...	...	७६०
सखी फल नैन धरे को एह	...	...	७४८
सखी फिर पावस की रितु आई	...	.	५१०
सखी ये वंसी वजी नँद-नंदन की	..	...	१८०
सखी बनि ठनि तू चली आजु कित कौ		...	२६१
सखी मन-मोहन मेरे मीत	...	...	११५
सखी मेरे नैना भये चकोर	...	.	४७६
सखी मोरे सैयाँ नहिं आए	..	...	४७
सखी मोहि गीता अति सुखदाई	...	...	४७६
सखी मोहि पिया सौं मिला दे देहौं गले को हार		..	४८
सखी मोहि लै चलि जमुना-तीर	...	...	६३
सखी यह अति अचरज की बात	...	...	७५२
सखी ये नैना बहुत बुरे	...	...	६६
सखी राधा वर कैसा सजीला	...	..	१८२
सखी री अब मैं कैसी करौं	...	..	४०२
सखी री बहु तौ तपन बुझानी	...	...	१२२

पद्यांश			पृष्ठ-संख्य
सखी री कासौं सरबर तू बेकाम	...	...	३६२
सखी री ठाढ़े नंदकुमार	...	...	१२६
सखी देखहु बाल-बिनोद	...	...	४७
सखी री मोरा बोलन लागे	...	...	१२२
सखी री ये अँखियाँ रिझवारि	...	...	५८७
सखी री ये उलझौहैं नैन	...	...	५८७
सखी री ये बिसवासी नैन	...	...	५८७
सखी री साँझ सहायक आई	...	...	१११
सखी लखि दोउ भाइनि कौ रूप	...	...	७४९
सखी लखि यह रितु बन की सोभा	...	...	१२१
सखी सब राधा के गृह आई	...	...	६५७
सखी हम कहा करैं कित जायँ	...	...	४८
सखी हमरे पिया परदेस होरी मैं कासौं खेलौं		...	३६७
सखी हम बंसी क्यों न भये	...	...	८३४
सघन कुंज छाया सुखद	...		३३२
सजन गलियो बिच आ जा रे	..	...	१८६
सजन छतियाँ लपटा जा रे	...	...	१८५
सजन तेरी हो मुख देखे की प्रीति	...	...	७३
सटपटाति सी ससि-मुखी	...	...	३५३
सतएँ अठएँ मों घर आवै	...	...	८११
सति धर्म मूल तिय बनिक गृह कृष्णदास पहुँचाइयौ		...	२५९
सत्य-करन हरिदास बर	...	...	१७
सत्रु सत्रु लड़वाइ दूरि रहि लखिय तमासा		...	७९६
सदा अनादर जो सह्यौ	...	...	७०६
सदा चार चवाइन के डर सों नहिं	...	...	८२०
सदा उत्साह गिरिराज के बास मैं	...		७१७
सदा तुम मायावाद निवारेउ	...	...	४७७
सदा व्याकुल ही रहैं आपु बिना इनकौं हूँ कछू कहि जाइऐ तौ			१५८
सदा ब्रज सुबस बसौ बरसानौ	...	...	४७८
सन्यासी नरहरदास पै सुगुरु कृपा अतिसय हुती	-	...	२५८

पद्यांश			पृष्ठ संख्या
सब अँग करि राखी सुघर	...	...	३५०
सब आस तो छूटी पिया मिलिबे की	...	...	१५५
सब औगुन की खानि अयूब भज्यौ असु लैकै		...	७९३
सब कटाच्छ ब्रज जुवति के	...	..	१६
सब कवि कविता मैं कहत	...	...	१०
सब के मन संतोष अति	...	...	७९३
सब को पद गज चरन मैं	...	...	१०
सब को सार निकाल कै	...	...	५३७
सब गुरु जन कौं बुरौ बतावै	...	...	८१०
सब गोपिनि की स्वामिनी	...	...	२६
सब दीननि की दीनता	...	...	३७
सब देशनि की कला सिमिटि कै इत ही आवै		...	६८५
सब फल याही सौं प्रगट	...	...	२७
सब ब्रज पूजत गिरिवरहिं	...	...	३०
सब लोगनि को व्रत उचित	...	...	९५
सब समर्थ जय जयति प्रभु	...	...	६३३
सबहि भाँति नृप भक्ति जे	...	...	७९५
सबही तन समुहाति छिन	...	...	२४९
सबही विधि हित कियौ विविध विधि	...	..	७६४
सबै सुहाए ही लसैं	...	..	२४२
सब्द बहुत परदेस के	...	...	७३४
सभा में दोस्तो बंदर की आमद आमद है		...	७८९
समराई हठ करि प्रभुन कौं निज कर भोग लगाइयौ		...	२५०
सन्हारहु अपुने कौं गिरिधारी	...	...	५७९
सरद निसा निरमल दिसा गरद-रहित नभ स्वच्छ		...	६९०
सरन गए तैं तरहिगे	...	...	२८
सरस साँवरे के कपोल पर बुका अधिक बिराजे		...	८३९
सरयू गोपद महि जंबू घट जय पताक दर		...	३५
सर्प अभूषन अंग के	...	...	२४
सर्प चिन्ह श्री शंभु को	...	...	२०

पद्यांश		पृष्ठ-संख्या
सर्व लच्छननि संपन्न श्रीकृष्ण को ज्ञान प्रभु	...	७१५
सर्वं ददतां कृपया	... ...	७६८
सलोनी तेरी सूरत मेरे जिय भाई	... ..	४०२
सहज सचिक्कन स्याम रुचि	... ..	३४१
सहजहिं निज बस कीनी जिन सिप्रस कौ टापू	..	८०८
सहसन बरसन सौं सुन्यौ	... ..	८००
साँचहि दीप-सिखा सी प्यारी	... .	८६
साँचहु भारत मैं बढ़यौ	... ..	६९७
साँचोरा राना ब्यास दुज सिद्धपूर निवसत रहे	.	२४६
साँझ के गए दुपहरी आए	... ..	६२
साँझ भई री परम सुहावनि घिरि तम कीन बितान	..	११२
साँझ सबेरे पंछी सब क्या कहते है कुछ तेरा है	.	२९९
साँझ समय आरति करत	... ...	२२४
साँझ समय हरि आइकै	. ..	७५३
साँझ समय हरि को करै	... ...	९५
साँझ समै साजे साज ग्वाल बाल साथ लिये	...	८२६
साँवरे छैला रे नैन की ओट न जाओ	... ...	१९०
सांख्य जोग प्रतिपाद्य है	... ...	३०
साजि साजि निज सैन सब	... ...	७६५
साजि सेज रंग के महल मैं उमँग भरी	... .	१६९
साज्यौ साज गावँ मिलि तीज के हिंडोरना कौ		१६७
साडूला म्हारौ भीजै न डारौ रंग	... .	३७७
साधक गन सौं तुम सदा	... ...	७८
साधन छोड़ि अनेक बिधि	. ...	३७
साधुनि कौ अरु द्विजनि कौ	... ...	९४
साधुनि कौ सँग पाइ कै	... ..	२९
सायक सम घायक नयन	... ...	३४७
सार ताको जानि रास वनितान के भाव सौं	...	८१५
सारस्वत ब्राह्मण रामदास ठाकुर हित चाकर भए	...	७३९
सारी तन सजि बैंजनी पग पैजनी उतार	...	७८५

पद्यांश		पृष्ठ संख्या

सावन आयो मनभावन पिय बिनु रह्यौ न जाय ... ४९३
सावन आवत ही सब द्रुम नए फूले ५२५
सासु जेठानिनि सों दबती रहै लीने रहै रुख त्यों ननदी कौ ... १६२
साहब रावरे पै आवै ६७४
सिंह चिन्ह की धुजा चढी बाला हिसार पर ... ८०९
सिंह ठवनि निरभय चितवनि चितवत समुहाई ... ७९४
सिंह राशि गत होहिं जो १४
सिकारी मियाँ वे जुल्फों का फंदा न डारौ १८९
सिरन झुकाइ सलाम करि ७०३
सिसुताई अजौं न गई तन तैं तऊ जोबन जोति बटोरै लगी... १६३
सीखत कोउ न कला उदर भरि जीवत केवल ... ६८४
सीटी देकर पास बुलावै ८११
सीस मुकुट कटि काछनी ३३१
सीतल निसि लखि फूलई १२
सुंदरदासहि के संग ते वैष्णव माधवदास भे ... २५९
सुंदर बानी कहि समुझावै ८१०
सुंदर सेजनि बैठे प्रीतम प्यारी ४७८
सुंदर सैना सिविर बजायौ ७६३
सुंदर श्याम कमल दल लोचन कोटिनि जुग बीते बिनु देखे ५५
सुंदर श्याम राम अभिरामहिं गारी का कहि दीजै जू ... ७७७
सुंदर श्याम सिरोमनि प्यारौ खेलत रस भरि होरी जू ... ३७७
सुकृत जौन यामैं करैं ९३
सुखद अति खिचरी कौ त्यौहार ४७७
सुखद समीर रूखी ह्वै चलन लागी घटि चली रैन कछु .. १६४
सुख सौं बस्यौ सदैव प्रजा गन अति सुख पायौ . ८०८
सुजस मिलै अँगरेज कौं ७९५
सुत तिय गृह धन राज्यहू ३६
सुत सों तिय सों मीत सों ७३३
सुदामा तेरी फीकी छाक ८२९
सुनत उठे सब धीर वर ८०७

पद्यांश		पृष्ठ संख्या
सुनत जनम बृषभानु लली कौ उठि धाईं ब्रजनारी हो	...	५३२
सुनत दूध दधि चीर मन ...	...	७८
सुनत बीर इक बृद्ध नरनि के सम्मुख आयौ	...	८०२
सुनत सेज तजि भारत माई ..	...	७०७
सुनि कै सब ही परम वीरता आजु दिखाई	...	७८१
सुनि बोली आरज जननि ...	...	७०८
सुनी है पुराननि मैं द्विज के मुखनि बात	...	१७३
सुनौ सखि बाजत है मुरली ..	...	८३३
सुनौ चित दै सब सखियाँ बरनि सुनाऊँ श्याम सुंदर के खेल		३७४
सुनौ हम चाकर दीनानाथ के ...	...	६५४
सुभ्र मोछ फहरात सुजस की मनहुँ पताका	...	८०२
सुमिरि सुमिरि छत्री सबै ...	...	८०७
सुमिरौं बल्लभ रूप महा मंगल फल पावन	...	६४५
सुमिरौं राधा कृष्ण सकल मंगलमय सुंदर	...	७२७
सुमिरौं सुक नारद सिव अज नर ब्यास परासर	...	७२९
सुमिरौं श्री चंद्रावलि मोहन प्रान पियारी	...	७२७
सुमिरौं श्री गोपीपति पद पंकज अरुनारे	...	७३०
सुरत श्रम जल बिहरत पिय प्यारी ...	...	११५
सुरति करत जिय अति जरत परत रोय करि हाय	...	६९१
सुरतिहू अब न ह आवै श्याम की ...	...	५८९
सुर नर मुनि नर नाग के ...	...	१०
सुरसरि श्री हरि चरन सौं ...	...	१२
सूरत अपनी सबै डुबाई ...	...	२७६
सेई जे आमाय तोमाय छिल कथा मने आछे कि ना आछे बल		२१५
सेज छाँड़ि माता उठहु ...	...	७०६
सेजिया जिनि आओ मोरी सेजिया मैं पैंयाँ लागौं तोरी	...	१८४
सेवक गोवर्धननाथ के रामदास चौहान हे	...	२५१
सेवा मैं एहि राखियौ ...	...	१७६
सेवा मैं हरि सौं कबहूँ रस भरि बतरावत	..	६४७
सैन सख धन कोप सब ...	...	७६५

पद्यांश			पृष्ठ-संख्या
सैयाँ तुम हम से बोलौ ना	...	...	१८७
सैयाँ बेदरदी दरद नहिं जानै	...	...	१८१
सो अमूल्य अब लोग इतै नहि	...	...	७०७
सोइ आठौ दिगपाल मनु	...	...	२१
सोइ व्यास अरु राम के	...	...	८०३
सोई कवि जयदेव अरु	...	...	३०६
सोई तिया अरसाय कै सेज पै सो छबि लाल बिचारत ही रहे			१४८
सोई परम पवित्र भुव	...	...	७०९
सोई पिय के गर लपटाई	...	...	४०३
सोई बने सब मंजुल कुंज अलीन की भीर जहाँ अति हेली	...		१४९
सोई बृटिश अधीश चढ़त अफगान जुद्ध हित		...	७६२
सोई भारत भूमि भई सब भाँति दुखारी	...	...	८०५
सोई सुख फिर चाहै पिय प्यारौ	...	...	४०४
सोई सुख लहि घरहु मैं	...	...	७०९
सोते रहते लोग सब	...	...	७४३
सो तो केवल पढ़न मैं	...	...	७३६
सो दुख तुमरौ देखि	...	...	७०६
सो माता हिन्दी बिना	...	...	७२३
सोहत ओढ़े पीत पट	...	...	२३४
सो सिसु शिक्षा मातु-वस	...	...	७३२
सौदागर मेलुआ जहाजी	...	...	७१०
सौंप्यौ ब्राह्मण को धरम	...	...	७३४
स्कंध मत्स्य के वाक्य सौं	...	...	३४
स्ट्रेची डिजरैली लिटन	...	...	७९५
स्रवत सुधा सम बचन मधु	...	...	६९७
स्वच्छ पीयूष लहरी सदस निज जसनि तुच्छ करि अन्य		...	७१७
स्वर्ग भूमि पाताल मैं	...	...	१५
स्वर्ण वर्ण कौ चक्र है	...	...	२४
स्वस्तिक ऊरध रेख कोन अठ श्री हल मूसल		...	३५
स्वस्तिक पीवर वर्ण कौ	...	...	२४

पद्यांश			पृष्ठ संख्या
स्वागत स्वागत धन्य तुम	...	...	६९७
स्वामि भक्ति किरतज्ञता	...	...	७८१
स्वस्वास्सपल्यास्सुरनाथ सूनो	...	...	७६७
स्वीया परकीया बहुरि	...	...	१५
स्वेत रंग को मत्स्य है	...	...	२५

ह

पद्यांश			पृष्ठ संख्या
हजार लानत उस दिल पर जिसमें कि इश्के दिलदार न हो...			५६९
हटरी सजि के राधा रानी मोहन पिय कों लै बैठावत		...	८६१
हठीले पिय हो प्यारिहु कौ हठ राखौ	...	...	५९२
हठीले दे दे मेरी मुंदरी	...	...	८४५
हती न तुम पर सैन लै	...	...	७४३
हबसी गुलाम भए देखि करि केस तेरे	...	...	८६४
हम चाहत है तुमको जिउ से	...	...	८१९
हम चाकर राधा रानी के	...	...	३५५
हम जानो तुम देर जौ लागत तारन माहिं		...	७७१
हम जो मनावत सो दिन आयौ	...	...	५३३
हम तुम पिय एक से दोऊ	...	...	२८१
हम तुव जननी की निज दासी	...	...	७१०
हम तो तिहारे सब भाँति सौं कहावैं सदा		...	१३१
हम तौ दोसहु तुम पै धरिहै	...	...	६८
हम तौ मदिरा प्रेम पिए	...	...	७३
हम तौ मोल लिए या घर के	...	...	५६
हम तौ लोक वेद सब छोड्यौ	...	...	५८०
हम तौ सब भाँति तिहारी भई तुम्है छोड़ि न और सौं		...	१५७
हम तौ श्री बल्लभ कृपा	...	...	२७०
हम तौ श्रीबल्लभ ही को जानैं	...		५५
हम नहिं अपने कौं पछितात	...	...	७०
हम मैं कौन कसर पिय प्यारे	...	...	८३६
हम मैं कौन बड़ी री प्यारी	...	...	८१
हम से प्रीति न करना प्यारी हम परदेशी लोगवा		...	१८८

पद्यांश		पृष्ठ-संख्या
हम सौं झूठ न बोलहु माधव जाहु जु केशव जाओ	...	३२१
हमहूँ कबहूँ सुख सौं रहते ...	...	२७५
हमहूँ कछु लघु सिल न जो सहजहिं दीनो तार	...	७७२
हमहूँ सब जानती लोक की चालहि	...	१७२
हम हैं भारत की प्रजा ...	...	६३
हमारी प्यारी सखियन कौ सिरताज ...	..	५९८
हमारी प्रान-जिवन धन-स्यामा ...	...	५३४
हमारी श्री राधा महरानी ...	...	४९९
हमारी सरबस राधा प्यारी ...	...	५९९
हमारी स्वारथ ही की प्रीति ...	...	८३७
हमारे घर आओ आजु प्रीतम प्यारे ...	...	५०
हमारे जिय सालत यह बात ...	...	२७६
हमारे तन पावस बास कर्यौ ...	...	५३३
हमारे निर्धन की धन राधा ...	...	४८२
हमारे नैन बहीं नदियाँ ...	...	११६
हमारे ब्रज की रानी राधे ...	...	५९६
हमारे ब्रज के द्वै मनि दीप ...	...	८१
हमारे ब्रज के सरबस माधौ ...	...	२७८
हमारे भाई स्यामा जू की प्रीति ...	...	५३३
हमैं तुम दैहौ का उतराई ...	...	६४
हमैं दरसन दिखा जाओ हमारे प्रान के प्यारे	...	२०७
हमैं नीति सौं काज नही कछु है अपनौ धन	...	६१५
हमैं लखि आवत क्यौं कतराए ...	...	३७८
हय चले हाथी चले रथ चले प्यादे चले ऊँट चले	...	२९६
हरवंस पाठक सारस्वत ब्राह्मण श्री काशी निवस	...	२३९
हरि की प्यारी कौन ? देह काके बल धावत	...	६३४
हरि कौ मंगलमय मुख देखौ ...	...	६०७
हरि कौ धूप दीप लै कीजै ...	.	८२९
हरि चरित्र हरि ही कह्यौ ..	...	२७०
हरि जू को नेह परम फल भाई ...	...	८४६

पद्यांश	पृष्ठ-संख्या
हरि जू की आवनि मो जिय भावे	८४५
हरि तन करुना सरिता बाढ़ी	५४०
हरिदासबर्य्य गिरिराज धनि धन्य सखि राम घनश्याम करैं	७५२
हरि प्रेम माल रस जाल के नागरिदास सुमेरु भे ...	२६३
हरि बिनु कालो बदरिया छाई	५१०
हरि बिनु बरसत आयो पानी	४९०
हरि बिनु ब्रज बसियत केहि भाए	६२०
हरि बिहरत लखि रसमय बसत	३१०
हरि मनमथ कौं जीति के	११
हरि मम आँखिनि आगैं डोलौ	७८३
हरि माया भठियारी ने क्या अजब सराय बसाई है ...	५५१
हरि मोरी काहे सुधि बिसराई ...	६०७
हरिरिह बिलसति सखि रितुराजे	४३०
हरि लीला सब बिधि सुखदाई	७७०
हरि सँग बिहरत ह्वैहै कोक	३१९
हरि सँग भोग कियौ जा तन सौं तासौं कैसे जोग करैं ...	५८३
हरि सिर बाँकी बाँक बिराजै	८२९
हरिश्चंद्रो माली हरिपद गतानां सुमनसां	२७०
हरि सिंगार सब छाँड़ि के तुव बिनु होय मलीन, ..	७८६
हरि हम कौन भरोसे जीएँ	६०४
हरि हरि धीर समीरे विहरति राधा कालिंदी तीरे ...	४९२
हरि हरि हरिरिह विहरति कुंजे मन्मथ मोहन बनमाली ...	४९२
हरिहु मातु ढिग आइ गए	६३९
हरि हो अब मुख बेगि दिखाओ	६१७
हरीचंद आप सों पुकार के कहौं बार बार	८२३
हाँ दूर रहौ ठाढ़े हो कन्हाई ...	१८३
हाथ जोरि सिर नाइ कै	६३३
हाथ जोरि हरि अस्तुति ठानी	६४०
हा पिय प्यारे प्रान-पति	६७०
हाय दशा यह कासौं कहौ कोऊ नाहिं सुनै ...	१५६

पद्यांश | पृष्ठ संख्या

हाय पंचनद हा पानीपत ८०४
हाय बिधि एत मोरे केन निरदय २११
हाय वहै भारत भुव भारी ८०३
हाय हरि बोरि दइ मँझधार ५८६
हा हरि अजहूँ बन नहिं आए ३१८
हा हा कोइ ऐसौ इतै ना दिखावै ६३७
हा हा गई कुपित ही प्यारी ... ३१३
हिंडोरना आजु झँकोरवा लेत ४९९
हिंडोरा कौन झुलै थारे यार ५००
हिंडोरे झूलत कुंज कुटीर १२३
हित की हम सौ सब बात कहौ सुख भूल सबै बतरावती हौ १५६
हित दीन सों जे करैं धन्य तेई ६७१
हित रामराय भगवान बलि हठी अली जगनाथ जन ... २६२
हिय गुप्त बियोगहि अनुभवत बड़े नागरीदास हे ... २६३
हृदय आरसी माहिं जुगल परतच्छ लखावत ... ६४६
हृदय कमल प्रफुलित भए ६९८
हृदय बगीचा अस्तु जल ३८९
हे देवी अब बहुत भई ६४०
हे मधुसूदन कृष्ण हरि ९६
हेरिब सतत सखी कालई बरन २१५
हे विश्वम्भर जगतपति जगदीस ६९२
हे हरि जू बिछुरे तुम्हरे नहिं धारि सकी १६९
है जमीं में खाक कारूँ का ८५०
है इत लाल कपोत व्रत ८१८
है है उरदू हाय हाय ६७८
है न सरन तृभुवन कहँ ६६९
होइ कुल-नारी ऐसी बात क्यों बिचारी यामे ... ३००
होइ भारताधीश्वरी ७४५
होइ सकै नहि मास भर ९१
होई स्वामिनी दूती पन को ६७३

पद्यांश पृष्ठ संख्या

होइ हरि द्वै मैं तैं अब एक ५९०
होत बिमुख रोकत तुरत २२४
होत सिंह कौ नाद जौन भारत बन माही... ... ८०५
होते न लाल कठोर इते १५९
होन चहत अब प्रात चक्रवाकिनि सुख पायौ ... ६७९
होरी खेलन दे मोहिं पिय सौं ननदिया नाहक रोकै री ... ३८२
होरी नाहक खेलूँ मैं बन मैं पिया बिन होरी लगी मेरे मन मैं ३८४,४३२
होरी मैं समधिन आई ३७९
होरी है कै राम-राज रे ४००
हौं कुलटा हौं कलंकिनी हौं हमने सब छाँड़ि दयौ कहा खोलौ १५९
हौ जमुना जल भरन जात ही मारग मोहिं मिलै री कान्ह २८०
हौं तो तिहारे दिखाइबे के हित जागत ही रही नैन उजार सी १४७
हौं तो तिहारे सुखी सों सुखी १७५
हौंस यह रहि जैहै मन माही ५८४
ह्वै प्रतच्छ बसि गृह निकट २२३